शारीरिक शिक्षा

लेखक

डा० एल० डब्लू० लायल

एम. ए., बी. पी., डी. टी. एल., डी. पी. एड., बी. एम. एस.

क्रिश्चियन कालेज आफ फिजिकल एजूकेशन

लखनऊ

प्रकाशक

शकुन्तला प्रकाशन

प्रकाशकः—

शकुन्तला प्रकाशन

वार्न हाल, इनायत बाग

लखनऊ

[सर्वाधिकार प्रकाशक के आधीन]

प्रथम संस्करण —८ अक्तूबर १९६८

मूल्य—२८ रुपये ७५ पैसे

मुद्रक :—

प्नार मुद्रक, ११७, नजीराबाद, लखनऊ। फोन-२३५५७

दो शब्द

शारीरिक शिक्षा महाविद्यालय तथा एल० टी० प्रशिक्षण विद्यालय में सत्ताइस वर्ष से सेवा कार्य करते हुये मुझे यह अनुभव हुआ कि हिन्दी भाषा साहित्य में 'शारीरिक शिक्षा' विषय पर पुस्तकों का अत्यन्त अभाव है और छात्रों तथा शारीरिक शिक्षा में रुचि रखने वालों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। विदेशियों द्वारा विदेशी भाषा में लिखी पुस्तकों और लेखों पर ही निर्भर रहना पड़ता है। राष्ट्र भाषा में अभी तक कोई ऐसी पुस्तक उपलब्ध नहीं है जो शारीरिक शिक्षा अध्यापन में सुचारुरूप से सहायक हो सके और जिसे अवलम्ब मानकर दैनिक जीवन सहज में निबाहा जा सके, विशेषतया खेलों तथा एथलेटिक्स की कोचिंग में शिक्षक को कोई दिशा निर्देश नहीं मिल पाता।

उपरोक्त अभावों को दृष्टि में रखकर अपनी पूर्वलिखित पुस्तक 'शारीरिक शिक्षा विषयों का सरल अध्ययन' की रूपरेखा ध्यान में रखते हुए किंचित विस्तार से शारीरिक शिक्षा सम्बन्धी लगभग सभी विषयों को एक घेरे में बांधने का मैंने प्रयास किया है। प्रत्येक अध्याय और विभाग की समाप्ति पर मुझे पुस्तक का कलेवर बड़ा होता हुआ महसूस हुआ फिर भी सम्बन्धित सभी विषय एक ही पुस्तक में संजोने का लोभ मैं संवरण नहीं कर सका। यह पुस्तक शारीरिक शिक्षा में डिप्लोमा तथा सर्टीफिकेट के विद्यार्थियों, प्रशिक्षण विद्यालय के छात्र एवं शिक्षकों और अन्य उन सबको जिन्हें इस विषय में रुचि है यथेष्ट सामग्री मिल सके ऐसा मेरा प्रयत्न रहा है। हिन्दी भाषी पाठकों के लिए यह विशेष उपयोगी होगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

भारतवर्ष में शारीरिक शिक्षा और स्पोर्ट्स में जितनी प्रगति होनी

चाहिये थी वह स्वतन्त्रता प्राप्त करने के २० वर्षों बाद भी लक्षित नहीं होती। संसार में हाकी को छोड़कर अन्य किसी क्षेत्र में हमारा स्थान नहीं के बराबर है। हमारा स्वास्थ्य स्तर तथा शारीरिक शक्ति का विकास असंतोषजनक है। इस उपेक्षा और असंतोष को दूर करने में यदि 'शारीरिक शिक्षा' का कुछ देय है तो मैं अपना प्रयास सफल समझूँगा।

उन सभी स्रोतों का मैं आभारी हूं जिनसे 'शारीरिक शिक्षा' का गठन हुआ। स्वयं हिन्दी भाषा में प्रज्ञ न होने पर भी हिन्दी साहित्य की उस कमी को कुछ दूर करने की अपनी बलवती भावना को मैं रोक न सका। हिन्दी में लिखी पाण्डुलिपि एवं प्रूफ के कठिन कार्य को निबाहने में सरला और शकुन (अपनी सुपुत्रियों) को जिन्होंने हर पल मुझे उत्साहित किया मैं शुभाशीर्वाद देता हूं। संपूर्ण छपाई का भार जिस मनोयोग से श्री सुभाष मिश्र ने वहन किया है वह प्रशंसनीय है। पनार मुद्रक के प्रोप्राइटर श्री विश्व मोहन और प्रबन्धक श्री हरिनाथ जी धन्यवाद के भागी हैं जिन्होंने समय-समय पर अपने उचित सुझाव दिये और मुद्रण में दिशा प्रदान की। श्री के० एस० सलोना और श्री ई० टी० मसीह ने चार्ट तथा स्केचेज़ बनाने में जिस तत्परता से योगदान दिया वह सराहनीय है। हैड कम्पोजीटर श्री प्रताप नारायण द्विवेदी ने जो कार्य में लगन दिखाई है उसके लिए वे बधाई के पात्र हैं।

अन्त में निवेदन है कि पाठकों के विचार और सुझाव शारीरिक शिक्षा क्षेत्र में कुछ और सेवा करने की मेरी भावना को बल देंगे।

अक्तूबर ८, १९६८
लखनऊ।

—डा० एल० डब्लू० लायल

विषय-सूची

शारीरिक शिक्षा का सिद्धान्त

१— सिद्धान्त १

सिद्धान्त की प्रकृति, दर्शनशास्त्र पर आधारित सिद्धान्त, विज्ञान पर आधारित सिद्धान्त, शारीरिक शिक्षा में सिद्धान्त, सिद्धान्त की उपयोगिता, शारीरिक शिक्षा के कुछ सिद्धान्त, मनोविज्ञान पर आधारित सिद्धान्त, सामाजिक आधार पर निर्धारित सिद्धान्त, स्वास्थ्य के आधार पर निर्धारित सिद्धान्त।

२— शारीरिक शिक्षा विषय एवं विस्तार ११

शारीरिक शिक्षा का अर्थ, शारीरिक शिक्षा के ध्येय एवं उद्देश्य, शरीर का विकास, संवेगात्मक सामाजिक व्यक्ति का विकास, शरीर के द्वारा व्यक्ति का विकास, उद्देश्य, शारीरिक शिक्षा सामग्री (क्षेत्र एवं प्रकृति)।

३— शारीरिक एवं सामान्य शिक्षा २६

शिक्षा का अर्थ, शारीरिक एवं सामान्य शिक्षा सम्बन्ध, शरीर के अंगों का विकास, स्नायु मांसपेशियों का समन्वय, खेल एवं मनोरंजन में रुचि, चरित्र का निर्माण, अवकाश का सद्उपयोग, मिथ्या धारणायें।

४— स्वास्थ्य शिक्षा एवं मनोरंजन का शारीरिक शिक्षा से सम्बन्ध ३८

स्वास्थ्य शिक्षा, स्वस्थ वातावरण, स्वास्थ्य सेवायें, स्वास्थ्य शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा का शारीरिक शिक्षा से सम्बन्ध, मनोरंजन, मनोरंजन एवं शारीरिक शिक्षा का सम्बन्ध।

५— शारीरिक शिक्षा का दर्शन ४६

मानवतावादी दर्शन, उपयोगितावादी दर्शन, आदर्शवादी दर्शन,

प्रकृतिवादी दर्शन, यथार्थवादी दर्शन, शिक्षा में दर्शनों का प्रभाव, शारीरिक शिक्षा में दर्शन।

६— **शारीरिक शिक्षा की शब्दावली** ५१
फिजिकल कल्चर, फिजिकल ट्रेनिंग, फिजिकल एजुकेशन, ड्रिल, जिमनास्टिक, एथेलेटिक्स, गेम्स एण्ड स्पोर्ट्स, हाइजीन।

७ - **शारीरिक शिक्षा का जीव वैज्ञानिक आधार** ५४
बढ़ाव एवं विकास, बंशानुक्रम एवं वातावरण का प्रभाव, पुरुष एवं स्त्री में विभिन्नता, शरीर के प्रकार, व्यायाम का सिद्धान्त।

८— **शारीरिक शिक्षा का मनोवैज्ञानिक आधार** ६८
शरीर एवं मन का एकत्व, सहज क्रिया, मूल प्रवृत्ति, संवेग, सीखने के नियम।

९— **शारीरिक शिक्षा का सामाजिक आधार** ७९
१०—**शारीरिक शिक्षा का प्रजातांत्रिक आधार** ८८
११—**शारीरिक शिक्षा का आर्थिक आधार** ९३

१२—**शारीरिक शिक्षा व्यवसाय** १००
व्यवसाय एवं उसके गुण, शारीरिक शिक्षकों की देन, शारीरिक शिक्षा व्यवसाय का भविष्य।

शारीरिक शिक्षा का इतिहास

१— **एतिहासिक पृष्ठभूमि** ११५
२— **प्राचीन काल** ११७

३— **प्राचीन सभ्यता** १२०
मिस्र, आधुनिक मिस्र

४— **चीन** ११६
आधुनिक चीन

५— **यूनान** १३१
होमरिक युग, स्पार्टा, ऐथेन्स, पान हेलेनिक गेम्स

६— रोम १४५

७— मध्यकाल १५१
वीरता या शिवलरी, मसीही विचार का प्रभाव।

८— जागृति १६१
ह्यु मनिष्ट, विटोरिनों डी फेलट्रा, पियेट्रो वरगेरियो, पेटराकी, पेटरस पौलस बरगेरियस, लिओनो बटिस्टा अलबरटी, माफिओ वेगिओ, गीरोलामो कारडानो, मार्टिन लूथर, उलरिक ज्वींगली, जोआकिन केमेरियस, कौलविन।

९— शारीरिक शिक्षा तथा वास्तविकता १६७
वास्तविक मनुष्यत्व (ह्यु मनिस्ट रियलिस्ट), फ्रान्कोइस रावेले, जौन मिलटन, जुआन लुईस वाइव्स, सामाजिक वास्तविक (सोशियल रियलिस्ट), मिकायेल डे मोनटेन, जौन लौक, इन्द्रीय वास्तविक (सेन्स रियलिस्ट) रीचर्ड मलकास्टर, जौन आमोस कोमोनियस, फ्रानसिस बेकन।

१०—प्राकृतिक तथा प्रकाश का युग १७५
जीन जाकूयेस रूसो, इमाइल, जोहान बर्नहार्ड बेसडो, जोहान साइमन, क्रिश्चियन सालजमन, क्रिश्चियन कार्ल एन्ड्री, जोहान फ्रेडरिक गट्स मथ्स, जोहान हेनरिक पेस्टालोजी, फ्रैडरिक फ्रोयबेल।

११-यूरोप के महाद्वीप में १८०० ई० के पश्चात् शारीरिक शिक्षा १८६

१२—जर्मनी १९०
फ्रेडरिक लुडविग जहान, एडोल्फ स्पाईस, ह्युगो रोथस्टेयन, विलहेल्म माक्स उनड्ट, शारीरिक शिक्षा का नाजी कार्यक्रम, नेशनल सोशलिज्म, हिटलर यूथ, प्लेग्राउन्ड मूवमेन्ट, हार्टविच, एमिल बोन स्केनकेनडोर्फ, हरमन रेयड्ट।

१३—स्वीडेन २१३
ए० ओ० लीन्डफोर्स, पेर हेनरिक लिंग, गेब्रियेल ब्रान्टिंग, स्वीडिश स्पोर्ट्स फेडरेशन।

१४–**डेनमार्क** २१९

फ्रान्ज नाखटेगल, नील्स वक्ख ।

१५–**ग्रेट ब्रिटेन** २२५

गोल्फ, हाकी, बोलिंग, टेनिस, फुटबाल, हैमर, पोलवाल्ट, आरची बोल्ड मकलारेन ।

१६–**अमेरिका में शारीरिक शिक्षा** २३३

लेटिन अमेरिका, सेन्ट्रल अमेरिका, दि वेस्ट इन्डीज़, क्यूबा, सानटो डेमिंगो, पुएरटो रीको, मेक्सिको, कनाडा, अरजेन्टाइना, बोलीभिया, ब्राजील, चिली, कोलम्बिया, एक्वाडोर, परागुए, पीरू, उरूगुए, वेनेज्युएला ।

१७–**संयुक्त राष्ट्र अमेरिका** २५८

उपनिवेश काल, बेनज़ीमन फ्रैंकलिन, साइमन मूड़ी, इंगलिश उपनिवेश, मध्य के उपनिवेश, दक्षिणी उपनिवेश, सीमान्तर ।

१८–**प्रारम्भिक राष्ट्रीयता काल** २६७

यूनाइटेड स्टेट्स, होरेस मान्न, डा० जार्ज बारकर विनशिप, डा० डीओ लीविस, चार्ल्स फौलेन, वाई० एम० सी० ए०, चार्ल्स बेक, फ्रानसिस लाइवर, कैथरीन ऐस्थर बीचर, विलियम मैकमूलर, नीफ, एमोस ब्रोनसोंन आलकोट, **यूनाइटेड स्टेट्स में राष्ट्रीयताकाल,** कैथरीन बीचर, डेलसारेट प्रणाली, शिक्षा शिक्षक प्रशिक्षण, विलबर पी बोबेन, प्लेग्राउन्ड आन्दोलन, चार्ल सवैन्क, सून्नर एफ हुले, टेस्ट एराड मेज़रमेन्ट, डा० सार्जेन्ट, अमेरिकन एसोसियेशन फार हेल्थ, फिजिकल एज्युकेशन एण्ड रिक्रियेशन, प्रथम शारीरिक शिक्षा कान्फ्रेन्स, एडवर्ड हिचकोक, एमी मोरिस होम्स, डड्ली ए सर्जेन्ट, एडवर्ड मुसी हार्टवेल, डालफिन हेना, विलियम जी एन्डर्सन, जार्ज ब्रेसियस, ऐलिजा एम मोशर, राबर्ट जेफरिस राबर्ट्स, विलियम स्टेचर, **यूनाइटेड स्टेट्स का प्रारम्भिक अन्तर्राष्ट्रीयता काल,** फिजिकल कल्चर, साहित्य, लूथर हाल से गलिक, थामस डेनिसन उड्ड, राबर्ट टेट मेकेन्जी, क्लार्क डब्लू हेथरिंगटन, जेस्सी एच बानक्रोफ्ट, एलिजाबेथ

बर्थनल, जेम्स हफमैंकरडी, क्लेलिया डी मोरार, एथेल पेरीन, उन्नीस सौ अट्ठारह से उन्नीस सौ तीस, **यूनाइटेड स्टेटस के अन्तर्राष्ट्रीय काल**, वर्गीकरण।

१९–**यू० एस० एस० आर०** ३३१

२०–**जापान में शारीरिक शिक्षा** ३३९

मेईजी काल, ताइशो काल, शोवा काल, युद्ध काल, वर्तमान काल।

२१–**ओलम्पिक खेल** ३४३

२२–**भारतवर्ष में शारीरिक शिक्षा** ३४७

प्राचीन भारत, महाकाव्य काल, हिन्दूकाल, मुस्लिम युग, महाराष्ट्र काल, ब्रिटिश काल, भारतीय शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम, आधुनिक भारत में शारीरिक शिक्षा, भारत में शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण कार्यक्रम, वाई० एम० सी० ए०, स्पोर्ट्स संस्थायें, भारतीय खेल सभा, राष्ट्रीय खेल विद्यालय, एशिया के खेल, ए नेशनल प्लान आफ फिजिकल एजूकेशन, शारीरिक शिक्षा में अन्य संगठन, दि इंडियन नेशनल रिक्रियेशन एसोसियेशन, आल इंडिया एसोसियेशन आफ कालेजेस आफ फिजिकल एजूकेशन, दि नेशनल स्कूल गेम्स फेडरेशन, दि नेशनल कैडेट कोर, स्काउटिंग एण्ड गाइडिंग, फेडरेशन आफ आल इन्डिया सेमिनार आन फिजिकल एजूकेशन, प्रिंसिपल आफ फिजिकल एज्यूकेशन इन्सटीट्यूशन, रेकेमेन्डेशन आफ दि आल इन्डिया सेमिनार आफ स्टेट इन्सपेक्टर्स आफ फिजिकल एजूकेशन एण्ड यूनिवर्सिटी डाइरेक्टर्स।

शारीरिक शिक्षा सम्बन्धी मनोविज्ञान

१— **शारीरिक शिक्षा का मनोवैज्ञानिक आधार** ४०१

मनोविज्ञान का अर्थ, आधुनिक परिभाषा, क्षेत्र, अध्ययन की विधियां, शिक्षा से सम्बन्ध, शारीरिक शिक्षा से सम्बन्ध।

२— **मानसिक विकास** ४१९

मन; मन की तीन प्रमुख शक्तियां, विकास के नियम, परिभाषा, स्नायु संस्थान, ग्रंथियां, आसन पर नाड़ियों का नियन्त्रण।

३—मूल एवं सामान्य प्रवृत्तियां ४४८

मूल प्रवृत्ति एवं सम्बन्धित संवेग, संवेग, आदत तथा चरित्र निर्माण, सामान्य प्रवृत्तियां, अनुकरण, सहानभूति, संवेग, आत्मसम्मान का स्थाई भाव, खेल, खेल के सिद्धांत, मानसिक स्वास्थ्य, वृद्धा अवस्था की समस्या।

४—वंशानुक्रम तथा वातावरण ४७९

वंशानुक्रम में तथा वातावरण का प्रभाव, क्रम विकास।

५—स्मृति ४८६

साहचर्य का नियम, सीखने की उत्तम विधियां, अच्छी स्मृति के लक्षण विस्मृति, पहचान तथा प्रत्याह्वन, गतियुक्त स्मृति।

६—विकास की अवस्थाएं तथा विशेषताएं ४९२

शैशवास्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था, शैक्षणिक उत्तरदायित्व।

७—सीखना ५०६

सीखने के नियम, सीखने के प्रकार, क्रियात्मक सीखने की विधियां, शारीरिक शिक्षण में सीखना, गतिवाही कौशल का विकास।

८—ध्यान एवं रुचि ५१६

ध्यान, रुचि का अर्थ, ध्यान एवं रुचि का सम्बन्ध, ध्यान की विशेषता।

९—बुद्धि ५२०

बुद्धि माप की आवश्यकता, बुद्धि के तीन मुख्य सिद्धान्त, बुद्धि का विकास, बुद्धि माप की परीक्षा, मानसिक स्वास्थ्य, असामान्य बालक, बाल अपराधी, दुर्बलबुद्धि, अकाल परिपक्व बालक, विकलांग, पिछड़े हुये बालक, शारीरिक शिक्षा द्वारा दोषयुक्त समायोजन का विरोध एवं उचित मानसिक स्वास्थ्य को प्रोत्साहन।

१०—थकान ५३३

थकान के लक्षण, दूर करने के उपाय।

११—व्यक्तित्व ५३८

व्यक्तित्व के तत्व, व्यक्तित्व का विकास, शारीरिक शिक्षा के द्वारा व्यक्तित्व का समायोजन, व्यक्तिगत विभिन्नता, प्रकार के सिद्धान्त, व्यक्तिगत समानता, शिक्षा, अचेतन मन एवं उसका प्रभाव, मनो-विश्लेषण, दिवास्वप्न, प्रभुत्व दिवास्वप्न, दिवास्वप्न से लाभ तथा हानि, सामूहिकता का मनोविज्ञान, अनुशासन एवं व्यवहार, बाधक व्यवहार, बाधा का प्रतिरोध ।

१२–**परीक्षा एवं माप प्रकार तथा तकनीक** ५६१

बुद्धि माप, चिकित्सात्मक परीक्षा, आसन एवं डील डौल की परीक्षा, आन्थ्रोपोमेट्रिक तथा शारीरिक योग्यता परीक्षा, परीक्षा तथा माप के उद्देश्य, उत्तम परीक्षा तथा माप की विशेषता, शारीरिक शिक्षा परीक्षा तथा माप के तत्व, परीक्षा में चुनाव की कसौटी, वर्गीकरण, The frequency distribution curve, मध्य प्रवृत्ति का माप, The Mode, The Median, The Mean, शारीरिक निपुणता परीक्षा ।

शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन का संगठन, संचालन तथा निरीक्षण

१— **संगठन तथा संचालन** ५८४

एच० सी० बक के द्वारा दिये गये संगठन संचालन के कुछ सिद्धान्त, संगठन चार्ट बनाना, कक्षा के संगठन तथा संचालन के सिद्धान्त, स्थानीय दशा, समय तथा कार्य, शारीरिक शिक्षा के लिए दिन में समय, दैनिक, विशेष तथा वार्षिक कार्यक्रम ।

२— **सार्वजनिक प्लेग्राउन्ड, बड़े छोटे खेल, स्पोर्ट्स, शारीरिक क्षमता, युवक समारोह नगर, ग्राम तथा औद्योगिक क्षेत्रों में मेला उत्सव आदि का संगठन** ५९४

आधारित संगठन, सार्वजनिक क्रीड़ा स्थल, संपूर्ण कार्य कारिणी समिति, सामूहिक कार्य के संगठन में पथ-प्रदर्शन, स्कूल स्पोर्ट्स का संगठन, राष्ट्रीय शारीरिक क्षमता, स्काउटिंग, तथा गर्ल्स गाइड, युवक समारोह, कार्यक्रम आयोजन, कार्य-क्रम के चुनाव का सिद्धान्त, शारीरिक शिक्षा पाठ्यक्रम की सामग्री,

इन्ट्राम्युरल कार्यों का संगठन, स्कूल के आपस में शारीरिक शिक्षा प्रतियोगिता कार्यक्रम का संगठन, चेक लिस्ट का विस्तार, शारीरिक शिक्षा सुविधायें, जिमनेज़ियम की बनावट एवं देख भाल, स्वीमिंग पूल, खेल के मैदान।

३— **शारीरिक शिक्षा सामग्री** ६२५
सामग्री की देख भाल, आवश्यकता।

४— **नेतृत्व एवं व्यवसाय की तैयारी** ६२९
नेतृत्व के गुण, व्यवसायिक योग्यता, वैयक्तिक गुण, शिक्षा, नेतृत्व प्रशिक्षण के साधारण निर्देश, नेतृत्व करने का अवसर, नायक चुनने की विधि, नायक की कसौटी, नायक के पीछे चलना, अनुकरण के विकास की कसौटी, शिक्षक की समस्याएं, शारीरिक शिक्षा एक ऐसा विषय है जो समाज के द्वारा उचित रीति से समझा नहीं गया, शारीरिक शिक्षा का दृढ़ स्थान नहीं हो सका है, उचित नेतृत्व का अभाव, स्कूल के पाठ्यक्रम का मूल्यांकन एवं उसमें परिवर्तन, निर्बल भारत।

५— **रेकार्ड एवं रजिस्टर** ६३८
रेकार्ड का क्षेत्र, रजिस्टर, खेल के सामान का स्टाक रजिस्टर, गेम्स फण्ड का कैश रजिस्टर, वार्षिक रिपोर्ट रजिस्टर, वैयक्तिक शारीरिक शिक्षा रेकार्ड रजिस्टर, शारीरिक परीक्षा तथा डाक्टरी जांच का रेकार्ड, डाक्टरी निरीक्षण फार्म, परीक्षा, स्वास्थ्यकर स्कूल जीवन, स्वास्थ्य शिक्षा, स्वास्थ्य सुरक्षा, स्कूल स्वास्थ्य, विद्यार्थियों के अलग बैठने तथा लिखने पढ़ने का प्रबन्ध, शौचालय, पेशाब घर, स्नान स्थान, खेल के मैदान, व्यक्तिगत स्वास्थ्य प्रशिक्षण, अभ्यास कराने की अवस्था, सामाजिक मान्यता, आत्म सम्मान, चरित्र, पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कार्य, कार्यक्रम के प्रकार।

५— **बजट एवं वित्त** ६५४
व्यय, एथेलेटिक बजट, बजट की तैयारी, व्यय सम्बन्धित प्रश्न, बजट, बजट से लाभ, गेम्स फण्ड का उचित व्यय, बजट का नमूना।

७— **मूल्यांकन** ६५९

मूल्यांकन, तात्पर्य तथा परिणाम, मूल्यांकन तथा व्यवहार, मूल्यांकन की पद्धति ।

८— शारीरिक शिक्षा का निरीक्षण ६६२

निरीक्षण क्या है, विशेष निरीक्षण, निरीक्षक का कर्त्तव्य, निरीक्षण की विधि, निरीक्षक के गुण, विद्यार्थियों का निरीक्षण, विभिन्न प्रकार की संस्थाओं में निरीक्षण की प्रकृति, छोटे स्कूलों तथा प्रारम्भिक पाठशालाओं में, एथेलेटिक क्लब तथा अन्य स्पोर्ट्स संस्थाओं में, चिकित्सालयों में, म्यूनिसिपल, प्ले ग्राउन्ड, यूथ होस्टल, दण्डित व्यक्ति ।

९— मनोरंजन ६७०

मनोरंजन के सिद्धान्त, मनोरंजन के प्रकार ।

१०—ग्राम, नगर तथा औद्योगिक मनोरंजन के पक्ष ६७४

नगर का मनोरंजन, तथा शिल्पकारी, मनोरंजन में नेतृत्व, कैम्पिग के प्रकार ।

शारीरिक शिक्षा की पद्धति

१— पद्धति एवं प्रस्तुतिकरण ६८१

प्रस्तुत करने की तकनीक, वैयक्तिक रूप, तकनीकी तैयारी, विषय सामग्री का संगठन, विषय का प्रस्तुत करना, परिचित करने की विधि, शब्दों में वर्णन विधि, तर्क वितर्क विधि, प्रयोग विधि, प्रदर्शन, नाटक, व्याख्यान आदेश, तालबद्ध करने की विधि, अनुकरण विधि, मनोइच्छा विधि, निश्चित ड्रिल स्मरण करके ताल से करना, मिश्रण विधि, जांच की विधि, अभ्यास । शारीरिक शिक्षा प्रणालियों के अन्दर निम्नलिखित बातें आती हैं, कक्षा प्रबन्ध, सीखने में प्रेरणा, प्रक्रिया का चुनाव, माध्यम, ध्येय, परिणाम, वातावरण, किसी शारीरिक प्रवीणता अथवा कौशल सिखाने की विधि, प्रारम्भिक या पूर्व ज्ञान देना, नवीन कसरतों का सिखाना, नया व्यायाम सिखाने की विधि, स्वदेशी व्यायाम सिखाने की विधि, सहायक तथा छोटे खेल सिखाने की विधि, बड़े खेल, गतिवाही कौशल सिखाने में कुछ मुख्य बातें,

अभ्यास विधि, जांच विधि, कक्षा प्रबन्ध, उपस्थित लेखा, अनुपस्थिति तथा देर से आना, यूनीफार्म तथा निरीक्षण, कक्षा खोलना, बालकों को समूह में विभाजित करना, कक्षा संगठन एवं नियन्त्रण, कक्षा संगठन में साधारण भूल ।

२— **पाठ्य योजना** ७०३

मौसम के अनुसार योजना, योजना की मुख्य बातें, पाठ्य योजना में ध्येय की विशेषता, ध्येय के निम्नलिखित गुण होना चाहिये, पाठ योजना से लाभ, दैनिक पाठ्य योजना के तथ्य, अनौपचारिक सामूहिक कार्य, औपचारिक क्रिया, विशेष क्रियायें, मनोरंजक क्रियायें, जमा होना तथा विसर्जन, पाठ्य योजना का ढांचा, व्यायाम का वर्गीकरण, प्रगति प्रत्येक व्यायाम में, एक पाठ से दूसरे पाठ में, शारीरिक शिक्षा में ताल की महत्ता, उत्तम पाठ्य योजना की कसौटी ।

३— **वर्गीकरण** ७११

Mc. Cloy का Athletic Quotient तथा General Motor Capacity Test, Nelson and Cozen's classification Index, Roger's Strength Index.

४— **प्रतियोगितायें** ७१५

टूरनामेन्ट के लिए आवश्यक विचार, प्रतियोगिता के प्रकार, नाक आउट, सीडिंग, कौन्सोलेशन, डबल एलिमिनेशन, लीग या राउन्ड रोबिन पहला उपाय, लीग प्रणाली दूसरा उपाय, सीढ़ी या लाडेर टूरनामेन्ट, स्पोर्ट्स मीट, संगठन चित्र, वास्तविक स्पोर्ट्स मीट के अधिकारी एवं उनका कर्त्तव्य, सामग्री की लिस्ट, लिस्ट, मीट के अधिकारी, मीट का आरम्भ तथा अन्त, मीट के अधिकारियों का चित्र, एक उत्तम स्पोर्ट्स मीट का प्रोग्राम, तैरने की प्रतियोगिता, कुश्ती प्रतियोगिता, जिमनास्टिक प्रतियोगिता ।

५— **जनता से सम्बन्ध** ७२७

६— **शिक्षा के उपकरण** ७३०

श्रव्य एवं दृश्य-उपकरण, Slide Films, मौडल्स, प्रेरणा एवं प्रोत्साहन ।

७— **ट्रैक बनाना** ७३३

ट्रैक के प्रति ध्यान देने योग्य बातें, ट्रैक निर्माण, ट्रैक में चिन्ह् डालने का उपाय, ४०० मीटर ट्रैक बनाना, विभिन्न दूरी के ट्रैक की नाप, ट्रैक के कुछ विशेष तथ्य ।

८— **शारीरिक शिक्षा क्रियाओं का सीखना** ७५२

जिमनास्टिक की शिक्षा, स्वीडिश तथा डेनिश प्रणाली, जर्मन प्रणाली, एक्सप्रेसिव जिमनास्टिक, तालबद्ध क्रियाओं की शिक्षा, एथेलेटिक क्रियाओं की शिक्षा, कालेस्थेनिक्स की शिक्षा, कालेस्थेनिक्स कक्षा लेना ।

कोचिंग एवं ओफीशियेटिंग

१— **ओफीशियेटिंग के सिद्धान्त** ७६५

कोच के व्यक्तिगत गुण, ओफीशियेटिंग के उद्देश्य, साधारण सिद्धान्त, दूसरे कोच, खिलाड़ियों तथा दर्शकों के साथ सम्बन्ध, साधारण कर्त्तव्य, नियमित समय की आधीनता, ओफीशियेटिंग के स्तर को ऊँचा रखना, कोचिंग के सिद्धान्त, शिक्षा देना, कोचिंग एवं प्रशिक्षित करना, प्रदर्शन एवं कौशल तथा टीम के खेल का विश्लेषण, खिलाड़ियों का चुनाव, खिलाड़ियों को स्थान देना, खिलाड़ियों की देख भाल तथा पर्याप्त तैयारी की दशा, गर्म करना या तैयार होना, **स्थिर एवं गतिपूर्ण व्यायाम**, स्थिर व्यायाम, गति युक्त व्यायाम, **फार्टलेक या स्पीड प्ले**, फार्टलेक की उपयोगिता, फार्टलेक के दोष, **वजन प्रशिक्षण (वेट ट्रेनिंग)** स्पोर्ट्स, **कार्य में सहयोग देने वाले व्यायाम**, हाफ स्विंग, प्रेस एण्ड स्क्वाट, सरकिट ट्रेनिंग, स्ट्राइड जम्प टू क्राउच, स्टेप अप, सिट अप्स, एक हाथ से नाव खेने की हरकत करना, एक हाथ से वजन उठाना तथा ऊपर ले जाना, सिंगल हैन्ड स्नाच, Schedule. **खेल एवं स्पोर्ट्स की उन्नति, प्रोत्साहित एवं प्रचलित रखना**, प्रचार एवं प्रसार, पुरस्कार एवं प्रदान, प्रशिक्षण कैम्प, साधन, समय तालिका, परम्परा ।

२— **कोचिंग में मनोवैज्ञानिक प्रवेश** ८०२

पृष्ठ भूमि, अच्छी तरह से देखना एवं सुनना, दूरी एवं गति की तीव्रता का निर्णय, छठवीं इन्द्रीय का प्रयोग, सीखना, स्मृति एवं

कौशल, स्नायु मण्डल को अनुकूल करना, सीखना एवं कौशल अर्जित करने के नियम एवं सिद्धान्त, ध्यान।

३—**संघर्ष के कौशल का मनोविज्ञान** ८१७

आधार, अच्छे **खिलाड़ी के प्रयोजन**, योग्यता, दक्षता, रुचि, गौरव, संकल्प, **कोचिंग में वैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रयोग**, उत्तोलक, उत्तोलक प्रणाली, शक्ति के खींचने का कोण, **गति**, कोचिंग के कुछ साधारण मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त, इनका प्रयोग।

एथलेटिक्स

१—**स्प्रिंटिंग** ८३७

स्टार्टिंग, बिल्ड अप, ११० मीटर स्प्रिंट, २००० गज की दौड़, प्रतियोगिता के लिये आदेश, कोचिंग कार्यक्रम, साप्ताहिक कार्यक्रम, ४४० गज की दौड़ का अन्त, प्रशिक्षण संगठन, साप्ताहिक कार्यक्रम, आधे मील की दौड़, प्रशिक्षण, साप्ताहिक कार्यक्रम, लम्बी दौड़, समय लेना, स्टार्ट देना।

हाई हर्डल ८४८

प्रवेश तथा टेक आफ, हर्डल तथा लैंडिंग, हर्डल के बीच, अन्त, मुख्य बातें, अभ्यास।

लो हर्डल ८५२

हर्डल तथा लैंडिंग, हर्डल्स के बीच, अभ्यास।

रिले रेस ८५४

स्प्रिंट रिले, मुख्य बातें।

दूर की दौड़ ८५६

आधारभूत तथ्य, प्रतियोगिता कौशल, साप्ताहिक समय सारिणी, अभ्यास।

शाट पुट ८६०

आरम्भ की अवस्था, रीवर्स, अभ्यास।

डिसकस थ्रो ८६४

सेट पोजीशन, घूमना, रीवर्स, मुख्य बातें, साधारण गलतियां, अभ्यास ।

जैवलिन थ्रो ८६७

जैवलिन पकड़ना, फेंकने के प्रकार, अभ्यास मौसम के समय ।

हैमर थ्रो ८७२

पकड़ने की रीति, स्टान्स, स्विंग, पिवट, पहला घुमाव, दूसरा घुमाव, तीसरा घुमाव, थ्रो, अभ्यास ।

पोल वाल्ट ८७५

पोल पकड़ना तथा दौड़ की दूरी, टेक आफ तथा स्विंग, जैक नाइफ और लैंडिंग, अभ्यास ।

हाई जम्प ८८०

प्रणालियां, टेक आफ, वेस्टर्न रोल, स्ट्राइल, मुख्य बातें, अभ्यास ।

लम्बी कूद ८८५

दौड़ एवं मुख्य बातें, टेक आफ तथा चेक मार्क, हवा में क्रिया, लैंडिंग, अभ्यास ।

हौप स्टेप एराउ जम्प ८८८

दौड़ एवं टेक आफ, हौप, स्टेप, कूदना

२— **उच्च संगठन के खेल** ८९१

पृष्ठ भूमि

फुटबाल ८९३

गेंद मारना, नीची किक, अभ्यास, पैर के अन्दर से पास करना, हवा में किक, चिप शाट, वौली, एड़ी के पीछे, गेंद की दिशा बदलने का किक, जाब, गोल में शूट करना, गेंद पकड़ना (ट्रापिंग) ड्रिबलिंग, गेंद लेने की चेष्टा, हेड करना, **विभिन्न स्थानों का कार्य** गोल कीपर, फुल बैक, सेन्टर हाफ, विंग हाफ, सेन्टर फारवर्ड, इन साइड फारवर्ड, विंग फारवर्ड, मिश्रित खेल, थ्रो इन, आक्रमण, बचाव, कोचिंग ।

३— **वालीबाल** ९४३

आधारित सिद्धांत, नीची गेंद, ऊँची गेंद, अभ्यास, विशेष ध्यान देने की बातें, सेट अप, सर्विस, आक्रमण, बचाव का खेल ।

४ · **बास्केट बाल** ९५५

आधारित तथ्य, पकड़ना और पास करना, चेष्ट पास, पास लेन देन में मुख्य बातें, शूटिंग, ले अप शाट, चेष्ट शाट, जम्प शाट, ड्रिबलिंग, पिवट, स्क्रीनिंग, टीम का बचाव, ज़ोन डिफेन्स ।

५— हाकी ९६८
आधारित सिद्धांत, हिट करना, बुल्ली, दाहिनी ओर मारना, ढकेलना पास करना, ड्रिबल, गेंद लेना, प्रत्येक स्थान की तकनीक, खेल की विद्या, व्यक्तिगत स्थान, आक्रमण तथा बचाव।

एनाटमी, फिजियालोजी, फ़िज़ियालोजी आफ एक्सरसाइज़ एण्ड हेल्थ एज्युकेशन

१— **एनाटमी फिजियालोजी एण्ड फिजियालोजी आफ एक्सरसाइज** ९८२
मानव शरीर, जीव का प्रारम्भ, पिंड गर्भ ज्ञान का प्रमाण, वंशानुक्रम एवं वातावरण, कोष, तन्तु, अंग एवं संस्थान।

२— **अस्थि संस्थान** ९८७
जोड़ या सँधि, शारीरिक आसन।

३— **मांस संस्थान** १००८
माँसपेशियों के गुण, व्यायामिक क्रिया, धड़, हाथ एवं पैर की क्रिया मांसपेशियों के प्रकार।

४— **रक्त परिभ्रमण संस्थान** १०१९
व्यायाम का रक्त परिभ्रमण पर प्रभाव।

५— **श्वास संस्थान** १०२८
जीव सम्बन्धी शक्ति, व्यायाम का श्वास संस्थान पर प्रभाव।

६— **पाचन संस्थान** १०३५

७— **निष्क्रमण संस्थान** १०४२
गुर्दे, त्वचा

८— **सन्तानोत्पत्ति संस्थान** १०४५

९— **शरीर के विशेष अंग** १०४८
कान, आँख।

१०— **स्वास्थ्य विज्ञान एवं स्वास्थ्य शिक्षा** १०५५
व्यक्तिगत तथा सामूहिक स्वास्थ्य, समाज की सफाई, वायु, सूर्य-प्रकाश, सफाई या गन्दगी का निवारण, पारिवारिक कुशलता, मादक द्रव्यों का प्रयोग, भोजन, संतुलित भोजन, स्कूल में दोपहर का खाना।

११— **गति विद्या** १०६७

शारीरिक शिक्षा का सिद्धान्त

१

सिद्धान्त

सिद्धान्त की प्रकृति

जीवन में पग पग पर, प्रत्येक क्षण, कोई न कोई निर्णय अवश्य करना पड़ता है। हम किसी एक की अपेक्षा दूसरे को चुन लेते हैं। अनेकों मार्ग में से एक को अपनाते हैं असंख्य सम्भावनाओं में से उस सम्भावना का आधार लेते हैं जो सफल हो। इस चुनाव की रीति में इस विषय पर बल दिया जाता है कि अनेक वस्तु एवं समस्यायें जो सन्मुख प्रस्तुत हैं, उनका मूल्य भिन्न भिन्न है, एवं उनका परिणाम विभिन्न है। ध्येय के अर्जन के लिए कुछ दूसरों से उत्तम होते हैं। अतएव सही चुनाव के लिए निर्देश की आवश्यकता है। जिस कार्य या विषय का चुनाव हो उसके सिद्धान्त की आवश्यकता होती है। यह सिद्धान्त व्यक्ति के सर्वोत्तम विचार एवं प्रमुख आवश्यकता प्रदर्शित करते हैं। आधुनिक जीवन में सामाजिक जटिलता के कारण, प्रत्येक विषय, वस्तु एवं प्राणि अनेकों मिश्रित दशा में पाये जाते हैं। अतः इनके सिद्धान्त भी अन्य मिश्रित विषय एवं दशा से प्राप्त होंगे। वर्तमान काल की सामाजिक एवं नैतिक आवश्यकताओं के कारण, जिन पर आधुनिक सभ्यता का आधार है, प्रत्येक प्रकार की शिक्षा में चुनाव विस्तृत रूप में होता है; जिससे, प्रत्येक चुनाव में इन परम आवश्य-

कताओं को प्रमुख स्थान प्राप्त हो। जीवन की प्रत्येक वस्तु समाज एवं चरित्र से सम्बन्धित है। अतः शारीरिक शिक्षा ऐसे विषय में भी उन्हीं क्रियाओं का चुनाव होता है जो प्रजातांत्रिक मानव सम्बन्ध के सहायक हों एवं ऐसी अवस्था, अवसर तथा साधन प्रदान करें जिनके द्वारा व्यक्ति में सहिष्णुता, उदारता, आत्मनिर्भरता, शुद्धता, निश्चयात्मकता, एकाग्रता, समृद्ध राष्ट्र की इच्छा, शारीरिक सन्तुलन, सहयोग की भावना तथा सर्व प्रमुख बलिष्ठ एवं वास्तविक व्यक्तित्व के निर्माण का ध्येय आदि सम्भव हो सके।

सिद्धान्त वे साधारण विचार हैं जो वैज्ञानिक तथ्यों पर या दार्शनिक निर्णयों पर निर्धारित हैं एवं व्यक्ति के अनुभव या अभ्यान्तरिक दृष्टि के द्वारा प्राप्त होते हैं। ये आदेश स्तम्भ हैं जिनके द्वारा जीवन का मार्ग दर्शन होता है। इन सिद्धान्तों में भूत, वर्तमान एवं भविष्य एक साथ ही लिप्त हैं। सिद्धान्त के स्वयंसिद्धि एवं सत्यता की यही कसौटी है।

दर्शनशास्त्र पर आधारित सिद्धान्त

दर्शन, सूक्ष्म पदार्थ सम्बन्धी अध्ययन है। दर्शन यह आदेशित करता है कि कोई वस्तु क्यों एवं क्या होनी चाहिए। कैसे होनी चाहिए यह विज्ञान का विषय है। अतएव दर्शनशास्त्र पर आधारित सिद्धान्त विज्ञान के प्रयोग पर नहीं वरन् अभ्यांतरिक दृष्टि, समय तथा अनुभव पर होते हैं। यह समाज एवं परम्परा के अनुभव तथा वर्तमान ज्ञान के ऊपर निर्भर होता है। दार्शनिक सिद्धान्त के आधार, अभ्यांतरिक दृष्टि, ज्ञान एवं अनुभव ही हैं। सामाजिक जीवन के प्रजातांत्रिक विचार के ध्येय मनुष्य के सम्मान, समान अवसर, व्यक्तिगत मूल्य, मानव विभिन्नता एवं समानता आदि तथ्यों के सैद्धान्तिक प्रदर्शन से ही निर्धारित किये जाते हैं। जिस राष्ट्रीय संस्कृति के ये आधार हैं उसके लिये वे महत्व पूर्ण होते हैं। अतः एक ही विषय में भिन्न भिन्न स्थान तथा परिस्थिति के कारण सैद्धान्तिक अन्तर होना संभव है। विषय की समानता में सैद्धान्तिक समानता एवं विभिन्नता दोनों ही प्रदर्शित होंगी। भारतवर्ष की शारीरिक शिक्षा अन्य देशों की शारीरिक शिक्षा के समान होते हुए भी भिन्न होगी। मनुष्य की प्रकृति सर्वत्र एक सी हो सकती है; उसके सिद्धान्त स्थायी हो सकते हैं तथा प्रत्येक स्थान में अपनाये जा सकते हैं किन्तु सामाजिक,

राजनैतिक, वातावरण तथा समय के कारण परिस्थितियों में अन्तर का होना अनिवार्य है। अतएव प्रत्येक राष्ट्र का अपनापन होना आवश्यक हो जाता है। सिद्धान्त पर विचार करते हुए हम इस तथ्य को भुला नही सकते।

उन आदर्शों को जिन्हें योग्य समझा जाता है तथा तथ्य जो प्राप्त हैं उन्ही पर ध्येय निर्धारित करना दर्शन का कर्तव्य है।

विज्ञान पर आधारित सिद्धान्त

वैज्ञानिक रीति से सिद्धान्तों का निर्माण आरम्भ में ही प्रमाणित कर के स्थिर नहीं किया जाता। यह प्रायः असम्भव होगा। वास्तविकता यह है कि विज्ञान सत्य की खोज में रहता है। सत्य स्वयं सिद्ध है। सत्य का ज्ञान अविष्कार के रूप में नहीं किन्तु प्रयोग के द्वारा प्राप्त किया जाता है। वैज्ञानिक रीति से सत्य सदा जाँच के ढंग पर होता है, सम्पूर्णता के रूप में नहीं। कितने सत्य हैं जिनके विषय में अभी तक कोई ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ। अनेक सत्य ऐसे हैं जिनके विषय में अत्यन्त अल्प ज्ञान प्राप्त है। इतना होते हुये भी अनेक विषयों के प्राप्त सत्य ऐसे प्रतीत होते हैं जिनकी दिशा में अधिक उन्नति अब सम्भव नही तथा अपने क्षेत्र में प्रायः पूर्णरूप से प्राप्त हो चुके हैं, अतएव उनके आधार पर सिद्धान्तों का निर्माण निःसंकोच किया जा सकता है, जैसे शरीर रचना शास्त्र, शरीर क्रिया शास्त्र, मनोविज्ञान, जीव विज्ञान आदि। इन विषयों पर प्रायः अन्तिम शब्द कहा जा चुका है। सम्पूर्णता का प्रमाण न दे सकने पर भी सत्य की वास्तविकता का ज्ञान है।

अनेक बार वस्तुओं को सत्य मान कर उसके आधार पर तब तक कार्य भी किया जाता है जब तक उसे असत्य न प्रमाणित कर दिया जाये। जैसे प्राचीन काल में यह विश्वास था कि पृथ्वी स्थिर है तथा सूर्य उसके चारों ओर घूमता है। आज हमें यह पता है कि सत्य बिलकुल इसके विपरीत है अर्थात सूर्य स्थिर है तथा पृथ्वी घूमती है। अणु की सत्यता अनन्तकाल से थी किन्तु उसका अविष्कार अभी किया गया है। सिद्धान्त अपनी अन्तिम स्थिति तक परीक्षात्मक अवस्था में ही रहते हैं जब तक उन्हें सत्य या असत्य न घोषित कर दिया जाये।

वैज्ञानिक अध्ययन विधि में प्रदत्त एकत्र करना, वर्गीकरण, कल्पना की सृष्टि, निरीक्षण, प्रयोग एवं अन्त में नियम को स्थिर करना, तथा उसके द्वारा सिद्धान्त निर्माण करके उसे सिद्ध करना होता है। जैसे डारविन का प्राकृतिक चुनाव, न्युटन की आकर्षण शक्ति आदि। कभी कभी वैज्ञानिक सिद्धान्त इतने स्पष्ट होते हैं कि वे अटल प्रतीत होते हैं तथा प्राकृतिक नियमों के द्वारा मान्यता प्राप्त करते हैं।

शारीरिक शिक्षा में सिद्धान्त

शारीरिक शिक्षा एक प्राचीन एवं आधारभूत शिक्षा है। असभ्य मनुष्य के जीवन में जो शारीरिक क्रियायें थीं वे आज भी प्रस्तुत हैं। उसके रूप अवश्य परिवर्तित हैं। उनकी आवश्यकतायें वर्त्तमान हैं। शारीरिक क्रियाओं के कारण, यह शिक्षा, शारीरिक समझी जाने लगी थी। उस समय मनुष्य को दो निश्चित विभागों, मानसिक एवं शारीरिक में विभाजित किया जाता था। आधुनिक ज्ञान के कारण मनुष्य का एकत्व सिद्ध है। शिक्षा मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास से सम्बन्धित है। अत: शारीरिक शिक्षा वह शिक्षा हो गयी है जो शारीरिक माध्यम से दी जाती है। शारीरिक शिक्षा के इस ध्येय के कारण यह संवेगात्मक प्रतिक्रिया, पारस्परिक सम्बन्ध, सामूहिक व्यवहार, मानसिक रूप से सीखना, सामाजिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विषयों आदि से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करती है। शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास एक ही स्तर पर होना आवश्यक है।

व्यक्ति सम्पूर्ण होते हुये भी समाज एवं वातावरण का एक भाग है। अतएव वास्तविक परिस्थिति में पूर्ण व्यक्ति तथा उसका वातावरण आपस में एक दूसरे को प्रभावित करते हुये विकसित होते हैं। इस प्रकार के पारस्परिक अवलम्बन के कारण शारीरिक परिणाम ही नहीं किन्तु अन्य परिणाम भी प्रस्तुत होते हैं। शारीरिक शिक्षा में शारीरिक कार्यों के तकनीक एवं परिणाम आदि पर अवश्य बल दिया जायेगा किन्तु साथ ही उसके सह ज्ञान पर तथा उसके परिणाम पर ध्यान देना आवश्यक होगा। दोनों में एक संतुलन एवं मेल की आवश्यकता होगी। अत: शारीरिक शिक्षा के पूर्ण अन्तिम रूप में पूर्ण व्यक्ति की शिक्षा होगी जिसमें शारीरिक माध्यम अपना उचित स्थान ग्रहण

कर, व्यक्ति की मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक एवं आध्यात्मिक शक्तियों को विकसित करने में पूर्णतया सहायक एवं समर्थ होगा।

समाज के जटिल होने के कारण सामाजिक वातावरण अत्यन्त मिश्रित होता चला जा रहा है। एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी का भार इस ओर अधिक होता जाता है। अतएव इस दशा को सुलझाने के लिये भिन्न भिन्न प्रकार से छान बीन एवं चुनाव करने की आवश्यकता होती है। शारीरिक शिक्षा में भी सामग्री के बाहुल्य, विस्तृत उद्देश्य एवं तीव्र गति जीवन के कारण चुनाव की आवश्यकता होती है। प्रत्येक गतिप्रद अनुभव से शारीरिक शिक्षा होती है किन्तु कुछ के परिणाम दूसरों से अच्छे होते हैं। इन कारणों से उपयुक्त सामग्री, समय, विषय, गति आदि में चुनाव होना अनिवार्य होता है। चुनाव के आदेश के लिये सिद्धान्त की आवश्यकता होती है। अतः शारीरिक शिक्षा में शारीरिक शिक्षा सिद्धान्त विषय का निर्देशन करता है।

शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त दो स्रोतों, विज्ञान एवं दर्शन से प्राप्त किये जाते हैं। शरीर रचना शास्त्र, शरीर क्रिया शास्त्र, जीव विज्ञान, मनोविज्ञान, मनुष्य प्रकृति विज्ञान आदि विज्ञान पर शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त आधारित हैं।

दर्शन के आधार पर शारीरिक शिक्षा सिद्धान्त, मनुष्य की स्वतंत्रता, आदर्श, चरित्र आदि से सम्बंधित है।

साधारणतया विज्ञान पर आधारित सिद्धान्त स्थिर रहते हैं किन्तु दर्शन पर आधारित सिद्धान्त, दर्शन परिवर्त्तन के साथ परिवर्तित होते हैं।

बहुधा असत्य पर निर्भर विश्वास उसी तरह मान्यता प्राप्त करता है जिस तरह सत्य पर आधारित सिद्धान्त। सिद्धान्त शब्द का अर्थ सदैव सत्यता से है। इस सत्य की कसौटी पर तौले हुये निष्कर्ष को अपनाने में किसी प्रकार का संदेह या मतभेद होना सम्भव नहीं।

राष्ट्र को शक्तिशाली युवकों की आवश्यकता है। परिवर्तनशील संसार को विशेष शक्ति की आवश्यकता है। अणु युग के कारण एक विशेष प्रकार के

जीवन की आवश्यकता हो गयी है। शिल्पकारी तथा उद्योग की उन्नति तथा भिन्न भिन्न आविष्कारों के कारण जीवन तीव्र गति से चल रहा है। ध्वनि से तीव्र वायुयान, शीघ्रवाही यातायात, मानव समूह की भीड़ आदि जीवन को एक नया मोड़ देती हैं। पारस्परिक प्रतियोगिता आदि के कारण कई एक विशेष गुणों के सिखाने की आवश्यकता हो गयी है, जैसे शरीर के विभिन्न अंगों का श्रेष्ठ सहयोग जो कठिन से कठिन तथा बारीक कार्य सरलता से कम समय में सम्पन्न कर सके। उचित निर्णय कर सकना, साहस तथा तत्परता के साथ प्रतिक्रिया का होना, दूसरों के अधिकार एवं आवश्यकता को ध्यान में रखना, अवकाश का सदउपयोग, उचित मनोरंजन, अपराध प्रवृत्ति का अवरोध, संवेगात्मक संतुलन एवं संतोष आदि समस्यायें हमारे सामने प्रस्तुत होती हैं जिनका सही उत्तर देना अति आवश्यक है। यदि हम इन समस्याओं की ओर ध्यान न दें तथा इनकी अनिवार्य आवश्यकताओं को न समझें तो मानव चेष्ठा को निरर्थक कर देते हैं। इस परिवर्तनशील संसार में परिवर्तित समाज की आवश्यकताओं को भुला देने का अर्थ है, समय से पीछे होना। शारीरिक शिक्षा को समाज के साथ साथ चलना है, तथा उसकी समस्याओं को पग पग पर उचित रूप से हल करना एवं उसकी आवश्यकताओं को प्रतिक्षण पूर्ण करना है।

भारतवर्ष की शारीरिक शिक्षा किसी विदेशी शारीरिक शिक्षा के आधार पर नहीं हो सकती। हमारी अपनी समस्यायें हैं तथा हमारी आवश्यकतायें दूसरों से भिन्न हैं तथा उनकी महत्ता भी भिन्न भिन्न है। कुछ समस्यायें, जैसे तीव्र गतिवाही यातायात, शिल्पकारी में विशेषज्ञता, नियमों के प्रति साधारण असावधानी, जन समूह की नगरों में भीड़, उचित अवसर का प्रत्येक के लिए उपलब्ध होना, व्यापारिक मनोरंजन, अवकाश की समस्यायें, स्वास्थ्य की समस्यायें, ग्रामीण जनता की प्रगति एवं रक्षा, संतुलित भोजन, आदि असंख्य समस्यायें तत्कालिक अध्ययन एवं ध्यान आकर्षित करती हैं। अनेकों विषय में समानता भी हो सकती है। अतएव भारतीय शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त ऐसे होने चाहिएं जिनमें परिवर्तनशील समय के तथ्य उस भविष्य के आइने में, जिसे हम रूप देना चाहते हैं, प्रतिबिम्बित हो।

वे वैज्ञानिक विशेष विद्या सम्बन्धी तथ्य तथा दार्शनिक आदेश जो शारीरिक शिक्षा के प्रयोग को उसके अनेक रूप में धनी, उचित एवं पूर्ण ठहराते हैं, उनकी कभी भी उपेक्षा नहीं की जा सकती वे महत्वपूर्ण हैं। इनके द्वारा

महत्वपूर्ण समस्याओं का हल होता है। इस प्रकार की शारीरिक शिक्षा का ध्येय तथा उद्देश्य सम्पूर्ण जीवन को सफल करने का है। शिक्षा में ध्येय एवं उद्देश्य माध्यम से कहीं अधिक महत्वपूर्ण हैं। ध्येय एवं उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए माध्यम का प्रयोग करना है तभी सफलता प्राप्त होगी। उद्देश्य की पूर्ति के लिये माध्यम उपलब्ध करना आवश्यक हो जाता है।

ध्येय एवं उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये सिद्धान्त निर्धारित हैं। यदि सिद्धान्त सत्य हैं तो उन्हें प्रत्येक अवस्था में उचित स्थान देना चाहिये। सिद्ध सिद्धान्त में परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन करना अनुचित है।

शारीरिक शिक्षा में सिद्धान्त को क्रियात्मक रूप देना आवश्यक है तथा प्रत्येक अवस्था में उसी के आधार पर चलना अनिवार्य है।

सिद्धान्त की उपयोगिता

शिक्षा प्रदान करने की समस्यायें एक समाज से दूसरे समाज, एक स्कूल से दूसरे स्कूल में, दिन प्रति दिन भिन्न होंगी। किसी प्रकार के दृढ़ नियम, तकनीक या प्रणाली स्थापित नहीं की जा सकती जो सदैव प्रत्येक प्रश्न का उत्तर प्रत्येक समय एवं स्थान में दे सके। अनेक शिक्षक, निरीक्षक, संगठनकर्ता जो शारीरिक शिक्षा के कार्य में व्यस्त हैं निरन्तर किसी कार्य के करने की प्रणाली या तकनीक की खोज करते हैं किन्तु शिक्षा के आधारभूत तथ्यों में उनकी जरा सी भी रुचि नहीं। ये वे व्यक्ति हैं जो अभ्यास की प्रमुखता बताते हैं एवं शिक्षा सिद्धान्त को तुच्छ दृष्टि से देखते हैं। वे अपने कार्य की परिवर्तनशीलता को भली भांति नहीं समझते जिसके कारण उद्देश्य एवं सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए निरन्तर संशोधन करना आवश्यक हो जाता है। वे शिक्षक जो केवल शैक्षणिक प्रणालियों एवं तकनीक से परिचित हैं एवं उसी ओर ध्यान देते हैं वे उस वाहन चालक की तरह हैं जो मशीन को चलाने की चतुरता में निपुण हैं किन्तु उन्हें मार्ग या स्थान जहां वे जाना चाहते हैं उसका कोई ज्ञान नहीं। ऐसी अवस्था में आकस्मिक सफलता प्राप्त हो सकती है किन्तु सम्भावना यही है कि असफलता ही होगी।

प्रत्येक व्यवसाय के सिद्धात होते हैं जिनके द्वारा वह आदेशित होता है तथा सम्पूर्ण निर्णय उसी पर आधारित होते हैं।

सिद्धान्त शिक्षा का आधार है। जो शिक्षा के सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें यह समझना आवश्यक है कि शिक्षा क्या है, उसका अन्त क्या है ? तथा उस के अन्त तक पहुँचने के लिए सर्वोत्तम मार्ग कौन सा है।

शारीरिक शिक्षा के कुछ सिद्धान्त

शरीर क्रिया तथा शरीर रचना शास्त्र पर आधारित सिद्धान्तः—

(१) शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में बड़ी मांस पेशियों के प्रयोग के लिये पर्याप्त क्षेत्र तथा अवसर प्राप्त होना चाहिये।

(२) बालक के बढ़ाव तथा विकास सम्बन्धी तथ्यों के अनुसार कार्यक्रम का निर्माण होना चाहिये।

(३) व्यक्तिगत असमानता तथा योग्यता का ध्यान रखते हुये विभिन्न प्रकार की क्रियाओं का चुनाव करना चाहिये।

(४) अन्दर के कार्यों (Indoor Activities) की अपेक्षा बाहर के कार्यों (Outdoor Activities) को प्रोत्साहित करना चाहिये।

(५) उन कार्यों का जिस से संवेग के द्वारा आन्तरिक रसों का प्रवाह होता है उनका प्रयोग होना आवश्यक है।

(६) उन कार्यों को जिनसे माँस पेशियों का विरोधी स्वभाव भंग होता है, कार्यक्रम में सम्मिलित नहीं करना चाहिये।

(७) दौड़ने से पूर्व झुकी हुई अवस्था लेना चाहिये।

(८) लड़के तथा लड़कियों का कार्यक्रम परिपक्वता के पश्चात भिन्न होना चाहिये।

(९) किसी शारीरिक क्रिया के पूर्व भोजन तथा पानी, खाना या पीना नही चाहिये।

(१०) चलने में पांव सीधा रखना चाहिये ।

मनोविज्ञान पर आधारित सिद्धान्त

(१) शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में प्राकृतिक खेल की क्रियायें बहुतायत से होनी चाहिये ।

(२) क्रियायें मनोवैज्ञानिक आयु की विशेषताओं तथा शरीर क्रिया शास्त्र के नियम के अनुसार चुनना चाहिये ।

(३) व्यक्तिगत विभिन्नता का ध्यान रखना चाहिये ।

(४) सीखने के नियमों के अनुसार सिखाना चाहिये ।

(५) क्रियायें जो संवेग तथा स्थायीभाव में सहायक हों उन्हें करना चाहिये ।

(६) क्रियाओं का चुनाव ऐसा हो जिनमें प्रगति की संभावना हो ।

(७) उपयुक्त अभ्यास तथा पुनरावृत्ति के लिये पर्याप्त अवसर प्राप्त होना चाहिये ।

सामाजिक आधार पर निर्धारित सिद्धान्त

(१) कार्यक्रम में ऐसी क्रियायें हों जो अवकाश के समय प्रयोग में आ सकें ।

(२) क्रियाओं का चुनाव उनके प्रजातान्त्रिक नागरिकता के प्रशिक्षण की सम्भावनाओं के अनुसार होना चाहिये ।

(३) समाज की आवश्यकताओं तथा आदर्श के अनुसार कार्य क्रम होना चाहिये ।

(४) चरित्र निर्माण में सहायक क्रियाओं का चुनाव आवश्यक है ।

(५) वे क्रियायें कार्यक्रम में होनी आवश्यक हैं जो वर्तमान समाज को

प्रतिबिम्बित करती हैं तथा भविष्य के रूप की आशा करती हैं।

(६) कार्यक्रम के द्वारा जीवन में अनुशासन तथा नियन्त्रण की शिक्षा हो।

(७) शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम, देश की आर्थिक स्थिति, सामाजिक जीवन, सभ्यता तथा राजनीतिक व्यवस्था पर आधारित होना चाहिये।

स्वास्थ्य के आधार पर निर्धारित सिद्धान्त

(१) कपड़े तथा शरीर साफ़ और स्वच्छ होना चाहिये।

(२) खेल में भाग लेने के लिये जिस यूनीफार्म का प्रयोग किया जाय वह धुली हुई हो या धूप में सुखाई गई हो जिससे किसी प्रकार के संक्रामक रोग लगने का भय न हो।

(३) वायु, प्रकाश तथा शुद्ध जल का प्रबन्ध हो।

(४) दैनिक कार्य जैसे स्नान, भोजन, शौच, निद्रा इत्यादि समय पर होना चाहिये।

(५) संतुलित भोजन का प्रयोग होना चाहिये।

(६) मादक द्रव्यों के प्रयोग से वंचित रहना चाहिये।

२

शारीरिक शिक्षा विषय एवं विस्तार

शारीरिक शिक्षा का अर्थ

शारीरिक शिक्षा, सामान्य शिक्षा का वह अंग है जिसके अन्तर्गत वे क्रियायें आती हैं जिनके द्वारा शिक्षा के स्पष्ट उद्देश्य अर्जित करने की आशा की जाती है। इन क्रियाओं के द्वारा व्यक्ति उन दशाओं की ओर निर्देशित होता है जिनके द्वारा सामान्य शिक्षा के अनेकों जीववैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, शरीरक्रिया शास्त्र सम्बन्धी आदि सिद्धान्तों की पूर्ति होती है। शारीरिक शिक्षा की स्थिति दूसरे विषयों के तुल्य ही नहीं वरन उँची रहती है यह विचार क्रमशः अपना उचित स्थान पा रहा है। वास्तविक शारीरिक शिक्षा को उसके अनेकों क्रियाओं एवं उप विभागों से मिश्रित नहीं करना चाहिये। शारीरिक शिक्षा; ऐथेलेटिक्स, जिमनास्टिक, खेल व्यायाम, शारीरिक डील डौल साधन आदि नहीं है। ये सम्पूर्ण क्रियायें इसके अन्तर्गत आती हैं एवं यह इन सबका मेल तथा उससे अधिक है। ये क्रियायें शारीरिक शिक्षा का केवल एक खंड है।

आधुनिक विद्वान इस विचार पर अधिक बल देते हैं कि शिक्षा सम्पूर्ण व्यक्ति की होती है। विद्यार्थी शिक्षक के सन्मुख पूर्ण व्यक्ति के रूप में आता है। अतएव यह असम्भव है कि प्रत्येक स्कूल दिवस में उसे खंडित कर के शिक्षित किया जाये तथा स्कूल के अन्त में उसे पुनः पूर्ण कर के स्कूल से भेजा जाये। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि सम्पूर्ण अपने खंडों के मेल से अधिक है। इसी विचार को सामान्य शिक्षा एवं शारीरिक शिक्षा में अपनाते हुये, हम इस निष्कर्ष पर पहुचेंगे, कि हमें इस 'सम्पूर्ण व्यक्ति से प्रयोजन है।'

सम्पूर्ण व्यक्ति शक्तियों का पुंज है। व्यक्ति की प्रभावशाली शक्तियां उस के तीन रूप, शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक के द्वारा विकसित होती हैं। इनमें से किसी एक रूप का भी विकास दूसरों की अपेक्षा अल्प या अधिक हो जाये तो व्यक्तित्व में संतुलन का अभाव हो जाता है। मनोविज्ञान के द्वारा यह स्पष्ट है कि प्रत्येक मानसिक विचार की क्रिया होती है, तथा प्रत्येक शारीरिक क्रिया मानसिक विचार पर आधारित होती है। इस प्रकार दोनों परस्पर सम्बन्धित हैं। व्यक्ति के एकत्व को उसके शारीरिक, मानसिक, एवं नैतिक रूप में समझना आवश्यक है। वह विभाजित नहीं हो सकता। इसी प्रकार शिक्षा भी खंडित नहीं की जा सकती। उसके विभिन्न रूप होते हैं। मनुष्य के शिक्षित होने का अर्थ है कि व्यक्ति स्वयं को, अपनी प्रतिक्रियाओं एवं वातावरण के पारस्परिक प्रभाव से, सदैव परिवर्तित, संशोधित एवं अनुकूलित करता रहता है। संगठित शिक्षा उन परिवर्तन, संशोधन एवं अनुकूलता को इस प्रकार प्रयोग करता है कि व्यक्ति अपने जीवन के विभिन्न रूप में सर्वांगीण विकास कर सके तथा परिणामतः संसार सम्बन्ध में एक उपयोगी स्थान ग्रहण कर सके।

शारीरिक शिक्षा अपने में अन्त नहीं बल्कि इस श्रेष्ठ विचार की पूर्ति करने में सहायक है।

शारीरिक शिक्षा के ध्येय एवं उद्देश्य

ध्येय कोई दिशा, विचार या अन्त प्रकट करता है। यह प्रकृति में साधारणतः सामान्य होता है। बहुधा अन्त या ध्येय उस समय तक दृष्टिगोचर नहीं होता जब तक साधन सन्मुख आकर संगठित न हो जायें। उद्देश्य प्रणाली का वह विधिपूर्ण, सही एवं सीमित वर्णन है, जो ध्येय के प्राप्त करने के लिये प्रयोग किया जाता है। उद्देश्य ध्येय के प्राप्त करने के मार्ग में निर्देशन स्तम्भ या मील का आदेश पत्थर है। उद्देश्य निश्चित योजना है जो इस बात का द्योतक है कि ध्येय प्राप्ति की चेष्टा की जा रही है।

यह अत्यन्त आवश्यक है कि सर्व प्रथम शिक्षा दर्शन स्थापित किये जायें क्योंकि इसी दर्शन में शारीरिक शिक्षा का ध्येय होगा। यदि ध्येय के प्राप्त करने की सम्भावना है तब उस ध्येय के प्राप्त करने के लिये प्रति दिन के लक्ष्य

नियत करना आवश्यक होगा जिससे अन्त में ध्येय प्राप्त किया जा सके। इस प्रकार उद्देश्य, ध्येय के प्राप्त करने के लिये वास्तविक माध्यम हो जाता है।

उद्देश्य विशेष होते हैं किन्तु ये सामान्य भी हो सकते हैं। उद्देश्य अल्प या बहुसंख्यक हो सकते हैं।

प्रत्येक कार्य का किसी प्रकार का उद्देश्य होना आवश्यक है।

उद्देश्य ललकार के रूप में (Challenging) होना चाहिये। उद्देश्य में यदि यह गुण न हो तो इस में अधिक लोग बहुत दिन तक भाग नहीं लेंगे। वह कार्य जिसमें ललकार है उसे करने की अधिक चेष्टा की जाती है। साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिये कि वह अत्यन्त कठिन न हो क्योंकि कठिनता के कारण चेष्टा में शिथिलता आ सकती है। उद्देश्य को सफलता की सम्भावना के अन्तर्गत होना आवश्यक है।

उद्देश्य आगे बढ़ाता है। जब एक उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है तब दूसरे की पूर्ति की चेष्टा होती है। उद्देश्य ध्येय तक पहुंचने की क्रमिक सीढ़ी नहीं है। यह स्वयं चालक प्रणाली भी नहीं है। एक उद्देश्य के पश्चात् दूसरे उद्देश्य में भाग लेना, प्रथम उद्देश्य की सफलता पर निर्भर है। अवकाश, स्वास्थ्य, इच्छा, थकान आदि से भी व्यक्ति के उद्देश्य प्रभावित हो सकते हैं। किसी दिये समय में कौन से उद्देश्य के लिये कार्य किया जायेगा, विचार एवं बुद्धि से ही निर्धारित किया जा सकता है। वास्तविक रूप में ध्येय प्राप्त करना असम्भव हो जाता है क्योंकि जैसे ही वह प्राप्त होता है वैसे ही वह उद्देश्य के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

शारीरिक शिक्षा के ध्येय के निर्धारित करने के पूर्व इस क्षेत्र के कुछ विशेषज्ञों के विचार से परिचित होना आवश्यक है।

'Physical Education is that part of Education which takes place through activities which involve the motor mechanism of the human body and which results in the individual's formulating behaviour patterns.'

—Sharman

'Physical Education is one phase of the total education process and that it utilizes activity drives that are inherent in each individual to develop a person organically, neuromuscularly, intellectually, and emotionally.'

—Nash

'Physical Education is that phase of the total education process which pertains to vigorous activities involving the muscular system and the learning that results from participation in these activities.'

—Nixon & Cozens

'Physical Education is that phase of education which takes place through physical activity.'

—Voltmer & Esslinger

'Physical Education is that phase of education which is concerned, first, with the organization and the leadership of children in big muscle activities, to gain the development and the adjustment inherent in the activities according to social standards; and second with the control of health or growth conditions naturally associated with the leadership of the activities so that the educational process may go on without growth handicaps.'

—Hetherington

'The aim is social efficiency. The final aim should be an individual better equipped to meet the demands of the society in which he lives and to make contributions to that society.'

—Wayman

'The aim of Physical Education is to contribute to the individual's social effectiveness and personal welfare through guided participation in Physical activities'.

—Davis & Lawther

'Physical education is the contribution made to the complete education of an individual through the psycho-motor or large muscle activities.'

—Oberteuffer

'Physical education, as one part of education, aims to aid the individual to attain his fullest development in meeting the demands of living in a democracy and in an interdependent world. It achives this through the selection and guidance of experience appropriate to the field directed toward the total fitness of the individual.'

—Kozman Cassidy Jackson

'Physical Education should aim to provide skilled leadership and adequate facilities which will afford an opportunity for the individual or group to act in situations which are physically wholesome, mentally stimulating and satisfying and socially sound'.

—Williams

'Aim of physical Education is the creating of an environment that will promote the physical, emotional, social, and moral development of youth.'

—Downey Davis Mc Cann Stitt

'The aims of Physical Education is the promotion of normal growth and organic development. The development of qualities relating to society and the individual. To engender in youth an intelligent and healthful interest that shall lead to the lifelong practice of forms of active exercise which favour a continued high level of physical efficiency and of stimulating social contact. To instruct youth in the science of health.'

—Buck

'Physical education, an integral part of the total education process, is a field of endeavour which has as its aim the development of physically, mentally, emotionally and socially fit citizens through the medium of physical activities which have been selected with a view to realizing these outcomes'.

—Bucher

ये शारीरिक शिक्षा की विभिन्न परिभाषायें पृथक पृथक शब्दों में प्राय: एक ही ध्येय प्रदर्शित करती हैं। यह पूर्णतया स्पष्ट है कि शारीरिक शिक्षा का ध्येय तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(१) शरीर का विकास

(२) संवेगात्मक सामाजिक व्यक्ति का विकास

(३) शरीर के द्वारा व्यक्ति का विकास

(१) शरीर का विकास

इस के अन्तर्गत शारीरिक शिक्षा का एक ऐसा प्रोग्राम निर्माण करना है जिसके द्वारा भाग लेने वाले को उसके बढ़ाव तथा विकास में सहायता मिले। भाग लेने के परिणाम स्वरूप ऐसे शारीरिक गुण अर्जित हों जिसके कारण, शक्ति, सहनशक्ति, थकान से बचने एवं शीघ्र थकान दूर कर लेने की योग्यता, उत्तम स्वास्थ्य, सम्मान पूर्ण सही एवं सीधा शरीर अथवा अच्छा डील डौल प्राप्त हो। कार्य करने की परिस्थिति शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ हो। मनुष्य की अवस्थायें उचित एवं उत्तम हों तथा विज्ञान एवं अनुभव के आधार पर हो। अत: वातावरण पर नियन्त्रण हो जिनमें स्वास्थ्य सम्बन्धी विषय जैसे वायु, धूल, स्वच्छता, संक्रामक रोग आदि आते हैं। शारीरिक व्यायाम की क्रियाओं से शरीर क्रिया शास्त्र का परिणाम अर्जित हो। यह केवल तीव्र गति एवं कठिन परिश्रम के व्यायाम से ही प्राप्त होता है। प्रत्येक क्रिया की कसौटी है शारीरिक रीति से स्वस्थकर होना।

(२) संवेगात्मक सामाजिक व्यक्ति का विकास

व्यक्ति इस प्रकार शिक्षित हो कि वह अपना उचित स्थान प्रजातान्त्रिक जीवन में ग्रहण करे एवं उस के प्रति अपने उत्तरदायित्व को क्रियाशील रूप में सम्पन्न करे। शारीरिक शिक्षा के अनुभवों के कारण नयी स्थिति एवं वातावरण को अधिक अर्थमय एवं उपयोगी रूप में समझें। शारीरिक शिक्षा के द्वारा उपयुक्त साधन उपलब्ध हों जिसके कारण नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों का विकास हो। व्यक्ति में चरित्र के गुण, एवं वे गुण, जो समाज सम्बन्धी हैं, विकसित हों। शारीरिक शिक्षा के द्वारा आत्मनियन्त्रण, आत्मविश्वास, मानसिक एवं नैतिक गम्भीरता, युक्तिपूर्ण निर्णय, लगे रहने की प्रवृत्ति, उत्साह, अग्रसर, आरम्भ करने की भावना, आदि व्यक्तिगत गुणों एवं आज्ञाकारिता, आधीन रहना, सम्मान, आत्मबलिदान, सहयोग, मित्रभाव, आदर, देश भक्ति, भक्त, नेतृत्व की योग्यता, विजय एवं हार के प्रति उचित विचार, ईमानदार, स्पोर्टसमैन, नागरिक गौरव आदि सामाजिक गुणों का विकास हो।

इस प्रकार की शिक्षा में शिक्षक अत्यन्त सहायक एवं सहयोगी हो सकते हैं, यदि वे स्वयं इन गुणों से पूर्ण हों। सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों की शिक्षा के लिये उचित भाव एवं गुणों का ज्ञान उत्पन्न करना आवश्यक है जिससे शारीरिक शिक्षा के द्वारा प्राप्त प्रतिक्रियायें सर्वत्र एवं सदैव स्वाभाविक प्रतिक्रिया के समान प्रयोग हों। खेल में सहयोग की शिक्षा प्राप्त होती है। यही जीवन के पग-पग में स्वाभाविक रूप से प्रयोग होनी चाहिये।

जो अवस्था आज सामाजिक दृष्टि से दृढ़ है वह कल परिवर्तित हो सकती है। कुछ गुण ऐसे हैं जो सदा अपना अस्तित्व बनाये रखेंगे किन्तु समाज में जो कुछ भी परिवर्तन हो वह शारीरिक शिक्षा में भी प्रतिबिम्बित होना चाहिये तथा शारीरिक शिक्षा का कर्त्तव्य है कि वह उस परिवर्तित दशा को उचित रूप देने तथा दृढ़ करने में सहायक हो। राष्ट्र, शक्ति के द्वारा सुरक्षित नहीं रहता, यद्यपि यह समय समय पर आक्रमणकर्ताओं के विरोध के लिये आवश्यक है किन्तु इसके वास्तविक सुरक्षक शिक्षक हैं जो आदर्श भावों की शिक्षा देते हैं। यही गुण राष्ट्र की नीव होते हैं। यह शारीरिक शिक्षकों का कर्त्तव्य है कि वह दूसरे शिक्षकों के साथ मिल कर प्रजातान्त्रिक आदर्श के लिये सामाजिक दृढ़ता प्रकट करें।

(३) शरीर के द्वारा व्यक्ति का विकास

शारीरिक क्रियाओं के द्वारा व्यक्ति का विकास होता है। इन्द्रियां ज्ञान के द्वार हैं। इन ज्ञान के द्वारों को शारीरिक क्रियाओं के द्वारा स्वस्थ रखना आवश्यक है। इस विकास में अंगों का समन्वय महत्वपूर्ण है। स्नायु मांस पेशियों का समन्वय उचित शारीरिक नियन्त्रण एवं विकास के लिये अति आवश्यक है। स्नायु मांस पेशियों का समन्वय इस प्रकार होना चाहिये जिस से स्नायु मांस पेशियों का कौशल, व्यक्ति की गतिप्रद बनावट का एक स्वाभाविक भाग हो जाये जो परिणामत: शारीरिक क्रियाओं की कृति में निपुणता प्रदान करे। शारीरिक शिक्षा की दशायें इस प्रकार हों जो मानसिक दृष्टि से प्रेरक एवं संतोषप्रद हों। शारीरिक शिक्षा में ऐसी अवस्थायें उपस्थित होती हैं जो मानसिक प्रतिक्रिया उत्पन्न करती हैं एवं उनके करने से संतोष मिलता है। व्यक्ति के वंशपरम्परा की आधार भूत उत्तेजनाओं की पूर्ति के द्वारा संतोष प्राप्त होना चाहिये, क्योंकि समाज में इनकी उपयोगिता है। व्यक्ति प्राकृतिक क्रियाओं में भाग लेता रहा है एवं लेता रहेगा। इनके करने के द्वारा वह संतोष प्राप्त करना चाहता है।

इस संतोष से व्यक्ति के विकास में सहायता मिलती है। इस प्रकार की मानसिक दृष्टि से प्रेरक एवं संतोषजनक अवस्थायें संवेगात्मक भावनाओं पर मानसिक नियन्त्रण एवं स्वीकृति प्रदान करने में समर्थ होंगी। ऐसे परिणाम अर्जित करने के लिये शारीरिक शिक्षा के कार्य, व्यक्ति के प्रकृति पर आधारित होने चाहिये एवं कौशल तथा रुचि में प्रगति के लिये करने चाहिये। शारीरिक शिक्षा में विचारपूर्ण, स्वस्थकर एवं संतोषजनक रुचि उत्पन्न करना आवश्यक है जिसके कारण क्रमानुसार खेल तथा व्यायाम की आदत अर्जित हो जाये जो जीवन-पर्यन्त बनी रहे।

शारीरिक शिक्षा की विभिन्न गतियों में इस प्रकार की प्राकृतिक अवस्थायें उपस्थित होती हैं जिनके द्वारा मानसिक उत्तेजनायें होती हैं तथा शीघ्रता से निर्णय करना पड़ता है। यह सी समय सम्भव होगा जब व्यक्ति के सम्मुख कोई ध्येय या उद्देश्य हो। ध्येय तथा उद्देश्य की प्राप्ति के लिये उपयुक्त नियोजन एवं विचारपूर्ण चेष्टा के द्वारा मानसिक क्रिया होती रहेगी। इस दशा

को प्राप्त करने के लिये व्यक्ति को स्वतंत्रता की तथा आत्मनिर्भरता की आवश्यकता होती है किन्तु अवस्था ऐसी होनी चाहिये जहाँ शिक्षक के सहायता, सहयोग एवं आदेश उपयुक्त अवसर पर प्राप्त हो सकें अन्यथा हानि होने की सम्भावना होगी।

लेखक का शारीरिक शिक्षा ध्येय के प्रति यह विचार है कि शारीरिक शिक्षा, सामान्य शिक्षा का वह महत्वपूर्ण अंग है, जो शारीरिक माध्यमसे, प्राकृतिक प्रवृत्तियों, गति एवं शक्ति का प्रयोग करते हुये, ऐसे साधन एवं नेतृत्व उपलब्ध कराता है, जिससे, व्यक्ति के मानसिक, शारीरिक, सामाजिक एवं नैतिक गुणों का उच्चतम विकास करके, प्रजातांत्रिक जीवन के योग्य कर दे।

उद्देश्य

शारीरिक शिक्षा के उद्देश्य साधारणतः अनेक हैं किन्तु सरलता की दृष्टि से उन्हे छः भागों में खंडित किया जा सकता है।

(१) शारीरिक कौशल एवं गतिप्रद शिक्षा

प्राकृतिक गति आधार भूत कौशल है जिसके अन्तर्गत दौड़ना, कूदना, फेंकना, मारना, चढ़ना एवं उछलना आता है। यह वंशपरम्परा से प्राप्त हुई है तथा प्रत्येक दशा में इसका प्रयोग होगा। वर्तमान खेल, स्पोर्टस एवं ऐथेलेटिक्स आदि जो शारीरिक शिक्षा की सामग्री है वह वंशपरम्परा से प्राप्त गतियों का आधुनिक रूप है। इन गतियों में समन्वय अर्जित करना आवश्यक है। शरीर के शक्तिशाली तथा स्वस्थकर बनावट से ही शारीरिक शिक्षा का कार्य पूर्ण नहीं होता। अंगों तथा गति में ऐसा समन्वय हो जिससे भिन्न भिन्न कार्य निपुणता, प्रभावपूर्ण एवं अल्प शक्ति से किये जा सकें।

(२) शारीरिक विकास

इस उद्देश्य के अन्तर्गत वे क्रियायें आती हैं जिनके द्वारा व्यक्ति में शारीरिक शक्ति का निर्माण होता है। यह विभिन्न वाह्य एवं आन्तरिक अंगों

के विकास से प्राप्त होता है। इस के परिणामत: अनुकूल चेष्टा प्राप्त करने की योग्यता, थकान रोकना एवं शीघ्र थकान दूर करने की योग्यता प्राप्त होगी। मांस पेशियों की क्रियाओं के द्वारा शारीरिक क्षमता प्राप्त होगी। शारीरिक विकास के द्वारा मानसिक एवं संवेगात्मक क्षमता भी प्राप्त होगी। शारीरिक शिक्षा के इस उद्देश्य के कारण व्यक्ति प्रशिक्षित होगा अत: अपने दैनिक कर्त्तव्यों का पालन योग्यता से करेगा तथा स्वस्थ एवं प्रसन्न जीवन निर्वाह करने के योग्य होगा।

(३) मानसिक विकास

मानसिक विकास के अन्तर्गत ज्ञान की सामग्री एवं इस ज्ञान के विचार तथा समझ की योग्यता आती है। शारीरिक शिक्षा में भिन्न भिन्न प्रकार का सीखना है। समन्वय के अतिरिक्त नियम, तकनीक, बचाव एवं आक्रमण का चातुर्य आदि का जानना आवश्यक है। इस में रोग, संक्रामक रोग, रोग अवरोध, शारीरिक क्रिया तथा रचना ज्ञान, स्वच्छता, व्यायाम का महत्व, संतुलित भोजन, स्वस्थकर आदत एवं विचार आदि ऐसे महत्व-पूर्ण विषय आते हैं। उचित कार्य के लिये भिन्न भिन्न विषयों के ज्ञान सामग्री की आवश्यकता है। इससे कार्य में पर्याप्त सहायता तथा उपयुक्त सूचना प्राप्त होती रहेगी। प्रत्येक विषय का क्यों, कैसे, कहां एवं किस समय जानना हितकर है।

(४) सामाजिक कौशल

सामाजिक कौशल के द्वारा पारस्परिक उत्तम सम्बन्ध स्थापित होते हैं। समाज में व्यक्तिगत एवं सामूहिक सामंजस्य करना पड़ता है। प्रत्येक व्यक्ति की कुछ आधारभूत सामाजिक आवश्यकतायें होती हैं। साथ ही अपनत्व, मान्यता प्राप्त करने की, आत्मसम्मान एवं प्रेम की भावना होती है। जहां ये प्राप्त नहीं होते वहां असमाजिकता आ जाती है। सामाजिक क्रिया, वंशानुक्रम एवं मूल प्रवृत्तियों के कारण उत्पन्न होती है। व्यक्ति के जीवन में रुचि, भूख, इच्छा, आदर्श, भावनायें, संवेग आदि होते हैं जिनके कारण वह प्रत्येक कार्य करता है। इनके प्रति, प्रतिक्रिया सामाजिक या असमा-जिक होगी। खेल भी एक प्रवृत्ति है। अतएव इन क्रियाओं में संतोषजनक अनुभवों के प्राप्त करने से जिनमें भाग लेने की नैसर्गिक इच्छा होती है, मान्य सामाजिक गुणों के विकास का अवसर प्राप्त होता है।

प्रत्येक व्यक्ति को सफलता का अनुभव प्राप्त होना चाहिये। यह खेल के द्वारा सम्भव हो सकता है। इसके द्वारा आत्मनिर्भरता एवं प्रसन्नता प्राप्त होती है। प्रसन्नता के कारण उचित सामंजस्य का होना अधिक सम्भव होता है। प्रसन्नता के कारण मित्रभाव, आनन्दभाव, सहयोग की भावना, आदि प्रदर्शित होंगे। ये सब व्यक्ति को संतोष प्रदान करेंगे तथा उचित स्थापित स्तर के प्राप्त करने में सहायक होंगे।

सामाजिक जीवन में प्रजातांत्रिक भावनाओं के कारण सामूहिकता एवं सहयोग आवश्यक हो जाता है। उचित सामाजिकता का होना या न होना बालक के प्रथम प्रशिक्षण पर निर्भर करता है। खेल एवं स्पोर्टस् आदि में उन को सहायता देना जो अपने कौशल में निपुण नहीं हैं, दूसरे के अधिकार को मान्यता देना, समूह की इच्छा के लिये अपनी इच्छा को आधीन करना, समाज की उन्नति के लिये सहयोगी जीवन व्यतीत करने, आदि पर उचित बल देना चाहिये। सम्मान, सहानुभूति, सत्यता, न्याय, ईमानदारी, अधिकार के प्रति सम्मान, नियम पालन आदि पर उचित बल देने से सामाजिक निपुणता प्राप्त हो सकती है। उत्तम नागरिकता शारारिक शिक्षा के द्वारा सम्भव है।

(५) मनोरंजन का कौशल

साधारणतय: शारीरिक शिक्षा के अनेकों कार्य मनोरंजन के तात्पर्य से किये जाते हैं। केवल कौशल के सीखने से ही वह मनोरंजन के लिये प्रयुक्त होगा यह निश्चित नही हैं। मनोरंजन के लिये कौशल का प्रयोग उसी समय होगा जब उसमें रुचि होगी। व्यक्ति इस प्रकार प्रेरित हो कि वह इन कार्यों में जीवन पर्यन्त रूचि लें एवं क्रिया शील रहे।

आधुनिक अगुयुग में अधिक अवकाश प्राप्त करने की सम्भावना है। यदि इस अवकाश का सदउपयोग न हुआ तो अत्यन्त हानि होगी। इसके अतिरिक्त जो राष्ट्र अपने अवकाश के समय का सदउपयोग नहीं कर सकता वह कदाचित उन्नति नहीं कर सकता।

अवकाश के सदउपयोग के लिये शारीरिक शिक्षा कौशल एक अत्यन्त उत्तम एवं महत्वपूर्ण माध्यम है।

मनुष्य जैसे-जैसे अपने व्यवसायिक कार्यों में शिथिल होता जाता है वैसे ही उसे अपने अव्यावसायिक कार्यों में अधिक क्रियाशील होना चाहिये।

(६) सुरक्षा कौशल

जीवन भय से पूर्ण है। व्यक्ति जो आधुनिक वातावरण में अपनी रक्षा कर सके वह सुरक्षा के आधार भूत सिद्धान्त से परिचित है। इसका अर्थ यह है कि वह भय की दशाओं से चैतन्य है तथा उचित समय पर सही प्रतिक्रिया से अपनी रक्षा कर लेता है। सम्भव है कि इस कारण से उसे एक लम्बी आयु प्राप्त हो।

शारीरिक शिक्षा क्रियाओं में भी भय है। भय होते हुये भी भाग लेने में एक आनन्द प्राप्त होता है। भयलिप्त क्रियाओं को छोड़ा नही जा सकता। यदि भय के कारण कार्य छोड़ दिया जाये तो जीवन में कोई अर्थ ही नहीं रह जायेगा।

शारीरिक शिक्षा क्रियाओं में भाग लेने से अधिकतर भय की दशाओं का ज्ञान एवं उनसे बचने के उपाय से व्यक्ति परिचित हो जाता है। शीघ्रता से विचारपूर्ण प्रतिक्रियायें जो शारीरिक शिक्षा के द्वारा सम्भव होती है वे ही जीवन की सुरक्षा में एक प्रकार से स्थानान्तर होती हैं।

उद्देश्य के अन्तर्गत आधारभूत कौशल में जो गति के आधार हैं उनको अनुकूल करना आवश्यक है। जैसे सही रीति से चलना, दौड़ना, कूदना, उछलना, फेंकना, लटकना, चढ़ना, उठाना, ले जाना आदि। शारीरिक शिक्षा के उद्देश्य के अन्तर्गत आये हुये सभी कार्यों में गति का सिद्धात प्रदर्शित होना चाहिये जो निम्नलिखित हैं।

(१) विरोध का सिद्धान्त

प्रत्येक फैंकने, चढ़ने, चलने एवं दौड़ने आदि की गति में अंगों का विरोध होता है। दौड़ने एवं चलने में बायां पैर दाहिना हाथ। यह एक प्राकृतिक सामंजस्य है जिसके प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं।

(२) शक्ति एवं कार्य का परिमाण सिद्धान्त

प्रत्येक कार्य में अंगों का सन्तुलन एवं उचित शारीरिक शक्ति का प्रयोग। सर्व श्रेष्ठ परिणाम के लिये उपयुक्त परिमाण में अंगों का समन्वय एवं पर्याप्त शक्ति की आवश्यकता होती है।

(३) गति के लिये शक्ति या तीव्रता का समायोजन सिद्धान्त

उचित समय पर किसी गति में शक्ति तथा तीव्रता का प्रयोग।

(४) कार्य समाप्ति पर गति को पूर्णरूप से अन्त तक जाने देने का सिद्धान्त

गतिवाही अंग को गति की दिशा में निश्चित कार्य हो जाने के बाद भी जाने देना तथा गुरुत्व आकर्षण का केन्द्र उसी ओर निर्देशित होने देना।

(५) बाह्य वस्तु पर ध्यान का सिद्धांत

बाह्य वस्तु पर मानसिक एवं शारीरिक रीति से एकाग्रचित्त होना। वस्तु जो सन्मुख हो तथा प्रथम कार्य उससे सम्बन्धित हो उस पर पूर्ण ध्यान देने की आवश्यकता है।

(६) अंगों के पूर्ण मेल का सिद्धांत

कार्य गति में शरीर के सम्पूर्ण अंगों का पूर्ण मेल हो न कि केवल उसी भाग का जो उस समय क्रियाशील हो।

शारीरिक शिक्षा सामग्री (क्षेत्र एवं प्रकृति)

ध्येय तथा उद्देश्य को ध्यान में रखते हुये शारीरिक शिक्षा में निम्न-लिखित क्रियाओं का होना आवश्यक है!

(१) मूल प्रवृत्ति के आधार पर क्रियाऐं

एथेलेटिक्स गेम्स, ट्रैक एवं फील्ड स्पोर्टस्, चलना, पर्यटन एवं कैम्पिंग

पर्वतारोहण, वाल्टिग, झूलना, चढ़ना, तैरना, व्यक्तिगत विरोधी खेल, नृत्य, लघु संगठन के खेल, आत्म परीक्षा कार्य, ड्रामा कला ।

(२) **औपचारिक क्रियायें**

कालेसथेनिक्स, जिमनास्टिक, मार्चिंग, शरीर सुधारक एवं चिकित्सक व्यायाम, व्यायाम

(३) **स्वास्थ्य के आदत का निर्माण**

स्वास्थ्य शिक्षा, स्वास्थ्य अभ्यास, स्वास्थ्य सेवा, स्वास्थ्य परिक्षण

(४) **शारीरिक शिक्षा, स्वास्थ्य एवं मनोरंजन सम्बंधी शिक्षासामग्री, अध्ययन एवं प्रयोग,**

शारीरिक एवं स्वास्थ्य शिक्षा पर प्रकाश डालने वाले वैज्ञानिक विषयों का अध्ययन ।

शारीरिक शिक्षा वैज्ञानिक शिक्षा है एवं मुख्य वैज्ञानिक आधार जिन पर शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त निर्धारित हैं, वे जीव विज्ञान, शरीर क्रिया शास्त्र, शरीर रचना शास्त्र, मनोविज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान, तथा समाज विज्ञान हैं ।

इसके कार्यक्रम, मनुष्य की प्रकृति एवं आदिम काल से चली आयी हुयी क्रियाओं पर आधारित है । आधारभूत क्रियायें होने के कारण यह तीव्रता एवं शक्ति के साथ करने पर वाह्य एवं आन्तिरिक अंगो को प्रभावित करती है। यद्यपि सभ्यता के कुपरिणाम के निवारण के लिये कुछ औपचारिक कार्य आवश्यक हो जाते हैं जिससे अवरोध एवं सुधार सम्भव हो सकें, तथापि विशेषतः प्रकृतिक क्रियाओं का प्रयोग होता है एवं होना चहिये ।

आधुनिक शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम केवल क्रियाओं तक सीमित नहीं । यह केवल मांस पेशियों के निर्माण, स्थिर प्रणालियों की स्थापना, ए८ किसी नयी वस्तु के उत्पादन में उत्सुक नहीं किन्तु स्फूर्ति, स्वास्थ्य, प्रसन्नता, निपुणता, एवं चरित्र युक्त, युक्ति संगत स्वाभाविक बढ़ाव एवं विकास से सम्बन्ध रखता है । साथ ही स्पोर्टस् मैन शिप के श्रेष्ठ आर्दश एवं उचित समाजिक धारणाओं के प्राप्त करने की प्रबल चेष्टा करता है।

शारीरिक शिक्षा, शैक्षणिक प्रयत्नों एवं प्राकृतिक क्रियाओं का परस्पर सहयोग कर, व्यक्ति का पूर्ण विकास करती है।

(५) **दैनिक जीवन के आधारित कौशल**

बोझ उठाना, हाथों से पहुंचना, एवं पकड़ना, ले जाना, व्यवसाय में डील डौल एवं आसन।

(६) **पुनः स्थापित करने का कार्यक्रम**

अपंग व्यक्तियों के लिये जन्म से, आकस्मिक घटना के द्वारा या युद्ध में अंग दोष के द्वारा या बाधा ग्रस्त व्यक्तियों के लिये विशेष चिकित्सा, सुधारक या मनोरंजन के व्यायाम एवं खेल।

मानसिक एवं संवेगात्मक सुसामंजस्य न प्राप्त करने वाले व्यक्तियों के लिये।

मानसिक रूप से दुर्बल व्यक्ति के लिये।

रोग से मुक्त होने के पश्चात निर्बल अवस्था की अवधि में।

(७) **सुरक्षा कौशल**

शारीरिक शिक्षा के ध्येय तथा उद्देश्य की सफलता मानव विकास के सर्वोच्च उन्नति का एक महत्वपूर्ण साधन है। H. C. Buck कहते हैं:—

'Physical Education is a part of the function of fitting the individual to live best and to serve most to abundent life. It is the drawing of or developing of the motor powers of the human body, the art and the science of maintaining and creating neuro muscular efficiency and organic vigour in such a way that not only does physical health and satisfaction result but there also results, proper mental attitude and wholesome emotional life. Properly directed it should result in health, happiness, efficiency and character.'

३

शारीरिक शिक्षा एवं सामान्य शिक्षा

शिक्षा का अर्थ

शिक्षा के अनेकों अर्थ समझे गये हैं। इसे एक प्रकार की प्रशिक्षण प्रणाली समझा जाता है जो अध्ययन एवं शिक्षा से आती है तथा संस्था सम्बन्धि समझी जाती है। इसे अनुभवों का क्रम समझा जाता है जिसके द्वारा नये अनुभव सरलता से प्राप्त किये तथा समझे जाते हैं। कुछ के मत हैं कि यह बढ़ाव, विकास, एवं सामंजस्य है। यह व्यक्ति के जीवन के घटित संयोग है जिनका पुनः निर्माण होता, जिसके द्वारा नवीन घटनायें अधिक अर्थमय एवं उपयोगी हो जाती हैं, ऐसा भी विचार है। कहा जाता है कि मनुष्य पूर्व अनुभव के आधार पर ही विचार करता है।

शिक्षा का आधुनिक विचार है, कि यह केवल सीखना या शैक्षणिक संस्थाओं से ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं, किन्तु यह एक निरन्तर जीवन पर्यन्त, व्यक्ति का परिवर्तन, संशोधन या सामंजस्य, संस्था में या उसके बाहर है, जो उसके वाह्य एवं आन्तरिक वातावरण की स्थिति में, उत्तेजनाओं के प्रति स्वयं की प्रतिक्रिया है। क्रियाओं के द्वारा परिणामतः जो परिवर्तन होते हैं। उसके जीवन के शारीरिक, संवेगात्मक, मानसिक एवं नैतिक पक्षों को प्रभावित करते हैं। यह समाज के मान्यता प्राप्त स्तर के अनुसार भले या बुरे हो सकते हैं।

शारीरिक शिक्षा का अर्थ

शारीरिक शिक्षा में, शारीरिक शब्द के साथ शिक्षा संयुक्त कर देने से उसका एक नया अर्थ घोषित होता है। शारीरिक का अर्थ शरीर की अवस्थाओं

से है जैसे शारीरिक शक्ति, शारीरिक विकास, शारीरिक स्वास्थ्य, शारीरिक सन्तुलन, शारीरिक रूप आदि। इस में मन की तुलना में शरीर का वर्णन होता है। अत: शिक्षा शब्द के योग कर देने से शिक्षा के उस प्रणाली की क्रियाशीलता की ओर आदेश होता है जो शरीर के विकास एवं रक्षा की क्रिय'ओं से सम्बन्धित है। इसका अर्थ यह है कि व्यक्ति की शारीरिक क्रियाओं के साथ शिक्षा होती रहती है। साथ ही यह भी प्रतीत होता है कि, शिक्षा के मुख्य सिद्धांत; व्यक्ति, उसकी आवश्यकता एवं तात्पर्य; उत्तेजना तथा वातावरण जिसके अर्न्तगत शिक्षा होती है; व्यक्ति की प्रतिक्रिया एवं व्यक्ति तथा उत्तेजना में पारस्परिक प्रतिक्रिया; उत्तेजना प्रतिउत्तर के परिणामत: व्यक्ति में जो परिवर्तन या संशोधन आते हैं; शारीरिक शिक्षा में भी उसी प्रकार प्रयोग होते हैं जैसे सामान्य शिक्षा वा किसी दूसरी प्रकार की शिक्षा में होते हैं। शारीरिक शिक्षा एवं दूसरी प्रकार की शिक्षा के अन्तिम विश्लेषण से यही निष्कर्ष प्राप्त होता है कि शारीरिक शिक्षा विशेषत: उन उत्तेजना एवं प्रतिक्रिया से सम्बन्धित है जिनकी विशेषता मांश पेशियों से सम्बन्धित क्रियाओं के द्वारा है। यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि प्रत्येक प्रतिक्रिया में उसके सम्पूर्ण अंग सम्मिलित हैं एवं प्रतिक्रिया सम्पूर्ण व्यक्ति के द्वारा होती है। प्रतिक्रियायें मानसिक, संवेगात्मक या शक्तिशाली मांस पेशियों की गति हो सकती है। शारीरिक शिक्षा शरीर के शक्ति शाली मांस पेशियों की गति से सम्बन्धित है। इसका यह भी अर्थ नहीं कि शारीरिक शिक्षा, मांस पेशियों तथा उसके परिणामत: शरीर रचना एवं क्रिया के परिवर्तनों से ही केवल सम्बन्धित है, किन्तु यह परिवर्तन मानसिक एवं संवेगात्मक प्रतिउत्तर की परिस्थिति में होता है जिसके द्वारा आदत, भाव, कौशल एवं ज्ञान आदि में परिवर्तन एवं संशोधन होता है।

आधुनिक शिक्षा का विचार है कि सम्पूर्ण संगठित शिक्षा जीवन में अनेकों पक्ष से सम्बन्धित हों। अत: शारीरिक शिक्षा में भी यही चेष्टा है कि ऐसी अवस्थायें निर्माण की जायें, जिनसे न केवल मांसपेशियों की प्रतिक्रिया, किन्तु सम्बन्धित मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक प्रतिक्रियायें भी साथ ही उपलब्द्ध हों। वर्तमान संगठित खेल एवं स्पोर्टस् व्यक्ति के मांसपेशियों से सम्बन्धित प्रतिक्रिया ही नहीं, किन्तु मानसिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं का प्रयोग करता है जो उसके मानसिक विकास, सामाजिक सामंजस्य एवं चारित्रिक शिक्षा के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

शारीरिक शिक्षा, शिक्षा प्रणाली का एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण अंग है। यह शिक्षा का प्राण है। सुसंगठित एवं सुनिर्देशित शारीरिक शिक्षा से ऐसे कौशल प्राप्त होते हैं जो अवकाश के सदउपयोग, स्वस्थ जीवन, सामाजिक विकास, मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य प्रदान करते हैं। अतएव, यह कहा जा सकता है कि शारीरिक शिक्षा पूर्ण सामान्य शिक्षा प्रणाली का वह पक्ष है जो शक्तिशाली मांस पेशियों सम्बन्धित क्रियाओं से प्राप्त प्रतिक्रियाओं एवं उनके द्वारा परिणामत: व्यक्ति के परिवर्तन एवं संशोधन से सम्बन्धित है।

शारीरिक एवं सामान्य शिक्षा, सम्बन्ध

शारीरिक शिक्षा सामान्य शिक्षा के अनुकूल ही नहीं वरन उसकी पूरक है। यह उस प्रणाली का अंग है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति की योग्यताओं को, विधिवत एवं उचित रीति से, विकसित करने के लिये, वातावरण, सुविधायें एवं सुझाव उपलब्द्ध कराये जाते हैं। शारीरिक शिक्षा के ध्येय एवं सामान्य शिक्षा के ध्येय में अनुकूलता होनी आवश्यक है क्योंकि दोनो शैक्षणिक कर्तव्य का निर्वाह करते हैं। शारीरिक शिक्षा, शिक्षा के अनेकों विशेष रूपों में से एक है। यह सामान्य शिक्षा का एक पक्ष है। वास्तव में इसे अपने में एक शिक्षा या पृथक क्षेत्र भी नहीं समझना चाहिये। यह शरीर का प्रशिक्षण नहीं है। यह एक विस्तृत सम्पूर्ण शिक्षा में अपना अनुदान प्रदान करता है।

शारीरिक शिक्षा का आधुनिक ध्येय व्यक्ति को उच्चतम स्वास्थ्य प्रदान करने का है। इसके प्राप्त करने के लिये शारीरिक शिक्षा अपनी क्रिया, तकनीक एवं प्रणाली प्रयोग करता है। यह मनुष्य को उसके दैनिक कार्य के लिये शक्ति एवं स्वास्थ्य प्रदान करता है। अनेकों क्रियायें जो गतिप्रद सीखने द्वारा अपना लाभ प्रदर्शित करती है उनका प्रयोग शरीर के बढ़ाव एवं विकास के लिये किया जाता है जिससे शारीरिक क्षमता प्राप्त हो। साथ ही साथ ये भविष्य के कार्य करने के लिये भी तैयार हो जाती है। प्रतियोगिता स्पोर्ट्स के द्वारा, व्यक्ति जीवन के संघर्ष एवं उच्च सामाजिक प्रतियोगिता में दूसरों के साथ समन्वय करना सीखता है। व्यक्ति को विशेष कुशल बनने की आवश्यकता नहीं किन्तु स्वास्थ्य, शक्ति एवं जीवन की आवश्यकता उसे अवश्य है जिसके द्वारा वह अपने चुने हुये व्यवसाय में जीवन निर्वाह कर सके। शारीरिक शिक्षा अपने प्रयोगशाला में अर्थात जिमनेज़ियम, खेल के मैदान, स्वीमिंग पूल, आदि में विशेष शिक्षा देते हुये व्यक्ति में सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं

दार्शनिक विकास में भी लाभ प्रदान करेगी । वह शिक्षा के आधुनिक ध्येय एवं उद्देश्य के प्राप्त करने की चेष्टा करेगी । उसके सिखाये कौशल, दैनिक कार्यों, शारीरिक कार्यो, सामाजिक सम्बन्ध एवं मनोरंजन की क्रियाओं में सहायक होंगे । इन सब के योग से व्यक्ति की आदतों एवं भावों का निर्माण होगा । शारीरिक शिक्षा की प्रयोगशाला, प्रणाली एवं सामग्री, सामान्य शिक्षा से भिन्न हो सकती है किन्तु दोनों के ध्येय एक ही है । दोनों ही जीवन के चार मुख्य मूल्य, स्वास्थ्य, प्रसन्नता, निपुणता एवं चरित्र प्राप्त करना चाहते हैं ।

सामान्य शिक्षा के सात मुख्य सिद्धांत हैं स्वास्थ्य, आधारभूत वस्तुओं का विकास, समाज तथा परिवार का योग्य सदस्य बनना, उद्यम या व्यवसायिक तैयारी, उच्च नागरिकता की तैयारी एवं चरित्र का निर्माण ।

शारीरिक शिक्षा सामान्य शिक्षा के ध्येय से घनिष्ठ अनुकूलता दिखलाती है । शारीरिक स्वास्थ्य, शक्ति, तथा गति वाही कौशल के आधुनिक उद्देश्य प्राचीन विचारों की तुलना में कहीं अधिक विस्तृत रूप में प्रदर्शित हैं । शारीरिक शिक्षा इन्हें वर्तमान उच्च शिक्षा की विचार धाराओं से परिपूर्ण करती है । यही नहीं, शारीरिक शिक्षा, सामान्य शिक्षा के ध्येय एवं उद्देश्य के निर्धारित करने में सहयोग देती है तथा उन्हीं को अपनाती भी है तथा उसकी पूर्ति की पूर्ण चेष्टा करती है । यहां तक की शिक्षा संस्था का उद्देश्य, कार्यक्रम एवं संगठन एक प्रकार से शारीरिक शिक्षा का उत्तरदायित्व हो जाता है । यह दूसरी शिक्षा के विशेष विभागों की तरह सामान्य शिक्षा के ध्येय एवं उद्देश्य, कार्यक्रम, संगठन एवं संचालन के आदर्श को केवल निर्धारित करने में सहायक ही नहीं वरन् महत्वपूर्ण आदेश देती है ।

समाज अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये शिक्षा संस्थायें स्थापित करता है । यह शिक्षा संस्थाओं का उत्तरदायित्व है कि समाज की मान्यता दी हुयी आवश्यकताओं एवं आदर्श को सर्व प्रमुख स्थान दें । इन आवश्यकताओं एवं आदर्शों में मनुष्य का स्वास्थ्य तथा शारीरिक विकास सर्व प्रथम स्थान रखता है, क्योंकि इनकी अनुपस्थिति में जीवन की प्रत्येक वस्तु अधूरी रह जाती है ।

यह पूर्णतया स्पष्ट है कि किसी दिये हुये समय में समाज का रूप जो भी हो या समाज में जो भी परिवर्तन होते जायें, प्रत्येक स्थिति में सम्पूर्ण

मानव समाज का स्वास्थ्य एक विशेष महत्व रखता है। राष्ट्र के दृष्टिकोण से यह बहुमूल्य राष्ट्रीय धन है। वह राष्ट्र जो अस्वस्थ है उन्नति नहीं कर सकता, गौरव प्राप्त नहीं कर सकता तथा विश्व के राष्ट्रों में अपना उचित स्थान प्राप्त नहीं कर सकता। इसका अर्थ यह है कि शारीरिक शिक्षा के गुण शब्दों में वर्णित नहीं किये जा सकते। शारीरिक शिक्षा प्रत्येक के लिये विशेषतया बढ़ते हुये बालक तथा युवकों के लिये एक अनिवार्य आवश्यकता है। यह समाज के मनोरंजन, दिलबहलाव, स्वास्थ्य, प्रसन्नता तथा उत्तम नागरिकता के विषय से सम्बन्धित है।

ऐसे महत्वपूर्ण विषय का उत्तरदायित्व भी महत्वपूर्ण है। इन विचारों को ध्यान में रखते हुये यह कहा जा सकता है कि शैक्षणिक नेतृत्व का यह अनिवार्य कर्त्तव्य है कि वे उत्तम रीति से उन उपायों का उपयोग करें जिनके द्वारा व्यक्ति के नैसर्गिक बढ़ाव तथा विकास का आदेश तथा उन्नति सुचारू रूप से हो सके। यदि इस ओर ध्यान न दिया जाये तो उस समाज का पतन अवश्य होगा।। इस पतन का सर्व प्रथम प्रभाव बालकों पर पड़ेगा। बालक ऐसे छोटे जीव का विध्वंस करना सरल है, किन्तु उसकी वास्तविक उन्नति एवं प्रगति एक कठिन कर्त्तव्य है। यह शिक्षा संस्थाओं का कर्त्तव्य है कि बालक के अनमोल जन्म जात गुणों को धूल में मिलने से बचायें, उसकी शक्ति का विकास करें एवं आन्तरिक गुणों के साथ वाह्य जीवन की स्वस्थकर रुचियों को उभारें तथा उसकी पूर्ति के लिये उचित साधन एवं सामग्री उपलब्द्ध करें।

बालक का अधिकतर समय एवं जीवन का महत्वपूर्ण भाग शिक्षा संस्थाओं में व्यतीत होता है। दैनिक जीवन के अधिक घण्टे अध्ययन सम्बन्धि वातावरण में व्यतीत होते हैं। शिक्षा संस्थाओं से निकल कर वह वातावरण के अनेक प्रभावों के सम्पर्क में आता है। परिवार में जाकर वह सामाजिक वंशानुक्रम से प्रभावित होता है तथा वंशानुक्रम के गुण उसमें विद्यमान रहते ही हैं। ये सब संयुक्त होकर उस पर कहीं अधिक प्रभाव डालती हैं तथा कभी कभी संस्था के प्रभाव को नष्ट भी कर देती हैं। यह होते हुये भी उनके दोषों के लिये शिक्षा संस्थायें ही दोषी ठहराई जाती हैं एवं उनकी आलोचना होती है। यह मान लिया जाता है कि बालक के सही विकास का उत्तरदायित्व शिक्षा संस्थाओं का ही है। जब बालकों का डील डौल स्तर से नीचा हो, उनकी गति शोभायमान न हो, खेल न सकते हों, अस्वस्थ हो, स्पोर्ट्समैन की भावना न हो,

चरित्र एवं आचार विचार में त्रुटि हो तो समाज शिक्षा संस्थाओं के कार्यक्रम एवं आदर्श की ओर देखता है। युवकों के मानसिक एवं शारीरिक अस्वस्थता की बुरी आदतों के प्रकट होने पर संस्था दोषी ठहरायी जाती है। जब युवक समाज की मान्यता की ओर ध्यान न देकर नियमानुसार कार्य नहीं करते तब भी स्कूल की आलोचना होती है। इन सब परिस्थितियों में समाज अपना उत्तरदायित्व एवं दूसरे प्रभावों को भूल जाता है किन्तु बालक सम्बन्धित शिक्षा संस्थायें सदैव सामने आती हैं।

व्यक्ति के आधार पर समाज है तथा समाज के आधार पर व्यक्ति। एक के बिना दूसरे की स्थिति सम्भव नहीं। यह तो स्पष्ट है कि शिक्षा संस्थाओं को प्राणी के व्यक्तित्व एवं सामाजिकता की आवश्यकताओं को साथ ही साथ पूर्ण करना है। जैसे व्यवसायिक ज्ञान प्राप्त करना, जिससे आर्थिक दृढ़ता रहे, अच्छा स्वास्थ्य, शारीरिक क्षमता, अवकाश का सदुपयोग, ज्ञान की वृद्धि करना एवं बुद्धिमत्ता से विचार प्रकट करना आदि व्यक्ति पर निर्भर करता है। परिवार एवं समाज की उत्तम सदस्यता, सेवा तथा सामग्री का सही मूल्य समझना, दूसरों के अधिकार को मान्यता देना, शासन में रहना, योग्यता विकसित करने का समाज में उचित साधन एवं अवसर प्राप्त करना आदि समाज पर निर्भर करता है।

शिक्षा का प्राचीन उद्देश्य जो मुख्य मूल प्रवृत्ति, व्यक्ति एवं जाति के आधार पर निर्धारित है अब भी सत्य है एवं स्पष्ट रूप से उपस्थित है। प्रजातांत्रिक विचारों के कारण इसकी महत्ता और भी है। स्वयं तथा जाति के रूप में व्यक्ति एवं उसके सामाजिक गुणों को विकसित करना है। शिक्षा के सम्पूर्ण प्रभावों के सहयोग से यह सम्भव है। दोनों की आवश्यकतायें एक हैं तथा दोनों परस्पर एक दूसरे पर निर्भर हैं। इस विचार के अनुसार व्यक्ति तथा राष्ट्र एक हो जाते हैं। शारीरिक स्वास्थ्य की व्यक्तिगत आवश्यकता नागरिकों की शक्ति की राष्ट्रीय आवश्यकता के समान हो जाती है। किसी के होने की व्यक्तिगत आवश्यकता राष्ट्रीय प्रेम की आवश्यकता के समान हो जाती है। ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति एवं समाज, नागरिक एवं राष्ट्र एक ही हो जाते हैं। व्यक्ति के उचित शिक्षा नियोजन से ही राष्ट्र के शुभ का विचार उत्पन्न होगा तथा व्यक्ति के लाभ के विचार से ही राष्ट्र का निर्माण हो सकता है एवं उसका अस्तित्व दृढ़

हो सकता है । कोई राष्ट्रीय श्रेष्ठता नहीं जो व्यक्ति की श्रेष्ठता के उपयुक्त न हो तथा कोई व्यक्तिगत श्रेष्ठता नहीं जो राष्ट्रीय जीवन को शक्तिशाली एवं दृढ़ करने में सहायक न हो ।

इन व्यक्तिगत तथा सामाजिक शैक्षणिक ध्येय एवं उद्देश्यों में अधिकतर शारीरिक शिक्षा की सत्यता भी है क्योंकि शारीरिक शिक्षा भी व्यक्ति के पूर्ण विकास की ओर अग्रसर है एवं सामान्य शिक्षा की चुनौतियों का उपयुक्त उत्तर देती है ।

अतएव इस निष्कर्ष पर पहुंचने में, कि, सामान्य शिक्षा के ध्येय तथा उद्देश्य के निर्धारित करने में शारीरिक शिक्षा का सहयोग है तथा शारीरिक शिक्षा, शिक्षा का एक विशेष अंग एवं पूरक है, कोई आपत्ति नहीं हो सकती।

आधुनिक शारीरिक शिक्षा एवं सामान्य शिक्षा में घनिष्ठ समानता एवं सम्बन्ध हैं । बुद्धिमत्ता से दिये गये शैक्षणिक नेतृत्व का उत्तरदायित्व जिसके अन्तर्गत संस्था के सम्पूर्ण कार्य-क्रम में रुचि लेना, उसके उत्तरदायित्व को अपना समझना, उसमें सहायक होना आदि शारीरिक शिक्षा का कर्त्तव्य समझा गया है । शारीरिक शिक्षा का सामान्य शिक्षा के सम्बन्ध में ये मुख्य निर्णय उन विचारों पर निर्धारित थे जिनको यह मान्यता प्राप्त थी, कि शरीरिक शिक्षा व्यक्तिगत एवं सामाजिकता की शिक्षा में उत्तम देन देने में समर्थ है ।

सारांश में शिक्षा का अर्थ तैयारी करना, अनुशासन, नियमों की अधीनता, सभ्यता, सुधार, विकसित होना, विधिवत कार्य करना, अवकाश का सदुपयोग, प्रसन्नता, सन्तोष, आदर्श व्यवहार, कौशल का सीखना आदि है । ये शिक्षा के गुण शारीरिक शिक्षा के पांच अंगों के अन्तर्गत दिखायी देते हैं । यही सामान्य शिक्षा को शारीरिक शिक्षा की देन है ।

(१) शरीर के अंगों का विकास

शरीर के मुख्य अंग, उनकी बनावट एवं क्रिया जैसे अस्थि संस्थान, रक्त संचालन संस्थान, लसिका संस्थान, श्वास संस्थान, पाचन संस्थान, निष्क्रमण संस्थान, सन्तानोतपत्ति संस्थान, वात संस्थान, जीव सम्बन्धित महत्वपूर्ण अंग हैं।

इन अंगों के उच्च कोटि के कार्य शरीर की शक्ति शाली गति एवं कार्यों पर निर्भर हैं। भिन्न भिन्न शक्तिशाली गति, तीव्र वेग से किये गये कार्य अपना प्रभाव आन्तरिक अंगों पर डालते हैं एवं उनकी कार्य सामर्थ्यता को बढ़ाते तथा निपुण करते हैं। मनुष्य शक्ति तथा जीवन इस प्रकार मांस पेशियों तथा मुख्य अंगों की उत्तम परिचर्या में ही हैं। यह शारीरिक शिक्षा का कर्त्तव्य है कि इनकी शक्ति बाल्यावस्था एवं युवावस्था में जिस समय इनका क्रमशः विकास होता है, व्यायाम, खेल कूद एवं अन्य कार्यो द्वारा बढ़ायें। इसके अतिरिक्त बालक के विकास के लिये कोई दूसरा मार्ग नहीं है। अतएव जीव शक्ति के विकास के लिये नैसर्गिक क्रियाओं में जैसे दौड़ना, कूदना चढ़ना, लटकना, खींचना, मारना, फेंकना आदि में भाग लेना होता एवं अनेक रीति से दूसरों के साथ अपनी परीक्षा लेनी पड़ती है।

(२) स्नायु मांस पेशियों का समन्वय

शरीर के अंगों का समन्वय तथा शोभायमान शारीरिक गति, स्नायु मांस पेशियों के समन्वय पर निर्भर है। छोटी अवस्था ही से बालक इसका प्रयोग करता तथा क्रमशः प्रगति करता है। मानव प्राणी-कौशल का भूखा है क्योंकि जीवन के पूर्ण विकास में ये अत्यन्त सहायक हैं। बालक अपनी नैसर्गिक क्रियाओं के द्वारा, जो वह करता ही रहता है ,कौशल सीखता है। मूल प्रवृतियों के कारण वह किसी विशेष कार्य की ओर रुचि रखता है एवं उसे सीखने के लिये चुन लेता है। सामाजिक वंशानुक्रम एवं वातावरण से इस चुनाव में सहायता मिलती है। ये कार्य तात्कालिक वर्त्तमान से सम्बन्धित होते हैं। बालक अनेक प्रकार के कौशल सीख सकता है एवं कौशल सिखाये जा सकते हैं, किन्तु वही कौशल उनके लिये उपयोगी हैं जो उसकी शिक्षा में उसके जीवन के विकास के लिये सहायक हों। मूल प्रवृत्तियों के आधार पर चुने हुये कौशल से उसे संतोष होता है एवं जीवन पर्यन्त वह प्रयोग में आता है। अतः लाभकारी कौशल वे हैं जिनमें दैनिक जीवन के व्यवहार में स्नायु मांस पेशियों का सहयोग होता है जैसे, चलना, दौड़ना, बैठना, खड़ा होना, उठाना, चढ़ना, वस्तु ले जाना, आदि। उन कौशल से जिनसे संतोष एवं मनोरंजन होता है वे हैं, खेल, स्पोर्ट्स, एथेलेटिक, नृत्य, आत्म परीक्षा आदि की क्रियाएं। इनसे कौशल उपयोगिता का प्रमाण मिलता तथा शैक्षणिक प्रभाव प्रदर्शित होता है। शारीरिक शिक्षा के कार्य, उपयोगी स्नायु मांस पेशियों के कौशल की शिक्षा सदैव देतें हैं एवं यह आजीवन रहते

हैं। यह शिक्षा घंटे के चालीस मिनट तक ही सीमित नहीं या संस्था की चहार दीवारी तक इसका अन्त नहीं हो जाता या किसी समय या स्थान पर सीख कर भूली नहीं जाती वरना वह संस्था से पृथक, वनों में, अवकाश में, खेल में, मनोरंजन एवं प्रतियोगिता में जहां जिस समय उचित अवसर मिले वही वर्त्तमान रहती है। कार्यप्रद कौशल का स्थानान्तरण जीवन के भिन्न भिन्न कार्यों में सम्भव है एवं इससे अधिक सहायता मिलती है। कार्य गति जितनी प्राकृतिक होगी उतनी रुचिकर तथा जीवनोपयोगी होगी।

(३) खेल एवं मनोरंजन में रुचि

स्वस्थकर खेल तथा मनोरंजन में रुचि उत्पन्न करना एवं उस ओर व्यक्ति को जागरूक रखना व्यक्ति की शिक्षा में एक विशेष देन है। वर्त्तमान जीवन में खेल तथा मनोरंजन की अत्यन्त उपयोगिता है। मनुष्य दैनिक कार्य तथा कर्त्तव्यों के भार से जब थक जाता है तब विश्राम तथा मनबहलाव के लिये यह अति उत्तम प्रमाणित होते हैं। इसकी अपेक्षा साधारणतः मनुष्य ऐसी स्थिति में कार्य करते हैं जहाँ संवेग का सही प्रदर्शन नहीं होता तथा कुछ समय के पश्चात यह अति हानिकारक सिद्ध होता है। खेल तथा मनोरंजन के कार्यों के द्वारा इन रुके हुये संवेगों के प्रवाह में सहायता मिलती है जिससे व्यक्ति को संतोष मिलता है एवं वह अपना साधारण रूप पुनः प्राप्त करता है।

बालक आरम्भ ही से खेल में रुचि दिखलाते हैं। दूसरे जीवों की अपेक्षा मनुष्य जीवन में अधिक समय तक खेलता है। यह प्राकृतिक प्रबन्ध है कि बालक खेल के द्वारा शिक्षा प्राप्त करें जो उनके भविष्य के जीवन में उपयोगी हो। यह बालक के विकास का उपाय हैं। जैसे जैसे बालक बढ़ता जाता है उसे उतना ही नियन्त्रण प्राप्त होता है तथा जैसे कौशल में प्रगति होती है वैसे ही कार्य की सम्भावना का मूल्य पहचान में आता है एवं अनुभव के द्वारा व्यक्ति क्रमशः जटिल कौशल की रुचि प्राप्त करता एवं उसे करने की चेष्टा करता है। यह प्रगति होती रहती है एवं प्रौढ़ावस्था में उच्च कोटि के कौशल में भाग लिया जाता है। बाल्यपन के कौशल का अनुभव एवं प्राकृतिक क्रियाओं का जटिल खेल तथा मनोरंजन आज के आधुनिक प्रकारों में परिवर्तित हुआ है जिसे ऐथेलेटिक्स, नृत्य टेनिस, शिकार आदि के नाम से पुकारा जाता है। कार्य में भाग लेने से कौशल वृद्धि होती है तथा इसके कारण व्यक्ति में एक तैयारी एवं संतोष होता है,

अत: वह निपुणता की ओर प्रगति करता जाता है। भाग लेने में साथ ही साथ निपुणता भी आती जाती है।

(४) चरित्र का निर्माण

प्रत्येक शिक्षा का मुख्य ध्येय चरित्र निर्माण है। चरित्र निर्माण के लिये शारीरिक शिक्षा माध्यम से बढ़कर दूसरा साधन नहीं। शारीरिक शिक्षा की विशेषता यह है कि यह स्वतंत्रता से तथा प्राकृतिक स्थितियों के माध्यम से ऐसी अवस्था उपलब्द्ध करता है जो चरित्र निर्माण के लिये अत्यन्त लाभप्रद प्रमाणित होते हैं। बालक को पता भी नहीं चलता और वह सीखता जाता है।

मनुष्य आदत, व्यवहार एवं वातावरण से अर्जित करता है। प्रत्येक आदत में एक व्यवहार है। शिक्षा एवं सभ्यता, सभ्य व्यवहार की आशा करती हैं अत: उत्तम आदतों का होना आवश्यक है। जीवन के महत्वपूर्ण अनुभवों में भाग लेते हुये भिन्न भिन्न प्रकार की आदत या व्यवहार अर्जित करना सम्भव होता है। इन्हें हम उदार चरित्र,सहृदयता ईमानदारी, मित्रता, सहनशक्ति, क्रोध,घृणा, बैर आदि के नाम से पुकारते हैं। यही जीवन में जड़ पकड़ते जाते एवं दृढ़ हो जाते हैं। जब जीवन की चेष्टाओं का आदेश एवं नियन्त्रण समाज के मान्य गुणों के द्वारा होता है तो उसे सभ्य व्यवहार कहा जाता है एवं व्यक्ति चरित्रवान कहलाता है। ऐसे चरित्रवान व्यक्ति समाज एवं राष्ट्र के लिये अनमोल होते हैं। चरित्र के लिये योग्य वातवरण का होना आवश्यक है। अच्छे उपदेश की अपेक्षा, अच्छे उदाहरण से सफलता अधिक मिलती है। व्यवहार एवं आदतों के निर्माण का उत्तरदायित्व शिक्षकों एवं नायकों पर है।

(५) अवकाश का सद्उपयोग

कोई भी व्यक्ति सही अर्थ में शिक्षित नहीं कहा जा सकता न कोई राष्ट्र उन्नति कर सकता है जो अपने अवकाश का सदउपयोग न करते हों। शिक्षा में शारीरिक शिक्षा की यह देन है कि वह इतनी सामग्री एवं कौशल आयोजित कर देती है जो अवकाश में स्वतंत्रता से एवं प्राय: नि:शुल्क प्रयोग किये जा सकते हैं। इनमें विशेषता यह है कि ये शारीरिक शिक्षा के कार्य

जो अवकाश में किये जा सकते हैं, शिक्षाप्रद, संतोष-जनक एवं मनोरंजक होते हैं। दूसरी विशेषता यह है कि जितना इनमें भाग लिया जाय उतनी निपुणता होगी एवं उतना ही संतोष होगा। यह आर्थिक या सामाजिक लाभ का भी एक कारण हो सकता है। वे अवकाश में की जाने वाली क्रियायें, आजीवन, प्रत्येक स्थिति एवं समय में की जा सकती हैं।

शिक्षा में अवकाश का सदउपयोग अनेक अनुशासन एवं चारित्रिक समस्या को सरलता से हल कर देगा। कहा जाता है कि जिसके पास कुछ करने को न हो वह बुरा ही करेगा। शारीरिक शिक्षा में करने के अनेक कार्य हैं जो आयु, रुचि, समय, अवस्था, स्थिति आदि के अनुकूल हैं।

मनुष्य के अवकाश के समय का अर्थ उसके स्वतंत्रता का भंडार है। उसके जीवन के इस भाग का प्रयोग उसके आरम्भ करने की शक्ति का उत्तम विकास है। अवकाश का समय जीवन के लहरों का उत्तम प्रवाह एवं प्रयोग न किये हुये शक्ति एवं रचनात्मक प्रवृत्ति के उपयोग का श्रेष्ठ अवसर है।

मिथ्या धारणायें

शारीरिक शिक्षा के सम्बन्ध में साधारण मिथ्या धारणायें प्रचलित हैं, कि शारीरिक शिक्षा की भिन्न भिन्न क्रियायें मिल कर शारीरिक शिक्षा नहीं समझी जाती। किन्तु शारीरिक शिक्षा के विभिन्न खंडों को शारीरिक शिक्षा समझा जाता है। इसमें यह समझने में भूल की जाती है कि सम्पूर्ण अपने खंडों के योग से सदैव बड़ा होता है।

यह भी मिथ्या धारणा है कि शारीरिक शिक्षा का कार्य वे कर सकते हैं जो किसी क्रिया में प्रवीणता रखते हैं, जैसे विषय शिक्षक का शारीरिक शिक्षाकार्य करना। यह भी मिथ्या विचार है कि शारीरिक शिक्षा दूसरे विषयों के तुल्य निम्न श्रेणी का है तथा शारीरिक शिक्षक की स्थिति भी दूसरे शिक्षकों से निम्न है।

अन्य मिथ्या धारणायें है कि शारीरिक शिक्षा केवल शरीर से सम्बन्धित है तथा यह महिलाओं के लिये आवश्यक नहीं। शारीरिक शिक्षा में विशेष

ज्ञान की आवश्यकता नहीं तथा शारीरिक शिक्षा से केवल स्वास्थ्य ही प्राप्त हो सकता है अन्य कोई लाभ नहीं। शारीरिक शिक्षा केवल मनोरंजन समझा जाता है, यह केवल क्रिया समझी जाती है शिक्षा नहीं। शारीरिक शिक्षा प्रत्येक के लिये आवश्यक नहीं है यह विशेष कर बालकों को बहलाने के लिये एवं उन्हें शरारत से दूर रखने के प्रयोग में आता है।

शारीरिक शिक्षा स्वास्थ्य शिक्षा समझी जाती है।

४

स्वास्थ्य शिक्षा एवं मनोरंजन का शारीरिक शिक्षा से सम्बन्ध

स्वास्थ्य शिक्षा

स्वास्थ्य, जीवन का वह गुण है जो व्यक्ति को उत्तम जीवन व्यतीत करने एवं सर्वोत्तम सेवा करने की क्षमता प्रदान करता है। स्वास्थ्य, स्वस्थ रहने की दशा है। स्वस्थकर दशा में यह आवश्यक है कि व्यक्ति पूर्ण स्वस्थ हो अर्थात व्यक्ति को शारीरिक, मानसिक एवं अध्यात्मिक स्वास्थ्य प्राप्त हो। किसी रोग या क्लेश से मुक्त होना स्वास्थ्य नहीं कहा जा सकता यद्यपि रोग या क्लेश से मुक्त होना स्वास्थ्य की एक दशा है।

स्वास्थ्य का अभ्यास एवं अध्ययन किसी भी संगठित शिक्षा प्रणाली का एक अनिवार्य अंग है, यह विश्वास विश्वव्यापी है। स्वास्थ्य शिक्षा तीन विस्तृत क्षेत्रों से सम्बन्धित है। (१) स्वस्थ वातावरण (२) स्वास्थ्य सेवा (३) स्वास्थ्य शिक्षा।

(१) स्वस्थ वातावरण

यह प्रत्येक व्यक्ति का एक अधिकार है कि स्वस्थ वातावरण में स्वस्थ जीवन निर्वाह करे। इस वातावरण में रहने का स्थान, शिक्षा संस्था एवं साधन जिसमें खेल के मैदान तथा कार्य करने का स्थान, आदि आते हैं। बालकों का स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता उन शारीरिक तथ्यों पर अधिकाधिक निर्भर हैं जहाँ पर वे रहते, कार्य करते एवं खेलते हैं। सम्पूर्ण स्कूल संस्था अपने प्रत्येक

साधनों के कारण एक महत्वपूर्ण प्रयोगशाला बन जाती है, जहाँ स्वस्थ जीवन व्यतीत किया जा सकता। हैं, सीखा जा सकता है एवं भविष्य में उसके प्रयोग के लिए स्मरण रखा जा सकता है। स्वस्थ वातावरण के उपलब्द्ध करने के कारण पारस्परिक सुखदायक सम्बन्ध, आदत एवं भावनाओ का जन्म होता है जो स्वास्थकर जीवन के लिये अति आवश्यक हैं।

(२) स्वास्थ्य सेवायें

सर्व प्रथम स्वास्थ्य सेवा का प्रमुख कर्तव्य संक्रामक रोगों का अवरोध था। आज ये सेवायें विस्तृत हो गयी हैं तथा इनका उत्तरदायित्व बढ़ गया है। रोग की शीघ्र पहचान, चिकित्सा सुधार के लिए दोषों को जानना, बालकों में स्वास्थ्य एवं क्षमता का स्तर निर्धारित करना, स्वास्थ्य के रेकार्ड रखना, सम्पूर्ण संस्था के स्वास्थ्य नियोजन के अन्तर्गत माता पिता को बालक के स्वास्थ्य की सूचना देना, चिकित्सा परीक्षा के परिणामों के अनुसार अन्त तक आवश्यक चिकित्सा एवं अन्य आदेशों का पालन करने की चेष्टा एवं निरीक्षण करना आदि स्वास्थ्य सेवाओं का परम कर्तव्य हो गया है। इस सेवा में संस्था के प्रत्येक व्यक्ति आ जाते हैं।

(३) स्वास्थ्य शिक्षा

आरम्भ से स्वास्थ्य शिक्षा विषय ही केवल संस्थाओं का इस क्षेत्र में कार्य था किन्तु वर्त्तमान समय में स्वस्थ वातावरण तथा अनेकों स्वास्थ्य सेवाओं पर ध्यान दिया जा रहा है एवं उसके प्रति शिक्षा दी जा रही है। स्कूल स्वास्थ्य शिक्षा से, स्कूल के बाहर के स्वस्थ वातावरण एवं सेवाओं से जो लाभ प्राप्त हो सके प्राप्त करना चाहिये। स्वास्थ्य पाठ्य क्रम के विषय में भिन्न-भिन्न एवं विस्तृत रूप प्रस्तुत करना आवश्यक है। पाठ्य क्रम में व्यक्तिगत विद्यार्थी में ही स्वास्थ्य पर केवल बल नहीं देना चाहिये किन्तु परिवार, मित्रों, समाज एवं सम्पूर्ण राष्ट्र के स्वास्थ्य की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहिये। पाठ्य क्रम ऐसा व्यापक हो कि, शरीर, सामाजिक, मानसिक स्वास्थ्य एवं स्वास्थ्य के दूसरे विस्तृत क्षेत्र भी उसके अन्तर्गत आ जायें। दैनिक जीवन की स्वास्थ्य समस्याओं एवं उनके निवारण उपायों का लाभ लेना चाहिये। स्वास्थ्य शिक्षा के द्वारा वर्त्तमान स्वास्थ्य समस्याओं एवं भविष्य के सम्भावित

समस्याओं का भी ज्ञान कराना आवश्यक है

स्वास्थ्य शिक्षा के मुख्य क्षेत्र जिनमें शिक्षा प्रदान की जा सकती हैं, वे हैं, व्यक्तिगत जीवन, दैनिक जीवन की स्वच्छता एवं स्वास्थ्य नियम, भोजन, स्थान एवं वातावरण की सफाई एवं स्वच्छता जैसे शुद्ध वायु, प्रकाश, पीने का पानी, शौचालय, विश्राम गृह, बैठने, लिखने एवं सोने की सामग्री; विश्राम एवं परिश्रम, समाज स्वास्थ्य, मानसिक स्वास्थ्य, मदिरा एवं अन्य नशे की वस्तु, पारिवारिक जीवन, लैंगिक शिक्षा, सुरक्षा शिक्षा, प्रारम्भिक चिकित्सा, गृह सेवा सुश्रूषा।

स्वास्थ्य शिक्षा का शारीरिक शिक्षा से सम्बन्ध

स्वास्थ्य शिक्षा एवं शारीरिक शिक्षा समान नहीं है किन्तु परस्पर सम्बन्धित हैं। शारीरिक शिक्षा में स्वस्थता एक ध्येय है। यह ध्येय प्रायः प्रत्येक संगठित शिक्षा का है। शारीरिक शिक्षा के कार्यों, विशेष कर व्यायाम से, व्यक्ति, रोग से स्वतंत्र नहीं हो सकता क्योंकि इसका कोई वैज्ञानिक प्रमाण नहीं। रोग निर्बधता व्यायाम से सम्बन्ध नहीं रखता।

उचित व्यायाम एवं शारीरिक शिक्षा क्रिया परिणामों से रोग के विरोध में सहायता प्राप्त हो सकती है, किन्तु रोग के विषय में आधुनिक हाइजीन स्वच्छता के उपायों, निर्बधता, पृथक करने एवं चिकित्सा के द्वारा ही सफलता प्राप्त की जा सकती है न कि व्यायाम से।

शारीरिक शिक्षा एवं स्वास्थ्य शिक्षा के अन्तर का ज्ञान न होने से कुछ कठिनता हो जाती है। साधारणतः इन दोनों शिक्षाओं को समान समझा जाता है तथा स्वास्थ्य शिक्षा को शारीरिक शिक्षा का अंग समझा जाता है। वास्तव में यह धारणा सही नहीं है। शारीरिक शिक्षा मांस पेशियों के शक्तिशाली तीव्र गति से सम्बन्धित है। स्वास्थ्य शिक्षा उन प्रशिक्षणों से सम्बन्धित है जिसके परिणामतः व्यक्ति का स्वास्थ्य ज्ञान, स्वास्थ्य की आदतें एवं स्वास्थ्य की भावनायें उत्पन्न हों। स्वास्थ्य शिक्षा एवं शारीरिक शिक्षा साथ ही साथ दी जा सकती हैं तथा दी भी जाती हैं। स्वास्थ्य शिक्षा के किसी औपचारिक पाठ्य क्रम को शारीरिक शिक्षा नहीं समझना चाहिये।

शारीरिक दोषों के सुधार में भी शारीरिक शिक्षा का बहुत बड़ा हाथ नहीं है। विशेष सुधार एवं ज्ञान विशेषज्ञों का क्षेत्र है जिससे शारीरिक शिक्षक सम्बन्धित नहीं।

स्वास्थ्य शिक्षा के चार उद्देश्य है (१) स्वस्थ जीवन के लिये उपयुक्त वातावरण, (२) सुधार करने के योग्य दोषों एवं रोग की पहचान (३) रोग के नियंत्रण में सहायता एवं सुधारक विशेषज्ञ की सेवा उपलब्ध करना तथा (४) स्वास्थ्य शिक्षा। ये उद्देश्य किसी भी संगठित शिक्षा के हो सकते हैं। विशेष कर सामान्य शिक्षा के। सामान्य शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति शारीरिक शिक्षा के द्वारा अत्याधिक होती है। जैसे व्यक्ति का सर्वोच्च विकास जिसमें शारीरिक एवं संवेगात्मक विकास की प्रमुखता है; स्वास्थ्य के ध्यान से मानव सम्बन्धों को उत्तम करना। सामान एवं सेवाओं के उत्पादन एवं प्रयोग के सम्बन्धों में आर्थिक निपुणता के लिये स्वास्थ्य के तथ्यों एवं सिद्धान्तों का प्रयोग करना, तथा स्वास्थ्य के सम्बन्धों में नागरिक उत्तरदायित्व।

यद्यपि स्वास्थ्य शिक्षा का एक विशेष विभाग है तथापि शारीरिक शिक्षा अपने अनेक अवसरों एवं साधनों के द्वारा स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रम को बहुत अधिक सहायता दे सकती है एवं प्रोत्साहित कर सकती है। शारीरिक शिक्षा में स्पोर्टस् के लिये शारीरिक परीक्षा, उचित साधनों का प्रयोग पारस्परिक सम्बन्ध एवं सहानुभूतिपूर्ण आदेश अवसर के द्वारा भी शारीरिक शिक्षक स्वास्थ्य शिक्षा की सहायता कर सकता है। वह अपने अनेक स्वास्थ्य एवं सुरक्षा शिक्षा के द्वारा भी स्वास्थ्य शिक्षा को प्रोत्साहित कर सकता है। अपने कार्यक्रम की क्रियाओं, व्यक्तिगत प्रशिक्षण तालिका, प्रारम्भिक चिकित्सा, मानसिक स्वास्थ्य, सामाजिक स्वास्थ्य, व्यवसायिक स्वास्थ्य सेवा, सार्वजनिक स्वास्थ्य, संयम, दैनिक क्रियाएं तालिका, शारीरिक दक्षता प्रकृति से विमुख न होने देने आदि के द्वारा स्वास्थ्य शिक्षा प्रदान करने का अपूर्व अवसर प्राप्त होता है।

शारीरिक शिक्षा प्रोग्राम के प्रति उचित स्वास्थ्य शिक्षा पर बल सदैव दिया जाता रहा है। शारीरिक क्रियाओं के स्वास्थ्य पक्ष पर ध्यान देना आवश्यक है। शारीरिक शिक्षा स्वास्थ्य के अभ्यास एवं भावनाओं के प्रयोग से सम्बन्धित है।

उचित विकास एवं शिक्षा के लिये इन दोनो पृथक किन्तु समान विषयों का समन्वय अति आवश्यक है।

मनोरंजन

मनोरंजन व्यक्ति के अवकाश के समय का कार्यक्रम है केवल सुविधाओं एवं सेवाओं के उपलब्ध कर देने से ही व्यक्ति मनोरंजन कार्यक्रम में भाग नहीं लेगा। उसे इस ओर शिक्षित करना आवश्यक है। मनोरंजन के लिये अवकाश प्राप्त करने की आवश्यकता से परिचित कराना चाहिये।

साधारणतः खेल, अवकाश एवं मनोरंजन समान अर्थ की तरह प्रयोग होते हैं। ये समानार्थी नहीं हैं। भिन्नता अल्प है किन्तु भिन्नता है अवश्य।

अवकाश, वह समय है जो व्यक्ति ने अपने लिये प्राप्त किया है कि वह जो चाहे कर सकता है। अपने इस मन चाहे कार्य के करने में वह दूसरों की स्वतंत्रता एवं प्रत्येक प्रकार के नियम का सम्मान करता है। यह वह समय है जिसमें व्यक्ति अपने व्यवसायिक कार्यों से मुक्त होकर, दैनिक उत्तर-दायित्व से स्वतंत्र होकर, विश्राम एवं सोने से अवसर प्राप्त कर अपने सामाजिक व्यक्तित्व का विकास करता है। अवकाश शब्द का अर्थ उन क्रियाओं से नहीं है जिन्हें व्यक्ति अपने खाली समय में करता है। ये कार्य, काम, शिक्षा, मन बहलाव, आदि के रूप में हो सकते हैं। इनमें से कोई मनोरंजन या खेल नहीं है। अवकाश केवल वह स्वतंत्र समय है जिसे व्यक्ति प्रयोग कर सकता है।

खेल जिसे अंग्रेजी में 'प्ले' कहते हैं वह केवल बालकों के लिये ही प्रयोग किया जा सकता है। यह प्रौढ़ों के मनोरंजन क्रियाओं के लिये भी प्रयोग किया गया है। खेल सर्वदा मनोरंजक नहीं होता। बालकों का निर्देशित खेल शैक्षणिक हो सकता है। यह एक प्रकार का बहलाव है। यह मनोरंजन हो भी सकता है या नहीं भी हो सकता है। इससे हानि, लाभ दोनों हो सकते हैं।

मनोरंजन, अवकाश का सदउपयोग है। व्यक्ति से यह आशा की जाती है कि वह अपना समय इस प्रकार प्रयोग करे, जिसके द्वारा उसके व्यक्तित्व के

पूर्ण विकास में सहायक हो। अतः कहा जा सकता है कि मनोरंजन वह अवकाश के समय की क्रियायें हैं जिसका तात्पर्य समूह या व्यक्ति जीवन एवं जीवनयापन की उन्नति से है। क्रियायें रचनात्मक प्रकृति की है। वे केवल समय के व्यतीत करने के लिये नहीं बल्कि समय को उपयोगी ढंग से व्यतीत करने के लिये है। वे शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक रूप से स्वस्थकर हैं।

मनोरंजन शिक्षा, अवकाश के समय के प्रयोग की शिक्षा है।

अवकाश के सदउपयोग के हेतु जो प्रोग्राम, साधन एवं नेतृत्व उपलब्ध हैं। मनोरंजन के अन्तर्गत आते हैं। सम्भवतः जो भाग लेने वाले हैं उनकी इस ओर शिक्षा होना आवश्यक है। मनोरंजन स्वतंत्र एवं ऐच्छिक क्रिया है। यह बलपूर्वक या इच्छा के विरुद्ध कराया नहीं जा सकता। यह होते हुये भी इसका शिक्षात्मक भाग जिसमें किसी कौशल आदि के सीखने के लिये कठिन परिश्रम करना पड़ सकता है, सदैव रुचिकर या प्रसन्नता देने वाले अनुभव नहीं भी हो सकते हैं, तथापि भविष्य के लाभ के हेतु करना अनिवार्य हो जाता है।

जीवन के अनिवार्य बोझ एवं दैनिक आवश्यक कार्यों से विश्राम एवं परिवर्तन के लिये मनोरंजन अति आवश्यक है। आधुनिक काल में मानवीय एवं मानसिक जटिलता बढ़ती जा रही है तथा जीवन में एकत्व के स्थान पर भिन्नता आती जा रही है क्योंकि जीवन विशेषतः तात्विक विचारों से आदेशित होता जा रहा है। ऐसी अवस्था में रचनात्मक मनोरंजन का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। यह एक आत्मिक रूप धारण कर सकता है। यह जीवन व्यतीत करने का एक उपाय बन सकता है। यह व्यवसायिक कार्य का पूरक है।

मनोरंजन के उद्देश्य; व्यक्ति को मनोरंजन की आवश्यकता बताने, उसके लिये साधन उपलब्ध करने, इस हेतु नेतृत्व का प्रशिक्षण, उसके लिये कौशल आदि का प्रशिक्षण, सामग्री का प्रबन्ध, उत्तम प्रोग्राम का नियोजन, राजकीय सहयोग, स्वास्थ्य विकास, पारस्परिक मानव सम्बन्ध, नागरिकता का विकास, आत्म विकास आदि हैं।

मनोरंजन एवं शारीरिक शिक्षा का सम्बन्ध

मनोरंजन एवं शारीरिक शिक्षा सामानार्थी नहीं हैं बल्कि एक दूसरे

को, शिक्षा में ए वं व्यक्ति के पूर्ण विकास में सहयोग देते हैं। आपस में इनका निकट सम्बन्ध है। शारीरिक शिक्षक मनोरंजन कार्य क्रम में अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग ले सकते हैं। शारीरिक शिक्षा के अत्याधिक क्रियायें मनोरंजन के क्षेत्र में प्रयोग होती हैं। शारीरिक शिक्षा सम्बन्धी क्रियायें, मनोरंजन के लिये अर्थमय हैं क्योंकि उन क्रियाओं में उनसे प्राप्त गुण लाभकर हैं एवं उनका स्थानान्तर तथा भविष्य में लाभ प्राप्त किया जा सकता है। यह स्वाभाविक है कि जो व्यक्ति एक काम कर सकता है वह उसमें प्रवीणता प्राप्त करने की चेष्टा करता है।

शिक्षा का अर्थ समायोजन से भी है। शारीरिक शिक्षा भी समायोजन की शिक्षा देता है। स्कूल के बाद के जीवन में जब क्रमशः आयु अधिक होने लगती है तब मनोरंजन के लिये यह समायोजन अत्यन्त लाभकारी सिद्ध होता है। व्यक्ति अपनी स्वास्थ्य एवं शक्ति के अनुसार अपने मनोरंजन कार्यों में समायोजन करता है।

मनोरंजन के क्षेत्र में प्रशिक्षित नेतृत्व के अनुपस्थिति में शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षित व्यक्ति ही मनोरंजन के कार्य को भली भांति चला सकता है। जहां दोनो की नेतृत्वता उपलब्ध हो वहां दोनों में समन्वय होना अति आवश्यक है। दोनों में ध्येय एवं उद्देश्य बहुत कुछ समान है। दोनों ही व्यक्ति के स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता से सम्बन्धित हैं। दोनों के साधन प्रायः एक हैं वैसे तो शिक्षा के प्रत्येक विषय मनोरंजन को सहयोग एवं सामग्री दे सकते हैं एवं देते हैं किन्तु शारीरिक शिक्षा की सामग्री एवं सहयोग मनोरंजन के लिये सर्व श्रेष्ठ है।

शारीरिक शिक्षा का प्रत्येक कार्य मनोरंजन नहीं है उसी तरह मनोरंजन का प्रत्येक कार्य शारीरिक शिक्षा नहीं है। शारीरिक शिक्षा में एक निश्चित रचनात्मक भावना उत्पन्न कर लेने से वह जीवन के अन्तिम दिनों में भी मनोरंजन के कार्यों में व्यक्ति को लीन होने के लिये प्रोत्साहित करेगा।

शारीरिक शिक्षा में अधिकता से भाग लेना मनोरंजन ही है। किसी भी क्रिया में रूचि हो जाने के कारण वह मनोरंजन का कारण बन जाता है।

मनोरंजन से मन को शान्ति, शरीर को विश्राम एवं आत्मा को प्रेरणा मिलती है। मनोरंजन स्वास्थ्य के लिये, जिसके अन्तर्गत मानसिक एवं दैहिक

दोनों परिश्रम आते हैं, अत्यन्त उपयोगी है तथा व्यक्ति के पूर्ण सन्तुलित विकास के लिये अनिवार्य है ।

मनोरंजन के अभाव में शैक्षणिक प्रणालियां अपना कार्य उचित रूप से नहीं कर सकतीं । बालकों के लिये मनोरंजन एवं खेल के द्वारा शिक्षा देना एक महत्वपूर्ण शिक्षा प्रणाली है । मनोरंजन के ही कारण बालक वातावरण के प्रभाव, धूप, छांह, सर्दी, गर्मी, कठिन परिश्रम आदि से नही डरता । अपनी थकावट, निर्बलता, बेबसी आदि को भूल जाता है । मनोरंजन केवल गति प्रद नहीं, बल्कि भावनाओं से युक्त है ; वह व्यक्तिगत प्रतिक्रिया, मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया, एक प्रवृत्ति, एक दृष्टिकोण एवं जीवन का एक मार्ग है । मनोरंजन रूचियों तथा मनोवांछित कार्यों को विकसित करता है । यह एक प्रेरणा है जिसके कारण किसी कार्य को मनोरंजन की महत्ता मिलती है ।

शैक्षणिक संस्था तथा विशेषत: शारीरिक शिक्षा, मनोरंजन के कार्य क्रम के लिये सामग्री जैसे, आजन्म मन भावन कार्य का विषय एवं रुचि का विकास, पुस्तकों को पढ़ने में प्रसन्नता, बाहर खुले में कार्य करने की प्रसन्नता, कैम्पिग, पर्यटन, बागबानी, संगीत, नृत्य, कला कौशल, गतिवाही कौशल, सामूहिक मनोरंजन, स्पोर्टस् में आनन्द, जल क्रीड़ा, विभिन्न प्रकार के खेल तथा गेम्स आदि उपलब्द्ध करा सकती है ।

शिक्षा की महत्ता एवं युवकों के लिये उसकी आवश्यकता उसी समय समझी जा सकती है जब शिक्षा तथा मनोरंजन पृथक नहीं किन्तु एक साथ कर दिये जाते हैं । शिक्षा मनोरंजन नहीं, बल्कि उसकी अनुपस्थिति में अपूर्ण एवं बेजान है । वह मनोरंजन जिसमें ज्ञान नहीं उसमें मनबहलाव का कोई मूल्य नहीं ।

एक स्वस्थ, सुसंगठित समतुल्य शरीर किसी व्यक्ति, समाज या राष्ट्र के लिये एक श्रेष्ठ लाभकर वस्तु है । जब तक ऐसे शरीर का उचित आधार न हो तब तक वह भलि भाँति, सर्वोच्च उन्नति नहीं कर सकता । शिक्षा के इस महत्वपूर्ण दृष्टिकोण में शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन अपनी वास्तविक स्थिति के कारण सहायता फायदा पहुंचा सकते हैं ।

एक उपयुक्त शिक्षा में स्वास्थ्य, शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन सार्थक अनुभव है ।

५

शारीरिक शिक्षा का दर्शन

व्यक्ति, जीवन सम्बन्ध में अपना स्थान जानना चाहता है। साधारणत: जीवन क्या है ऐसे प्रश्न उठने हैं। इसका अर्थ है कि वह जीवन की उपयोगिता एवं अर्थ समझना चाहता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में किसी न किसी प्रकार का दर्शन स्थापित कर लेता है जिससे उसका जीवन मार्ग दर्शन होता है।

दर्शन क्या है ? इसकी अनेकों परिभाषाएँ हैं। कहा जा सकता है कि यह ज्ञान का प्रेम है जो वास्तविकता को जानना चाहता है। यह वह अध्ययन है जिसके द्वारा जीवन सार्थक बनता है तथा उसके मूल्य, अर्थ एवं अन्त निर्धारित होते हैं। अत: दर्शन सिद्धान्त या मूल्यों को जीवन का ध्रुव कहा जा सकता है।

दर्शन; वास्तविकता क्या है, वास्तविकता का स्त्रोत, अधिकार, सिद्धान्त, सीमा एवं सम्यता, विचार एवं निर्णय तथा तर्क के द्वारा, भले तथा बुरे का ज्ञान निर्धारित करता है।

किसी भी विषय के दर्शन निर्माण के लिये उपरोक्त का हल आवश्यक है। दर्शन इन्ही के सहयोग से निर्मित होते हैं।

सामान्य दर्शन जो वर्त्तमान संसार को प्रभावित करते हैं, वे हैं, मानवतावाद, उपयोगितावाद, यथार्थवाद, प्रकृतिवाद एवं आदर्शवाद।

मानवतावादी दर्शन

मानवतावादी मनुष्य के शरीर की ओर ध्यान देता है। इस वर्ग का

आरम्भ पन्द्रहवीं शताब्दी में हुआ था। इस वाद को मानने वालों का मत था कि मनुष्य शरीर एवं स्वास्थ्य में उत्तम हो। बुद्धि की तीव्रता, शिष्ट आचरण आदि प्रोत्साहित किये जाते थे। शारीरिक स्वास्थ्य एवं दशा विद्याउपार्जन के लिये अनिवार्य समझा जाता था। वह वर्त्तमान एवं शरीर सम्बन्धी वस्तुओं पर विशेष बल देते थे। उनके लिये जीवन वास्तविक था। उनका कथन था कि शरीर से मनुष्य को प्रसन्नता प्राप्त होती है इसलिये उसकी विशेष देख रेख की आवश्यकता है। जीवन का वास्तविक आनन्द जीवन का अर्थ समझने में था।

(२) उपयोगितावादी दर्शन

इस दर्शन के अनुसार विचार या कार्य का मूल्य उनके परिणाम के अनुसार था। यदि परिणाम अच्छा था तो विचार या कार्य ठीक समझे जाते थे। इनके लिये सत्य का प्रमाण उसके कार्यफल पर निर्भर था। उपयोगितावादी के लिये सत्यता उपयोगिता पर निर्भर थी। इसी उपयोगिता के अनुसार विकास आदि उचित कहे जाते थे।

(३) आदर्शवादी दर्शन

इनका विचार है कि वास्तव में मस्तिष्क एवं विचार महत्वपूर्ण हैं। मन एवं विचार ही सत्य हैं तथा इनके द्वारा ही दूसरी वस्तुओं की स्थिति है। स्थूल जगत, सूक्ष्म या विचार के जगत से निम्न स्थान रखता है। कुछ अटल मूल्य हैं जो थे, हैं एवं रहेंगे। मनुष्य विचार के द्वारा उनके समीप पहुंचता जाता है। मनुष्य आत्मिक प्राणी है। वह केवल शरीर नहीं किन्तु आत्मा है। आत्मिक एवं चारित्रिक विकास में ही उसका पूर्ण विकास है। इसमें इच्छा की स्वतन्त्रता मान ली गयी है। मनुष्य की आत्मिक स्वतंत्रता को भी महत्व दिया गया है।

(४) प्रकृतिवादी दर्शन

इस मत के अनुयायियों के अनुसार प्रकृति सत्य है एवं वास्तविकता उसी में है। ये अलौकिक की सत्यता नहीं मानते। सत्यता, प्रकृति से प्राप्त

है। स्थूल प्रकृति विश्व का केन्द्र है। इसी पर सम्पूर्ण सृष्टि आधारित है। इसके नियम अटल हैं। मनुष्य एवं मन केवल सहायक हैं। मनुष्य प्रकृति से प्रभावित है। मनुष्य की क्रियायें प्रकृति के नियम का फल है।

(५) यथार्थवादी

यथार्थवाद वह दर्शन हैं जो विज्ञान पर आधारित है एवं आदर्शवाद के विपरीत है। वास्तविकता मन से सम्बन्धित नहीं है। वस्तु को उसके वास्तविक रूप में देखना इनका ध्येय है। इनका क्षेत्र विशेषत: स्थूल एवं शारीरिक है। सत्य की खोज प्रयोग के द्वारा होती है। जिसका प्रयोग नहीं वह सत्य नहीं।

शिक्षा में दर्शनों का प्रभाव

इन सामान्य दर्शनों का प्रभाव शिक्षा में अनेक रूप में हुआ है। उपयोगितावाद का प्रभाव बालकों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं नैतिक विकास तथा प्राकृतिक बढ़ाव, उनके आयु, स्वास्थ्य, रूचि एवं योग्यता के अनुसार प्राप्त करने की चेष्टा में हुआ।

मानवतावादी दर्शन का प्रभाव वास्तविक जीवन के विकास में हुआ। इसका क्षेत्र प्रकृति एवं मानव रहा। जो मनुष्य के लिये उत्तम है, वही सत्य है। इसमें प्राकृतिक एवं उपयोगितावादी दर्शनों का भी प्रभाव सम्मिलित है। शरीर को यह सर्वोच्च मानते हैं। इस दर्शन के प्रभाव से शरीर के विकास की ओर उचित ध्यान दिया गया।

आदर्शवादी दर्शन का प्रभाव मन के विकास में हुआ। यथार्थवादी मत का भी प्रभाव इसमें प्रतीत होता है।

इन सभी दर्शनों का मन के विकास पर समान रूप से बल रहा, मन के प्रयोग की प्रणालियां अवश्य भिन्न रही तथा अनुभव के अनुसार इसकी महत्ता में परिवर्तन होता रहा।

इन दर्शनों के प्रभाव से किस प्रकार का शिक्षा दर्शन प्राप्त करना है? शिक्षा के द्वारा स्वास्थ्य, प्रसन्नता, निपुणता एवं चरित्र के निर्माण की चेष्टा की

जाती है। अतः शिक्षा दर्शन ऐसा होना चाहिये जिससे उत्तम जीवन का निर्माण हो तथा जीवन में स्वास्थ्य, प्रसन्नता, निपुणता एवं चरित्र उपलब्ध हो।

यदि उत्तम जीवन को उसके विस्तृत रूप में देखें तो उसमें रोग, दुःख दरिद्रता से मुक्ति, संवेगात्मक स्थिरता एवं संरक्षिता, भय से स्वतंत्रता, गुणों का विकास, जीवन स्थिरता, योग्यता एवं रोचकता, चरित्र की निश्चयात्मकता, आनन्द-दायक अनुभव आदि का सम्मेलन दिखाई देगा। अतः वास्तविक शिक्षा इस उत्तम जीवन के प्राप्त करने में होगी। यह व्यक्तिगत एवं सामूहिक होगी।

शारीरिक शिक्षा में दर्शन

शिक्षा एवं शारीरिक शिक्षा के ध्येय तथा उद्देश्य प्रायः एक ही हैं केवल माध्यम भिन्न हैं। अतएव इनके दर्शन में भी समानता होगी।

शारीरिक शिक्षा का दर्शन भी उत्तम जीवन प्राप्त करने के लिये होगा किन्तु इस प्राप्ति का माध्यम भिन्न होगा।

आधुनिक जीवन को देखते हुये यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि शरीर एवं उसकी शक्ति प्रत्येक अवस्था तथा समय में उपयोगी एवं आवश्यक है। शरीर को उचित रूप देने के लिये शक्तिशाली तीव्र गतिवाही क्रियाओं की आवश्यकता है। इसके ही द्वारा विकास एवं बढ़ाव सम्भव होगा।

उत्तम एवं उपयोगी जीवन के लिये विभिन्न कौशल के प्राप्त करने की आवश्यकता है जिसके फलस्वरुप जीवन सरलता एवं प्रसन्नता से व्यतीत हो सके। इसके द्वारा व्यक्ति वह शिक्षा प्राप्त करेंगे कि जब कुछ न करना हो तब भी कुछ उपयोगी कार्य कर सकें। अंतरिक्षकाल में अनेकों शारीरिक कौशल की आवश्यकता होगी।

उत्तम जीवन के प्राप्त करने में मानसिक एवं सामाजिक विकास को भुलाया नही जा सकता। ज्ञान की आवश्यकता सदैव रहेगी। व्यक्तित्व का यह एक महत्वपूर्ण गुण है। इस गुण के विकास से जीवन के रहस्य की खोज होगी। जीवन की वास्तविकता एवं सत्यता का ज्ञान होगा। शरीर के सम्भव विकास पर

प्रकाश होगा। शरीर ज्ञानपूर्ण रूप से आदेशित होगा।

उत्तम जीवन के प्राप्त करने में सामाजिक विकास का स्थान महत्वपूर्ण है। व्यक्ति समाज में ही विकसित हो सकता है क्योंकि वह सामाजिक प्राणी है। समाज के स्तर से ही व्यक्ति का स्थान निर्धारित होता है। उच्चतम सामाजिक स्तर प्राप्त करने में व्यक्ति की सफलता है। व्यक्ति की सफलता समाज में उसके कार्यों के द्वारा प्राप्त होती है। समाज प्रजातांत्रिक स्वतंत्रता को ऊंचा स्थान देता है। अतः व्यक्ति को उत्तम जीवन प्राप्त करने के लिये सुविधा एवं समय समाज, के द्वारा उपलब्ध कराया जाता हैं।

उत्तम जीवन, उत्तम चरित्र की अनुपस्थिति में सम्भव नहीं। चरित्र जीवन का सर्व श्रेष्ठ गुण है। चरित्र के आधार पर ही उचित विकास सम्भव है। चरित्र मनुष्य का प्रवृत्ति द्वारा संचालित व्यवहार है जिसके द्वारा उसकी आदत एवं भावनायें स्थापित होती में। शारीरिक शिक्षा क्रियाओं में भाग लेने से मानव प्रतिक्रिया में परिवर्तन एवं संशोधन होता है जिससे आदतें निर्मित्त होती हैं। परिणामतः व्यक्तित्व एवं चरित्र का विकास होता है। चरित्र वंशानुक्रम एवं वातावरण से प्रभावित होता है। चरित्र का संगठन अनुभव के द्वारा होता है। चरित्र संगठन के अनुभव, शारीरिक शिक्षा कार्यों की प्राकृतिक दशा एवं स्थिति के कारण, अति उत्तम रीति से होते हैं। उत्तम चरित्र से बहुमूल्य उचित निर्णय, जीवन के सूक्ष्म वस्तुओं का विकास सम्भव होता है। चरित्र जीवन की नीव है जिस पर उत्तम जीवन का निर्माण किया जा सकता है।

६

शारीरिक शिक्षा की शब्दावली

फिजीकल कल्चर

सर्व प्रथम शारीरिक शिक्षा को फिजीकल कल्चर के नाम से पुकारा जाता था किन्तु अब इस शब्द का शिक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं। इस शब्द का प्रयोग उन्नीसवीं शताब्दी में हुआ था। उस समय कल्चर शब्द का विशेष प्रयोग था। शिक्षा को कल्चर ही कहते थे। वर्त्तमान समय में भी कुछ व्यक्ति हैं जो मांस पेशियों के अत्याधिक विकास में रूचि रखते हैं। साधारणतः उन्हीं को फिजीकल कलचरिस्ट कहते हैं तथा वे फिजीकल कल्चर का कार्य करते हैं। शिक्षा तथा क्लब इत्यादि में फिजीकल कल्चर का कार्य होता है। शिक्षा संस्थाओं में इसका प्रयोग नहीं होता।

फिजीकल ट्रेनिंग

यह एक प्रकार का शारीरिक प्रशिक्षण है जिसमें शारीरिक विकास एवं बढ़ाव तथा शारीरिक शक्ति की उपयोगिता के परिणाम के लिये कार्य होता है। यह सेना में विशेष रूप से एवं शैक्षणिक संस्थाओं में भी कभी कभी प्रयोग में आता है। व्यायाम आदि के द्वारा कठिन शारीरिक परिश्रम को भी फिजीकल ट्रेनिंग ही कहते हैं। इस प्रथा में ध्यान विशेषतयः शरीर पर ही दिया जाता है। मनुष्य के मानसिक एवं नैतिक विकास आदि का इस के द्वारा कोई प्रबन्ध नहीं।

फिज़ीकल एज्युकेशन

फिज़ीकल एज्युकेशन एक अत्यन्त विस्तृत एवं महत्वपूर्ण अर्थ मय शब्द है। यह शब्द शिक्षा से सम्बन्ध रखता है एवं उसका एक बड़ा भाग है। इसमें केवल

शारीरिक ही नहीं बल्कि सम्पूण मनुष्य अर्थात उसके मानसिक नैतिक एवं सामाजिक विकास की चेष्टा की जाती है । फिजीकल एज्युकेशन वह शिक्षा है जो शरीर के माध्यम से दी जाती है ।

ड्रिल

यह मार्चिग एवं व्यायाम के लिये प्रयोग किया जाता था जिसमें गति किसी नियुक्त रीति एवं प्रकार से की जाती थी । यह शारीरिक शिक्षा का वह भाग था जो औपचारिक था । यह वह क्रिया थी जो खेल आदि से भिन्न थी एवं एक अनिवार्य रूप लिये हुये थी । स्कूल में शारीरिक शिक्षा का घंटा ड्रिल के नाम से ही पुकारा जाता था । यह अंग्रेजी शब्द ड्रिलिंग से लिया गया था जिस का अर्थ था किसी एक काम को एक ही प्रकार से करना जब तक उस का परिणाम प्राप्त न हो । औपचारिक ड्रिल में कालेस्थेनिक्स भी आता है । यह विशेषतयः बिना आपरेट्स के किया जाता था ।

जिमनास्टिक

जिमनास्टिक वे व्यायाम हैं जिनमें स्प्रिग एवं वाल्टिग की क्रियायें आपरेटस् या बिना आपरेटस् के जिमनेजियम में की जाती हैं । इसके द्वारा शरीर की शक्ति एवं लचीलेपन से अनेकों प्रकार के शारीरिक कार्य एवं कठिन कौशल किये जाते हैं । इसकी प्रथा यूरोप में बहुत थी । वहाँ की शारीरिक शिक्षा को जिमनास्टिक का ही नाम दिया जाता था । यह खेल एवं स्पोर्ट से भिन्न क्रिया है ।

एथेलेटिक्स

यह वह खेल है जिसमें विशेषकर व्यक्तिगत रूप से भाग लिया जाता है । यह मनुष्य की प्राकृतिक क्रियाओं का जो वंशानुक्रम से प्राप्त हुयी हैं, आधुनिक रूप हैं । यह शारीरिक शिक्षा का एक भाग है जो व्यक्तिगत शक्ति, कौशल, स्फूर्ति आदि से सम्बन्धित हैं ।

गेम्स एण्ड स्पोर्ट्स

स्पोर्टस् एक ऐसा शब्द है जो सर्वव्यापी है। इसके अन्तर्गत सामूहिक, व्यक्तिगत, औपचारिक, अनऔपचारिक छोटे, बड़े खेल आदि आते हैं। गेम्स से विशेषतय: ऊँचे संगठन के खेल सम्बोधित होते हैं तथा सामूहिक हैं। स्पोर्टस् में व्यक्तिगत क्रियायें हैं। मछली मारना या शिकार खेलना स्पोर्ट है। स्पोर्ट के अन्तर्गत ऐथेलेटिक्स भी आ जाता है।

हाइजीन

इसका अर्थ स्वास्थ्य है। इसमें स्वास्थ्य के नियम, आदत एवं क्रियायें आती हैं जिनसे स्वास्थ्य का विकास होता है। सर्वप्रथम स्वास्थ्य के अन्तर्गत ही शारीरिक शिक्षा आती थी। यह शारीरिक शिक्षा से बिलकुल भिन्न है।

—

७

शारीरिक शिक्षा का जीव वैज्ञानिक आधार

बढ़ाव एवं विकास

मनुष्य के जीव वैज्ञानिक पृष्ठभूमि से हमें अनेक विचार प्राप्त होते हैं जो शारीरिक शिक्षा की योजना एवं शिक्षा के कार्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इस से सम्बन्धित तथ्यों का उपार्जन निम्नलिखित अध्ययन से हो सकता है।

अनेक जीव वैज्ञानिक जटिलताओं के अन्तर्गत होते हुये मनुष्य का एक कोष्ठ प्राणी से बहु कोष्ठ प्राणी का वर्तमान रूप प्राप्त करना, भिन्न भिन्न आयु पर मानव अस्थि पंजर का विकास, पुरुष एवं स्त्रियों में शरीर क्रिया सम्बन्ध एवं संवेगात्मक विभिन्नता, वार्षिक आयु, शरीर रचना सम्बन्धी आयु एवं शरीर क्रिया सम्बन्धी आयु; शरीर की रचना प्रकार, श्वास प्रणाली की क्रिया, नाड़ी संस्थान की क्रिया, भोजन प्रणाली जिसके द्वारा शरीर को शक्ति मिलती है, मानसिक एवं संवेगात्मक भय जिनके प्रभाव से बालक को हानि पहुंच सकती है, रोग एवं दुर्घटनाओं का भय, वंशानुक्रमिक प्रतिक्रियायें जो मनुष्य समायोजन के लिये प्रयोग करता है।

जीव वैज्ञानिक आधार में प्रारम्भिक प्रश्न मनुष्य के जीवन की उत्पत्ति का है। मनुष्य के शरीर का कोष्ठ, जीवन का जीव वैज्ञानिक आधार है। मानव शरीर का आरम्भ एक कोष्ठ से हुआ। क्रमशः अपने आपको विभाजित एवं पुनः विभाजित करते हुए वह वर्त्तमान बहु कोष्ठ अवस्था को पहुँचा। सर्वप्रथम ये बहुतायत से धड़ में संगठित हुए जिसके द्वारा गति सम्भव हुयी। चलने की शक्ति के कारण नये नये वातावरण का आविष्कार हुआ। नये वातावरण के कारण नयी परिस्थितियां उपस्थित हुयीं। इन नयी स्थितियों की समस्या को हल करने

के लिये शरीर के अंगों एवं प्रणालियों का विकास हुआ। अन्तिम विकास में नाड़ी संस्थान विकसित हुआ जो मनुष्यों के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा। यह एक जटिल मुख्य अंग है जो ऐच्छिक एवं अनऐच्छिक क्रियाओं का नियन्त्रण करता है। सम्पूर्ण शरीर की माँशपेशियों एवं नाड़ी तन्तुओं पर नाड़ी संस्थान का नियन्त्रण है। शरीर की यह सम्पूर्ण रचना कोष्ठों की है।

शरीर के मुख्य विभाग, अस्थि संस्थान, मांस पेशियां, रक्त संचालन संस्थान, श्वास संस्थान, पाचन संस्थान, निशक्रमण संस्थान एवं नाड़ी संस्थान हैं। ये संस्थान धड़ के बड़ी मांस पेशियों के क्रियाओं के सम्बन्ध में उत्पन्न एवं स्थापित हुये।

जीवन के आन्तरिक अंगों पर नियन्त्रण, स्वयं चालित एवं अनैच्छिक हैं। अस्थि सस्थान की मांस पेशियों पर व्यक्ति का सीधा नियन्त्रण है। अतः आन्तरिक अंगों की क्रियाओं को बड़ी मांस पेशियों के शक्तिशाली एवं तीव् गति क्रिया से प्रभावित किया जा सकता है। इन दोनों में विकास करने का सम्बन्ध है। मांस पेशियों का नियन्त्रण नाड़ी केन्द्र से होता है। वे केन्द्र जो धड़ की मांस पेशियों का नियन्त्रण करते हैं वे पुराने, कड़े एवं अधिक सहने की शक्ति रखते हैं। इन प्राचीन केन्द्रों को शक्तिशाली रखना अति आवश्यक है, क्योंकि इन्हीं के द्वारा आधुनिक जीवन के भार को सहन करने में सरलता होगी।

इस आवश्यकता को देखते हुये शारीरिक शिक्षा का यह प्रमुख कर्त्तव्य होता है कि बालकों एवं युवकों को तीव्र गति से शक्तिपूर्ण कार्य, उपयुक्त समय एवं कौशल प्रशिक्षण प्रदान करें। शारीरिक विकास एवं स्वास्थ्य के लिये तीव्र गति का शक्तिपूर्ण कार्य, आवश्यक है। यह प्रायः ४ से ६ घंटें का होना चाहिये। यदि स्कूलों में इतना अवसर नहीं है तो स्कूल के घंटे, शारीरिक कौशल प्रशिक्षण शिक्षा में व्यतीत होने चाहियें जिससे स्कूल के पश्चात उनका प्रयोग किया जा सके।

मनुष्य के जीवन की नीव, जीव वैज्ञानिक आधार पर है फिर भी इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। आधुनिक मनुष्य अपनी उन्नति के लिये स्थूल एवं सामाजिक संस्कृति पर निर्भर रहता है। वह पाठ्य क्रम एवं तकनीक

के द्वारा मानवीय प्रसन्नता प्रात करना चाहता है। मानसिक एवं सामाजिक संस्थाओं के विकास से उसी समय लाभ प्राप्त हो सकता है जब व्यक्ति स्वस्थ उत्तराधिकार प्राप्त करता है। जीवन की प्रत्येक वस्तु उसे उसी समय लाभ पहुंचा सकती है जब वह सुखी एवं स्वस्थ हो एवं उचित शारीरिक परिश्रम में भाग लेता हो।

आर्थिक सुधारों से भी मानव प्रसन्नता प्राप्त नहीं हो सकती। मानव को प्रसन्नता अंगों के विकास एवं प्रयोग से प्राप्त होती है। प्रसन्नता में किसी आर्थिक एवं मानसिक साधनों पर विशेष बल देने के कारण ही अनेकों वर्त्तमान समस्यायें प्रस्तुत हुयी है एवं मानसिक तथा स्नायुविक रोग व्यापक रूप से होते जा रहे हैं। नैतिक शिक्षा से भी मनुष्यों में परिवर्तन नहीं लाया जा सकता। नैतिकता भी शरीर से सम्बन्ध रखती है। इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि किसी भी व्यवहार में सम्पूर्ण व्यक्ति सम्मिलित रहता है,

जीव वैज्ञानिक रीति से क्रमिक विकास के कारण मनुष्य को लाभ एवं हानि दोनों ही हुये हैं। मनुष्य का जीवन स्तर उंचा हो गया है। जीवन में सरलता, सुविधा एवं विश्राम के साधनों का बाहुल्य है। सभ्यता की ये सामग्री मनुष्य को निर्बलता की ओर ले जा रही है।

मनुष्य की चौपाये से द्विपद की अवस्था जो उसे वर्तमान रूप में प्राप्त हुयी है उसके लिये लाभकर होते हुये भी हानिकारक सिद्ध हुई है। इस अवस्था में आने से हाथों की स्वतंत्रता हुयी एवं मस्तिष्क का विकास हुआ किन्तु साथ ही साथ मानवतुला एवं आसन की समस्यायें सन्मुख आ गयीं। इस सीधी अवस्था के कारण पाचन एवं रक्त संचालन क्रिया पर कुप्रभाव पड़ा। द्विपद की समस्या उन शक्तियों में कुशलतापूर्वक प्रवाहित करने में है जो इस अवस्था को प्रभावित करती है।

मनुष्य का नाड़ीमंडल अत्यन्त जटिल है। आधुनिक जीवन में इसकी समायोजन भली भाँति नहीं हो सका है। मानसिक विकार एवं उनमत्तता बहुतायत से है। प्रतियोगिता एवं संघर्ष के कारण मनुष्य अपने को सही रीति से समायोजित नहीं कर पाया अतः इसका प्रभाव उसके सम्पूर्ण शारीरिक रचना पर पड़ा। चिन्ता, दुःख एवं क्लेश उसके प्राण से खेल रहे हैं। इनसे मुक्त

होने के लिये वह औषधि एवं नशीली वस्तुओं का प्रयोग करने लगा है। इससे भी घोर हानि होती है। सभ्यता का जीवन तीव्र गति से व्यतीत करना, शोर, अंग एवं कार्यों की विशेषता, जीवन की अनिश्चयात्मकता आदि से भी अत्यन्त हानि हुयी है।

सुरक्षा के अप्राकृतिक साधन, सभ्यता का अप्राकृतिक जीवन, विशेषतः घरों के अन्दर रहना, लिंग प्रवृत्ति का दुरोपयोग मनुष्य के दुःख एवं पतन का कारण हुआ है।

इन कारणों से मनुष्य का शारीरिक एवं मानसिक पतन शीघ्रता से होता जा रहा है।

वंशानुक्रम एवं वातावरण का प्रभाव

मनुष्य वंशानुक्रम एवं वातावरण, दोनों के योग का उत्पादन है। आधुनिक समस्यायों उसके वातावरण के प्रभावों एवं वंशानुक्रम की सम्भावित शक्तियों के उचित प्रयोग न करने के कारण प्रस्तुत हुये हैं। मनुष्य के विभिन्न आविष्कारों से समाज परिवर्तित होता जा रहा है। अतः समस्या वातावरण के नियन्त्रण की है एवं इसी वातावरण की समस्या को, शारीरिक शिक्षा के द्वारा भी हल करना है।

वंशानुक्रम की प्रकृति से इस बात का समर्थन होता है कि व्यक्ति अपने विशेष प्राणोदन, आवेश एवं अभिप्राय के कारण भिन्न भिन्न प्रकार के व्यवहार का प्रदर्शन करता है। ये व्यवहार समाज के नियम के अनुसार होना आवश्यक हैं अतः इनको विलियन, दमन, मार्गान्तिकरण या प्रोत्साहित करने की आवश्यकता होती है। इससे यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि मनुष्य की इच्छा एवं रूचि होती है। प्राकृतिक प्रवृत्तियों के कारण वह किसी प्रकार के गति प्रद कौशल के करने योग्य होता है तथा इसकी उपयोगिता के लिए निर्देशन की आवश्यकता है। ये तथ्य जीव वैज्ञानिक आधार से प्राप्त होते हैं। वंशानुक्रम सामग्री देता है। वातावरण के अनुभव से उस सामग्री को रचनात्मक रूप से प्रयोग करना है।

मनुष्य ने सामाजिक वंशानुक्रम के द्वारा विशाल उत्तराधिकार प्राप्त किया है जो आधुनिक सभ्यता में प्रदर्शित है। वह अपनी संस्कृति, अविष्कार,

भाषा, यन्त्र, शस्त्र, साहित्य आदि के द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सामाजिक वंशानुक्रम के धन पहुंचाता है। इस सामाजिक वंशानुक्रम में मानसिक शक्तियों का प्रयोग, बैठ कर करने के व्यवसाय एवं व्यवसाय में विशेषता अधिकता से प्राप्त हुई हैं। मनुष्य का शारीरिक बल, सहने की शक्ति, नाड़ी, मंडल के संचालन के लिये सदैव आवश्यक होगी। मनुष्य एवं में खेल एवं कार्य करने की प्रवृत्ति है। अवसर प्राप्त होने पर इनका शारीरिक विकास में उचित प्रयोग होगा। अवसर के अनुपस्थिति में परिणाम बुरा है।

जीव वैज्ञानिक रीति से या किसी प्रकार से मनुष्य के विषय में अध्ययन करना कोई सरल विषय नहीं है। मनुष्य के विषय में सही ज्ञान प्राप्त करने के लिये उसे भिन्न भिन्न भागों में विभक्त करना पड़ता है एवं उनकी परीक्षा तथा निरीक्षण करना पड़ता है। केवल इन भागों के अध्ययन से सम्पूर्ण मनुष्य का ज्ञान नहीं हो सकता क्योंकि पूर्ण मनुष्य इन भागों के योग से कहीं अधिक है। इतना होते हुये भी इस पूर्ण को जानने के लिये भिन्न भिन्न भागों का जो उसके रचना एवं कार्य पर प्रकाश डालती हैं अध्ययन करना अनिवार्य हो जाता है।

शारीरिक शिक्षा में भिन्न भिन्न भागों पर ध्यान रखते हुये सम्पूर्ण मनुष्य की समस्या पर ध्यान देना है। यह निश्चयात्मक रूप से ज्ञात है कि जैसे प्राचीन काल में, वैसे ही वर्तमान में एवं भविष्य में भी, मनुष्य को उसकी मांस पेशियों की आवश्यकता होगी तथा इस शक्ति के अतिरिक्त वह अपने कार्य में पूर्ण रूप से सफलता प्राप्त नहीं कर सकता। अनुभव से यह ज्ञात है कि जो निर्बल हैं वे अपने कार्य में सदैव असफल होंगे। अतः इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि निर्बलता जीवन को हानि पहुंचायेगी, शरीर के अंगों की क्रियाओं की अज्ञानता रोग फैलायेंगी एवं व्यक्ति के बढ़ाव तथा विकास की ओर से लापरवाही में राष्ट्र एवं मानव समाज को खतरा रहेगा। इस परिवर्तित संसार में किसी विषय पर भरोसा कर सकें या न कर सकें, उपरोक्त कथन पर सदैव निश्चयात्मक रूप से विश्वास किया जा सकता है।

शारीरिक शिक्षा में जीवन की पूर्णता पर ध्यान देना है तथा उसकी प्रारम्भिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। इन सरल प्रारम्भिक आवश्यकताओं के प्रति ध्यान देने से वे विषय जिनमें निश्चयात्मकता नहीं है आप ही

सम्भल जायेंगी। सरल आवश्यकतायें हैं, जैसे निर्बलता के स्थान में शक्ति लाना एवं स्वस्थ जीवन। समाज के प्रत्येक सदस्य का स्वस्थ एवं सुखी होना राष्ट्र का बड़ा धन है। राष्ट्र व्यक्तिगत शक्ति का योग है।

अणु युग के अनिश्चितता के हल हो जाने से अवकाश की अधिकता होगी एवं उसका सदउपयोग एक समस्या होगी। अनिश्चितता में मांस पेशियों के कौशल एवं शक्ति के विषय में निश्चयात्मकता तो रहेगी। अवकाश के सदउपयोग के लिये उन शारीरिक कौशल में प्रशिक्षित करना आवश्यक है जिनके प्रयोग से व्यक्ति अपने को विकसित भी कर सकें। जो राष्ट्र अवकाश का सदउपयोग नहीं कर सकता वह कभी उन्नति नहीं कर सकता। इसके लिये बाल्यकाल से प्रशिक्षण देना आवश्यक है। प्रशिक्षण के लिये खेल तथा मनोरंजन की सुविधायें, नगरों में खेल के मैदान की समस्या का हल, नेतृत्व के लिये धन एवं खेल तथा मनोरंजन को स्कूल की शिक्षा से सम्बन्धित करने की अत्यन्त आवश्यकता है। यह समझना चाहिये कि शिक्षा या शारीरिक शिक्षा पूर्ण मनुष्य की है तथा शिक्षा जीवन है। शारीरिक शिक्षा, आसन, पसीना एवं व्यायाम नहीं। अतएव शारीरिक शिक्षा का कर्त्तव्य है कि बालकों की आवश्यकताओं को स्थिर करे तथा इस बात को स्पष्ट कर दे कि स्वस्थ व्यक्तियों की आवश्यकता है जिनमें स्वास्थ्य, प्रसन्नता, निपुणता एवं चरित्र, पूर्ण मात्रा में हो। इस परिणाम को प्राप्त करने के लिये क्रियाओं में आनन्दपूर्वक भाग लेकर बैठ कर करने वाले व्यवसायों का विरोध, अधिकता से मनोरंजन का अवसर प्राप्त करना, बाह्य प्रकृति में रहने का प्रेम, वर्त्तमान काल के जीवन के भय को ध्यान में रखकर कार्यों का चुनाव, हानिकारक प्रभावों का विरोध, व्यवसायिक कमी की पूर्ति एवं स्वास्थ्यकर विकास किया जायेगा।

व्यक्ति के आसन या डील डौल जैसे खड़ा होना, बैठना, चलना आदि तथा आधार भूत गतियां; दौड़ना, कूदना, फेंकना, चढ़ना, लटकना, मारना, ले जाना, जो गति युक्त क्रिया के प्रधान प्रकार हैं तथा मनुष्य के साथ आरम्भ से थे एवं रहेंगे, उन पर ध्यान देना आवश्यक है। आधुनिक शारीरिक शिक्षा कार्य इन्हीं आसन एवं गतियों का विस्तार एवं परिवर्तन है। जैसे फुटबौल मारना, ले जाना, कूदना, दौड़ना, फेंकना है। गतियां, जाति प्राचीन हैं, उनकी तकनीक आधुनिक है।

सभ्यता के अप्राकृतिक अवस्थाओं के कारण, जन्म से तथा अन्य कारणों से मनुष्य की अस्थी रचना में दोष हो सकते हैं। कुछ दोष ऐसे होते हैं जिसके लिए चिकित्सा नहीं किन्तु विशेष व्यायाम आवश्यक है। शरीर के इन दोषों के निवारण के लिये शारीरिक शिक्षा का प्रयोग करना चाहिये। शरीर के उस अंग में जहाँ कड़ापन आ जाये उसके लिये लचीलेपन का व्यायाम देना आवश्यक है। जो अंग निर्बल हैं वे व्यायाम के द्वारा उसी प्रकार बलिष्ठ किये जा सकते हैं। तलवे की गोलाई, रीढ़ के हड्डी की मोड़, शरीर में उचित आसन पर इन्हीं कारणों से ध्यान देना चाहिये।

पुरुष एवं स्त्री में विभिन्नता

पुरुष एवं स्त्री में लैंगिक विभिन्नता है। इस विभिन्नता के कारण शरीर रचनात्मक एवं क्रियात्मक विभिन्नता पायी जाती है जिसके उपर विशेष ध्यान रखना आवश्यक है।

महिलाओं की पेलविस पुरुष की अपेक्षा बहुत चौड़ी है तथा २० वर्ष तक उनका पूर्ण विकास नहीं होता। किसी प्रकार की शारीरिक क्रिया जिसके द्वारा इस भाग पर खिचाव हो, लड़कियों के लिये नहीं देना चाहिये। इसके द्वारा दौड़ने की योग्यता में बाधा होती है। धड़ के नीचे के भाग की किसी क्रिया में बगल का झुकाव होता है अतः जमीन से उपर उठने की तीव्रता में अन्तर होता है:

लड़कियों के जांघ की हड्डी पेलविस में एक टेढ़े कोण से जुड़ी है। 'सेन्टर आफ ग्रेविटी' गुरुत्व आर्कषण केन्द्र लड़कियों में नीची होती है। शरीर के वज़न के सम्बन्ध में लड़कियों की मांस पेशियों की शक्ति कम होती है। इनके कारण कठिन आपरेटस के कार्य, दौड़ना, हाथों से शरीर के वज़न को सम्भालने का कार्य, तथा अति कठिन कार्य लड़कियों के प्रोग्राम में नहीं होना चाहिये। १५ वर्ष की आयु के पश्चात् एक ही कार्य में बराबर लड़के लड़कियों की प्रतियोगिता नहीं होनी चाहिये।

शरीर रचना एवं शरीर क्रिया के अनुसार स्त्री एवं पुरुषों में लैंगिक विभिन्नता है किन्तु नाड़ी संस्थान में किसी प्रकार की विभिन्नता नहीं। उनके

प्रवृत्तिक, संवेगात्मक, स्वाभाविक एवं नैतिक परीक्षण में कोई विशेष विभिन्नता नहीं दिखायी देती ।

बढ़ाव एवं विकास के प्रति ध्यान देना आवश्यक है। बढ़ाव का अर्थ शारीरिक समूह से है । इस समूह का बढ़ाव का अर्थ उस भाग में शक्ति लाने से है जिससे उस अंग या समूह में कार्य करने की उचित शक्ति हो। विकास का अर्थ पूर्ण शक्तियों के संयोजित प्रवाह में है । अतः बालक का विकास कुछ समूह के बढ़ाव से समझा जा सकता है किन्तु यह सम्भव है कि बढ़ाव हो, पर सम्बन्धित विकास न हो। शारीरिक शिक्षा बढ़ाव को प्रभावित करती है। किन्तु उसकी मुख्य रुचि विकास करना है। इन पर वंशानुक्रम एवं वातावरण का अधिक प्रभाव पड़ता है । बढ़ाव एवं विकास में दूसरी शक्तियां भी कार्य करती हैं। भोजन, रोग, ऐन्डोक्रिन ग्लैन्ड का सही कार्य न होना। वातावरण के तथ्य, सूर्य का प्रकाश, खुली हवा, बढ़ते हुये बालक की रक्षा, उपयुक्त विश्राम एवं खेल का प्रभाव अधिक होता है । उत्तम उच्च श्रेणी के वातावरण से प्रभाव भी उत्तम होगा।

आयु के अनुसार व्यक्ति का वर्गीकरण भिन्न भिन्न प्रकार से होता है। साधारणतः चार वर्ग हैं।

वार्षिक आयु : यह वर्ष एवं महीनों के द्वारा ज्ञात होता है ।

शरीर रचना आयु : यह अस्थी के बनावट के द्वारा ज्ञात होता है। कलाई की छोटी हड्डियां इसकी परीक्षा के लिये प्रयोग में आती है। यह एक्सरे के द्वारा ज्ञात किया जा सकता है ।

शरीर क्रिया आयु : यह शरीर की क्रिया पर निर्भर है तथा परिपक्क्ता से सम्बन्धित है । शरीर क्रिया परिपक्वता जो लैंगिक विकास से प्रदर्शित होता है उसके विकास के समय में चार या पाँच वर्ष का अन्तर हो सकता है ।

मानसिक आयु: यह परीक्षा, वातावरण में समायोजन तथा समस्याओं के हल के द्वारा निर्धारित किया जाता है।

शारीरिक शिक्षा के लिये यह वर्गीकरण उपयोगी है किन्तु शारीरिक क्रिया आयु से वह विशेष रीति से सम्बन्धित है। बालक जिनकी एक शरीर

क्रिया आयु है वे एक साथ खेलना पसन्द करते हैं। इस आयु के अनुसार लड़कियां लड़कों से बड़ी होती हैं।

शरीर के प्रकार

मनोवैज्ञानिक, व्यक्तियों का वर्गीकरण शरीर के बनावट व प्रकार के अनुसार करते हैं। इसके साथ ही कुछ शारीरिक क्रिया एवं व्यक्तित्व के लक्षण हैं जो इन शरीर के प्रकारों से सम्बन्धित है। क्रेट्समर के अनुसार ऐसी विभक्ति चार प्रकार की हैं।

(१) **ऐथेलेटिकः** यह मांस पेशियों वाला व्यक्ति होता है। कंधे उत्तम, चौड़े, विकसित सीना, गठीला एवं बलिष्ठ।

(२) **ऐथेनिकः** लम्बे, दुबले व्यक्ति, सीना चपटा धंसा हुआ, गिरते हुये कंधे, कम बल वाले, वजन के तुल्य अधिक लम्बे।

(३) **पायकनिक** : चौड़ा गोल शरीर, बड़ा सिर, मोटी गर्दन, पीपे की तरह सीना, पेट आगे निकला हुआ।

(४) **डाइप्लास्टिकः** उपरोक्त तीनों से भिन्न। अप्रकृतिक एवं साधरण स्तर से भिन्न। बेढब शरीर एवं कुरूप।

शेल्डन के वर्गीकरण के अनुसार मेसोमौर्फ, इक्टोमौर्फ, एवं एन्डोमौर्फ हैं जो क्रमानुसार एथेलेटिक, एसथेनिक एवं पायकनिक के समान हैं।

सीमित रीति से शारीरिक बनावट के प्रकार ऐथेलेटिक योग्यता दिखलाते हैं। उदाहरणार्थ पायकनिक, फुटबौल, हाकी आदि में रुचि लेंगे। एसथेनिक दौड़ना या टोनिस में रुचि दिखलायेंगे। इस प्रकार के वर्गीकरण विश्वास के योग्य नहीं है। शारीरिक शिक्षक को इस पर अधिक आधारित नहीं होना चाहिये। दूसरे विश्वसनीय तथ्य, आयु, शरीर क्रिया परिपक्वता, रुचि, कौशल, कद, बल, शारीरिक क्षमता एवं ऐसी ही अन्य कसौटी अधिक विश्वासनीय है तथा उनका ही आधार लिया जा सकता है।

व्यायाम का सिद्धांत

थकान एक ऐसी अवस्था है जिसे प्रत्येक मनुष्य अनुभव करता है। यह मांस पेशियों की कार्य करने की एक अस्थायी अयोग्यता है। दिन के कठिन दैनिक कार्य के पश्चात जब मांस पेशियों की बलिष्ठ चेष्टायें हुयी हों या उत्तेजनात्मक अनुभवों का अनुभव हो तो यह अवस्था आ जाती है। इस अवस्था में कार्य करने की क्षमता नहीं रहती एवं एक प्रकार की बेचैनी आ जाती है।

थकान के कई एक प्रकार हैं। शारीरिक थकान जो कठिन परिश्रम के पश्चात अनुभव होती है। इससे मुक्त होने के लिये विश्राम की आवश्यकता होती है। मानसिक थकान जब मानसिक रूप का कार्य अधिक समय एवं एकाग्रचित होकर किया जाये। कुछ न करने पर भी मांनसिक रूप से थकान हो सकती है या जो कुछ करना हो उसमें रुचि न हो तब भी यह अवस्था आ सकती है। संवेगात्मक अनुभव जो घातक प्रकार का हो उसके द्वारा भी मानसिक थकान उत्पन्न हो सकती है। इस प्रकार की थकान को पूरा करने के लिये कुछ कार्य करना आवश्यक है। मानसिक थकान केन्द्रीय नाड़ी मंडल सम्बन्धी होती है। बहुतों का कहना है कि मानसिक थकान कोई अवस्था नहीं होती।

मांस पेशियों की थकान एक स्थानीय दशा है जो नाड़ी मांस पेशियों के यन्त्र में होती है।

व्यायाम के करने के समय मांसपेशियों में कुछ परिवर्तन होते हैं। मांस पेशियों में शक्तिशाली खींचाव जिसके कारण कार्य सम्भव हो सके, गर्मी उत्पन्न करना, शक्ति का विकास, रासायनिक परिवर्तन, जैसे ग्लायकोजन का व्यय, लाकटिक एसिड का उत्पादन एवं कार्बन-डाई-आकसाइड का बनना।

नाड़ियों से मांस पेशियों को जो उत्तेजना प्राप्त होती है उसके कारण ग्लाइकोजिन विभक्त होता है। इससे लाकटिक एसिड का निर्माण होता है। लाकटिक एसिड का एक भाग कार्बन डी आक्साइड एवं पानी बन जाता है। शेष भाग फिर ग्लाइकोजन बन जाता है। विश्राम करते हुये मांस पेशियों में लाकटिक ऐसिड नाम मात्र रहता है।

लाकटिक एसिड के कारण थकान होती है। विश्राम करते हुये मांस पेशियों में से आक्सीजन से मिश्रित होने के कारण तथा लीवर एवं मांस पेशियों में पुन: ग्लाइकोजिन बनने के कारण लाकटिक एसिड हटाया जाता हैं।

शक्तिशाली व्यायाम में लाकटिक एसिड का उत्पादन बहुत होता है जिससे थकान होती है। लाकटिक एसिड का कुछ भाग तत्काल ही आक्सीजन से मिश्रित होता है। इसके कारण गर्मी उत्पन्न होती है तथा कार्बन डी आक्साइड बनता है। लाकटिक एसिड का अधिक भाग मांस पेशियों के कुछ अलकलाईन के द्वारा प्रभावहीन कर दिया जाता है एवं रक्त में मिश्रित हो जाता है। रक्त एवं शरीर के अन्य रासायनिक पदार्थ में भी अलकलाईन होता है जो कारबोनिक एसिड एवं लाकटिक एसिड को शक्तिहीन कर देते हैं। ये अलक्लाइन बफर्स' कहलाते हैं। यदि यह नहीं होता है तो आक्सीजन की कमी से अधिक आक्सीजन की आवश्यकता होती है जिसे आक्सीजन डेट' (oxygen debt) कहते हैं।

मध्यम प्रकार के व्यायाम के पश्चात शरीर प्राय: २५ मिनट में साधारण अवस्था में आ जाता है। कठिन परिश्रम में दो घंटा तक लग जाता है। हलके मालिश से मांस पेशियों को आराम मिलता है एवं थकान दूर होती है।

कठिन शारीरिक परिश्रम के समय श्वास प्रणाली की क्रिया अधिक होती है। परिश्रम के समय श्वास शीघ्रता से चलने लगती है।

बहुत से कम अनुभवी शारीरिक शिक्षक हैं जो विशेष श्वास का व्यायाम देते हैं जिससे बालक सही श्वास लेने की रीति सीख जाये। यह एक भ्रम है एवं गलत कार्य है। श्वास के व्यायाम की आवश्यता नहीं है क्योंकि जितनी आक्सीजन शरीर को आवश्यक है वह साधारण रीति से श्वास के द्वारा ले लेता है। यदि शरीर को अधिक आक्सीजन दिया जाये तो प्रयोग के द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया है कि जितनी कोष्ठों की आवश्यकता होती है उतना आक्सीजन ले लिया जाता है एवं बचा हुआ आक्सीजन शरीर के द्वारा अस्वीकृत कर दिया जाता है। अतएव इस क्रिया के लिये श्वास व्यायाम का कोई लाभ नहीं। जब शरीर को अधिक आक्सीजन की आवश्यकता होती है तो श्वास तेजी से चलने

लगता है एवं रक्त संचालन क्रिया से आवश्यकता पूरी होती है । इस अवस्था की आवश्यकता की पूर्ति के लिये श्वास एवं रक्त संचालन प्रणालियाँ तीव्रता से कार्य करने लगती हैं। यह अवस्था कार्य करने पर ही होती है। आक्सीजन रक्त में मिलता जाता है तथा कारबन डाइआक्साइड भस्म हो जाती है। भस्म करने के लिये जितनी आक्सीजन की आवश्यकता होती है वह श्वास के द्वारा प्राप्त होती है। अत: श्वास के व्यायाम से रक्त संचालन के एसीड एवं तत्व के संतुलन में विकार आ जाता है।

जब श्वास के द्वारा, शरीर की आवश्यकता के अनुसार उपयुक्त आक्सी-जन मिलता रहता है, उस अवस्था को 'नार्मल लोड' कहते हैं।

जब श्वास के द्वारा कार्य के अनुसार आक्सीजन लेना बराबर रहता है, किन्तु पहुंचाने वाले यन्त्र अर्थात श्वास, रक्तसंचालन एवं आक्सीजन छोड़ना अपनी पूर्ण शक्ति से कार्य करते रहते हैं तथा अधिक आक्सीजन के पहुंचाने में असमर्थ हो जाते हैं तो इस अवस्था को 'ओवर लोड' कहते हैं। इसमें आक्सीजन का अधिक प्रयोग होता है एवं कार्य के अनुसार आक्सीजन की मांग पूरी नहीं होती।

'क्रेस्ट लोड' की अवस्था शारीरिक प्रशिक्षण से उत्तम की जा सकती है। रोग के कारण इसमें पतन होता है। मध्यम रीति से दैनिक व्यायाम करने के द्वारा यह बढ़ाया जा सकता है। व्यायाम न करने से इसमें कमी हो जाती है।

इनसे इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि कार्य करने के लिये क्रियात्मक शक्ति एवं बल उसी समय प्राप्त हो सकता है जब क्रिया शक्तिशाली हो और तीव्रता से की गयी हो, जिससे आक्सीजन पहुंचाने वाले यन्त्र एवं प्रणालियों का पूर्णरूप से प्रयोग हो।

शारीरिक शिक्षा की क्रियाओं में विशेषत: व्यायाम में शरीर की बड़ी मांस पेशियों पर ध्यान देना चाहिये। इनकी शक्तिशाली एवं तीव्रता से गति होना अति आवश्यक है। क्रिया स्वतंत्र एवं स्वयं प्रवाहित हो।

शरीर के गर्म करने के व्यायाम में प्राकृतिक गतियों का प्रयोग होना चाहिये।

उचित प्रकार के व्यायाम के द्वारा भाग लेने वाले को लाभ होता है। सम्पूर्ण शरीर में रक्त संचालन की वृद्धि होती है। प्रत्येक व्यक्ति व्यायाम से एक ही समान प्रभावित नहीं होते हैं। श्वास क्रिया में वृद्धि होने के कारण आक्सीजन अधिक मात्रा में प्रयुक्त होता है, कार्बन डाइ-आक्साइड के बाहर निकलने में वृद्धि होती है। यह शरीर की क्रिया पर निर्भर है। व्यर्थ पदार्थों के बाहर निकलने में वृद्धि होती है। इसके कारण गुर्दे, फेफड़ों, अन्तड़ियों एवं त्वचा की क्रिया में वृद्धि होती है। पाचन क्रिया में वृद्धि होती है एवं नाड़ी मंडल के कार्यों में भी वृद्धि होती है।

रोग ग्रस्त व्यक्तियों को व्यायाम नहीं करना चाहिये। आवश्यकता से अधिक कार्य भी नहीं होना चाहिये।

क्रमिक रीति से कुछ समय तक व्यायाम करने से उसके उत्तम परिणाम होते हैं। शारीरिक बल एवं शक्ति में वृद्धि होती है। दैनिक कार्य एवं व्यवसाय में निपुणता होती है। अनुचित मांस पेशियों की प्रतिक्रिया दूर हो जाती है। अंगों एवं मांस पेशियों में उत्तम समन्वय होता है। सम्पूर्ण अंग के सामंजस्य में सुन्दरताा आती है। सहने की शक्ति अधिक होती है। लाल रक्त कीटाणुओं की वृद्धि होती है। रक्त के जमने एवं आक्सीजन ले जाने की योग्यता बढ़ती है। रक्त संचालन उत्तम प्रकार से तथा अधिक होता है। हृदय की दीवार में शक्ति आती है। थकान शीघ्रता से दूर हो जाती है। शारीरिक स्वास्थ्य से चैतन्यता, प्रसन्नता एवं संतुलन प्राप्त होता है। रक्त चाप के बढ़ाव में कमी होती है।

व्यायाम उसी समय उपयोगी सिद्ध होंगे जब उचित रीति एवं क्रमिक रूप से किये जायें। कठिन व्यायामिक परिश्रम करने के प्रथम डाक्टरी परीक्षण होना चाहिये। ३५ वर्ष की आयु के पश्चात उत्तेजनापूर्ण प्रतियोगिता में भाग नहीं लेना चाहिये। शारीरिक क्षमता न होने वाले को क्षमता प्राप्त व्यक्ति के साथ प्रतियोगिता में भाग नहीं लेना चाहिये। एक ही प्रकार के कौशल, प्रशिक्षण एवं नाप के व्यक्तियों को साथ कार्य करना चाहिये। परिश्रम के पश्चात हृदय एवं श्वास शीघ्र ही स्वाभाविक हो जाना चाहिये। परिश्रम के दो घंटे से अधिक थकान, निद्रा में बाधा, या व्यायाम के दस मिनट पश्चात हृदय एवं श्वास का साधारण न होना यह प्रदर्शित करता है कि व्यायाम अधिक समय तक हुआ या कठिन था।

व्यायाम विधिवत एवं क्रमिक रूप से होना चाहिये।

कार्य करने के लिये मांस पेशियों की आवश्यकता होती है। इन्हीं के द्वारा गति, शरीर का ढांचा, गर्मी, श्वास, रक्त संचालन एवं अन्य जीवन सम्बन्धी क्रियायें होती हैं। मांस पेशियों के सम्बन्ध में दो सिद्धान्तों का जानना आवश्यक है।

'मसल टोनस्' एवं 'रेसीप्रोकल इनर्वेशन'। 'मसल टोनस्' का अर्थ है निरन्तर अल्प मात्रा में शरीर की मांस पेशियों का खिचाव। यह सही आसन या डील डौल एवं अंगों के निपुण क्रिया के लिये आवश्यक है। इस खिचाव के कारण किसी उत्तेजना की प्रतिक्रिया शीघ्रता से होती है। 'रेसी-प्रोकल इनर्वेशन' के द्वारा समन्वयिक गति में विरोधी मांस पेशियों के कार्य का प्रदर्शन होता है। इस सिद्धान्त के अनुसार जब मांस पेशियों का समूह किसी कार्य के करने के लिये खिचाव उत्पन्न करता है, उसी समय विरोधी मांस पेशियां ढीली पड़ जाती हैं। जिसके कारण समन्वय के साथ, सहज एवं ताल बद्ध क्रिया सम्भव होती है। किसी नये कार्य के करने में जो कुरूपता आती है एवं समन्वय नहीं होता है उसका कारण, विरोधी मांस पेशियां का ढीला न होना हैं। इसी सिद्धान्त के अनुसार शारीरिक शिक्षा में स्थिर एवं अवरुद्ध व्यायामों का प्रयोग नहीं होना चाहिये। इसी कारण से मांस पेशियां ढीली होनी चाहिये, कड़ी नहीं। यही स्वाभाविक एवं उचित है। ढीलापन का अर्थ यहां गिरने या ढीलेपन में लटकने या बेजान होने से नहीं है।

शारीरिक क्षमता से अर्थ है Resistance to disease जिसके लिये उत्तम वंशानुक्रम, संतुलित भोजन, संतुलित शारीरिक क्रिया, उचित वस्त्र, विश्राम, स्वास्थ्य की आदतें आदि आवश्यक हैं। मांसपेशियों की शक्ति एवं सहने की शक्ति, जो मांस पेशियों की गति के द्वारा प्राप्त होती है, समन्वय, आन्तरिक एवं वाह्य आलम्ब की उचित प्रणाली, मांस पेशियों में तथा तन्तुओं से उचित मात्रा में आवश्यक उत्तेजना उत्पन्न करना एवं अधिक मात्रा एवं गुण में मांसपेशी तन्तुओं का होना, सहने की शक्ति, लचीलापन, तीव्रता, स्फूर्ति, समन्वय, संतुलन, यथार्थता एवं सामंजस्य आदि शारीरिक क्षमता के अन्तर्गत आते हैं।

८

शारीरिक शिक्षा का मनोवैज्ञानिक आधार

मनोविज्ञान का आरम्भ अरस्तु के समय से समझा जाता है। समय समय पर इसकी भिन्न भिन्न परिभाषा रही एवं इसी सम्बन्ध में शरीर तथा मन को भिन्न भिन्न प्रकार से समझा जाता था। इन तथ्यों के ऊपर विश्वास के अनुसार उद्देश्य, शिक्षा एवं प्रणाली निर्धारित होती थी। साधारणतः शरीर एवं मन एक दूसरे से पृथक समझे जाते थे। आधुनिक मनोविज्ञान के कारण इस विचार में परिवर्तन हुआ। शरीर एवं मन के एकत्व में अब कोई संदेह नहीं। शरीर के अंगों का समंजस्य एक दृढ़ एवं स्पष्ट विषय है। शरीर के अंगों की दशा मन एवं विचार को प्रभावित कर सकती है। संवेग के द्वारा सम्पूर्ण शरीर एवं विशेषतयः पाचन क्रिया पर कुप्रभाव पड़ सकता है। पाचन क्रिया भी मन एवं विचार को प्रभावित करती है। विचार के अनुसार सम्पूर्ण शरीर के क्रिया में ही परिवर्तन आ जाता है। यहां तक कहा जाता है कि विचार करने का काम केवल मन ही नहीं करता। इस विचार के अनुसार मन, शरीर में कोई मानसिक वस्तु नहीं समझा जाता किन्तु पूर्ण व्यक्ति का कार्य समझा जाता है। प्रत्येक कार्य में एक विचार होता है एवं प्रत्येक विचार में एक कार्य।

सम्पूर्ण का ज्ञान प्राप्त करने के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि सम्पूर्ण के भागों को स्पष्टता से समझा जाये। अंगों के सामंजस्य के साथ उनकी विशेष विभिन्नता भी शरीर के अंगों की एक सत्यता है। विशेष शक्तियां शरीर के अंगो के विभिन्न कार्यों के द्वारा प्रदर्शित होती हैं। सम्पूर्ण व्यक्ति को समझने के लिये उसकी इस विशेष विभिन्नता को जानना आवश्यक है।

व्यक्ति की शिक्षा में सम्पूर्ण व्यक्ति को नहीं किन्तु उसकी विभिन्न विशेषताओं को शिक्षित किया जाता है। विभिन्न विशेष कौशल का सीखना, लिखना, पढ़ना, पकड़ना, गिनना, स्मरण करना आदि अनगिनत विशेष कार्यों की शिक्षा होती है। ये विशेष शक्तियां आपस में सम्बन्धित हैं एवं अन्त में सम्पूर्ण व्यक्ति को शिक्षित करती हैं। इस अवस्था में मन एवं शरीर व्यक्ति के पृथक भाग होते हुये, भी दोनों मिल कर एक सम्पूर्ण हो जाते हैं एवं उनका एकत्व प्रदर्शित होता है।

व्यक्ति के इस एकत्व को शारीरिक शिक्षा में भी क्रमशः मान्यता प्राप्त हो रही है। यह स्पष्ट है कि व्यक्ति, अस्थि, मांस पेशी, विभिन्न अंग, विचार, आदर्श, संवेग, नाड़ी आदि नहीं है। व्यक्ति इन सबका सामंजस्य है, यह सत्य है कि अनेको बार व्यक्ति की कोई विशेष शक्ति या अंग इस सामंजस्य में न आकर स्वतंत्रता से कार्य करे। ऐसी अवस्था में वह विशेष शक्ति, व्यक्ति के एकत्व का विरोध करेगी।

मनुष्य के शारीरिक कार्य या मानसिक कार्य में सम्पूर्ण व्यक्ति कार्य करता है। विचार करने के समय व्यक्ति, मन एवं पाचन क्रिया के द्वारा विचार करता है। हाथ से कार्य करने के समय वह मन से भी कार्य करता है। व्यक्ति के प्रत्येक मानसिक या शारीरिक कार्य में मन एवं शरीर दोनों साथ रहेंगे। पैर, शरीर एवं मन दोनों है। अतः इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि व्यक्ति की प्रतिक्रियायें परस्पर सम्बन्धित हैं। व्यक्ति की आदत, विचार, आदर्श व्यवहार रुचि उसकी शक्ति, लचीलेपन, तीव्रता, सुरक्षा, कौशल आदि से सम्बन्धित हैं। ये सम्पूर्ण व्यक्ति की क्रियायें हैं।

व्यक्ति की उन शक्तियों की ओर विशेष ध्यान देना आवश्यक है जो उसके एकत्व के विरुद्ध कार्य करती हैं या एकत्व में सहयोग नहीं देती। ऐसी शक्ति विकार उत्पन्न कर सकती है जो व्यक्ति के लिये अत्यन्त हानिकारक सिद्ध होगी।

शिक्षा, व्यक्ति की प्रतिक्रियाओं के परिवर्त्तन एवं संशोधन को कहते हैं। इन परिवर्तित क्रियाओं के द्वारा मष्तिष्क एवं व्यक्तित्व का विकास होता है। अनेको विशेष रीतियां हैं जिनके अनुसार प्रतिक्रियाएं होती हैं। यह वंशानुक्रम

एवं उसके गुणों के कारण सम्भव होता है जिसमें उसकी नाड़ी संस्थान की विशेषतायें मुख्य हैं। मनुष्य की जन्म जात प्रवृत्तियां हैं जो उसे किसी कार्य की ओर आकर्षित करती हैं तथा पग पग पर उसे प्रेरित करती रहती हैं। प्रवृत्तियों के कारण वह किसी गतिविधि के लिये तैयार होता है, किसी वस्तु को चुन लेता है, किसी को छोड़ देता है। बालक, इसी कारण से प्राकृतिक गति, कूदना, चढ़ना, दौड़ना, लटकना, पकड़ना, आदि में भाग लेते हैं। इसी प्रवृत्ति के कारण वह खेल में भाग लेता है, व्यक्ति प्रवृत्ति के कारण ही कार्य करने के लिये तैयार रहता है। यह तैयारी शरीर के किस भाग में स्थित है या शरीर का कौन सा अंग प्रेरित होता है यह कहना कठिन है। यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि तैयारी सम्पूर्ण व्यक्ति में होती है तथा इसमें सहायता ग्रन्थियों, नाड़ी तन्तुओं, अस्थियों, मांस पेशियों, गति, संवेग भाव आदि से होती है।

मनुष्य की जन्म जाति मनोवृत्ति के तीन भाग बताये गये हैं। इनके बीच के अन्तर बहुत स्पष्ट नहीं है किन्तु इस प्रकार विभाजित करने में समझने में सरलता होती हैं। ये प्रवृत्तियां परम्परा से चली आयी हैं। शैशव काल ही से यह मनुष्य को वातावरण में समायोजन करने में एवं अनुभव करने में सहायक होती हैं जिनके द्वारा बढ़ाव एवं विकास में सहायता प्राप्त होती है। इन जीव वैज्ञानिक परम्परा से प्राप्त प्रवृत्तियों के आधार पर ही सीखना एवं बढ़ाव होता है। अनुभव के द्वारा इनमें परिवर्तन किया जा सकता है।

सहज क्रिया

यह अनैच्छिक क्रिया है जो शरीर के प्रत्येक अंग में होती है और किसी उत्तेजना के कारण होती है।

मूल प्रवृत्ति

यह मान लिया गया है कि अनेकों प्रवृत्तियां हैं जो प्रत्येक मनुष्य में पायी जाती हैं जो जन्मजात हैं। ये सीखी नहीं जाती। व्यक्तिगत व्यवहार में इनका बहुत प्रभाव होता है। सामाजिक मान्यता प्राप्त करने की इच्छा, परिहास का भय, दूसरे से आगे बढ़ने की प्रवृत्ति ये जन्मजात प्रवृत्ति के उदाहरण हैं जिनके द्वारा व्यवहार स्थापित होता है।

संवेग

संवेग जन्मजात है जो सहज क्रिया एवं मूल प्रवृत्तियों के समान हैं किन्तु उनसे, इसमें कुछ भिन्नता है जो महत्वपूर्ण है। सहज क्रिया एवं मूल प्रवृत्ति अनेक रीति से विकासित होते हैं विशेष कर ऐच्छिक अस्थि मांस पेशियों के द्वारा। संवेगात्मक प्रतिक्रिया आन्तरिक अंगों में होती है तथा प्रणालियों में परिवर्तन होता है जैसे रक्त संचालन, श्वास क्रिया, पाचन क्रिया, ग्रन्थियों के रस प्रवाह में। भय, क्रोध एवं स्नेह ये तीन प्रमुख संवेग माने गये हैं।

शारीरिक शिक्षा में संवेग का बहुत ही महत्व है क्योंकि स्कूल के दूसरे विषयों से कहीं अधिक संवेगात्मक प्रतिक्रिया शारीरिक शिक्षा कार्यों में होती है। इनका सही प्रवाह होना अनिवार्य है। इसके रोके जाने से हानि होती है। चरित्र एवं व्यवहार में विकार उत्पन्न होगा। बालकों को आदेश 'नहीं' या 'मत' में नहीं देना चाहिये। उन्हें क्या नहीं करना चाहिये की अपेक्षा क्या करना चाहिये, बताना अधिक श्रेयस्कर है।

मूल प्रवृत्तियों एवं संवेग में, अनुभव के द्वारा परिवर्तन एवं संशोधन किये जाते हैं। अनुभव क्रियात्मक हैं। उत्तेजनाओं की प्रतिक्रिया में व्यक्ति अनुभव के द्वारा नये मार्ग, नयी स्थिति एवं नये अनुभव प्राप्त करता है। यह विस्तृत होता जाता है। इन असंख्य महत्वपूर्ण क्रियाओं में जो विभिन्न प्रकार से वातावरण के प्रभाव में परिवर्तित एवं संशोधित किये गये होते हैं, कुछ स्थायी प्रकार के व्यवहार नियत होते हैं जिन्हें 'आदत' कहा जाता है। आदतें अर्जित की जाती हैं। अतः यह वातावरण में व्यवहार करने का एक उपाय है। यह एक दूसरी प्रकृति के रूप में हो जाता है एवं मूलप्रवृत्ति के समान प्रयुक्त होता है।

मनुष्यों में अनेक विशेषतायें एवं गुण जन्म से क्रमिक एवं नियमित रीति से उत्पन्न होते हैं जो किसी प्रशिक्षण तथा अनुभव पर निर्भर नहीं रहते। इससे यह पता चलता है कि अंगों की परिपक्वता का व्यवहार के निर्माण में महत्वपूर्ण भाग है। परिपक्वता से अर्थ प्राकृतिक बढ़ाव एवं विकास, गुणों, विशेषताओं, प्रतिक्रियाओं तथा योग्यता के विकास से है जो स्वतंत्रता से किसी से सीखने के बिना प्राप्त होता है। इस सिद्धान्त के अनुसार उस कौशल के सीखने के लिये व्यक्ति में उस कौशल के लिये मांसपेशियों का परिपक्व होना आवश्यक

है। परिपक्वता के साथ ही गतिप्रद योग्यता प्रगति करती है। प्रत्येक बालक को उसकी मांस पेशियों के विकास के लिये अवसर मिलना चाहिये किन्तु उसकी परिपक्वता के क्षेत्र के बाहर उससे कौशल की निपुणता की आशा नहीं करनी चाहिये। परिपक्वता एवं सीखना आपस में भिन्न नहीं किन्तु एक ही मुद्रा के दो पहलू हैं। गतिवाही कौशल का सीखना किसी दूसरे सीखने से भिन्न नहीं क्योंकि दोनों में एक ही सीखने के सिद्धान्त प्रयोग में आते हैं।

वातावरण व्यक्ति को सदैव प्रभावित करता रहता है तथा वातावरण के सम्पर्क में आकर उसे भिन्न भिन्न प्रकार की प्रतिक्रिया करनी पड़ती है। जितनी अधिक प्रतिक्रिया होगी, सीखना उतना ही अधिक होगा। संकुचित वातावरण में सीखना कम होगा। विस्तृत वातावरण में सीखना अधिक होगा। इसी वातावरण के सम्पर्क में सामाजिक व्यवहार का ज्ञान होता है। हमारी भावनायें विचार एवं व्यवहार, परिवार, स्कूल तथा दूसरी सामाजिक संस्थाओं के द्वारा ही निश्चित होते हैं।

वातावरण में परिवर्तन होता रहता है। अतएव सीखने वाले को इस परिवर्तन के अनुकूल उपाय, योजना एवं विचार करना पड़ता है जिससे सही रीति से वह वातावरण में अपना स्थान प्राप्त कर सके एवं उसमें उचित प्रतिक्रिया हो। दौड़ने वाले को मैदान की प्रकृति के अनुसार ही कदम रखना पड़ेगा। खेलने वाले को गेन्द मारते समय वायु की बाधा का विचार करते हुये एक विशेष कोण से गेन्द मारना पड़ेगा। नाव चलाते समय, पानी की धार के प्रवाह को ध्यान में रखना पड़ता है। तैरने में यदि लहरें तीव्र होती हैं तो तैरने की प्रणाली बदल दी जाती है। अतः सीखना एक प्रणाली है जिसमें व्यक्ति के द्वारा प्रतिक्रियाओं में परिवर्तन एवं संशोधन करना पड़ता है। सीखने के सिद्धान्त के दृष्टिकोण से इन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है कि व्यक्ति अपने वातावरण की क्रिया एवं प्रतिक्रिया के परिणामतः जो अनुभव प्राप्त करता है, उससे सीखता है; नये अनुभव का अर्थ प्राप्त किये हुये अनुभव के अनुसार होता है; व्यक्ति उत्तेजनाओं के प्रति प्रतिक्रिया करने का उपाय सीखता है; प्रतिक्रिया के कुछ उपाय प्राकृतिक एवं जन्मजात होते हैं एवं कुछ अर्जित होते हैं, शारीरिक शिक्षा कार्यों के लिये लर्निंग कर्व (Learning curve) की दशा प्रायः एक सी रहती है एवं शारीरिक शिक्षा में कौशल, स्वयंचालक तथा आदत के रूप में स्थिर करने के लिये अभ्यास की आवश्यकता होती है।

सीखने में थोर्नडाइक के तीन सीखने के नियम से उपयुक्त सहायता मिलती है ।

(१) सीखने में तैयारी की आवश्यकता का नियम

सीखने में तैयारी का अर्थ है कि व्यक्ति उसी समय अधिक एवं उत्तमता से सीख सकता है जब वह सीखने के लिये तैयार रहता है। वह उस समय सीख सकता है जब उस कार्य के तुल्य उसमें परिपक्वता आ जाती है या किसी आवश्यकता का अनुभव होता है ।

कार्य व्यक्ति की योग्यता के अनुसार होना चाहिये । जब व्यक्ति सीखना चाहेगा तो अच्छी रीति से सीख सकता है। व्यक्ति की इच्छा प्रेरणा के वातावरण में बढ़ाई जा सकती है । अप्राकृतिक प्रेरणाओं से स्थायी फल प्राप्त करना कठिन है । कुछ प्रेरणायें प्राकृतिक होती हैं । आवश्यकता का ज्ञान एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रेरणा है । क्रिया के प्रति भाव के होने में भी प्रेरणा हो सकती है। अभाव में प्रेरणा नहीं होगी । प्रेरणाओं को दो मुख्य विभाग में विभाजित कर सकते हैं । जन्मजात एवं अर्जित ।

(२) सीखने में अभ्यास की आवश्यकता का नियम

सभी दशाओं के समान होने पर यदि किसी प्रतिक्रिया का बार बार अभ्यास हो तो वह स्थित हो जाता है एवं तीव्रता तथा निपुणता से कार्य किया जा सकता है । अभ्यास से निपुणता आती है कहना सही नहीं । यर्थाथ यह है कि सही अभ्यास से निपुणता आती है ।

शारीरिक शिक्षा में अभ्यास का अर्थ उत्तम समन्वय, अधिक ताल बद्ध गति, शक्ति का कम व्यय, अधिक कौशल एवं उत्तम क्रिया से है अभ्यास के कारण उत्तेजना एवं प्रतिक्रिया के बीच के मार्ग दृढ़ हो जाते हैं ।

यह नियम प्रयोग एवं अप्रयोग के समान है। निरन्तर प्रयोग से शक्ति प्राप्त होती है । निपुणता स्थित एवं दृढ़ हो जाती है । उन्नति एवं प्रगति सरलता से कम समय में होती है । व्यक्ति शारीरिक सीमा तक प्रगति कर सकता है। यह किसी तेज हथियार की तरह है जो प्रयोग करते करते अधिक तेज हो जाता

है उसी प्रकार प्रयोग में न आने के कारण किसी यन्त्र में जंग लग जाता है एवं कार्य के योग्य नहीं रहता। किसी कार्य के करने में या कौशल का प्रयोग नहीं किया जाये तो उसकी निपुणता जाती रहती है। उसके करने में कठिनाई होने लगेगी। कौशल या कार्य की निपुणता को स्थित रखने के लिये उसको क्रमिक रूप से तथा विधिवत अभ्यास करना आवश्यक है।

प्रत्येक वस्तु की एक सीमा होती है। यदि वस्तु की सीमा, सम्भव, या योग्यता के ऊपर ध्यान न दिया जाय तो हानि होगी। कोई वस्तु किसी विशेष तीव्रता से उत्तम कार्य करती है। यदि इससे अधिक तीव्रता उस वस्तु में लाई जाय तो उसे हानि होने का भय होगा। यहां भी शारीरिक सीमा का नियम कार्य करता हैं। आवश्यकता से अधिक अभ्यास या प्रयोग से उन्नति नहीं अवनति होगी। अधिक प्रयोग से अरूचि उत्पन्न हो सकती है। शारीरिक एवं मानसिक थकान हो जाती है। कार्य में शिथिलता हो जाने का भय है। उचित शारीरिक अवस्था के न होने में उच्चतम परिणाम प्राप्त नहीं हो सकता। किसी भी उत्तम कार्य को उचित परिमाण में करने से परिणाम उत्तम होता है। आवश्यकता से अधिक या कम करने से हानि होगी। आवश्यकता से अधिक अभ्यास यदि रूचिकर है एवं संतोषदायक है तथा इस ध्यान से किया जा रहा है कि विषय में विशेष निपुणता प्राप्त किया जाये तो उसमें लाभ होगा एवं कौशल करने की विशेषता अधिक समय तक रहेगी। अभ्यास के समाप्त होने पर भी स्तर बना रहेगा। जैसे संगीत में, तैरने आदि में। कार्य जितना अधिक सीखा जाये उतना ही अधिक समय भूलने में लगेगा। अभ्यास की अनुपस्थिति में कुछ अवधि के बाद भी निपुणता रहेगी एवं पुनः अभ्यास से प्रथम श्रेष्ठ स्तर पर आ जाने की सम्भावना है। इस प्रकार के उत्तम कौशल के सीखने में यह आवश्यक है कि कौशल का निपुणता के स्तर पर ही अभ्यास होता रहे। यदि वह ऐसा कौशल है तो उसका अभ्यास करते रहना अति आवश्यक है। संसार के एक सर्वश्रेष्ठ वाइलिन के बजाने वाले सज्जन का कहना है कि यदि मैं एक दिन अभ्यास नहीं करता तो अन्तर मुझे मालूम हो जाता है, दो दिन अभ्यास नहीं करता तो अन्तर मेरे परिवार के सदस्यों को मालूम हो जाता हैं, तीन दिन अभ्यास नहीं करता तो अन्तर सम्पूर्ण संसार को मालूम हो जाता है। आवश्यकता से अधिक सीखना एवं आवश्यकता से अधिक प्रयोग इस अर्थ में समान हैं। गेस्टाल्ट के सिद्धान्त के अनुसार 'अभ्यास' के साधारण अर्थ के

अनुसार सीखने के नियम में 'अभ्यास' का कोई स्थान नहीं। अभ्यास के द्वारा नाड़ी मंडल में कोई मार्ग स्थित नहीं होता। कौशल कभी स्वयं चालक नहीं होता। किसी उत्तेजना की प्रतिक्रिया का समन्वय कितना ही न्यून प्रकार का क्यों न हो, वे अनुभव प्राप्त करने की गति नहीं हैं। उनका कहना है कि हम वास्तव में कभी 'अभ्यास' नहीं करते हैं क्योंकि किसी क्रिया को दुबारा हम उसी प्रकार नहीं करते हैं। यदि हम क्रिया एम ही प्रकार से करते रहें तो कभी भी प्रगति नहीं कर सकते। क्योंकि हम गलत कार्य करते रहेंगे। कौशल में उन्नति अभ्यान्तरिक दृष्टि के कारण होती है, जिसके द्वारा अवस्था समझने की चेष्टा की जाती है। 'अभ्यास' से हमारा अर्थ वास्तविकता में उसी अवस्था को अभ्यान्तरिक दृष्टि से समझने का है। इस विचार में कौशल स्वयं चालक होने का अर्थ है पूर्ण स्थिति को सरलता एवं पूर्णता से समझना।

(३) सीखने में प्रभाव का नियम

जिस क्रिया से आनन्द या संतोष प्राप्त होता है उसे करने की इच्छा होती है। जिससे असंतोष होता है उसे करने की इच्छा नहीं होती। शारीरिक शिक्षा से ऐसी अवस्थायें आयोजित होनी चाहिये जो संतोषप्रद हों।

कुछ दशा एवं तथ्य ऐसे हैं जिनके द्वारा सीखने में उत्तम प्रगति होती है। जैसे सीखने वाले को ध्येय का पूर्ण रूप से ज्ञान होना चाहिये। अभ्यास के घंटे की अवधि एवं घंटों में अन्तर उचित होना चाहिये। शिक्षक को बालकों के सीखने की दशा का ज्ञान होना चाहिये। कौशल का पूर्ण रूप से सिखाना न कि केवल विश्लेषण करके। सीखना क्रिया के द्वारा होता है। सीखने की मात्रा बहुत अधिक नेतृत्व पर निर्भर होती है। सीखने वाले को अपनी प्रगति का ज्ञान होना चाहिये। सीखने की क्रिया, सीखने वाले की परिपक्वता के अनुसार होनी चाहिये। व्यक्तिगत विभिन्नता एक निश्चित विषय है। सीखने की इच्छा पर ही सीखना सम्भव होता है। संतोष से सीखने वाले शीघ्र प्रगति करते हैं। सीखने की प्रेरणा से सीखने की इच्छा होती है, स्वयं की आलोचना से सीखना सरलता एवं शीघ्रता से होता है। सीखने की अवस्था में उपयुक्त सामग्री एवं वातावरण होना आवश्यक है। जितना अधिक सीखा जाय उतना लाभकर होगा। दोष का सुधार

आरम्भ ही में होना चाहिये एवं सीखने वाले को शिक्षक पर नहीं किन्तु अपने आप पर निर्भर होना चाहिये एवं अपने ऊपर विश्वास होना चाहिये ।

किसी एक कार्य या कौशल के सीखने में व्यक्ति उस कौशल सम्बन्धित विभिन्न विषयों को भी सीखता है । फुटबौल के कौशल सीखने में वह मैदान, बूट, लेस, ग्रीस, युनिफार्म, कपड़े का प्रकार, चमड़े का प्रकार, मौसम, नियम, अच्छे खिलाड़ियों के विषय, अपने कोच, प्रतियोगिता, अभ्यास का मनोविज्ञान, आदि का भी ज्ञान प्राप्त करता है । इस प्रकार का सीखना भी महत्वपूर्ण है । उत्तम शिक्षक सम्पूर्ण शिक्षा पर ध्यान देते हैं न कि केवल उस शिक्षा पर जो कौशल या तकनीक से ही सम्बन्धित है । शारीरिक शिक्षक केवल शरीर के विकास से ही नहीं किन्तु मानसिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक विकास से सम्बन्धित है । सीखना सम्पूर्ण व्यक्ति के द्वारा होता है । कार्य केवल उसके नाड़ी मंडल एवं मांस पेशियों का नहीं । शिक्षा में विद्या विशेष पर केवल ध्यान न देते हुये उन बातों पर भी ध्यान दिया जाता है जो कार्य करने वाले को प्रभावित करती है एवं उससे सम्बन्धित है ।

कौशल प्रशिक्षण के स्थानान्तर का सिद्धान्त इस पर आधारित है कि एक अवस्था में प्राप्त प्रशिक्षण दूसरी अवस्था में प्रयोग किया जा सकता है । बहुत से मनोवैज्ञानिकों का कहना है विशेष सीखने का स्थानान्तर सरलता से नहीं होता । यदि एक बालक अपने खेल में ईमानदार एवं नम्र है तो यह निश्चित नहीं है कि वह घर, स्कूल, सड़क पर, व्यापार में या दूसरी अवस्थाओं में भी उसी प्रकार नम्र एवं ईमानदार होगा । यह मान्यता प्राप्त सत्य है कि सामान्य सीखना जैसे भावनायें, आदर्श, साधारण परिणाम निकालना आदि विस्तृत एवं भिन्न भिन्न अवस्थाओं में प्राय: एक समान कार्य करेंगे । यह मान लिया गया है कि व्यक्ति ऐसे गुण विशेषतया विकसित कर सकते हैं जो बहुत से अवस्थाओं से प्राप्त किया गया हो जिनमें उन कार्यो के करने से उन्हें संतोष प्राप्त हुआ हो । यदि उदार चित्त होने से संतोष प्राप्त हुआ है तो सम्भव है कि उदार चित्तता प्रत्येक अवस्था में अपनायी जाये ।

मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि सीखने का स्थानान्तर दो समान अवस्थाओं में सरलता से होता है । आंकड़ों से पता चला है कि बुद्धिमान

व्यक्तियों में प्रशिक्षण का स्थानान्तर उत्तम रीति से होता है। समस्या जितनी अधिक जीवन से सम्बन्धित होगी उसका स्थानान्तर उतना ही सम्भव है।

स्थानान्तर अपने आप नहीं होता। अनुभव जितना ही अर्थमय हो उतना ही स्थानान्तर सम्भव है। स्थानान्तर करने में इच्छा शक्ति का प्रयोग करना चाहिये। नयी दशा में प्राप्त अनुभव एवं शिक्षा का प्रयोग करना आवश्यक है।

निषेध, स्थानान्तर के विचार का एक भाग है तथा वह विशेषकर जिमनास्टिक में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखता है। आसन या शरीर साधन के कार्य में अत्यधिक कार्य झुकने के प्रवृत्ति के निषेध में है। आन्तरिक अंगों में विशेषत: निषेध एक साधारण विषय है। जब किसी मांस पेशी पर निषेध होता है तो वह कार्य करने के लिये अधिक तैयार हो जाती है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि निरोध कार्य रोकना नहीं किन्तु कार्य की अधिक तैयारी करना है। इसे शारीरिक गति के आरम्भ की तैयारी समझना चाहिये। यह केन्द्रीय क्रिया है एवं मांस पेशियों की अपेक्षा स्नायुकोष में महत्वपूर्ण परिवर्त्तन प्रदर्शित करती है। इसके द्वारा व्यक्ति की गति करने की शक्ति को सहायता मिलती है।

आत्म नियन्त्रण, निरोध एवं आदेश में जो बातें सराहनीय है, वे व्यक्ति के द्वारा उन दशाओं एवं अनुभव के सीखने से सम्बन्धित हैं, जिनके अन्तर्गत उसे वास्तविक रूप में कार्य करना चाहिये। व्यक्ति को उस प्रकार की दशा एवं अनुभव के प्रति उचित भावना विकसित करनी चाहिये जिससे, उसे, उस प्रकार के कार्य करने में सहायता प्राप्त हो सके।

आत्म निर्भरता से सीखना उत्तम रीति से होता है। भय, कायरता एवं संदेह के कारण सीखने में बाधा होती है। साहस से कार्य करने में सफलता शीघ्र प्राप्त होने की सम्भावना होती है। निश्चयात्मकता से कार्य करने में एक प्रकार का ढीलापन आ जाता है जिससे कार्य सरलता से सम्पन्न किया जा सकता है।

शारीरिक शिक्षा में मनोविज्ञान के आधार से उचित रीति से प्रशिक्षण दिया जा सकता है। उत्तम शिक्षक अपने कार्य में मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का

प्रगयो करेंगे। वे अपने विद्यार्थियों को अच्छी रीति से समझ सकते हैं। इस समझ के कारण वे उनकी विशेष सहायता कर सकते हैं। उनका उद्देश्य, आशा एवं अनुशासन बालकों के द्वारा समझा जायगा एवं उसकी पूर्ति की उत्तम चेष्टा होगी। शिक्षा सामग्री एवं पद्धतियों का बालकों की रुचि एवं योग्यता के अनुसार प्रयोग होगा। अभ्यास का समय का उचित रीति से प्रयोग किया जायगा। समय, सीखने की विशेषता के स्तर, रुचि एवं आवश्यकता के अनुसार विभाजित किया जायेगा। उत्तम शिक्षक बालकों की सफलता सराहेंगे एवं नये ध्येय निर्धारित करेंगे। बालक अपनी वास्तविकता या योग्यता समझने लगता है तथा उसी रूप में अपनी देन देता है। शारीरिक शिक्षा के तथ्य प्रयोग में आते हैं जिससे बालक अपने शिक्षा अनुभव, कौशल, भावनाओं एवं ज्ञान प्राप्त करने में उनका प्रयोग कर सकें।

व्यक्तित्व विकास में मनोविज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि इसी के द्वारा चैतन्य एवं अचेतन मन की क्रियायें नियन्त्रित की जा सकती है।

शारीरिक शिक्षा में मनोविज्ञान के द्वारा उत्तम पद्धति, कम समय, सरलता एवं लम्बी अवधि के लिये सिखाया जा सकता है।

———

९

शारीरिक शिक्षा का सामाजिक आधार

समाजविज्ञान समाज की संस्थाओं एवं समूहों से सम्बन्धित व्यक्तियों के समूह एवं मानव क्रिया का अध्ययन करता है। यह समाज की उत्पत्ति से सम्बन्ध रखता है। यह वह विज्ञान है जो समाज की भिन्न भिन्न संस्थाओं, परिवार, धर्म, सरकार, शिक्षा, मनोरंजन, उद्योग, आदि से सम्बन्धित है। यह वह विज्ञान है जो उत्तम समाज निर्माण की चेष्टा करता है जिसमें भलाई, प्रसन्नता, सहने की भावना, जातीय समानता, व्यक्तिगत एवं सामूहिक स्वतंत्रता, प्रत्येक के विकास के अवसर एवं सुविधायें सुलभ हों।

समाज विकास में शारीरिक शिक्षा महत्वपूर्ण सहयोग दे सकती है। प्रजातांत्रिक जीवन की उन्नति में इसका बड़ा हाथ है। यह दैनिक जीवन को आदेशित करती है, क्रियात्मक एवं अभ्यास के योग्य है तथा जीवन की तैयारी करती है। यह रचनात्मक एवं रुचिकर जीवन व्यतीत करने में सहायक है। इसके द्वारा सामाजिक दशाओं में समन्वय प्राप्त होता है। इस ओर शारीरिक शिक्षा की उचित सहायता प्राप्त है क्योंकि यह निर्धारित नियमों के अनुसार व्यक्तियों के पारस्परिक आदर्श जीवन एवं सम्बन्ध की शिक्षा देती है।

मनुष्य के इतिहास के आरम्भ से समाज का इतिहास भी प्रारम्भ होता है समाज विज्ञान के अध्ययन करने से पता चलता है कि मनुष्य ने समाज में आकर अपनी प्राचीन प्रकृति से भिन्न मानव प्रकृति की विशेषतायें अर्जित की। मनुष्य की स्वाभाविक या प्राचीन प्रकृति में कुछ निश्चित विशेष गुण समझे जाते थे जिसके कारण वह व्यवहार करता था। इन गुणों के नाम, क्रोध, प्रेम, घृणा, सहानुभूति, सामूहिकता, भय आदि से वह व्यवहार को समझना चाहता था। ये मानव प्रकृति के तथ्य थे। इन्हीं के कारण वह किसी प्रकार का कार्य करता

है। क्यों वह किसी प्रकार का कार्य करता है, उस पर प्रकाश, उसके उपस्थित जन्मजात तैयारी के कारण ही नहीं किन्तु सदैव वर्त्तमान संसार से जिसमें वह रहता है, किया जाता है। मनुष्य के जन्म के समय ये गुण केवल सम्भावित रूप में होते हैं किन्तु ये शक्तियाँ किस प्रकार प्रयुक्त होंगी वह वातवरण से निर्धारित किया जाता है। मानव, जीवन आरम्भ से ही नहीं व्यतीत करता। मानव जीवन एक अर्जित वस्तु है जो वह समाज से प्राप्त करता है। मनुष्य जन्म के समय कोष्ठों से बना एक प्राणी मात्र है तथा समाज में मानवता प्राप्त करता है। मनुष्य एवं वातावरण परस्पर एक दूसरे को निरन्तर प्रभावित करते रहते हैं

मनुष्य के प्रत्येक व्यवहार में प्राकृतिक प्रवृत्तियों एवं वातावरण की पारस्परिक प्रतिक्रिया प्रदर्शित है। इस प्रकार की प्रतिक्रिया में किसी न किसी प्रकार का परिवर्तन अवश्य होगा। शारीरिक क्रिया वातावरण में जब व्यक्ति प्रतिक्रिया करता है या दो व्यक्ति परस्पर प्रतिक्रिया करते हैं तो ऐसी अवस्था में केवल शारीरिक व्यायाम या परिश्रम ही नहीं होता अपितु साथ ही सामाजिक अनुभव भी प्राप्त होता है। आपस में कार्य करने से कार्य में तुलना, प्रतियोगिता, आशा, निराशा, प्रसन्नता आदि का प्रवाह होता है। ये सामाजिक अनुभव हैं।

मूल प्रवृत्ति के कारण व्यक्ति अपनी रक्षा करना चाहता है। जन्म से ही यह अपना व्यक्तित्व स्थापित रखने की चेष्टा करता है। साथ ही, व्यक्ति की व्यक्तिगत विशेषतायें भी विकसित होती हैं। उसकी अपनी रुचि एवं इच्छायें होती हैं। दूसरी ओर समाज में रहते हुये समाज उसको प्रभावित करता रहता है तथा वह सामाजिक प्राणी के रूप में विकसित होता है। समाज की संस्थाओं से वह व्यवहार, विशेषत: नैतिक व्यवहार सीखता है। समाज में अनेकों स्थापित व्यवहार, लोक रीति, प्रचलन आदि वर्त्तमान हैं। जो अपनी प्राचीनता के कारण प्रभावपूर्ण होती हैं, अतएव उन्हीं के अनुकूल कार्य करना अनिवार्य हो जाता है। प्रथा का परिवर्तन सरल नहीं। व्यक्तिगत एवं सामाजिक संघर्ष एवं कठिन परिश्रम ही से प्रथा में परिवर्तन लाना सम्भव होता है। यह स्पष्ट रूप से ज्ञात है कि मनुष्य एवं समाज निरन्तर चलते रहते हैं। एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के समाज में अन्तर होना सम्भव है। बालक अपनी पीढ़ी के समाज से ही प्रभावित होगा। व्यक्ति का समाज से समायोजन उसके

शरीर के अंगों की रचना, सहज क्रिया एवं मूल प्रवृत्तियों के कारण ही सम्भव होता है। अंगों की रचना में नाड़ी संस्थान का जटिल संगठन, सिर एवं गर्दन की बनावट जिसके द्वारा वाणी सम्भव है तथा हाथ पैरों की बनावट जो गति आदि सम्भव करती है, इस स्वयं चालक प्रतिक्रिया में शरीर के आन्तरिक अंगों का महत्वपूर्ण कार्य एवं मूल प्रवृतियों के द्वारा भिन्न भिन्न व्यवहार, उपरोक्त समायोजन में विशेष सहायक हैं। मनुष्य सीखने की योग्यता के कारण सरलता से समायोजन कर लेता है। समाज के अन्य लोगों के सम्पर्क में व्यक्ति अपनी लाभ की वस्तु सीख लेता है।

यदि प्रत्येक व्यक्ति, अपने ही व्यक्तिगत कार्य पर निर्भर रहे तथा दूसरे के सम्पर्क में, अपने को अनुभव के अनुसार परिर्वातित न करे तो समाज एवं सभ्यता की प्रगति असम्भव होगी। मानव जाति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी की सामाजिक वंशानुक्रम परम्परा के द्वारा प्रदान करता रहता है। यह प्रत्येक पीढ़ी का कर्त्तव्य हो जाता है कि वह अपने पीछे आने वाली पीढ़ी के लिये सामाजिक वंशानुक्रम के रुप में कौन सा धन छोड़ेगा इस पर उचित ध्यान दें। यह स्पष्ट है कि ऐसे अनुभव प्रचलित रखे जायें जिनके द्वारा सरलता से व्यक्ति एवं समूह समाज में समायोजन प्राप्त कर सकें। सामाजिक वंशानुक्रम में भी परिवर्तन नियंत्रण एवं आदेश किया जा सकता है। सभ्यता में वंशानुक्रम की उन वस्तुओं में परिवर्तन, नियंत्रण एवं आदेश अवश्य करना चाहिये, जिनसे हानि होती है या जिनसे हानि होने की सम्भावना है। असहनशीलता, पक्षपात, घृणा, द्वेश, आदि का शिक्षा के द्वारा नियन्त्रण, परिवर्तन एवं आदेश करना उचित है।

सामाजिक वंशानुक्रम में, लोक रीति की प्रथा, कुछ अपने वास्तविक स्तर से श्रेष्ठ स्थान प्राप्त कर लेती है। निरन्तर अनुभव एवं प्रयोग के द्वारा वह ऐसा सत्य एवं रीति बन जाती हैं जो जीवन उपयोगी होती है। अपनी उपयोगिता एवं श्रेष्ठता के कारण समाज में वह नियम का रूप धारण कर लेती है जो सर्वत्र एवं सदैव अटल तथा सत्य सिद्ध होती हैं। अंग्रेजी शब्द Mores से यही भाव प्राप्त होता है।

मनुष्य अपनी आवश्यकताओं के कारण जीवन में भिन्न भिन्न कार्य करता है। यह सर्व ज्ञात है कि आवश्यकताओं, अविष्कार को जन्म देती हैं। अपनी

आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिये व्यक्ति भिन्न भिन्न उपाय एवं पद्धति अपनाता है। इस पूर्ति के द्वारा वह प्रगति करता रहता है।

व्यक्ति की सर्व प्रमुख आवश्यकता शारीरिक जीवन एवं स्वास्थ्य है। शारीरिक आवश्यकताओं में भूख, प्यास, निष्क्रमण, विश्राम, लैंगिक आदि; मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं में स्नेह, प्रशंसा, सुरक्षा, स्वीकार करना ,किसी के होकर रहना, सम्मान का स्थान, प्रगति आदि; सामाजिक आवश्यकताओं में समन्वय सामूहिकता, भाग लेना, सहानुभूति, विचारों का सम्मान, प्रभावित करना आदि; आते हैं। इन मानव आवश्यकताओं की पूर्ति कार्य एवं व्यवसाय, खेल एवं मनोरंजन के द्वारा होती हैं। यदि इनका इन माध्यम के द्वारा सही विकास न हो तो व्यक्ति के समायोजन में कठिनता होगी, उसकी क्रियायें असामाजिक होंगी।

मनुष्य की आवश्यकताओं एवं उसकी पूर्ति के उपायों को ध्यान में रखते हुये यह स्पष्ट है कि मनुष्य के जीवन में शारीरिक शिक्षा का एक महत्वपूर्ण स्थान है। मनुष्य का प्रत्येक अनुभव सामाजिक महत्ता रखता है। वह समाज में सामूहिक रीति से रहने के लिये प्राकृतिक प्रबन्धों के कारण बाध्य है। सर्व प्रथम अपने विपरीत वातावरण के कारण उसे सामूहिक जीवन व्यतीत करना पड़ा। वंशानुक्रम के कारण उसे दूसरे समूहों का सदस्य बनना पड़ता है। मानव जाति के भय के कारण भी उसे समूह में रहना आवश्यक हो जाता है। अर्जित गुणों के कारण भी उसे सामूहिक जीवन व्यतीत करना पड़ता है। धार्मिकता, राष्ट्रीयता, प्रेम, राजनैतिकता, सामाजिकता, ज्ञान, सौन्दर्य, सत्यता संशयात्मक कार्य, गौरव आदि इच्छायें, स्थायीभाव, रूचि एवं मूल्य; सम्बन्ध के द्वारा ही प्राप्त किये जा सकते हैं। इस प्राकृतिक प्रबन्ध में मनुष्य की गति; जीवन का सार है। प्राकृतिक गतियों में भाग लेने की उसकी प्रवृति हैं। प्राकृतिक गति शारीरिक शिक्षा का मुख्य क्षेत्र है। वही आधार है जिस पर वह व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करना चाहता है।

शारीरिक शिक्षा के अन्तर्गत असंख्य प्राकृतिक अवस्थायें प्राप्त होतीं है जिन में तथा जिन के द्वारा सामाजिकता का उचित विकास किया जा सकता है। शारीरिक शिक्षा क्रियाओं के द्वारा मानन सम्बन्ध में, शाशा, अभिलाषा, प्रयत्न, भय, आनन्द, करने वालों का समूह बन जाता है। शारीरिक

शिक्षा वह अवसर प्रदान करती है जिसके द्वारा रूचिकर कार्यो में आपस में समन्वय एवं चेष्टा, सफलता तथा असफलता के द्वारा रूचि उत्पन्न कर, सामाजिक समन्वय प्राप्त किया जा सकता है। स्पोर्टस् एवं खेल के द्वारा आदर भाव एवं जीवन के प्रत्येक गुण जो विचार में सम्भव है सिखाये जा सकते हैं। इन सभी के द्वारा सामूहिक चैतन्यता या सामूहिक मन स्थापित किया जाता है। वर्त्तमान सभ्यता खेल एवं आत्माभिव्यक्ति का आदर करती है। संवेगात्मक जीवन की अभिव्यक्ति उचित रूप से न होने पर घोर हानि की सम्भावना होती है। ग्रन्थियों की स्थापना होती है जिसके कारण उचित जीवन विकास असम्भव हो जाता है।

संवेगात्मक जीवन के उचित प्रवाह न होने से व्यक्ति के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। व्यक्ति दोनों रीति से अस्वस्थ रहता है। कभी कभी संवेगात्मक अनुभव एवं इन्द्रीय क्रियाओं का आनन्द ऐसी प्रसन्नता एवं उत्तेजनाओं के तुल्य समझी जाती है जिन्हें संदेह की दृष्टि से देखा जाता है। यहां, यह ध्यान रखने की आवश्यकता है कि किसी वस्तु की भलाई या बुराई नाम से नहीं किन्तु उसके परिणाम से समझना चाहिये। खेल, कला, संगीत, नृत्य, नाटक एवं प्रकृति से प्राप्त संवेग, जीवन में नये एवं महत्व-पूर्ण अर्थ ला सकते हैं जिससे व्यक्तित्व में विचार मृदुल एवं गम्भीर तथा विस्तृत हो जा सकते हैं। गूल्ड ब्राऊन कहते हैं कि आलसीपन वह घोंसला है जहां बुराई अण्डे देती है। अर्थात् दुष्ट आत्मा आलसी हाथों के लिये, करने के लिये बुरा कार्य ढूढ़ती है। जब कुछ करने के लिये नहीं है तो मनुष्य बुरा ही करता है। अतः ऐसे नेतृत्व एवं साधन का उपलब्ध करना आवश्यक है कि व्यक्ति कार्य रहित न हो सके। किसी न किसी कार्य में व्यस्त रहना अनिवार्य है। इस ओर नगर में उचित खेल एवं मनोरंजन के स्थान एवं साधन, मशीनों के द्वारा अधिक कार्य एवं कार्य में विशेषज्ञ के रूप में शारीरिक श्रम किन्तु अधिक मानसिक कार्य, कार्य के स्थिति में संवेगात्मक प्रवाह का रूक जाना, अवकाश के समय के व्यतीत करने की उचित शिक्षा, बालकों के बढ़ाव एवं विकास की आवश्यकताओं की समझ बूझ, महत्वपूर्ण आदेश, उचित गुणों का प्रचार एवं प्रेरणा आदि समस्याओं का यथार्थ उत्तर देना है। समाज की महत्वपूर्ण संस्थायें, परिवार, शासन, शिक्षा, मनोरंजन, व्यवसाय, धर्म, नैतिकता, जो पर्याप्त सुरक्षा, भद्रता एवं संतोष सहित कार्य करते हैं उनका कर्तव्य है

कि समाज के स्तर को सदैव उँचा रखें ।

व्यक्ति के विकास के लिये उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को ध्यान में रखना है। शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक को भिन्न भिन्न अंगों में विभाजित कर देने के कारण उसकी उन्नति में अवरोध हुआ। यह स्पष्ट रूप से समझना है कि इन तीनों का प्रवाह एक स्रोत से है तथा ये आपस में मिलकर व्यक्ति के तीन विशेष गुणों को प्रदर्शित करते हैं। नैतिक समस्याओं का हल शारीरिक तथ्य के द्वारा ही हो सकता है। नैतिक निर्णय, काल्पनिक व्यक्ति के काल्पनिक एकान्त में नहीं किया जाता अपितु उसके शारीरिक स्थिति के राजनैतिक, औद्योगिक, सामाजिक, शैक्षणिक, धार्मिक, आर्थिक एवं शारीरिक सम्बन्ध को ध्यान में रख कर ही किया जाता है। अतः व्यक्ति के सामाजिक सम्बन्ध में नैतिकता का स्तर शारीरिक शिक्षा के द्वारा उँचा उठाया जा सकता है। भविष्य का भार बालकों पर निर्भर है। शारीरिक शिक्षा कार्यों में बालक स्वतंत्र रूप से भाग लेते हैं जहाँ उनके विकास के असंख्य अवसर हैं। शारीरिक शिक्षा का यह अनिवार्य उत्तरदायित्व हो जाता है कि भविष्य के समाज के इन सुन्दर सहारों को सही रूप से शिक्षित करें।

यह सर्व स्वीकृत है कि स्कूल का ही सर्व प्रथम उत्तरदायित्व है, कि समाज के लिये बालकों को उचित शिक्षा दी जाये। शिक्षा दर्शन प्रजातांत्रिक समाज के शिक्षा पर बल देता है। इसके अनुसार, शिक्षा, अनुभव के द्वारा विकास एवं समायोजन की एक पद्धति है। इस पद्धति में शिष्यों के चैतन्य विचारपूर्ण निर्वाचन एवं निर्णय हेतु स्वयं आदेशित कार्य एवं अभ्यास पर अधिक बल दिया जाता है। शारीरिक शिक्षा में यह ध्येय पूर्ण रूप से कार्यान्वित होता है। निर्वाचन की स्वतंत्रता एवं स्वयं आदेश, सम्पूर्ण अनुभव में पूर्ण रूप से भाग लेना, शिष्य, नायकपन एवं आरम्भ करने की शक्ति का प्रयोग, प्रवृतिक रूचि के अनुसार क्रियाओं में भाग लेना आदि सरलता से शारीरिक शिक्षा में आयोजित किया जाता है। इस स्थिति में शिक्षक का स्थान महत्वपूर्ण है। यह आवश्यक है कि शिक्षक एक ऐसा आदर्श हो जिसका बालक अनुसरण करे। बालक की शिक्षा में उसे प्रेम एवं स्नेह का उचित सहारा चाहिये। बालक अपने गुरु जनों एवं बड़ों पर निर्भर करता एवं आश्रित रहता है। यदि इसमें उसे किसी प्रकार से धोखा हो तो इससे लज्जापूर्ण विषय संसार में कुछ हो ही

नहीं सकता। बालक अपनी कठिनाइयों, उत्साहपूर्ण भयानक कार्यों, आत्म प्रदर्शन, कार्य आरम्भ करने आदि में इन आश्रय का सहारा लेना चाहता है। सफलता से उसकी प्रगति होती है,असफलता में उसे धैर्य एवं सहानुभूति चाहिये।

सामाजिक भावनाओं की शिक्षा प्राप्त करने के लिये बालक को उचित सूचना प्राप्त होनी चाहिये जिससे वह यह समझ सके कि वह क्या कर रहा है एवं उसे क्या करना चाहिये। बालक को इस बात का ज्ञान आरम्भ ही से कराना आवश्यक है कि किसी विषय में निपुणता सरलता से प्राप्त नहीं होती। उस के लिये चेष्टा एवं लगे रहने की भावना अति आवश्यक है।

नैतिक विकास, स्वास्थ्य एवं बढ़ाव के लिये मनोरंजन अति आवश्यक है। विभिन्न क्रियाओं के द्वारा मनोरंजन प्राप्त किया जा सकता है। शारीरिक मनोरंजन प्रायः प्रत्येक मनोरंजन प्रदान करने वाली क्रिया का आधार है। यह आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति मनोरंजन की शिक्षा प्राप्त करे जिससे वह अपने अवकाश के समय का सदोपयोग कर सके। शिक्षा इस प्रकार होनी आवश्यक हैं कि जीवन, खेल, मनोरंजन, श्रम, शिक्षा, व्यवसाय आदि खंडों में विभाजित न होकर जीवित रहने की कला में दक्षता प्राप्त करे, एवं उसे उच्च श्रेणी की निपुणताके शिखर पर पहुंचा दे। जीवन कला में दक्षता प्राप्त व्यक्ति, अपने कार्य एवं खेल, श्रम एवं अवकाश, शरीर एवं मन, शिक्षा एवं मनोरंजन में सूक्ष्म विभाजन नहीं करता। एक दूसरे में अन्तर करना उसके लिये कठिन हो जाता है। इन सबके द्वारा वह निपुणता के शिखर की ओर अग्रसर रहता है।

मनोरंजन का शारीरिक शिक्षा से घनिष्ट सम्बन्ध है। शारीरिक शिक्षा में मनोरंजन के कार्य, विभिन्न उत्सव, नाट्य कला, खेल, प्रतियोगिता, नृत्य आदि सामाजिकता प्राप्त करने में अत्यन्त सहायक हैं। इन स्थितियों में आज्ञा पालन, दूसरों के अधिकार को मान्यता देना, प्रेम, साधारण झगड़ों एवं बैर को दूर करना, न्याय, उचित निर्णय, इमान्दारी, सही खेल आदि अनेकों सामाजिक गुण है जो विकसित होते हैं। क्रियाओं के सामाजिक गुण का प्रमाण, मनुष्य के सामाजिक प्रतिक्रियाओं के उत्तर, विचार एवं क्रिया के द्वारा देने में प्रदर्शित होता है।

इस अर्थ में कार्य महत्वपूर्ण हैं क्योंकि अनेकों विषयों का ज्ञान केवल कार्य से ही होता है। क्रिया के द्वारा सीखना एक विशेष नियम है। शारीरिक शिक्षा

के अनेकों कार्य केवल जीववैज्ञानिक आवश्यकता हैं जिनमें मनुष्य की प्रवृति उसे गति प्रद होने के लिये वाध्य करती है। अनुभव इस बात का प्रमाण है कि क्रियाओं के द्वारा सामाजिकता प्रदर्शित होती है। मनुष्य की जीव वैज्ञानिक आवश्यकता एवं समाजिक वंशानुक्रम का उत्तराधिकार विश्वव्यापी है। उसे पूर्ण करने एवं प्राप्त करने के उपाय भिन्न हो सकते हैं। इसी आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय शुभ कामना की सम्भावना है। इसी के द्वारा दूसरों के गुणों, आवश्यकता, रुचि, विचार आदि समझने का अवसर एवं चुनौती प्राप्त होती है।

शारीरिक शिक्षा समाज के भिन्न भिन्न संस्थाओं के उद्देश्य को प्राप्त करने में सहयोग देती है।

व्यक्ति के स्वास्थ्य में उन्नति की जा सकती है जिससे शक्तिशाली क्रिया पूर्ण जीवन, अधिक अवस्था तक व्यतीत किया जा सके एवं रोग का अवरोध, सहने की शक्ति तथा उत्साह बढ़ाया जा सकता है।

परिवार समाज की एक मुख्य संस्था है। परिवार की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिये शारीरिक शिक्षा के उद्देश्य निर्धारित होना चाहिये। परिवार की मुख्य आवश्यकता बालकों का स्वास्थ्य, मनोरंजन एवं उचित पारिवारिक सदस्यता है। उत्तम जन्म एवं उत्तम विकास की सुविधायें बालक का जन्म सिद्ध अधिकार है।

शारीरिक शिक्षा का कर्त्तव्य है कि वे माता पिता को शिक्षित करें जिससे वे अपने बालकों के व्यवहारों को उचित रूप दें तथा समझें। बाल अपराध को समझना एवं निवारण के उपाय में उनका सहयोग आवश्यक है। व्यवहार में व्यवधान एवं असामाजिक सम्बन्ध का आरम्भ परिवार से ही आरम्भ हो सकता है।

धार्मिकता एवं नैतिकता के अन्तर्गत, शारीरिक शिक्षा, युवकों में नैतिकता, आदर्शों को सर्वोच्च स्थान देने में, नैतिक तथा सदाचार के सिद्धान्तके प्रति श्रद्धा उत्पन्न करने में संस्थाओं के प्रति भक्ति एवं उत्तम मनोरंजन के द्वारा विकसित करने में सहायक है।

राष्ट्रीय आदर्शों के प्राप्त करने में शारीरिक शिक्षा से सहयोग प्राप्त होता है।

शारीरिक शिक्षा में वह अवसर एवं सुविधा प्राप्त होनी चाहिये जिससे व्यक्ति में नियन्त्रित प्रवृत्तियों का विकास उचित रूप से हो सके ।

आधुनिक समाज की स्थिरता एवं उन्नति का भार बहुत कुछ शारीरिक शिक्षा पर ही निर्भर है । आधुनिक युग एक तनाव एवं अनिश्चितता का युग हो रहा है । भिन्न भिन्न प्रभावों के कारण अनैतिकता बढ़ती जा रही है । इसके कारण पारिवारिक सम्बन्ध का पतन हो रहा है । प्रतिस्पर्धा एवं प्रतियोगिता की भावना विस्तृत है । शारीरिक एवं स्थूल पदार्थ की ओर रुचि विशेष है एवं उनके तुल्य धार्मिक, आत्मिक एवं मानसिक विषय तुच्छ समझे जाते हैं । इन समस्याओं के कारण मानसिक स्वास्थ्य पर अत्यन्त बुरा प्रभाव पड़ा है । मानसिक विकार, चिन्ता, भय, घृणा, मानसिक थकान, असंतुलन बढ़ता जा रहा है । निकट भविष्य में अणु युग के कारण स्वयंचालक प्रणालियों का अविष्कार एवं अधिक अवकाश की घोर समस्या भी समाज के सन्मुख प्रस्तुत होगी । इन समस्याओं के हल में शारीरिक शिक्षा का उत्तम सहयोग प्राप्त हो सकता है ।

समाज शास्त्र मनुष्यों एवं उसकी संस्थाओं के अध्ययन से सम्बन्ध रखता है । एक सुन्दर समाज के निर्माण की उसकी अभिलाषा है । सामाजिक शास्त्र शिक्षा पर, चरित्र, निपुणता, प्रसन्नता एवं स्वास्थ्य के विकास के लिये निर्भर है । शिक्षा का भी ध्येय सामाजिक उन्नति एवं उत्तम नागरिकता का है । अतः शिक्षा भी सामाजिक समस्याओं को हल करने की चेष्टा करती है । शारीरिक शिक्षा सामान्य शिक्षा की पूरक है एवं ध्येय तथा उद्देश्य निर्धारित करने में सहायक है एवं उन्हें पूर्ण करने के लिए शारीरिक माध्यम का प्रयोग करती है । शारीरिक शिक्षा प्रत्येक अर्थ में एक सामाजिक अनुभव है । अपने अर्जित गुण के द्वारा वह समाज को धनी एवं सुखी कर सकती है । शारीरिक शिक्षा सुखी एवं शान्तिमय संसार के निर्माण में अपने ईमानदारी के खेल, शारीरिक स्वास्थ्य क्षमता प्राप्त व्यक्ति के निर्माण, अवकाश के समय के सद्उपयोग की शिक्षा के द्वारा, सामाजिक संतुलन एवं समानता, प्रजातांत्रिक भावनाओं के प्रसार, मनुष्य के सम्मना एवं आदर पर विश्वास, साधारण विषय एवं परिस्थितियों के प्रयोग के कारण, सर्व प्रकार के समन्वय समायोजन एवं सामंजस्य के द्वारा अति उत्तम सहयोग समाज शास्त्र को दे सकती है ।

१०

शारीरिक शिक्षा का प्रजातांत्रिक आधार

प्रजातांत्रिक दर्शन की परिभाषा, जनता का राज्य, जनता के द्वारा, जनता के लिये, सर्व मान्य है। जीवन के इस ध्येय पर पहुंचने के लिये मनुष्य को कितनी ही सीढ़ियाँ पार करनी पड़ी हैं। प्राचीन काल में पिता परिवार का अध्यक्ष था तथा अनेकों परिवार का अध्यक्ष सरपंच या गांव का मुखिया हुआ करता था। जागीरदारी की प्रथा में जागीरदार प्रमुख था। उसके पश्चात राजाओं की प्रथा चली। आधुनिक युग में प्रजातांत्रिक राज्य रीपब्लिकन एवं मोनारकी प्रणाली, कम्युनिस्टिक प्रणाली, तथा डिक्टेटरशिप मुख्य शासन प्रणालियाँ हैं। संसार के अधिकांश स्थानों में प्रजातांत्रिक प्रणाली है। प्रजातांत्रिक प्रणाली का मुख्य आधार व्यक्ति की समानता एवं स्वतंत्रता है। इस विचार की नीव आर्थिक नहीं अपितु नैतिक है। नैतिक पद्धति होने के कारण यह व्यक्ति की समानता, स्वतंत्रा सम्मान आदि को जन्म सिद्ध अधिकारों की मान्यता देता है। मनुष्य सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है तथा व्यक्ति के सर्वश्रेष्ठ अधिकार भी है जो उसे प्राप्त होना चाहिये।

जीवन दर्शन के अध्ययन से इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया है कि प्रजातांत्रिक जीवन सर्व श्रेष्ठ है। जीवन के प्रत्येक अंग में इसी प्रणाली के द्वारा उचित विकास सम्भव है। शारीरिक शिक्षा जो मनुष्य के सर्वांगीण बिकास से सम्बन्धित है उसे भी अपनी पद्धतियों के द्वारा इसी विचार को विकसित एवं प्रोत्साहित करना चाहिये। प्रजातांत्रिक जीवन की आत्मा, 'टीम' के कार्य के आदर्श के द्वारा, 'टीम' के हित के लिये व्यक्गित रूचि एवं स्वतंत्रता को परस्वार्थ की भावना में दूसरों के आधीन कर देना, एवं ज्ञान पूर्वक समन्वय एवं समायोजन के द्वारा जीवित रखने की चेष्टा करना है।

प्रजातांत्रिक जीवन में प्रत्येक के लिये समान अवसर का आयोजन अनिवार्य है। व्यक्तिगत विभिन्नता होते हुये भी समान अवसर के प्राप्त करने से व्यक्ति को व्यक्तिगत प्रगति का अवसर प्राप्त होता है तथा वह उसे अपनी इच्छा की सीमा तक पहुंचा सकता है। शारीरिक शिक्षा के प्रत्येक प्रोग्राम में व्यक्तिगत स्वतंत्रता है तथा समान अवसर प्राप्त है कि वह अपना विकास अपनी इच्छा के अनुसार कर सके। व्यक्तिगत विभिन्नता के कारण समान अवसर का अर्थ प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकता, रुचि एवं योग्यता के अनुसार ही उपलब्ध कराया जायेगा। अवसर के प्रदान करने में इस विषय पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि प्रत्येक को उचित अवसर प्राप्त हो रहा है जिससे उसका पूर्ण विकास सम्भव हो।

संसार में, जीवन एवं शासन के दो मुख्य विचार प्रचलित हैं। एक विचार के अनुसार व्यक्ति मुख्य है तथा स्टेट का निर्माण एवं संचालन अपने विकास के लिये स्थापित करता है। दूसरे विचार के अनुसार स्टेट मुख्य है तथा व्यक्ति उसकी सेवा करने के लिये है। प्रजातांत्रिक भावनाओं के अनुसार व्यक्ति का व्यक्तिगत मूल्य है तथा प्रत्येक वस्तु उसके विकास के हेतु आदेशित होनी चाहिये। शारीरिक शिक्षा में प्रत्येक व्यक्ति को अपने गुणों एवं शक्ति को विकसित करने का पूर्ण अवसर प्राप्त है। कुछ औपचारिक कार्य शारीरिक शिक्षा में अवश्य होते हैं। उन औपचारिक कार्यों का ध्येय भी व्यक्तिगत विकास एवं परस्पर समन्वय एवं समायोजन स्थापित करने का ही होता है। ये औपचारिक कार्य अपने में अन्त नहीं अपितु किसी ध्येय तक पहुंचने के माध्यम हैं।

शारीरिक शिक्षा व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास, व्यक्तिगत प्रदर्शन एवं प्रवाह के लिये उचित अवसर प्रदान करता है। व्यक्ति की सम्भावित शक्ति एवं गुणों के जागृत करने की प्रत्येक चेष्टा शारीरिक शिक्षा में की जाती है।

प्रत्येक अधिकार के साथ उत्तरदायित्व भी होता है। अवसर प्राप्ति के साथ उसके उचित प्रयोग का उत्तरदायित्व अवसर प्राप्त व्यक्तियों का है। समाज जो कुछ भी प्रदान करता है वह प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि उसका उचित प्रयोग करे तथा अपनी सम्पूर्ण चेष्टायें अपने विकास के प्रति लगाये।

यह व्यक्तिगत उत्तरदायित्व है कि वह जो समाज से प्राप्त करता है उसी अंश में समाज को लौटा दे। राष्ट्रीय जीवन के निर्माग में व्यक्तिगत सहयोग, परिश्रम, परहित की भावना, व्यक्तिगत देन, आदि की आवश्यकता है। यह व्यक्तिगत उत्तरदायित्व है कि श्रेष्ठ आदेश निर्धारित किये जायें तथा उस आदेश के प्राप्त करने की भी व्यक्तिगत चेष्टा अनिवार्य है।

शारीरिक शिक्षा में अनेक अवसर प्राप्त हो सकते हैं जब विद्यार्थी थोड़ी मात्रा में अपने कार्य का संगठन एवं संचालन करें। नायकोचित गुणों को प्रशिक्षण देने के लिये भी अवसर मिलता है। ऐसी भी अवस्थायें उपलब्ध की जा सकती हैं जहाँ बालक अपना ध्येय निर्धारित करें एवं उसे प्राप्त करने की चेष्टा करें।

वर्तमान समय में जो बालक उत्पन्न होते हैं वे पहले के बालकों का अपेक्षा निर्बल हैं। यह आवश्यक है कि वंशानुक्रमिक शक्ति बढ़ायी जाये। जीव-वैज्ञानिक परम्परा के कारण ही यह विशेष निर्णय किया जाता है कि व्यक्ति जीवन के अनुभव में प्रसन्नता एवं सन्तोष कैसे प्राप्त करेगा। उत्तम जन्म के साथ उसकी सुरक्षा की भी व्यवस्था होना आवश्यक है। यह अवश्य है कि नवजात शिशुओं की मृत्यु संख्या पहले की तुलना में अब कम है।

उत्तम व्यक्तित्व के विकास के लिये बालक का समाज के जीवन में पूर्ण-रूप एवं सफलता से भाग लेना आवश्यक है। इसके प्रति योग्यता का विकास उन अवसरों पर निर्भर है जो समाज उसको देता है। स्कूल को छोड़ कर और दूसरी संस्थायें हैं जिनका सहयोग इस ओर आवश्यक है।

प्रजातंत्र का यह एक मुख्य ध्येय है कि व्यक्तियों का ऐसा विकास हो कि वे अपने को स्वयं आदेश करें, अपने कार्यों में ज्ञान पूर्वक निर्वाचन एवं निर्णय से नियन्त्रित करें तथा समाज के परिवर्तन में अपना समायोजन कर सकें।

शारीरिक शिक्षा में इस प्रकार के प्रशिक्षण के बहुमूल्य अवसर प्राप्त हैं। आत्म प्रदर्शन एवं दूसरों के साथ समन्वय एवं दशा के अनुसार समायोजन एवं स्वयं का आदेश तथा उचित निर्णय जिससे समूह या टीम का हित हो, पग पग पर करना पड़ता है।

प्रजातंत्र में प्रत्येक के लिये किसी व्यवसाय का होना आवश्यक है जिस से जीवन का निर्वाह किया जा सके। आरम्भ ही में व्यवसायिक आदेश बालकों को प्राप्त होना चाहिये। शारीरिक शिक्षा व्यवसाय उपार्जन नहीं कर सकता किन्तु व्यवसाय के योग्य व्यक्ति का विकास कर सकता है एवं व्यवसाय के गुणों एवं रीति को अपनी क्रियाओं के द्वारा सिखा सकता है। जब तक आर्थिक सुरक्षा न हो व्यक्ति प्रसन्न नहीं हो सकता, न ही उसका उचित विकास होगा। व्यक्ति की आधारभूत आवश्यकताओं का उपार्जन प्रजातंत्र में मान्य है। स्वास्थ्य, प्रसन्नता से पूर्ण परिवार एवं निवास स्थान, उचित संतुलित भोजन, मनोरंजन के लिये कौशल एवं उसके लिये सुविधा, प्रत्येक के लिये किसी प्रकार के मनभावन कार्य तथा रचनात्मक क्रियाओं में भाग लेने के लिये अवसर, बेकारी, बीमारी एवं बुढ़ापे में सुरक्षा आदि व्यक्ति की प्राथमिक आवश्यकताओं में मान्य हैं। ये व्यक्ति के जन्म सिद्ध अधिकार हैं जो प्रजातंत्र से प्राप्त होने चाहिये। व्यक्तिगत स्वतंत्रता प्रजातंत्र का प्राण है। आत्म प्रदर्शन की स्वतंत्रता, विचार प्रकट करने, अपना जीवन साथी चुनने, व्यवसाय चुनने, निवास, राजनैतिक विचार एवं धर्म पालन की स्वतंत्रता, प्रजातंत्र में मान्य है। प्रजातंत्र में प्रत्येक व्यक्ति को अधिकाधिक स्वतंत्रता प्राप्त होनी चाहिये। इस स्वतंत्रता से किसी दूसरे की स्वतंत्रता में बाधा न हो यह एक आवश्यक दशा है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता से सार्वजनिक असुविधा या हानि न हो।

'स्पोर्टसमैनशिप' सिद्धान्त एवं गुण प्रजातंत्र के प्रत्येक सदस्य के जीवन में लिप्त होना चाहिये। इसी भावना से प्रत्येक को कार्य करना चाहिये। व्यक्तियों एवं संस्थाओं के प्रत्येक सम्बन्ध में यही भावना होनी आवश्यक है। 'स्पोर्टसमैनशिप' शारीरिक शिक्षा का मुख्य ध्येय है। नियम का पालन, दूसरों के अधिकार की मान्यता, ईमानदारी से खेलना, यथाशक्ति चेष्टा, अग्रसर होना आदि शारीरिक शिक्षा में पग पग पर सीखने का अवसर प्राप्त होना चाहिये। शारीरिक शिक्षा विषय अपने विचारों एवं कार्यों में पूर्ण प्रजातांत्रिक भावों से लिप्त है अतः प्रजातांत्रिक जीवन के भिन्न भिन्न सिद्धान्तों एवं अभ्यासों का इसके द्वारा प्रशिक्षण होना एक स्वाभाविक एवं सरल विषय होगा। शारीरिक शिक्षा, खेल, स्पोर्टस मनोरंजन एवं बाहर की क्रियाओं की पृष्ठभूमि प्रजातंत्र के जन समूह के लिये उपलब्ध करने के योग्य है। इसके द्वारा समान अवसर एवं सुविधा प्राप्त करने का प्रशिक्षण होगा। यह आदर्श सामाजिक एवं नैतिक व्यवहार में प्रयोग किया जा सकेगा।

ऐसे खेल, जो विश्वव्यापी या राष्ट्रीय खेल हों, निर्माण करना चाहिये, जिसमें आदर्शों का अभ्यास एवं प्राप्ति सम्भव हो सके। खेल में ऊंचे आदर्श हों जिनमें सम्मान, साहस, शक्ति, नम्रता, उदारता आदि अर्जित किये जा सकें।

शारीरिक शिक्षा प्रत्येक आयु की अवस्था में व्यक्ति को प्रसन्नचित्त, स्वस्थ एवं जीवन सफलतापूर्वक व्यतीत करने की योग्य व्यवस्था करे। इसके प्रति यह जानना आवश्यक होगा कि व्यक्ति समय कैसे व्यतीत करते हैं, किन क्रियाओं में रुचि रखते हैं एवं किस विषय से प्रसन्नता सम्भव है।

शारीरिक शिक्षा के द्वारा विचारों एवं रुचियों को विस्तृत करने के उपाय करना आवश्यक है जिससे इनके क्षितिज की सीमा अधिक बढ़े। प्रत्येक व्यक्ति को अवसर एवं सुविधायें प्राप्त हो जिससे वह अपनी रुचि, योग्यता, प्रवृतिगत भावनाओं, अर्जित योग्यता एवं रुचि के अनुसार क्रियाओं में भाग ले सके। इन क्रियाओं को मनोरंजन का साधन एवं अवकाश के सदोपयोग की सामग्री बनाने में समर्थ हों। प्रजातांत्रिक जीवन के लिये उत्तम शिक्षा अति आवश्यक है शारीरिक शिक्षा का सहयोग उसी मात्रा में उपलब्ध है जिस मात्रा में वह सामान्य शिक्षा का एक अंश एवं पूरक है। शिक्षा के निर्धारित ध्येय की वह प्राप्ति में पूर्ण सहयोगी है। शिक्षा का विश्वव्यापी होना आवश्यक है। विश्वव्यापी, शिक्षा के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक मूल्य हैं।

प्रजातंत्र के लिये श्रद्धा एवं प्रजातांत्रिक संस्थाओं के उचित ज्ञान, उन चारित्रिक गुणों का विकास जिनके द्वारा प्रजातंत्र को लाभ हो, समन्वय के लिये इच्छा एवं योग्यता, सत्य की खोज में सर्वश्रेष्ठ उपाय में लीन होना, आधारभूत ज्ञान एवं अर्जित कौशल का समुचित प्रयोग, व्यक्ति की योग्यता एवं अभिलाषा के अनुसार सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन की सम्भावना, विषय का विशेष ज्ञान एवं व्यवसायिकता के लिये उचित प्रशिक्षण के साधन, जीवन को धनी, परिवर्तित दशाओं के अनुसार शिक्षा में परिवर्तन की सम्भावना आदि कुछ उद्देश्य हैं जो प्रजातांत्रिक जीवन को उपयोगी एवं सम्भव करने के लिये शिक्षा अपना सकती है एवं शारीरिक शिक्षा से इस ओर सहायता की आशा कर सकती है।

११

शारीरिक शिक्षा का आर्थिक आधार

मनुष्य के जीवन के प्रारम्भिक इतिहास से पता चलता है कि आरम्भ में जीवन अत्यन्त ही साधारण था। उसकी आवश्यकता सीमित थी, भोजन केवल मुख्य समस्या थी, किसी न किसी प्रकार वह भोजन उपार्जन कर लेता था।

वह साधारण जीवन क्रमशः जटिल होता गया अनेकों सीढ़ियों को पार करते हुये वह वर्त्तमान सभ्यता तक पहुंचा।

प्रारम्भिक जीवन साधारण था किन्तु कठिन था। जीवन प्राकृतिक रीति से व्यतीत होता था।

सभ्यता के आरम्भ से मनुष्य ने प्राकृति एवं वातावरण पर नियन्त्रण करना आरम्भ किया तथा उन्हें अपने स्वार्थ एवं विकास के हेतु प्रयोग किया।

आधुनिक जीवन ने अप्राकृतिक रूप धारण कर लिया। मनुष्य ने प्रकृति के खुले वातावरण को छोड़ कर समूह में शहरों के बन्द एवं घिरे हुये स्थानों में रहना आरम्भ कर दिया। सभ्यता की वर्त्तमान सुविधाओं के कारण जीवन जटिल एवं समस्या पूर्ण हो गया। जीवन में भिन्न भिन्न प्रकार के भय उत्पन्न हो गये। जीवन की दशा भिन्न हो गयी। प्रारम्भिक परिश्रम, विश्राम में परिवर्तित हो गया। गतिप्रद जीवन बैठ कर व्यतीत होने लगा। भोजन केवल जीवन के लिये नहीं अपितु स्वाद के लिये लिया जाने लगा। जीवन सामग्री अर्जित करने के लिए उद्योग एवं व्यवसाय की स्थापना हुयी। श्रम का विभाजन हुआ। मानसिक कार्यों की वृद्धि हुयी। शरीर निर्बल होता चला गया। जीवन जटिल होता गया।

आधुनिक जीवन में शासन प्रजा की उन्नति आदि का ध्यान रखता है। स्वास्थ्य, सुरक्षा, शिक्षा मनोरंजन, व्यवसाय के लिये सुविधा एवं अवसर, विभिन्न प्रकार के सामाजिक सुधार, आदि के द्वारा वह नागरिकों के लाभ के विषय में सोचता है। शासन के बढ़ने एवं अधिकार की वृद्धि के साथ नागरिकों की पूर्ण आवश्यकतायें पूर्णतया प्राप्त नहीं होती न होनी सम्भव ही है। यह आवश्यक है कि व्यक्ति की साधारण आवश्यकनाओं की पूर्ति करने के लिये शासन प्रयास करता रहे।

सभ्यता के कारण जीवन अप्राकृतिक हो गया है। सभ्यता के अन्तर्गत जीवन को प्राकृतिक रूप देने के लिये शारीरिक शिक्षा कुछ अप्राकृतिक एवं प्राकृतिक सुविधा, साधन एवं पद्धति प्रयोग करती है। वर्त्तमान जीवन में शारीरिक शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है।

साधारण प्राकृतिक जीवन की दशा के जटिल औद्योगिक समाज में परिवर्तित हो जाने के कारण शरीर के बढ़ाव एवं विकास में अन्तर हो गया है। विभिन्न प्रकार के प्रभाव विकास में बाधा डालते हैं। शारीरिक शिक्षा अपनी क्रियाओं के द्वारा इन कुपरिणामों को दूर करने की चेष्टा करती है।

सभ्यता की अनेकों आर्थिक दशाओं से सम्बन्धित समस्याओं को हल करने के लिये शारीरिक शिक्षा प्रयत्नशील है।

शहर में अनेकों प्रकार की सुविधायें प्राप्त हैं। व्यवसाय उद्योग एवं व्यापार के साधन भलि भाँति एवं पूर्ण रूप से शहर में ही प्राप्त हैं। व्यापार एवं उद्योग के कारण लोग ग्रामों को छोड़ कर नये औद्योगिक शहर या पुराने शहर में व्यवसाय के लिये आकर बसते हैं। इस बसने के कारण शहर की जन संख्या अत्यधिक बढ़ जाती है। शहर में एक प्रकार की भीड़ लग जाती है। इस भीड़ लगने के कारण अनेको समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं, जैसे अस्वस्थकर अवस्था एवं गन्दी बस्ती में निवास स्थान। चूंकि शहर की प्रत्येक इंच जमीन औद्योग, व्यापार या व्यवसाय के लिये अर्जित कर ली जाती हैं अत: बहुत ही कम स्थान बचते हैं जहां पार्क आदि बना दिये जाये जिससे लोगों को स्वच्छ वायु के खुले वातावरण में आने का अवसर मिले। व्यक्ति सदैव बन्द कोठरी या बन्द घिरे हुये स्थानों में रहते हैं। इसके कारण स्वास्थ्य पर अत्यन्त ही बुरा प्रभाव पड़ता है।

औद्योगिक एवं व्यापारिक समय एवं स्थिति के कारण अनेको ऐसे हैं जिन्हें उपयुक्त अवसर नहीं मिलता जिससे किसी प्रकार के शारीरिक मनबहलाव या मनोरंजन के कार्य में भाग ले सकें। अनेको ऐसे हैं जो मनोरंजन में भाग लेना चाहते हैं लेकिन कोई सुविधा या साधन उन्हें प्राप्त नहीं होता जिससे वे अपनी अभिलाषा पूर्ण करें।

बालकों के लिये भी उचित प्रबन्ध नहीं है कि वे मनोरंजन एवं खेल में भाग ले सकें।। प्रायः देखा गया है कि बालक गन्दे कोनों, शहर के व्यस्त मार्ग पर, या जहाँ थोड़ा सा खुला स्थान मिल जाता है वहां खेलने का प्रयत्न करते हैं।

महिलाओं के लिये विशेष खेलने या मनोरंजन का कोई प्रबन्ध नहीं है। कोई ऐसी व्यवस्था नहीं है जिससे गृहस्थ जीवन के झगड़ों से निपट कर वे मनोरंजन के लिये समय वा सुविधा प्राप्त कर सकें।

मनोरंजन आदि के उचित साधन न होने के कारण व्यक्ति, पारिवारिक जीवन के मनबहलाव से अपने को तृप्त करना चाहता है। अतः उचित शारीरिक मनोरंजन साधनों की उपस्थित न होने से जनसंख्या निरोध में बाधा उपस्थित होती है।

मदिरा, जुआ आदि बुरी आदत के पड़ने का एक कारण उचित मनोरंजन के साधन का नहीं होना है।

अवकाश के समय जब कुछ रचनात्मक क्रिया या जीवन प्रवाह के लिये उचित एवं उपयुक्त सामग्री नहीं मिलती तो मनुष्य बुरे की ओर ही जाता है। जो अपनी शक्ति, खेल के मैदान में लगा सकते, वे ही ऐसा न कर सकने पर दूसरों को सताने में लगाते हैं। जो खेल एवं मनोरंजन के स्थानों एवं सुविधाओं के द्वारा उत्तेजना, साहस एवं भय का सामना कर सकते थे, वे अनैतिक कार्यों में अपनी शक्ति की परीक्षा करते हैं। इन अवस्थाओं में सिनेमा का बुरा असर युवकों पर अत्याधिक पड़ा है।

मनुष्य अधिकतर बैठ कर अपना व्यवसाय करने लगा है। औद्योगिक या व्यापारिक व्यवसाय में भी अधिकतर लोग बैठ कर ही कार्य करते हैं। इस बैठ कर कार्य करने का अत्यन्त ही बुरा असर स्वास्थ्य पर पड़ता है।

सभ्यता की ऐसी अनेकों आर्थिक अवस्थायें हैं जहां शारीरिक शिक्षा बहुमूल्य सहयोग दे सकती है एवं अपने प्रोग्राम के कार्यों तथा मनोरंजन के साधन उपलब्ध करा कर परिणामता जो समस्या उपस्थित हैं उनका हल कर सकती है। व्यवसायिकता एवं अप्राकृतिक अवस्थाओं के कारण शरीर में अनेकों दोष उत्पन्न हो जाते हैं उनका सुधार एवं चिकित्सा व्यायाम शारीरिक शिक्षा के द्वारा सम्भव है। बालकों के छोटे छोटे शारीरिक एवं स्वास्थ्य के दोष यदि समय पर ठीक नहीं किये जाते हैं तो आगे चल कर बहुत कष्ट-दायक होते हैं तथा उन्हें भविष्य के जीवन के अनेकों लाभ एवं आनन्द से वंचित रख सकते हैं।

देश की उन्नति के लिये उद्योग आवश्यक है। संसार के प्रत्येक देश उद्योग में बढ़ते जा रहे हैं। इसके प्रति श्रमिकों की रक्षा के लिये अनेकों नियम बनाये गये हैं। समय, जीवन रक्षा, आर्थिक सहायता, अधिकार आदि की उचित व्यवस्था है किन्तु विभिन्न औद्यौगिक अवस्थाओं के कारण स्वास्थ्य एवं शारीरिक विकास की उचित रक्षा नहीं हो रही है।

औद्योगिक केन्द्रों के समीप घनी बस्ती का होना जो प्रायः स्वस्थ्यकर वातावरण में नहीं होती है जीवन के भय को बढ़ाती हैं। साधारणता कार्य समय का ऐसा बिभाजन होता है कि बहुतों को मनोरंजन एवं स्वास्थ्य की क्रियाओं में भाग लेने का अवसर ही प्राप्त नहीं होता।

कार्यों में विशेष ज्ञान प्राप्त करने के कारण मस्तिष्क पर अधिक बल एवं कम शारीरिक परिश्रम तथा अकेले या दो के बीच एक बड़े कार्य या मशीन को देखना और उसे चलाना होता है। इसके कारण संवेगात्मक प्रवाह में बाधा उत्पन्न होती है जिसका परिणाम अच्छा नहीं होता।

श्रमिक नियम के कारण अवकाश भी प्राप्त है जिससे सदोपयोग की उचित व्यवस्था नहीं होती।

मशीन से कार्य करने वालों को अधिक शारीरिक परिश्रम नहीं करना पड़ता है।

उद्योग के इन सब दोषों के निवारण के लिये शारीरिक शिक्षा ही उपाय एवं सामग्री प्रदान कर सकती है। स्वास्थ्य एवं शारीरिक विकास के साधन उप-

लब्ध कराकर उचित शारीरिक विकास एवं शक्ति प्रदान करना जिससे उद्योग में अधिक वृद्धि हो, शारीरिक शिक्षा के द्वारा ही सम्भव है।

औद्योगिक सभ्यता यही चेष्टा करती है कि उद्योग के द्वारा अधिक उत्पादन हो जिससे अधिक लाभ सम्भव हो एवं जीवन में संतोष, प्रसन्नता एवं आर्थिक लाभ प्राप्त हो। सभ्यता की इन सुविधाओं एवं आराम में इस बात को भुला दिया जाता है कि मनुष्य, जिसके लिये ये आराम के उपाय प्राप्त किये जा रहे हैं, यदि अस्वस्थ हो एवं शारीरिक स्तर से नीचा हो तो जीवन किस काम का होगा ? शारीरिक आवश्यकता सर्व प्रमुख है। यदि सर्व प्रथम इसकी ओर ध्यान नहीं दिया जायेगा तो ये अर्जित लाभ निरर्थक सिद्ध होंगे।

औद्योगिक धंधों में बालकों एवं महिलाओं के आ जाने से अनेकों समस्यायें उपस्थित होती हैं। बालक द्वारा श्रम कराना, शासकीय नियमानुसार वर्जित है तथापि इसका प्रयोग किया जाता है क्योंकि यह सस्ता है तथा पारिवारिक आर्थिक दशा के कारण प्रत्येक हाथों को कुछ न कुछ अर्जित करना आवश्यक हो जाता है। महिलाओं के लिये भी व्यवसाय में आने का यह एक कारण है। उन्नतिशील देशों में महिलायें, पुरुषों के तुल्य अधिकार प्राप्त करने के लिये उद्योग, व्यवसाय एवं व्यापार में भाग लेती हैं। प्रायः सभी देशों में महिलायें पुरुषों के समान कार्य कर रही हैं। यह आवश्यक है कि उचित अधिकार उनको प्राप्त होना चाहिये जिनमें स्वास्थ्य एवं शारीरिक शक्ति एक प्रमुख अधिकार है। उनकी शारीरिक क्रिया विभिन्नता के कारण कई एक उद्योगों में उनका जाना उचित नहीं क्योंकि उनके प्रजनन की शक्ति क्षीण हो जाती है। संवेगात्मक विभिन्नता के कारण कई एक पुरुषों के योग्य कार्यों में भी उन्हें नहीं जाना चाहिये। उनका प्रमुख स्थान परिवार में है। परिवार से यदि उन्हें अवकाश है तो उचित स्थान में जाना तथा शारीरिक स्वास्थ्य एवं शक्ति अर्जित करना उचित हैं किन्तु केवल पुरुषों के साथ समानता प्राप्त करने के ध्येय से अपनी अस्तित्व को मिटाना एक बड़ी भूल है।

समाज एवं राष्ट्र के लिये यह अति आवश्यक है कि लड़कियां एवं महिलायें स्वस्थ हों तथा उनका उचित शारीरिक विकास हो। वे पुरुषों से बराबरी करें या न करे उचित शारीरिक तैयारी एक जन्म सिद्ध अधिकार है

जो उन्हें भी प्राप्त होना चाहिये। बहुत से ऐसे स्थान जीवन में हैं जहां वे पुरुषों की अपेक्षा अधिक उत्तम कार्य कर सकती हैं। वहां उनका होना आवश्यक है। शारीरिक स्वास्थ्य एवं विकास प्रत्येक अवस्था, आयु एवं स्थिति में महिलाओं के लिये भी अनिवार्य है जिसके लिये उचित व्यवस्था होनी चाहिये।

भारतवर्ष में उचित मनोरंजन के साधनों की अत्यन्त कमी है। साधारणतः व्यापारिक मनोरंजन ही उपलब्ध हैं जिनके द्वारा मनुष्य को उचित संतोष नहीं प्राप्त होता है न संवेगों का उचित प्रवाह ही हो पाता है। ऐसे मनोरंजन से लाभ के स्थान पर हानि ही होती दिखायी देती है। शारीरिक शिक्षा का यह अनिवार्य कर्त्तव्य है कि वह उचित मनोरंजन की व्यवस्था करे। बाल्यपन से ही इस बात की शिक्षा होनी चाहिये कि खेल आदि संतोषपूर्ण प्रसन्न जीवन का एक अनिवार्य अंश है। इसकी अनुपस्थिति में जीवन पूर्णता प्राप्त नहीं करता। यह समझ लेना अति आवश्यक है कि आर्थिक लाभ उसी समय उपयोगी होता है जब स्वास्थ्य एवं शरीर उचित रूप से कार्य कर रहे हों। आर्थिक सभ्यता में मनुष्य धन के पीछे इस प्रकार जुटा रहता है कि जिसके लिये धन प्राप्त किया जा रहा है वही उसका उचित उपयोग न कर सके। उत्तराधिकार से प्राप्त धन भी साधारणतः असाशित रूप में ही व्यय किया जाता है। उस व्यय से और लाभ हों या न हों शारीरिक लाभ तो प्रायः देखने में कम ही आता है। अधिक धन के कारण संयम से जीवन प्रयोग करना कठिन हो जाता है। सभ्यता की झूठी शान, मदिरा, स्त्री एवं मनोरंजन तक ही सीमित रहता है। सम्भव है कि बाल्यपन में शारीरिक शिक्षा में रूचि प्राप्त व्यक्ति इस ओर धन रहते हुये भी विशेष ध्यान न दे किन्तु धन का उचित व्यवहार करें एवं अपने आपको सही रीति से विकसित करें।

शारीरिक शिक्षा जीवन में अनेकों प्रकार की स्थिति एवं अवस्थाओं में अत्याधिक समायोजन की शक्ति देती है। उचित स्वास्थ्य एवं उच्चत्तम शारीरिक विकास प्राप्त व्यक्ति अपने व्यवसाय आदि को भी खेल की भावना से ही कर सकता है। शारीरिक शिक्षा कार्यों के द्वारा व्यक्ति अपने अवकाश का सही उपयोग कर सकता है। उनसे वह उपयुक्त मनोरंजन प्राप्त कर सकता है। अपना समायोजन वातावरण के अनुकूल कर सकता है। समाज के प्रत्येक

खंड एवं स्थान में शारीरिक शिक्षा के द्वारा मनोरंजन की सुविधा होनी आवश्यक है। बालक जो स्कूली शिक्षा के पहले या पश्चात शारीरिक शिक्षा के खेल एवं मनोरंजन में भिन्न भिन्न कारणों से भाग नहीं ले सकते वे सामाजिक मनोरंजन एवं खेल के केन्द्र में सरलता से भाग ले सकते हैं। व्यवसायिक व्यक्तियों के लिये भी वहां उचित प्रबन्ध होना आवश्यक है। आर्थिक स्थिति में पारिवारिक स्थिरता भी एक समस्या है जिसकी ओर उचित ध्यान देना आवश्यक है। सामाजिक केन्द्रों पर सम्पूर्ण समाज के लिये यदि शारीरिक शिक्षा क्रियाओं एवं मनोरंजन के साधन हों तो सामाजिक दृढ़ता बढ़ जायेगी एवं उसकी आर्थिक उपयोगिता अधिक सम्भव हो सकेगी।

आर्थिक सभ्यता के कारण जीवन में एक प्रकार की अप्राकृतिक तीव्रता बढ़ती जा रही है। एक स्थान से दूसरे स्थान में तीव्र गति से जाना, कार्यों को शीघ्रता से करना, कार्य में हर समय व्यस्त रहना। एक ही साथ अनेकों कार्यों पर ध्यान देना, ध्यान की एकाग्रता, इस शीघ्रता के साथ शारीरिक समन्वय आदि ऐसी दशा हैं जो भय से पूर्ण हैं। इन दशाओं में जीवन की सुरक्षा चाहिये। आरम्भ में ही शारीरिक शिक्षा के द्वारा सभ्यता की इस दशा में सही उत्तर देने के लिये व्यक्ति को तैयार किया जा सकता है। शारीरिक शिक्षा प्राप्त व्यक्ति इन अवस्थाओं में सही लेखा दे सकेगा।

१२

शारीरिक शिक्षा व्यवसाय

व्यवसाय एवं धन्धा साधारण बोल चाल के शब्द हैं। इनमें सबसे बड़ा अन्तर यह है कि व्यवसाय उन सिद्धान्तों से आदेशित होता है जिसका आधार वैज्ञानिक तथ्यों या दार्शनिक विचारों पर निर्धारित होता है तथा धन्धा या व्यापार नियम पद्धति एवं आदेश पर निर्वाचित होता है। इनके नियम आदि का वैज्ञानिक आधार सम्भव है लेकिन व्यापारी को उनका ज्ञान नहीं होता। व्यवसाय को चुनते समय सम्पूर्ण भविष्य का ध्यान रहता है किन्तु धन्धे को चुनते समय धन्धे की कीमत एवं ख्याति देखी जाती है। धन्धा कभी भी बदला या बनाया जा सकता है। समाज की मांग के अनुसार उसमें परिवर्तन किया जा सकता है। धन्धे में किन्हीं मान मर्यादा की आवश्यकता नहीं लेकिन व्यवसाय का चुनने वाला व्यवसाय को प्रत्येक पक्ष से देखता है। व्यवसाय की विशेषतायें निम्नलिखित हैं।

(१) व्यवसाय को अपनाने वाले व्यक्ति अपने स्वार्थ या लाभ को नहीं सोचते। इसमें सेवा का आदर्श उन्हें प्रेरित करता है। व्यवसाय के द्वारा समाज की सेवा का लक्ष्य रहता हैं।

(२) व्यवसाय में प्रवेश मिलने से पहले एक विशेष परिवृत आवश्यक है। परिवृत की अवधि योग्यता पर निर्भर है।

(३) व्यवसाय में व्यवहारिक कार्य का आधार एक सूत्रबद्ध वैज्ञानिक ज्ञान हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यवसाय को एक निश्चित क्रम से चलाने का यथायोग्य प्रयत्न करता है।

(४) जो व्यक्ति एक व्यवसाय अपना लेता है उसे उसमें आजीवन रहने

की प्रेरणा स्वयं मिल जाती है। वह जीवन में उन्नति उसी व्यवसाय में या उसी के माध्यम से करता है।

(५) व्यवसाय को अपनाने वाले व्यक्ति कार्य क्रम में संगठित होते हैं तथा सर्वदा अपने व्यवसाय के उज्ज्वल भविष्य की आकांक्षा करते हैं।

(६) व्यवसाय पर आये हुये संकट के निवारण के लिये संघर्ष करने की भावना स्वयं ही उत्पन्न होती है। व्यवसाय चुन लेने में चूक हो गयी हो तो अन्त: प्रेरणा द्वारा उसमें रूचि उत्पन्न कर ली जाती है। अन्य व्यवसाओं की भाँति शारीरिक शिक्षा भी एक व्यवसाय है। शारीरिक शिक्षा निम्नलिखित व्यवसायिक गुणों की पूर्ति करता है।

(१) सेवा का आदर्श

समाज में अन्य कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जिसमें इस व्यवसाय की अपेक्षा जन समुदाय की सेवा करने का अधिक अवसर मिले। जितने व्यक्ति इस व्यवसाय की सेवा आदर्श से सम्बन्धित हैं, अन्य किसी व्यवसाय से नहीं। उदाहरण स्वरूप किसी प्रतियोगिता में उसके संगठन कर्त्ता, संचालक जो सेवा कर रहे हों एवं उनसे अधिक वे करते हैं जो प्रतियोगिता में भाग ले रहे हों तथा उनसे भी अधिक जो दर्शकगण हैं।

यदि शारीरिक शिक्षक अपने व्यवसाय में एक निश्चित आदर्श एवं नैतिकता को लेकर चले तथा अपने उत्तरदायित्व को समझें तो समाज पर अति उत्तम व्यवसायिक प्रभाव पड़ेगा। शारीरिक शिक्षा की वर्तमान आवश्यकता को देखते हुये, राष्ट्रीय एवं सामाजिक भावनाओं के कारण व्यक्तिगत स्वार्थ एवं आर्थिक लाभ की आशा का त्याग करना पड़ेगा। व्यवसाय की उन्नति के लिये सेवा का आदर्श सर्वोत्तम पक्ष है।

(२) क्रम बद्ध ज्ञान

शारीरिक शिक्षा व्यवसाय एक क्रम बद्ध श्रृखंला है जिसका व्यवसाय में व्यक्ति अनुकरण करते हैं तथा सभी सदस्य समान रूप से अपने कार्य मार्ग पर

बढ़ते हैं। व्यवसायिक रूप प्रदान करने वाले शिक्षकों का जीवन भी क्रम बद्ध होता है।

(३) आजीवन सदस्यता

जो व्यक्ति जिस व्यवसाय को अपना लेता है उसमें रहने की इच्छा करता है। पदोन्नति, धनोपार्जन आदि उसी व्यवसाय में या उसके माध्यम से करने की चेष्टा करता है। साधारण व्यवसायिक सदस्यता के सभी गुण शारीरिक शिक्षा व्यवसाय में वर्त्तमान है।

(४) प्रशिक्षण की अवधि

व्यवसाय में प्रवेश की शर्तें होती हैं तथा एक उचित प्रशिक्षण की अवधि होती है एवं परीक्षा होती है, भिन्न भिन्न प्रशिक्षण की भिन्न भिन्न अवधि एवं प्रवेश शर्त तथा प्रमाण पत्र होते हैं। शारीरिक शिक्षा व्यवसाय इन शर्तों को पूर्ण रूप से पूरा करता है।

(५) व्यवसायिक संस्था

शारीरिक शिक्षा एक व्यवसायिक संस्था है जो राष्ट्रीय जीवन के भिन्न भिन्न स्तर पर कार्य करता है। मुख्य संस्थाओं की उप संस्था भी है। केन्द्रीय एवं प्रान्तीय शासन संगठन एवं संचालन है। निजी एवं शासकीय प्रशिक्षण संस्थायें हैं। शिक्षा विभाग में एवं शैक्षणिक संस्थाओं में शारीरिक शिक्षा विभाग है जिसके निर्देशक, निरीक्षक आदि कार्यकर्त्ता हैं। शारीरिक शिक्षा के विशेष ज्ञान एवं अनुसंधान के लिये भी संस्थायें हैं।

(६) व्यवसायिक आकर्षण

शारीरिक शिक्षा व्यवसाय में समाज को आकर्षित करने के गुण हैं। भारतवर्ष में इस समय ५२ प्रशिक्षण महाविद्यालय हैं जहां शिक्षक शिष्य प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। अनेकों व्यक्ति विदेशी विशेषज्ञों द्वारा इस विषय में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। अनेकों उप संस्थायें हैं जहाँ अप्रशिक्षित व्यक्ति

भी अपनी रूचि के कारण व्यवसाय में सहायता दे रहे हैं तथा अपने ज्ञान के अनुसार व्यवसाय की सेवा कर रहे हैं।

शारीरिक शिक्षा व्यवसाय में जो स्वर्ण अवसर सेवा के लिए प्राप्त हैं वे किसी दूसरे व्यवसाय में उतनी मात्रा में प्राप्त नहीं। शारीरिक शिक्षक बालकों के बढ़ाव एवं विकास में जितनी सेवा कर सकता है उतनी दूसरे विषय के शिक्षक नहीं कर सकते। अतः शारीरिक शिक्षक इस उत्तरदायित्व को पूर्ण रूप से पूरा करने के लिये पूरी तैयारी कर, व्यवसाय में पदार्पण करते हैं। शारीरिक शिक्षक की सेवा में हजारों मैत्रीपूर्ण, स्नेही तथा अनौपचारिक स्थितियां होंगी जब वह विद्यार्थियों से मिलेगा। इस समय के नेतृत्व के गुण जो प्रदर्शित किये जायेंगे एवं व्यक्तिगत प्रतिक्रिया एवं व्यवहार जो शिक्षक के द्वारा प्रकट किये जायेंगे वह उतना ही प्रभावपूर्ण होगा जितना शिक्षित करने में वास्तविक कौशल महत्वपूर्ण होगा। शिक्षक अपने अनुभव के कारण इस बात पर ध्यान देगा कि खेल के जीवन में उन अवस्थाओं में जहां ईमानदारी, एक सा व्यवहार एवं स्पोर्टसमैनशिप के गुण के सम्बन्ध में निर्णय लेना आवश्यक है वह किसी प्रकार टाला न जाये। जितनी मात्रा में ये गुण शिक्षक में पाये जाते हैं उतनी ही मात्रा में वह उन्हें, जो उसके सम्पर्क में आयेंगे, प्रभावित करने में समर्थ होगा। वह समाज के नेताओं एवं सार्वजनिक जनता की दृष्टि कोण से, जो बालकों की आवश्यकता के प्रति होंगे, अनभिज्ञ नहीं होगा। नौकरी एवं सेवा में प्रवेश की अवसर दशा, उद्योग एवं व्यवसाय, जन संख्या वितरण, उपस्थित गृहस्थ जीवन दशा आदि ऐसे विषयों के पूर्ण ज्ञान से 'शिक्षक बालक सम्बन्ध' में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा तथा उसके शिक्षण निपुणता में सहायक होगा।

व्यवसाय में सफलता प्राप्त करने के लिये व्यक्ति को कुछ विशेष गुणों को अर्जित करने की आवश्यकता है। साधारण शिक्षक के लिये अनेकों गुण बताये गये हैं लेकिन शारीरिक शिक्षक के लिये उन सम्पूर्ण गुणों के साथ और भी अधिक विशेष गुणों को प्राप्त करने की आवश्यकता होगी।

अन्य शिक्षकों के समान, शारीरिक शिक्षक की सामान्य शिक्षा स्तर होना आवश्यक है। शारीरिक शिक्षा व्यवसाय के कारण उसे कठिन शारीरिक परिश्रम के लिये सदैव तैयार रहना पड़ता है। व्यवसाय बैठकर करने वाला नहीं किन्तु क्रिया शील है। संवेगात्मक स्थिरता एवं सन्तुलन होना आवश्यक है।

समायोजन, मानसिक उत्सुकता, विस्तृत रुचि, निर्भरता, विश्वासनीय निष्कपट उदार दृष्टिकोण, उत्तम निर्णय, समन्वय प्रभावशाली व्यक्तित्व और आर्कषण आदि ऐसे गुण शारीरिक शिक्षक में समाहित हों तो व्यवसाय में बहुत सहायता होगी।

शारीरिक शिक्षा व्यवसाय में नेतृत्व का अर्थ गुणों के संग्रह से नहीं है किन्तु व्यवहार के एक प्रकार से है। ऊपर के दिये गये गुण व्यक्ति में ऐसे मंझ जाते हैं कि वे मिलकर व्यक्ति के व्यक्तित्व के साथ एक हो जाते हैं एवं परिणामत: उसके व्यवहार के रूप में प्रकट होते हैं। इस कारण व्यक्ति प्रभाव पूर्ण एवं शक्तिशाली हो जाता है। उसके विचार स्पष्टता से प्रकट किये जाते हैं। उसके विचार निर्माणकारी एवं रचनात्मक होते हैं। उसमें अन्य व्यक्तियों के लिये स्नेह होता हैं। वह दूसरों को समझ सकता है। उसमें आत्म निर्भरता होती है एवं उसे अपने विचार को प्रकट करने का पूर्ण उत्साह रहता है। वह दूसरों की आन्तरिक भावनाओं को जानने की चेष्टा करता है। वह प्रसन्न चित एवं सदैव हंसमुख रहता है। नेतृत्व की सर्वश्रेष्ठ कसौटी यह है कि उसकी ऐसी योग्यता हो कि वह विद्यार्थियों के लिये ऐसे अवसर एवं उत्तेजना उपलब्ध करे कि वे विकसित हों एवं अपनी शक्ति का सर्वोच्च शिखर प्राप्त कर सकें।

उत्तम शिक्षकों की कमी शारीरिक शिक्षा व्यवसाय में भी हैं। अनेकों शिक्षक हैं जो सही रीति से प्रशिक्षित नहीं होते। समस्या केवल शिक्षकों के सही प्रशिक्षण की ही नहीं है अपितु यह देखने की कि योग्य विद्यार्थी शिक्षक प्रशिक्षण के लिये स्वीकार किये जायें। अच्छे शिक्षकों की आवश्यकता स्वयं सिद्ध है। शिक्षकों का प्रखर मस्तिष्क, विस्तृत सांस्कृतिक शिक्षा, स्वस्थ शक्तिपूर्ण आकर्षक व्यक्तित्व एवं बच्चों के ज्ञान की रुचि, साधारण योग्यता समझी जायेगी। शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं का उत्तरदायित्व व्यक्ति को नहीं अपितु समाज को है। समाज को दृष्टि में रख कर विद्यार्थियों का प्रवेश शारीरिक शिक्षण प्रशिक्षण में होना चाहिये।

आर्थिक अस्थिरता, शिक्षकों की कमी, शासकीय वैमनस्य के कारण कुछ स्तर से नीचे विद्यार्थी प्रशिक्षण के लिये ले लिये जाते हैं इस दोष का शीघ्र निवारण होना अति आवश्यक है।

शारीरिक शिक्षा व्यवसाय में आने वाले व्यक्तियों में निम्नलिखित का पाया जाना आवश्यक है।

बुद्धिमान होना तथा अपनी प्रवेश की आवश्यकताओं को अच्छे स्तर से प्राप्त करना। ज्ञान की प्राप्ति में उत्सुकता। सामाजिकता के स्तर से उपयुक्त होना तथा बिना भेद भाव के सबकी सेवा के लिये तत्पर रहना एवं समाज की गति से अनभिज्ञ न रहना। सुहावना व्यक्तित्व जिसके प्रति आकर्षण, स्नेह एवं श्रद्धा हो। शारीरिक शिक्षा व्यवसाय के लिये उपयुक्त हो।

यह एक बड़ी भूल है कि शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण के लिये ऐसे व्यक्तियों को प्रवेश की आज्ञा दी जाती है जो किसी एक या दो खेलों में प्रवीणता प्राप्त किये हुये होते हैं। प्रवेश सम्पूर्ण योग्यताओं के आधार पर ही होना चाहिये।

सारांश में यह कहा जा सकता है कि शारीरिक शिक्षण व्यवसाय के व्यक्तियों की निम्नलिखित योग्यता होनी चाहिये।

प्रशिक्षण कोर्स के अनुसार, हाई स्कूल, इन्टर या ग्रेज्युएट हो, वैसी संस्था से जिसे शासकीय मान्यता प्राप्त हो।

व्यवसाय के आधारभूत तथ्यों की साधारण जानकारी हो जो विशेष परीक्षा के द्वारा निर्धारित की जा सकती है।

सम्पूर्णरूप से स्वास्थ हो। शारीरिक दोषों से मुक्त हो एवं कठिन परिश्रम की योग्यता एवं रुचि रखता हो। आवाज स्पष्ट हो।

शिक्षक बनने के योग्य व्यक्तित्व हो, जो व्यक्ति की परीक्षा, जानने वालों के द्वारा एवं अवलोकन के द्वारा निर्धारित किया जा सकता है। व्यक्तित्व के गुण, उत्साह, मित्रभाव, प्रसन्नचित्त, औद्योगिक, समन्वय, दृढ़, प्रभावशाली विश्वासनीय, आत्मनियंत्रण, चरित्रवान, सामाजिक समायोजन, आकर्षण आदि के अनुसार व्यक्ति के भविष्य की सफलता एवं असफलता का अनुमान लगाया जा सकता है।

शारीरिक शिक्षा के प्रति विशेष रुचि हो एवं क्रियाशील हो। एक उत्तम स्तर की गतिप्रद शक्ति योग्यता होना आवश्यक है। यह असम्भव है

कि प्रत्येक शिक्षक प्रत्येक विषय में प्रवीण हो किन्तु विभिन्न विषयों की अच्छी जानकारी एक आवश्यक प्रारम्भिक दशा है तथा कुछ विषयों में निपुणता प्राप्त हो। प्रशिक्षण अवधि में, कौशल में पूर्ण निपुणता प्राप्त करने का अवसर प्राप्त होगा। शारीरिक समन्वय, लचीला पन, शक्ति, उत्तम प्रतिक्रिया, समय, कौशल के सीखने में सहायक होंगे। प्रवेश के समय कौशल की नीव पड़ी हुयी होनी चाहिये। शारीरिक शिक्षा में शारीरिक सम्पर्क होगा अतः व्यक्ति को दूसरों के साथ रहने या कार्य करने में आपत्ति नहीं होनी चाहिये अर्थात लोगों से प्रेमभाव होना आवश्यक है।

व्यक्ति को हंसमुख स्वभाववाला एवं हसोड़ अवश्य होना चाहिये। संसार में दुःख, शोक, अप्रसन्नता, निराशा आदि की कमी नहीं। यदि जीवन में कुछ हर्ष न लाया जाय तो यह एक भार हो जायेगा। हास्य उत्तम मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य का प्रतीक है।

भारतवर्ष में इस समय ५२ शारीरिक शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय वर्त्तमान हैं। इन महाविद्यालयों में तीन प्रकार की शिक्षा दी जा रही है। सर्टीफिकेट कोर्स, डिप्लोमा कोर्स तथा युनिवर्सिटी डिग्री। पहले दो कोर्स की अवधि एक वर्ष की है। युनिवर्सिटी डिग्री कोर्स तीन वर्ष का है।

सर्टीफिकेट कोर्स का प्रवेश सम्पूर्ण भारतवर्ष में उ०प्र० को छोड़ कर हाई स्कूल है। उ० प्र० में इन्टरमीडियेट है। डिप्लोमा कोर्स पोस्ट ग्रेज्युएट प्रशिक्षण है। युनिवर्सिटी डिग्री का प्रवेश इन्टरमीडियेट है। शारीरिक शिक्षा में अनुसंधान की भी व्यवस्था कहीं कहीं है।

उच्च श्रेणी की कोचिंग प्रशिक्षण नेशनल इन्स्टीट्यूट पटियाला में दी जाती है। यह केन्द्रीय सरकार की देख रेख में काम करता है। लक्ष्मी बाई कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन भी केन्द्रीय प्रशिक्षण महाविद्यालय है जो जिवाजी युनीवर्सिटी ग्वालियर से सम्बन्धित है।

प्रदेशों में शासकीय प्रशिक्षण महाविद्यालय अनेक हैं। निजी कालेज भी बहुत से हैं। महिलाओं एवं पुरुषों के लिये पृथक प्रशिक्षण महाविद्यालयों की व्यवस्था है।

शारीरिक शिक्षकों की देन

शारीरिक शिक्षा शिक्षकों ने सामान्य शिक्षा को अनेक महत्वपूर्ण दान प्रदान किये हैं ।

शारीरिक शिक्षा शिक्षकों का महत्वपूर्ण कार्य व्यक्ति के आत्म विकास की ओर रहा है । इसमें वे व्यक्ति के स्वास्थ्य, मनोरंजन एवं जीवन दर्शन सम्बन्धित सम्पूर्ण योग्यता का विकास करने में अग्रसर रहे हैं । इसके कारण व्यक्ति इस प्रकार विकसित होता है कि वह अपना उचित स्थान समाज में ले सके । निरूपण की योग्यता, उचित शिक्षा, स्वास्थ्य एवं रोग ज्ञान, पारिवारिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य के प्रति उचित भाव, विभिन्न स्पोर्टस कौशल, अवकाश के सदोपयोग का उपाय, सौन्दर्य सराहना एवं जीवन को उपयोगी करना आदि विकास के परिणामतः प्राप्त होते हैं ।

शिक्षित पुरुष के लिये निरूपण की योग्यता का होना अति आवश्यक है । इसके बिना वास्तविक शिक्षा प्राप्त करना सम्भव नहीं है । उत्सुकता के कारण ही वस्तु की छान बीन की जाती है । वातावरण का अविष्कार इसी प्रकार होता है । गतिप्रद शक्ति के कारण बालक वातावरण को समझ पाता है । गति-प्रद शक्ति के कारण मानसिक विकास होता है ।

सफलता स्वास्थ्य के ऊपर निर्भर है । शारीरिक शिक्षक सर्वप्रमुख व्यक्ति के स्वास्थ्य पर ध्यान देता है । स्वास्थ्य एवं रोग ज्ञान का होना शिक्षा में आव-श्यक है । शरीर की शिक्षा, स्वस्थ एवं निरोग होना ही है । स्वास्थ्य की अनु-पस्थिति में जीवन का वास्तविक आनन्द प्राप्त करना सम्भव नहीं । कठिन परिश्रम स्वास्थ्य से सम्बन्ध रखता है । सफलता कठिन परिश्रम के द्वारा प्राप्त होती है । शारीरिक शिक्षक, भोजन, व्यायाम, विश्राम, निद्रा, रोग अवरोध, खुली वायु में कठिन एवं तीव्र शक्तिशाली क्रियाओं के द्वारा, स्वास्थ्य की उत्तम आदतों के निर्माण करने के द्वारा, दोष निवारण, सुरक्षा आदि के द्वारा स्वास्थ्य एवं रोगज्ञान की शिक्षा देता है ।

शिक्षित व्यक्ति अपने स्वास्थ्य की रक्षा करता है अपने परिवार की रक्षा करता है एवं समाज के स्वास्थ्य की ओर भी ध्यान देता है । उचित चिकित्सा

परीक्षा, दैनिक क्रमिक जीवन व्यतीत करने के कारण एवं जीवन पर उचित नियंत्रण के कारण वह स्वस्थ रहता है स्वस्थ व्यक्ति दूसरों को भी स्वस्थ देखना चाहता है। वह अपने परिवार के स्वास्थ्य की चिन्ता करेगा एवं समाज में उचित स्वास्थ्य के उपाय एवं चेष्टा करेगा।

शारीरिक शिक्षक ऐसा कार्यक्रम आयोजित करता है जिससे व्यक्ति, परिवार एवं समाज के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य में उन्नति हो। स्कूल में यह शिक्षा अनिवार्यरूप से दी जाती है तथा उसके विकसित होने की अवस्था में महत्वपूर्ण कार्य करती है। उसी समय भविष्य के लिये बीज बो दिया जाता है जिससे प्रौढ़ अवस्था में बाल्यकाल की रुचि बनी रहे। शारीरिक शिक्षक उनके लिये भी व्यवस्था करते हैं जिससे शारीरिक शिक्षा कार्यों में भाग लेकर वे आधुनिक जीवन के भार को कुछ कम कर सकें।

शिक्षित व्यक्ति खेल एवं स्पोर्टस के कार्यक्रम में भाग लेता है एवं समय समय पर दर्शक के रूप में भी वह उनका अवलोकन करता है। आधुनिक सभ्यता में अप्राकृतिक अवस्थाओं के कारण इन क्रियाओं में भाग लेना अनिवार्य हो जाता है। खेल एवं स्पोर्ट्स का ज्ञान होने से उन खेलों में दर्शक की अवस्था में भी आनन्द आता है तथा मन बहलाव हो जाता है।

शारीरिक शिक्षक इन अवस्थाओं के लिये केवल कौशल आदि ही नहीं सिखाता है बल्कि उनका ज्ञान भी कराता है जिससे उसमें मानसिक आनन्द भी प्राप्त हो सके। यह आवश्यक है कि अधिकतर मनोरंजन क्रियाशील हो एवं समय समय पर दर्शक हो कर भी मनोरंजन किया जा सकता है। अवकाश के सदोपयोग के लिये यह कौशल खेल स्पोर्ट्स आदि अत्यन्त ही उपयुक्त एवं लाभकारी है। शारीरिक शिक्षक का जीवन के इस महत्वपूर्ण भाग में बहुत बड़ा हाथ है। जो व्यक्ति अपने अवकाश के समय का सदोपयोग नहीं कर सकता वह कभी भी उन्नति नही कर सकता। मनोरंजन केवल खेल आदि तक सीमित नहीं है। अनेक उत्तम विषय हैं जिनके द्वारा मनोरंजन किया जा सकता है। शारीरिक शिक्षा आधारभूत विषय है जो किसी न किसी प्रकार प्रत्येक विषय में सहायक है।

शिक्षित व्यक्ति आरम्भ से ही सुन्दरता का प्रशंसक होता है एवं विषय में

सौन्दर्य देखने की चेष्टा करता है। मानव शरीर एक सुन्दर शरीर है। उत्तम विकसित शरीर से सुन्दर वस्तु संसार में दूसरी नहीं। शारीरिक शिक्षा इस सुन्दरता की कुंजी है एवं शारीरिक शिक्षक इसके प्रदानकर्त्ता हैं। शारीरिक शिक्षा की क्रियायें अत्यन्त ही सुन्दरता एवं मनोहर-रीति से की जा सकती है। सुन्दर विकसित शरीर वाले व्यक्ति की चाल ढाल तथा उसकी प्रत्येक गति शोभायुक्त होती है।

शारीरिक शिक्षा एक अत्यन्त उत्तम साधन है जिसके द्वारा अपने ध्येय को प्राप्त करने की उचित चेष्टा करना व्यक्ति आरम्भ से ही सीख जाता है। उत्तम शारीरिक शिक्षक इस गुण का जीवन में स्थानान्तरण करते हैं जिससे जीवन ध्येय उत्तम हो एवं उसे प्राप्त करने की सर्वोच्च चेष्टा एवं परिश्रम किया जाये। जीवन दर्शन का होना अति आवश्यक है। इस दर्शन के निर्माण में एवं क्रियाशील करने में शारीरिक शिक्षक सहयोग देता है।

शारीरिक शिक्षक अपने प्रोग्राम के द्वारा मानव सम्बन्ध की उन्नति में सहायक हैं। इसके द्वारा एक दूसरे के साथ रहना, कार्य करना, खेलना, समन्वय, समायोजन, सामंजस्य सरलता से प्राप्त होता है। समाज के लिए उचित पारस्परिक सम्बन्ध अत्यन्त उपयोगी हैं। आधुनिक सभ्यता की यह एक परम आवश्यकता है। सफल सुखी जीवन के लिये एवं शान्तिमय संसार के लिये उत्तम मानव सम्बन्ध अति आवश्यक एवं उपयोगी है। शारीरिक शिक्षक का सहयोग इस ओर महत्वपूर्ण है। मानव सम्बन्ध को सर्वप्रमुख रखने के द्वारा, खेल एवं स्पोर्ट्स के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति के लिये उचित, प्रसन्नतापूर्ण सामाजिक अनुभव प्राप्त कराना, परस्पर समन्वय के साथ खेल आदि में भाग लेने के द्वारा, भद्रता, निश्पक्षता एवं उत्तम स्पोर्ट्समैन की शिक्षा के द्वारा तथा गृहस्थ एवं पारिवारिक जीवन के द्वारा शारीरिक शिक्षा इस श्रेष्ठ मानव आवश्यकता की पूर्ति करता है।

शारीरिक शिक्षा व्यवसाय का भविष्य

शारीरिक शिक्षा व्यवसाय क एक उज्वल भविष्य है। आधुनिक समस्याओं की चुनौतियों का सामना करना एवं उसका उचित प्रतिउत्तर देने में शारीरिक शिक्षा की उन्नति है। कहां तक यह सफल होगा वह व्यवसायिकों

पर निर्भर है । आधुनिक चुनौतियां एवं शारीरिक शिक्षा के व्यवसाय का भविष्य कुछ मुख्य विषयों पर निर्भर है ।

शारीरिक शिक्षा व्यवसाय वर्तमान समय का एक ऐसा विषय है जिसे अधिकांश लोग समझ नहीं पाये हैं एवं उसके प्रति उनकी मिथ्या धारणायें हैं। साधारण लोग समाज एवं व्यक्ति के लिये इसकी उपयोगिता समझ नहीं सकते। अधिकांश लोग इसे मनोरंजन का ऐसा साधन समझते हैं जिसका सफल जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं । यह शैक्षणिक प्रणाली में इस लिये स्वीकृत है कि बालकों को इसके द्वारा नियन्त्रित किया जा सकता है । इससे किसी प्रकार की शिक्षा उपयोगिता की आशा नहीं की जाती । अनेको इसे प्रातःकाल किया जाने वाला व्यायाम समझते हैं । जो स्वास्थ्य के ध्यान से किया जाता है । कुछ खेल एवं स्पोर्ट्स को ही शारीरिक शिक्षा समझते हैं ।

यह शारीरिक शिक्षा व्यवसाय के व्यक्तियों का कर्तव्य है कि अपने जीवन एवं कार्यों के द्वारा जनता को शारीरिक शिक्षा की उपयोगिता का बोध करायें, उसके सही अर्थ में उन्हें शिक्षित करें । व्यवसाय के लिये यह अति आवश्यक है कि जनता की धारणा इस व्यवसाय की ओर ठीक हो ।

शारीरिक शिक्षा व्यवसाय की आयु बहुत ही कम है । कुछ वर्षों से इस शिक्षा ने वैज्ञानिक रूप धारण किया है । पहले इसे फिज़िकल कल्चर एवं फिज़िकल ट्रेनिंग के नाम से समझा जाता था । इस अवस्था में यह केवल मांसपेशियों से सम्बन्धित था तथा इस में पशु शक्ति का प्रचार था । सभ्य समाज इसे अपने योग्य नहीं समझता था । शारीरिक में, शिक्षा शब्द के आ जाने से इसे शिक्षा समझा गया एवं अपने विस्तृत रूप में यह व्यक्ति एवं समाज के शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक विकास के लिये श्रेष्ठ माध्यम समझा गया तथा इसके व्यवसाय के व्यक्ति कुछ सम्मान से देखे जाने लगे ।

इतना होते हुये भी यह विकास की अवस्था में है । इस पर अनुसंधान हाल ही में आरम्भ हुआ । अनेक ऐसे प्रश्न हैं जिनका उत्तर शारीरिक शिक्षा को देना है । इस ओर इस विषय के व्यवसायिकों को कठिन परिश्रम करना है तथा भविष्य में इसे सम्पूर्ण शिक्षा एवं विज्ञान सिद्ध करने के लिए सम्भावित प्रश्नों का यथार्थ उत्तर देना है शारीरिक शिक्षा के ऐसे प्रश्न जैसे शारीरिक शिक्षा

प्रोग्राम की क्रियायें किस स्तर या आयु पर सिखाई जायें जिससे उसमें उत्तम सीखने की निपुणता आ जाये, क्रियाओं में भिन्न-भिन्न आयु एवं स्तर के व्यक्तिगत प्रयत्न प्राप्त स्तर क्या हैं, व्यक्तिगत पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिये शारीरिक शिक्षा क्रियाओं का क्या वैज्ञानिक माप है। सार्थक विचार के विकास के लिए शारीरिक शिक्षा की योग्यता क्या है ? भारतवर्ष की समस्याओं के अनुसार विशेष प्रश्न कुछ ऐसे हैं जैसे शारीरिक क्षमता के लिये प्रत्येक आयु एवं स्तर के लिए उचित परीक्षा क्या है ? शारीरिक क्रियाओं की मानसिक सफलता से क्या सम्बन्ध है ? भारतीय आयु एवं स्तर के अनुसार शारीरिक योग्यता कितनी होनी चाहिये ? आदि अनेक प्रश्न हैं जिनका उचित उत्तर प्राप्त करना है। भविष्य में व्यवसाय की उन्नति के लिए इनका हल करना अति आवश्यक है। चुनाव, मूल्यांकन, कार्यों का समायोजन की वैज्ञानिक प्रणाली, शारीरिक शिक्षा का जीवन है तथापि इनका उत्तर अभी प्राप्त नहीं है।

शारीरिक शिक्षा व्यवसाय के भविष्य के लिये उचित नेतृत्व की आवश्यकता है। सम्मान एवं आर्थिक लाभ की दृष्टि से यह व्यवसाय अधिक आकर्षक नहीं रहा। शासकीय वैमनस्य के कारण शारीरिक शिक्षा में जो उन्नति होनी थी नहीं हुई। संस्थाओं को उचित आर्थिक सहायता न मिलने के कारण स्तर से नीचे के व्यक्ति भी प्रवेश प्राप्त कर लेते हैं। दूसरे व्यवसायों के समान अधिक योग्य व्यक्ति इस व्यवसाय को नहीं अपनाते। संस्थाओं में सैनिक प्रशिक्षण एवं शारीरिक शिक्षा के बीच मतभेद रहा है। सैनिक प्रशिक्षण को अधिक प्रोत्साहित किया जाता है। सैनिक शिक्षा को प्रोत्साहन देने वालों को यह पता नहीं कि शारीरिक शिक्षा सैनिक शिक्षा का वास्तविक आधार है। इन कारणों से शारीरिक शिक्षा के व्यवसाय में वैसे व्यक्ति अधिक नहीं आये जिनके आने से व्यवसाय प्रभावशाली हो जाता। वर्तमान व्यवसायिकों के उत्साह तथा रुचि में कमी पाई जाती है। व्यवसाय के भविष्य के लिये निःस्वार्थ एवं लगन के साथ कार्य करने की आवश्यकता है व्यवसाय में ऐसे व्यक्तियों की आवश्यकता है जिनका जीवन ही शारीरिक शिक्षा को अर्पण हो। योग्य व्यक्तियों के इस व्यवसाय में आने से भविष्य में इसका सम्मान बढ़ेगा। दुख का विषय है कि मानव जीवन का यह आधार होते हुये भी इस प्रकार प्रयोग किया जाता है जैसे इस विषय पर विशेष कृपा की जा रही है। यह आधार अपना अधिकार उचित रीति से प्रस्तावित नहीं कर सका है।

शैक्षणिक संस्थाओं ने शारीरिक शिक्षा के उद्देश्यों के प्राप्त करने की उचित चेष्टा नहीं की है। स्वास्थ्य, नैतिक चरित्र, अवकाश का सदोपयोग, उचित पारिवारिक सदस्यता एवं उच्च नागरिकता, जो जीवन के वास्तविक आधार हैं, उनकी ओर विशेष ध्यान न देकर केवल विभिन्न शिक्षा विषय, जिनमें किसी न किसी प्रकार की परीक्षा है, ध्यान दिया गया है। अनेको संस्थायें हैं जहां शारीरिक शिक्षा निर्देशक या शिक्षक नहीं हैं, खेल के मैदान नहीं हैं एवं साधन तथा सुविधा की घोर कमी है। भारतवर्ष में डिग्री प्राप्त करना ही जीवन का ध्येय है। जीवन की पूर्णता का अर्थ भी अनेकों को ज्ञात नहीं। देश के मानसिक विकार अनैतिकता आदि का मुख्य कारण शिक्षा में वैमनस्यता है। उचित शिक्षा वही है जिससे व्यवहार में परिवर्तन एवं सामाजिकता, शारीरिक, मानसिक तथा संवेगात्मक उत्तमत्ता प्राप्त हो। वर्त्तमान भारतीय शिक्षा में विषय ज्ञान नहीं अपितु विषय के तथ्यों के संग्रह से जानकारी करायी जाती है। उस ज्ञान से जीवन को कोई लाभ नहीं। यह अवश्य है कि अन्त में एक प्रमाण पत्र मिल जाता है जिसका मूल्य एक या डेढ़ हजार रुपये से कहीं अधिक होता है। शिक्षा प्रणाली का मूल्यांकन करना आवश्यक है। शारीरिक शिक्षा व्यवसाय के भविष्य एवं राष्ट्र के भविष्य के लिये यह अति आवश्यक है। यह आवश्यकता तत्कालिक है। व्यक्ति के सामाजिक, शारीरिक, मानसिक एवं संवेगात्मक आवश्यकताओं को निर्धारित करना है तथा उनकी उचित शिक्षा के लिये प्रबल प्रयत्न करना है। शिक्षा पद्धति एवं प्रणाली में इसका उचित ध्यान रखना आवश्यक है। स्वास्थ्य जीवन की प्रमुख आवश्यकता है। संस्थाओं में इस ओर जो किया जा रहा है वह प्राय: नगण्य है। कितनी संस्थायें हैं जो लिंग, स्तर, योग्यता एवं विद्यार्थियों की विशेष आवश्यकता के अनुसार शारीरिक शिक्षा क्रमिक एवं विधिवत रूप से प्रदान करती हैं? कितने शैक्षणिक व्यक्ति हैं जो शारीरिक शिक्षा को गणित, विज्ञान, भाषा, इतिहास आदि से महत्वपूर्ण एवं सर्वप्रथम स्थान देते हैं? शारीरिक शिक्षा व्यवसाथिकों को व्यवसाय के भविष्य एवं देश लाभ एवं शिक्षा के मूल्यांकन के लिये प्रयत्नशील रहना है।

अन्तर्राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा मानचित्र पर भारतवर्ष का कहीं स्थान नहीं। हाकी को प्रथम स्थान अवश्य प्राप्त है किन्तु उसकी कहानी कही नहीं जा सकती समझी जा सकती है। शारीरिक स्वास्थ्य में देश को एक निम्न स्थान प्राप्त है। शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में विशेष रुचि नहीं है। शारीरिक शिक्षा के द्वारा

अवकाश का सदोपयोग नहीं होता है। शारीरिक शक्ति एवं सौन्दर्य पर हम गर्व नहीं कर सकते। आयु की अवधि अवश्य बढ़ी है किन्तु वास्तविक स्वास्थ्य, स्तर से नीचा है। इस कारण से व्यक्तियों को कठिन परिश्रम एवं विश्वस्तरूप से कार्य करने में कठिनाई होती है। खेल एवं मनोरंजन में विशेष रुचि न होने के कारण एवं खिलाड़ी न होने से 'स्पोर्ट्स मैन स्पिरिट' से वंचित रह जाने के कारण कार्य में खेल की भावना नहीं आ पाती। कार्य एक भार सा प्रतीत होता है। इसमें व्यक्ति, समाज एवं सम्पूर्ण राष्ट्र की हानि है। भारतीय राष्ट्र को एक शक्तिशाली, सुन्दर एवं प्रभावपूर्ण राष्ट्र होना है जिससे राष्ट्र मंडल में इसका उचित स्थान एवं सम्मान हो। शारीरिक शिक्षा व्यवसाय के व्यक्ति राष्ट्र निर्माण कर्त्ता हैं। राष्ट्र का भविष्य उनके हाथों में सर्व प्रथम है। भविष्य में वे क्या लेखा देगें उसका निर्णय आज करना है।

इस ध्येय के प्राप्त करने के लिये प्रारम्भिक शिक्षा स्तर पर उचित शारीरिक शिक्षा आयोजित होनी चाहिये। यह बालकों की आवश्यकता, रुचि एवं योग्यता के आधार पर होनी आवश्यक है। उचित समय, साधन एवं नेतृत्व उपलब्ध कराना आवश्यक है माध्यमिक स्तर पर प्रत्येक दिन तीव्र गति एवं शक्तिशाली क्रियाओं का होना आवश्यक है। विद्यार्थियों को विभिन्न कौशल से परिचित एवं उनको अभ्यास देना चाहिये। कालेज के स्तर पर विशेषता की ओर ध्यान दिया जा सकता है। शारीरिक शिक्षा में प्रत्येक स्तर पर एक ऐसी रुचि उत्पन्न करने की आवश्यकता है कि शारीरिक शिक्षा अपना एक धार्मिक कार्य समझा जाये जिसकी अनुपस्थिति में जीवन में एक पग चलना भी कठिन है। इसी रुचि के विकास में प्रौढ़ जीवन एवं वृद्धावस्था में भी शारीरिक क्रियाओं की ओर रुचि बनी रहेगी और जीवन के अन्तिम दिन तक इससे लाभ उठाया जा सकेगा।

शारीरिक शिक्षा व्यवसाय इस ओर प्रयत्नशील होकर राष्ट्र एवं संसार को लाभ पहुंचा सकता है।

शारीरिक शिक्षा, इतिहास के प्रारम्भिक दिनों से मानव समाज की सेवा करती रही है तथा भविष्य में भी उचित रूप से करेगी। मनुष्य जिस स्थिति एवं अवस्था में हो सर्वत्र एवं सदैव उसे शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता होगी।

मनुष्य की प्राकृतिक क्रियाओं के रूप परिवर्तित किये जा सकते हैं किन्तु वास्तविकता बनी रहेगी। अंतरिक्ष में या समुद्र के नीचे, जहां भी वह हो, शरीर एवं स्वास्थ्य शारीरिक गति का आधार होगा। अतः शारीरिक शिक्षा व्यवसाय जीवन का व्यापारी है। यह जीवनदायक है। इससे अधिक गौरव का विषय एवं उज्वल भविष्य किसका हो सकता है ?

शारीरिक शिक्षा का इतिहास

१

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

समय निरन्तर चलता रहता है। सुविधा के लिये उसे खंडों में विभाजित कर दिया जाता है और संसार के भिन्न भिन्न कार्यों को हम समय के इन्हीं विभाजित खंडों के अन्तर्गत समझने की चेष्टा करते हैं। समय के भूत, वर्तमान तथा भविष्य खंड आपस में एक दूसरे से सम्बंधित हैं और किसी एक को समझने के लिये दूसरे को जानना अनिवार्य हो जाता है। समय के इन भिन्न खंडों से इन व्यक्तिगत कार्यों के सम्बन्ध के ज्ञान को ही इतिहास कहते हैं। अतः इतिहास अनुभव तथा प्रगति का एक लेखा है।

समाज की समस्याओं को हल करने के लिये शैक्षणिक इतिहास तथा दर्शन का अध्ययन आवश्यक हो जाता है। दृष्टि सदा भूत काल की ओर पड़ती है। जैसे ही उत्तम भविष्य निर्माण की योजना होती है वैसे ही भूत के अनुभव, एक मुख्य स्थान प्राप्त कर लेते हैं जिनके आधार पर ही योजना का सफल होना या न होना निर्भर होता है। भविष्य का दर्शन भूत के जानने और उसके सही रूप को समझने में ही सम्भव है।

वर्त्तमान शारीरिक शिक्षा को हम उस समय तक नहीं समझ सकते जब तक हम भली भांति यह न जान जायें कि भूतकाल की कौन कौन सी सामाजिक प्रेरणायें, दर्शन, दशा, विचार तथा गतियों ने उसे आधुनिक रूप में विधिवत किया है। इतिहास, भूत के कार्यों, विचार तथा प्रणालियों को वर्त्तमान की कसौटी पर जांच कर आधुनिक मूल्यों का मूल्यांकन करता है तथा भविष्य के लिये मार्ग दर्शन करता है। किसी भी देश की उन्नति का मूल्यांकन उस देश के इतिहास से किया जा सकता है। इतिहास युद्ध तिथियों और नामों का विवरण मात्र नहीं है। बल्कि इतिहास में विभिन्न सामाजिक स्थितियों का तथा उनकी संयुक्त प्रेरणा का किसी विशेष समय पर क्या प्रभाव होता है इसके अध्ययन का प्रयास करना है। सभ्यता के कारण दैनिक व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में जो परिवर्तन आते जा रहे हैं उनकी आलोचना करना शारीरिक शिक्षा का एक विशेष अधिकार तथा उत्तरदायित्व है। मनुष्य को उसके वास्तविकरूप में रखना, सदियों से अर्जित किये हुए शारीरिक गुणों को, जो पैत्रिक सम्पत्ति सदृश्य प्राप्त हुए हैं उनका विकास तथा उन्हे उच्च कोटि की प्रवीणता में ढालना और आधुनिक जीवन के योग्य बनाना, शारीरिक शिक्षा का प्रमुख कर्त्तव्य है। शारीरिक शिक्षा विशेषज्ञों के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि पग पग पर तथ्यों का स्पष्टीकरण, प्रयोग, तथा मूल्यांकन करें; आलोचना के लिये मापदण्ड स्थापित करें तथा उच्च परिणाम के लिये उचित प्रणालियों को निर्धारित करें। शारीरिक शिक्षा को एक ऐसी स्थिति में रखें जिससे प्रत्येक दशा तथा समय में वह उपयुक्त सिद्ध हो। इन कर्त्तव्यों का उचित ढंग से पालन एवं सफल परिणाम प्राप्त करने के लिये, इतिहास तथा दर्शनशास्त्र का विस्तृत अध्ययन एवं सामाजिक विचार तथा व्यवहारों का निरीक्षण तथा विश्लेषण अति आवश्यक सिद्ध होंगे। सामाजिक विचार, दशा, दर्शन तथा शिक्षा अनेक स्रोत से प्राप्त होते हैं। परम्परा से प्राप्त प्रणालियां तथा लोक रीति का इसमें विशेष हाथ होता है। इन स्रोतों का अध्ययन लिखित तथा अलिखित इतिहास के द्वारा ही हो सकता है। इसका शिक्षा पर तथा विशेष कर शारीरिक शिक्षा पर क्या प्रभाव रहा है इसका ज्ञान शारीरिक शिक्षा इतिहास से ही प्राप्त किया जा सकता है।

प्राचीन काल

मानव जीवन का प्रारम्भिक काल अंधकार में लुप्त है। इतिहास से पूर्व के जीवन का ज्ञान प्राय: शून्य के बराबर है। लिपि के न होने के कारण जो थोड़े बहुत तथ्य इधर उधर मिलते हैं उन्ही के आधार पर इतिहासवेत्ता उस समय के जीवन के विषय में अपना विचार निर्धारित करते हैं। प्राचीन वस्तु विद्याविशेषज्ञ तथा मनुष्य प्रकृति विद्याविशेषज्ञों के द्वारा इस विषय में असीम सहायता प्राप्त हुई है।

अनुमान किया जाता है कि जीव का आरम्भ प्राय: दस लाख वर्ष पूर्व हुआ था। उस समय का अव्यवस्थित जीवन जलवायु के प्रभाव के वातावरण से परिवर्तित होता था। अनुकूल जलवायु तथा खाद्य सामग्री की खोज की चेष्टा प्रमुख थी। मनुष्य के दैनिक जीवन के स्मारक चिन्ह जो भूगर्भ से निकाले गये हैं उस आदिकाल के जीवन के विषय पर प्रकाश डालते हैं। इतिहासवेत्ताओं का कहना है कि मनुष्य अनेक प्रगति स्तरों को पार कर चुका हैं। सर्व प्रथम वह घने बालों से ढका हुआ नंगा, जानवरों की तरह कच्चे आहार के लिये भ्रमण करता था तथा खुले आकाश की छत के नीचे रहता था। अपनी रक्षा के लिये लाठी तथा पत्थर का प्रयोग करता था। अपने ही वातावरण से वह डरता था।

दूसरे स्तर पर वह जीवन के उपाय के लिये भ्रमण करता था। वह पर्याप्त प्रगति कर चुका था। वह गुफाओं तथा प्राकृतिक रक्षा के स्थानों में रहता, सुखाये हुये चमड़ों से अपने शरीर की रक्षा करता। भोजन पकाने के लिये आग का अविष्कार कर चुका था, पत्थरों के हथियार बनाता, तथा धार्मिक भावनाओं को रूप देने के लिये मौलिक कला का प्रयोग करता था।

तीसरे स्तर पर मनुष्य ने प्रकृति पर अधिकार प्राप्त कर लिया था। भोजन सामग्री मिट्टी के बर्तनों में रखी जाती थी। तीर धनुष का प्रयोग होता था। अच्छे पैने और चमकीले हथियार बनाये जाते थे जिससे उनका कार्य सुगमता से हो जाता था। नये ढंग के कपड़े का अविष्कार हुआ। जानवरों तथा पौधों को घरेलू रूप दिया गया जिसके कारण कृषि और पशु पालन की प्रगति हुई और मनुष्य सर्वदा चल जीवन को छोड़ एक स्थान में बसने के लिये बाध्य हुआ।

उपरोक्त विवरण से पता चलता है कि सभ्यता की प्रगति तथा शिक्षा आपस में एक दूसरे के आधार पर ही उन्नति करती गयी। यह निश्चित है कि किसी न किसी रूप में शिक्षा ही वह शक्ति थी जो उन्नति की ओर अग्रसर कर रही थी। मनुष्य की शिक्षा उतनी ही प्राचीन है जितना उसका जीवन है। इतना होते हुये भी इस बात को ध्यान में रखने की आवश्यकता है कि इतिहास से पूर्व जीवन की विशेषताओं का वर्णन किसी निश्चितरूप से नहीं हो सकता अर्थात हम उनको प्रामाणिक नहीं कह सकते, वे केवल अनुमानित हैं। इस विचार का समर्थन संसार के भिन्न-भिन्न आदिवासियों, असभ्य जातियों तथा पिछड़े हुए लोगों के जीवन के अध्ययन से भी हुआ है।

ईसा के पूर्व ८००० से ३००० का समय एक परिवर्तन का समय कहा जाता है जिस समय यूरोप के भिन्न भिन्न हिस्सों में, अफ्रीका तथा एशिया के प्राचीन लोगों में एक विशेष परिवर्तन का पता चलता है।

इतिहास के पूर्व मानव जीवन की कहानी में दो विशेष बातें मुख्यरूप से लक्ष्य की जा सकती हैं। सर्व प्रथम उसकी सुरक्षा। वह अपनी लालसाओं की तृप्ति में व्यस्त था। उसका संघर्ष अपनी रक्षा में, भोजन उपार्जन में, तथा जानवरों, शत्रुओं या प्रकृति से बचने के लिये निपुणता प्राप्त करने में दिखायी देता है।

दूसरा, समूह के धार्मिक रीतियों तथा व्यवहारों के प्रति अनुकूलता जिस के कारण सामूहिक सुरक्षा का आश्वासन प्राप्त होता था। इनके फलस्वरूप कुछ क्रिया पद्धत्ति, परम्परागत नियम तथा शिष्टाचार स्थापित हो गये।

प्राचीन काल में किसी प्रकार की संगठित शिक्षा नहीं थी। मानव अपने अनुभव से नयी नयी बातें सीखता जाता था। जो कुछ वह सीखता या विशेष प्रगति करता वह दैनिक जीवन के परिणाम स्वरूप था। इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उसका मुख्य कार्य शारीरिक था जो मनोरंजन तथा दैविक शक्तियों को प्रसन्न करने के लिये नृत्य के रूप में, भोजन तथा आहार के लिये मछली मारना या आखेट के रूप में परिश्रम में, एवं किसी न किसी प्रकार से समय व्यतीत करने के लिये क्रीड़ा के रूप में था। मनुष्य अपने प्राकृतिक जीवन में प्राकृतिक गतियों का प्रयोग करता था। प्राचीन काल में शारीरिक विकास तथा उपार्जित शक्ति दैनिक जीवन के कार्य के फलस्वरूप थी। केवल शारीरिक कार्य करने के कारण शारीरिक विकास उत्तम था किन्तु शारीरिक संतुलन का अभाव था। सभ्यता के इतिहास से इस बात का ज्ञान होता है कि मनुष्य ने अपनी भिन्न दशाओं, स्थिति तथा स्तर से पार होकर आवश्यकता के अनुसार वातावरण पर नियन्त्रण करते हुये अपने गोत्र, परिवार और समाज का निर्माण किया। समाज के जटिल होने के कारण परिश्रम का विभाजन हुआ। यहीं से सभ्यता का आरम्भ है और शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता भी मालूम होने लगी। वास्तविकरूप में यदि देखा जाये तो शिक्षा तथा शारीरिक शिक्षा जीव आरम्भ के पहले ही दिन से पारस्परिक अवलम्बित रूप में प्रकट थे। पाठशाला न होने पर भी बड़ों के द्वारा छोटों को तथा चतुर विशेषज्ञों के द्वारा दूसरों को भिन्न भिन्न विद्या अपने अपूर्ण रूप में सिखायी जाती होगी। बालक बहुत कुछ अनुकरण करके सीखता था। माता पिता शिक्षक तथा शारीरिक शिक्षक थे। वातावरण से घनिष्ठ सम्बन्ध के कारण प्राकृतिक गतियों का भलि भांति प्रयोग होता था।

आधुनिक शिक्षा तथा शारीरिक शिक्षा के बीज प्राचीन काल में ही बोये गये थे और जैसे समय अपने आपको भूत, वर्तमान और भविष्य में परिवर्तित करता चला जाता है उस बीज के गुण ठोस होते चले जाते हैं और किसी निश्चित समय पर उस बीज की सेवा जिस भावना से की गयी है उसी मात्रा में सफलता भी प्राप्त हुई है।

३

प्राचीन सभ्यता

मेडिटरेनियन सागर के पूर्वी तट पर विकसित सभ्यताएँ, उन प्रथम सभ्यताओं में से थीं जिन्होंने आधुनिक इतिहास के मार्ग निर्धारित किये ।

नील नदी के मैदान तथा टाइग्रिस और युफरेट्स नदी के दोआब की उर्वरता ने खाद्य पदार्थ की बहुतायत की । कपास की अधिकता से कपड़े का अविष्कार हुआ । इन कारणों से इन तटों पर घनी बस्ती की स्थापना हुई । अवकाश की अधिकता ने लिखने पढ़ने को गति दी । विचारों के आधिक्य से आदान प्रदान होने के कारण उन्नति होना आवश्यक था ।

पूर्वी सभ्यताओं में असीरिया, बेबीलोनिया, इसरायल, परसिया आदि का इतिहास आपस में इस तरह से मिला हुआ है कि प्रायः सभी का इतिहास समान है । ईसा से ११०० वर्ष पूर्व असीरिया के राजा टिगलाथ-पीलेसर प्रथम ने मेडिटरेनियन सागर के पश्चिमी और मेसोपोटामिया तथा सीरिया तक विजय प्राप्त की । इनके उत्तराधिकारियों ने अपने राज्य में इसरायल, बेबिलोनिया, इलाम, मिस्र, पैलेस्टाइन तथा एशिया माइनर के बड़े हिस्से को भी मिला लिया ।

मिस्र तथा मेसोपोटामिया के बीच के क्षेत्र जिनमें बहुत स्वतंत्र लोग भी पाये जाते थे वे थे फोइनिसियनस, फिलिस्टिर्वस, हिब्रू, केननाइट्स, हिटाइ-टस इत्यादि ।

सीरिया अपनी स्थिति के कारण जो लड़ाई तथा व्यापार के रास्ते पर था नये नये विचार प्राप्त करता रहा । वहाँ से मेडिटरेनियन सागर के चारों ओर इन विचारों को विस्तृत करने का श्रेय इसी को है । लिखाई पढ़ाई का आविष्कार

तथा सभ्य कला एवं लेखाओं की सुरक्षा तथा प्रगति का श्रेय इन्हीं जातियों को है। आखेट इस समय का एक प्रमुख खेल था जिसके कारण सैनिक अपनी चातुर्य तथा गुण वास्तविक स्तर पर रख सकता था। तैरना भी सर्व प्रिय प्रतीत होता है। इस क्षेत्र में सर्वदा लड़ाई होने के कारण घुड़सवारी, जावलिन फेंकना, तलवार चलाना, तीर धनुष का प्रयोग आदि में लोग निपुणता प्राप्त करते थे।

मिस्र

ईसा से ३००० वर्ष पहले मिस्र एक उन्नतिशील देश था। मिस्र को सभ्यता का जन्मस्थान माना जाता है। मिस्र के इतिहास के विषय में बहुत कुछ इसा के बाद १८०० सदी में मालूम किया गया। इसी समय फ्रांसीसी सैनिकों ने एक किला बनाते समय रोसेटो स्टोन Rosetto Stone जमीन के अन्दर से पाया था। इस विख्यात पत्थर पर तीन भाषाओं में एक ही वर्णन लिखा गया था। इसमें से एक भाषा यूनानी थी। यहाँ का सबसे पुराना रेकार्ड प्रायः ५००० वर्ष इसा से पूर्व का है।

ईसा से पूर्व २४०० वर्ष में मिस्र की ख्याति सर्वश्रेष्ठ रही। मिस्र के इतिहास लेखक मानियेथो का कहना है कि फेरो बादशाहों के ३९ राजवंशों ने मिस्र पर शासन किया। चौथे राज वंश के शासन के समय ही यहां की ख्याति चरम सीमा तक पहुंच चुकी थी। इस सुवर्ण समय के स्मारक के रूप में सबसे बड़ा पिरामिड जिसका नाम गीजेह (Gizeh) है बनाया गया था। ६६० वर्ष ईसा से पूर्व मिस्र के पतन का प्रतीत होता है जब आसूरों ने उस पर विजय प्राप्त किया था। ३३२ वर्ष ईसा से पूर्व मासिडोनियनस के आधीन मिस्र आ गया था और मासिडोनिया के ऐलिकजेन्डर ने अपने मृत्यु पर्यन्त राज किया। उसकी मृत्यु के बाद उसके सैनिक सरदार ने शासन किया और उसके वंशजों ने मिस्र को फिर ऊंचा उठाया। इन्हीं के कार्यों के कारण ऐलिकजेन्ड्रिया संसार का मानसिक तथा विद्या सम्बन्धी केन्द्र माना जाता है। ईसा के दूसरी शताब्दी में यह रोम का प्रान्त बन गया था।

वर्त्तमान समय के गृहस्थी में आराम की वस्तुयें जैसे पकाने के बर्तन-साज सामान आदि इन्हीं की देन है। विज्ञान और शिल्पकारी में भी इनकी बड़ी देन हैं। इनके इस ज्ञान की लीला अभी तक समझना कठिन है। इनके बड़े बड़े

पिरामिड, हजारों वर्ष पुराने शव को उसी दशा में रखना आदि सांसारिक ज्ञान के चमत्कार हैं। कागज का अविष्कार यहीं हुआ था। भाषा की वर्णमाला यहीं बनायी गयी थी। खगोल विद्या में मिस्र के लोग बड़े दक्ष थे इसी विद्या के आधार पर १२ महीने का कलेन्डर बनाया गया था। लिखने का आविष्कार भी यहीं हुआ था।

फेरो जो राज्याध्यक्ष होता था विशेषतः पूर्ण शक्ति से राज्य करता था। उसे लोग देवता सदृश्य मानते और पूजते थे।

लिखाई तथा कागज के आविष्कार एवं उच्च मानसिक प्रवृति के कारण एक विशेष शिक्षा की स्थापना हुयी जो प्राचीन शिक्षा से भिन्न थी। पाठशालाओं में पढ़ने लिखने तथा गणित का आरम्भ हुआ। उच्च शिक्षा, पुरोहितों के द्वारा दी जाने लगी। जैसे जैसे सामाजिक जीवन जटिल होता गया वैसे ही शिक्षा का भार विषेशज्ञों के कंधे पर आ गया। इस शिक्षा का लाभ साधारण जनता के लिये प्रायः नहीं के बराबर था, केवल उच्च पद और स्थिति के लोग ही इससे लाभ उठा सकते थे। यहां स्त्रियों का स्थान दूसरे पूर्वी देशों की अपेक्षा ऊंचा था। नियम के अनुसार वे पुरुषों के बराबर मानी जाती थी और इनमें से जो पूजा का प्रशिक्षण प्राप्त करती थीं उनका स्थान अति आदरणीय था तथा राज काज सम्बन्धी बातों में हस्तक्षेप का भी विशेषाधिकार था।

मिस्र के लोग धार्मिक प्रवृत्ति के थे। लेखकों का कहना है कि वे क्रियाशील भी थे। तैरना एक लोकप्रिय खेल था। सैनिक समूह के लोग उन व्यायामों तथा खेल कूद पर जोर देते थे जो युद्ध विद्या से सम्बन्धित थे। आखेट में लोगों की रुचि थी। प्रायः २००० वर्ष ईसा के पूर्व युद्ध रथों का आविष्कार हुआ जो आखेट तथा युद्ध में उच्च कोटि के लोगों द्वारा प्रयोग किया जाता था।

भिन्न भिन्न चित्रकारी, फूलदान, खुदे हुये तथा जड़ाऊ पत्थरों से पता चलता है कि मल्लयुद्ध, नृत्य तथा जिमनास्टिक खेलों में मिस्र के लोगों की विशेष रुचि थी। मिस्र के शासक वर्ग खेलों का दर्शक के रूप में आनन्द लेते थे। अतिथि के मनोरंजन के हेतु खेल के प्रदर्शन किये जाते थे जिसमें विशेषतयः विशेषज्ञ महिलायें होती थीं। बेनी हसन के कब्र की चित्रकारी में खिलाड़ी हाथों के बल कूदते, दो दो व्यक्तियों का साथ साथ खेल, लड़कियां एक दूसरे को अपने ऊपर ले जाते

हुये और आपस में गेन्द एक दूसरे को फेंकते हुये दिखायी देती हैं। इस कब्र की चित्रकारी में प्राय: २०० दांव पेंच के उदाहरण दिखाये गये हैं जो खेल के आधार-भूत तथ्य समझे जा सकते हैं। सांड़ों की लड़ाई भी होती थी। कभी पुरुष या महिला भी सांड़ों से लड़ती थी।

धार्मिक जीवन में खेल कूद के लाने से भी मिस्र के लोगों की खेल में रुचि का अनुमान लगाया जा सकता है। धार्मिक उत्सव के अवसर पर मल्ल-युद्ध अवश्य होता था। नृत्य में लोगों की विशेष रुचि थी। उच्च कोटि के लोग केवल धार्मिक नृत्य में भाग लेते थे। बच्चों के भी अनेक खेलों की सामग्री का पता चलता है।

आधुनिक मिस्र

निकटवर्ती पूर्व (नियर ईस्ट) का मिस्र एक महत्वपूर्ण देश है जहां तीन महाद्वीप, युरोप, एशिया तथा अफ्रीका संयुक्त होते हैं। जिनमें तुर्क, इरान तथा भिन्न भिन्न अरब देश जैसे सऊदी अरब, यमन, जौर्डन, सीरिया तथा ईराक आते हैं यु० ए० आर० (युनाइटेड अरब रिप्बलिक) एक इन देशों का संयुक्त संगठन है। जिसकी शक्ति महान है। इन देशों की भौगोलिक, आर्थिक राजनैतिक तथा शैक्षणिक दशा प्राय: समान है किन्तु उनकी संगठित शक्ति का सर्वश्रेष्ठ विषय उनके धार्मिक विचार की एकता है। ये इस्लाम के मानने वाले देश हैं और यह धार्मिक एकता एक अत्यन्त ही दृढ़ तथा शक्तिशाली बल है।

प्राचीन काल से मिस्र ने वर्त्तमान सभ्यता की जड़ की सिंचाई की। आधुनिक सभ्यता का जन्म यहीं हुआ था। निकटवर्ती पूर्व की संस्कृति का प्रभाव जो संसार पर पड़ा वह भुलाया नहीं जा सकता। संसार के बड़े राज्य यहां उठे और उनका पतन हुआ। संसार के बड़े विशेष धर्मों की उत्पति यहां हुयी। पूर्व और पश्चिम का यह मिलने का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण रहा है। वर्त्तमान समय में मिस्र की स्थिति और भी महत्वपूर्ण हो गयी है। यह यू० ए० आर० संगठन का नेता है और अपने विचारशक्ति पूर्णरूप में प्रकट करता है जिसको मानने के लिये संसार को बाध्य हो जाना पड़ता है। वर्त्तमान इतिहास में स्वेज कनाल की कहानी एक अपूर्व घटना है। स्वेज कनाल बनाये जाने के बाद देख रेख का अधिकांश दायित्व अंग्रेजों के हाथ में था। अचानक मिस्र ने अपना

प्रभुत्व उसके ऊपर प्रकट किया और अपने वक्ष स्थल पर से बहती हुयी स्वेज कनाल जिसका संसार के मार्गों में सबसे प्रमुख स्थान है अपने हाथों में ले लिया। इस घटना के पश्चात् मिस्र का स्थान संसार के देशों में एक महत्वपूर्ण स्थान हो गया।

इसरायल भी एक नियर इस्ट देशों में है किन्तु यू० ए० आर० का सदस्य नहीं। मिस्र तथा इसरायल में सदा मतभेद रहा है। इनके बीच शान्ति स्थापित रखने के लिये यू० एन० ओ० की शान्ति सेना रखी गयी थी जो आज मिस्र के आग्रह के कारण हटा ली गयी। यह घोर शंका है कि ये दोनों देश आपस में किसी क्षण टकरा सकते हैं क्योंकि दोनों की सेना आमने सामने खड़ी है, और तैयारी की स्थिति में हैं। महानुभावों का विचार है कि इस संघर्ष में महायुद्ध के बीज हैं क्योंकि ये दोनों देश दो संसार के विभिन्न विचार के देशों से प्रभावित हैं और प्रत्येक रूप से सहायता के पात्र है। यू० एस० एस० आर० मिस्र की सहायता करता है और हर हालत में साथ देने के लिये तत्पर है। यू० एस० एस० आर० का विचार कम्युनिस्टिक है और संसार के दो शक्तिशाली देशों में से एक है। दूसरे ग्रुप के देश पूंजी वादी देश हैं। इन दोनों विचार के देश एक दूसरे को आगे बढ़ने देना नहीं चाहते न ही चाहते है कि कोई भी देश उनके विरोधी ग्रुप के देशों से प्रभावित हों या किसी प्रकार की सहायता पायें। मेडिटरेनियन जो संसार के मार्गों का मिलने का विशेष स्थान है वहां अपनी शक्ति की परीक्षा करना स्वाभाविक है। अतएव मिस्र संसार में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त करता है।

मिस्र का वर्त्तमान जीवन आधुनिक है। पश्चिमी सभ्यता तथा व्यवहार की अमिट छाप उनके ऊपर है। ये दिन प्रति दिन उन्नति करते जा रहे हैं। आधुनिक तकनीकी ज्ञान की कमी है। यह कृषि प्रधान देश है। आसवन बांध की तैयारी के बाद यह देश और प्रगति शील होगा।

देश को पूर्ण रूप से शिक्षित करने की समस्या सम्मुख है। आधुनिक साधनों एवं व्यवहार का प्रशिक्षण वहां विदेश से प्राप्त किया जा रहा है। शिक्षा एक उच्च केन्द्रित प्रणाली के आधीन है। यह राष्ट्रीय एज्युकेशन मिनिस्ट्री के हाथ में है जो प्रत्येक बातों में सब प्रकार की शिक्षा संस्थाओं को आदेशित करती है। प्रारम्भिक शिक्षा निशुल्क तथा अनिवार्य है। शैक्षणिक संस्थाओं में

शारीरिक शिक्षा तथा सैनिक शिक्षा साथ साथ दी जाती है। इन दोनों विभागों का एक ही निर्देशक होता है। सब प्रकार के खेल के क्लब तथा अन्य शारीरिक शिक्षा ऐच्छिक संस्थायें भी इसी निर्देशक के आधीन हैं। इनकी आर्थिक सहायता भी यहीं से होती है।

शिक्षा पद्धति में सुधार करने के लिये शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिये संस्थायें हैं। यहां शारीरिक शिक्षा में प्रशिक्षण, इन्सटीट्युट आफ मेन में दी जाती है। यह प्रशिक्षण दूसरे देशों के समान ही है। इस्तानबुल की शारीरिक प्रशिक्षण संस्था भी इसके समतुल्य हैं। प्रायः सभी अरब देशों की अपनी अपनी शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण संस्थायें हैं।

स्कूल शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में स्वीडिस प्रणाली, व्यायाम, जिमनास्टिक मार्चिंग तथा भिन्न भिन्न प्रकार के छोटे बड़े खेल प्रमुख हैं। एथेलेटिक स्पोंट स्कूल में तथा स्कूल के बाहर भी लोकप्रिय है। शारीरिक शिक्षा की प्रगति में वाई० एम० सी० ए० का बड़ा हाथ है। अमेरिकन तथा ब्रिटिश प्रभाव अत्याधिक रहा है।

उच्च माध्यमिक संस्थाओं तथा कालेज के आपस के खेल प्रतियोगिता, एक उचित स्थान रखते हैं। फुटबौल, वौलीबाल, टेनिस, बासकेट बौल, तैरना, जिमनास्टिक, नृत्य, बनैती, ताल बद्ध क्रियायें, वौक्सिंग, मल्लयुद्ध, एथेलेटिकस, कैम्पिग, हाइकिंग, स्काउटिंग, अाम्बुलैन्स तथा विशेष मिस्र के खेल शारीरिक शिक्षा के कार्य क्रम की सामग्री है।

४

चीन

मनुष्य को अपनी प्राचीन अवस्था से सभ्य अवस्था में पहुंचने के लिये हज़ारों वर्ष लग गये। भिन्न भिन्न स्थानों में भिन्न भिन्न समय पर ये असभ्य स्थिति से सभ्यता तक पहुंचे। सर्वप्रथम उच्च सभ्यता प्राप्त करने वाले देशों में से पूर्वी देशों के लोग रहे। चीन इनमें से एक रहा है। इस का इतिहास पांच हज़ार वर्ष पुराना है किन्तु लिखित इतिहास का सही पता ईसा के पूर्व १२०० वर्ष से चलता है। चाऊ गोत्र के समय से ये भ्रमण करने वाले न रह कर काश्तकारी करने वाले एवं एक स्थान पर बसने वालों में से हो गये। ईसा से प्राय ३०० वर्ष पूर्व चीन गोत्र के लोगों ने शासन किया जिनके नाम से इस देश का नाम पड़ा। चीन देश की बड़ी दीवार इन्हीं गोत्र के राजाओं के द्वारा बनवायी गयी थी।

चीन की सामाजिक तथा पारिवारिक स्थिति हज़ारों वर्ष तक एक समान रही है। इसका विशेष कारण उनका पारिवारिक संगठन था। परिवार के अध्यक्ष का एक आदरणीय स्थान था। उसकी आज्ञा उल्लंघन करना आसान नहीं था। पीढ़ियां जो उसके पश्चात आती यह उनके भी सम्मान का पात्र था। कई पीढ़ी के लोग परिवार में साथ ही रहते थे। जीवित लोगों की ही नहीं मृतकों की आत्मा का भी अत्यन्त सम्मान होता था।

चीन के लोग प्राचीन काल से ही दूसरी संस्कृति से पृथक रहना चाहते थे। इसकी भौगोलिक स्थिति तथा दूसरे कारणों से यह सम्भव भी हो सका। इसी कारण से यहां की सभ्यता में विशेष परिवर्तन न हो सका और वह गतिविहीन रही है।

भाषा की कठिनाई के कारण शिक्षा बहुत कठिन थी । लोक रीति तथा परिवार की रीति के मानने वालों के लिये शिक्षा का ध्येय केवल संकुचित पारिवारिक और लोक रीति की दृढ़ स्थापना की अपेक्षा कुछ और नहीं था । धार्मिक प्रवृति के लोगों के लिये धार्मिक शास्त्रों और बातों का ज्ञान ही श्रेष्ठ समझा जाता था अतएव यह भविष्य की ओर अग्रसर न होकर भूत की बातों पर विशेष ध्यान देते थे । इनकी धार्मिक भावनाओं की अगुवाई कानफूशियस, टाओइसम तथा बुद्ध मत के द्वारा होती थी । ये विचार उनको ध्यान, त्याग आदि की ओर विशेषरूप से आकर्षित करते थे अतएव शारीरिक शिक्षा का महत्व उन के लिये नहीं के बराबर था । सम्मान भी उन्हीं लोगों का होता या जो आयु में बड़े तथा धार्मिक शास्त्रों आदि के अध्ययन में पारंगत थे । शत्रुओं के आक्रमण से वे बचे हुये थे इस लिये बलिष्ठ लोगों तथा सैनिक आवश्यकता की ओर विशेष ध्यान देने की भी चिन्ता न रही । दैनिक जीवन के फलस्वरूप जो शारीरिक व्यायाम हो जाता था उससे अधिक की आवश्यकता नहीं मालूम होती थी ।

इतिहास के लेखकों का कहना है कि स्कूल की स्थापना चीन के लोगों के द्वारा ही हुयी थी । विचार यह भी है कि इनकी शैक्षणिक संस्थायें बहुत संगठित थी और इनकी तुलना आधुनिक शैक्षणिक संगठन से भी की जा सकती है। चीन का इतिहास विशेष कर शासकों और राज्यपरिवार को ध्यान में रख कर ही लिखा गया है । खेल कूद में जूज्जिट्स, बौकसिंग, फुटबौल, मल्लयुद्ध, बनैती, नृत्य तथा व्यायाम प्रमुख थे । इनमें से बहुत कुछ सैनिको के चातुर्य तथा शक्ति बढ़ाने के प्रयोग में आते थे। साधारण जनता के लिये यह एक प्रकार के मनोरंजन का साधन था किन्तु इसकी श्रेष्टता विशेषरूप से नहीं समझी गयी । इतना होते हुये भी कहा जाता है कि बालकों के खेल कूद की सामग्री तथा समूह किसी देश में इतना नहीं था जितना यहां था ।

आधुनिक चीन

सदियों से चीन संसार के दूसरे भागों से प्राय: पृथक रहा किन्तु उन्नीसवीं शताब्दी से बाहर के प्रभावों से वंचित न रह सका । व्यापार बढ़ा, दूसरे धर्मावलम्बियों को वहां काम करने की आज्ञा दी गयी और इन्हीं के द्वारा पश्चिमी सभ्यता की छाप वहां के लोगों पर पड़ी । आधुनिक प्रकार के स्कूल खोले गये ।

उत्तम चिकित्सालय आरम्भ किया गया। कोरिया के युद्ध के पश्चात उनके सांस्कृतिक दृष्टिकोण में घोर परिवर्तन हुआ।

चीन की भूमि पर राजनैतिक परिवर्तन एक अत्यन्न ही महत्वपूर्ण घटना है। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में राजनैतिक अधिकार नेशनलिस्ट पार्टी के हांथ में आया जिसके अध्यक्ष चांगकाईशेक थे, साथ ही साथ कुछ कम्युनिस्ट प्रणाली के प्रशंसक भी प्रकाश में आ रहे थे। इन दोनों के बीच संघर्ष सदैव रहा। सिविल युद्ध के बाद १९४८ में नेशनलिस्ट पार्टी को चीन की मुख्य भूमि छोड़ कर फारमोसा के टाइपे में भागना पड़ा। चीन की मुख्य भूमि अब कम्युनिस्ट शासन के आधीन है जो एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण कम्युनिस्ट शक्ति है। १९५४ में इस भूमि का नाम प्युपिल्स रिपब्लिक आफ चाइना दिया गया।

चीन की मुख्य भूमि पर कम्युनिस्ट प्रशासन तथा सिद्धान्त के कारण सम्पूर्ण जीवन में घोर परिवर्तन हुये। आर्थिक संगठन की पुष्टी के लिये भूमि का विभाजन श्रमिकों, कृषिकों तथा भूमिधरों के बीच पुनः हुआ। कोओपरेटिव बैंक तथा व्यापारिक संस्थायें स्थापित की गयीं। शिक्षा राज्य के अधीन रही और दूसरी संस्थायें जो इस ओर सेवा कर रही थीं उन्हें छोड़ना पड़ा और उनकी संस्थायें सरकार के द्वारा ले ली गयी। शिक्षा अनिवार्य कर दी गयी और भिन्न भिन्न दिशाओं में जैसे तकनीकी प्रशिक्षण, माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा को प्रोत्साहित किया गया जिससे चिकित्सा, इन्जीनियरिंग, आदि के लिये उचित व्यक्ति प्राप्त हो सकें। ऐसे क्रान्तकारी राज्य में महिलाओं का स्थान पुरूषों के तुल्य होना आवश्यक था। बालकों के लिये उचित शिक्षा का प्रबन्ध था। चीन का प्रत्येक कार्य कम्युनिस्टिक ध्येय के अन्तर्गत हो रहा है। इसका मुख्य साथी तथा सहायक रूस रहा है जो संसार की सब से बड़ी कम्युनिस्ट शक्ति है। आधार एक होते हुये भी वर्तमान समय में चीन और रूस के बीच विचार में मतभेद पाया जाता है। रूसी नेता पश्चिमी विचारों को भी मान लेते है किन्तु चीन में माउत्सेतुम के विचार ही सर्वश्रेष्ट है और चीन के निवासियों का धर्म समझा जाता हैं। कुछ इस के विरूद्ध क्रान्तकारी विचार भी प्रकट हो रहे हैं और आज एक ही देश के दो विचारों में घोर संघर्ष हो रहा है।

फारमोसा की नेश्नलिस्ट सरकार की सहायता अमरीकी सरकार से होती रही है। पूर्ण सैनिक सहायता भी उन्हे वहीं से प्राप्त है। उनकी सहायता

से उनकी आर्थिक तथा युद्ध की शक्ति उत्तम दशा में है। वहां जापान के द्वारा चलाये हुये शैक्षणिक प्रणालियों में कुछ संशोधन कर शिक्षा का कार्य चल रहा है। जब से बाहर के लोगों तथा संस्थाओं को चीन में जाने और सेवा करने की अनुमति प्राप्त हुयी तथा वहां के युवक वहां से बाहर दूसरे देशों में अध्ययन के लिये गये और लौट कर आये तब से शारीरिक शिक्षा का विस्तार हुआ। जर्मन और स्वीडिश प्रणालियों का प्रचार हुआ और विशेष रूप से सेना के प्रशिक्षण में प्रयोग हुआ। वाई० एम०सी०ए० ने तथा ईसाई मिशनरियों के खोले गये शिक्षा संस्थाओं द्वारा शारीरिक शिक्षा का विस्तृत प्रचार हुआ।

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में सरकार ने शारीरिक शिक्षा को प्रशिक्षण संस्थाओं में अनिवार्य कर दिया। शिक्षकों के अभाव को दूर करने के लिये प्रशिक्षण विद्यालय खोले गये तथा विद्यार्थियों को प्रशिक्षण के लिये विदेश भेजा गया। १९१६ में प्रथम शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण संस्था स्थापित की गयी जो नेशनल सेन्ट्रल युनिवर्सिटी के नाम से विख्यात है। कुछ प्राइवेट संस्थायें भी स्थापित हुयी थीं जिन्हे कुछ समय के पश्चात सरकार ने अपने हाथ में ले लिया। महिलाओं के लिये भी शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण संस्था वाई० डब्लू० सी० ए० के द्वारा शंघाई में स्थापित की गयी। १९२९ में प्रथम रष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा कानून पास हुआ एवं यही कानून मिनिस्ट्री आफ एज्युकेशन द्वारा १९४१ में संशोधित किया गया था। इस नियम के अनुसार शारीरिक शिक्षा निर्देशक की नियुक्ति मिनीस्ट्री आफ ऐज्युकेशन से हुयी। निरीक्षकों को नियुक्त किया गया तथा सारे राज्य में एक सी शारीरिक शिक्षा दी जाने लगी।

संस्थाओं में शारीरिक शिक्षा का रूप आधुनिक है। प्रारम्भिक संस्थाओं में खेल कूद, जिमनास्टिक, तालबद्ध कार्य, मार्चिंग आदि सिखाये जाते है। माध्यमिक तथा उच्च माध्यमिक संस्थाओं में स्विडिश प्रणाली की जिमनास्टिक, खेल, एथेलेटिक्स, फुटबाल, वाली बाल सोफ्ट वाल, वासकेट वाल, तैरना तथा विभिन्न प्रकार के स्पोर्ट्स आदि सिखाए जाते हैं।

संस्थाओं में प्राय पाँच घंटे प्रति सप्ताह शारीरिक शिक्षा के लिये दिये जाते हैं।

कालेज तथा युनिवर्सिटी के लिये भी प्राय: पांच घंटे शारीरिक शिक्षा के लिये दिये जाते हैं। विशेष कार्यक्रम वाली वाल, फुटबाल, साफ्ट बाल, ट्रैक तथा

फील्ड एथेलेटिक्स, टेनिस, आपरेटस के व्यायाम, तैरना, बाक्सिग, कालेस्थेनिक, कैम्पिग, आरचरी तथा कुछ तालबद्ध क्रियायें थीं।

कम्युनिस्टिक विचारों के कारण श्रमिकों को प्रत्येक रीति से प्रोत्साहित किया जाता है। अतएव शारीरिक शिक्षा की सुविधायें औद्योगिक संस्थाओं तथा कृषिकों के लिये भी उपलब्ध हैं। पेकिंग के सेन्ट्रल इन्सटीट्यूट आफ फिजीकल कल्चर तथा दूसरी प्रशिक्षण संस्थाओं से पर्याप्त मात्रा में शारीरिक शिक्षक तथा भिन्न भिन्न विषय में कोच प्रशिक्षित किये जाते हैं जिससे शारीरिक शिक्षा का कार्य सुचारुरूप से चल सके।

चीन की शारीरिक शिक्षा को प्रोत्साहन राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय एथलेटिक खेल प्रतियोगिता के कारण मिला। जिस समय नेशनलिस्ट पार्टी का पतन हुआ उस समय सम्पूर्ण एथलेटिक खेल प्रतियोगिता आदि चाइनीस नेशनल एमेच्योर एथलेटिक फेडरेशन के हाथ में थे और उन्हीं की देख रेख में सब काम होता था। दी फार ईस्टर्न ओलम्पिक गेम्स जिसकी स्थापना १९१३ में हुयी थी बहुत ही महत्वपूर्ण था। नेशनल एथलेटिक फेडरेशन ने इस प्रतियोगिता में ४० भाग लेने वालों को भेजा और १९१५ में शंघाई में २०० भाग लेने वालों ने हिस्सा लिया था। इन के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय ओलम्पिक प्रतियोगिता में भी कई बार टीम भेजी गयी। युद्ध के पश्चात राष्ट्रीय ओलम्पिक खेल सम्पन्न किये गये थे जिसमें प्रत्येक वर्ग के लोग आनन्दपूर्वक हिस्सा लेते थे। चीन की फुटबाल टीम ने अमेरिका को तथा ब्रिटेन को अपने प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता में हराया था। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ से ही स्कूल कालेजों की आपस की प्रतियोगितायें आरम्भ हो चुकी थीं। बड़े शहरों में उनकी अपनी प्रतियोगिता वर्ष में दो बार हुआ करती थीं जिसमें प्रत्येक वर्ग भाग लेता था जिसमें बच्चे भी थे। राष्ट्रीय खेल में प्रथम प्रान्तीय प्रतियोगिता हुआ करती थी जिनमें राष्ट्र के लिये खिलाड़ी चुने जाते थे। इन प्रतियोगिताओं में लड़कियां तथा महिलायें भी भाग लेती थीं। कम्युनिस्ट चीन आज भी स्पोर्ट्स तथा खेल कूद को प्रोत्साहन देता है और देश के कोने कोने में खेल होते हैं। भिन्न भिन्न संस्थाओं के अपने स्पोर्ट्स संगठन हैं तथा सुविधायें हैं। आल चाइना एथलेटिक फेडरेशन के द्वारा सम्पूर्ण चीन के लिये राष्ट्रीय प्रतियोगिता आयोजित होती है।

५

यूनान

यूनान अपने भौगोलिक स्थिति के कारण पूर्वी तथा पश्चिमी देशों की सांस्कृतिक संयुक्ति का केन्द्र माना जाता है। यूरोपीयन देशों में से प्रथम वास्तविक सभ्यता प्राप्त करने का गर्व यूनान को ही है। संसार का कोई भी देश सभ्यता में यूनान की तुलना नहीं कर सकता। ईसा से २५०० वर्ष पूर्व यूनान में वे बातें थीं जो आज बीसवीं शताब्दी में श्रेष्ठ मानी जाती हैं। सभ्यता की उत्तमत्ता तथा प्राचीनता में यूनान ही संसार के देशों में सर्वप्रथम है।

यूनान एक पहाड़ी देश है। यह छोटे छोटे पहाड़ी टुकड़ों में बंटा हुआ था। सागर के तट पर बसा हुआ अपने को सुरक्षित तथा स्वतंत्र पाता था। संसार के मार्ग पर बसा हुआ, वाणिज्य, अन्य संस्कृतियों तथा विचारों के लाभ उसे सदा प्राप्त थे जिसका उसने पर्याप्त सहयोग लिया। जलवायु तथा वातावरण दोनों उसकी उन्नति के अनुकूल थे। सुहावने नैसर्गिक स्थितियों में स्थित यूनान की मानसिक तथा दार्शनिक शक्तियों को उच्च कोटि का प्रोत्साहन मिला जिसकी तुलना संसार में नहीं हो सकती और साथ ही वास्तविक शारीरिक विकास की नींव पड़ी जिस पर वर्त्तमान शारीरिक शिक्षा प्रणाली की इमारत बनी जिसकी हर एक ईंट में नींव के ही गुण दिखायी देते हैं।

यूनान के छोटे छोटे पहाड़ी टुकड़े अपने समय में आवश्यकतानुसार एक दूसरे से मिल कर या पृथक होकर राजनैतिक केन्द्र हो गये और बाद में सिटी स्टेट्स के नाम से विख्यात हो गये। ये सिटी स्टेट्स स्वतंत्र प्रदेशों की तरह कार्य करने लगे। यूनान के दो प्रमुख सिटी स्टेट्स स्पार्टा तथा एथेन्स थे। दोनों एक ही देश के होते हुये भी प्रायः सभी बातों में एक दूसरे से बिलकुल भिन्न थे।

यूनान, व्यक्तिगत स्वतंत्रता को प्रिय मानते हुये भी अपने समाज में समानता न ला सका। समाज में दासत्व की प्रथा थी। यूनानी और जो यूनानी नहीं थे उनकी स्थिति तथा विशेषाधिकार में अन्तर था। राजकीय पद ग्रहण करना या राजकार्य में भाग लेना, स्वतंत्रता, शिक्षा तथा भूधन प्राप्त करना केवल यूनानियों का अधिकार था। दासत्व में दूसरे देशों से विजय प्राप्त कर लाये हुये व्यक्ति होते थे। इनका मुख्य कार्य यूनान के लोगों की सेवा थी। इस प्रथा के कारण यूनानियों को पर्याप्त अवकाश मिल जाता था जिससे वे जीवन की गूढ़ बातों की ओर बहुत ध्यान दे सकते थे। वर्त्तमान संसार, विज्ञान, दर्शन, कला, संगीत, शिल्पकारी, स्वतंत्रता का प्रेम, वक्तव्य, इतिहास, उच्च शारीरिक शिक्षा, कविता, गणित, तर्कशास्त्र आदि के लिये इनका आभारी है। सूकरात, प्लेटो, अरस्तु, हेरोडोप्स्, यूसिडाइडेस, डेमोक्राइट्स, आदि महान व्यक्तियों के नाम के आगे संसार अब भी श्रद्धापूर्वक नतमस्तक हो जाता है।

वास्तव में, वास्तविक प्रगति का प्रथम रूप यूनानियों के द्वारा ही निर्मित किया गया था।

हेनरी शिल्यमन एक जर्मन विद्वान और व्यापारी था जिसने ऐजियन तट के समीप भूगर्भ की खुदाई करके यह पता चलाया कि वहां की सभ्यता बहुत ही प्राचीन थी जिसकी अवधि ईसा से पूर्व ६००० वर्ष से २५०० वर्ष अनुमान की जा सकती है इस अवधि में यूनान की भूमि पर एक काले रंग के छोटे कद वाले व्यक्तियों का, जो सभ्यता में बहुत ही उन्नतिशील थे, पता चलता है। उनके लिखित लेख में, विशाल भवन, निवासस्थान जिसमें पानी की सुविधायें थी, चित्रकारी, शक्तिशाली राज्य तथा व्यापार आदि का पूर्ण प्रमाण मिलता है। खिलाड़ियों की भी चित्रकारी भिन्न भिन्न क्रीड़ा करते हुये दिखायी गयी है। तैरने, आखेट, मल्लयुद्ध तथा महिलाओं के विशेष नृत्य पर भी प्रकाश डाला गया है।

ये निवासी न यूनानी थे न रूमी किन्तु प्रथम इन्डोयुरोपियन आने वालों से पहले के मेडिट्रेनियन वंश के व्यक्ति थे।

होमरिक युग

ईसा से प्रायः २००० वर्ष पूर्व, इन्डोयुरोपियन ने यूनान प्रायद्वीप के

उत्तरी भाग पर आक्रमण किया और ५०० वर्ष में प्रायद्वीप पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया। ये ही लोग यूनानियों के पूर्वज थे जिन्होंने वहां की प्राचीन संस्कृति को पूर्णरूप से अपनाकर परिवर्तित कर दिया।

यूनानी जीवन का चित्र तथा इस काल के इतिहास का पता अंधे कवि होमर के इलियड तथा ओडसी ग्रंथों से पता चलता है।

होमरिक युग, ईसा के पूर्व १००० वर्ष से ७५० वर्ष तक माना जाता है। आक्रमणकर्त्ता जो आकर बसे थे वे लम्बे, सुन्दर बाल वाले व्यक्ति थे। इस समय का समाज साधारण था। ग्रामीणों की तरह लोग रहते थे। अतिथियों का तथा स्त्रियों का आदर सत्कार था। धन का अनुमान पशुओं के गिनती पर था। सोना, चान्दी, स्पात आदि की जानकारी थी। श्रम की ओर श्रद्धा थी और नोबल लोग भी श्रम से नहीं हिचकिचाते थे। कोई लिखित नियम नहीं था। यूनान के धर्म का आरम्भ इसी समय हुआ था। जेऊस, यूनान के सर्वश्रेष्ठ देवता थे और बारह देवताओं की उनकी सभा थी जिनका निवासस्थान ओलिम्पिक पहाड़ था। यूनानियों का विश्वास था कि ये देवतागण यहीं से यूनान के भाग्य का निर्णय तथा नेतृत्व करते थे। इनके अतिरिक्त कुछ और भी छोटे देवता माने जाते थे। देवताओं के गुण दोष मनुष्यों के समान समझे जाते थे।

यूनान की शारीरिक शिक्षा में धार्मिक महत्व था। शारीरिक व्यायाम तथा जिमनास्टिक आदि देवताओं को प्रसन्न करने के लिये, अपने मनोरंजन के लिये तथा अंतेष्ठि क्रिया के अवसर पर किया जाता था। यूनान की शिक्षा, कविता, शिल्पकारी, मूर्ति निर्माण, जिमनास्टिक, कला, संगीत तथा नृत्य आदि में धार्मिक प्रवृत्ति तथा प्रभाव का पाना साधारण विषय था। यूनानी देवताओं की पूजा भय के कारण नहीं करते थे। आश्चर्य इसमें है कि यद्यपि यूनान का धर्म उनके धार्मिक जीवन में सदाचार तथा चरित्र उत्पन्न करने की प्रेरणा में अभाव रखता था तथापि उनके दैनिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों को उन्नतशील करने में भी बहुत अधिक समर्थ था। देवता मनुष्यों से कुछ श्रेष्ठ समझे जाते थे किन्तु मनुष्यों के लिये उनकी बराबरी करना सम्भव था। शारीरिक शिक्षा में बौक्सिग, मल्लयुद्ध, दौड़, जिमनास्टिक, रथदौड़ जेवलिन, डिस्कस, नृत्य धनुष विद्या सिखाये जाते थे। शारीरिक शिक्षा सैनिक शिक्षा के फलस्वरूप थी।

ईसा से पूर्व पाचवीं शताब्दी के आरम्भ में यूनान के सिटी स्टेट्स पूर्णरूप से विकसित हो चुके थे। ऐथेन्स ज्ञान तथा कला के केन्द्र की ख्याति पा चुका था, स्पार्टा एक शक्तिशाली सेना केन्द्र के रूप में विख्यात हो चुका था, कोरिन्थ एक उन्नतिशील वाणिज्य का केन्द्र बन गया था। ऐथेन्स के नियमों की नियमावली तैयार की गयी थी तथा प्रथम प्रजातांत्रिक राज्य की नींव डाली गई थी।

फारस को युद्ध में हराने के पश्चात यूनान में शान्ति का राज्य स्थापित हुआ और यह समय यूनान के स्वर्णकाल के नाम से प्रसिद्ध रहा। यूनान अपने गौरव के शिखर पर था। एथेन्स को सर्वत्र अधिकार था और वह जिस ख्याति तथा महत्वपूर्ण स्थान तक पहुंच गया वह आज भी एक अद्भुत विषय समझा जाता है।

स्पार्टा तथा ऐथेन्स की विरोधी भावनाओं ने पाचवीं शताब्दी ईसा से पूर्व में एक युद्ध का रूप धारण कर लिया जो २६ वर्ष तक चलता रहा। परिस्थितियों के कारण ऐथेन्स को समझौता करना पड़ा। आपस के सिटी स्टेट्स में युद्ध चलता रहा। ३३८ वर्ष ईसा से पूर्व मासिडोनियन्स ने यूनान को पराजित किया। १४६ वर्ष ईसा से पहले रोम ने यूनान पर विजय प्राप्त कर उसे अपना एक प्रदेश बना लिया।

स्पार्टा

ईसा के पूर्व सातवीं शताब्दी के अन्त में स्पार्टा ने अपने आस पास के सिटी स्टेट्स पर अधिकार करना आरम्भ कर दिया था। इस समय स्पार्टा एक बड़ी सैनिक शक्ति बन चुका था। आरम्भ ही से ये लोग देश भक्ति, वीरता तथा युद्ध आदि को पसन्द करने वाले थे। प्रत्येक स्पार्टा के नागरिक का जीवन सर्व प्रथम स्पार्टा के लिये था। सेना तथा युद्ध की ओर विशेष ध्यान देने से जीवन क्षेत्र के दूसरे अंगों का उचित विकास न हो सका।

स्पार्टा की शिक्षा का एक ही ध्येय था। वे व्यक्ति को आज्ञाकारी तथा वीर सैनिक बनाना चाहते थे। सब तरह के दुख तथा संकट को आनन्द पूर्वक सहन कर लेना उनका परम कर्त्तव्य समझा जाता था। स्पार्टा के निवासी युद्ध प्रिय थे। संसार में स्पार्टा की सेना की तुलना कहीं नहीं हो सकती किन्तु यह

उनकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बलिदान के कारण ही सम्भव हो सका। इस भावना के कारण स्पार्टा का जीवन एक संकीर्ण जीवन रहा।

बालकों के सैनिक प्रशिक्षण के साथ ही बालिकाओं को शारीरिक तैयारी का प्रशिक्षण दिया जाता था जिससे वे स्वस्थ, ठोस बच्चों को जन्म दे सकें। बालक के जन्म लेते ही राज्य कर्मचारियों के द्वारा उसका निरीक्षण होता था और यदि अस्वस्थ पाया जाता था तो मृत्यु हेतु कहीं छोड़ दिया जाता था। वात्सल्य प्रेम तथा मोह को किसी प्रकार विकसित होने नहीं दिया जाता था। अपने निकट सम्बन्धियों की युद्ध में मृत्यु से प्रसन्न होना सिखाया जाता था। सैनिक जीवन के प्रति विशेष प्रेम के कारण पारिवारिक जीवन, धनोपार्जन तथा जीवन के दूसरे अंगों की ओर ध्यान न जाये, इसकी बराबर चेष्टा की गई थी। स्वस्थ बालक माता पिता की देखरेख में सात वर्ष तक पलते थे। मां का ध्यान बच्चे के चरित्र, बलिष्ठ शरीर आज्ञा पालन, आदर, सम्मान, वीरता तथा सब तरह की सहने की शक्ति की ओर सदैव रहता था। घर के प्रशिक्षण के पश्चात वह राज्य के सार्वजनिक निवास स्थान में, जो उसका गृह तथा स्कूल दोनों था, चला जाता था और समवयस्कों के साथ रखा जाता था। यहां दलों में बटे दलनायकों के द्वारा उसका प्रशिक्षण होता था। निरीक्षक जो निःशुल्क कार्य करते थे और उच्च नागरिकों में से हुआ करते थे इन दलों के प्रशिक्षण का निरीक्षण करते थे। भोजन, वस्त्र तथा जीवन अत्यन्त ही साधारण था। उनकी दैनिक शारीरिक शिक्षा दौड़ना, कूदना, तैरना, जावलिन आदि फेंकना और दूर दूर तक पैदल चलने के रूप में होती थी।

बारहवें वर्ष में उनके दल का पुनः संगठन होता था और कुछ कठिन प्रशिक्षण का आरम्भ होता था जो बड़ों की देख रेख में होता था। अट्ठारहवें वर्ष में सैनिक गति, चातुर्य, हथियारों का प्रयोग आदि की ओर अधिक ध्यान दिया जाता था। बीसवें वर्ष में युवक दल नायक होता था, कठिन सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त करना पड़ता था। देश के आधीन होने की शपथ ग्रहण करनी पड़ती थी। उसकी कठिन परीक्षा होती थी। दल के भोजन आदि आवश्यकताओं का भार उसी के ऊपर रहता था। वह इन आवश्यकताओं की पूर्ती के लिये जो चाहे कर सकता था, चाहे वह चोरी के द्वारा ही क्यों न हो किन्तु उसके साथ यह भी शर्त थी कि वह चोरी करते समय पकड़ा न जाये अन्यथा वह घोर दण्ड का भागी

होगा। इस आयु में वह वास्तविक युद्ध में भाग लेता था। तीस वर्ष तक उन्हें पूर्ण व्यायाम आदि अपने सैनिक जीवन के कार्य के उपरान्त करना पड़ता था।

तीस वार्ष की आयु में उसे गृहस्थ जीवन में पदार्पण करना पड़ता था तथा स्पार्टा के निमित्त स्वस्थ बच्चों को जन्म देना पड़ता था। इस समय उसे पूर्ण नागरिकता प्राप्त होती थी और कांऊसिल में वह अपना स्थान ग्रहण करता था। इस समय भी वह सार्वजनिक निवास स्थान में रहता, वहीं खाता था और सैनिक सेवा करता था। इस अवस्था में बालकों को प्रशिक्षित करने में सहायता भी देता। स्पर्टा का प्रत्येक प्रौढ़ नागरिक एक शिक्षक होता था। बालकों की शिक्षा व्यवसायिक जिमनास्टिक प्रशिक्षकों या वेतन प्राप्त शिक्षकों के द्वारा नहीं दी जाती थी किन्तु यह उत्तरदायित्व नागरिकों का होता था। प्रायः साठ वर्ष की आयु तक राज्य सेवा में रहते थे। यदि उनकी आवश्यकता होती थी तो सेवा के लिये रोक लिये जाते थे।

स्पार्टा का सम्पूर्ण ध्यान सैनिक शिक्षा की ओर था और जो कुछ भी होता इसी से सम्बन्धित रहता था। शारीरिक विकास के हेतु जिमनास्टिक के व्यायाम कराये जाते थे। कार्य क्रम में विशेष रूप से दौड़ना, लड़ना, तैरना, कूदना, कुश्ती, आखेट, बाक्सिग, घुड़सवारी, गेन्द के खेल, डिस्कस, जावलिन आदि फेंकना और लम्बी हांइकिंग होती थी। सब तरह की कठिनाई, दुःख आदि को सहन करना उनके प्रशिक्षण का एक मुख्य विषय था। गीत एवं संगीत भी उन्हें सिखाये जाते थे।

स्पार्टा की महिलाओं के लिये भी पुरुषों की तरह जिमनास्टिक प्रशिक्षण होते थे। उन्हें सार्वजनिक निवास स्थान में नहीं रहना पड़ता था। कुश्ती तथा तैरने में महिलायें भाग लेती थीं। मार्चिंग तथा नृत्य भी उनके कार्यक्रम में था। महिलाओं को बीस वर्ष के बाद व्यायाम नहीं कराया जाता था। महिलायें जावलिन, डिस्कस फेंकने में भाग लेतीं थीं। पहाड़ी पर चढ़ना, कौशल चातुर्य तथा शक्ति की प्रतियोगिता उनके लिये होती थी।

धार्मिक उत्सव के समय महिलायें युवकों के साथ साथ निकलती थीं तथा उनके सम्मुख गाती और नृत्य करती थीं। स्पार्टा के लोग नृत्य में बहुत ही रुचि रखते थे। उन्हें युद्ध भी एक प्रकार का नृत्य ही मालूम पढ़ता था।

युद्ध नृत्य बहुत ही लोकप्रिय थे। महान दार्शनिक प्लेटो ने यूनानी नृत्य के तीन प्रकार बताये थे। सैनिक नृत्य, पारिवारिक या गृह नृत्य तथा ध्यानात्मक नृत्य।

ऐथेन्स

एथेन्स की प्रथम राज्य प्रणाली नोबल्स के द्वारा राज काज करने की थी। स्पार्टा की अपेक्षा यहां का समाज प्रगतिशील, उदार तथा स्वतंत्रता प्रिय था। राज काज तथा युद्ध में लीन होते हुये भी सांस्कृतिक कार्यों में बहुत भाग लेते थे। आर्थिक दशा में भी उन्नति हुयी। नागरिकों को अब और अधिक भू धन प्राप्त हो गया था अतएव भू धन वर्ग की भी वृद्धि हुयी। प्राय: एक शताब्दी के आन्तरिक संघर्ष के पश्चात ऐथेन्स में प्रजातांत्रिक राज्य स्थापित हुआ। ईसा के ५०९ वर्ष पूर्व एक विधान भी बनाया गया।

प्रजातांजिक प्रणाली के होते हुये ऐथेन्स में दासत्व की प्रथा थी जिन्हें सब प्रकार का शारीरिक परिश्रम करना पड़ता था। इस प्रथा के कारण ऐथेन्स में यूनानियों को ज्ञान तथा मानसिक कार्यों में सम्पन्न रहने के लिये पर्याप्त अवकास प्राप्त होता था। इस अवकाश का सदोपयोग बहुत अधिक हुआ। यूनान के वास्तविक नागरिकों का कर्त्तव्य अपने स्टेट की सेवा करना, सांस्कृतिक तथा मानसिक स्तर को ऊंचा करना, अपने शरीर को स्वस्थ तथा क्रियाशील रखना था जिसका उन्होंने भली भांति प्रतिपालन किया।

ऐथेन्स की शिक्षा का मुख्य ध्येय व्यक्तित्व का विकास था। वे मन आत्मा तथा शरीर को व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण अंग मानते थे। पूर्ण विकास के लिये इन तीनों का बराबर विकसित करना अनिवार्य था। सदाचार के प्रति उनका विचार आधुनिक विचार से भिन्न था। नागरिकता का दायित्व, देवताओं के प्रति श्रद्धा, बड़ों के लिये आदर सम्मान तथा स्टेट के लिये भक्ति ही सदाचार समझा जाता था।

बालक के जन्म लेने पर पिता निर्णय करता था कि वह जीवित रहेगा कि नहीं। बालक सात वर्ष तक माता तथा दाई की देख रेख में रहते थे और उन्हीं के द्वारा उनकी शिक्षा होती थी।

ऐथेन्स के बालकों की प्रारम्भिक शिक्षा, शारीरिक शिक्षा, संगीत तथा व्याकरण में हुआ करती थी। सातवें वर्ष से लड़कों की शिक्षा आरम्भ होती थी। लड़कियां घरों में ही रहती थीं। ऐथेन्स की शिक्षा का प्रमुख ध्येय वहां के सामाजिक, धार्मिक राजनैतिक तथा सैनिक जीवन के योग्य बनाना था। राज्य के द्वारा लड़कियों की शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं था। जो कुछ भी शिक्षा वे प्राप्त करतीं वह घर में ही दी जाती थी। प्रजातांत्रिक ऐथेन्स में स्त्रियों का अधिकार प्राय: नहीं के बराबर था।

ईसा के ४०० वर्ष पूर्व ऐथेन्स में एक प्रकार की माध्यमिक शिक्षा का आरम्भ हो गया था। चौदह से अट्ठारह वर्ष की आयु तक एक शिक्षक सदैव युवक के साथ साथ रह कर उसे भिन्न भिन्न विषयों में शिक्षित करता था।

अट्ठारहवें वर्ष में युवक प्रौढ़ माने जाते थे। इस समय उन्हें सेना में भर्ती होना पड़ता था। इस समय उन्हें यूनान की प्रसिद्ध प्रतिज्ञा लेनी पड़ती थी। प्रतिज्ञा थी, "मैं पवित्र हथियार का अपमान कभी नहीं करूंगा। युद्ध में अपने साथियों को नहीं छोड़ूंगा। मैं व्यक्तिगत रीति तथा सामूहिक रीति से मंदिरों और सार्वजनिक धन की रक्षा करूंगा। मैं अपनी पैतृक भूमि को जितना मैंने प्राप्त किया है उससे अधिक प्रदान करूंगा। मैं राज्य के अधिकारियों की, जो राज्य करेंगे आज्ञा मानूंगा। मैं प्रचलित नियमों का तथा जो भविष्य में सर्वसम्मति से बनेंगे उनका पालन करूंगा। यदि कोइ इसके विरुद्ध कार्य करेगा तो मैं व्यक्तिगत तथा सामूहिकरूप से इन नियमों की रक्षा करूंगा। मैं अपने पैतृक धर्म का सम्मान करूंगा जिसके लिये मैं देवताओं की शपथ लेता हूं"

इसके पश्चात दो वर्ष का सैनिक प्रशिक्षण होता था। इस अवसर के पश्चात यदि कोई युद्ध नहीं होता तो वह किसी भी व्यवसाय के लिये स्वतंत्र कर दिया जाता था। ऐथेन्स की यह विशेषता थी कि चाहे व्यक्ति किसी भी व्यवसाय में व्यस्त क्यों न हो वह एक जिमनास्ट सदैव ही रहता था क्योंकि उनके विचार में जिमनास्टिक का अर्थ प्रसन्नता, स्पोर्ट, स्वास्थ्य, सुडौल शरीर, मनोरंजन, सामाजिक मेल जोल, शिष्टाचार का प्रशिक्षण, व्यक्तित्व का पूर्ण विकास, ख्याति तथा सम्मान इत्यादि से था।

ईसा के पूर्व पहली तथा दूसरी शताब्दी में सैनिक संस्थाओं में, जिसे यूनानी में इफेबिया कहते थे, घोर परिवर्तन हुआ। शारीरिक शिक्षा तथा सैनिक शिक्षा जिन पर विशेष ज़ोर दिया जाता था उनके साथ ही धार्मिक रीतियों तथा उत्सव पर भी पर्याप्त ध्यान दिया जाने लगा। कार्यक्रम में साहित्य, वाक पुटता तथा दर्शन के भी आजाने से संस्था का सैनिक प्रभाव जाता रहा।

शारीरिक शिक्षा संस्थायें पालेस्ट्रा के नाम से प्रसिद्ध थी। ये अनेकों थीं तथा किसी नदी या नहर पर स्थित होती थीं जहां स्नान एवं तैरने की सुविधा हो सके। इनकी महत्ता की वृद्धि के साथ साथ इनकी सुविधाओं में भी विस्तार हुआ। पालेस्ट्रा में कमरे होते थे जहाँ वस्त्र उतारे और पहने जाते थे क्योंकि व्यायाम नग्न अवस्था में किया जाता था। तेल लगाने के लिये तथा बालू से भरे पृथक कमरे थे। मनोरंजन के खेल के लिये भी कमरा था। बनावट के बीच में एक चौकोर खाली खुला स्थान हुआ करता था जिसमें कुश्ती वौक्सिग, तथा कूदने अदि के अभ्यास की सुविधा थी। यह स्थान जावलिन फेंकने, डिस्कस फेंकने तथा दौड़ने के लिये यदि छोटा पड़ता तो इमारत के बाहर खुले मैदान में इनका अभ्यास किया जा सकता था। पालेस्ट्रा का स्वामित्व निजी होता था किन्तु ये राजकीय नियमों के द्वारा निर्देशित होते थे। यहा के प्रशिक्षण कार्य के हेतु प्रत्येक विषय में विशेषज्ञों की नियुक्ति होती थी। प्रौढ़ अवस्था प्राप्त करने के पश्चात व्यक्ति पालेस्ट्रा को त्याग कर जिमनेजियम का सदस्य हो जाता था।

ऐथेन्स के प्रौढ़ों की सेवा के लिये सरकार ने तीन प्रसिद्ध जिमनेजियम स्थापित किये थे। इनका नाम था एकाडमी, लाइसियम तथा साइनासारगस। इमारत तथा सुविधायें पालेस्ट्रा के समान ही थीं। इनकी स्थिति भी पालेस्ट्रा के समान ही नहर या नदियों पर थी जहां स्नान तथा तैरने की सुविधा के साथ मनोहर वातावरण में भ्रमण करने, वार्तालाप वादविवाद आदि के लिये भी प्रबन्ध था। ऐसी अवस्था में इनका शहर के बाहर स्थित होना स्वाभाविक था। ईसा के पूर्व दूसरी तथा तीसरी शताब्दी के समीप जिमनेजियम के संगठन तथा सुविधाओं में अत्यन्त ही उन्नति हुयी थी। एक मुख्य विशेषता जो कदाचित् संसार के किसी और देश में नहीं थी वह यह थी कि इन जिमनेजियम में जो विशेषत: शारीरिक प्रशिक्षण संस्थायें थीं उनमें उंच्च कोटि के दर्शन, संस्कृति तथा गायन

की भी व्यवस्था थी और प्लेटो, अरस्तू, सुकरात ऐसे महानुभाव, दार्शनिक और महान व्यक्ति भाग लेते थे। यहां तक कि ये ज्ञान तथा मानसिक शिक्षा के सामाजिक केन्द्र के रूप में विख्यात हो गये।

ईसा के पूर्व छठी तथा पांचवी शताब्दी में ऐथेन्स की शारीरिक शिक्षा अपने शिखर पर थी। फारस के युद्ध ने शारीरिक शक्ति की महत्ता को प्रदर्शित कर दिया था। पांचवी शताब्दी ईसा से पूर्व सोफिस्ट के आने से शारीरिक शिक्षा की ओर रुचि क्षीण होने लगी। ये सोफिस्ट भ्रमण करने वाले शिक्षक व्यक्तिगत तथा स्वतंत्र विचार की रीति का प्रचार करते थे। ख्याति जो पहले, जन्म तथा स्टेट की सेवा से मिलती थी वह शक्ति तथा धन के द्वारा अर्जित की जाने लगी। व्यक्तिगत लालसाओं की पूर्ति की ओर ध्यान आकर्षित ने लगा। पुरानी रीतियां, संस्कृति, राजनैतिक कार्य, धार्मिक विश्वास, तथा सदाचार के ऊपर प्रश्न उठने लगे और विभिन्न प्रकार से उनका उत्तर दिया जाने लगा। इसी समय विख्यात दार्शनिक सुकरात ने प्रचार किया था कि शिक्षा का मुख्य ध्येय सही ज्ञान है न की वंशपरम्परा का ज्ञान। शारीरिक शिक्षा में व्यवसायिक भावना का कुपरिणाम हुआ। उत्सव जो धार्मिक भावनाओं के कारण लोक प्रिय थे उनमें वह भावना न रही। एक नये प्रकार के व्यायाम का आविष्कार हुआ जिसे स्वास्थ्य व्यायाम कहा गया। इस व्यायाम की प्रथा को जिमनास्टिक कहा गया जिसका अर्थ था प्रशिक्षण या ट्रेनिंग के लिये व्यायाम। इस प्रथा के कारण पहली प्रथा की ओर रुचि कम हो गयी। इन सब कारणों की ऐथेन्स के शारीरिक शिक्षा में घोर पतन हुआ।

ऐथेन्स तथा स्पार्टा के इतिहास को देखते हुये यह निश्चित है कि ऐथेन्स स्पार्टा से प्रायः सभी बातों में श्रेष्ठ था किन्तु आश्चर्यजनक बात यह है कि स्पार्टा स्त्रियों के सम्मान, शिक्षा तथा प्रशिक्षण में बहुत ही ऊंचा था और ऐथेन्स में स्त्रियों की दशा पूर्वी देशों की तरह ही निम्न कोटि की थी।

पान हेलेनिक गेम्स

यूनान के साधारण खेल जो होमरिक युग में हुआ करते थे वे शनैः शनैः असाधारणरूप में संगठित हो गये। ऐतिहासिक तथ्यों से पता चलता है कि ईसा की बारहवीं शताब्दी पूर्व ओलम्पस पहाड़ के नीचे एक ग्राम था। ईसा से

८०० वर्ष पूर्व जेऊस देवता के सम्मान में यहां बलिदान चढ़ाये जाने का पता चलता है। ये बलिदान केवल उत्सव के समय चढ़ाये जाते थे अतएव खेलों के आरम्भ की यही तिथि हो सकती है। लेखक औलम्पिक खेलों का अनुमान ईसा के पूर्व ७७६ वर्ष से करते हैं। एक ही शताब्दी के अन्तर्गत खेल ने एक राष्ट्रीय उत्सव का रूप धारण कर लिया।

यह खेल उत्सव प्रत्येक चौथे वर्ष ग्रीष्म ऋतु में १० न्यायकर्त्ताओं के निरीक्षण में, जो ऐलिस के नागरिको के द्वारा चुने जाते थे, सम्पन्न हुआ करता था। खेल प्रारम्भ होने के एक माह पूर्व प्रतियोगी अपने आप को न्यायधीशों के सम्मुख परीक्षा के लिये लाते थे। केवल वे ही प्रतियोगी खेल में भाग ले सकते थे जो शुद्ध यूनानी हों कभी किसी प्रकार के कुकर्म के लिये दंडित न हुये हों, प्रतियोगिता होने के १० माह पूर्व किसी जिमनेजियम में लगातार अभ्यास करते या प्रशिक्षण पा रहे हों तथा अन्तिम माह में न्यायाधीशों के सम्मुख ऐलिस के बड़े जिमनेजियम में अभ्यास कर रहे हों। प्रतियोगियों के नाम एक श्वेत पट पर लिखकर ओलम्पिया में किसी प्रमुख स्थान पर रख दिए जाते थे।

खेल के इस उत्सव के आरम्भ होने के ग्याहरवें दिन पूर्व न्यायाधीश युद्ध करने वाले सिटी स्टेट्स से एक माह की शान्ति की प्रार्थना करते थे इस कारण ओलम्पिया एक निष्पक्ष क्षेत्र हो जाता था। इस कारण किसी के आने जाने का भय नहीं होता था। खेल के समय हज़ारों दर्शक उपस्थित होते थे। भिन्न भिन्न सिटी स्टेट्स के प्रतिनिधित इस अवसर पर उपस्थित होते थे और जुलूस में भाग लेते थे। यह एक उपयुक्त तथा लाभप्रद अवसर सिद्ध हुआ करता था क्योंकि राजनैतिक राजदूत शान्ति वार्त्तालाप का अवसर प्राप्त करते थे, कलाकार अपनी कला का प्रदर्शन करते थे, शिक्षक तथा प्रचारक अपने विचारों को प्रकट करते थे, व्यापारी व्यापार करते थे तथा यह एक ऐसा अवसर था जिस समय महत्वपूर्ण सम्पर्क स्थापित किया जा सकता था। सबसे विशेष बात यह थी कि लड़कियों तथा महिलाओं के वहां आने की आज्ञा नहीं थी।

खेल ग्रीष्म ऋतु के दूसरे या तीसरे सरे पूर्णमासी के समय से आरम्भ होता था और पांच दिन तक चलता रहता था। सर्वप्रथम देवता जेऊस के सामने बलिदान चढ़ाया जाता तथा उनकी पूजा होती थी। प्रतियोगियों तथा

प्रशिक्षकों को वहां खड़े होकर शपथ लेनी होती थी कि वे किसी चीज़ में अनुचित प्रयोग नहीं करेंगे। न्यायकर्ता खेल का निरीक्षण करते थे और आवश्यकता अनुसार अपना निर्णय देते थे। विजेता के सिर पर जैतून की डाल का ताज रखा जाता था जो जेऊस के मंदिर के पवित्र बगीचे से सुनहरे हंसिये से एक, शुद्ध यूनानी बालक के द्वारा जिसके माता पिता जीवित होते थे, काटा जाता था। यह एक प्रकार की धार्मिक प्रथा सी हो गयी थी।

ओलम्पिक खेल के साथ तीन और खेल हुआ करते थे जो दूसरे देवताओं के नाम से थे। पायथियन खेल डेलफी में अपोलो देवता के नाम पर ओलम्पिक खेल के तीसरे वर्ष होता था। नीमियन खेल प्रत्येक दूसरे वर्ष अरगोलिस के निमिया में होता था। इस्थीमियन खेल पोसिडोन देवता के नाम पर ओलम्पिक खेल के दूसरे तथा चौथे वर्ष हुआ करता था। अनेक और खेल भी हुआ करते थे। इन खेलों के मुख्य विषय निम्नलिखित हैं :

पेन्टाथलोन, इस प्रतियोगिता के लिये पांच विषयों में भाग लेना पड़ता था। दौड़ना, कूदना, जेवलिन, डिसकस् फेंकना तथा मल्लयुद्ध। इसी के द्वारा सर्वोत्तम प्रतियोगी का पता चलाया जाता था। दौड़ सब से पुराना तथा रुचिकर विषय हुआ करता था। इस में 'हीटस्' हुआ करती थी' प्रतियोगी खड़े होकर, नंगे पैर तथा निर्वस्त्र अवस्था में दौड़ते थे। हथियार वन्द दौड़ में घुटना टेक कर दौड़ आरम्भ की जाती थी। हथियार बन्द दौड़ कदाचित सैनिक व्यायाम के कारण की जाती थी। 'ब्रौड जम्प' तथा 'हौप स्टेप एण्ड जम्प' कूदने के केवल दो तरीके थे। प्रत्येक प्रतियोगी एक ही 'टेक आफ' से कूदता था। 'जम्पिग पिट' की मिट्टी मुलायम तथा बराबर हुआ करती थी। जेवलिन फेंकना सर्वप्रिय विषय था। यह युद्ध तथा आखेट के लिये भी प्रयोग किया जाता था। जेवलिन ८ से १० फुट लम्बी होती थी। जेवलिन दो प्रकार से फेंकी जाती थी। समानान्तर पकड़ कर तथा नोक उपर की ओर उठा कर। यह वर्तमान फिनिश तथा अमेरीकन फेंकने की रीतियों से मिलते जुलते थे। यह समानान्तर प्रकार के युद्ध तथा आखेट में विशेष रीति से प्रयोग होता था। जेवलिन बीच में मुट्ठी के लिये बंधा होता और उंगलियों के लिये एक फन्दा होता था।

पहले वज़न फेंकने के लिये धातु या पत्थर प्रयोग किये जाते थे। कुछ

दिनों के पश्चात डिस्कस के रूप में चपटे पत्थर फेंके जाते थे। इनके वज़न तथा रूप भिन्न भिन्न होते थे।

कुश्ती भी एक सर्वप्रिय विषय था। यह सर्वांगीण विकास के लिये अत्यन्त ही उपयुक्त समझा जाता था। यह विषय अलग से तथा 'पेन्टाथलोन' के लिये भी हुआ करता था। कुश्ती खड़े होकर तथा ज़मीन पर दोनों तरह से हुआ करती थी। विरोधी को तीन बार गिराने से विजय प्राप्त होती थी। दांव पेंच के कोई विशेष नियम नहीं थे किन्तु जिस दांव पेंच से किसी प्रकार की कठोर पीड़ा होती थी वह उचित नहीं समझा जाता था। पालेस्ट्रा और जिमनेज़ियम में जमीन की कुश्ती सर्वप्रिय थी अन्यथा खड़े होकर लड़ना प्रिय था।

बौक्सिग के लिये प्रतियोगियों का जोड़ा कुश्ती के प्रतियोगियों की तरह बनाया जाता था। 'ग्लवस' के स्थान पर सूखा चमड़ा प्रयोग किया जाता था। प्रतियोगी उस समय तक लड़ते रहते थे जब तक एक गिर न जाता या आपस में सलाह कर के समाप्त न कर दें। बौक्सिग में जोड़ा वजन के आधार पर नहीं होता था अतएव कोई किसी से भी टक्कर ले सकता था।

ईसा से पूर्व सातवीं शताब्दी में बौक्सिग तथा कुश्ती को संयुक्त कर जिजिट्सू के समान एक विशेष प्रयोग किया गया जिसे पानक्राटियोन कहते थे। यह एक प्रकार की स्वतंत्र लड़ाई थी जिसमें काटने या सांस घोटने को छोड़ सभी चातुर्य्य दांव पेंच प्रयोग किये जा सकते थे। जब तक कोई हार न मान ले लड़ाई होती रहती थी। रथ दौड़ तथा घुड़ दौड़ भी इन उत्सव खेलों में हुआ करते थे। पहले यह स्टेडियम के अन्दर ही हुआ करता था किन्तु प्रतियोगियों के बढ़ जाने से स्टेडियम के बाहर घुड़ दौड़ का क्षेत्र बनवाया गया था।

इन खेलों के विजेताओं का विशेष सम्मान किया जाता था। इनकी मूर्तियां बनायी जाती थीं तथा इनके ऊपर कविता रची जाती थी। जैसे जैसे समय व्यतीत होता गया पुरस्कार में परिवर्तन आते गये। पुरस्कार के रूप में धन प्राप्त होने लगा जो कि इन खेलों के पतन का एक कारण बन गया।

भिन्न भिन्न सिटी स्टेट्स में प्रतियोगिता की भावना के कारण व्यवसायिकता का प्रचलन अधिकतर बढ़ गया। विजय प्राप्त करने के लिये अनुचित अभ्यास भी किये जाने लगे। इन कारणों से भी खेल का पतन हो गया।

चौथी शताब्दी में मासिडोनिया ने यूनान पर विजय प्राप्त की। सिकन्दर महान ने तथा उनके पिता ने यूनानियों के ज्ञान के उच्च स्तर को सराहा तथा खेलों को प्रोत्साहित किया। यद्यपि वे ऐथेलेटिक्स तथा पालेस्ट्रा के व्यायामों को तुच्छ दृष्टि से देखते थे।

रोम ने मासिडोनिया के पश्चात यूनान पर विजय प्राप्त की। वे व्यायाम के महत्व को अवश्य समझते थे और सराहते भी थे किन्तु उनके लिये यूनानियों की तरह उसके प्रति श्रद्धा और प्रशिक्षण का होना रूमी प्रवृति के विरुद्ध था। रोम राज्य के एक ही शताब्दी के अन्दर यूनानी खेलों का प्रायः अन्त हो चला था।

इतना होते हुये भी यूनानियों ने रूमियों को अत्यन्त प्रभावित कर रखा था। ईसा से पूर्व एक शताब्दी पहले रूमियों ने पुनः पुराने यूनानी उत्सवों का उद्घाटन किया। इस समय रोम के धनाढ्य इस प्रतियोगिता में भाग लेने लगे थे। रोम की क्रूरता का प्रभाव इन खेलों पर अत्याधिक पड़ा क्योंकि रूमियों का ग्लाडोटोरियल खेल का भी उद्घाटन हो चुका था तथा यह जनता को बहुत भाता भी था। बौक्सिग में भी ग्लवज़ (Gloves) कांटे दार हुआ करते थे रूमियों की रक्त की प्यास ने खेल ऐथेलेटिक्स तथा के एक श्रेष्ठ काल का अन्त कर दिया। थियडोसियस प्रथम ने जो एक कट्टर मसीही था ई० स० ३९४ में इन खेलों को कानून द्वारा समाप्त करवा दिया।

६

रोम

ईसा से पूर्व ४०० वर्ष का वह समय था, जिस समय दो तीन शताब्दियों की उच्च शारीरिक शिक्षा के पश्चात यूनान पतन की ओर जा रहा था। इसी समय एक भिन्न प्रकार के लोग जो सभ्य, ज्ञानी, उच्च विचार तथा चरित्र के, सौन्दर्य प्रेमी अथेनियन नागरिकों से बिल्कुल भिन्न थे, विख्यात सात पहाड़ पर जो टाइबर नदी के तट पर था, बस रहे थे। ये बलवान चरवाहे तथा चालाक व्यापारी, परिश्रमी, ईमानदार, अल्पव्ययी, देवताओं का आदर करने वाले तथा दूसरों के साथ कटुव्यवहार करने वाले थे। इन गुणों को वह परम्परागतरूप में स्थायी देखना चाहते थे। आरम्भ ही से इन्होंने अपनी संगठन शक्ति तथा सैनिक वीरता का परिचय दिया। इनकी यही योग्यता रोम को आने वाली सदी में इटली का स्वामी बनाने वाली थी तथा सम्पूर्ण मेडिटरेनियन पर प्रभुत्व विस्तृत करते हुये सारे संसार के राज्यों को इनके हाथों में सौंपने वाली थी। इनका स्वाभाव बहुत कुछ स्पार्टा के लोगों से मिलता था। शिक्षा इनके लिये वह विद्या-थी जो जीवन कार्य को सार्थक बना सके। इनका मुख्य ध्येय एक अच्छा नाग-रिक, उत्तम सैनिक तथा नागरिक जीवन में भाग लेने के लिये तत्परता का था। व्यायाम आदि का मूल्य केवल शारीरिक वृद्धि तथा सैनिक तैयारी के हेतु था।

ईसा के पूर्व तीसरी शताब्दी में जब तक वाह्य शक्तियों का असर नहीं हुआ तब तक बालकों की शिक्षा घर पर माता पिता के द्वारा ही होती थी। इनके निरीक्षण में बालक वंशपरम्परा की संस्कृति समझता। लिखना, पढ़ना, और गणित सीखता तथा स्टेट तथा घर की देख रेख के विषय में सीखता था।

परिवार में पिता सर्व प्रधान होता था। परिवार का सर्वश्रेष्ठ ध्येय अपने देश की सेवा थी। बहुत ही पहले इनकी यह भावना बन चुकी थी

कि भविष्य में एक समय आयेगा जब रोम सारे संसार पर राज्य करेगा। अतएव परिवार का कर्त्तव्य रोम के लिये बलिष्ठ बच्चों के लालन पालन का था। बच्चों के पास आधुनिक बच्चों की तरह खेलने की सामग्री थी। गेन्द का खेल सर्वप्रिय था। बच्चों के खेलों में भी सैनिक प्रभाव की मात्रा थी। माता पिता प्रत्येक क्षण बालकों में जाति की श्रेष्ठता, आज्ञापालन, ईमानदारी, साहस, वीरता, औद्योगिकता, देशभक्ति तथा देवताओं के प्रति श्रद्धा की शिक्षा देते रहते थे।

रोम के बारह टेबल्स जो इसके पूर्व सन ४५० में लिखे गये थे रोम के जीवन, समाज, धर्म, विचार तथा संस्कृति का वर्णन प्रस्तुत करते हैं। बालकों को इन्हें कंठस्थ करना पड़ता था।

चौदह से सत्तरह वर्ष की आयु के बीच बालक बालिग समझा जाता था। इस अवसर पर उत्सव होता था और उसका नाम रोम के नागरिकों में लिखा जाता था। इसके पश्चात सेना की सेवा उसके लिये अनिवार्य होती थी। सतरह से पैंतालिस वर्ष तक के पुरुष सेना में भरती किये जाते थे।

युद्ध देवता 'मार्स' के नाम पर एक मैदान समर्पित था जिसे केम्पस मारीशस कहा जाता था। यह सरवियन दीवार के बाहर स्थित था। यह एक सैनिक 'परेड ग्राउन्ड' था जहां सैनिक प्रशिक्षण हुआ करता था। यह प्रशिक्षण बहुत कठिन होता था। दौड़, कूद, कुश्ती, घुड़सवारी, तैरना, सशस्त्र तथा अशस्त्र झूठी लड़ाई सिखायी जाती थी। भारी हथियारों के साथ पैदल लम्बी यात्रा करनी पड़ती थी।

काम्पस मारीशस में उत्सव समारोह तथा खेल भी हुआ करते थे। जो युवक सेना में नहीं थे उनके लिये भी यह मनोरंजन का स्थान हुआ करता था। यहां कभी भी युवक एथलेटिक, तैरने, तथा खेल आदि की आपसी प्रतियोगिता में भाग लेते हुये दिखायी देते थे। रोम राज्य के अन्तिम दिनों में यह एक अत्यन्त ही सुन्दर स्थान में परिवर्तित कर दिया गया था।

रोम को युद्धों में सफलता उसके युवकों के सैनिक शिष्टाचार तथा शारीरिक प्रशिक्षण के कारण हुयी। ईसा से पूर्व सन २६५ में सम्पूर्ण इटली रोम के आधीन आ गया। इसकी दूसरी शताब्दी के अन्त में कारथेज, स्पेन, मेडीटरेनियन महाद्वीप, गौल का भाग, यूनान तथा एशिया माइनर ने रोम के सम्मुख

अपना सर नीचा कर दिया । ईसा के ३१ वर्ष पूर्व रोम का साम्राज्य सारे मेडीटरेनियन जगत पर था । रोम की सभ्यता पर इस विजय का अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा । अन्य देशों के सम्पर्क ने जो उससे कहीं अधिक विकसित थे रोम के निवासियों के दृष्टिकोण को विस्तृत कर दिया । धन ने दरिद्रता दूर की, विलासमय जीवन ने साधारण जीवन का स्थान लिया । दूसरे देशों से लाये हुये दासों ने निःशुल्क सेवा की । अन्य देशों से सस्ते अनाज लाने के कारण कृषि की आवश्यकता नहीं रही । अधिक समय तक युद्ध की आवश्यकता ने एक स्थायी व्यवसायिक सेना स्थापित कर दी थी ।

संसार की एक प्रमुख शक्ति होने के कारण स्कूलों की आवश्यकता हुयी जहां नेता, प्रबन्धकर्त्ता, वक्ता आदि उत्पन्न किये जा सकें । घर ने अपनी इस शिक्षा का दायित्व इन संस्थाओं को सौंप दिया । यहां विशेष दास शिक्षक, जो दूसरे देशों से लाये गये थे, शिक्षा प्रदान करते थे । प्रारम्भिक संस्थाओं में लिखना, पढ़ना तथा गिनती गणना सिखायी जाती थी । ग्रामर स्कूलों में यूनानी भाषा तथा यूनान और रोम के साहित्य सिखाये जाते थे । वाकपटुता के स्कूलों में वाकपटुता, रचनात्मक लिखना, नियम व व्यवस्था तथा दूसरे महत्वपूर्ण विषयों की शिक्षा होती थी । यद्यपि संगठन सिद्धान्त प्रणाली तथा शिक्षक सभी यूनानी थे तब भी संगीत तथा जिमनास्टिक रोम की शिक्षा के अनिवार्य अंग नहीं बन सके जब कि यूनानी इन दोनों विषयों के बगैर शिक्षा को अपूर्ण मानते थे । प्रत्येक रोमन के लिये तैरना जानना आवश्यक था ।

साम्राज्य के अन्तिम दिनों में धनी नागरिक विलासपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगे थे । छोटे छोटे जागीरदार कमी का अनुभव करने लगे थे । इन कारणों से पहले की देश भक्ति तथा त्याग में शिथिलता आ गयी थी । फलस्वरूप राजनैतिक बुराइयां, घूस लेना, नागरिक स्वतंत्रता की क्षीणता हुई तथा कठोर मनमाना व्यवहार करने वाले सम्राट रोम में हो गये ।

साथ ही धार्मिक प्रभाव शक्तिहीन हो गया, अधिकतर स्त्री त्याग होने लगे तथा बालकों के जन्म में कमी होने लगी । रोम, संसार की एक प्रमुख शक्ति होते हुये भी इन कारणों से निर्बल हो गया ।

वैभव का पल्लवित होना, मानसिक प्रशिक्षण की आवश्यकता तथा व्यवसायिक सेना के कारण रोम की जनता की शारीरिक शिक्षा में जो रुचि थी उसमें कमी आ गयी । इसी समय कुछ राष्ट्रीय खेल उत्पन्न हो रहे थे जिनसे

शारीरिक शिक्षा को कोई विशेष लाभ न था। उन खेलों में भाग लेने वालों के लिये वह बहुत भयानक हुआ करता था। इनका जनता पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। ये खेल सरकस तथा ऐम्पीथियेटर के थे।

सरकस एक २००० फुट लम्बा तथा ६०० फुट चौड़ा क्षेत्र था जहाँ २००,००० दर्शक बैठ सकते थे। इसके अन्दर चारों ओर एक छोटी दीवाल होती थी जिसे सपीना कहते थे। इसी गोलाई में रथ दौड़ होती थी। भाग लेने वाले सपीना के ४०० फुट की दूरी पर खड़े होते थे। प्रत्येक रथ में चार घोड़े होते थे। यह दौड़ तेजी से नहीं होती थी किन्तु अत्यन्त भयानक तथा उत्तेजनात्मक हुआ करती थी। दो से चार मील तक की दौड़ होती थी। दौड़ में किसी प्रकार की गलती के लिये कोई दण्ड नही था। कभी भी ऐसी दौड़ नहीं होती थी जिसमें कोई मृत्यु न हो। जनता जीतने वालों के उपर बाज़ी लगाती थी।

ग्लाडिटोरियल कमबैट्स प्रदर्शनी ऐम्पीथियेटर में हुआ करते थे। यह बहुत हानिकारक सिद्ध हुए इसमें दास या कुकर्मी व्यक्ति किसी व्यक्ति या हिंसक जानवर के साथ लड़ते थे। इसका अन्त प्रतिद्वन्दियों में से किसी एक की मृत्यु के पश्चात ही होता था। लड़ने वालों को प्रशिक्षित किया जाता था। इसके लिये स्कूल भी खोले गये थे जहां दास इस व्यवसाय के लिये प्रशिक्षित किये जाते थे। इन स्कूलों को सार्वजनिक धन से आर्थिक सहायता दी जाती थी। रोम में ऐसे चार स्कूल थे। सम्राट कालिगुला के स्कूल में २०,००० ग्लाडिटोरियल कम्बैट्स में भाग लेने वाले प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे थे। इस खेल के लिये सम्राट सदा नयी नयी रीतियां तथा भिन्न भिन्न प्रकार के जंगली जानवर ढूंढ़ते थे। भाग लेने वाले यदि दास या कुकर्मी होते थे तो उन्हे विजय उपरान्त स्वतंत्र कर दिया जाता था। यदि व्यक्ति स्वतंत्र होता था तो उसे बहुत धन दिया जाता था। डायओ-सियस एक स्पेन का रहने वाला था जिसने ४,२५७ दौड़ में भाग लिया था, १४६२ बार विजयी हुआ तथा २४ वर्ष में १२,६००,००० रुपये के बराबर धन प्राप्त किया।

'थरमें' या स्नान तथा तैरने के स्थान रोम के निवासियों के द्वारा मनोरंजन के लिए बहुत प्रयुक्त किए जाते थे। धन तथा आराम के बढ़ने के कारण सरकार ने एक ही अत्यन्त सुन्दर सार्वजनिक स्नान करने का स्थान

बनवाया। एक समय में ७०० सरकारी स्नान करने के स्थान थे। डायओक्लेटियन के 'थरमें' में एक साथ १६०० व्यक्ति स्नान कर सकते थे तथा काराकाला के 'थरमें' में ३२००। इनकी तुलना बहुत कुछ यूनान के जिमनेजियम से की जा सकती है। स्नान करने की सुविधायें निशुल्क प्राप्त की जाती थीं किन्तु कभी ६ पैसे के बराबर प्रवेश शुल्क ले लिया जाता था। पोम्पे शहर के 'थरमें' की बहुत ही अच्छी तरह् देख भाल की जाती थी। प्रत्येक थरमें में भिन्न भिन्न प्रकार की सुविधायें प्राप्त थीं। बड़े बड़े थरमें में एक पालेस्ट्रा, स्नान करने के लिये खुला हुआ तालाब, खेल खेलने का स्थान, एक बड़ा स्थान कपड़े बदलने के लिये जहां दासों की सेवा उपलब्ध थी, तेल लगाने का स्थान, गर्म वाष्प का स्थान, गर्म तथा ठंडे पानी का स्थान, पुस्तकालय, विश्राम करने का स्थान, बैठक, कला प्रदर्शनी तथा भोजन करने का स्थान हुआ करता था। थरमें निजी तथा सरकार के भी होते थे। थरमें में स्त्रियों तथा पुरुषों के लिये भिन्न भिन्न स्थान होते थे।

रोम के खेलों में यूनान के जिमनास्टिक को लाने के लिये कितनी बार चेष्टा की गयी किन्तु प्रयास असफल रहा। ईसा के १८६ वर्ष पूर्व प्रथम बार रोम में यूनान के खेल प्रदर्शित हुये। किन्तु वे सर्वप्रिय नहीं हुये। सम्राट नेरो ने एक जिमनेजियम बनवाया था और नेरोनियन खेलों की स्थापना की जिसमें ऐथेलेटिक्स भी था। सम्राट थियडोसियस के द्वारा ओलम्पिक खेलों का अन्त कर दिया गया तथा शारीरिक शिक्षा अनिवार्य नहीं रही। इन संस्थाओं की सम्पूर्ण लिखित बातें यूनानी भाषा में थीं। खिलाड़ी तथा सिखाने वाले यूनानी थे। रोम के निवासी केवल दर्शक थे जो उत्सुकता के कारण तथा विदेशियों को अपने खेल में लीन देखने के लिये उपस्थित हुआ करते थे।

प्राचीन समय में रोम के महत्वपूर्ण तथा गौरवशाली परिवार के पुत्र धार्मिक तथा सैनिक नृत्य, सार्वजनिक स्थानों में करते थे। रोम के वैभवकाल में किसी प्रकार का नृत्य एक नीचतापूर्ण कार्य समझा जाता था। रोम के जेवनारों के समय व्यवसायिक नृत्यकार तथा दास नृत्य करते थे जो अधिकतर लड़कियां हुआ करती थीं। थियेटरों में 'पैनटोमिमिक' नृत्य, जिसमें देवताओं के प्रेम कहानियों का वर्णन किया गया था, सभी के द्वारा सराहा जाता था। रोम ने नृत्य को ऊंचा करने के लिये कभी भी कुछ नहीं किया।

स्वास्थ्य जिमनास्टिक रोम में बहुत लोकप्रिय हुआ। ईसा के पूर्व पांचवी

शताब्दी से कुछ यूनानी भोजन तथा व्यायाम का शरीर पर क्या प्रभाव पड़ता है इसका अध्ययन कर रहे थे। चिकित्सा की सहायता के लिये लोगों ने इधर ध्यान दिया था। भोजन में कमी, हलका व्यायाम तथा स्नान इस पद्धति के कार्यक्रम में था। गालेन ने शरीर विकास में व्यायाम के प्रभाव के विषय में लिखा था।

रोम के लोग यूनानियों की तरह हाकी के प्रकार का कोई खेल खेलते थे और सौकर भी खेलते थे। दो गेन्द एक साथ फेंकने और दूसरे के द्वारा दोनों को एक साथ पकड़ने का खेल बहुत लोकप्रिय था।

७

मध्यकाल

मध्यकाल के आरम्भ में रोम एक भ्रष्ट समाज हो गया था। एक समय का बड़ा शक्तिशाली साम्राज्य शीघ्रता से पतन की ओर जा रहा था। ईसा के चौथी तथा पांचवी शताब्दी से रोम के समाज के प्रत्येक खंड में बुराई आ गयी थी। जनसंख्या में घोर कमी होती जा रही थी। अनगिनत विवाह विच्छेद, विवाह में कमी, तथा ग्लाडिटोरियल खेल के कारण पुरुष शक्ति का नाश हो गया। आर्थिक स्थिति भी पतन की ओर शीघ्रता से जा रही थी। दास प्रथा के कारण लोग आलसी हो गये थे और लोगों को किसी व्यवसाय या व्यापार में रुचि तथा अभ्यास नहीं रहा। वे लोग जिनसे कर लिया जाता था उनकी बहुत कमी होगई थी। धनवान लोगों की विलासता तथा बिना सोचे समझे व्यय करने की आदत, साथ ही लोगों को अनाज बांटने की प्रथा के कारण वे न केवल आलसी बल्कि दरिद्र भी हो गये। इन सब कारणों से रोम का पतन होना अवश्यमभावी था। रोम के शिष्टाचार का भी ह्रास हुआ।

ऐसी दशा में उत्तरी यूरोप से 'ट्युटेनिक बारबेरियन्स' ने रोम पर आक्रमण किया और उनके गिरते हुये साम्राज्य के नाश करने में सहायक हो गये। रोम की एकता भंग हो गयी क्योंकि ये आक्रमणकारी इतनी उच्च संस्कृति तथा बुद्धि के नहीं थे कि ऐसे विशाल साम्राज्य को सम्भाल सकते। लोग भय के कारण हार मान कर जो शक्तिशाली थे उनकी शरण में बचाव के लिये चले गये। सम्पूर्ण यूरोप में छोटे छोटे किले बन गये, युद्ध बड़े लोगों का व्यवसाय बन गया तथा निर्धन जनता ने दासत्व अपना लिया। व्यापार, वाणिज्य, शिक्षा उच्च संस्कृति आदि आंखों से ओझल हो गई। मनुष्य पुनः प्राचीन गोत्र के जीवन में परिवर्तित हो गये ' ईसवी सन् ४७६ तक रोम साम्राज्य का ध्वन्स हो चुका था। उच्च कोटि की सभ्यता के केन्द्र में अन्धकार का सर्वत्र राज्य हो

गया। मध्यकाल के इतिहास का यह भाग 'अंधकारकाल' के नाम से घोषित किया जाता है जो शताब्दियों तक रहा।

ट्युटोनिक बारबेरियन्स के आक्रमण के कारण यूरोप में केन्द्र संचालित राज्य असम्भव हो गया तथा इसके स्थान पर जागीरदारी प्रथा का आरम्भ हुआ। यह प्रथा शार्लमेन के दादा चार्लस मार्टल के द्वारा स्थापित की गयी थी। अच्छे सैनिकों की सेवा प्राप्त करने के लिये उन्हें कुछ भूमि दे रखी थी। इसे वे अपना तो नही सकते थे किन्तु इसकी आमदनी उनकी होती थी। इसके स्थान में राजनैतिक तथा सैनिक सेवा वे अपने स्वामी को देते थे।

जिस समय रोम अपने राजनैतिक तथा सैनिक शक्ति के शिखर पर था उसी समय यीशु मसीह का जन्म हुआ। इसी समय आंतरिक मतभेद तथा पतन के चिन्ह दृष्टिपात हो रहे थे। रोम की देश भक्ति, वीरता तथा देश सेवा का अर्थ वह नहीं रहा जो किसी समय था। निम्न श्रेणियों के लोगों के लिये किसी प्रकार की आत्मिक शक्ति दिखायी नहीं देती थी जिसके द्वारा उन्हें शान्ति मिले तथा जीवन अर्थमय ज्ञात हो सके। कोई भी नियम या शक्ति ऐसी नहीं थी जो धनी लोंगों के मनचाहे गलत व्यवहारों पर रोक लगा सके।

ऐसी अवस्था में मसीही विचार तथा जीवन के प्रचार से अत्यन्त प्रोत्साहन मिला। दूसरे दर्शनों से भिन्न मसीही धर्म वास्तविक, दृढ़ एवं निश्चितरूप में जनता को दिया गया जो उनके भावनात्मक जीवन को अति सरल तथा सुन्दर मालूम हुआ। धार्मिक आदर्श प्राप्त करने के लिये जीवन में प्रेम, आपस में एक दूसरे के लिये सहानुभूति तथा अनन्तकाल के लिये प्रतिफल की शिक्षा प्रत्येक के समझ में सरलता से आ गयी। मसीही सिद्धान्त ने उन लोगों के हृदय में, जो समाज के द्वारा बहुत दिनों से पद दलित थे, एक नया स्थान स्थापित किया। प्रत्येक प्राणी ईश्वर के सम्मुख बराबर है, इस विश्वास ने निम्न श्रेणी के लोगों के विचारों में एक क्रान्ति उत्पन्न कर दी थी। अब वह भी अपने जीवन को महत्वपूर्ण समझने लगे थे। इन भावनाओं के कारण दासत्व प्रथा का अन्त हो गया। ईसाई धर्म ने बड़े वेग से उन्नति की। इस समय के ईसाई धर्मावलम्बियों के उत्ताप तथा शिष्टाचारपूर्ण जीवन के कारण इस धर्म ने प्रगति की और तेजी से पग बढ़ाये।

चर्च या मसीही मंडली जो मसीही धर्म के प्रचार तथा सुरक्षा के लिये स्थापित की गयी, दक्षिणी रोमन साम्राज्य पर छा गयी और समाज के रग रग में प्रवेश कर गयी। जो आक्रमण देश न सम्भाल सका वह मसीही धर्म ने सम्भाल लिया क्योंकि इसके द्वारा बारबेरियन्स तथा रोमन्स दोनों ही के जीवन प्रभावित हुये। ऐसे समय में जब छोटे छोटे राज्य आपस में अपने को स्थापित करने के लिये लड़ भिड़ रहे थे, चर्च एक अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति बन चुका था जिसके हाथ में पर्याप्त राजकीय तथा आत्मिक सामर्थ्य था।

मध्यकाल में कुलीन युवक के सम्मुख दो मार्ग थे जिन्हें वह अपने भविष्य के लिये चुन सकता था। एक धर्म, दूसरी वीरता।

वीरता या शीवलरी

जागीरदारी की प्रथा के कारण श्रेष्ठ भूमिधर 'लौर्ड' या स्वामी बन जाता था। जो उसकी रक्षा प्राप्त करते थे वे 'वासल्स' या दास कहलाते थे। स्वामी के दास उसकी सेवा के लिये नाइटहुड का प्रशिक्षण प्राप्त करते थे। अधिकांश जनता जिन्हें भूमि प्राप्त नहीं थी वे दासों या जागीरदारों के सेवक हो गये। समाज तीन भागों में विभाजित हो गया, सेवक श्रम करने के लिये, पुरोहित प्रार्थना करने के लिये तथा 'नोबल्स' या 'लौर्ड' अपने दासों या 'वासल्स' के साथ युद्ध तथा राज्य कार्य चलाने के लिये स्थापित हो गये। एक 'फ्युडल' सेना में एक 'लौर्ड' या अनेक 'लौर्ड' उनके 'वासल्स' या 'वासल्स' के 'वासल्स' होते थे।

'नाइटहुड' के प्रशिक्षण के लिये शारीरिक तथा सैनिक आवश्यकता थी। 'नोबल्स' को महल की रीतियों तथा शिष्टाचार का ज्ञान होना आवश्यक था। साथ ही जीवन को क्रियाशीलरूप में तथा आनन्द से बिताने का ज्ञान भी जरूरी था। सातवें वर्ष में बालक अपने पिता के 'लौर्ड' या स्वामी के पास चला जाता था और वहीं रहता था। वहां वह राज्य दरबार की महिलाओं की सेवा करता था और आधारभूत धार्मिक रीति तथा कार्यों का अध्ययन करता था। उसका प्रशिक्षण किसी महिला के हाथ में होता था। इस स्थिति में वह 'पेज' कहलाता था। संगीत, नृत्य सही वस्त्र धारण करना, शिष्टाचार आदि की शिक्षा दी

से मंगाये जाते थे। इनके पालने तथा प्रशिक्षण में बहुत समय तथा धन लगता था मध्यकालीन राज्य दरबार में इन पक्षियों की चर्चा एक मुख्य विषय होता था।

जैसे जैसे समाज संगठित होता गया वैसे वैसे शारीरिक शिक्षा, सामान्य शिक्षा प्रणाली के अन्तर्गत आती गयी। घोर कठिन परिश्रम जो एक समय का ध्येय था वह भी सरलता की ओर झुका।

'फियुडल' प्रणाली, के अन्तर्गत केवल नोबल्स के बालक ही सैनिक शिक्षा प्राप्त करते थे। समाज के सब लोग कुश्ती, दौड़, भिन्न भिन्न प्रकार के गेंद के खेल, ऊंची तथा लम्बी कूद, जाऊसटिंग आदि में रुचि लेते थे। नृत्य के कई एक प्रकार थे और यह बहुत लोकप्रिय था।

मध्यकालीन टूरनामेन्ट की उत्पत्ति फ्रान्स में दसवीं शताब्दी में हुयी। इगलैंण्ड तथा जर्मनी में ११ से १५वीं शताब्दी में फैल गयी। प्रारम्भिक 'टूरनामेन्ट' सैनिक व्यायाम से कुछ भिन्न थे। उसमें भाग लेने वालों की सुरक्षा के नियम थे। दो नाइट आपस में मर्यादा के लिये इसमें भाग ले सकते थे। बहुधा दर्शक तथा प्रतिद्वन्दी भूल जाते थे कि वह केवल एक खेल था और मृत्यु तक लड़ते रहते थे। 'जेऊस्ट' दो नाइट्स के बीच की प्रतियोगिता थी। वे एक दूसरे पर भाला चलाते थे और दूसरे की ढाल पर निशाना लगाते थे।

सेवक, दास तथा निम्नवर्ग की जनता के लिये जीवन संघर्ष और कठिनाई से भरा था। साधारण आवश्यकताओं की पूर्ति भी कठिन परिश्रम तथा अनेक दुखों का सामना करने के बाद होती थी। मनोरंजन उनके जीवन में नहीं के बराबर था। स्वामी के प्रति उत्तरदायित्व उनके लिये एक भार था। मध्यकाल में अनेक ऐसे प्रभाव थे जिनके कारण 'फ्युडलिज़्म' या जागीरदारी का पतन हुआ। बारूद के आविष्कार ने नाइट के व्यवसाय को एक नीचा स्थान दिया। वाणिज्य, व्यापार, शहरों की प्रगति तथा समाज में एक नये वर्ग के स्थापित होने से जागीरदारों को और धक्का लगा।

ग्यारहवीं, बारहवीं तथा तेरहवीं शताब्दी में धार्मिक युद्ध 'क्रूसेड्स' के कारण ग्रामीण आन्दोलन की जागृति इस समय के सामाजिक परिवर्तन में विशेष स्थान रखती है। इस धार्मिक युद्ध के कारण जो मसीही विश्वासियों ने धर्म की

रक्षा के लिये अविश्वासियों से किया था, पूर्व तथा पश्चिम में व्यापार प्रोत्साहित किया। यूरोप की लोग पूर्व की श्रेष्ठ सभ्यता से प्रभावित हुये आविष्कार तथा अनुसंधान के निमित्त खोज करने की भावना जागृत हुयी। वस्तु लेन देन के स्थान पर मुद्रा प्रचलन ने व्यापार को उन्नति दी। दस्तकारी सर्वप्रिय हुयी और इसकी प्रगति के लिये संयुक्त संस्थायें बन गयीं शहर तथा नगर बढ़ने लगे। समाज में एक मध्यस्थ या व्यापारी वर्ग उत्पन्न हुआ। इस नये बर्ग के लोगों के पास व्यक्तिगत धन था। उन्हे आर्थिक शक्ति प्राप्त हुयी जिससे उनकी राजनैतिक तथा सामाजिक अधिकार की लालसा बढ़ी। अपने चातुर्य से उन्होंने अपने को इतना दृढ़ कर लिया कि स्वराज्य प्राप्त कर लिया। ऐसे समाज के बालकों के लिये एक नयी शिक्षा की आवश्यकता हुयी।

तेरहवीं शताब्दी में चर्च अपनी राजनैतिक तथा धार्मिक शक्ति के शिखर पर था। जो उसके विरोधी थे वे दबाये जाते थे और राजनैतिक शक्तियाँ जो कार्यान्वित हुयीं उन्होंने सुधार का बीज बो दिया तथा प्रजातांत्रिक विचार उत्पन्न हुये। दस्तकारी के कारण औद्योगिक प्रशिक्षण की नींव पड़ी जो सर्वदा से थी किन्तु जिसकी आवश्यकता पर इससे पहले इतना बल नहीं दिया गया था। खेल तथा स्पोर्टस् समाज के जीवन में ही मिश्रित था। यह कोई शिक्षा का विशेष फल नहीं था। सैनिक शिक्षा के कारण शारीरिक शिक्षा हो जाती थी। शान्ति के समय क्रूर स्पोर्टस् आदि में भाग लिया जाता था।

मसीही विचार का प्रभाव

रोम के पतन के समय वहां का समाज अशिष्ट था। एक नये संगठन तथा ईश्वरीय ज्ञान की स्थापना हुयी। यह नया धर्म मसीही धर्म था। इस धर्म के अनुयायी रोम के देवताओं तथा सम्राट की पूजा नहीं करते थे सर्कस तथा दूसरे खेलों में भाग नहीं लेते थे। उनका धर्म था सभी से प्रेम भाव रखना तथा शत्रुओं को क्षमा करना। अतएव उनके लिये युद्ध करना धर्म के विरुद्ध था। मसीह के प्रति श्रद्धा सर्वप्रमुख थी और उसके लिये प्राण देना एक सरल तथा प्रसन्नता का कार्य था।

उनकी शिक्षा थी कि, सांसारिक वस्तुयें ईश्वरीय देन नहीं हैं। इस जीवन के पश्चात अनन्तकाल का जीवन तथा सुख जिसका इस धर्म ने प्रचार किया

उसके कारण संसार का आनन्द तथा स्थिति तुच्छ समझी जाने लगी। पददलित लोगों के लिये यह एक प्रकार की स्वतंत्रता तथा नया जीवन था। इस विचार ने कि सब प्राणी ईश्वर के सम्मुख बराबर हैं एक नयी जागृति उत्पन्न कर दी। मनुष्य आपस में बराबर तथा एक दूसरे को भाई समान मानते थे।

मसीही शिक्षा का ध्येय था कि बालक ईश्वर की इच्छा के अनुसार एक सचरित्र जीवन व्यतीत करना सीखे। मसीही धर्म, धार्मिक जागृति पर विशेष बल देता था।

प्रारम्भिक मध्यकाल में एक धार्मिक तथा शिष्टाचारपूर्ण जागृति की आवश्यकता थी। चर्च ने अपनी शक्ति इस ओर लगायी। रोम के पतित निवासियों तथा युद्धप्रिय ट्युटोनियनस को मसीही धर्म के गुणों को अपनाने की शिक्षा देना कोई सरल विषय नहीं था। अधिकतर मसीही विश्वास के लोग शारीरिक शिक्षा के विरुद्ध थे। कुछ धर्म के पंडित (Theologians) जो यूनानी दर्शन को मसीही विचार से मिलाना चाहते थे उन्होंने व्यायाम खेल तथा स्पोर्ट्स में स्वास्थ्य लाभ देखे, कुछ लोगों ने पंडितों के इस विचार का विरोध किया। इनके विरुद्ध विचार होने के कारण थे; रोमन खेलों का गिरा हुआ चरित्र, रोम निवासियों के सभी कार्यों का मूर्तिपूजक धर्मों से सम्बन्ध तथा शरीर को बुरा समझना। खेलों का सम्बन्ध बहुत कुछ सम्राट पूजा से भी था। दर्शक के रूप में उपस्थिति का अर्थ सम्राट को तथा उसके स्थान को मान्यता देना था। अपने जीवन में मसीह को छोड़ और किसी को वे ऊंचा स्थान नहीं दे सकते थे। उत्सव भी देवताओं के सम्मान में हुआ करते थे वह भी मसीही धार्मिक भावनाओं के विरुद्ध था मसीही धर्म वैराग्यपूर्ण विचारों का था जहाँ शरीर को बुरा समझा जाता था। शरीर को पाप का साधन समझा जाने लगा था। पाप से छुटकारा पाने के लिये शरीर से छुटकारा पाना आवश्यक था अतएव शरीर को जितना कष्ट दिया जा सके उतना ही आत्मा के लिये उत्तम होगा क्योंकि इस तरह शरीर का प्रभाव आत्मा पर नहीं होगा। जहाँ शरीर के प्रति यह भावना थी वहाँ शारीरिक शिक्षा की कोई आवश्यकता नहीं मालूम हुयी।

जब पूर्व के लोगों ने, जैसे मिस्र तथा सीरिया ने, मसीही धर्म को अपनाया तब तक यह विश्वास दृढ़ हो चुका था कि वह सांसारिक वस्तुएँ जो

प्रसन्नता देतीं हैं वह पतन की ओर ले जाने वालीं हैं। मध्यकालीन मसीही धर्म का मुख्य ध्येय वैराग्य था। पूर्वी धर्मों का विशेष ध्येय सन्यास ही रहा है और इस विचार में, कि सन्यासी जीवन ही श्रेष्ठ है, कोई मतभेद नहीं था। सन्यासी, संसार के पाप से बचने के लिए गुफाओं में शरण लेते थे। उनका जीवन व्रत, प्रार्थना तथा ध्यान में व्यतीत होता था। जो इनमें से अधिक कट्टर थे वे अपने शरीर को भिन्न भिन्न प्रकार से दुःख देते थे। वे शरीर को मारते पीटते थे, शरीर पर भारी बोझ लादते थे, या काँटों पर लेटते थे। कठिन से कठिन तपस्या की रीति वे सदैव निकालने में व्यस्त रहते थे।

मसीही धर्म के स्थापित होने के पश्चात मसीही स्कूलों का स्थापित होना निश्चित था जहाँ धर्म की बातें सिखाना आवश्यक था। जैसे जैसे मसीही धर्मावलम्बियों की संख्या में वृद्धि हुयी वैसे वैसे नये मसीही स्कूल स्थापित होते गए। एक समय ऐसा आया कि ये स्कूल पश्चिमी संसार में शिक्षा के केन्द्र हो गये। ये सन्यासी मौंक्स कहे जाते थे और इसी से मोनास्टिसिजम तथा मोनास्टिक स्कूल शब्द प्राप्त हुये हैं। ये मोनास्ट्री स्कूल छठवें से बारहवीं ई० तक शिक्षा के विशेष केन्द्र थे। इसके पश्चात काथीडरल स्कूलों की स्थापना हुयी जहाँ पर भी विशेष प्रकार की उच्च शिक्षा दी जाती थी। इन स्कूलों में शारीरिक शिक्षा की कोई प्रथा नहीं थी। केवल प्रारम्भिक अवस्था में धार्मिक नृत्य की ही स्वतंत्रता दी गयी थी।

कुछ धार्मिक विद्वानों ने धर्म के साथ शारीरिक शिक्षा का प्रचार किया था जिनमें क्लेमेन्ट आफ एलिकजेन्ड्रिया भी थे। किन्तु पश्चिमी चर्च ने इसको स्वीकार नहीं किया। चर्च का विचार सार्वजनिक स्नान स्थानों, सार्वजनिक खेलों तथा उत्सवों के विरुद्ध ही रहा।

सन्यासी प्रथा या मोनास्टिसिजम की स्थापना चर्च के द्वारा विशेषरूप से नहीं हुई थी। इस प्रकार के वैराग्यपूर्ण विचार हिन्दू धर्म, परशियन, मिस्र तथा यूनान के दर्शन के अवलम्बियों के मध्य भी पाये जाते हैं। कहा जा सकता है कि इस प्रथा ने यहाँ से विशेष शक्ति प्राप्त की।

समय की दशा के कारण मोनास्टिसिजम को प्रोत्साहन मिला। यहाँ

के कुछ नियम थे जिससे 'मौन्क्स' सात घंटे परिश्रम करते, दो घंटे पढ़ते थे। सामाजिक सुधार पर भी बल दिया जाता था। 'मौन्कस' को आत्मिक खिलाड़ी कहा जाता है जो कठिन नियमों का पालन करता तथा कठिन से कठिन प्रशिक्षण पाता जिससे वह सर्वदा के जीवन का भागी हो सके। उसकी प्रतिज्ञा, दरिद्रता, पवित्रता, तथा आज्ञापालन की थी। परिवार तथा 'स्टेट' से छुटकारा प्राप्त कर वह अपने को अपने आने वाले जीवन की तैयारी में लगाता था।

अंधकार काल शारीरिक शिक्षा की दृष्टि से एक निष्फल काल रहा है। परिश्रम के कारण शरीर अच्छी अवस्था में तथा स्वस्थ रहे होंगे। मोनास्ट्रि ने केवल शारीरिक शिक्षा पर प्रतिबन्ध ही नहीं लगाया किन्तु बालक तथा युवकों के नैसर्गिक खेलने की प्रवृत्ति का बलपूर्वक दमन किया।

ट्युटोनिक बारबेरियन्स के द्वारा सांस्कृतिक सभ्यता के ध्वंस करने के पश्चात मोनास्ट्रि, चर्च तथा कुछ पुस्तकालय विद्या के विशेष धरोहर रहे। शताब्दियों तक मौन्क्स ने सांस्कृतिक विद्या, समय की घटनाओं का इतिहास तथा लेखा रख कर, लेखकों के लेख की नकल करने के द्वारा बहुमूल्य सेवा प्रदान की है। यूनिवर्सिटी के खुलने के पूर्व मोनास्ट्रि स्कूल तथा कैथड्रिल स्कूलों में, जिसमें मौन्क्स शिक्षक थे, शिक्षा की संस्थायें थी। यहाँ लिखना, पढ़ना, गिनती गिनना, जिनका धार्मिक ध्येय था, सिखाया जाता था। मध्यकाल के किसी भी स्कूल में शारीरिक शिक्षा का नाम तक भी नहीं था क्योंकि वह सभी कार्य सन्यास प्रथा की दृष्टि में रख कर करते थे।

बारहवीं सदी में बहुत सी यूनिवर्सिटियाँ हो गईं। इनमें विख्यात थी पेरिस, बोलोन तथा सालरिनो। ये धर्म तथा राजनैतिक प्रभावों से बिल्कुल स्वतंत्र थीं। प्रत्येक आयु के हजारों विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते थे। कितने ही एक से दूसरी यूनिवर्सिटी में किसी शिक्षक के कारण जाते थे। शारीरिक शिक्षा तथा स्पोर्ट्स उनके कार्यक्रम में नाममात्र को भी न था। अतएव विद्यार्थियों का अवकाश समय शराब, जुआ आदि में व्यतीत होता था।

ट्यूटोनिक बारबेरियन्स के आने से अंधकार काल तो अवश्य हुआ किन्तु इतिहास वेत्ताओं का कहना है कि इनका आक्रमण संसार के लिये लाभदायक

सिद्ध हुआ क्योंकि इन्होंने अपना शक्तिशाली शरीर तथा स्वास्थ्य, आने वाली पीढ़ियों को दिया। इनके साधारण तथा परिश्रमी जीवन ने बलिष्ठ सन्तानें प्रदान कीं। संसार को रोम की अपेक्षा इस समय युवकों की आवश्यकता थी। आधुनिक सभ्य देशों में कुछ देश पूर्ण रूप से उन्हीं के वंशज हैं तथा कुछ अपूर्ण रूप से उनके वंशज कहे जा सकते हैं।

८

जागृति

मध्यकाल के लिये असभ्य तथा अशिक्षित शब्दों का प्रयोग करके उसे साधारणतः तुच्छ दृष्टि से देखा जाता है। यह वास्तव में सच नही है क्योंकि उस समय की अपनी संस्कृति थी। प्रगति तथा जागृति के बीज, जो चौदहवीं तथा सत्तरहवीं शताब्दी के बीच, पूर्णरूप से खिले तथा फलित हुये, वे इसी समय बोये गये थे। यह पुनरावृद्धि या जागृति, जो यूरोप में हुयी, जिसे रीनेसान्स कहते हैं, बहुत सी घटनाओं के मिश्रण से सम्भव हो सकी थी।

मध्यकाल में यूनिवर्सिटी ने यूरोप के ज्ञान की उन्नति में अपना पूरा सहयोग दिया किन्तु वे धार्मिक अंधकार को जिसने मनुष्यों के मस्तिष्क को पूरी तरह से जकड़ रखा था तोड़ नही सकी। इसके लिये दूसरी प्रभावशाली शक्तियों के सहयोग की आवश्यकता हुई जो उस विचार से, जिसके कारण संसार तथा शरीर का सम्बन्ध दुष्ट आत्मा से समझा जाता था, मुक्त कर सके तथा उन ईश्वरीय ज्ञान के सिद्धान्तों के अधिकारों को निर्बल कर सके जो मनुष्यों के विचार तथा ध्यान, शताब्दियों से, भविष्य के आने वाले दण्ड तथा पारितोषिक की ओर केन्द्रित किये हुये थे तथा वर्तमान के स्थूल संसार की समस्याओं तथा उसके समाधान के लिये प्रत्येक प्रयास को शिथिल या विफल कर देते थे। मनुष्य को पृथ्वी पर उसके वास्तविक अधिकार अब तक प्राप्त नहीं हुये थे।

मध्यकाल से आधुनिक काल में परिवर्तन लाने के यत्न में जो मुख्य घटनायें घटित हुयीं वे थीं, जागीरदारी के स्थान पर राजा का शासन आना, आपस में निजी लड़ाई न करके शांति का स्थापित होना, प्रादेशिक भावनाओं को भुलाकर राष्ट्रीय भावना को अपनाना, वस्तु के लेन देन का व्यापार तथा

वाणिज्य में परिवर्तित होना, भौगोलिक अज्ञानता के पश्चात स्थान तथा देश ढूंढ़ना तथा आविष्कार करना, संस्थाओं के महत्व से व्यक्तिगत महत्व की ओर ध्यान देना, अन्धविश्वास को अनुसन्धान में बदलना, विचारों को अटल विश्वास का रूप देना, भविष्य की तैयारी को वर्तमान के आनन्द में तथा हाथ के लिखे हुये पर्चों को किताबों की छपाई में परिवर्तित करना आदि ।

विद्या तथा ज्ञान की जागृति में यूनानी तथा रोम के साहित्यों तथा पुरानी सभ्यता के लेखों के अध्ययन ने पश्चिमी देशों के जीवन तथा संस्कृति को एक नयी दिशा प्रदान की । पुराने साहित्यों, दर्शन तथा कला के विषय पढ़ने से लोगों को सन्तोष प्राप्त हुआ । धर्म युद्ध में भाग लेने से पूर्वी देशों ने चमत्कार का अनुभव, अनजान व्यक्तियों से भेंट, नये विचार तथा सुलभ व्यापार की सम्भावनाओं में घोर आर्थिक क्रांति तथा ज्ञानपूर्ण क्रियाओं को उत्तेजित किया ।

समाज, जो व्यक्तिगत जीवन को प्रोत्साहित करता था और वर्तमान जीवन के मूल्य को उचित स्थान देकर शरीर की रक्षा तथा विकास की ओर ध्यान देता था, वह एक महत्वपूर्ण संस्था बन गया । जब 'ह्यूमनिस्ट' (मनुष्यत्व के प्रभुत्व को मानने वाले) ने रोम तथा यूनान की सभ्यता का आविष्कार किया तो शरीर के प्रति उनके श्रेष्ठ विचारों से अत्यन्त ही प्रभावित हुये । अतएव प्रायः प्रत्येक ह्यूमनिस्ट लेखक ने शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता पर लिखा ।

जागृति काल ने यूरोप में माध्यमिक शिक्षा का प्रचार किया । जर्मन जिमनेज़ियम, फ्रान्स की लायसी तथा अंग्रेजों की एकाडमी इसी समय स्थापित हुई ।

पन्द्रहवीं शताब्दी में प्रथम ह्यूमनिस्ट शिक्षकों ने उत्तरी इटली में शिक्षा देनी आरम्भ की थी।

इटली के प्रसिद्ध ह्यूमनिस्ट विटोरिनो डा फेल्ट्रा (१३७८-१४४६) का, संसार प्राचीन शिक्षा के लिये आभारी है । ये एक अत्यन्त सफल तथा अनुरागपूर्ण शिक्षक थे । उनकी शिक्षा का विशेष विषय लेटिन, यूनानी तथा प्राचीन वस्तु विद्या थी । शिक्षा का ध्येय प्राचीन साहित्य का सही अध्ययन तथा इन विदेशी भाषाओं को प्रवीणता से बोलना था । नाइट बनने के लिए जो शिक्षा दी

जाती थी उस शिक्षा का बहुत प्रचलन था, अतएव विटोरिनो का अपने स्कूल में नाइट की शिक्षा की कुछ विशेषताओं को सम्मिलित करना आवश्यक था। स्कूल के सहायक शिक्षक नृत्य, घोड़ा चढ़ना, बनैठी, तैरने, व्यायाम, कुश्ती, दौड़, कूदना, तीर धनुषविद्या, गेन्द के खेल, आखेट, मछली मारने तथा झूठी लड़ाई के अभ्यस्त एवं विशेषज्ञ होते थे। खुली हवा के जीवन तथा खाने पीने में संयम के वे दृढ़ प्रचारक थे।

इस प्रकार विटोरिनो ने शारीरिक शिक्षा को मानसिक शिक्षा के साथ मिला कर प्रत्येक शिक्षार्थी के लिये उसे सुलभ कर दिया। विटोरिनो ने यूनान के व्यक्ति के सम्पूर्ण एवं सर्वांगीण विकास के ध्येय को पुनः शिक्षा का ध्येय निर्धारित किया। इनके विचार से इनके समकालीन ह्यूमनिस्ट विद्वान लीओन अलबर्टी, ऐनियास सायलवियस, पिक्कोलोमिनी आदि सब सहमत थे।

ह्यूमनिस्ट चाहते थे कि युवक शरीर तथा स्वास्थ्य में उत्तम हों तथा उनमें तीव्र बुद्धि हो, जो नागरिक होकर प्रौढ़ जीवन के कार्यों में भाग ले सकें। शिष्टाचार का एक निर्धारित नियम हो जिसे समाज से मान्यता प्राप्त हो अस्त्र-शस्त्र में निपुण हों, विद्वान हों, सुन्दरता के प्रशंसक हों, एक वीर, साहसी, आदर सत्कार देने वाला खरा, सुशील तथा मर्यादा पूर्ण व्यवहार करने वाला हो।

चर्च तथा अन्य संस्थाओं ने जो धर्म से सम्बन्धित नहीं थे, दोनों ने, शारीरिक शिक्षा के सैनिक उद्धेश्य को प्रोत्साहित किया। सभी शिक्षकों का विचार था कि तीव्र मानसिक क्रियाओं के साथ खेल एवं व्यायाम, विश्राम तथा मानसिक थकान को दूर करने के साधन, अवश्य होने चाहियें।

ह्यूमनिस्टिक स्कूल का संगठन अनौपचारिक था। क्रिया का रूप तथा उसमें सम्मिलित होने की मात्रा व्यक्ति की आवश्यकताओं पर निर्भर हुआ करती थी। बहुधा लड़के तथा लड़कियाँ एक ही साथ पढ़ाए जाते थे और शिक्षा प्रणाली भी एक सी ही होती थी।

विटोरिनो प्रथम स्कूल शिक्षक थे जो इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि शिक्षा ग्रहण करने की योग्यता बहुत कुछ शारीरिक स्वास्थ्य तथा दशा पर निर्भर करती है। वे कक्षा में सदा थोड़े विद्यार्थी रखना चाहते थे तथा कार्यक्रम उनकी योग्यता के अनुसार रखते थे।

पड़ुआ तथा फ्लोरेन्स के **पीयेट्रो बरगेरियो** (१३४९–१४२८) ने अपने एक शिक्षा सम्बन्धी लेख में चरित्र शिक्षा, विस्तृत अध्ययन, शारीरिक व्यायाम तथा युद्ध के चातुर्य में प्रशिक्षण तथा अन्त में मनोरंजन के विषय पर अपने उच्च विचार प्रकट किये हैं।

पेटराकी प्रथम आधुनिक विद्वान था जिसने ह्यूमनिजम की आत्मा पर प्रकाश डाला। प्राचीन सर्वांगीण उदार शिक्षा के लक्ष्य को समझकर तर्कशास्त्र तथा दर्शन को उनके साथ संयुक्त कर उसने जागृति के आन्दोलन को बढ़ाया।

पेटरस पौलस बरगेरियस (१३४९—१४२०) ने पेटरार्क के आरम्भ किये गए कार्य को अपने हाथ में लिया। उसकी शिक्षा पर लिखी हुई पत्रिका 'औन गुड मोरलस एण्ड लिबरल स्टडीज' बहुत लोक प्रिय थी।

लिओने बाटिस्टा अलबरटी ने जो एक कवि, कलाकार, दार्शनिक, संगीतकार तथा शिल्पकार था, लिखा था 'औन दि क्योर आफ दि फैमिली'

माफिओ वेगिओं (१४०७–१४५८) जो एक विद्वान कवि था और बाद में चर्च की सेवा करने लगा था, उसने पन्द्रहवीं शताब्दी के विख्यात शिक्षा संबंधी विषयों पर अधिकता से लिखा।

गीरोलामो कारडानो (१५०१–१५७६) जिसने पावीया तथा पडुआ में शिक्षा प्राप्त की, फ्रान्स, इंगलैंड, स्काटलैंड, निदरलैंड तथा जर्मनी में भ्रमण किया, चिकित्सा में डाक्ट्रेट पायी। उसने अपनी जीवनी में अपने दौड़ने, कूदने, घुड़सवारी, तैरने आदि के बारे में लिखा। उसने 'केयर आफ हेल्थ' पर एक अत्यन्त ही उत्तम पुस्तक लिखी थी।

जर्मनी में **मार्टिन लूथर** (१४८३–१५४६) ने शारीरिक व्यायाम के आत्मिक तथा मनोरंजन के मूल्य की घोषणा की।

उलरिक ज्वींगली (१४८१–१५३१) ने जो स्वीटजरलैंड का एक सुधारक था, भोजन, कपड़े, दौड़ना, कूदना, पत्थर फेंकना, कुश्ती, बनैठी आदि शारीरिक शक्ति तथा चातुर्य पर तथा सैनिक प्रशिक्षण पर विशेष बल दिया।

जोआकिम केमेरेरियस ने जो लाइपजीग यूनिवर्सिटी में शिक्षक था शारीरिक व्यायाम पर एक छोटा लेख लिखा जिसमें उसने विभिन्न प्रकार की शारीरिक क्रियाओं की विशेषताएं तथा लाभ बताये ।

फ्रान्कोइस राबेले सन्यासी, चिकित्सक तथा हास्य लेखक के 'गरगन्टुआ' 'पेन्टाग्रुएल' नावेल में शिक्षा के प्रति क्रान्तिकारी भावनायें प्रकट की गयी हैं ।

फ्रान्स के **मिकायेल डी मोनटेन** ने बालकों की शिक्षा के विषय पर लिखते हुये लिखा है कि यदि शरीर की सहायता न हो तो आत्मा पर बड़ा बोझ पड़ेगा । व्यायाम, मनोरंजन, दौड़, कुश्ती, संगीत, नृत्य, आखेट तथा घुड़सवारी आदि हमारे अध्ययन के विशेष भाग हैं ।

रीनेसान्स के अन्त में **जौन मिलटन** ने 'ट्राक्ट औन ऐज्युकेशन' में जो लिखा वह अत्यन्त ही बहुमूल्य है इसमें शारीरिक व्यायाम का वर्णन शिष्टाचार तथा मानसिक प्रशिक्षण के साथ हैं ।

जब जागृति की भावना ने आल्पस को पार किया तो उस समय आनन्द का अर्थ जीवन का वास्तविक अर्थ समझने में था । स्वकेन्द्रित शिक्षा ने समाज सुधार में योग दिया, प्राचीन साहित्य का अध्ययन प्रसन्नता के लिये नहीं वरन् धार्मिक साहित्य को प्रकाश में लाने के लिए किया गया । साहित्यिक शिक्षा, विशेष कर उन देशों में जहां प्रौटेसटेन्ट सुधार हुआ, धार्मिक शिक्षा में परिवर्तित हो गयी । लूथर, कालविन, ज्विगली, नौक्स, तथा दूसरे सुधारकों ने पुनः आत्मा के मोक्ष पर बल दिया किन्तु यह सन्यास द्वारा या केवल चर्च के द्वारा ही सम्भव नहीं था । सुधारकों ने शिक्षा दी, कि बाइबिल ही धार्मिक सत्यों का ग्रन्थ है तथा मोक्ष उसके समझने तथा उस पर विश्वास करने में है । सामान्य शिक्षा के साथ धार्मिक शिक्षा भी आवश्यक समझी गयी । सुधार तथा जागृति काल, प्रारम्भिक शिक्षा प्रणाली की जन्म तिथि समझी जाती है ।

कौलविन चरित्र के सुधार में इतने लीन थे कि उन्होंने प्रत्येक प्रकार के मनोरंजन पर प्रतिबन्ध लगा दिया । इतना होते हुये भी उनका यह विचार था कि खेल की प्रवृत्ति रोकी नहीं जा सकती अतएव अच्छे खेलों के लिये स्वतंत्रता मिली । शारीरिक शिक्षा के लिये पूरी स्वतंत्रता होते हुये भी तथा

उसकी पूर्ण आवश्यकता को जानते हुये भी भिन्न भिन्न विचारों के सम्मिलन के कारण शारीरिक शिक्षा के वास्तविक ध्येय स्थापित नही हो सके थे।

कठोर धार्मिक विचारों के अनुसार परिश्रम सराहा गया तथा आलस की आलोचना हुयी। इस कारण खेल आदि इस घेरे के बाहर कर दिये गये। अनेक खेल उत्सव तथा रविवार के मनोरंजन, प्रोटेस्टेन्ट सुधारकों द्वारा वहिष्कृत कर दिये गए इस कारण वे साधन जिनके द्वारा ये प्रचलित थे, नष्ट हो गये। इन कट्टर धार्मिक भावनाओं के कारण सदाचार तथा चरित्र की उन्नति की बाहरी रोक टोक के कारण, मनुष्य की प्रत्येक प्राकृतिक प्रवृति दोषी ठहराई गई। मध्यकाल में चर्च ने अप्रत्यक्ष रूप से शारीरिक शिक्षा को प्रोत्साहित किया किन्तु प्रोटेस्टेन्ट नेतृत्व में यह भावना समाप्त हो गई। कैथोलिक मसीहियों का प्रभाव प्रोटेस्टेन्ट सुधार से कम नहीं हुआ।

जब राजाओं को यह प्रतीत हुआ कि वे प्रोटेस्टेन्ट उनकी शक्ति पर प्रतिबन्ध लगाना चाहते हैं तो उन्होंने कैथोलिक चर्च को अपनी सहायता दी। प्रोटेस्टेन्ट क्रान्ति से कैथोलिक प्रथा ने और बल पकड़ा। कैथलिक्स अपनी अच्छी शिक्षा संस्थाओं से विरोधियों को फिर अपनी शरण में लाना चाहते थे। सुधार के न चाहने वाले शिक्षकों का मुख्य ध्येय धार्मिक शिष्टाचार था। कैथलिक्स व्यक्तिगत सिद्धान्त से, जो जागृति काल में आरम्भ हुआ था, सहमत नहीं थे। कैथलिक्स के द्वारा शारीरिक योग्यता को मान्यता प्राप्त थी। सोलहवीं तथा सत्तरहवीं शताब्दी के कैथलिक स्कूलों में शारीरिक शिक्षा को विशेष महत्व प्राप्त हुयी। शिक्षा तथा खेल में बच्चों का निकटतम निरीक्षण सराहनीय था शासन व्यवस्था दृढ़ थी परन्तु कठोर नहीं थी।

———

९

शारीरिक शिक्षा तथा वास्तविकता

प्राय: एक हजार वर्ष तक यूरोप बुद्धि सम्बन्धी बातों में बिल्कुल स्थिर रहा। इसमें विशेष कर चर्च का विचार प्रतिबिम्बित था। प्राकृतिकरूप तथा वस्तु को दैविक अर्थ दिया जाता था। मनुष्य को जो कुछ होता वह ईश्वर की इच्छा समझी जाती थी। अतएव प्रार्थना तथा अच्छे कार्यों के द्वारा ईश्वर की ओर दृष्टि करने की आवश्यकता बताई जाती थी। बुद्धि के प्रकाश तथा जिज्ञासा की झलक ग्यारहवीं या बारहवीं शताब्दी से दिखायी देती है। अज्ञान के बादल पन्द्रहवीं तथा सोलहवीं शताब्दी में हटने लगे थे। ईसा से १३८, वर्ष पूर्व मिस्र में ज्योतिषी टोलेमी ने बताया था कि पृथ्वी विश्व का केन्द्र है। १५०० वर्ष तक मसीही संसार में यह विचार बना रहा। इस विचार के विरुद्ध बोलना अपने ऊपर चर्च का कोप लाना था, क्योंकि यह सब धर्म के विरुद्ध समझा जाता था। पोलैन्ड के नीकोलस कोपर्निकस १४७३–१५४३ ने अपने मृत्यु से पहले यह बताया कि सूर्य विश्व का केन्द्र था तथा दूसरे मण्डल उसी के चारों ओर घूमते हैं।१६०९ में एक जर्मन जोहान केपलर ने सिद्ध किया कि कोपर्निकस का सिद्धान्त सही था। गालिलिओं ने दूरबीन का आविष्कार कर ज्युपीटर का Satellite तथा साटर्न (Saturn) की गोलाई की खोज की। आइजक न्युटन ने (१६४२—१७२७) गणित के द्वारा पृथ्वी से चन्द्रमा की दूरी बताई। पारासेलस्स (१४९३—१५४१) वासेल की यूनिवर्सिटी में एक चिकित्सा शिक्षक था जिसने प्रथम बार हिप्पोक्रेट्स तथा गालेन की चिकित्सा सिद्धान्तों की आलोचना की वेसालियस (१५१४—१५६४) एक वेलजियम निवासी था जिसने प्रथम बार मानव शरीर को विभिन्न अंगों में पृथक किया। यह एक धर्म विरोधी कार्य समझा गया था तथा इसके लिये उसे पश्चाताप एवं तपस्या यरूशलेम तीर्थ स्थान पर जाकर करनी पड़ी। विलियम हारवी (१५७८–१६५७) ने बहुत

पहले रक्त संचालन का आविष्कार किया किन्तु बहुत दिनों तक इसे बताने का साहस नहीं हुआ। फ्रान्सिस बेकन ने तर्कशास्त्र में अरस्तू के तर्कशास्त्र की आलोचना की।

सोलहवीं शताब्दी के आलोचनात्मक विचार वाले व्यक्तियों ने ह्यूमनिस्टिक शिक्षा के मूल्यों की समालोचना की। अधिकतर ह्यूमनिस्टिक शिक्षकों ने जागृति के प्रारम्भिक समय के विस्तृत कार्य क्रम को छोड़, थोड़े से चुने हुये साहित्यों में औपचारिकरूप से, जिसमें सिसरो के कार्य विशेष थे, शिक्षा देते थे और यह शिक्षा, शिक्षित व्यक्ति के विकास के लिये पूर्ण समझी जाती थी। विद्यार्थी लैटिन भाषा के लिये बहुत समय देते थे किन्तु जीवन की तैयारी की ओर बहुत कम। शिक्षा तथा शिक्षित दोनों के स्तर गिर गये थे

वास्तविक या 'रियलिस्ट' नाम उन शिक्षकों को दिये गए जिन्होंने इन दशाओं के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ किया। उनका कहना था कि जीवन में वास्तविक वस्तुओं का अध्ययन होना चाहिये। वास्तविकता की वृद्धि करने वालों ने अपने को भूत के अधिकार के घेरे से बाहर कर लिया। प्रोटेसटेन्ट तथा कैथोलिक के बीच के ३० वर्षीय युद्ध ने जिसका प्रभाव प्राय: २०० वर्ष तक रहा, उस प्रयास में बाधा पहुंचायी। इतना होते हुये भी क्रान्तिकारी जो तीन विशेष भागों में विभाजित थे सफल हुए। 'ह्यूमनिस्ट रियलिस्ट' का विचार था कि कला, शिल्पकारी, चिकित्सा, न्याय तथा व्यवस्था, गणित, कृषि आदि प्राचीन साहित्यिक लेखकों के अध्ययन से सीखा जा सकता है किन्तु साहित्य रचनाशैली के लिये नहीं वरन् उसकी विशेषता के लिये अध्ययन करना उचित है। 'सोशियल रियलिस्ट' सामाजिक वास्तविकता के मानने वालों का कथन था कि शिक्षा का ध्येय जीवन को विकसित करने के लिए होना चाहिये। उनके विचार से साहित्यों में अनेक अच्छी वस्तुयें थीं किन्तु वे सब जीवन के लिये सार्थक नहीं थी तथा वे, अपने में माध्यम थी अन्त नहीं। उनका लाभ मानसिक प्रशिक्षण, अच्छी समझ तथा चरित्र के लिये ही हो सकता है। जीवन तथा समाज के विकास के लिये जहां तक वे सहायक हैं वहां तक उनकी उपयोगिता है। 'सेन्स रियलिस्ट' इन्द्रिय वास्तविकता के अनुगामी नये आविष्कारों आदि से प्रभावित थे। उनका विचार था कि सम्पूर्ण ज्ञान जो लाभकारी था वह इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। अवलोकन तथा अनुभव इन्द्रिय

प्रशिक्षण में अत्यन्त ही लाभकर सिद्ध होंगे। इसी समय से आधुनिक वैज्ञानिक प्रणाली से ज्ञान प्राप्त करने की प्रथा स्थापित हुयी।

वास्तविक मनुष्यत्व (ह्युमनिस्ट रियलिस्ट)

फ्रान्कोइस राबेलाइस (१४८३—१५५३) का जन्म फ्रान्स में हुआ था। फ्रान्कोइस सोलहवीं शताब्दी के सर्वश्रेष्ठ शिक्षा शास्त्री ही नहीं वरन् पुरोहित, सन्यासी, चिकित्सक तथा हास्य लेखक भी थे। इनकी लिखी हुई व्यंगात्मक पुस्तक 'दि लाइफ आफ गरगन्टुआ' का जीवन उनके समकालीन शिक्षा के प्रति उनके विचार थे। गरगन्टुआ पहले मध्यकाल की स्कूल की शिक्षा प्राप्त करता है। बहुत दिनों के परिश्रम के पश्चात उसे कुछ भी लाभ नहीं हुआ। उसे एक प्रकार की दवा दी जाती है जिसके द्वारा वह सब पिछली बातें भूल जाता है। फिर उसको शिक्षा वास्तविक रीति से दी जाती है और वह लाभ प्राप्त करता है। उनके विचार ने लौक, मौनटेन तथा रूसो को अत्यन्त प्रभावित किया। उनके विचार थे कि शिक्षा में जीवन की वास्तविकता होनी चाहिये अतएव उसमें सामाजिक शिष्टाचार सम्बन्धी, आत्मिक तथा शारीरिक इन सभी का यथोचित प्रभाव होना आवश्यक है। शिक्षा में जिमनास्टिक तथा खेल के प्रति उनके अत्यन्त उच्च विचार थे। मनोरंजन तथा सैनिक शिक्षा को भी उन्होंने उचित स्थान दिया। बालकों के कार्यों पर उचित निरीक्षण किये जाने पर बल दिया।

जौन मिलटन (१६०२—१६७४) एक अंग्रेज कवि थे। साहित्य, धर्म तथा राजनीति उनके विशेष अध्ययन के क्षेत्र थे। दृष्टि नष्ट हो जाने के पश्चात दूसरों की सहायता से उनके लिखने का कार्य चलता रहा। उनके 'ट्रैक्ट आफ एज्युकेशन' में शिक्षा के ध्येय प्रस्तुत किये गये हैं। शिक्षा की विख्यात परिभाषा जो उनके द्वारा दी गयी थी वह एक पूर्ण तथा उदार शिक्षा कही जा सकती है जो व्यक्ति को न्याय, चातुर्य तथा उदार हृदय से निजी तथा सार्वजनिक कार्य करने के लिये युद्ध तथा शान्ति में योग्य बना सके। जिमनास्टिक के लिये उनका विचार था कि बालकों का दैनिक कार्य तीन भागों में विभाजित होना चाहिये। उनकी शिक्षा, व्यायाम तथा भोजन।। भोजन के डेढ़ घंटे पहले व्यायाम होना चाहिये तद्पश्चात विश्राम। सर्वप्रथम व्यायाम हथियारों के

सही प्रयोग का होना चाहिये इसके द्वारा वे स्वस्थ शक्तिशाली तथा लचीले रहेंगे। दूसरे शिक्षकों के सदृश्य उनके विचार भी भद्र लोगों के पुत्रों की शिक्षा ही से थे।

मिलटन के लिखने के समय 'पारलियामेनटेरियन' तथा 'रौयलिस्ट' के बीच 'सिविल वार' हो रही थी। सम्भव है कि इस कारण उनके लेखों के अन्तर्गत शारीरिक शिक्षा में सैनिक प्रभाव विशेषरूप से प्रगट हुआ है। 'ह्यूमनिस्ट रियलिस्ट' खेल तथा स्पोर्ट को मनोरंजन, प्रसन्नता तथा सामाजिक प्रशिक्षण के साधन के रूप में नहीं समझ सके। उसे वे चातुर्य, सतर्कता, साहस आदि ऐसे गुणों का प्रशिक्षण समझते रहे। उनका विश्वास था कि दिन के हर घंटे में व्यायाम या अध्ययन होना आवश्यक है, जिससे कुछ महत्वपूर्ण फल प्राप्त हो सकते हैं। संगीत को उन्होंने विशेष महत्व दिया।

जुआन लुईस वाइव्स (१४९२—१५४०) स्पेन के ह्यूमनिस्ट थे। इरासमस तथा थोमस मूर इनके मित्र थे। शिक्षा पर इनक विशेष लेख रहे। शैक्षणिक प्रणाली में वे बहुत बढ़े हुये थे। उनका आदेश था कि मन की प्रवृति का अध्ययन किया जाये जिससे शिक्षा की उन्नति में उनका प्रयोग हो। वाइवस प्रयोगात्मक मनोविज्ञान के प्रमुख निर्माणकर्त्ताओं में से एक हैं। व्यक्तिगत अन्तर के कारण शिक्षकों के लिए उचित है कि वे बालकों की प्राकृतिक देन का अवलोकन करें और उसकी योग्यता अनुसार उसे शिक्षित करें।

सामाजिक वास्तविक (सोशियल रियलिस्ट)

'सोशल रियलिस्ट' ने 'ह्यूमनिस्ट रियलिस्ट' की अपेक्षा कहीं अधिक उपयोगी शिक्षा के लिये अभिवाद किया। इनके अनुसार शिक्षा क्रियात्मक जीवन की तैयारी के लिये होनी चाहिये। साहित्य के ज्ञान से जीवन प्रभावात्मक होना चाहिये।

मिकायेल डे मोनटेन (१५३३—१५९२) सोलहवीं शताब्दी फ्रान्स के एक प्रसिद्ध लेखक थे। 'दि एज्युकेशन आफ चिलड्रन' बालकों की शिक्षा पर उनकी एक लिखी हुयी पुस्तक थी। कहा जाता है कि आधुनिक राष्ट्र भी अभी तक उनके उच्च ध्येय को प्राप्त करने में असमर्थ रहे हैं।

उनके बहुत से सिद्धान्तों की पूर्ति वर्त्तमान काल में हुयी है। बालकों को वही करने या होने की शिक्षा देनी चाहिये जो मनुष्य को करना या होना है। उसकी शिक्षा में चरित्र का प्रशिक्षण, सही आदत, शिष्टाचार तथा सदाचार होना चाहिये। वे सिसरो से सहमत हैं कि सर्वोत्तम कला, जीवन में भलि भांति रहने की कला है।

शारीरिक शिक्षा में उनके विचार थे कि बालक की आत्मा को ही बचाने की आवश्यकता केवल नहीं है। उसकी पेशियों को भी बलिष्ठ करना आवश्यक है। यदि शरीर की सहायता नहीं होगी तो मानसिक शक्ति दबी रहेगी। व्यायाम, मनोरंजन, दौड़, कुश्ती, नृत्य, आखेट, घुड़सवारी आदि बालक के अध्ययन का भाग हैं। उसके मानसिक प्रशिक्षण के साथ सदाचार, व्यवहार आदि की भी शिक्षा होनी है। प्रशिक्षण न मानसिक होता है न शारीरिक वरन् सम्पूर्ण मनुष्य का है। शारीरिक शिक्षा सामग्री का ध्येय बालक को ठोस बनाने का था जिससे वह किसी प्रकार, किसी वस्तु से पराजित न हो। बालक की सही शिक्षा शिक्षक के ही द्वारा हो सकती है।

जौन लौक (१६३२–१७०४) अट्ठारहवीं शताब्दी के मानसिक राज्य-कर्त्ता के रूप में विख्यात हैं। इनका जन्म इंगलैंड में हुआ था। औक्सफोर्ड में, इनकी शिक्षा हुयी जहां इन्होंने चिकित्सा में डिग्री प्राप्त की। 'सम थौट्स कन्सर्निंग एज्युकेशन' शिक्षा के प्रति कुछ विचार नामक पुस्तक इन्होंने लिखी। इसमें शिक्षा के प्रति उनके ध्येय हैं—शरीर की शक्ति, आत्मा के गुण तथा ज्ञान या मानसिक शक्ति का अर्जन। सर्वप्रथम उनकी चिन्ता शरीर के लिये है। पुस्तक के आरम्भ ही में लिखते हैं "एक शक्तिशाली मस्तिष्क एक शक्तिशाली शरीर में एक छोटी कहावत है किन्तु संसार में सुखी जीवन के लिये सब कुछ है।"

यदि किसी के पास ये दोनों हैं तो उन्हें और क्या चाहिये। स्वास्थ्य हमारे अपने व्यवसाय तथा प्रसन्नता के लिये कितना आवश्यक है। कठिनाई तथा थकान सहने के लिए शक्तिशाली शरीर का होना अत्यन्त आवश्यक है तथा इसी के कारण मनुष्य संसार में कुछ करने के योग्य हो सकता है। पुस्तक का एक तिहाई भाग स्वास्थ्य के नियमों से भरा है। जौनलौक बालकों को सलाह देते हैं कि शीतकाल में बहुत गर्म कपड़े न पहनें, हलके जूते पहनें और पैर ठण्डे पानी

से प्रतिदिन धोयें, तैरना सीखें, खुली हवा में जितना रह सकते हैं रहें। हर प्रकार के मौसम के अभ्यस्त हों। कसे कपड़े नहीं पहनने चाहिये। इसके पश्चात खाने की आदत तथा भोजन के विषय में विस्तृत रूप में लिखा गया है। लौक का विचार है कि स्वास्थ्य तथा शारीरिक सुधार शरीर के शासन तथा कड़ेपन से ही आ सकता है। पुस्तक के शेष भाग में शिष्टाचार तथा सदाचार के महत्व पर लिखा गया है। यहां वह इस बात पर बल नहीं देते हैं कि शारीरिक शिक्षा भी उस प्रशिक्षण में एक महत्वपूर्ण भाग ले सकता है। नाइट के स्पोर्ट्स की ओर कोई विशेष रुचि नहीं दिखाई गई है।

उनका विचार था कि बालकों को दो या तीन व्यवसाय, या फिर एक तो सिखलाना ही चाहिये। व्यवसाय हाथ के काम का हो क्योंकि परिश्रम से स्वास्थ्य लाभ प्राप्त भी हो सकता है।

इन्द्रीय वास्तविक (सेन्स रियलिस्ट)

रीचर्ड मलकास्टर (१५३०—१६११) सोलहवीं शताब्दी के इस विख्यात अंग्रेज स्कूल मास्टर ने ५० वर्ष तक लंदन के मर्चेंट टेलर तथा सेन्टपाल स्कूल में शिक्षा दी। शिक्षा पर लिखी हुई पुस्तक लाभदायक तथा प्रसिद्ध हुयी। ये उन प्रथम शिक्षकों में से एक हैं जिन्होंने सीखने की सामग्री की अपेक्षा सीखने वालों के प्रति ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता बतायी। अतएव यह कहा जा सकता है कि शिक्षा विज्ञान की नींव यहीं स्थापित की गयी। शिक्षा पर इन्होंने दो पुस्तकें लिखीं। 'एलीमेन्टेयर' तथा 'पोज़ीशन्स'। 'पोज़ीशन्स' पुस्तक में पैंतालीस स्थान की अवस्थायें हैं जो बालकों के प्रशिक्षण में पुस्तक के चातुर्य या शरीर के स्वास्थ्य के लिए अति आवश्यक हैं। इससे पता चलता है कि शारीरिक शिक्षा में उनकी विशेष रुचि थी। इन्द्रीय वास्तविक शिक्षा के अनुयायियों ने यह विचार प्रकट किये कि जीवन की बातों का आविष्कार प्रकृति की शक्ति तथा नियमों से प्राप्त किया जा सकता है। ज्ञान इन्द्रियों के द्वारा आता है अतएव शिक्षा इन्द्रियों के प्रशिक्षण की होनी चाहिये। मलकास्टर का मत था कि शिक्षा विशेष उपयोगी होनी चाहिए जिससे मनुष्य अकेला नहीं वरन् समाज में दूसरे के साथ भली भांति रह सके। इन्द्रियों को ज्ञान के द्वार समझने के कारण शारीरिक शिक्षा को बहुत प्रोत्साहन मिला। यह विचार दृढ़ हुआ कि उत्तम शिक्षा के लिये

उत्तम शारीरिक साधन आवश्यक हैं। मलकास्टर व्यायाम के मनोरंजन तथा सैनिक उद्देश्यों के लाभ से परिचित थे किन्तु व्यायाम के मनोरंजन और सैनिक उद्देश्यों को वह शिक्षा ग्रहण करने वाले व्यक्ति के स्वास्थ्य एवं स्वास्थ्य प्रगति के लिये प्रयुक्त करना चाहते थे। उन्होंने निराशा प्रगट की कि अनेक व्यक्ति अपनी योग्यताओं को, प्रभावपूर्ण स्वास्थ्य न होने से, सम्पूर्ण रूप से विकसित नहीं कर पाते हैं स्वास्थ्य बचपन से ही शिक्षा का एक मूल उद्देश्य होना चाहिये। व्यायाम के द्वारा शारीरिक सुधार सम्भव है। शिक्षा की दृष्टि से मलकास्टर ने ६ से १२ वर्ष की आयु को महत्वपूर्ण बताया। शिक्षक व्यवसाय के लिये शिक्षकों का प्रशिक्षण आवश्यक है जिसके लिये शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय होने चाहियें। यह एक प्रकार से क्रान्तिकारी विचार था। इस बात पर उन्होंने बल दिया कि शारीरिक शिक्षा उन्हीं के द्वारा पढ़ाई जानी चाहिये जो दूसरे विषय पढ़ाते हों। शिक्षक की योग्यता तथा चातुर्य पर उत्तम शिक्षा निर्भर रहती है। मलकास्टर ने स्कूल के स्वस्थ वातावरण तथा स्थिति पर विशेष बल दिया। इस युग में किसी भी लेखक ने शारीरिक शिक्षा के महत्व पर इतना बल नहीं दिया जितना कि मलकास्टर ने दिया था।

जौन आमोस कोमोनियस (१५९२—१६७०) का जन्म आसट्रिया में हुआ था। उनका शैक्षणिक सुधार उस समय उतना नहीं समझा जा सका जितना कि अब समझा जा रहा है। उनकी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक 'दि ग्रेट डिडैकटिक' है। उस में उनके विचार हैं, कि प्रत्येक मनुष्य को शिक्षा का अधिकार इस लिये है कि वह मनुष्य है। शिक्षा मातृभाषा में होनी चाहिये। शिक्षा शैशवावस्था से आरम्भ होनी चाहिये। शिक्षा विशेष रूप से सामान्य के लिये होनी चाहिये। बालक तथा बालिकायें दोनों शिक्षित होने चाहियें। इस पुस्तक में शिक्षा प्रणाली तथा शिक्षा सामग्री भी दी गई है।

शारीरिक शिक्षा में जिमनास्टिक, खेल, दौड़, कुश्ती, गेन्द का खेल तथा छोटे खेलों को प्रोत्साहित करना चाहिये। लम्बी यात्रा अध्ययन तथा मनोरंजन के लिये लाभदायक है। कोमोनियस, बालकों की शिक्षा में खेल के मूल्य का एक प्राकृतिक तथा आवश्यक साधन समझते थे। उनके अनुसार दिन तीन भागों में विभाजित होना चाहिये। आठ घण्टे की निद्रा, आठ घण्टे का कार्य, आठ घण्टे आहार, मनोरंजन तथा शारीरिक विकास के लिये।

शिक्षा की आवश्यकता प्रत्येक के लिये है। इन्द्रीय वास्तविक ह्युमनिस्ट की विशेष देन शिक्षा प्रणाली की थी।

कोमेनियस अपने धार्मिक विचारों के द्वारा अपने सामान्य विचारों से संसार में अधिक प्रभावित रहा। कोमेनियस प्रत्येक विषय में मध्यम का प्रचारक रहा। उनका विचार था कि बालकों के एक साथ खेलने में शिक्षक के लिए एक प्रभावपूर्ण प्रणाली प्राप्त होती है।

ऊल्फगैंग राटके (१५७१–१६३५)

फ्रानसिस बेकन (१५६१–१६२६) एक विख्यात अंग्रेज दार्शनिक तथा राजनैतिक था उसने 'एडवान्समेंट आफ लर्निंग' 'दि न्यू एटलानटिस' तथा 'नोभम ओरगानुम' नामक पुस्तक लिखी। इनके विचार नवीन तो नहीं थे किन्तु अनेक व्यक्ति उससे प्रभावित हुये थे। जर्मनी का उल्फगैंन्ग भी उनसे प्रभावित हुआ और अपने नवीन विचार तथा प्रणाली को प्रकाश में लाया। अपनी पुस्तक 'न्यु मेथेड' जो १६१७ में प्रकाशित हुई थी, उसमें उन्होंने शिक्षा के आधारभूत तथ्यों का वर्णन किया है। प्राकृतिक बातों को महत्व देना, एक वस्तु एक समय में, पुनरावृत्ति के द्वारा स्मरण रखना, शिक्षा में मातृभाषा का प्रयोग, कक्षा में शासन, व्यक्तिगत अनुभव आदि प्रद्धति प्रसारित की गई हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि वास्तविक ह्युमनिस्ट ने शिक्षा की व्यापकता का प्रचार किया। व्यापकता से उनका अर्थ था कि सभी शिक्षित हों चाहे वह किसी लिंग अथवा वर्ग के हों। शिक्षा के द्वारा वह जो ध्येय प्राप्त करना चाहते थे वह इस प्रकार है; शिक्षा के द्वारा मानसिक तथा शारीरिक योग्यताएँ विकसित हों; शिक्षा इन्द्रियों के माध्यम से दी जाय, शिक्षा व्यक्तिगत अनुभव पर आधारित हो, शिक्षा मातृभाषा में ही हो तथा शिक्षा में विशेष ध्यान शिक्षार्थी पर हो न कि विषय वस्तु पर।

१०

प्राकृतिक तथा प्रकाश का युग

अट्ठारहवीं शताब्दी, आधुनिक, राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा शैक्षणिक सिद्धान्तों की स्थिति में अन्तर हुआ। इस युग में दो विचार प्रचलित थे। मनुष्य का जन्मजात अधिकारों का सम्मान तथा आलोचनात्मक विश्लेषण तथा वैज्ञानिक अनुसन्धान के द्वारा वातावरण पर प्रभुत्व प्राप्त करना।

यह परिवर्तित स्थिति विशेष कर फ्रान्स में प्रतीत होती है जहां स्वाधीन राजा, उदण्ड, अभिमानी तथा अयोग्य 'नोबलस' की सहायता से शासन करता था। जनता दरिद्रता और दबाये जाने के कारण दुखित थी। विकृत किन्तु शक्तिशाली धार्मिक संस्था, धर्म विरोधियों को ध्वंस करके नृप शासन का साथ देती थी। शैक्षणिक कक्षा की प्रथा अवैज्ञानिक तथा बालकों के प्रति क्रूर थी। समाज के खंडों में बनावटी तथा दिखावे की भावना आ गयी थी। धार्मिक आडम्बर के कारण घोर अत्याचार तथा पाप का साम्राज्य था। शताब्दी के अन्तिम दिनों में वोलटेयर की शिक्षा ने चर्च तथा स्टेट की तीव्र आलोचना की। रूसो ने समाज तथा शिक्षा को दोषी ठहराया। इन विभिन्न प्रभावों के कारण फ्रान्स का आन्दोलन सफल हुआ जिसने सम्पूर्ण यूरपीय समाज के ढांचे को मिट्टी में मिला दिया।

युग के आरम्भ में इंगलैंड ही एक ऐसा देश था जहां प्रजातांत्रिक, राज्य क्रमशः मेगनाकार्टा के दिनों से प्राप्त हुआ था। इंगलैंड की जनता ने शताब्दियों अपने वैधानिक अधिकार तथा स्वतंत्रता के लिये संघर्ष किया था जिसका परिणाम 'बिल आफ राइट्स' के रूप में सामने आया। उन्नीसवीं शताब्दी में समाज का पुनर्जन्म हुआ।

जीन जाकूयेस रूसो (१७१२ — १७७८) का जन्म स्विटजरलैंड में हुआ था। फ्रान्स के समाज की सबसे तीव्र आलोचना रूसो ने की थी। उसने कहा कि सभ्य मनुष्य दासत्व की दशा में जन्म लेता, जीवित रहता तथा जीवन त्याग करता है। सामाजिक असमानता तथा निम्न वर्गों के साथ उच्च वर्गों के निर्दयतापूर्ण व्यवहार के कारण वह अत्यन्त चिन्तित था। बनावटी तथा आडम्बरपूर्ण जीवन के प्रति उसने क्रान्ति उत्पन्न कर दी। उसका दृढ़ विश्वास था कि सभ्यता प्रत्येक अप्रसन्नता का कारण है। उसने प्रकृति की तथा नैसर्गिक वस्तुओं की ओर लौटने की घोषणा की। उसके महत्व-पूर्ण साहित्यिक लेखों में 'डिसकोर्स ओन इन्इक्वालिटी' 'इमाइल, डिसकोर्स ओन पोलिटिक्ल इकोनोमी' 'दि सोशल कोन्ट्रैक्ट' आदि थे।

रूसो की 'इमाइल' पुस्तक पांच भागों में थी, यह अपने प्रकार की एक विचित्र पुस्तक थी जैसी की शैक्षणिक साहित्य में कभी नहीं लिखी गयी थी। पार्लियामेन्ट ने उसे दोषी ठहराया, चर्च ने उसे जला दिया परन्तु दार्शनिकों ने उसकी प्रशंसा की, शिक्षा सम्बन्धी व्यक्तियों ने उसके सिद्धान्तों को अपनाया। रूसो ने बालकों को प्रौढ़ों की तरह समझने तथा उसी प्रकार व्यवहार करने की रीति का घोर विरोध प्रतिरोध किया। उसके समय में बालकों को लम्बे चिपके कपड़े पहनाये जाते थे, उन पर सुन्दरता मुखरित करने की सामग्री लगायी जाती थी तथा उन्हें प्रौढ़ों की तरह व्यवहार करने के लिये शिक्षा दी जाती थी। स्कूल में शिक्षा ऐसी होती जैसे कि वे प्रौढ़ थे और उन्हें शिक्षा की असफलता पर शारीरिक दण्ड दिया जाता था। रूसो का कहना था कि प्रकृति की इच्छा है कि वे प्रौढ़ होने के पूर्व बालक रहें।

उसकी प्रसिद्ध पुस्तक 'इमाइल' १७६२ ई० में छपी थी जिसमें उसने फ्रान्स की ही वही वरन् सम्पूर्ण पश्चिमी यूरोप के धर्म, समाज तथा शैक्षणिक दशाओं का विरोध किया था। इस पुस्तक में उसने इमाइल नामक एक काल्पनिक बालक तथा उसकी होने वाली पत्नी सोफिया की प्राकृतिक प्रणाली के द्वारा शिक्षा के विषय में लिखा है। उनके विचार से बालक के तीन मुख्य शिक्षक थे प्रकृति, मनुष्य तथा इन्द्रीय ज्ञान या अनुभव। अपने काल्पनिक बालक को उसने सर्वप्रथम समाज से पृथक जंगल में स्वतंत्रता से रहने के लिये रखा। वहां वह खुले सिर, नंगे पैर, घूमता, साधारण स्वस्थकर भोजन करता तथा

बिना विछावन की शैय्या पर सोता था। इमाइल की वास्तविक शिक्षा १२ वर्ष की आयु से आरम्भ होती है जब वह ज्ञान प्राप्त करने के लिये उत्सुक होता है और जानने की इच्छा प्रदर्शित करता है। उसकी शिक्षा १५ वर्ष की आयु पर अन्त होती है किन्तु यह पुस्तकों से नहीं वरन् ज्ञान इन्द्रियों, अवलोकन, प्रयोग तथा विचारों के सहयोग के द्वारा दी जाती है। इमाइल का जीवन इस प्रकार पांच हिस्सों में विभाजित है जो क्रमानुसार हैं—शैशवावस्था, ५—१२ वर्ष की आयु जब वह स्वतंत्रता से भ्रमण करता, किशोर अवस्था १२—१५ वर्ष में औपचारिक मानसिक शिक्षा प्राप्त करने की आयु, १५—२० वर्ष सामाजिक आयु जब वह मानसिक तथा शारीरिक प्रवीणता प्राप्त करता है तथा प्रौढ़ या गृहस्थ आयु जब विवाह आदि की आयु होती है।

किसी भी शिक्षा शास्त्री ने मस्तिष्क तथा शरीर के एकत्व को इस प्रकार नहीं समझा जैसा रूसो ने। रूसो का विचार एक अविभाजित अस्तित्व का जन्म से मृत्यु पर्यन्त लगातार प्रगति का था। रूसो के शिक्षा सिद्धान्त में विशेष देन उसका यह विचार है कि बालक की प्राकृतिक उत्तेजनाओं को शिक्षा में औपचारिक प्रतिबन्धों तथा शासनों से मुक्त होना चाहिये जिससे सीखना, खेल, हस्तकला तथा प्रकृति के साथ, स्वयं, की जानकारी में हो। इस विचार का कि मनुष्य की प्रकृति जन्म से ही दूषित है उसने घोर विरोध किया।

रूसो ने उन खेलों तथा शारीरिक क्रियाओं को सराहा जिनसे सामाजिक विकास होता है। बालक के खेल की मानसिक प्रवृत्ति पर तथा उन क्रियाओं एवं सीखने की प्रक्रिया के लाभ पर वह अधिक ज़ोर देते हैं। इस विचार ने स्कूल जाने के पहले की आयु में जो शिक्षा सम्भव हो सकती है उसे प्रकट किया। अतएव उन्नीसवीं शताब्दी में किन्डरगार्टन स्कूलों की स्थापना अमेरिका तथा यूरोप में इसी विचार के कारण हुई। बलपूर्वक खेल में भाग लेने के वे विरोध में थे। रूसो, लौक तथा मौनटेन के शारीरिक शिक्षा विचारों का समर्थन करते हैं। शारीरिक प्रशिक्षण जो साधरणतः ध्यान में नहीं रखा जाता है वह शिक्षा का एक मुख्य भाग है इसके द्वारा बालक न केवल स्वस्थ तथा बलशाली होते हैं पर उसका नैतिक प्रभाव भी पड़ता है। इस शारीरिक शिक्षा के उच्च विचार में जिसे नैसर्गिक प्रथा के मानने वालों ने प्रसारित किया, बालकों को गतिप्रद चातुर्य, उसके स्कूल

वातावरण का विकास, उसे उपयुक्त मनोरंजन प्रदान करना, शरीर को कठोर करना जिससे प्रत्येक आकस्मिक घटना का सामना किया जा सके तथा अपने साथियों के साथ कार्य करना तथा खेलने की शिक्षा आती है। शारीरिक क्रिया मानसिक प्रगति को मन्द नहीं, उत्तेजित करती है। विचार करना सीखने के लिये शारीरिक अगों तथा इन्द्रियों को, जो ज्ञान के द्वार हैं, व्यायाम कराना आवश्यक है। रूसो ने अपने काल्पनिक इमाइल के लिये कठिन शारीरिक कार्यों के द्वारा मनोरंजन की प्रस्तावना की थी। मनोरंजन की अधिकता का भी विरोध किया गया था। रूसो का विचार था कि जो शिक्षा बालक अपने आप प्राप्त करता है वह उस शिक्षा की अपेक्षा कहीं अधिक उत्तम होती है जो शिक्षक के द्वारा पाठ्यक्रम के साधन से दी जाती है। शिक्षक का कार्य बालक को उत्तेजित करने का है।

रूसो की प्राकृतिक प्रणाली के आधार पर अनेक स्कूल स्थापित हुये। इनका नाम 'फिलान्थ्रोपिनम' पड़ा जो यूनानी शब्द से लिया गया था जिसका अर्थ है 'मनुष्य का भ्राता'। इन स्कूलों में दोनो लिंगों तथा प्रत्येक वर्ग के लिये विस्तृत पाठ्यक्रम के साथ साथ शारीरिक शिक्षा, ग्रामों में मनोरंजन हेतु भ्रमण, व्यवसायिक प्रशिक्षण तथा बाग़बानी की सुविधायें उपलब्ध थीं। शारीरिक शिक्षक, जागृति के समय की शिक्षाप्रथा से आदेशित होकर तथा रूसो की प्रणाली को अपने व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर समझ के तथा उसमें सुधार करके शिक्षा देते थे। यही प्रथा उन्नीसवीं शताब्दी के यूरोप में प्रचलित रही तथा इसी ने आधुनिक शारीरिक शिक्षा सिद्धान्त का मार्ग दर्शन किया।

जोहान बर्नहार्ड बेसडो (१७२३—१७९०) का जन्म हामवर्ग में हुआ था। धर्मशास्त्रों का अध्ययन इन्होंने लाइपजीग यूनिवर्सिटी में किया। कुछ दिनों तक निजी शिक्षक का कार्य किया। १७७४ में शिक्षा प्रणाली पर उनकी एक पुस्तक छपी जिसमें बहुत से रूसो की भांति प्राकृतिक शिक्षा के विचार भी सम्मिलित किये गये थे। इसके पश्चात इस विषय पर अनेक पुस्तक लिखीं। १७७४ में ही एक यथार्थ स्कूल का कार्यक्रम जो प्राकृतिक दर्शन पर आधारित था, बेसडो के द्वारा दसाऊ शहर में फिलान्थ्रोपिनम के नाम से स्थापित किया गया। यह फिलान्थ्रोपिनम या प्राकृतिक स्कूल प्रिंस लिओपोल्ड फ्रान्ज़ के सहृदयता से सम्भव हो सका था।

आधुनिक यूरोप में यह प्रथम स्कूल था जहां प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति प्रवेश पा सकते थे तथा जिमनास्टिक दैनिक कार्यक्रम का एक मुख्य भाग हुआ करता था। बेसडो के शिक्षा विचार यद्यपि आज दृढ़ माने जाते हैं तथापि उनके सम कालीन लोगों ने उनकी इस नवीन शिक्षा प्रणाली को स्वीकृत नहीं किया। बेसडो ने यह प्रस्ताव किया कि प्रतिदिन तीन घंटे शारीरिक शिक्षा के लिये, पांच घंटे अध्ययन के लिये तथा दो घंटे हस्तकला के लिये प्रयोग करना चाहियें। यह स्कूल दूसरे स्कूलों से भिन्न था। यहां बालक स्वतंत्र थे।

कई एक कारणों से जिनमें बेसडो का व्यक्तिगत व्यवहार कदाचित मुख्य था १७९३ ई० में स्कूल स्थापित कर्त्ता की मृत्यु के तीन वर्ष पश्चात बन्द हो गया।

जोहान साइमन फिलान्थ्रोपिनम के प्रथम शारीरिक शिक्षक थे। प्रातः काल एक घंटा तथा मध्यान्ह दो घंटे के लिये सम्पूर्ण स्कूल के सब शिक्षार्थी विभिन्न प्रकार के खेल, जिमनास्टिक, व्यायाम, स्पोर्ट्स, मनोरंजन तथा हाथ के परिश्रम में भाग लिया करते थे। अनेक नाइट्स के स्पोर्ट, नृत्य, घुड़सवारी बनैठी, तथा कुछ दौड़, कूद, फेंकना, कुश्ती, गढ़ों के पार कूदना, ऊंची कूद, पटरों पर तुला करना आदि में भाग लेते थे। बालक बैडमिन्टन के प्रकार का खेल, टेनिस, तथा तुला झूल में भी भाग लेते थे।

जोहान डू टोइट, जो साइमन के उत्तराधिकारी थे, उन्होंने सीढ़ी के व्यायाम, तैरना, स्केट करना तथा धनुष विद्या का प्रचलन किया। साथ ही साथ संगीत, मार्चिंग तथा सैनिक की तरह खेलों को प्रोत्साहित किया था। जोहान एक सैनिक पुरुष थे।

इस स्कूल के प्रभाव से अनेक स्कूल खुले। अनेक इसमें अल्पकालिक प्रमाणित हुये। इनमें सर्व प्रसिद्ध **क्रिश्चियन सालजमन** के द्वारा स्थापित की गयी संस्था 'शेनपेन्थाल एज्युकेशनल इन्सटीट्युट' थी। जोसेफ रोकल जो एक शिक्षक प्रशिक्षण स्कूल के अध्यापक थे उन्होंने सालजमन के स्कूल में १८०५ में नौ दिन व्यतीत किये। अपनी एक लिखित रिपोर्ट में उन्होने वहां के साधारण भोजन, हल्के साधारण वस्त्र अध्ययन तथा शयन के लिये खुले कमरे, व्यक्तिगत स्वच्छता पर विशेष ध्यान, क्रियाशील खुली हवा का जीवन, नियमानुसार घूमने

जाना, बगीचे में कार्य तथा विशेष रीति से जिमनास्टिक के व्यायाम के विषय में लिखा है। उन्होंने गट्स मथ्स के साथ नया घुड़सवारी का स्कूल, कूदने तथा सहारे की छलांग के लिये खेल के मैदान तथा तैरने का तालाब देखा। विद्यार्थियों को बढ़ई का काम करते देखा, रंग से चित्रकारी देखा, समय समय पर होने वाले उत्सव के बारे में तथा वार्षिक भ्रमण आदि के विषय में ज्ञान प्राप्त किया। उनका कहना था कि जर्मनी में कदाचित ही कोई ऐसी शिक्षा संस्था हो जहां इस प्रकार विद्यार्थियों के शारीरिक स्वास्थ्य तथा विकास के लिये उत्तम स्तर पर ध्यान दिया जा रहा हो।

यहां के प्रथम शारीरिक शिक्षक **क्रिश्चियन कार्ल एन्ड्री थे** जो केवल एक वर्ष तक रहे। दसाऊ के फिलान्थ्रोपिनम के सभी शारीरिक शिक्षा कार्य यहां कराये जाते थे तथा किसी निशाने पर मारना, पहाड़ के ऊपर तथा नीचे दौड़ लगाना एवं पोल वाल्ट का भी अभ्यास कराया जाता था। ऋतु के अच्छे न होने पर व्यायाम आदि अन्दर कराये जाते थे। रविवार के मध्याह्न के समय विश्राम, भ्रमण, आमोद प्रमोद, खेल तथा जिमनास्टिक स्पोर्ट हुआ करते थे। जिमनास्टिक की कक्षा दिन के समय ११-१२ बजे तक होती थी। मध्याह्न के भोजन के पश्चात २ बजे तक बालकों को खेलने का अवसर दिया जाता था। संध्या समय भी यह कार्यक्रम दूसरे मनोरंजन के साथ बारी बारी से होता था। कक्षा बाहर सुहावने खुले स्थान में पेड़ की छाया के नीचे हुआ करती थी। साधारणतः कूदने के लिये खुदा हुआ स्थान, संतुलन के लिये लट्ठा तथा एक जोड़ा सीधे गड़े हुये डंडे थे। बाग़बानी तथा दूसरे प्रकार का हाथ का परिश्रम तथा प्रशिक्षण भी दिये जाते थे।

जोहान फ्रेडरिक गट्स मथ्स (१७५९-१८३९) ऐन्ड्री के उत्तराधिकारी हुये। यहां पर उन्होंने ५० वर्ष तक सेवा की। ये फ्रेडरिक लुडविग जहान के समकालीन थे। गट्स मथ्स ने हाल यूनीवर्सिटी में अध्ययन किया था जहाँ वे गणित, प्रकृति विद्या, धर्मशास्त्र, आधुनिक भाषा में शिक्षित हुये थे। इसके साथ ही वह एक निपुण जिमनास्ट, काठ कला में चतुर तथा चित्रकारी में सधे हुये थे। हाल यूनिवर्सिटी में इन्होंने शिक्षक प्रशिक्षण भी प्राप्त किया था।

यद्यपि जोहान फ्रेडरिक गट्स मक्सस प्रथम शारीरिक शिक्षक नहीं थे तथापि अपनी लम्बी सेवा अवधि तथा बहुमूल्य साहित्यिक देन के कारण आधुनिक

शारीरिक शिक्षा के वास्तविक संस्थापक तथा जर्मन जिमनास्टिक के पितामह कहे जाते हैं। गट्स मथ्स अपने पूर्वाधिकारी एन्ड्री के अधिकांश व्यायामों का प्रयोग करते थे। शैक्षणिक दृष्टिकोण से उन्होंने कार्यक्रम को तीन कक्षाओं में विभाजित किया। जिमनास्टिक व्यायाम, हाथ का परिश्रम तथा सामाजिक खेल। गट्स मथ्स प्रगति माप के लिये प्रत्येक बालक के यथार्थ कार्य का सही लेखा रखते थे। गट्स मथ्स की कीर्ति उनकी दो पुस्तकों 'जिमनास्टिक फार दि यन्ग' तथा 'गेम्स' के द्वारा और हुयी। ये केवल शारीरिक शिक्षा के प्रथम ग्रन्थ ही नहीं थे जो एक अभ्यस्त व्यक्ति के द्वारा लिखे हुये थे वरन वे एक अत्यन्त ऊंचे स्तर के भी थे। उनके 'जिमनास्टिक फौर दि यन्ग' पुस्तक से पता चलता है कि किस प्रकार की सामग्री वे शारीरिक शिक्षा में प्रयोग करते थे। चलना, दौड़ना, स्वतंत्र तथा आपरेटस के साथ कूद, बोझ उठाने तथा ले जाना, खींचना, धक्का देना, घुसना, कुश्ती, बनैठी, उपर चढ़ना, संतुलन के लिये व्यायाम, आपरेटस के साथ संतुलन का अभ्यास, वस्तु फेंकना, धनुष विद्या, स्नान तथा तैरना, लचीलेपन का व्यायाम, सौन्दर्य ज्ञान की प्रबल इच्छा शक्ति तथा व्क्तव्य का प्रशिक्षण, नृत्य, इन्द्रीय प्रशिक्षण के लिये व्यायाम, तथा सैनिक व्यायाम, आदि के ऊपर पृथक पृथक अध्याय दिये हुये हैं। हाथ के परिश्रम में जो कार्य आते थे, वे थे काठ कला, जिल्द बनाना तथा बाग़बानी। लम्बी 'हाइक' पर तथा 'पिकनिक' में प्रायः सम्पूर्ण स्कूल जाया करता था।

गट्स मथ्स का यह विचार था कि शारीरिक शिक्षा का सिद्धान्त तथा अभ्यास शरीरक्रिया शास्त्र तथा चिकित्सा के आधार पर होना चाहिये। जिमनास्टिक प्रणाली में उन्होंने खेल तथा तैरने को भी स्थान दिया।

व्यायाम आदि के करने में प्रसन्नता तथा आनन्द प्राप्त होना चाहिये तथा इनका ध्येय शरीर तथा आत्मा को शक्ति तथा मेल प्रदान करना था जिसके द्वारा सम्पूर्ण व्यक्ति का विकास सम्भव हो सके। शारीरिक योग्यता तथा सम्पूर्णता से आत्म विश्वास तथा साहस प्राप्त होता है जिसे समाज के प्रत्येक व्यक्ति को ग्रहण करना चाहिये। शैशवावस्था तथा बाल्यकाल में शरीर का बढ़ाव तथा विकास सर्वप्रमुख नैसर्गिक आवश्यकता है। हलके जिमनास्टिक तथा खेलों में लड़कियों तथा महिलाओं को भी भाग लेना चाहिये।

गट्स मथ्स ने व्यायाम का वर्गीकरण तथा क्रमानुसार उनका विस्तृत बिवरण किया तथा प्रत्येक के अभ्यास के लिये समय नियुक्त किया। कहा जाता

है कि यूनानियों के समय से लेकर अब तक किसी ने शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्त तथा अभ्यास को इतनी बुद्धिमानी से तथा निपुणता से विकसित नहीं किया था। गट्स मथ्स का प्रभाव तत्कालिक तथा विस्तृत रहा। इनका प्रभाव डेनमार्क, स्विडेन तथा अमेरिका में दृष्टिगोचर हुआ। अनेक विद्वान तथा महत्वपूर्ण व्यक्ति उनका स्कूल देखने आये। गट्स मथ्स न केवल एक विख्यात तथा निपुण विद्वान ही थे वरन वे एक वास्तविक अध्यापक थे। यदि राजनैतिक बाधायें तथा युद्ध उनके कार्य में आक्षेप नहीं करते तो कदाचित वे स्कूल जिमनास्टिक को सामान्य शिक्षा में एक प्रमुख स्थान देने में समर्थ हो जाते।

जोहान हेनरिक पेस्टालोजी (१७४६-१८२७) संसार के श्रेष्ठ अध्यापकों में से एक थे। इनका जन्म स्विटजरलैंड के जूरिक नगर में हुआ था। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में इन्होंने आधुनिक शिक्षा प्रणाली की नींव डाली थी। यह विद्वान अध्यापक लौक तथा रूसो ऐसे व्यक्तियों के द्वारा प्रभावित हो कर उनके सिद्धान्तों को सही स्थान तथा शिक्षा मनोवैज्ञानिक आधार दिया। रूसो के 'सोशियल कौनट्रैक्ट' तथा 'इमाइल' ने उन्हे अत्यन्त ही प्रभावित किया। समाज सुधार की इच्छा होते हुये भी वह अपना समय उस ओर न दे सके और परिस्थिति के कारण उन्हे शिक्षक का पद ग्रहण करना पड़ा।

बालकों के बीच सेवा करते हुये उन्हे उनसे अत्यन्त प्रेम हो गया। यहीं उनको अवलोकन तथा प्रयोग के द्वारा अपने शिक्षा सिद्धान्त के निर्माण करने का अवसर प्राप्त हुआ। पेस्टालोजी, बालक की तुलना एक खिलते हुये पौधे से करते हैं। उनका कहना है कि शिक्षा का ध्येय बालक के मानसिक, नैतिक तथा शारीरिक शक्ति का नैसर्गिक, सुडौल तथा तालबद्ध विकास है। शिक्षा में, अध्यापक का उत्तरदायित्व केवल यह है कि वह बालक के स्वयं के अवलोकन, इन्द्रीय ज्ञान तथा कार्य को सहानुभूति तथा बुद्धिमानी से आदेशित करता रहे। ई० सन १८००में एक शिक्षक प्रशिक्षण संस्था बर्गडोरफ में स्थापित की गयी। पेस्टालोजी अपने विद्यार्थियों को भी यहां ले आये और संस्था के प्रधानाचार्य नियुक्त हो गये। इस प्राप्त अवसर में उन्होंने अपने शैक्षणिक सिद्धान्तों का जिन पर वह विचार कर रहे थे, प्रयोग किया। तीन वर्षों के अन्दर ही उन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा में एक वैज्ञानिक प्रणाली के प्रयोगकर्ता तथा आविष्कारक के रूप में अन्तराष्ट्रीय कीर्ति अर्जित कर ली। स्विस सरकार ने १८०४ में पेस्टा-

लोजी को यूवरडून के नवीन निर्माणित शिक्षक प्रशिक्षण संस्था में निर्देशक नियुक्त कर दिया जहां वह बीस वर्ष तक सेवा प्रदान करते रहे। युवरडुन की संस्था ने यूरोप तथा अमेरिका का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया।

पेस्टालोजी के शिक्षा सिद्धान्त के विषय में ज्ञान प्राप्त करने के लिये दो स्रोत मुख्य हैं, वह हैं उनके 'रीपोर्ट आफ दी मेथड' तथा 'हाऊ गरटूड टीचेस हर' चलिड्रन। उन्हों ने तत्कालिक वर्तमान तथा भूत की शिक्षा सिद्धान्तों का भी मनन किया था। रूसो के प्राकृतिक विचारों से सहमत होते हुये उनका कहना था कि शैक्षणिक गति का उपचार मानव समाज में होना चाहिये। प्रकृति सीखने वाले के मार्ग में बाधा डालती है। इन बाधाओं को परास्त करने के लिये बालक को शिक्षक की सहायता की परम आवश्यकता है।

पेस्टालोजी के ध्येय तथा सिद्धान्त के अनुसार शारीरिक व्यायाम तथा खेल शिक्षक के निरीक्षण में होना आवश्यक है। खुली हवा में खेलने के पश्चात मानसिक कार्य और सुचारु रूप से तथा लम्बे समय तक किया जा सकता है। खेल में इस प्रकार के मनोरंजन के साथ यदि उसमें भाग लेने की रुचि तथा प्रतियोगिता की भावना उत्पन्न की जाये तो वह बालक के पूर्ण विकास में उपयोगी सिद्ध होगी। शक्ति, चातुर्य, सहने की शक्ति, ठोसपन, शारीरिक समन्वय आदि जो शारीरिक शिक्षा के द्वारा प्राप्त किये जाते हैं उनने कारण इस विषय को सामान्य शिक्षा का एक महत्वपूर्ण खण्ड होना अनिवार्य है। बालक के एकत्व को दृष्टि में रखते हुये शारीरिक शिक्षा तथा सामान्य शिक्षा के ध्येय तथा प्रणाली भिन्न नहीं होनी चाहिये। प्रकृति, मानसिक तथा शारीरिक शक्तियों को बारी बारी से आपस में एक दूसरे को विकसित करने के लिये प्रयोग करती है।

युवर्डुन के स्कूल में एक घंटा प्रतिदिन शारीरिक शिक्षा के लिये दिया जाता था जिसमें गेन्द, भिन्न प्रकार के खेल, प्रिजनर्स बेस, पहाड़ चढ़ना, स्केटिंग, कूदना, कुश्ती आदि के खेल हुआ करते थे। अनौपचारिक खेल आदि से वे संतुष्ट नहीं थे। वे एक ऐसी प्रणाली चाहते थे जिसके द्वारा शारीरिक गतियां, क्रम से अपनी कठिनाई तथा प्रभाव के अनुसार स्थापित की जा सकें। इन सबों का अभ्यास एक शिक्षक के निरीक्षण में होना आवश्यक है। शारीरिक शिक्षा के प्रति पेस्टालोजी के विशेष विचार उनके लेख 'कन्सर्निंग फिजीकल एज्युकेशन' में दिया गया है।

पेस्टालोजी ने कुछ प्राकृतिक गति जैसे मारना, ले जाना, घुसेड़ना, फेंकना, निकालना, घूमना, चक्कर लगाना, झुलाना, दौड़ना, कूदना तथा चढ़ना आदि बताये। उनका विचार था कि सभ्यता इन वंश परम्परा की गतियों को जो सदियों से चलती आयी हैं उनमें बालकों को सही रीति से प्रशिक्षित नहीं करती।

शिक्षक तथा विद्यार्थियों के साथ खेल को उन्होंने प्रोत्साहित किया। अन्य विषय के शिक्षकों को भी वह शारीरिक शिक्षा का उत्तरदायित्व अधिक मात्रा में देना चाहते थे किन्तु विभिन्न परिस्थितियों के कारण उन्हें जर्मन जिमनास्टिक में प्रशिक्षित शारीरिक शिक्षकों को नियुक्त करना पड़ा था। इस कारण से अधिकतर समय औपचारिक व्यायाम में व्यतीत किया जाता था और प्राकृतिक क्रियाओं के लिये अत्यन्त कम समय दिया जाता था। शारीरिक शिक्षा के लिये एक घंटा प्रति दिन तथा पांच घंटा प्रति सप्ताह दिया जाता था।

फेडरिक फ्रोयबेल (१७८२-१८५२) एक जर्मन अध्यापक थे जिनका जन्म थुरिगिया में हुआ था। ये दो वर्ष तक पेस्टालोजी के विद्यार्थी तथा उसके स्कूल के शिक्षक के रूप में रहे।

फ्रोयबेल ने ग्राइशाइम में 'दि युनिवर्सल जर्मन एज्युकेशनल इन्सटीट्यूट' स्थापित किया जिसे उनके बीस साल तक पेस्टालौजी के सिद्धान्तों पर चलाया। अपनी पुस्तक 'दि एज्युकेशन आफ मैन' में उन्होंने यह विश्वास प्रगट किया कि सर्वश्रेष्ठ सुधार की आवश्यकता बालकों की शिक्षा में थी। वे स्विटजरलैंड के बच्चों के स्कूल में कुछ दिन सेवा करते रहे। पुनः जर्मनी लौटने पर उन्होंने बालकों के लिये एक स्कूल स्थापित किया। इस स्कूल को उन्होंने किन्डरगार्टन नाम दिया, जहां खेल, क्रीड़ा, संगीत तथा छोटी छोटी योजनायें जिनमें स्वयं करने के कार्य प्रमुख थे, दिया जाता था। उनके अनुसार बालक की शिक्षा जन्म से ही आरम्भ होती है। बालक कार्य स्वयं करने से सीखता है अतएव शिक्षा की सामग्री जीवन से ही लेना चाहिये।

फ्रोयबेल के खेल के द्वारा बालकों की शिक्षा सिद्धान्त से आज भी मनोरंजन तथा शिक्षा के कार्यकर्ता प्रभावित हैं। फ्रोयबेल की तरह गहराई से किसी और ने बालक के जीवन के इस भाग को नहीं समझा। उनका कहना

है कि बाल्यपन के खेल भविष्य जीवन के अंकुरित बीज हैं क्योंकि सम्पूर्ण व्यक्ति अपनी कोमल प्रवृत्तियों के प्रति झुकाव तथा आन्तरिक प्रवृत्ति के साथ इसी में प्रदर्शित होता है। मनुष्य का पूर्ण जीवन सम्भावित रूप में बालक में उपस्थित है। फ्रोयबेल ने खेल की वास्तविक प्रकृति तथा कार्य का आविष्कार किया और उसको क्रमशः काम में किस प्रकार परिणित किया जा सकता है उसके लिये भी आदेशित किया है। फ्रोयबेल ने खेल को अपने में अन्त नहीं किन्तु एक शीघ्र बीतने वाली दशा समझा जिसके द्वारा बालक, मनुष्य जीवन के रचनात्मक कार्य में प्रवेश कर, संतोष, स्वतंत्रता तथा गम्भीरता प्राप्त कर सकता है। फ्रोयबेल ने सामाजिक विकास के लिये भी खेल को एक अति उत्तम साधन घोषित किया। संसार ने 'प्ले मूवमेन्ट' को अपनाकर फ्रोयबेल के सिद्धान्तों को मान्यता और संस्थापक को सम्मान दिया।

यूरोप के महाद्वीप में १८०० ई० के पश्चात शारीरिक शिक्षा

११

नेपोलियन के आक्रमण के भय से अनेक देश जहां स्वतंत्र राजा, धार्मिक राज्य, तथा स्वतंत्र नगर थे, एक दूसरे के समीप आ गये। राजनैतिक विचारों में ये राज्य आपस में भिन्न थे किन्तु संस्कृति इनकी एक सी थी। फ्रान्स के द्वारा पुरूशिया की पराजय से जर्मन नेताओं की यह भावना हुयी कि विरोधियों के विरुद्ध उनकी राज्यों की एकता अनिवार्य थी। इस एकता की भावना को साधारण जनता की प्रजातांत्रिक लालसाओं ने और प्रोत्साहित किया। फ्रान्स के क्रान्तिकारी आन्दोलन के कारण उत्साहित होकर वे वर्ग तथा राजनैतिक बातों के ऊपर आक्रमण करने के लिये तैयार थे। सर्वत्र ही स्वतंत्र देश तथा स्वतंत्र व्यक्ति के नारे लग रहे थे दूसरे देशों की अपेक्षा जर्मनी की जागीरदारी प्रथा के कुछ न कुछ चलते रहने के कारण नये राजनैतिक विचार ने साधारण जनता की स्वतंत्रता तथा राष्ट्रीयता की प्राप्ति की भावना को उत्तेजित किया। जर्मनी के नृप तथा राज्य शासन में श्रेष्ठजनों ने इस विचार को अपने स्वार्थ के विरुद्ध जानते हुये भी फ्रान्स का विरोध करने के लिये जनता का साथ दिया।

युद्ध विराम के पश्चात अनेक जर्मन देशभक्त अत्यन्त ही निराश थे। १८१५ ई० के नेपोलियन के युद्ध के पश्चात वियना में जो कांग्रेस बुलायी गयी उसमें उनकी अभिलाषा की पूर्ति नहीं हुयी। आस्ट्रिया एक सर्वप्रभुत्व राष्ट्र सिद्ध हुआ तथा वहां के सर्वोच्च अधिकारी जिसने शान्तिवार्ता तथा सन्धि में प्रमुख रूप से भाग लिया था उनकी घोषणा थी कि उन आन्दोलनों को जो उनके जन्मसिद्ध अधिकारों का प्रतिरोध करते हैं ध्वंस कर देना उचित है। नृपों ने अपने केन्द्रीय सरकार को सर्व शक्तिमान बनाये रखा। राज्य तथा चर्च दोनो सैनिक शक्ति से मिल कर ऐसे बुद्धिमान देशभक्त नागरिकों का निर्माण करना चाहते थे जो आज्ञाकारी तथा अनुशासन में रहने वाला उत्तम सैनिक हो।

१८१५ ई० से १८५० ई० तक का समय वैधानिक सुधार के लिये महत्वपूर्ण रहा। यद्यपि १८१५ ई० में जर्मन जनता संयुक्त जर्मन राष्ट्र का निर्माण प्रजातांत्रिक रीति से न कर पायी तथापि औद्योगिक आन्दोलन ने सामान्य संस्कृति, जाति तथा भाषा की एकता को आर्थिक बन्धनों से बांध दिया।

इटली की राष्ट्रीय एकता की ओर प्रगति तथा क्रिमीयन युद्ध में फ्रान्स की विजय प्राप्त करना जर्मन जनता के लिये प्रभाव पूर्ण रहा। क्रिमीयन युद्ध में रूस के विरुद्ध ब्रिटेन तथा फ्रांस ने संधि कर ली। पुरूशिया ने आस्ट्रिया से संधि कर ली। १८५९ ई० में आस्ट्रिया तथा फ्रान्स में युद्ध हुआ। १८७१ ई० में जर्मनी की राजनैतिक एकता बिस्मार्क के नेतृत्व में प्राप्त हुई।

रूस के विरुद्ध आस्ट्रिया और हंगरी की संधि से उनका प्रभुत्व बनाये रखा। १८८८ ई० में सम्राट विलियम द्वितीय के राज्य शासन में एक नये जर्मनी की स्थापना हुयी।

१८०२ ई० के नियम के अनुसार दो प्रकार के माध्यमिक स्कूल फ्रान्स में स्थापित किये गये। धार्मिक विद्यालय, जिसकी स्थापना तथा आर्थिक सहायता निजी, सामाजिक या धार्मिक संस्थाओं से होती थी तथा लाइसिस जो राज्य की सहायता से स्थापित होती और चलायी जाती थीं। १८३३ ई० के नियम के अनुसार प्रत्येक समाज में प्रारम्भिक स्कूल अनिवार्य कर दिये गये। तथा १८५० ई० के नियम के अनुसार कृषि, व्यापार, स्वास्थ्य, इतिहास, भूगोल, संगीत, जिमनास्टिक तथा अन्य औपचारिक विषयों में 'शिक्षा देना' भी अनिवार्य कर दिया गया। पुरूशिया की जनता ने पेस्टालोजी की प्रणाली में विशेष रुचि दिखलायी तथा कार्ल औगस्ट जेल्लर के, जो युवरडन में पेस्टालोजी के शिष्य थे, उर्टेमबर्ग में एक शिक्षक प्रशिक्षण स्कूल स्थापित करने का अधिकार प्रदान किया। सत्तरह शिक्षक पेस्टालोजी की प्रणाली के अध्ययन के लिये स्विटजरलैंड भी भेजे गये। जर्मन जनता ने पेस्टालोजी की प्रणाली को सराहा तथा उसके उत्तम परिणामों को स्वीकार भी किया किन्तु उनके लिये अध्ययन का ध्येय स्टेट या राज्य को स्थिति थता संगठित रखने का ही था। पेस्टालोजी के स्कूल में जिमनास्टिक का अभ्यास जर्मन प्रणाली से लिया गया था किन्तु पुरूशिया के स्कूलों में वे और उत्तम रीति से संगठित किये गये थे तथा स्वास्थ्य और सैनिक मूल्य

के लिये उनकी प्रशंसा होती थी। धार्मिक शिक्षा में आत्मबलिदान, नम्रता तथा अधिकार के प्रति सम्मान एवं आज्ञा पालन पर बल दिया जाता था।

उन्नीसवीं शताब्दी के पहले बीस वर्षों में पुरूशिया की सरकार ने प्रारम्भिक स्कूलों की स्थापना के द्वारा सामूहिक शिक्षा की नींव डाली तथा शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिये संस्थायें स्थापित कीं। सरकार के द्वारा १८१६ ई० में सभी माध्यमिक स्कूलों के लिये एकसा कार्यक्रम निर्धारित हुआ। कार्यक्रम के विषय लैटिन, यूनानी, जर्मन, गणित, इतिहास, भूगोल, धर्म तथा विज्ञान थे। १८१० ई० में शिक्षकों को माध्यमिक विद्यालय के विषयों में, योग्यता की परीक्षा देनी पड़ती थी।

नेपोलियन के आक्रमण के सम्मुख यूरोप के कितने देशों को नतमस्तक होना पड़ा। पुरूशिया अपनी सैनिक शक्ति पर गर्व करता था किन्तु जेना में १८०६ ई० में नेपोलियन की सरल विजय के कारण जर्मन गौरव को धक्का लगा।

नेपोलियन के साथ डेन्स ने भी युद्ध किया। मनुष्य तथा सामग्री के नष्ट होने के पश्चात उन्हे नार्वे, स्वीडेन को देना पड़ा। स्वीडेन ने रूस से युद्ध किया और फिनलैंड हार गये। इन पराजयों ने उन पराजित राष्ट्रों को पुनः अपने आप को शक्तिशाली बनाने तथा सैनिक शक्ति स्थापित करने की उत्तेजना हुयी जिससे अवसर मिलने पर वे अपने अधिकार वापस ले सकें। अतः नेपोलियन के युद्ध का युग उन उत्तम जिमनास्ट्स के लिये जिनके पास संगठन करने तथा नेतृत्व की योग्यता थी, शुभ अवसर सम्मुख आया। सरकार ने सैनिक प्रशिक्षण स्कूल स्थापित किये जहाँ ये व्यक्ति सैनिक सेवा के भावी शिक्षकों को प्रशिक्षित कर सकें।

जैसे ही शिक्षा में शारीरिक प्रशिक्षित व्यक्तियों के लिये सेना में माँग कम हुयी तथा जिमनास्टिक लीडरों का प्रशिक्षण एक साधारण बात होकर रह गयी, वैसे ही जिमनास्टिक के नेताओं ने अपनी दृष्टि शिक्षा क्षेत्र की ओर डाली। कहीं कहीं सेना से शिक्षा में स्थानान्तर सरलता से हो गया। कितने ही स्थान में लीडरों ने यह अनुभव प्राप्त किया कि सैनिकों के लिये निर्धारित कार्यक्रम साधारण स्कूल के बालकों की शक्ति के बाहर तथा उनकी रूचि के विपरीत था। उन्होंने

यह अनुभव किया कि बालक खेलना चाहता है तो भी स्कूल कार्यक्रम की स्थापना उन्होंने मशीन की तरह की। शारीरिक व्यायाम के लाभ को समझते हुये भी जिमनास्टिक विशेषज्ञों ने व्यायाम के कार्य को मशीन की तरह कार्य करते हुये समझा। इस कारण से उन्होंने व्यवयाय के कारण शारीरिक दोषों के निवारण के लिये व्यायाम का प्रयोग किया। इतना अवश्य था कि उस समय की शारीरिक क्रिया तथा रचना का विज्ञान जो कुछ भी था, व्यायाम तथा आपरेटस के प्रयोग में निश्चय आता था।

१२

जर्मनी

कई वर्षों तक जर्मनी में शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम राष्ट्र के राजनैतिक ढांचे पर चलता रहा। आरम्भ में पर्याप्त उन्नति रही, स्वतंत्रता आन्दोलन के समय देश उन्नति के शिखर पर रहा किन्तु प्रतिक्रिया के समय इसे दबाया गया।

फ्रेडरिक लुडविग जहान (१७७८-१८५२) फादर आफ जर्मन जिमनास्टिक तथा टर्नर सोसाइटीज के नाम से विख्यात हैं। उनका जन्म पुरूशिया के लिन्ज में हुआ था। धर्मशास्त्र के अध्ययन के लिये 'हाल' की यूनिवर्सिटी में थे किन्तु वे इस अध्ययन को समाप्त नहीं कर सके। उनकी सर्वदा से शिक्षक होने की इच्छा थी इस हेतु बर्लिन में एक पेस्टालोजी प्रणाली के स्कूल में प्रवेश ले कर प्रशिक्षित हुये। शिक्षा समाप्त करने पर एक स्कूल में गणित तथा इतिहास के शिक्षक नियुक्त हुए।

उन्नीसवीं शतब्दी के पहले बीस वर्षों में जब, जर्मनी में उपद्रव था उसी समय 'जर्मन जिमनास्टिक सोसाइटीज' या 'टर्नविरायन' की स्थापना हुयी थी। यह अधिकांश रूप से देशभक्त जहान के परिश्रम का परिणाम था।

जहान का जन्म पुरूशिया में तो हुआ था किन्तु सम्पूर्ण जर्मनी को वह अपनी पितृभूमि समझते थे। जीवन पर्यन्त वह जर्मनी की एकता के लिये संघर्ष करते रहे। जिस समय नेपोलियन के द्वारा पुरूशिया पराजित हुआ उसी समय उन्होंने यह निश्चय कर लिया कि विजेता से देश मुक्त करने के लिये मौलिक सुधार की आवश्यकता है। उनके पास किसी प्रकार का सामाजिक या राजनैतिक प्रभाव नही था किन्तु एक ध्येय, संघर्ष की आत्मा तथा ठोस शारीरिक बनावट थी। वे अपने गुलाम देशवासियों के स्वाभिमान को उत्तेजित करते रहे

और उस समय की प्रतीक्षा कर रहे थे जब पुनः वह स्वतंत्र हो सकेंगे। इस ओर उनकी चेष्टा सर्वदा सक्रिय रही। 'अपनी पुस्तक 'जर्मन नेशनेलिटी' में उन्होंने इन्ही भावों को प्रकाशित किया।

१८१० ई० में वह प्लामन्स बोयज़ स्कूल तथा ग्राउएन क्लोस्टर बर्लिन में शिक्षा दे रहे थे। पुरूशिया के स्कूलों के प्रचलित नियम के अनुसार बुधवार को तथा शनिवार को आधे दिन की छुट्टी में वे बालकों के साथ खुली हवा में खेल तथा व्यायाम में व्यतीत करते थे। इस प्रथा में वे अत्यन्त रुचि लेते थे। ग्राउएन क्लोस्टर में वह बालकों को खुली हवा में पेड़ों के नीचे स्कूल के समीप एकत्रित करते थे जिसका नाम उन्होंने 'टर्नप्लाट्ज' रखा था। वहां उन्होंने गट्स मथ्स तथा दूसरे विशेषज्ञों के बताने के अनुसार आपरेट्स बनाये तथा अंग्रेजी आठ की तरह दौड़ने का मार्ग 'ट्रैक' बनाया। आठ के रिक्त स्थानों में कुश्ती के लिये अखाड़ा, कूदने के लिये स्थान, ऊंची कूद तथा पोलवाल्ट के लिये 'स्टानडर्ड' बनाये। इस खुले हुये जिमनाजियम पर वह बालकों को सरल व्यायाम, स्टन्ट्स तथा खेल कराते थे।

सन् १८११ ई० की बसन्त ऋतु में जहान ने ग्राऊएन क्लोस्टर तथा प्लाम्मनस स्कूल के बालकों को एक साथ कर दिया। अतएव संगठन में कुछ परिवर्तन करना पड़ा। उसी वर्ष ग्रीष्म ऋतु में उन्होंने वह औपचारिक कार्यक्रम आरम्भ किया जो जर्मन टरनर सोसाइटीज के विकास का मार्ग दर्शन करने वाला था। जहान ने स्कावड लीडर या वोरटरर्नस नियुक्त किया, आयु तथा कठिनता के अनुसार कार्यों का क्रमानुसार वर्गीकरण किया तथा उनमें संतुलन तथा रुचि बढ़ाने के लिये विभिन्नता उत्पन्न की।

बालेन्स बीम, वरटिकल रोप्स, लाडर, होरीजनटल बार पेड़ों के बीच में हाई जम्प तथा पोल वाल्ट स्टान्डर्ड, जम्पिगपिट तथा रनिंग ट्राक टर्नप्लाटज् में उपलब्ध किये गये। खेल तथा व्यायाम प्रति सप्ताह चार घंटे मध्याह्न में होते थे। इन घंटों में प्रायः २०० बालक उपस्थित रहते थे। उन स्कूलों को जिनसे जहान सम्बन्धित भी नही थे उनके बालकों के भी प्रवेश की आज्ञा मिली थी। कार्य के लिये विशेष यूनिफार्म होता था जो लम्बे पैंट तथा छोटे लिनेन के जाकेट होते थे। कोई विशेष दैनिक कार्यक्रम नहीं था। क्रिया की स्वतंत्रता तथा व्यक्तिगत प्रयास ही एक नियम था। प्रायः आपस में खेलने के लिये खेल का चुनाव किया करते थे। इन क्रियाओं से जहान

शारीरिक शक्ति तथा अनुकूल समुद्योग ऐसे बहुमूल्य परिणाम अर्जित करना चाहते थे।

सन् १८१२ ई० में और उन्नति हुयी। एक और बड़ा टर्नप्लाट्ज मिला तथा और आपरेटस लाये गये जिनमें बालटिंग बक्स तथा पैरलल बार्स थे। जहान ने व्यायाम के सम्बन्ध में और विधिवत कार्य किया। उन्होंने व्यायामों को नाम दिया तथा उनके करने की प्रणाली बताई।

पुरूशिया की स्वतंत्रता का बड़ा युद्ध मार्च १७, सन् १८१३ को घोषित किया गया। पितृ भूमि को फ्रान्स के हाथों से छुड़ाने के लिये जो व्यक्ति आगे आये उनमें जहान प्रथम थे। उनकी अनुपस्थिति में आइसलिन काम की देख भाल कर रहे थे। राज्य से आर्थिक सहायता भी प्राप्त हुयी। लाइपज़िग की लड़ाई में फ्रान्स की शक्ति का पुरूशिया द्वारा नाश कर दिया गया तथा वाटरलू की लड़ाई ने यूरोप में नेपोलियन के उज्जवल भविष्य का अन्त कर दिया युद्ध से लौटने के पश्चात जहान ने जर्मन जिमनास्टिक पुस्तक लिखी जो सम्पूर्ण जर्मनी में टरनर की गाइड पुस्तक सिद्ध हुयी। जहान ने स्कूल के बालकों को जिमनास्टिक व्यायाम तथा ऐथलेटिक्स में प्रोत्साहित किया। अधिकतर व्यक्ति जो स्कूल के बाहर थे, उन्होंने उनके विचार को स्वीकार किया। इस कारण टर्नर-क्लब की स्थापना हुयी जहां युवा तथा प्रौढ़ सभी आते थे। जनता में जिमनास्टिक की अच्छी नीव जर्मनी में पड़ी, जो दूसरे स्थानों में नहीं थी। जहान का यह दृढ़ विश्वास था कि प्रत्येक स्कूल के समीप टर्नप्लाटज तथा टर्नहाल होना आवश्यक है। राष्ट्रीय अवकाश तथा अन्य समय में यहाँ खेल आदि होनें चाहियें।

जहान के शारीरिक शिक्षा के कार्य तथा उसमें विश्वास उनकी देश-भक्ति की भावना के कारण हुआ। जहान का विश्वास था कि शक्तिशाली, ठोस तथा भय रहित युवकों के विकास में ही जर्मनी की स्वतंत्रता की आशा है। वह भलि भांति जानते थे कि खेल तथा स्पोर्ट्स की बड़ी शक्ति, वर्ग भेद को दूर करने तथा सामाजिक प्रजातंत्र को जागृत करने में समर्थ है। जहान व्यायाम को, राजनैतिक शक्ति के बढ़ाने तथा विकास का एक साधन मानते थे। इसको वे शरीर को ठोस करने की क्रिया नहीं समझते थे। इस सम्बन्ध में लौक से

उनका मत भेद था। लौक का विश्वास था कि शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम से शरीर ठोस होगा तथा जीवन की अच्छी आदतों को बढ़ाने में सहायता मिलेगी, मनोरंजन का अनुभव प्राप्त होगा तथा स्पोर्ट्स के चातुर्य का विकास होगा जो समाज के भद्र पुरुषों के लिये आवश्यक है।

जहान एक दूसरे से व्यक्तिगत अन्तर के विषय में जानते थे अतः वे सबसे समान परिणाम की आशा नहीं करते थे। जहान की प्रणाली शरीर के विज्ञान के अनुसार नहीं बल्कि शारीरिक शिक्षा के विश्वास पर है कि यह राष्ट्रीय जागृति में सहायक हो सकता है। अभ्यास के समय शिक्षक को कक्षा के सम्मुख सर्वदा एक आदर्श उदाहरण होना चाहिये। उसका कर्तव्य है कि वह हर बुरी बात वहां रोके, दूसरों से मिले और नम्र हो, सदा समय पर काम करने वाला हो, प्रत्येक नियम का पालन करे, कार्य के प्रति उत्साहित हो, बालकों की विशेषताओं का अध्ययन करे, तथा सर्वदा बालकों का मित्र तथा हितैषी रहे।

डीये डियूटसके टर्नकुन्सट या जर्मन जिमनास्टिक पुस्तक में उन्होंने स्थानों के चुनने, टर्नप्लाट्ज के बनाने तथा आपरेट्स बनाने के ऊपर बहुत सी सामग्री दी है। बहुत से व्यायामों का विस्तृत वर्णन, अनेक खेलों के खेलने की प्रणालियों तथा उनसे उपार्जित लाभ तथा टर्नविरायन के सामान्य संगठन के विषय में वर्णन है।

जहान के अनेक समकालीन व्यक्तियों ने उनके विचारों को संकीर्ण समझा। गट्स मथ्स का विचार था कि जहान विचार में संकीर्ण थे क्योंकि उनके शारीरिक शिक्षा ध्येय केवल देशभक्ति के कारण निर्धारित हुये थे। दूसरों ने कहा कि जहान प्रणाली बालकों के लिये कठिन, आवश्यकता से अधिक तथा दोषी थी क्योंकि इसमें स्वतंत्र प्रकार के व्यायाम नहीं थे और महिलाओं के लिये किसी प्रकार की शारीरिक शिक्षा की व्यवस्था नहीं थी। कुछ के विचार से यह प्रथा अप्राकृतिक तथा औपचारिक थी। ये आलोचना जहान के वास्तविक प्रणाली के न समझने के कारण की गयी थी। सन् १८१९ में अपने स्वतंत्र विचारों के प्रचार के कारण उन्हे ६ वर्ष कारागार का दण्ड दिया गया। उन पर पुलिस का निरीक्षण रहा तथा बर्लिन या किसी नगर के १० मील के वृत में रहना मना था जहां स्कूल या यूनिवर्सिटी थी।

जर्मनी में जहान का जिमनास्टिक सर्वत्र स्वीकार किया गया तथा प्रत्येक बड़े नगरों में युवकों ने टर्नविरायन की स्थापना की तथा टर्नकन्स्ट के द्वारा आदेश ग्रहण करे। मासमन्न तथा जहान से दूसरे सम्बन्ध रखने वालों ने इस सोसाइटीज के स्थापित करने में सहायता दी। विद्यार्थियों का क्लब जिसका ध्येय जर्मनी में एकता उत्पन्न करने तथा स्वतंत्र राज्य स्थापित करने का था, टर्नन को प्रोत्साहन देते रहे तथा सहायता करते रहे और उचित समय पर टर्नन्स बन जाया करते थे।

टर्नविरायन की स्थापना संकट कालीन स्थिति में हुयी थी तथा राजनैतिक प्रतिफल इनका मुख्य उद्देश्य था। शारीरिक शिक्षा के विस्तार के साथ जर्मन राज्य को फ्रान्स से मुक्त करने का ध्येय प्रमुख था तथा सभी वर्ग के व्यक्ति इसे सराहते थे किन्तु जर्मनी की एकता का ध्येय राजाओं तथा नोबल्स के स्वार्थ के विरुद्ध था, अतः उन्होंने इसका घोर विरोध किया।

जर्मनी के स्वतंत्रता प्राप्त करने तथा शान्ति स्थापना के पश्चात वहां के राजीनतज्ञों ने इस विचार को दबाना चाहा तथा इसका विरोध किया। १८१९ ई० में कार्ल सान्ड जो यूनीवर्सिटी युनियन का एक सदस्य तथा टर्नन था, उसने कोटजे बू को जो एक विख्यात लेखक था तथा राजा की सेवा में था, उसकी हत्या कर दी। जहान इससे किसी प्रकार सम्बन्धित नहीं थे किन्तु उनके कारावास के साथ टर्नन संस्था की मनाही पुरूशिया में कर दी गयी।

फ्रेडरिक चतुर्थ ने १८४० ई० में उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता दी तथा उन्हें लौह क्रूस पदक प्रदान कर सम्मानित किया। इसके पश्चात टर्नन संस्था में उहोंने किसी प्रकार का भाग नहीं लिया। १८५२ ई० में उनकी मृत्यु हो गयी। फ्रेडरिक चतुर्थ ने टर्नन पर जो प्रतिबन्ध लगाये गये थे उन्हें हटा दिया तथा १८४२ ई० में राजकीय आज्ञा द्वारा औपचारिक रूप से टर्नन संस्था को स्वीकार किया तथा उसे पुरुष शिक्षा का एक अनिवार्य भाग मान लिया तथा सार्वजनिक शिक्षा के साधन संगठन में उसे स्थान दिया।

इस आज्ञा के कारण टर्नन संस्था को बड़ा प्रोत्साहन मिला तथा उनकी उन्नति हुयी। स्कूलों में शारीरिक शिक्षा की सुविधा के कारण टर्नविरायन प्रौढ़ जिमनास्टिक तथा सामाजिकता की ओर अग्रसर हुये तथा स्कूल संगठन

से मुक्त हो गये । संस्था की सदस्यता तथा सोसाइटी की संख्या अत्याधिक बढ़ी । इन भिन्न भिन्न संस्थाओं को एक राष्ट्रीय संस्था की आवश्यकता प्रतीत हुयी । साथ ही सभा, जिमनास्टिक प्रतियोगिता दिवस, समाचारपत्र तथा पत्रिकाओं आदि के आरम्भ आवश्यक प्रतीत हुये, जिनके द्वारा सहयोग तथा सहृदयता में सहायता मिलती रहे । १८७० ई० में प्रायः जर्मन एकता पूर्ण हो चुकी थी तथा टर्नन सोसायटी की पर्याप्त वृद्धि हुयी ।

जहान के ध्येय की पूर्ति उसकी मृत्यु के २० वर्ष पश्चात हुयी । आधुनिक टर्नर्स ने जहान की तरह इस बात पर विश्वास किया कि जर्मन जिमनास्टिक के द्वारा नैतिक तथा शारीरिक शक्ति की उन्नति करके एक दृढ़ नीव की स्थापना की जा सकती है जिसके आधार पर एक बड़े राष्ट्र तथा सभ्यता का विकास संभव हो सकेगा ।

एडोल्फ स्पाईस (१८१०–१८५८ ई०) का जन्म लाउटरबाख में हुआ था । १२२८ ई० में वह गाइसेन यूनीवर्सिटी में धर्मशास्त्र के अध्ययन के लिए प्रविष्ट हुआ । वहां वे बनैठी तथा जिमनास्टिक में बहुत ही प्रवीण हो गये । १८३३ ई० में बर्गडोर्फ स्विटजरलैंड में पेस्टालोज़ी के स्कूल में वह जिमनास्टिक, संगीत, लेखन तथा चित्रकारी के लिये शिक्षक नियुक्त हुये । इस समय फ्रेडरिक फ्रोथबेल भी सेवा कर रहे थे । स्पाईस, उनके खेल तथा व्यायायों से, जो शिक्षा प्रणाली के रूप में प्रस्तुत थे, अत्यन्त ही प्रभावित हुये ।

जनता के लिये सार्वजनिक स्कूलों का विकास उन्नीसवीं शताब्दी में हुआ । जर्मनी, ऐडोल्फ स्पाइस का स्कूल जिमनास्टिक के संगठन में तथा सफल विकास के लिये ऋणी है । स्पाईस अपने समय के अन्य शारीरिक शिक्षा विशेषज्ञों से भी परिचित थे जैसे जहान, गट्स मथ्स, आइसलिन आदि । १८३३—१८४८ ई० तक स्पाईस स्विटजरलैंड में रहे । वहाँ उन्होंने बर्गडौर्फ तथा वासेल में अपने स्कूल जिमनास्टिक की प्रणाली संगठित की । स्पाईस का शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम सप्ताह में तीन दिन मध्याह्न के समय, दो घंटे लगातार होता था बालिकाओं के लिये भी विशेष व्यायामों का निर्माण किया गया । बालकों को प्रायः हाईक पर ले जाया करते थे । १८५२ ई० में पुरूश्शिया की शारीरिक शिक्षा में पुनः जागृति हुयी । स्पाईस अधिकारियों को प्रभावित करने

के लिये बर्लिन गये किन्तु अपने ध्येय में सफल न हो सके अतः स्विटजरलैंड पुनः लौट आये मासम्मन्न जो एक टर्नर थे पुरूशिया के समस्त स्कूलों में शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम को निर्धारित करने के लिये चुन लिये गये। स्पाईस ने स्विटजरलैंड में रहते हुये दो पुस्तकें लिखी। 'सिसट्म आफ जिमनास्टिक' तथा 'मैनुअल आफ जिमनास्टिक फार स्कूल्स'।

स्पाईस का ध्येय था कि व्यायाम आदि बालक के अध्ययन का एक विशेष भाग हो तथा स्कूलों के लिये एक उपयुक्त प्रणाली स्थापित हो। इस हेतु उन्होंने अपने विचार प्रकट किये। उनकी इच्छा थी कि व्यायाम करने के लिये एक हाल तथा एक टर्नप्लाटज प्रत्येक स्कूल का एक मुख्य भाग हों या ये स्कूल के समीप स्थित हों। प्रत्येक दिन एक घंटा शारीरिक शिक्षा के लिये दिया जाय। विद्यार्थियों को उनके कार्य की प्रवीणता के अनुसार अंक प्रदान किये जायें। जिमनास्टिक की शिक्षा सामग्री आयु तथा लिंग भेद के अनुसार क्रमिक रूप से निर्धारित की जाय। बालिकाओं के लिये एक विशेष जिमनास्टिक प्रणाली आयोजित हो। इनका तात्पर्य यह था कि शारीरिक शिक्षा दूसरे विषयों के तुल्य समझी जाये तथा वही महत्व उसे दिया जाय जो दूसरे विषयों को दिया जाता है। स्पाईस का विचार, एथेन्स के उच्च विचारों से मिलता हुआ था, जहां शारीरिक शिक्षा का ध्येय, शारीरिक निपुणता, सुन्दरता, तथा लावण्य से था; जिसके द्वारा शरीर तथा आत्मा का आपस में अनुकूल रूप से संयुक्त होकर, एक ऐसे एकत्व का निर्माण हो जो उचित प्रकार की सामाजिकता में सहभागी होने के योग्य हो। उनका कहना था "शिक्षा का अन्त अविभाज्य है, जिसमें शिक्षार्थी की सम्पूर्ण प्रकृति सम्मिलित है, स्कूल ही कार्य को विभाजित करता तथा भिन्न प्रथाओं को अंगीकार कर उसी दिशा की ओर ध्येय करता है। मन तथा शरीर मिल कर एक ही हैं। स्पाईस शारीरिक व्यायाम के अध्यापन के लाभ तथा विश्राम, मनोरंजन में इसका प्रयोग, तथा इसकी नैतिक तथा सामाजिक शिक्षाओं से भी परिचित थे।

जिमनास्टिक को स्कूल प्रणाली के स्तर पर लाने के लिये एक ही आयु के बालकों को संगठित किया जाता तथा एक ही शिक्षक के द्वारा कक्षा ली जाती थी। आयु के लाभ के अनुसार व्यायाम प्रति दिन निर्धारित समय तक कराया जाता था। प्रतिकूल ऋतु के लिये अन्दर की जिमनेजियम की आवश्यकता प्रतीत हुयी।

स्पाईस ने जर्मन जिमनास्टिक में मार्चिंग का प्रचलन किया तथा उसके लाभ की ओर ध्यान आकर्षित किया । इसके द्वारा बड़ी संख्या में भी विद्यार्थियों को शिक्षक सुगमता से शासन में रख सकता तथा बिना समय नष्ट किये किसी गड़बड़ी को वह मन चाही स्थिति में ला सकता है । विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से यह उन्हें अनुशासन में रहने तथा शरीर को सीधे रखने में सहायक होता है । स्पाईस स्वतंत्र व्यायाम के व्यवस्थापक माने जाते हैं । इसके द्वारा उनका ध्येय सम्पूर्ण कक्षा को अल्प समय में, नियम पूर्वक, क्रमबद्ध व्यायाम, जिनका तात्पर्य शरीर के उन अंगों को क्रियाशील करना जिनकी क्रिया व्यक्ति को पूर्ण अन्तिम विकास प्रदान करती है, देना था ।

जिमनास्टिक प्रदर्शनी पर वह बहुत बल देते थे । ये विद्यार्थियों की रुचि को स्थिर रखने तथा जनता की कृपा प्राप्त करने का उत्तम साधन मान लिया गया था । स्पाईस ने कहा कि खुली हवा में भ्रमण, जिसमें टर्नर्स आनन्द लेते थे, अवकाश प्राप्त करने पर स्कूल की कक्षाओं के लिये भी उत्तम है । उन्होंने कक्षा में लीडरों के द्वारा शिक्षा के सिद्धान्त, जो जहान ने प्रस्तावित किये थे उसका विरोध किया । उनका विचार था कि पर्याप्त मात्रा में प्रशिक्षित तथा अनुभवी शिक्षकों की नियुक्ति होनी चाहिये जो किसी दूसरे स्कूल के शिक्षकों से कम प्रशिक्षित न हों । शिक्षक प्रशिक्षण के हेतु १८४९ ई० में डरम्सटाड्ट में उन्होंने एक नार्मल स्कूल स्थापित किया । स्पाईस के शिक्षा कार्य की ख्याति इतनी बढ़ गयी थी कि वह प्रायः जर्मन प्रणाली का एक भाग बन चुका था तथा विदेशी अतिथि उनके स्कूल में कार्य देखने आते तथा शिक्षा ग्रहण करते थे । १८५२—१८५४ ई० के बीच स्वीडेन (१) बेलजियम (२) स्विटजरलैंड (३) आसट्रिया (४) प्रशिया (५) साक्सोनी (६) डर्डटमेंवर्ग (७) बाडेन (८) ओलडेनबर्ग (९) फ्रान्कफर्ट आन- दी मेन (१०) तथा अन्य छोटे जर्मन स्टेट्स से विशेषज्ञ अध्यापक स्पाईस के पास आये । इनमें से अधिकांश ने वहां रह कर उनसे शिक्षा ग्रहण की । १८५८ ई० में कुछ दिनों की अस्वस्थता के पश्चात उनका देहान्त हुआ ।

स्पाईस की प्रमुख सेवा, जर्मनी की शारीरिक शिक्षा में तथा जहां जहां भी जर्मन प्रभाव विस्तृत हुआ, यह थी कि वह उसे स्कूल जीवन का एक महत्व-पूर्ण भाग बनाना चाहते थे । उनके विचार से टर्नप्लाट्ज का स्कूल के समीप

रहने से ध्येय पूर्ण नहीं होते। स्कूल का यह परम कर्त्तव्य है कि वह बालक के सम्पूर्ण जीवन, शारीरिक तथा मानसिक दोनों से, सम्बन्धित हों तथा जिमनास्टिक, जो स्टेट के द्वारा शिक्षा के साधन की मान्यता प्राप्त करता है, उसे पूर्ण रूप से, दूसरे अध्ययन तथा शिक्षा के तुल्य, एक ही स्तर पर मानते हुये समान अधिकार तथा प्रशिक्षण प्रणाली के साथ स्वीकार करना आवश्यक है। व्यायाम एक अनिवार्य विषय हो तथा छूट केवल चिकित्सक के प्रस्ताव पर ही मिलनी चाहिये।

उनकी संगीत की देन के कारण 'फ्री ऐक्सरसाइज' या स्वतंत्र व्यायाम की तालबद्ध क्रिया संगठित हुयी।

जिमनास्टिक में आश्चर्यपूर्ण लोकप्रियता जो जर्मनी तथा दूसरे यूरोप के देशों में हुयी उसका स्रोत बर्लिन के समीप १८१०-१८१२ ई० के बीच मे जहान के कार्य के कारण था। १८३३-१८५८ ई० के बीच स्पाईस ने हेस तथा स्विटजरलैंड में 'जर्मन स्कूल आफ जिमनास्टिक' की स्थापना की।

१८४२ ई० के कैबिनेट नियम के अनुसार पुरूशिया में प्रथम बार शारीरिक शिक्षा की ओर उचित ध्यान दिया गया। बर्लिन में अर्नेस्ट आइसलेन तथा उनके साथियों के परिश्रम के द्वारा टर्नन प्रथा जीवित रखी गयी। १८४०-१८६१ ई० में इस ओर रुचि में वृद्धि प्रतीत हुयी किन्तु मासमन के निर्देशक नियुक्त होने से प्रगति स्थगित हुयी क्योंकि वे पुराने म्युनिसपल टर्नप्लाट्ज के प्रोत्साहक थे जो स्कूल तथा उसकी कार्यकारिणी के अधिकार के बाहर थे तथा स्कूल से दूर स्थित थे।

इनके पश्चात **हयुगो रोथस्टेयन** (१८५१-१८६३) जो रायल सेन्ट्रल इन्सटीट्यूट बर्लिन के निर्देशक थे, जहान तथा जर्मन जिमनास्टिक के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों को वर्जित करते हुये लींग की स्वीडिश प्रणाली को समक्ष रखना चाहते थे। इसका अत्यन्त विरोध हुआ। १८६३ ई० में लोक प्रिय न होने के कारण ह्युगो ने अपना स्थान रिक्त कर दिया। कुछ स्थान तथा व्यक्तियों के परिवर्तन के पश्चात रायल सेन्ट्रल इन्सटीच्यूट स्पानडाउ में वर्तमान लान्डैसटर्ननस्टाल्ट स्थापित हुआ जहां भविष्य के शारीरिक शिक्षक पूर्ण रीति से शिक्षा प्राप्त करते हैं।

डा०कार्ल फिलिप युलर जो १८६०ई० में एक सिविलियन शिक्षक नियुक्त हुये इन्होंने जहान के टर्नन का, जिसका लिंगरोस्टेयन जिमनास्टिक के द्वारा विरोध हो रहा था, पक्ष लिया। विचार, प्रार्थनापत्र तथा अनेक प्रस्तावनाओं के द्वारा टर्नन प्रथा को दृढ़ करने की मांग की गयी। एमिल डू बोयस रेमोन्ड (१८१८-१८९६ई०) जो बर्लिन यूनिवर्सिटी में शारीरिक क्रियाशास्त्र के प्रोफेसर थे, टर्नन के शक्तिशाली समर्थक भी हुये। पुरूशिया के श्रेष्ठ चिकित्सक अधिकारी वर्ग ने पारेलल बार के व्यायामों का समर्थन किया।

१८६०ई० के पश्चात भी जर्मन, स्कूलों ने जिमनास्टिक में प्रथम स्थान रखा, विषय की महत्ता बढ़ती गयी। उस वर्ष बालकों के सम्पूर्ण प्रारम्भिक स्कूलों से लेकर यूनिवर्सिटी तक को यह राजकीय आदेश हुआ कि वे जिमनास्टिक के और शिक्षक नियुक्त करें तथा इसको अधिक समय तथा महत्व प्रदान करें। दो वर्ष पश्चात प्रारम्भिक स्कूलों के लिये जिमनास्टिक शिक्षा की एक नियमावली छपी। जिमनास्टिक में उपस्थिति अनिवार्य हो गयी। आधिकारियों के प्रोत्साहन तथा नियमावली में परिवर्तन किये जाने पर भी स्कूल के अधिकारियों ने कार्यक्रम को चलाने में लापरवाही की।

१९०४ई० में जर्मनी इस लापरवाही की गम्भीरता से चिन्तित हुआ अतएव प्लेग्राउन्ड मूवमेन्ट तथा महिला शिक्षकों की नियुक्ति कर इसका निवारण करना चाहा। शारीरिक शिक्षा के लिये निश्चित समय तीन घंटे प्रति सप्ताह तथा मध्याह्न में खेल के लिए भी एक घंटा बढ़ाया गया। बहुत से स्कूलों ने प्रत्येक दूसरे दिन पर १० मिनट का एक घंटा लम्बी साँस तथा सही शारीरिक आसन और व्यायाम के लिये रखा। यथाविधि स्कूल के कार्य को बालकों तथा बालिकाओं के एथलेटिक क्लब से, जो शिक्षकों के द्वारा नियंत्रित थे, पर्याप्त सहायता प्राप्त हुई। १८९४ ई० में ऊंचे माध्यमिक स्कूल कार्यक्रम में बालिकाओं के लिये जिमनास्टिक सम्मलित करने से विशेष प्रोत्साहन मिला। १९१३ ई० में एक विशेष व्यायाम नियमावली महिलाओं के लिये मुद्रित हुयी।

शारीरिक शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिये अनेक नार्मल स्कूल स्थापित किये गये। प्रत्येक स्टेट स्वतंत्रता से अपनी शिक्षा प्रणाली स्थापित करती थी। साधरणतः उनके ध्येय तथा उद्देश्य एक से ही होते थे। यह राष्ट्रीय संगठन के कारण जो सम्पूर्ण जर्मनी में शारीरिक शिक्षा के विस्तार की चेष्टा कर रहा था

सम्भव हुआ। जर्मन सोसायटी सभाओं तथा प्रकाशनों के द्वारा शारीरिक शिक्षा की उत्तम प्रणाली तथा ध्येय को एक समान रखने में समर्थ हुए।

जर्मन प्रणाली को प्रचलित रखने के लिये किसी एक व्यक्ति, शिक्षक, व्यवस्था या संस्था की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि यह प्रणाली साधारण जनता का अंग बन चुकी थी तथा प्रत्येक जर्मन का व्यक्तिगत सम्पत्ति बन गयी थी।

प्रथम टर्नन उत्सव १८६० ई० में हुआ और हज़ारों सदस्यों ने भाग लिया। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में प्रचलित शिक्षा दर्शन से असंतोष प्रकट होने लगा था। कुछ विशेषज्ञ शारीरिक शिक्षा के ध्येय का पुन: मूल्यांकन करने की मांग कर रहे थे। आलोचकों ने यह दोष लगाया कि नवीन शिक्षा सिद्धान्तों की ओर, जो सम्पूर्ण बालक को शिक्षा का केन्द्र स्थापित करता है, ध्यान नहीं के बराबर दिया जा रहा है। मानसिक विषय सामग्री तथा शासन अध्यापकों के ध्यान में सर्व प्रथम है। स्कूल नये विचारों के प्रवेश में बाधक है, तथा सैनिक आत्मा से लिप्त है। औद्योगिक जीवन, नगरों में बहुसंख्या, जीवन को कुचलने तथा दबाव डालने वाली दशाओं के कारण उत्तम स्वास्थ्य तथा मनोरंजन की परम आवश्यकता है।

शारीरिक शिक्षा के तात्पर्य तथा ध्येय के प्रति विस्तार में जो यत्नशील रहे उनमें से मुख्य कोच, हरमन, वोन स्केनकेनड्रौफ, फिशर रिकरमैन, प्ले ग्राउनड के जर्मन लीडर्ज, युवक तथा खुली हवा में भ्रमण करने वाले समारोह थे। इन सबों की चेष्टा यह थी कि खुली हवा के स्वस्थ वातावरण के स्पोर्टस् में भाग लिया जाये जिससे युवक वर्ग, आत्मनिरीक्षण तथा अनावश्यक चिन्ता से मुक्त हो कर वह अवसर प्राप्त करें जिससे व्यक्तिगत तथा सामाजिक रचनात्मक रूप में स्वतंत्रता का अधिकार अर्जित किया जा सके। नये खेल तथा युवक आन्दोलन ने शारीरिक शिक्षा के विचार को विस्तृत कर दिया।

प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात, वाईमार रिपब्लिक के अन्तर्गत शारीरिक शिक्षा में सैनिक तथा राष्ट्रीय ध्येय सर्वोच्च नहीं थे किन्तु इस के विपरीत जनता में स्वास्थ्य सुधार, उन्हें मनोरंजन के साधन प्रदान करना तथा प्रजातांत्रिक जीवन के विचार में शिक्षित करने का उद्देश्य प्रस्तुत था। युद्ध परिणाम के कारण राष्ट्र के पूर्वदशास्थापन में शारीरिक पुनरोत्थान, एक महत्वपूर्ण विषय बन

गया। युद्ध पश्चात तथा स्थितियों के कारण थके हुये नागरिकों के तनाव को समाप्त करने, आशाहीन युवको को नैतिक पतन से बचाने तथा बेरोज़गार व्यक्तियों को अनियमित कार्यों से रोकने के लिये मनोरंजन पर बल दिया गया यह जानते हुये कि यह इन समस्याओं से बचने का एक सरल साधन सिद्ध हो सकता है। राजकीय नियम के अनुसार यह प्रतिबन्ध लगा दिया गया कि प्रत्येक स्कूल के कार्यक्रम में शारीरिक शिक्षा का होना आवश्यक है तथा उसकी स्थिति दूसरे विषयों के समान होगी। ऐथेलेटिक मीट् कार्यक्रम, प्रेसिडेन्ट के प्रमाण पत्र, हर एक प्रकार की सुविधा में बढ़ती तथा अन्य कारणों से जर्मनी का शारीरिक शिक्षा एक ऊंचे स्तर पर पंहुच गया। प्रथम लड़ाई से पूर्व की शारीरिक शिक्षा में जो उन्नति हुयी थी उसे पुनः बल दिया गया। खेल की आत्मा का प्रदर्शन भिन्न भिन्न आयु के लिये ऐथेलेटिक तथा मनोरंजन क्लब में, संगठन में, खेल के मैदानों के द्वारा, ग्रीष्म ऋतु के कैम्प, नौर्मल स्कूलों में नये खेल के पाठय क्रम, नृत्य पर विशेष ज़ोर, तालबद्ध जिमनास्टिक, पुस्तक तथा प्रतिक्रियाओं का स्पोर्ट्स प्रकाशन आर्ट के द्वारा हुआ। स्कूल चिकित्सक तथा नर्स की नियुक्ति, अवकाश कैम्प, भोजन सामग्री की कक्षा, स्कूलों के लिये चिकित्सा क्लीनिक, खुली हवा में स्कूल, यौन शिक्षा आदि स्वास्थ्य शिक्षा आन्दोलन की प्रगति में सहायक हुये।

उन्नीसवी शताब्दी के अन्त में अनेक कारणों से संगठित मनोरंजन तथा स्पोर्ट्स में भाग लेने के प्रति भावनाओं में परिवर्तन हुआ अतः उनकी उन्नति करने की चेष्टा हुयी। यूरप के महाद्वीप में हर्बट स्पैन्सर की पुस्तकों से लोग बहुत ही प्रभावित थे।

उन्होंने राष्ट्रों के उच्च माध्यमिक संस्थाओं के पाठय क्रम में परिवर्तन ला दिया तथा गणित एवं विज्ञान पर विशेष बल देने के लिये आदेश दिया। उनका कहना था कि आवश्यक सामाजिक विशेषताओं के विकास में जिमनास्टिक व स्पोर्ट्स जितनी सहायता देते हैं उतना अन्य कोई कार्यक्रम नहीं दे सकता है। स्पोर्ट्स और जिमनास्टिक चाहे प्रतियोगिता सम्बन्धी हो या मनोरंजन सम्बन्धी, दोनो रूप में यह सामाजिक विशेषताओं के विकास में सहायता देते हैं।

विलहेल्म माक्स उनडट् एक प्रयोगात्मक मनोवैज्ञानिक ने खेल तथा

मनोरंजन में मनुष्यों तथा जानवरों के व्यवहार पर प्रयोग का परिणाम घोषित किया। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दिनों में खेल तथा क्रीड़ा में रूचि के कारण, अमरीका में बालक अध्ययन आन्दोलन तथा यूरप में खेल आन्दोलन को जो आधुनिक युग के बैठकर करने वाले व्यवसायों के कारण शारीरिक दोष का निवारण करता है, प्रोत्साहन मिला।

परूसिया की तुलना में वाईमर रिप्बलिक के स्कूल अधिक प्रजातांत्रिक भावना प्रगट करते हैं। तालबद्ध जिमनास्टिक ने मशीन स्वरूप व्यायाम का स्थान ग्रहण किया। ऐथेलेटिक्स तथा स्पोर्ट्स कार्यक्रम के एक मुख्य भाग निश्चित हुये। अप्रैल से नवम्बर तक बाहर खुले स्थान में नृत्य, खेल भ्रमण, तैरना तथा ट्रैक और फील्ड पर बल दिया जाता था। कालेस्थेनिक्स शीत काल में तथा मौसम के प्रशिक्षण होता था। मध्याह्न का समय जर्मन बेसबाल तथा हैन्डबाल, बौलीबाल, साकर आदि के लिये दिया जाता था। प्रत्येक यूनियन में से एक सदस्य को लेकर राष्ट्रीय प्रतिनिधि संस्था बनायी गयी। इसी आधार पर डिस्ट्रिक्ट तथा स्थानीय संस्था बनायी गयी।

१९३३ में नेशनल सोशलिस्ट ने अधिकार प्राप्त कर लिया। उन्होंने प्रजातंत्र के ध्येय से रहित तथा असंगठित शिक्षा प्रणाली की कड़ी आलोचना की। उनके विचार से ये अनेक ध्येय की ओर आदेशित थे जिनके ऊपर किसी भी एक पूर्ण प्रकार से सम्मिलित करने वाला सामाजिक, राजनैतिक या राष्ट्रीय विचार प्रस्तुत नहीं था Totalitarean समाज में नाज़ीस ने शीघ्र ही व्यक्ति से अधिक महत्व स्टेट को दिया तथा शारीरिक शिक्षा का राष्ट्रीय सैनिक तात्पर्य स्पष्ट रीति से घोषित किया।

शारीरिक शिक्षा का नाज़ी कार्यक्रम, बालकों के नाज़ी दर्शन में अच्छी रीति से ढालने के लिये; माध्यम रूप में प्रयोग किया गया। एडोल्फ हिटलर ने एक सैनिक अफसर को नेशनल स्पोर्ट्स कमिशनर नियुक्त किया। जिन अवैतनिक स्पोर्ट्स संगठन तथा यूथ ग्रुप का अन्त कर दिया गया था उनका पुनः संगठन हुआ। कमिश्नर ने १६ यूनियनों के आधीन सम्पूर्ण स्पोर्टस के अधिकार नियुक्त कर दिये। प्रत्येक यूनियन में से एक सदस्य को लेकर राष्ट्रीय प्रतिनिधि संस्था बनायी गयी इसी आधार पर डिस्ट्रिक्ट तथा स्थानीय संस्था बनाई गई। श्रमिकों तथा अन्य सेवकों के अवकाश का समय नाज़ी तात्पर्य के आधार पर आयोजित

किया गया। खेल का क्षेत्र भावी पार्टी तथा सैनिक लीडरों को चुनने व युवकों को परखने का स्थान था। मनोरंजन के कार्यक्रमों के द्वारा नागरिकों को देश के भिन्न भिन्न स्थान प्रदर्शित कराये जाते थे, जिससे वे पितृ भूमि से प्रेम कर सकें और इस पवित्र भूमि को बचा सकें। एक कार्य क्षम युद्ध कार्यकारिणी संस्था स्थापित करने के लिये राष्ट्रीय सोशलिस्टों ने यह हठ किया कि सम्पूर्ण सामाजिक वर्ग खेतों तथा फैक्ट्रियों में जो कार्य होते हैं उसका सम्मान करें तथा वैसे श्रम के हेतु योग्य शरीर अर्जीत करनें में प्रयत्नशील हों।

शारीरिक शिक्षा स्कूलों में एक अनिवार्य विषय कर दिया गया तथा डिग्री उपार्जन करने के लिये शारीरिक शिक्षा योग्यता परीक्षा (फिटनेस टेस्ट) पास करना अनिवार्य हुआ। माध्यमिक स्कूलों में प्रवेश के लिये भी शारीरिक तथा, मानसिक परिक्षायें आवश्यक कर दी गयीं। जो लीडरशिप तथा शारीरिक योग्यता में ऊंचे स्तर पर आसीन होते थे उन्हें विशेष स्कूल की पढ़ाई दी जाती थी। प्रारम्भिक स्कूलों में दो या तीन घंटे प्रति सप्ताह तथा माध्यमिक स्कूलो में चार या पांच घंटे प्रति सप्ताह साधारण शारीरिक शिक्षा प्रचलित थी। यूनिवर्सिटी में भी शारीरिक शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता था। हिटलर जिस प्रकार के स्कूल चाहता था उसके प्रति अवधारित नियम बनाये। सर्व प्रथम जाति स्टेट (रेशियल स्टेट) को सम्पूर्ण शिक्षा कार्य निर्मित करना है जो शून्य ज्ञान के मस्तिष्क में जबरदस्ती का नहीं किन्तु स्वस्थ शरीर को विकसित करने का है। नाजियों के लिये शारीरिक रूप से निर्बल बालक राष्ट्र पर भार तथा हृष्ट पुष्ट शरीर लाभ समझा जाता था।

१ बजे स्कूल समाप्त होने पर हिटलर ने युवकों के लिये क्लब के कार्य निर्धारित किये। इस अवसर पर हाइक तथा ड्रिल फिटनेंस कार्य क्रम को पूर्ण करने के लिये लगातार दिये जाते थे। इसी समय नाजी सिद्धान्तों की शिक्षा तथा पार्टी के कार्य पर भी ध्यान दिया जाता था। १४ या १५ वर्ष की आयु के युवकों को शारीरिक शक्ति बढ़ाने के लिये फार्म के वातावरण में अनिवार्य कार्य क्रम प्रस्तावित था। सम्पूर्ण कार्य क्रम का अन्त परिश्रम के द्वारा ६ माह की सेवा तथा उसके पश्चात सैनिक जीवन में प्रवेश था। नाजी व्यक्तित्व के विकास में विश्वास नहीं करते थे। उनके विचार से स्कूल बालक में केन्द्रित नहीं अपितु राष्ट्र में केन्द्रित होना चाहिये। शारीरिक व्यायाम राष्ट्रीय जीवन का एक भाग है तथा राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का एक आधार भूत तथ्य है। शारीरिक शिक्षा

तथा स्पोर्ट्स में प्रत्येक प्रकार की व्यक्तिगत भावनाओ का बहिष्कार करके राष्ट्रीयता के आधार पर लोकप्रिय होना चाहिये । नाज़ियों का ध्येय स्पार्टा से मिलता जुलता है । नाज़ी युवक का अर्थ था कट्टर भक्ति, अन्ध साहसी तथा युद्ध आत्मा ।

नाज़ीस ने एक बहुत ही विशाल युवक कार्य क्रम स्थापित किया जिससे कि युवक उस की ओर आकर्षित हों । १९३३ में जितने स्कूल के बाहर बालकों के क्लब थे, उन्हें अनिवार्य रूप से चार यूनियनों में से एक से सम्बन्धित होना पड़ता था । वे थे हिटलर यूथ, गर्लस यूनियन, यूथ होस्टल यूनियन तथा स्कूल कन्ट्री होम्स यूनियन । ये संस्थायें भी नेशनल स्पोर्ट्स कमिशनर के अधीन थी । इस का निर्देशन नेशनल सोशलिस्ट पार्टी के राइख यूथ लीडर के द्वारा होता था । हिटलर यूथ तीन आयु वर्ग में विभाजित थे । पीम्पस ६-१० वर्ष, दि जुंगवोल्क १०-१४ वर्ष, दि हीटल जुगेन्ड (हिटलर यूथ) १४-१८ वर्ष । अन्तिम वर्ग की चार शाखएं थी हिटलर जुगेन्ड प्रोपर, ही० ज० मरीन्स, ही०ज० फ्लायरस तथा ही०ज०मोटर दस्ता । बालिकाओं के लिये भी ऐसी ही संस्थाएं थीं जिसका नाम जुंगमाडेल था । १४ वर्ष के पश्चात वे २१ वे वर्ष तक लीग आफ जर्मन गर्ल्स की सदस्य हो जाती थी ।

नेशनल सोशलिज़म के अर्न्तगत प्रत्येक शिक्षक शीघ्र ही कठिन सैनिक शिक्षा के आधीन आ गया तथा उन्हें पार्टी सदस्यता भी ग्रहण करनी पड़ी । साधारण वस्त्र के प्रयोग का व्यवहार, समाप्त हो गया तथा उस का स्थान यूनिफार्म ने लिया । शारीरिक शिक्षा को स्टेट ने वह मान्यता दी जो उसे मानसिक युग में कभी प्राप्त नहीं हुयी थी किन्तु व्यवसायिक सम्मान अपनी स्वतंत्रता त्याग देने पर प्राप्त हुआ ।

हिटलर यूथ क्लब ने संगठित खेल, जिमनास्टिक, बौक्सिग, कुश्ती, जूजित्सु, तैरना, हलके ऐथलेटिक्स, शूटिंग, प्राथमिक चिकित्सा हाईकिंग तथा स्काउटिंग के प्रशिक्षण की व्यवस्था की । १५—१७ वर्ष के युवकों के लिये शारीरिक क्षमता १००, ३००० मीटर दौड़, लांग जम्पस, फेंकना, शाट फेंकना, चिनिंग, तैरना, तथा कभी साईकिल चलाना होता था । बन्दूक चलाने, मार्चिंग तथा अन्य सैनिक विषयों में भी क्षमता परीक्षा होती थी ।

युनिफौर्म का आर्कषण, स्वस्तिका चिन्ह, खेल के बैज, सेवा के फीते, तथा हिटलर सलामी बालकों पर अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध हुई। बालक बालिकाओं को यह प्रदर्शित किया जाता था कि उनके राष्ट्र को उनकी आवश्यकता है और इसका प्रतिउत्तर वे कट्टर उत्साह तथा यर्थाथिता से देते थे।

१९४५ के पश्चात अनेक प्रशिक्षण विद्यालयों, स्कूल तथा कालेज में शारीरिक शिक्षा की ओर उत्साह शिथिल हो गया। नेशनल सोशलिस्ट ने बर्लिन का स्पोर्टस टीचर का पक्ष तोड़ दिया तथा उसी प्रकार के कार्यकर्ताओं से पुनः कोलोन स्पोट्र्सहोम स्कूल के नाम से १९४७ में उसके स्थान पर स्थापित किया। यह एक तीन वर्षीय पाठ्यक्रम पुरुष तथा महिलाओं के लिये था। यह पृथक या युनिवर्सिटी के अध्ययन के साथ कोलोन या बोन में किया जा सकता था। प्राइमरी स्कूल के शिक्षक भी एक वर्ष का पोस्ट सर्टिफिकेट कोर्स कर सकते थे। १९४६ में स्पोट्र्स क्लब पुनः जागृत होते हुये दिखायी देने लगे किन्तु इनका किसी प्रकार की राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं था। ऐथेलेटिक प्रतियोगिता में लोग भाग लेते रहे। उस समय के अधिकारियों ने स्पोट्र्स के लिये किसी भी प्रकार की केन्द्रीय संस्था स्थापित करने की मनाही कर दी किन्तु स्पोट्र्स में भाग लेने की जर्मनियों की इच्छा को ज़रा भी न दबा सकी।

जर्मनी के अधिकांश स्कूल में शारीरिक शिक्षा क्लास (४५—६० मिनट का) प्रति सप्ताह दो घंटे का होता है। प्रमुख शारीरिक शिक्षा कार्य जर्मन टर्नन, अंग्रेजी खेल, स्कैनडीनेविया का सुधारात्मक जिमनास्टिक, उत्पादक नृत्य, ऐथेलेटिक्स आदि अन्य क्रियायें हैं। बसन्त में ग्रीष्म ऋतु के बाहर खेलेजाने वाले खेल पर बल दिया जाता है तथा शीतकाल में जिमनास्टिक तथा ऐथेलेटिक्स पर ज़ोर दिया जाता है। स्पोट्र्स क्लब तथा टर्नविरायन प्रायः प्रत्येक स्थान में पाये जाते हैं। इन प्रत्येक संस्थाओं का युवक पक्ष अत्यन्त क्रियाशील है। प्रायः पूर्ण समय के प्रशिक्षण की व्यवस्था है। कितनी ही स्कूली संस्थाएं ऐसी है जिनके पास अपना खेलने का स्थान नहीं है। ऐसी अवस्था में वे क्लब या म्युनिसीपैलटी की सुविधाओं का प्रयोग करते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात शारीरिक शिक्षा स्पोट्र्स तथा प्रत्येक मौसम के खेल तथा क्रियाओं में पर्याप्त रुचि रही तथा प्रगति होती रही। जर्मनी का दो हिस्सों में विभाजित होना भी उसके लिये एक

दुःखद विषय है। ईस्ट तथा वेस्ट जो जर्मनी के दो भाग हैं, वहां उनके शासकों के विचार के अनुसार विचार धारा-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आ जाना स्वभाविक है। संसार की दो मुख्य शक्तियों का प्रभाव ईस्ट जर्मनी में रूस तथा वेस्ट जर्मन में एलाइड (अमरीकन तथा ब्रिटिश) हैं। युद्ध के परिणाम के कारण सतह पर विभिन्नता प्रतीत होती है किन्तु जर्मन लोगों की अपनी जाति की पवित्रता तथा पित्र भूमि के लिये प्रेम तथा श्रद्धा किसी भी शक्ति के द्वारा क्षीण नहीं की जा सकती। जर्मनी के लोग अपने पिछले गौरव को नहीं भूल सकते।

जर्मनी का महत्वपूर्ण प्लेग्राऊन्ड मूवमेन्ट का आरम्भ फ्रान्स तथा पुरुसिया के युद्ध के समय से हुआ। १८७२ में कोनराड कोच एक शारीरिक शिक्षक, विद्यार्थियों को बुधवार के मध्याह्न जब उन्हें आधे दिन का अवकाश मिलता था, तो शहर के बाहर विभिन्न प्रकार की दौड़ तथा खेल के अभ्यास के लिये ले जाते थे। तीन वर्ष के जर्मन खेल के अनुभव के पश्चात उन्हें यह ज्ञात हुआ कि इससे भी अधिक संगठित खेलों की आवश्यकता है जिनका अभ्यास शीतकाल के समय हो सके। डा० मेड फेड्रिक रेक कोच के श्वसुर ने इंगलैंड में फुटबाल देखा था और यह प्रस्ताव किया कि यह जर्मनी में भी आरम्भ किया जाये। अगस्त हरमन जो जिमनास्टिक के शिक्षक थे उन्होंने इंगलैंड से एक फुटबाल मंगाया और अक्टूबर १८७४ में एक दिन खेल के मैदान में उसे आरम्भ कराया। इस क्षण से जर्मन में रगबी फुटबाल का प्रचलन हुआ। अमरीकन बेसबाल १८७५ में तथा अंग्रेजी क्रिकेट १८७६ में आरम्भ हुआ। खेल में भाग लेने वालों की संख्या में दिन प्रतिदिन वृद्धि इस नये परिवर्तित कार्यक्रम की उत्तमता का प्रमाण था।

बुधवार के अवकाश के साथ शनिवार को भी अवकाश मिलने लगा। कुछ ही दिनों में ये खेल, स्कूल जीवन के एक बहुत ही महत्वपूर्ण भाग हो गये। कुछ कक्षाओं को वृहस्पतिवार तथा शुक्रवार को भी दूसरे कामों से अवकाश दे दिया जाता था जिससे वे इन खेलों में भाग ले सकें। दो शिक्षक जो अपना समय ऐच्छिक रीति से देते थे अब उनको इस कार्य के लिये स्कूल के कुछ कार्यों से छूट दी जाने लगी। जिमनेजियम मार्टीनो कैथ्री नियम प्रथम स्कूल था जहां क्रियाशील खेल पाठ्यक्रम में सर्वप्रथम आरम्भ किये गये। क्रमशः ये खेल

प्रगतिशील रहे। स्केटिंग भी फुटबाल की तरह सर्वप्रिय रहा। कोच जो सम्पूर्ण जर्मन खेल के मान्य मनोवैज्ञानिक तथा दार्शनिक हुये, आरम्भ ही से इन खेलों के आधारभूत तथ्यों के शैक्षणिक मूल्य से अत्यन्त प्रभावित रहे। उनकी पुस्तकें "दीये एरजीएंहुंग जुम क्युटे डुर्च टर्नन स्पाएल उन्ड स्पोर्ट" शरीर के व्यायाम के मनोवैज्ञानिक तत्वों का वर्णन है जो श्रेष्ठ साहित्यों में से एक है और अपने प्रकार की एक ही पुस्तक सम्पूर्ण क्षेत्र में है।

जुलाई २७—३०, १८७६ ई० ब्रन्सविक में आठवां सामान्य अधिवेशन हुआ। इस अवसर पर इन खेलों की अत्यन्त प्रशंसा की गयी तथा बालकों ने इनमें प्रदर्शन दिया जिससे उनकी रुचि तथा दक्षता का प्रमाण मिला।

पांच वर्ष पश्चात १८८१ ई०में अन्दोलन जो क्रमश: जर्मन जिमनास्टिक शिक्षकों तथा अन्य शिक्षकों को प्रभावित कर रहा था अचानक ख्याति के शिखर पर पहुंचा। इसका मुख्य कारण एमिल हॉर्टविच १८४३–१८८६ ई० थे जो पुरुशियन डिस्ट्रिक कोर्ट के जज थे। इन्होंने अपने अध्यापन काल अवकाश के समय जिमनास्टिक, पेंटिंग, संगीत आदि में दक्षता प्राप्त कर लिया था तथा अनिवार्य सैनिक सेवा भी प्रदान कर चुके थे। ये शिक्षा की समस्याओं को भली भाँति समझ चुके थे तथा उसके हल के लिये क्रियाशील थे। उनका सिद्धान्त था कि वेदाग सम्मान के बाद पृथ्वी पर सबसे बड़ी चीज़ स्वास्थ्य है। हार्टविच ने कई एक लेख लिखे तथा पत्रिकायें छपवायी जिनके कितने ही संस्करण हुए, इनमें इन्होंने खेल तथा शारीरिक शिक्षा के महत्व, शरीर तथा मन का श्रेष्ठ सम्बन्ध, तथा शरीर से अधिक मस्तिष्क पर बल दिये जाने आदि विषयों पर विचार प्रकट किये। प्रगति तथा सुधार की चेष्टा के लिये सामान्य तथा उस ओर ध्यान आकर्षित करने के लिये उन्होंने एक स्थायी राष्ट्रीय संस्था संगठित करने का प्रस्ताव दिया जो प्रत्येक राजनैतिक तथा साम्प्रदायिक विप्लव से मुक्त होकर समाज के प्रत्येक वर्ग को एक ही अन्त के लिये सम्मिलित कर सम्पूर्ण स्वतंत्रता से शरीर की रक्षा तथा उसके क्रियाशील व्यायामों की देख भाल कर सके। इस हेतु भिन्न भिन्न क्षेत्र प्रस्तावित किये जैसे जिमनास्टिक, स्केटिंग, स्कूल सम्बन्धी आवश्यकतायें, स्नान, तैरना तथा नाव चलाना, युवकों तथा प्रौढ़ों के लिये खेल तथा उत्सव, प्रेस के द्वारा प्रसार तथा चिकित्सा।

'हार्टविच के बोरान विर लेयडन' के प्रकाशित होने पर सर्वत्र शरीर के

अधिकार खुली हवा में व्यायाम का नाम तथा लोगों की इस श्रेष्ठ रुचि पर चर्चा होनी लगी क्योंकि जर्मनी में यह पुस्तक अधिकता से पढ़ी जाने लगी थी। विद्वान, राजकीय कर्मचारी, अन्य उच्च पदाधिकारी, हार्टविच की सहायता तथा उनसे सहानुभूति करने लगे। गुस्ताव वोन गोस्सलर पुरुसिया के सार्वजनिक अराधना तथा शिक्षा के मंत्री ने उनसे वार्त्तालाप करने के लिये उन्हें बुलाया। १८८२ में मंत्री वोन गोस्सलर ने अपनी आज्ञा दी कि खुली हवा में जिमनास्टिक तथा क्रियाशील खेलों में भाग लिये जायें तथा इनके लिये प्लेग्राऊन्ड की व्यवस्था हो एउस्सेलडोर्फ, बोन, विट्टेन, बारमेन, हेगन, बर्लिन आदि शहरों में प्लेग्राऊन्ड लिये गये तया उसमें सामान लगाये गये १८८४ ई०में सार्वजनिक खेल का आरम्भ ड्रसडेन, साल्जबर्ग, डर्मास्टाड तथा फ्राण्कफर्ट-ओन- दि मेन में हुआ।

हार्टविच ने एक पत्रिका 'कोओपर उंड जाईस्ट' निकाली जिससे प्रत्येक को आन्दोलन के संदेश तथा मुख्य बातों का पता चलता रहे। बहुत से लोगों ने इंगलिश खेलों तथा ऐथेलेटिक्स को जर्मनी में चलाने तथा अपने स्थानीय खेलों तथा ठर्नन की एक प्रकार से हीनता होने की स्थिति को लेकर विरोध भी किया।

एमिल वोन स्केनकेनडोर्फ १८३७—१९१५ ई० एक सिटी काउंसिल के सदस्य तथा पुरुशियन चेम्बर आफ डेप्युटीज के भी सदस्य थे अन्त में एक राष्ट्रीय व्यक्ति हो गये। स्वास्थ्य के कारण उन्होंने गोरलिट्ज में आकर अपना घर बनाया और वहां सिटी प्रदेश तथा राष्ट्र के सार्वजनिक विषयों में भाग लेने लगे। ये डेनमार्क के लोकप्रिय सोसायटीज फार होम इन्डस्ट्री तथा टीचर ट्रेनिग स्कूल से परिचित थे। १८८१ में गोरलिङ्ग मनुअल ट्रेनिंग सोसायटी स्थापित की तथा बालकों के लिये एक वर्कशाप खोली। उसी वर्ष जर्मन सेन्ट्रल कमेटी फार मैनुअल ट्रेनिग तथा होम इन्डस्ट्री के संस्थापक में से एक थे। १८८२ ई०में होर्टविच से भी इस विषय पर सलाह ली और गोरलिज के युवकों के लिये खेल स्थापित करने की चेष्टा पर सहायता चाही। १८८३ ई० में बोरलिङ्ग मैनुएल ट्रेनिग सोसायटी को उन्होंने अपने कार्यक्रम में इस नयी प्रकार की क्रिया को सम्मिलित करने का आग्रह किया। यह आन्दोलन प्रति वर्ष बढ़ता ही गया। सोसायटी के परिश्रम से संगठन तथा संचालन की प्रणाली उत्तम की गयी तथा न केवल बालक ही किन्तु बड़े लड़के, युवक तथा प्रौढ़ भी इनकी सेवाओं

के पात्र हुये। खेल का वार्षिक उत्सव जनता में खेल की आदत डालने पर समर्थ हुआ।

शब्द विद्या का चालीसवां वार्षिक अधिवेशन जो १८८९ ई० में गारलिद्ध में हुआ उसमें इन अनुभवों के परिणाम को जर्मन शिक्षकों के सम्मुख रखने का एक उत्तम अवसर प्राप्त हुआ। गुस्तव अर्नेस्ट आइटनर (१८३५–१९५०) जो सिटी जिमनेजियम के निर्देशक थे तथा स्केनकेनडोर्फ के मित्र थे शिक्षकों को भली भांति शिक्षित करने की आवश्यकता समझते हुये गोरलिच्ज कार्यक्रम की प्रदर्शनी की जिसे लोगों ने अत्यन्त सराहा। कितने ही सदस्यों ने अपने अपने स्थानों में कार्यक्रम की आज्ञानता तथा संचालक के अभाव के कारण कार्य आरम्भ की कठिनाई बतायी। इस हेतु एक शिक्षक प्रशिक्षण गोरलिच्ज में आरम्भ करने का प्रस्ताव मान लिया गया, जिन्हें आवश्यकता थी वह वहां जाकर प्रशिक्षित हो सकें। स्केनकेनडोर्फ ने इस विचार को उत्साहपूर्वक स्वीकार किया तथा मंत्री गोस्सलर की अनुमित तथा सहायता से आइटनर के निर्देशन में इस कार्य का प्रबन्ध हुआ १८९० ई०में प्रथम शिक्षा कोर्स दिया गया। जोरडन यहां सहायक नियुक्तहुये थे। प्रतिदिन प्रातःकाल आइटनर सिद्धान्त पर एक घंटा लेक्चर देते तथा खेल पर विचार प्रकाशित करने इसके पश्चात जोरडन दो घंटे का अभ्यास कराते थे। संध्या ४–६ तक सिटी स्कूल में प्रथा चलाने की प्रणाली का प्रदर्शन होता था। आइटनर का मानुअल आफ गेम्स अत्यन्त सर्वप्रिय प्रमाणित हुआ। इसे राष्ट्रीय ख्याति देने तथा प्रोत्साहित करने के लिये आँकड़े भी एकत्र किये गये।

हरमन रेयड्ट (१८५१–१९१४) एक शिक्षक थे जो बिस्मार्क–स्कोनहाउसेन फाउन्डेशन की ओर से जो शिक्षा के प्रसार के लिये था, नियुक्ति पाकर इंगलैंड तथा स्काटलैंड की शिक्षा प्रणाली तथा इंगलिश पब्लिक स्कूल में जीवन स्थिति का अध्ययन करने के लिये भ्रमण किया। तीन वर्ष के पश्चात इनके अवलोकन की रिर्पोट छपी। उन्होंने इंगलिश प्लेग्राउन्ड स्थिति को जर्मन स्कूलों में प्रवाहित करने का विचार प्रकट किया। इस रिर्पोट का उत्तम स्वागत सर्वत्र रहा।

स्केनकेनडोर्फ ने यह अनुभव किया कि और ऊंचे स्तर पर कार्य करने का अवकाश प्राप्त था। अतः जो गेम्स मूवमेन्ट के विख्यात अग्रगामी थे उनकी

एक सभा बुलायी गयी। प्रस्ताव पास हुआ कि कमेटी में एक प्रकार का संगठन स्थापित करने की आवश्यकता थी जहां अधिकांश स्वतंत्रता से कार्य परिचालन किया जा सकता था। तीन उप कमेटी जिनमें सात सात सदस्य थे निर्मित की गयी। इनके अध्यक्ष तथा सेन्ट्रल कमेटी के अफसरों की एक बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स बनायी गयी। सेन्ट्रल कमेटी की २० वर्ष की कार्यवाही १८९१—१९११ तक की छापी गयी। कमेटी का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति तथा स्थानीय संस्था को सहायता देने का था जिससे खेल समाज के प्रत्येक खंड में पहुंचाया जा सके। खेल तथा खुली हवा में किये जाने वाले अन्य क्रियाशील व्यायाम को इनके द्वारा प्रोत्साहन दिया गया। १९१२ ई० में 'उप कमेटी' तकनीकी, खेल का सार्वजनिक प्रदर्शन, जर्मन यूनिवर्सिटी, व्यवसायिक स्कूल तथा खेल लगातार रखना, शिक्षा के द्वारा राष्ट्रीय बचाव तथा सुरक्षा, ग्रामीण बालक तथा युवक, भ्रमण तथा शीत काल के व्यायाम खुले में तथा लड़कियों और महिलाओं के शारीरिक स्वस्थ्यता के प्रगति के उपाय के लिये बनायी गयी।

सेन्ट्रल कमेटी के कार्य तीन मुख्य भागों में विभाजित किये जा सकते हैं। सूचना, उपयोगी निर्माण कार्य तथा अप्रत्यक्ष उपाय।

विश्वयुद्ध छिड़ने के पश्चात् सेन्ट्रल कमेटी के स्थान पर दूसरी संस्था स्थापित की गयी जिसके हाथ में स्कूल के बाहर के सम्पूर्ण लोकप्रिय प्रशिक्षण ओलम्पिक खेल तथा नये हाई स्कूल का उत्तरदायित्व दिया गया।

बर्लिन में यूनिवर्सिटी तथा दूसरी यूनिवर्सिटियों में १९२० ई० में एक आन्दोलन आरम्भ हुआ जिसके द्वारा शारीरिक शिक्षा दो वर्षों के लिये अनिवार्य कर देने की मांग की गयी। अब यह प्रायः सर्वव्यापी है। एथेलेटिक खेल तथा जिमनास्टिक दोनों ही कार्यक्रम में हैं।

सर्वसाधारण के ध्यान को आकर्षित करने के लिये प्रायः ३०० पत्र पत्रिकाओं के साधन का प्रयोग किया गया।

वोन स्केनकेनडोर्फ जर्मन प्लेग्राउन्ड आन्दोलन के सर्व प्रमुख व्यक्ति का देहान्त १ मार्च १९१५ ई०में हुआ। मृत्यु के पूर्व उनका विचार था कि आन्दोलन

के सफल करने के लिये अभी बहुत सी कमी थी। स्टेट ने अपने उत्तरदायित्व का इस ओर अच्छी रीति से पालन नहीं किया।

१८९६ ई० ओलम्पिक खेल के पुनरोत्थान से यूरोप महाद्वीप की दृष्टि प्रथम बार इस बात पर हुयी कि स्पोटर्स प्रतियोगिता के द्वारा राष्ट्रीय गौरव प्रदर्शित किया जा सकता है। जो देश जिमनास्टिक ही में एकाग्रचित्त थे उन्हें स्पोर्ट प्रतियोगिता में कठिनाई हुयी। स्टौकहोम में १९१२ ई०के ओलम्पिक खेल में जर्मनी अमेरिका से अत्यन्त प्रभावित हुआ। ऐथेलेटिक तथा शारीरिक शिक्षा प्रोग्राम के अध्ययन के लिये एक कमीशन अमेरिका भेजा गया। कमीशन के अध्यक्ष डा० कार्ल डायम थे। डा० डायम ने एक 'कालेज आफ फिजीकल एज्यु-केशन', शिक्षक तथा स्पोर्ट्स लीडर प्रशिक्षित करने के लिये आयोजित किया। यह प्रथम विश्व युद्ध के कारण स्थगित कर दिया गया। युद्ध के पहले स्पोर्ट्स एक निजी व्यक्तिगत उद्योग हुआ करता था। १९२७ ई० तक खेल इत्यादि सर्व-व्यापी हो गया था।

युद्ध के पश्चात पूर्वी तथ पश्चिमी जर्मनी दोनों स्थानों में पुराने स्पोर्ट्स क्लब जो हिटलर ने बन्द कर रखा था फिर आपस में प्रतियोगिता करने लगे। १९४६ई० में फ्रान्कफर्ट में तथा १९४७ ई० में कोलोन में जर्मन जिमनास्टिक प्रति-योगिता हुयी थी। दोनों पक्ष के पदाधिकारियों के द्वारा केन्द्रीय संगठन संस्था पर प्रतिबन्ध लगाने पर भी प्रतियोगितायें होती रहीं।

१९०० ई० के आस पास चिकित्सक तथा शारीरिक क्रिया विशेषज्ञों ने व्यायाम का चिकित्सा तथा शारीरिक क्रिया पक्ष की ओर ध्यान दिया। १९२३ ई० में डा० कार्ल डायम जो नव निर्मित बर्लिन कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन के निर्देशक नियुक्त हुये थे उन्होंने उन चिकित्सकों को जो व्यायाम के चिकित्सा पक्ष में रुचि रखते थे अपनी संस्था में आमन्त्रित किया। डा० ए० बायर, जो बर्लिन यूनीवर्सिटी के स्कूल आफ मेडिसन में थे उनके साथ कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन के शिक्षकों ने सहयोग देकर शारीरिक शिक्षा थ्योरी तथा प्रैक्टिस का एक कोर्स चिकित्सा विद्यार्थियों के लिये निश्चित किया। यह यूरोप में प्रथम कोर्स चार घंटे का लेक्चर तथा तीन घंटे का प्रैक्टिकल कार्य प्रति सप्ताह का था।

प्रथम इन्टरनेशनल कांग्रेस शारीरिक शिक्षा तथा स्पोर्ट्स, ओलम्पिक खेलों के साथ १९२८ ई० में अमस्टरडाम में हुयी। प्रथम इन्टरनेशनल कांग्रेस स्पोर्ट्स मेडिसिन पर १९३३ रोम में हुयी। १९३४ में ओलम्पिक खेल के समय पेरिस में, १९३६ के उसी अवस्था में बर्लिन में भी एक कांग्रेस हुयी, जिसमें ४० राष्ट्र उपस्थित थे।

१९३३ के कमीशन ने अमेरिकन प्रणाली के आधार पर मनोरंजन के लिये भी प्रस्ताव दिये। इसके लिये राजकीय नियम स्थापित करना चाहा किन्तु युद्ध के कारण यह सम्भव न हो सका। युद्ध के पश्चात यह स्वीकृत हुआ जिसके अनुसार म्युनिसिपैल्टी ने तीन स्क्वायर मीटर खेल का स्थान प्रति व्यक्ति के लिये व्यवस्थित किया।

जर्मनी के यूथ आन्दोलन की प्रगति के साथ यूथ शेल्टर्स स्थापित किये जिसमें क्लब हाऊस, ग्राम निवास स्थान, खलिहान, पुरानी इमारतें, तथा मोनास्ट्रीज होती थी। इनके प्रयोग के लिये साधारण शुल्क लिया जाता था। सब प्रकार की आधुनिक सुविधायें प्रस्तुत थी। नेशनल सोशयलिस्ट के अधिकार प्राप्त करने पर यूथ होस्टल आन्दोलन की प्रगति पुनः हुयी।

१९१३ के कमीशन की रिपोर्ट के अनुसार व्यवसायिक प्रशिक्षण कोर्स तीन वर्ष का कर दिया गया। १९२० में कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन की स्थापना हुई, जिसे बर्लिन यूनिवर्सिटी से मान्यता प्राप्त थी, और उसने महत्वपूर्ण प्रगति की। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात जब बर्लिन विभाजित हुआ तो यह कोलोन में स्थानान्तर कर दिया गया। डा० डायम तब भी उसके अध्यक्ष थे। पूर्वी जर्मनी का फिजिकल ऐज्युकेशन कालेज लाइपजिग में भी पर्याप्त उन्नति कर चुका है।

१३

स्वीडेन

प्राय: एक शताब्दी से अधिक स्वीडेन में जिमनास्टिक तीन रूपों में प्रगति कर रहा था, ये तीन रूप थे शैक्षणिक, सैनिक तथा चिकित्सा अर्थात स्कूल के जीवन में एक मुख्य भाग, जल तथा थल सेना के प्रशिक्षण में एक साधन तथा एक चिकित्सा उपाय ।

ए० ओ० लीन्डर्फोस (१७८१—१८४१) ने लुन्ड यूनिवर्सिटी से अध्ययन प्राप्त किया था । अपनी डाक्टरेट की डिग्री के लिये उन्होंने जिमनास्टिक पर 'थीसिस' लिखी । अपनी पुस्तक में उन्होंने "जिमनास्टिका नाचूरलिस तथा 'जिमनास्टिक आरटिफिसियोसा' में अन्तर दिखाया । उनका कहना था कि बनावटी, व्यायाम के प्रयोग में शैक्षणिक लाभ हैं और ये अपने आप में प्राकृतिक क्रियाओं के ऊपर एक प्रकार की उन्नति है । उन्होंने बनावटी या अप्राकृतिक व्यायाम को तीन हिस्सों में विभाजित किया । सैनिक जिमनास्टिक, शैक्षिक या एथलेटिक जिमनास्टिक तथा चिकित्सा जिमनास्टिक जिसके द्वारा शारीरिक दोषों का सुधार तथा उनका अवरोध हो सके। । दुसरे वर्ग पर प्रकाश डालते हुये लीन्डर्फोस ने यूनानियों के पेन्टाथलन दौड़, कूद, डिस्कस, जेवलिन, कुश्ती तथा प्लेटो के 'ओरकासिस', जिसमें 'एक्रोबेटिक्स' खेल तथा नृत्य थे, प्रशंसा की । लिन्डफोर्स लुन्ड यूनिवर्सिटी में 'एज्युकेशन' के लेक्चरर नियुक्त थे ।

पेर हेनरिक लिंग (१७७६—१८३९) के पिता एक पादरी थे । लिंग तथा लिन्डफोर्स एक साथ दक्षिण स्विडेन के एक ही पारसोंनेज में बड़े हुये, एक ही स्थान पर अध्ययन प्राप्त किया । लिंग के कुछ दिनों के जीवन इतिहास के विषय में कुछ पता नहीं । यह निश्चित है कि वे फ्रेन्च, इंगलिश तथा जर्मन

भलि भांति बोल लेते थे अतः यूरोप के महाद्वीप तथा इंगलैंड का उन्होंने अच्छी तरह भ्रमण किया।

१९७७ ई० में लिंग कोपेनहागेन पहुंचे। पांच वर्ष स्विडेन तथा डेनमार्क में रहे। वहां वे दार्शनिकों तथा कवियों से अधिक प्रभावित हुये और स्कानडिनेविया की परम्परा से आयी हुयी संस्कृति आदि के प्रति अधिक सम्मान प्रकट किया। भाषा में दक्षता प्राप्त करने के पश्चात वे साहित्य का अध्ययन करने लगे तथा नौर्स पैराणिक कथा में अत्यन्त रुचि प्रगट की। कोपेनहेगेन में वे फेन्सिग का भी प्रशिक्षण प्राप्त करने लगे। इस प्रशिक्षण के कारण उनके एक हाथ के दोष में सुधार हुआ अतः उसी समय से वे व्यायाम का शरीर पर प्रभाव के विषय की खोज में रहे। उन्होंने नाचगल के डेनिस जिमनेज़ियम में प्रवेश लेकर व्यायाम के अभ्यास के विषय पर ज्ञान प्राप्त किया। १८०४ ई० में लिंग स्विडेन में कविता तथा इतिहास में लेक्चरर नियुक्त हुये।

जब लिंग स्विडेन पहुंचे उस समय फिनलैंड पर रूस का आधिपत्य था। इस कारण देश भक्ति की ज्वाला से उनका हृदय दहक उठा। लिंग के लिये जिमनास्टिक तथा साहित्य एक होकर एक ही उद्देश्य की ओर प्रेरित कर रहे थे। वे गोथ्स के निर्बल सन्तानों में एक नयी शक्ति का संचार करना चाहते थे। जिमनास्टिक कार्य क्रम के विस्तार से वे स्विडेन के युवकों पर वह प्रभाव डालना चाह रहे थे जिससे वे पूर्वज नौर्समेन की साहस तथा शारीरिक शक्ति का विकास कर सकें। चार्ल्स चौदहवें की मित्रता प्राप्त करके तथा उनके सैनिकों के लिये शारीरिक शिक्षा कार्य का लाभ दिखाकर उन्होंने अपने कार्यक्रम के लिये पर्याप्त सहायता प्राप्त कर ली।

अतः स्विडेन में राष्ट्रीय स्तर पर जिमनास्टिक का कार्य क्रम चलाने का मुख्य उद्देश्य सैनिक लाभ रहा, किन्तु युद्ध के बादल हटते ही शारीरिक शिक्षा लगातार चलती रही और राष्ट्रीय सुधार तथा उन्नति की प्रगति का साधन बनी रही।

पेर हेनरिक लिंग स्वीडिश जिमनास्टिक के संस्थापक माने जाते हैं। स्विडेन जिमनास्टिक के चिकित्सक तथा सुधारात्मक मूल्य जो साधारणतया मेडिकल जिमनास्टिक के नाम से प्रसिद्ध हैं अपने गुणों के कारण सर्वव्यापी सिद्ध हुआ।

अपने शरीर क्रिया ज्ञान तथा शरीर रचना ज्ञान के अध्ययन से वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि शारीरिक शिक्षा के समझने के लिये मानव शरीर का पूर्ण ज्ञान तथा प्रकृति के नियमों का ज्ञान होना आवश्यक है। जितना ही वे मानव शरीर विज्ञान का ज्ञान प्राप्त करते गये उतना ही उनका विश्वास दृढ़ होता रहा कि जिमनास्टिक का चिकित्सा लाभ पर पर्याप्त बल नहीं दिया गया। जिमनास्टिक जितना निर्बल के लिये आवश्यक है उतना ही बलिष्ठ के लिये भी आवश्यक है। व्यायाम समूह के लिये नहीं किन्तु व्यक्ति के लिये दिया जाना चाहिये। जिमनास्टिक प्रणाली का आधार शरीर पर भिन्न भिन्न व्यायामों के सही प्रभाव के अनुसार ही होना चाहिये। शिक्षकों को प्रत्येक व्यायाम का उद्देश्य तथा परिणाम जानना चाहिये। इन सबका मुख्य ध्येय शरीर का एकत्व मानसिक तथा शारीरिक संयुक्ति है।

जब लिंग रायल मिलिट्री स्कूल में फेन्सिग मास्टर नियुक्त हुये उन्होंने यह प्रस्ताव किया कि फिजिकल ऐज्युकेशन को एक राष्ट्रीय संस्था होनी आवश्यक है जहां स्विडिस जनता के शारीरिक उन्नति के लिये शिक्षक प्रशिक्षित हो सकें। अधिकारियों ने यह प्रस्ताव स्वीकार किया तथा १८१४ ई० में स्टौकहोम में 'रायल सेन्ट्रल इन्सटीच्यूट आफ जिमनास्टिक' स्थापित हुआ। उसका सर्व प्रमुख तत्कालिक कार्य सैनिक जिमनास्टिक के मार्ग में था क्योंकि राष्ट्रीय सुरक्षा तथा बचाव का प्रबन्ध करना आवश्यक था। लिंग तथा दूसरे शिक्षकों ने वहां सैनिकों को प्रशिक्षण दिया। 'बेयनट फाइटिंग' की लिंग प्रणाली और उसके पूरक व्यायाम तथा 'हैन्ड बुक आफ जिमनास्टिक' कोर्स में सिखाये जाते थे। संस्था इस सैनिक खंड की तैय्यारी का केन्द्र बन गया। लिंग ने स्विडिस प्रणाली के सिद्धान्त तथा अभ्यास दोनों की नीव डाली। उसके उत्तराधिकारियों ने उसमें सहयोग दिया तथा बढ़ाया किन्तु उनके वास्तविक विचारों में कभी कोई घोर परिवर्तन नहीं हुआ। १९१३ ई० में लिंग के सेन्ट्रल इन्सटीच्यूट के प्रस्ताव का सवां वार्षिकोत्सव मनाया गया। स्विडेन ने उस समय एक राष्ट्रीय उत्सव मनाया तथा लिंग की कब्र सजायी गयी।

लिंग की मृत्यु के पश्चात १८३९ ई० में गेब्रियेल ब्रान्टिग सेन्ट्रल इन्सटीच्यूट के निर्देशक हुये। युद्ध के समाप्त होने पर जिमनास्टिक का सैनिक महत्व नहीं रहा। ब्रानटिंग ने चिकित्सा जिमनास्टिक का क्षेत्र बढ़ाया। जिमनास्टिक के

चिकित्सा सिद्धान्त का विरोध चिकित्सकों के द्वारा हुआ किन्तु इस विरोध के होते हुये भी यह स्विडेन में स्वीकार किया गया। और संसार के मुख्य देशों में इसका अत्यन्त प्रभाव उत्तरोत्तर होता गया।

स्वीडेन के स्कूलों में जिमनास्टिक का प्रवेश तथा प्रचार क्रमशः हुआ। १८२० के नियम के अनुसार बालकों के माध्यमिक स्कूलों में फिजिकल एज्युकेशन का कोर्स अनिवार्य कर दिया गया। सम्पूर्ण सार्वजनिक स्कूलों में शारीरिक शिक्षा का प्रचार राजकीय नियम के कारण नहीं हुआ बल्कि इस विश्वास से अधिक कि शारीरिक शिक्षा सामान्य शिक्षा का एक अनिवार्य अंग है।

१८६० रायल सेन्ट्रल इन्सटिच्यूट आफ जिमनास्टिक पुनः संगठित हुआ। इसके परिणाम स्वरूप तीन क्षेत्र स्थापित हुए। शैक्षणिक, सैनिक तथा चिकित्सा। हाजलमार लिंग शैक्षणिक क्षेत्र के प्रधानाचार्य हुए। स्कूल के कक्षाओं में स्विडिस प्रणाली का प्रवेश उन्हीं के परिश्रम का फल है। स्विडिस प्रणाली के स्वीकार करने के कारण पर्याप्त आपरेटस् का बनवाना, सामूहिक व्यायाम को सही करना, परीक्षा फल देना तथा कार्य में प्रगति, लड़के तथा लड़कियों के लिए गति का वर्गीकरण करना आदि आवश्यक हो गया। लिंग के द्वारा स्विडिस प्रणाली का 'डेज ओर्डर' या पाठ्य योजना स्थापित की गयी। स्वीडन के स्कूल में इतिहास की विशेषता एक स्वस्थ क्रमिक प्रगति की है। स्कूल जिन पर बोर्ड आफ एज्युकेशन तथा सुपरवाइजरी बोर्ड आफ ट्रेंड स्कूल के नियन्त्रण थे वहां शारीरिक शिक्षा अनिवार्य कर दी गई। यही स्थिति राजकीय सहायक प्रारम्भिक स्कूलों तथा हाई स्कूलों की भी थी।

७ से ९ वर्ष के बच्चों के लिए ४५ मिनट या दो छोटे घंटे प्रति सप्ताह शारीरिक शिक्षा के लिए दिये जाते हैं। दूसरी प्रारम्भिक कक्षाओं में तीन घंटे सप्ताह में दिये जा सकते थे। माध्यमिक कक्षाओं में तीन से चार घंटे दिये जाते हैं। स्वीडन में मुख्य शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम जिमनास्टिक, खेल तथा स्पोटर्स तथा शीतकाल में स्कीइंग ऐसी क्रियायें होती हैं। शारीरिक शिक्षा के इस पक्ष के पूरक के रूप में बाहर खुली हवा में भी कार्य होता है जिससे युवक कठिन बाहरी जीवन भी व्यतीत कर सकें। यहां प्रायः आधे दिन का अवकाश होता है जिसमें खेल तथा स्पोर्टस होते हैं। वर्ष में यह आधे दिन

का अवकाश १० से १२ माध्यमिक स्कूलों में तथा १६ से २४ प्रारम्भिक स्कूलों में होता है। लिग प्रणाली स्वीडन में दूसरी प्रणालियों से श्रेष्ठ समझी जाती है। अनेक हाई स्कूलों में उत्तम जिमनेज़ियम हैं। ट्रेंड तथा एलीमेन्ट्री स्कूल में उच्च कोटि के कार्य में सुविधाओं की कमी है। युनिवर्सिटी के विद्यार्थियों के लिए भी शारीरिक शिक्षा का साधन उपलब्ध है। निजी जिमनेज़ियम तथा जिमनास्टिक सोसाइटीज़ की सेवायें सर्वत्र तथा सदैव उपलब्ध हैं। स्वीडेन की जनता ऐच्छिक रीति से शारीरक शिक्षा कार्यक्रम में भाग लेती है। महिलाओं ने १९४२ से भाग लेना आरम्भ किया। जिमनास्टिक एसोसियेशन के द्वारा शिक्षक प्रशिक्षित किये जाते हैं जिससे वह श्रमिक तथा औद्योगिक वर्ग को कुछ मिनट की कालेसथेनिक्स करा सकें। स्वीडन के जीवन में खेल, शारीरिक तथा नैतिक शिक्षा का एक महत्वपूर्ण भाग बन चुका है।

सिद्धान्त तथा अभ्यास में स्वीडिश प्रणाली के कारण शारीरिक शिक्षा ने पर्याप्त उन्नति की है। एनाटमी, फिज़ियालोजी, काइनेसिओलोजी आदि के द्वारा मानव शरीर के सही अध्ययन पर बल ने इसे एक श्रेष्ठ शैक्षणिक स्तर प्रदान कर दिया है। व्यायाम को इस ज्ञान के आधार पर सुधारना तथा क्रम से लगाना एक विशेष प्रगति है। सुधारात्मक तथा चिकित्सात्मक व्यायाम में यह ज्ञान अत्यन्त बहुमूल्य माना जाता है।

रायल सेन्ट्रल इन्नसटीट्यूट आफ जिमनास्टिक का स्थान उत्पत्ति से ही एक नार्मल स्कूल की स्थिति में विशेष रहा है। दो वर्ष का प्रशिक्षण दिया जाता है। महिलाओं के लिए दो प्रशिक्षण विद्यालय हैं जो लुन्ड तथा स्टाकहौम में स्थित हैं।

इस समय अनेक छोटे कोर्सों की व्यवस्था है जो ऐच्छिक जिमनास्टिक तथा स्पोर्ट्स के शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए हैं। ग्रीष्मकाल में ८—१४ दिन का कार्यक्रम विदेशी विद्यार्थियों के लिये किया जाता है।

शारीरिक शिक्षा में मनोरंजन के चातुर्य का विकास तथा अवकाश के समय का इनके द्वारा सदोपयोग पर अत्यन्त बल दिया जाता है मुख्य उद्देश्य शरीर के विकास तथा स्वास्थ्य सुरक्षा का ही है। शारीरिक शिक्षा से नैतिकता के विकास पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है।

स्वीडिश स्पोर्ट्स फेडरेशन, स्वीडन की केन्द्रिय शासन कमेटी है। यह स्थानीय सोसाइटीज़ को नियम आदि के आदेश देती है, तथा जिमनास्टिक तथा स्पोर्ट्स में विकास की ओर प्रगतिशील रहती है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता में इसका प्रतिनिधित्व है। शारीरिक क्षमता में रुचि उत्पन्न करने के लिये फेडरेशन ने १९०७ से एथेलेटिक पदक देना आरम्भ किया है। इसको अर्जित करना, सरल नहीं। इसमें तैरना, जिमनास्टिक, कूदना, फेंकना, दौड़ना, फ़ेन्सिग, नाव चलाना तथा (स्कीइंग) आदि होता है।

बीसवीं शताब्दी के शारीरिक शिक्षक स्वीडिश जिमनास्टिक के पुन: संगठन का प्रयास कर रहे हैं। आधुनिक स्वीडिश स्कूल में शारीरिक शिक्षा का अर्थ है, खेल तथा स्पोर्ट्स के साथ जिमनास्टिक। वर्ष के अन्त में जिमनास्टिक प्रदर्शन स्कूल का एक विशेष कार्यक्रम है। सामूहिक व्यायाम अत्यन्त ही उत्तम प्रकार से किया जाता है तथा बालक इसमें रुचि लेते हैं। प्रौढ़ों के लिये जिमनास्टिक प्रोग्राम में उन्नति हुई है। राष्ट्रीय क्षमता के ऊपर पर्याप्त ध्यान दिया जाता है। स्कैनडिनेविया की ग्रीष्म ऋतु थोड़े समय रहती है किन्तु वहां की जनता इसका यथार्थ उपयोग करती है जिसमें बाहर खुली हवा में जीवन व्यतीत करना मुख्य होता है।

१४

डेनमार्क

डेनमार्क, यूरोप का प्रथम देश था जिसने स्कूल के पाठ्यक्रम में शारीरिक शिक्षा को एक विशेष भाग समझते हुये, मुख्य स्थान दिया तथा उस विषय के लिये नियमानुसार प्रशिक्षण सिद्धान्त तथा अभ्यास भी दिये। इस आन्दोलन का लीडर तथा चालीस वर्ष से अधिक उसका निर्देशक फ्रैन्ज नाखटेगाल थे। ये कोपेनहेगेन के एक दर्जी के पुत्र थे। स्वाभाविक खेल तथा प्रतियोगिता की इच्छा के साथ ही साथ शक्तिशाली राष्ट्रीय रक्षकों की आवश्यकता ने आपस में मिलकर डेनमार्क को शारीरिक शिक्षा की उन्नति के लिये एक महत्वपूर्ण स्थान बना दिया।

फ्रान्ज नाखटेगाल (१७७७—१८४७) यूनिवर्सिटी में धर्मशास्त्र का अध्ययन कर रहे थे तभी उनको पिता के देहान्त के कारण अध्ययन स्थगित करना पड़ा। बाल्यकाल से ही वे शारीरिक शिक्षा क्रियाओं में रुचि लेते थे। अपने यूनिवर्सिटी जीवन में उन्होंने फेन्सिग तथा वालटिंग में दक्षता प्राप्त कर ली थी। उन्होंने गट्स मथ्स की पुस्तकें भी पढ़ी थीं। इन सब कारणों से शारीरिक शिक्षा के व्यवसाय की ओर उनका ध्यान गया। यूनिवर्सिटी विद्यार्थियों के क्लब में वह एक जिमनास्टिक शिक्षक नियुक्त हो गये। उसके पश्चात एक नेचरलिस्टिक स्कूल में उन्हें स्थान मिला। इनके परिश्रम से यह ज्ञात हो गया कि उनके पास शक्ति, बुद्धि तथा संगठन की उत्तम योग्यता थी तथा वे एक अत्यन्त ही सफल शिक्षक सिद्ध हुये।

१७९९ में उन्होंने अपना निजी खुला हुआ जिमनेजियम कोपेनहेगेन में चलाया। यह अत्यंत ही प्रसिद्ध तथा अपने प्रकार का प्रथम सिद्ध हुआ।

नेपोलियन के युद्ध के पहले हिस्से में डेनमार्क को अपने भौगोलिक स्थिति के कारण फ्रान्स का साथ देना पड़ा। इस कारण उसे नेपोलियन के विरोधियों का सामना करना पड़ा। इसके परिणामस्वरूप उसकी मनुष्य शक्ति, आर्थिक तथा सामाजिक स्रोतों पर ध्वंसात्मक प्रभाव पड़ा। १८०४ ई० में डेनमार्क ने एक उत्तम तथा बड़ी जल थल सेना की आवश्यकता के प्रति ध्यान दिया। अधिकारी इस विषय में निश्चित थे कि प्रशिक्षण का एक विशेष भाग जिमनास्टिक होना आवश्यक था अतः मिलिट्री जिमनास्टिक इन्सटीट्यूट जो आधुनिक समय का प्रथम जिमनास्टिक नार्मल स्कूल था, स्थापित हुआ। नाखटेगाल इसके प्रथम निर्देशक नियुक्त हुये। इनके प्रस्ताव पर सरकार ने शारीरिक शिक्षा की सुविधायें स्कूलों को दीं तथा जो स्कूल में नहीं थे उन्हें भी शारीरिक शिक्षा की सुविधायें प्राप्त हुयीं क्योंकि उन्हें भी स्कूल में आने की अनुमति दी गयी थी।

१८०९ ई० में माध्यमिक संस्थाओं से शारीरिक शिक्षा व्यायाम देने के लिये आग्रह किया गया। १८१४ ई० में एक राजकीय नियम के अनुसार यह आदेश हुआ कि प्रारम्भिक संस्थाओं को शारीरिक शिक्षक रखना तथा खेल का मैदान व अन्य सुविधाओं को जिमनास्टिक की शिक्षा के लिये उपलब्ध करना अनिवार्य है। यूरोप के देशों में यह प्रथम स्कूल राजकीय कानून से सम्बन्धित था जिसके द्वारा शारीरिक शिक्षा, सामान्य शिक्षा का एक भाग समझा गया।

अधिक संख्या में शिक्षकों को प्रशिक्षित करने के लिए जिमनास्टिक इन्सटीट्यूट के अलावा दूसरे शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं में शारीरिक शिक्षा के कोर्स भी पढ़ाये जाने लगे। नाखटेगाल सम्पूर्ण डेनमार्क के जिमनास्टिक निर्देशक नियुक्त किये गये। कुछ दिनों तक उन्नति की चाल मन्द रही किन्तु थी वह महत्वपूर्ण। मिलिट्री जिमनास्टिक इन्सटीट्यूट के छात्र अध्यापकों को स्कूल के बच्चों में शिक्षण अभ्यास की आज्ञा मिली। राष्ट्रीय कोष से 'ए मैनुअल आफ जिमनास्टिक' छपवाया गया। जो शारीरिक शिक्षा का गाइड माना गया और इसे विभिन्न स्कूलों के शारीरिक शिक्षकों को दिया गया। लड़कियों के लिये भी जिमनास्टिक की स्वीकृति मिली तथा मिलिट्री इन्सटीट्यूट में महिला शारीरिक शिक्षकों के लिये क्लास की व्यवस्था की गयी।

नाखटेगाल की मृत्यु के पश्चात शारीरिक शिक्षा का नेतृत्व कुछ ऐसे लोगों के हाथ में रहा जिनकी योग्यता कम थी। पुरुशिया तथा आस्ट्रिया में

१८६४ ई० के युद्ध ने पुनः जिमनास्टिक में रुचि उत्पन्न कर दी। इसी समय इंगलैंड की तरह डैनिश राइफल क्लब की स्थापना हुयी। पहले प्रत्येक कार्य खुले में होता था किन्तु १८७१ ई० के आसपास बहुत सी इमारतें व्यायाम आदि के लिये ली गयीं। जैसे ही वे संगठित हुयीं उन्होंने जिमनास्टिक सोसाइटीज का रूप ले लिया। सदस्यों ने भाग लेने में आनन्द लिया तथा दूसरों को भाग लेने के लिये प्रोत्साहित किया। यहां जिमनास्टिक एवं खेल होता था तथा ट्रैक एवं फील्ड ऐथेलेटिक्स की प्रतियोगिता भी आयोजित की जाती थी।

प्रायः १८६४ ई० में डेनमार्क में एक नयी व्यवस्था का आरम्भ हुआ। यह था 'फोल्क हाई स्कूल'। यह संस्था निजी होती थी तथा १८–२५ तक के युवक तथा युवतियों के लिये प्रवेश की स्वीकृति थी। अधिकांश प्रवेश लेने वाले ग्रामीण थे जो फार्म आदि से आते थे। सामान्य शिक्षा की व्यवस्था थी किन्तु किसी प्रकार की परीक्षा नहीं होती थी। ये स्कूल आज भी विद्यमान हैं। जिमनास्टिक सदैव पाठ्यक्रम का एक महत्वपूर्ण भाग रहा है और यह कहा जा सकता है कि इन युवकों के कारण, जो इस संस्था में प्रवेश लेते थे, उन्नीसवीं शताब्दी में शारीरिक शिक्षा में रुचि की पुनः जागृति हुयी।

डेनमार्क में गट्स मथ्स की प्रणाली जो नाखटेगाल ने संशोधित कर चलायी थी तथा जहान-आइसलिन की जर्मन टर्नन की प्रणाली की प्रथा थी। स्वीडन की लिंग प्रणाली ने भी जो फोल्क हाई स्कूल में आरम्भ किया गया था, अग्रसर हुयी। लिंग प्रणाली के लाभ के ऊपर जो मतभेद तथा अलोचना हुयी उससे जिमनास्टिक का महत्व बढ़ गया तथा पुरानी स्कूल जिमनास्टिक ने पुनः शक्ति पायी। इस विषय पर एक कमेटी नियुक्त हुयी जिसने एक प्रणाली व्यवस्थित की जो डेनमार्क के लिये उत्तम समझी गयी तथा व्यायाम का एक मैनुअल छपवाया गया। इस नयी हैन्डबुक आफ जिमनास्टिक में स्विडन की कितनी ही नयी बातें संयुक्त कर ली गयीं किन्तु अधिकांश सामग्री वही रही जो डेनमार्क में प्रचलित थी।

सन् १९०० ई० से मुख्य विषय थे शैक्षणिक जिमनास्टिक का सैनिक प्रभाव से पृथक होना, शिक्षक प्रशिक्षण सुविधाओं में उन्नति, शारीरिक शिक्षा विस्तार के लिये राष्ट्रीय आर्थिक सहायता, स्पोर्ट्स तथा खेल के लाभ को मान्यता देना तथा निल्स बक्ख की देन।

प्राय: एक शताब्दी तक जिमनास्टिक का नेतृत्व सैनिक व्यक्तियों के द्वारा हुआ। यह दशा शारीरिक शिक्षा के सैनिक ध्येय के कारण थी जो आरम्भ से ही चली आयी थी। इस ध्येय में दोष यह था कि यह प्रणाली तथा सिद्धान्त स्कूल की दशा के लिये उपयुक्त नहीं थे तथा व्यायाम आदि स्कूल का एक भाग न बन कर सहायक रूप में रहे।

१९०४ ई० में स्कूल जिमनास्टिक मिलिट्री जिमनास्टिक से स्वतंत्र कर दिया गया। कोपेनहेगेन की यूनिवर्सिटी में जिमनास्टिक एक विषय निर्धारित किया गया तथा इसके लिये प्रयोगशाला भी बनायी गयी। शिक्षकों की संख्या अधिक करने के लिये नार्मल कालेज तथा यूनिवर्सिटी दोनों ही ने पूर्ण तथा संक्षिप्त कोर्स शारीरिक शिक्षक प्रशिक्षण का प्रचलन किया। एक स्वतंत्र सेन्ट्रल इन्सटीट्यूट आफ जिमनास्टिक खोला गया। इस प्रकार शारीरिक शिक्षक प्रशिक्षण की सुविधा सरल तथा अल्पव्ययिक कर दी गयी है। अत: असंख्य शिक्षक यहां से प्रशिक्षित होकर डेनमार्क तथा संसार के भिन्न भिन्न स्थानों में सेवा प्रदान कर रहे हैं।

१९३७ ई० में एक राजकीय कानून पास हुआ जिसके द्वारा सार्वजनिक प्रारम्भिक तथा माध्यमिक स्कूल शिक्षा में, जो ७ से १४ वर्ष की आयु तक अनिवार्य थी शारीरिक शिक्षा को पाठ्यक्रम का एक भाग समझा गया। ६ से १८ वर्ष तक २ से ४ घंटे प्रति सप्ताह शारीरिक शिक्षा के लिये दिया जाता था। दूसरे विषयों की तरह वार्षिक अंक दिये जाते हैं जिसका मूल्य उन्हीं के समान है। जहां जहां जिमनेजियम तथा शिक्षक आदि के रखने तथा चलाने में कठिनाई होती है वहां सरकारी आर्थिक सहायता प्रदान की जाती हैं। १९४६ ई० के एक सरकारी आर्डर के अनुसार सम्पूर्ण ग्रामीण संस्थाओं को यह आज्ञा दी गयी थी कि वे जिमनेजियम बनाकर विभिन्न प्रकार के आपरेटस फिट करें। इसी के साथ उसी वर्ष के मेडिकल सर्विस ऐक्ट के अनुसार स्कूलों में निशुल्क भोजन, दांतों की रक्षा, नर्सिंग तथा अन्य प्रकार की चिकित्सा व निरीक्षण की सुविधायें व्यवस्थित की गयीं।

डेनमार्क में खेल तथा खेल के मैदान की उपयोगिता की ओर जो एक सर्वव्यापी विषय बन चुका था, १८९६ ई० में ध्यान दिया गया। इसके

पूर्व अनेक निजी स्कूलों ने सामूहिक खेलों तथा खुले में स्पोर्ट्स पर बल दिया था तथा कोपेनहेगेन प्लेग्राऊंड एसोसियेशन की स्थापना भी की गई थी। इस संस्था के अन्तर्गत राजकीय कोष से आर्थिक सहायता का प्रबन्ध था जिसके द्वारा स्कूल के बालकों में ग्रुप गेम्स आदि का प्रचार हो सके तथा उस हेतु प्लेग्राउन्ड सामान, सलाहकार सेवा तथा शिक्षकों की तैयारी का प्रबन्ध किया गया। सैकड़ों स्कूलों ने इससे लाभ उठाया। डेनमार्क में शिक्षक प्रशिक्षण कोर्स में पर्याप्त संशोधन किया गया जैसे हाकी, फुटबाल, क्रिकेट, टेनिशबाल आदि जो शारीरिक शिक्षा के लिये उपयुक्त हैं उनमें है, जिससे वहां के सर्वप्रिय खेल के सिद्धान्त तथा अभ्यास की शिक्षा के लिये समय दिया जा सके।

१९०० ई० के आरम्भ में बालकों तथा युवकों के अनेक मनोरंजन दल स्थापित हुये, ब्वाय स्काउट, वाई० एम० सी०ए०, गर्ल्स गाईड, ब्वायज वोलन्टरी लीग अदि। १९३० ई० में होस्टल प्रथा अत्यन्त ही सर्वप्रिय हुई। सम्पूर्ण कार्य-कर्त्ता नागरिकों के लिये प्रायः बारह अवकाश दिवस स्वीकृत हैं अतः अनेक, निजी राजकीय, क्लब, स्कूल, ट्रेड यूनियन, म्युनिसपैल्टी आदि संस्थायें डेनमार्क की जनता के लिये अवकाश रुचि तथा मनोरंजन की सुविधाओं की व्यवस्था करते हैं।

१९२१ ई० में औलेरप के पिउपिल्स स्कूल के जिमनास्टिक के निर्देशक नील्स बक्ख ने लिंग प्रणाली को एक नया मार्ग दिया। बक्ख ने अप्रशिक्षित शरीर में अनेकों दोष पाये जैसे अकड़ी हुई गोल पीठ, सामने झुकी हुई गर्दन, शरीर की अधिक तथा कम विकसित मांस पेशियां, फ्लैटफुट, झुका हुआ कंधा, बढ़ा हुआ पेट आदि। उनका ध्येय एक सुडौल शरीर के अर्जित करने का था इस हेतु शक्ति, लचीलापन, तथा सम्पूर्ण शरीर का समन्वय प्राप्त करना अनिवार्य था अतएव सर्व आसन के दोष युक्त आदत, व्यवसायिक दोष तथा अन्य दोषों का निवारण सर्वप्रथम होना आवश्यक है। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के व्यायाम को उन्होंने 'प्रिमिटिव जिमनास्टिक' कहा। ये साधारण व्यायाम से इस बात में भिन्न है कि इनके करने में कोई दृढ़ स्थिति नहीं होती न कार्य करने में कहीं रुका जाता है। अभ्यास में यह कार्य एक लम्बे स्मरण किये हुये ड्रिल की तरह होता है जिनमें शरीर की बड़ी मांस पेशियां तेजी से तालबद्ध क्रिया करती है। इनकी इस प्रथा के कारण कितने ही पुराने आपरेटस का प्रयोग नहीं होता तथा वाल

बर्स, गद्दे, तथा वालटिंग बक्स से ही सुविधापूर्वक अनेक कार्य सम्पन्न होते हैं। शारीरिक शिक्षा के कार्य समय में मार्चिंग भी किया जाता है।

प्रिमिटिव जिमनास्टिक के उद्देश्य तथा प्रणाली डेनमार्क तक ही सीमित नहीं रहीं वरन यूरोप तथा अमेरिका में भी प्रभावपूर्ण रही। बक्स तथा अन्य डेनमार्क के जिमनास्ट ने अमेरिका में भ्रमण किया एवं वहां अपने प्रभाव छोड़े किन्तु अमेरिका के शिक्षक प्रशिक्षण शिक्षा की प्रणाली का नमूना एवं पाठ्यक्रम डेनमार्क ने पर्याप्त मात्रा में अपना लिया।

—

१५

ग्रेट ब्रिटेन

जिस समय जर्मनी में टर्नन मूवमेन्ट तथा स्कानडिनेविया के देशों में स्कूल जिमनास्टिक का विस्तार हो रहा था उस समय विभिन्न प्रकार के स्पोर्टस तथा संगठित खेल इंगलिश पब्लिक स्कूल तथा यूनिवर्सिटी के व्यवस्थित जीवन का एक अंग बन चुके थे। इन देशों में दो शताब्दी पूर्व इंगलैंड में एकता की भावना थी। एक शक्तिशाली जल सेना के साथ समुद्री आक्रमण से सुरक्षित अंग्रेजों को निरंतर आक्रमण की शंका नहीं थी। अतः अत्याधिक राष्ट्रीय दर्शन का विकास सम्भव हो सका। व्यक्तित्व एवं स्वतंत्रता के प्रेमी तथा न्यूनतम राजकीय हस्तक्षेप के कारण ब्रिटिश जनता ने ऐच्छिक रीति से अधिकार प्रयोग करना सीख लिया था। जिस समय महाद्वीप के लोग जिमनास्टिक की प्रणाली का आविष्कार कर रहे थे तथा शारीरिक शिक्षा के विज्ञान का विकास कर रहे थे उस समय ब्रिटेन की जनता खुले हुये स्थानों पर स्पोर्ट्स में भाग लेती थी। ब्रिटेन के अधिकांश शिल्पकारी तथा व्यापार में व्यस्त जनता को इतना अवकाश अवश्य मिल जाता था कि वे खेल तथा स्पोर्ट्स में भाग ले सकें। वहां की जलवायु सदैव लोगों को बाहर आकर्षित करती थी। स्वतंत्र खेलों में स्वतंत्र लोगों को प्राकृतिक रूप से प्रेम था अतएव वे औपचारिक ड्रिल इत्यादि में केवल सैनिक कार्यों को छोड़ रुचि नहीं रखते थे।

उन्नसवीं शताब्दी एक प्रचण्ड समय था जिसमें ब्रिटिश जनता पर औद्योगिक क्रान्ति तथा नेपोलियन के युद्धका पूर्ण प्रभाव हुआ। कुछ ही दिनों में एक सुधारात्मक आन्दोलन का आरम्भ हुआ। जनता उत्तम शैक्षणिक अवसर तथा साधन की मांग करने लगी। १८७० ई० के पूर्व सम्पूर्ण इंगलिश स्कूल निजी, धार्मिक या दीनहितार्थ हुआ करते थे। धनाढय ग्रामर तथा प्रीप्रेटरी स्कूल

में प्रवेश लेते तथा शुल्क देते थे। कुछ विख्यात पब्लिक स्कूल जैसे,इटोन, हैरो तथा विन्चस्टर में प्रवेश लेते थे। सरकार ने सर्वप्रथम स्कूलों को आर्थिक सहायता दी। सन् १८७० ई० के एज्युकेशन ऐक्ट के अनुसार स्थानीय चुने हुये बोर्ड आफ एज्युकेशन के प्रारम्भिक स्कूल की स्थापना तथा देख रेख का दायित्व दिया गया।

सन् १९४४ के एज्युकेशन ऐक्ट के अनुसार प्रत्येक बालक को माध्यमिक शिक्षा १५ वर्ष की आयु तक प्राप्त करने का अवसर मिला।

मनोरंजन की सुविधायें अनौपचारिक रूप से इंगलैंड की जनता को सदैव उपलब्ध रहीं। बीसवीं शताब्दी में सदैव यह चेष्टा रही कि प्रत्येक को सार्वजनिक शिक्षा दी जाये जिसमें आधुनिक शारीरिक शिक्षा, मनोरंजन के कार्य-क्रम तथा अधिकता से स्वास्थ्य तथा चिकित्सा सेवा का उचित भाग रहे।

सैद्धान्तिक शारीरिक व्यायाम का आरम्भ स्वीडेन तथा जर्मनी से हुआ था। १८२० ई० में ब्रिटिश अफसरों ने स्विटजरलैंड में जिमनास्टिक प्रशिक्षण जो सैनिकों को दिया जाता था, उसे देखा तथा अत्यन्त प्रभावित हुये। कुछ वर्षों के पश्चात आरचीबौल्ड मैकलारेन सैनिक संस्था के द्वारा इसी कार्य के लिये निमंत्रित हुये।

ब्रिटेन में सभ्य या असभ्य सभी किसी न किसी प्रकार के स्पोटस में भाग अवश्य लेते थे। कहा जा सकता है कि इंगलिश स्पोटस उनके इतिहास के सम-कालीन है। हेनरी सप्तम के समय में १५०० ई० में स्पोटस के विषय एक घोषणा है। इंगलैंड के जागीरदारी प्रथा के समय जोउस्ट, टूर्नामेन्ट तथा इसी प्रकार के नाइट सम्बन्धी स्पोटस का वर्णन है। धनुष विद्या का भी प्रचलन रहा है। बारूद के आविष्कार के पश्चात ही इस विद्या में शिथिलता आ गयी।

गोल्फ का आरम्भ कदाचित हालैन्ड में हुआ था। जब यह इंगलैंड तथा स्काटलैंड में लाया गया तो इसका उत्तम स्वागत हुआ। इसमें इतनी प्रगति तथा विकास हुआ कि यह इसी स्थान का अविष्कृत खेल सा प्रतीत हुआ। पंद्रहवीं शता-ब्दी में यह वर्जित किया गया किन्तु यह बहुत दिनों तक ऐसा न रह सका। उन्नी-

सवीं शताब्दी के आरम्भ में यह अधिकाँश जनता के द्वारा खेला जाता था। यह यूरोप तथा अमेरिका में भी सर्व प्रिय हुआ।

हाकी यूनानियों तथा रोम के निवासियों द्वारा खेली जाती थी। उसी से यह यूरोप के देशों का भी स्पोर्ट्स रहा है। हाकी का आधुनिक नाम 'हुक्कड स्टिक' से आया है जिससे वह खेली जाती है। इस की सर्वप्रियता १८७५ ई० से हुयी जब कि 'इंगलिश हाकी एसोशियेशन' की स्थापना हुयी। प्रतियोगिता स्थानीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में हुयी तथा होती है।

तेरहवीं शताब्दी में क्रिकेट की उत्पत्ति हुयी। चौदहवीं शताब्दी में परिवर्तित होकर वर्त्तमान रूप में आया। उच्च वर्गों के विरोध करने पर तथा कानून के द्वारा वर्जित करने पर भी यह क्रमशः लोकप्रिय हो गया। सोलहवीं शताब्दी में उच्च वर्गों ने पुनः इसे अपनाया। वर्त्तमान काल में इसे राष्ट्रीय खेल का पद प्राप्त हुआ।

बोलिंग की उत्पत्ति निदरलैंड तथा जर्मनी में हुई। यह उच्च व्यापारियों के द्वारा सम्पूर्ण संसार में विस्तृत किया गया। इंगलिश तथा स्काटलैंड के लोगों ने इसमें संशोधन किया किन्तु यह कभी सर्वप्रिय नहीं हुआ। 'पिचींग कोईटर्स निम्न वर्ग के लिये एक मनोरंजन का साधन था।

टेनिस की उत्पत्ति कदाचित फ्रान्स में हुयी। यह फ्रान्स तथा इंगलैन्ड के नृप तथा नोबल्स के द्वारा १३०० ई० में भी खेली जाती थी। कृषकों के लिये यह वर्जित था किन्तु राजनैतिक स्वतंत्रता के प्राप्त करने पर सावारण लोग भी इसे खेलने लगे। आज टेनिस अत्यन्त ही सर्वप्रिय खेल है।

फुटबाल की तरह का खेल ग्रीस तथा रोम में खेला जाता था। यह रोमन सैनिकों द्वारा यूरोप तथा ब्रिटेन में लाया गया। बारहवीं शताब्दी में युवक इसे खेलते थे। कानून ने इसे भी वर्जित किया। अट्ठारहवीं तथा उन्नीसवीं शताब्दी में कुछ इंगलैंड के बड़े स्कूलों ने इस खेल को बालकों के लिये उपयुक्त समझा तथा खेलने के लिये स्थानीय नियम बनाये। यह हाथ से ले जाने की अपेक्षा अधिकतर पैर से मार कर खेला जाता था। आरम्भ में यह रगबी की तरह खेला जाता था।

हैमर फेंकने की प्रतियोगिता 'सेलटिक' उत्पत्ति की है। इसे अधिकारियों के द्वारा मान्यता प्राप्त थी।

पोलवाल्ट नाले आदि के पार करने की प्रणाली के कारण प्रकाश में आया। इसी उद्देश्य से प्रत्येक घर में एक पोल रखा जाता था। कुछ ही दिनों में इसने एक स्पोर्ट का रूप ले लिया एवं उत्सव तथा मेले आदि अवसरों पर प्रयोग किया जाने लगा। यह एक उत्तम व्यायाम समझा गया।

स्किट्लस, कुश्ती, बाक्सिंग, फेन्सिग, पिचिंग दि बार, प्रिजनर्स बेस, ज़िलगिंग, स्केटिंग, रोईंग तथा अन्य क्रियाओं में राष्ट्रीय स्तर पर जनता भाग लेती थी तथा शारीरिक क्षमता के लिये इन्हें प्रयोग करती थी। पुरुष, स्त्री, बालक आदि प्रत्येक वर्ग को इनमें रुचि थी और यह बढ़ती ही गयी। ब्रिटिश जनता जहाँ भी गयी अपने खेल तथा स्पोर्ट्स अपने साथ लेती गयी। अतः ब्रिटेन की इस स्थिति ने उसे इसका केन्द्र बना दिया जहाँ से वह सारे संसार को प्रभावित करने में समर्थ हुआ है।

इंगलैंड की जनता की एक मुख्य विशेषता यह थी कि इन विभिन्न खेल की क्रियाओं को आविष्कार करने की अपेक्षा अधिकता से नवीनता तथा सर्वप्रियता प्रदान करने में प्रयत्नशील थी। स्वतंत्रता तथा व्यक्तित्व के सम्मान के कारण स्पोंटस तथा खेल, जिमनास्टिक तथा अन्य सैनिक सम्बन्धी क्रिया की अपेक्षा इन्हें अधिक प्रिय थे। स्कूलों, क्लब तथा सैनिक संस्थाओं में जिमनास्टिक का भी प्रचार था किन्तु खेल तथा शारीरिक शिक्षा में इंगलैंड की विशेष देन है।

ब्रिटेन, महाद्वीप देशों के शारीरिक शिक्षा के सिद्धान्तों तथा प्राप्त गुणों के प्रभाव से वंचित न रह सका। सर्वप्रथम, सेना में एक ऐसी शारीरिक प्रशिक्षण प्रणाली की आवश्यकता अनुभव की गयी, जिसमें औपचारिक ड्रिल के अर्जित लाभ तथा प्रतियोगिता स्पोंटस के अर्जित लाभ दोनों एक में संयुक्त किए जा सकें। १८२२ ई० में सरकार ने एक स्विस सैनिक अफसर तथा जिमनास्टिक निर्देशक की सेवा प्राप्त की, जिनका नाम फोकिओन क्लिआस था। उन्हें सम्पूर्ण सैनिक तथा जल सैनिक स्कूल के पूर्ण शारीरिक प्रशिक्षण का भार सौंपा गया तथा

चार्टर हाउस पब्लिक स्कूल में पढ़ाने के लिये भी उन्हें नियुक्त किया गया। उनके सिद्धान्त तथा प्रणाली प्रायः गट्स मथ्स की ही थी।

सेना तथा जल सेना के लिये जिमनास्टिक चलता ही रहा। १८५० ई० में दो मुख्य लीडर एहरेनहोफ तथा कार्ल जिओरजी आये। ये दोनो रायल सेन्ट्रल इन्सटीटियूट के प्रशिक्षित थे तथा दोनों ने लन्दन में निजी संस्था खोली। इन लीडरों ने अपनी प्रणाली की अत्यन्त प्रशंसा की। यहां तक कि यह तय करना कठिन हो गया कि कौन सी प्रणाली वास्तव में उत्तम थी।

आरची बोल्ड मकलारेन (१८२०-१८८४) स्काटलैंड के थे। उन्होंने महाद्वीप में शारीरिक शिक्षा के विषय अध्ययन में पर्याप्त समय व्यतीत किया। १८५४ में इंग्लैंड लौट कर उन्होंने आक्सफोर्ड में एक निजी जिमनेज़ियम खोला। कुछ समय के पश्चात सरकार ने मिलिट्री जिमनास्टिक प्रणाली को पुनः संगठित एवं पुनः जागृत करने का विचार किया। मेकलारेन इस कर्त्तव्य के लिये बुलाये गये। उनके विचार 'ए मिलिट्री सिस्टम आफ जिमनास्टिक एक्सरसाइज' में छापे गये जो पाठ्य पुस्तक हो गई। उनके जिमनेजियम में एक अफसरों का ग्रुप प्रशिक्षण के लिये भेजा गया जिन्हें आलडरशोट के सैनिक केन्द्र में जाकर एक दूसरे अफसरों के लिये नार्मल स्कूल स्थापित कर प्रशिक्षित करना था। सम्पूर्ण योजना कार्यान्वित की गई। मेकलारेन की प्रणाली सैनिक तथा जल सैनिक स्कूलों में खेल तथा स्पोर्टस की न्यून्ता की पूर्ति के लिए प्रयोग होने लगी जिससे सैनिक तथा नाविकों की शारीरिक क्षमता में वृद्धि हो सके। मकलारेन का यह विश्वास था कि ब्रिटिश जनता के शारीरिक स्तर को उत्तम बनाने के लिए शैक्षिणिक जिमनास्टिक प्रत्यक्ष तथा अत्यन्त महत्वपूर्ण साधन है। उनकी पुस्तक 'ए सिस्टम आफ फिज़िकल एज्युकेशन' जो १८६७ में प्रकाशित तथा पुनः १८८५ एवं १८९५ में छपी उसमें यही सिद्धान्त थे।

जीवन के विस्तार तथा विकास के साथ शारीरिक शिक्षा आवश्यक है। मानसिक तथा शारीरिक एक साथ एक दूसरे की सहायता करते हुए प्रगति करें। केवल प्रशिक्षित व्यक्ति निरीक्षण के लिए नियुक्त हों। चातुर्य तथा शक्ति नहीं किन्तु स्वास्थ्य का मुख्य स्थान होना चाहिए। मन तथा शरीर एक सम्पूर्ण

के दो भाग हैं। स्कूल के खेल, स्पोर्टस तथा क्रीड़ा मनोरंजन देते हैं किन्तु सैद्धान्तिक व्यायाम शैक्षणिक है। व्यक्तिगत क्षमता के द्वारा व्यायाम को विधिवत करना चाहिए। क्रमानुसार व्यायाम बालकों तथा सैनिकों के लिए ही नहीं किन्तु दुकान तथा फैक्ट्री के कर्मचारियों के लिए भी लाभकारी है। व्यायाम प्रगतिशील एवं बुद्धिमानी से संगठित होना चाहिए। स्कूल के खेल में जिमनास्टिक के द्वारा बाधा नहीं डालनी चाहिए किन्तु इसे शैक्षणिक कार्यक्रम का एक वास्तविक भाग होना चाहिए। जिमनास्टिक का अर्थ है 'एक क्रमशः प्रगतिशील शारीरिक व्यायाम की प्रणाली, जो इस प्रकार विचार में लायी जाय, इस प्रकार प्रबन्धित हो तथा इस प्रकार संचालित हो, कि वह प्राकृतिक तथा समान रीति से उत्तेजित तथा उत्पन्न; उन शारीरिक अदृश्य शक्तियों तथा योग्यताओं को उसी प्रकार विकसित करे, जिस प्रकार शक्तिशाली, मानसिक संस्कृति तथा अभ्यास से मानसिक शक्तियों का विकास किया जाता है।

मेकलारेन ने स्वीडिश प्रणाली में दोष बताये। उनके विचार से स्वीडिश प्रणाली चिकित्सा तथा सुधारात्मक ध्येय के कारण संकीर्ण तथा सीमित थी। उन्होंने जर्मन प्रणाली का उसके संगीत तथा ताल के कारण तथा सामूहिक व्यायाम में सूक्ष्मता तथा पूर्णता लाने की चेष्टा के कारण विरोध किया। मैकलारेन का अपनी निजी कोई आविष्कार नहीं था। उन्होंने दूसरी प्रणालियों से उन सिद्धान्तों तथा अभ्यासों को अपना लिया जिनसे उन्हे लाभ था। मैकलारेन 'आनथोपोमेट्री' के अध्ययन के अग्रगामी थे। उन्होंने अपने शिष्यों के नाप तथा वज़न का रेकार्ड रखा जिससे वे व्यायाम के परिणाम का अध्ययन कर सकें।

मेकलारेन की प्रणाली सफल नहीं हुई। मेकलारेन जिमनास्टिक के सम्पूर्ण शिक्षक सेना में से थे तथा स्कूल व्यायाम बहुत कुछ मिलिट्री ड्रिल की तरह दिखाई देते थे। मनोरंजन तथा स्वास्थ्य का ध्येय सामने रखते हुए अनेक चेष्टाएं शारीरिक शिक्षा में सुधार के लिए की गई। डेनिस तथा स्वीडिश शिक्षक इंगलैंड में स्वीडिश प्रणाली को लाये। यह महिलाओं तथा लड़कियों में अत्यन्त प्रिय रहा। १९०३ में स्काटलैंड के एज्युकेशन डिपार्ट मेन्ट ने एक नये कोर्स की सिफारिश की जो स्वीडिश प्रणाली पर आधारित

था। एक वर्ष के पश्चात इंगलिश बोर्ड आफ एज्युकेशन ने 'ऐ सिल्लेबस आफ फिजिकल एक्सरसाईज' छपवायी। यह भी स्वीडिश प्रणाली पर आधारित थी। यह सिल्लेबस सन १९०९ तथा सन् १९१९ में संशोधित हुआ। इस समय के अन्तर्गत अनेक राजकीय कानून स्कूल जिमनास्टिक के प्रसार के लिए पास किये गये तथा शिक्षकों के लिये प्रशिक्षण स्कूल खोले गये। औपचारिक व्यायाम पर बल दिया जाता रहा। इसके विशेष कारण थे : व्यवसायिक तथा अव्यवसायिक व्यक्तियों के सीमित विचार, युद्ध के समय शारीरिक प्रवीणता तथा उचित स्थान, साधन तथा सुविधाओं में त्रुटि।

इंगलैंड के शैक्षणिक नेतृत्व में एक जागृति प्रतीत होती है जिससे स्कूल की शारीरिक शिक्षा तथा स्कूल के बाहर के लोगों के अवकाश के अवसर में एक घनिष्ठता देखी गई। मनोरंजन पर अधिक बल दिया गया। ऐथेलेटिक्स, खेल, तैरना, कैनोइंग, हाइकिंग तथा नृत्य पर स्कूलों में बल दिया जाता था। ग्रामों में स्कूल, जो द्वितीय महायुद्ध संकटकालीन अवस्था में स्थापित हुए, स्थानीय अधिकारियों के द्वारा बालकों के कैम्प आदि के लिए जहां खुले स्थान में क्रिया तथा साथ ही साथ अध्ययन कार्य भी होता है, प्रयोग किये जाते हैं।

स्वास्थ्य तथा सफाई के आन्दोलन को प्रोत्साहन दिया गया। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में स्कूल तथा छात्रों की चिकित्सा तथा स्वास्थ्य निरीक्षण अनिवार्य समझा जाता था। यह स्वीकृत कर लिया गया है कि व्यायाम, भोजन तथा सामान्य स्वच्छता उत्तम स्वास्थ्य के अंग हैं। १६ वर्ष तक की आयु के बच्चों के लिए शारीरिक शिक्षा तथा स्कूल जीवन में कम से कम तीन चिकित्सा निरीक्षण का नियोजन स्थित है, इसके साथ दूध तथा गर्म भोजन की व्यवस्था उनके लिये है जिन्हें आवश्यकता है।

सन् १९२७ में स्थापित सेन्ट्रल काउन्सिल फार हेल्थ एज्युकेशन, १९४४ ई० का एज्युकेशन ऐक्ट तथा नेशनल हेल्थ सर्विस एक्ट १९४८ में मिल कर बालकों के स्वास्थ्य का उत्तरदायित्व लेते हैं। एज्युकेशन डिपार्टमेंट शारीरिक शिक्षा तथा सामान्य स्वास्थ्य कार्यक्रम में, जिसमें मनोरंजन की क्रियायें सम्मिलित हैं, समन्वय स्थापित करती हैं। दि सेन्ट्रल काउन्सिल आफ

फिजिकल रीक्रियेशन सेवा, सलाह तथा उत्तेजित करने का कार्य करती है ।

इंगलैंड ने अपनी शारीरिक शिक्षा की उन्नति करने के लिये शिक्षक प्रशिक्षण प्रोग्राम की ओर ध्यान दिया । सामान्य शिक्षा प्रशिक्षण विद्यालओं में शारीरिक शिक्षा तथा स्वास्थ्य शिक्षा का कोर्स अनिवार्य है । विशेषज्ञों के लिये विशेष कोर्स उपलब्ध हैं । महिलाओं के लिये तीन वर्ष की अवधि का शारीरिक प्रशिक्षण कोर्स है । इंगलैंड की यूनिवर्सिटी शारीरिक शिक्षा शिक्षक प्रशिक्षण की ओर विशेष ध्यान नहीं देती ।

इंगलैंड के स्कूलों में अप्रशिक्षित शारीरिक शिक्षक की नियुक्ति की भी प्रथा है । ये अप्रशिक्षित साधारणतः वे लोग होते हैं जिन्होंने खेल आदि में भाग लिया है तथा अपने विशेष खेल में निपुण हैं ।

ब्रिटेन में उत्तम चरित्र, सामाजिक गुण तथा सामान्य शारीरिक क्षमता अर्जित करने पर बल दिया जाता है । टीम गेम की प्रथा ब्रिटेन में सदा से रही है । राजकीय प्राइमरी स्कूलों में एक पाठ प्रतिदिन प्रातःकाल तथा तीन बजे मध्याह्न में प्रति सप्ताह दिये जाते हैं । माध्यमिक स्कूलों में चार घंटे प्रति सप्ताह शारीरिक शिक्षा को तथा एक से डेढ़ घंटा संगठित खेलों को भी दिये जाते हैं ।

१६

अमेरिका में शारीरिक शिक्षा

लेटिन अमेरिका

लेटिन अमेरिका के देश निरन्तर बाहर की शक्तियों से प्रभावित रहे हैं। अन्तर्देशीय अशान्ति तथा उत्पात लेटिन अमेरिका के देशों का प्रमुख इतिहास रहा है। शताब्दियों से पुर्तगाल तथा स्पेन के प्रभुत्व के पश्चात साइमन बोलिवार तथा मार्टिन आदि ने वेनज्युएला, अरजनटाइना, चिली तथा ब्राजील को स्वतंत्र किया। दूसरे देशों के उपनिवेश होते हुये उन देशों की संस्कृति, धर्म तथा विचारों से प्रभावित होना अनिवार्य था। प्रभुत्व के हट जाने के पश्चात भी यह सम्बन्ध बना रहा। यूरोप के नियन्त्रण के न होने से उनमें आपस में उपद्रव होना आरम्भ हो गया किन्तु क्रमशः जब मेल तथा सुधार हुआ तो उन्होंने प्रगति की ओर ध्यान दिया और संसार के देशों में अपना स्थान स्थापित करने में प्रयत्न शील हुये। आर्थिक दशा उनकी अच्छी थी क्योंकि धातु, कृषि, जानवरों, रबर, चीनी तथा काफी का आधिक्य है। शिक्षा में अधिक उन्नति नहीं है। सरकार ने अधिकतर डिक्टेटरशिप अपनाई है। राजनैतिक स्वतंत्रता तथा जीवन का ऊंचा स्तर प्राप्त करने के लिये चेष्टा तथा समय की आवश्यकता होगी।

यूनाइटेड स्टेट्स के राष्ट्रीयता प्राप्त करते ही वह लेटिन अमेरिका में विदेशी हस्तक्षेप के प्रति सतर्क हुआ। १८२३ ई० के मोनरो सिद्धान्त के अनुकूल यूरोप के देशों को चेतावनी मिली कि वे इन देशों के आन्तरिक विषयों में किसी प्रकार दखल न दें। १८९९ ई० में समस्त अमेरिका की सभा आपस के लाभ तथा सद्भावना की रक्षा के लिये बुलायी गयी। १९४८ ई० में आरगनाईजेशन आफ अमेरिकन स्टेट्स आपस के सम्बन्धों को पुष्ट करने के लिये स्थापित

हुए । अनेक लेटिन अमेरिका के देश जैसे क्यूबा तथा अन्य प्रजातांत्रिक राज्य यूनाइटेड स्टेट्स से, उनके स्वार्थ पूर्ण व्यवहार तथा बेवसी से लाभ उठाने के कारण तिरस्कार की दृष्टि से देखे जाते हैं। इन देशों में कम्युनिस्ट मतावलम्बियों के आने तथा प्रभाव से विचार में मतभेद है अतएव बीच की खाई के भरने में कठिनाई तथा समय दोनों विरोध में हैं। यूनाइटेड स्टेट्स उत्तम सम्बन्ध के लिये सदैव प्रयत्नशील है।

स्पेन ने, लेटिन अमेरिकन देशों का धन जैसे सोना, चांदी तथा भिन्न भिन्न प्रकार के धातु आदि के लूटने के बाद वहां के निवासियों को अपने कृषि के कार्य में श्रम करने वालों की तरह प्रयोग किया। उनसे जब काम पूरा न हो सका तो वे अफ्रीका से नीग्रो जाति के लोगों को सेवा के लिये लाये। इन पर नियन्त्रण रखने के लिये सैनिक भी आये जो अपने परिवार को साधारणतः साथ नहीं लाते थे। ये सैनिक वहां की महिलाओं से मिलते थे, फल स्वरूप एक नयी जाति 'मेस्टीज़ोस' का जन्म हुआ। आज की उन संख्या में स्पेनियर्डस, डच, फ्रेन्च, तथा श्वेत इन्डियन तथा नीग्रो के रक्त मिश्रण के लोग हैं।

स्पेनियर्डस के धार्मिक पुरोहित भी उनके साथ आये तथा आज ९० प्रतिशत जनता मसीही धर्म के कैथलिक विभाग के उपासक हैं। यहां की अधिकतर जनता फार्म पर कृषि का कार्य करती है। यहां की विशेष उपज केला, कोको, रबर, नारियल, काफी, गन्ना आदि हैं। जानवर अधिकता से पाले जाते हैं तथा उनसे ऊन अर्जित किया जाता है। तेल के सोते भी हैं। सोना, चांदी, कोयला, लोहा, पन्ना आदि की भी खानें हैं। इन कोरे पदार्थों के निर्यात पर ही इनकी आर्थिक स्थिति निर्भर है। निवास स्थानों की न्यूनता है। आधुनिक सुविधाओं की विशेष कर ग्रामों में कमी है।

यूनाइटेड स्टेट्स तथा यूनाइटेड नेशन्स इनके स्वास्थ्य की समस्याओं की देख रेख करते हैं। कुछ राज्यों में राष्ट्रीय स्वास्थ्य मँत्रालय है। विशेष रूप से वहां स्वास्थ्य समस्या है, बालकों की मृत्य चिकित्सालय तथा दवाखानों के द्वारा चिकित्सा सेवा का न होना, छूत की बीमारियों का अवरोध, पौष्टिक भोजन की कमी, मांस, दूध, अंडे तथा हरी सब्जी यथाथि मात्रा में प्राप्त नहीं होती है। शिक्षा की समस्यायें वही हैं जो अल्प आय जनता की दूसरे देशों में है। यद्यपि

बालकों की शिक्षा अनिवार्य है तथापि आधे से अधिक बालक स्कूल नहीं जाते। कहीं कहीं अशिक्षितों की दर ७० प्रतिशत हैं। सार्वजनिक स्कूलों तथा उच्च शिक्षा का उत्तरदायित्व शिक्षा मंत्रालय का है।

लेटिन अमेरिकन देशों के आरम्भ के शारीरिक शिक्षा प्रोग्राम में यूरोप के देशों का प्रभाव उनके विभिन्न जिमनास्टिक की प्रणालियों में दिखायी देता है। बहुत से देशों में लिंग सोसाइटी है और स्टाकहोम के लिंग संस्था से सम्बन्धित हैं। साकर तथा क्रिकेट ब्रिटिश लोगों ने वहां प्रचलित किया था। वाई० एम० सी० ए० तथा अवैतनिक स्पोर्ट्स संस्था के प्रयास से खेल तथा स्पोर्टस स्कूल के कार्यक्रमों में सम्मिलित किये गये हैं। सर्वप्रिय खेल हैं बेसबाल, बासकेटबाल, वालीबाल, ट्रैक तथा फील्ड एथलेटिक्स। स्थानीय लोकनृत्य तथा नृत्य में भी रुचि है। इन स्पोर्टस में दक्षिणी अमेरिका के ऐथलीट अत्यन्त दक्ष हैं।

१९३२ के ओलम्पिक खेलों में उन्होंने भाग लिया था तथा उसके पश्चात भी भाग लेते रहे। उनके अन्तर्राष्ट्रीय खेलों तथा प्रतियोगिता में वोलीबेरियन गेम्स, सेन्ट्रल अमेरिकन गेम्स तथा पैन अमेरिकन ओलम्पिक गेम्स आदि का होना इनकी रुचि का प्रमाण है। यूनाइटेड स्टेट्स से भ्रमण करने वाली टीम प्रत्येक वर्ष वहां आती है तथा ये भी वहां जाते हैं। शिक्षकों तथा विद्यार्थियों की कान्फ्रेन्स भी दोनों देशों के बीच में होती है। १९५१ ई० में पैन अमेरिका इन्सटीट्यूट आफ फिजिकल एज्युकेशन ने यह सिफारिश की कि ऊँची श्रेणी की संस्था, शारीरिक शिक्षा का संगठित प्रोग्राम अपने यहाँ चलायें।

प्रांतीय संगठन, स्कूल में शारीरिक शिक्षा का निरीक्षण, तथा ऐच्छिक स्पोर्ट्स संस्थाओं के नियन्त्रण की प्रणाली, लैटिन अमेरिका देशों में यूरोप के आधार पर निर्धारित है।

शिक्षक प्रशिक्षण का कार्य शिक्षा मंत्रालय के हाथ में है। व्यवसायिक स्कूल इनस्टीटियूट आफ फिजिकल एज्युकेशन कहे जाते हैं। इन संस्थाओं में शिक्षक तथा निरीक्षक प्रशिक्षित किये जाते हैं जो ऊँची श्रेणी की संस्थाओं तथा सार्वजनिक स्कूलों में जाते हैं।

ग्रेजुएट शिक्षा पर इन देशों में विशेष बल नहीं दिया गया है। कान्टीनेन्टल

कनवेनशन आफ साउथ अमेरिकन एसोसियेशन जो प्रथम महायुद्ध के पूर्व स्थापित किया था वह साउथ अमेरिकन कान्फ्रेन्स आफ फिजिकल एज्युकेशन टीचर्स एसोसियेशन की नीव थी। १९१९ ई० में इस संस्था की दूसरी सभा हुयी जहां अमेच्योर ऐथेलेटिक यूनियन की स्थापना का प्रस्ताव हुआ जिसका कर्त्तव्य, स्पोर्टस प्रतियोगिता को नियन्त्रण, सार्वजनिक स्पोर्टस के नियम, तकनीकी पुस्तकें लिखने तथा प्रत्येक देश के लोकनृत्य में राष्ट्रीय रुचि उत्पन्न करना था। प्रथम पैन अमेरिकन कांग्रेस आफ फिजिकल एज्युकेशन १९४३ ई० में रीओ-डी-जैनरो में हुई। मैक्सिको सिटी में १९४६ ई० में पुन: कांग्रेस हुयी। इन सभाओं में शारीरिक शिक्षा की सामान्य उन्नति वैज्ञानिक दिगदर्शन, सामाजिक न्याय तथा स्वतंत्रता के प्राण के आधार समझने आदि पर बल दिया गया।

तृतीय कान्फ्रेन्स मोन्टीवीडीओ में १९५० ई० में हुई। मुख्य विषय था प्रारम्भिक स्कूल तथा शारीरिक शिक्षा एवं स्वास्वथ्य में सम्बन्ध। इसके पश्चात कान्फ्रेन्स १९५३ ई० में बोगोटा में हुई।

दक्षिणी अमेरिका के देशों में राष्ट्रीय स्पोर्टस फेडरेशन की प्रथा थी जिनसे कई लोकप्रिय संस्थायें सम्बन्धित थी। ये संस्थायें भाग लेने तथा प्रतियोगिता के नियोजन पर नियन्त्रण रखती थी।

हर देश में किसी विशेष स्पोर्ट्स तथा खेल की ओर रुचि भिन्न भिन्न है किन्तु साकर में प्रत्येक देश प्राय: एक सी रुचि रखते हैं। यह खेल खेलने वालों तथा दर्शकों दोनों के लिये अति रुचिकर है। दक्षिणा अमेरिका के कुछ स्वदेशी खेल भी हैं। एक खेल 'एल प्लाटो' या 'डक' है। खेल घोड़े पर बैठ कर होता था। एक गेंद जो 'डक' होता था जिसमें बत्तख होती थी।। दो टीम के बीच डक को किसी बाड़े या खलिहान में पहुंचा देने में विजय मिलती थी। यह अवसर भयानक रूप धारण कर लेता था। कुछ दिनों के लिये इस खेल पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था किन्तु इसमें कुछ सुधार करके फिर खेलने की आज्ञा दी गयी।

दूसरा खेल 'पेलओटा' है। पेलओटा का अर्थ है गेन्द। यह संसार के अत्यन्त शीघ्र खेले जाने वाले खेलों में से एक है। यह कुछ वर्त्तमान 'वन बाल

हैंडबाल' की तरह खेला जाता है। कुछ कुछ स्थानीय विभिन्नता भी इसमें पायी जाती है।

सम्पूर्ण दक्षिणी अमेरिका की सर्व प्रथम एथेलेटिक प्रतियोगिता बुइनोस एयरिस में १९१० ई० में हुयी थी। इसमें अर्जनटाइना, ब्राज़ील, चिली तथा डरूउगुऐ ने भाग लिया था। १९४२ ई० में इसका नाम 'यूनाइटेड स्टेट्ड आफ अमेरिका स्पोर्टस फेडरेशन' पड़ा जिसकी दो बड़ी उप कमेटियां बनी। एक अन्तर्राष्ट्रीय ओलम्पिक खेल के लिये दूसरा 'पैन अमेरिकन गेम्स' के लिये।

प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात दक्षिणी अमेरिका के स्कूलों तथा म्युनिसिपैल्टी में मनोरंजन के कार्य क्रम होने लगे। मनोरंजन के स्थान, खेल के मैदान तथा सार्वजनिक स्नान स्थान स्थापित किये गये। ब्राजील में शारीरिक व्यायाम के लिये स्थान, शारीरिक शिक्षा, गेम्स तथा स्पोर्टस, बालकों के लिये अवकाश में दिन का कैम्प, सामाजिक कार्य, पुस्तकालय सेवा तथा उत्सव मनाना आदि का कार्यक्रम प्रचलित था। स्काउटिंग तथा सार्वजनिक कैम्प की व्यवस्था है।

सेन्ट्रल अमेरिका

सेन्ट्रल अमेरिका उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका का पुल है जो उन्हें आपस में संयुक्त करता या पृथक करता है। इसमें कोस्टारीका, होनड्युरास, गुआटेमाला, नीकारागुआ, सालवाडोर, पनामा तथा कुछ मेक्सिकों के प्रदेश के प्रजातांत्रिक राज्य हैं। प्राचीन काल में यहां पश्चिमी गोलार्द्ध की एक श्रेष्ठ 'इन्डियन' सभ्यता का पता चलता है। मायान जाति के लोग जो यहाँ के निवासी थे, वे गणित, ज्योतिष, शिल्पकारी तथा कृषि में दक्ष थे। आज प्रत्येक के अपने बन्दरगाह हैं तथा व्यापार की व्यवस्था है। यह एक धनी कृषि क्षेत्र हैं जहां मध्यम ताप क्षेत्र तथा क्रान्ति सीमा क्षेत्र की उपज होती है।

आधे से अधिक लोग प्रशान्त महासागर के तट पर उसकी ऊँचाई तथा सूखी जलवायु के कारण बसते हैं। यहां की जाति स्पेनियर्डस तथा दूसरे यूरोप की जातियों के साथ नीग्रो तथा देशी इन्डियन का मिश्रण तथा जाम्बा

(नीग्रो तथा इन्डियन का मिश्रण) हैं। कैथलिक धर्म तथा उसी का अन्य जातियों के धार्मिक रीतियों से मिश्रित उनका धर्म है तथा इन धार्मिक उत्सवों में नृत्य तथा रंगपूर्ण लीलाओं आदि की संसार के किसी भी स्थान से तुलना नहीं की जा सकती है।

शिक्षा मंत्रालय के अन्तर्गत वहां की शिक्षा व्यवस्था तथा उसके हेतु अर्थ वितरण की विधि है। प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य है अतः प्रत्येक बालक को जब तक वह कार्य तथा व्यवसाय के योग्य नहीं हो जाता है तब तक उसे शिक्षा ग्रहण करनी पड़ती है। प्रशिक्षित शिक्षकों तथा शिक्षा साधनों की कमी है।

मलेरिया, हुकवर्म आदि बीमारियों से सदैव संघर्ष करते हैं। स्वास्थ्य प्रसार के लिये लोगों के रहने तथा खाने पीने की आदतों में परिवर्तन लाना आवश्यक है।

शारीरिक शिक्षा की ओर उचित ध्यान दिया जा रहा है। निरीक्षित खेल तथा शारीरिक शिक्षा क्रियायें सीमित हैं तथा इनके साधन तथा सामग्री स्तर से नीची हैं। प्राय दो घंटे प्रति सप्ताह शारीरिक शिक्षा के लिये दिये जाते हैं जिमनास्टिक, गेम्स, स्पोर्टस तथा ताल वृद्ध क्रियायें शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में हैं। स्कूलों की पारस्परिक प्रतियोगिताओं में एथलेटिक्स, फुटबाल, बास्केटबाल बेसबाल, टेनिस तथा तैरना होता है। पहले शारीरिक शिक्षक यूरोप तथा सेन्ट्रल अमेरिका से आते थे किन्तु वर्त्तमान समय में यूनिवर्सिटी तथा नार्मल स्कूलों में शिक्षक प्रशिक्षित होते हैं। प्रशिक्षण दो वर्ष का होता है।

यहाँ की प्रणाली तथा पाठ्यक्रम दक्षिणी अमेरिका की प्रणाली के आधार पर है। यूनाइटेड स्टेटस का आधुनिक प्रभाव भी अब लक्षित किया जा सकता है।

१९१०—१९२० के बीच अनेक क्लब तथा स्पोर्टस एसोसियेशनों की स्थापना हुयी थी। १९२३ ई० में कांग्रेस आफ सेन्ट्रल अमेरिकन गेम्स की स्थापना हुयी। १९२४ ई० में पेरिस के अन्तर्राष्ट्रीय कमेटी में मेक्सिको, कोस्टारिका, पनामा, एल सालवाडोर तथा गौतेगाला सदस्य के रूप में उपस्थित

थे। १९३३ ई० में लोसएनजेलस में पैन अमेरिकन एथलेटिक गेम्स के होने के पश्चात सेन्ट्रल अमेरिका के देश प्रतियोगिता में भाग लेते रहे हैं। ओलम्पिक प्रतियोगिता में भी ये ऐथेलीट भेजते रहे हैं।

दि वेस्ट इन्डीज़

क्यूबा, सानटोडेमिंगो, पुएरटो रीको तथा जमाइका के बड़े द्वीप इसके अन्तर्गत आते हैं। इनमें क्यूबा सर्व प्रमुख है।

क्यूबा

क्यूबा, कोलम्बस की पहली यात्रा में अविष्कृत किया गया था। यह स्पेन के आधीन था। स्पेन तथा अमेरिका के पश्चात यह अमेरिका के संरक्षण में आया। १९०२ ई० में यह प्रजातंत्र राज्य हो गया। यहां कम्युनिज़म का अत्याधिक प्रभाव है। इस समय यह एक डिक्टटेर के शासन में है। यहां प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य है।

सानटो डेमिंगो

सानटो डोमिंगो स्पेन के आधीन था।१६९७ ई० में यहां फ्रान्स का भी अधिकार हुआ। १८४४ ई० में डोमिनिकन रिप्बलिक की स्थापना हुयी। जिसमें स्पेन की पुरानी कोलविजा आयी। हयाटी पृथक ही फ्रान्स के आधीन रहा।

स्वशासन की कठिनाइयों के कारण यह यूनाइटेड स्टेटस से मिलना चाहता था किन्तु यह सम्भव न हो सका। यूनाइटेड स्टेटस से सहायता मिलती रही है। हैयाटी तथा डोमिनिकन रिपब्लिक में सीमान्त संघर्ष होता रहता है।

जन संख्या श्वेत तथा नीग्रो रक्त मिश्रित है। फ्रान्स ने शिक्षा प्रसार की चेष्टा

की किन्तु स्पेन ने इस ओर ध्यान नहीं दिया। वे लोग जो तट पर मछली मारने वाले ग्रामों में रहते हैं, पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक स्वस्थ हैं। हैयाटी में प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था है तथा शिक्षा अनिवार्य तथा निशुल्क है। रोमन कैथलिकधर्म राज्य धर्म है। हैयाटी की यूनिवर्सिटी की स्थापना १९२१ ई० में हुयी तथा महिला अध्यापिकाओं के लिये १९२४ ई० में नार्मल स्कूल स्थापित हुए। डोमिनिकन रिपब्लिक में प्रारम्भिक शिक्षा समाज के द्वारा तथा राजकीय आर्थिक सहायता से दी जाती है। माध्यमिक तथा यूनिवर्सिटी शिक्षा राज्य के द्वारा दी जाती है।

पुएरटो रीको

पुएरटो रीको की सभ्यता यूरोप के समान है। १९१७ ई० में यह यूनाइटेड स्टेट्स का एक सूबा बना गया।

शिक्षा विभाग के प्रधान, शिक्षा कमिश्नर हैं जो गवर्नर के द्वारा नियुक्त है। जनता ७० प्रतिशत शिक्षित है। यहां की यूनिवर्सिटी १९०३ ई० में स्थापित हुयी। दूसरी उच्च श्रेणी की संस्थाएँ भी हैं।

यूरोप की जिमनास्टिक प्रणाली बेसबाल, ट्रैक तथा फील्ड एथलेटिक्स तथा अन्य स्पोर्टस वेस्ट इन्डीज द्वीप में प्रचलित है, विशेषतय: क्यूबा में। बेसबाल, फुटबाल, बासकेटबाल, तैरना, एथलेटिक्स, फेन्सिग तया गोल्फ में प्रतियोगितायें होती हैं। क्यूबा में एक राष्ट्रीय स्पोर्टस फेडरेशन है। यहां ओलम्पिक कमेटी भी है। १९१० ई० के पश्चात क्यूबा लेटिन अमेरिकन देशों के स्पोर्टस फेडरेशन सेन्ट्रल अमेरिकन, पैन अमेरिकन तथा ओलम्पिक खेलों का सदस्य सदैव रहा है।

पुएरटो रिको में शिक्षा अमेरिका की शिक्षा प्रणाली पर आधारित है। शारीरिक शिक्षा की भी यही स्थिति है। यहां एसोसियेशन आफ हेल्थ, फिजिकल एज्युकेशन रिक्रियेशन है जिसकी प्रथम सभा १९५४ ई० में हुयी थी।

वर्तमान समय में क्रिकेट में अधिक रुचि दिखायी गयी है, और वेस्ट इन्डीज के क्रिकेट खिलाड़ी संसार में अपना स्थान रखते हैं।

मेक्सिको

मेक्सिको विभिन्न रंगों तथा सुन्दर नैसर्गिक दृश्यों का एक सुहावना स्थान है। अधिकांश मेक्सिको पहाड़ी या सूखी मरूभूमि है। जब स्पेन के लोग यहां आये थे उस समय यहां की आजटेक संस्कृति अच्छी प्रगति प्राप्त कर चुकी थी। १८९० में मेक्सिको के आन्दोलन का आरम्भ हुआ था जो धीरे धीरे चलता ही रहा। इस वर्ग आन्दोलन के फलस्वरूप सम्पूर्ण सुविधायें तथा सामग्री के स्रोतों के राष्ट्रीयकरण की घोषणा कर दी गयी। जिनके पास भूमि नहीं थी, वे भूमिधर हुये। वर्ग का प्रभुत्व बढ़ा। प्रजातांत्रिक मेक्सिकन आधारित शिक्षा प्रणाली आरम्भ हुई। सिंचाई, कृषि, यातायात, जल शक्ति, स्वास्थ्य, स्वच्छता तकनीकी चातुर्य की कमी की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है मेक्सिको समाज में मध्यम वर्ग नहीं है। केवल दो वर्ग हैं। अनपढ़ तथा पिछड़े 'इंडियन' तथा बुद्धिमान एवं व्यापारी जो अपने को आधुनिक कहते हैं।

कैथलिक चर्च ने यहां सदियों से सेवा की है। १९१७ ई० से शिक्षा केन्द्रीय सरकार का विषय बन गयी। १९२१ ई० में शिक्षा मंत्रालय स्थापित हुआ। ६ से १५ वर्ष तक के आयु के बालकों के लिये शिक्षा निशुल्क तथा अनिवार्य हुई।

शारीरिक शिक्षा प्रत्येक शिक्षा स्तर पर मान्य है। गेम्स, स्पोर्टस, स्वास्थ्य तथा सैनिक शिक्षा के लिये पर्याप्त समय दिया जाता है। दो घंटा प्रति सप्ताह शारीरिक शिक्षा अनिवार्य है। स्थानीय तथा राष्ट्रीय प्रतियोगिता आयोजित होती है। औद्योगिक मनोरंजन की भी व्यवस्था है।

मेक्सिको सिटी नार्मल स्कूल में शारीरिक शिक्षा एक स्वतंत्र और पूर्ण विषय है। प्रशिक्षण तीन वर्ष का है।

१९२३ ई० में 'कल्चरल मिशन' स्थापित हुआ था। यह भ्रमण करने वाले स्कूल हैं जो पिछड़े तथा सभ्यता से दूर समाज में कुछ समय व्यतीत करते हैं। इसमें प्राय: नार्मल स्कूल टीचर, एक समाज सुधारक नर्स, मिडवाईफ, कृषि तथा औद्योगिक शिक्षक तथा एक मनोरंजन का शिक्षक भी होता है।

स्कूल, स्वास्थ्य शिक्षा मंत्रालय के अन्तर्गत आता है किन्तु यह सेवा मेक्सिको सिटी तक ही सीमित है । दूसरे स्थानों में 'पब्लिक हेल्थ डाक्टर्स' स्कूलों की सेवा करते हैं

१९३३ ई० में मेक्सिकन सरकार ने एक राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा सभा, शारीरिक शिक्षा, स्पोर्टस तथा मनोरंजन के उन्नति हेतु बनायी।

मेक्सिकन स्पोर्ट्स फेडरेशन जिसकी स्थापना १९३२ ई० में हुयी थी ऐच्छिक स्पोर्टस का समन्वय करती है। मेक्सिको की ओलम्पिक कमेटी में स्पोर्टस फेडरेशन के सभी निर्देशक सदस्य हैं।

मेक्सिको सिटी ने संसार के सबसे बड़े मनोरंजन केन्द्र का निर्माण किया। प्रेसीडेन्ट रूईज कोरटीनेस ने १९५९ ई० में ५०० एकड़ जमीन पर एक स्पोर्ट टेम्पुल बनवाया जिसे उसने स्पोर्ट सिटी का नाम दिया। इस केन्द्र में ५३ साकर फील्ड, १६ अमेरिकन फुटबाल फील्ड, १६ बास्केटबाल कोर्ट, ३ ऐथेलेटिक, स्टेडियम, ८ ओलम्पिक स्विमिंग पूल, साइकलिंग स्टेडियम मोटर रेस आडीटो-रियम, बुलफाइटिन्ग रिंग, थियेटर्स, चिलड्रन्स प्लेग्राउन्ड, पार्कस, फाउनटेन्स, लैन्ड स्केप गार्डन्स, ड्रेसिंग रूम्स, शावरस, लाउनज्स हैं।

प्रारम्भिक स्कूलों में बालकों को कुछ मिनटों के लिये जिमनास्टिक कराया जाता है तद्पश्चात खुले स्थान में खेल तथा स्पोर्ट्स होता है। माध्यामिक संस्थाओं में संशोधित स्विडिश प्रणाली की जिमनास्टिक तथा अन्य गेम्स तथा स्पोर्टस की शिक्षा दी जाती है जिसमें साधारणता: बालीवाल, बासकेटबाल, सौफ्टबाल, फुटबाल, एथलेटिक्स तथा तैरना है।

प्राचीन 'मायास' तथा 'आजटेक्स' खेल के प्रेमी थे। आज भी अनेक क्षेत्रीय स्पोर्टस हैं जो 'इन्डियन' जाति के लोगों का जीवन है और उन्हें सुरक्षित रखने की यथेष्ट चेष्टा की जा रही है। यह देश, लोक नृत्य तथा संगीत में अत्यन्त धनी है। यह शक्ति, लचीलेपन तथा सौन्दर्य का प्रतीक है। मेक्सिको एक स्पोर्टस अभिज्ञ राष्ट्र बन चुका है। जिमनास्टिक तथा एथ-लेटिक्स अत्यन्त लोकप्रिय हैं।

कनाडा

डोमीनियन आफ कनाडा ब्रिटिश कामनवैल्थ आफ नेशन्स का एक सदस्य

है।द्वितीय महायुद्ध के पश्चात यहां विदेश से अधिक संख्या में लोग आकर बस गए हैं। 'प्लेटिनम' तथा 'एसबेसटोस' के उत्पादन में कनाडा संसार में सर्व प्रथम है तथा सोना, अल्यूमुनियम एवं 'यूरेनियम' में द्वितीय स्थान रखता है।

कनाडा में शिक्षा की कोई राष्ट्रीय संस्था नहीं है। प्रदेश का निर्देशन तथा आर्थिक सहायता भी फेडरल सरकार से होती है किन्तु इसके द्वारा प्रादेशिक अधिकार या शक्ति में कोई अन्तर नहीं होता है। कनाडा में अल्प संख्यक समाज पृथक ही रहता है और दूसरों से संयुक्ति की चेष्टा नही करता। क्यूबेक में ऐसे ही फ्रेन्च बोलने वालों का एक पृथक जत्था है।

१९४३ ई० में राष्ट्रीय शारीरिक क्षमता ऐक्ट पास किया गया, इसके कारण मनोरंजन में अत्यन्त प्रगति हुयी। इसका संचालन डिपार्टमेन्ट आफ नेशनल हेल्थ एण्ड वेलफेयर के द्वारा होता है। स्पोर्ट्स, एथलेटिक्स, मनोरंजन, कम्युनिटी सेन्टरस शारीरिक शिक्षा, रिसर्च, अवलोकन तथा जांच, फिल्म निर्माण करने में समन्वय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय सभाओं में प्रतिनिधित्व, पढ़ने की सामग्री मुद्रित करना तथा नेतृत्व के प्रशिक्षण में सहायता देना आदि की सूचना तथा सलाह देना इस डिपार्टमेंट का उत्तरदायित्व था। यह एक सलाहकार तथा उत्साह देने वाली संस्था थी। शारीरिक क्षमता अभियान की वास्तविक कार्यवाही प्रदेश तथा स्थानीय समाज का कर्त्तव्य था। इस योजना के चलाने के लिये फेडरल सहायता प्राप्त थी। अतएव इसके कारण इस कार्य में वृद्धि हुयी।

प्रत्येक प्रदेश का अपना शिक्षा विभाग है तथा अपनी प्रणाली है। साधारणत: शारीरिक शिक्षा क्लास प्रत्येक स्कूल तथा प्रशिक्षण विद्यालयों में होता है। प्रत्येक कक्षा के लिये प्रादेशिक पाठ्यक्रम तैय्यार किया गया है जिसका प्रतिपालन अच्छी रीति से होता है। शिक्षक प्रशिक्षण के लिये प्रादेशिक नार्मल स्कूल हैं। १९१२ ई० में एक छोटा 'समर कोर्स' शारीरिक शिक्षा में माकगिल यूनिवर्सिटी में दिया गया था। १९३३ ई० में तीन वर्ष का कोर्स वहीं आरम्भ किया गया। १९४५ ई० में यह चार वर्ष का कर दिया गया जिसके बाद बी० एस० सी० की डिग्री प्राप्त होती है। वर्त्तमान समय में दूसरी यूनिवर्सिटी में भी ऐसी व्यवस्था हो गयी है।

१९२२ ई० में टोरान्टो डिस्ट्रिक फिजिकल एज्युकेशन क्लब की स्थापना हुयी। १९२३ ई० में क्युबेक फिजिकल एज्युकेशन एसोशियेशन की स्थापना हुयी इनके सहयोग से १९३३ ई० में कनैडियन फिजिकल एज्युकेशन एसोसियेशन स्थापित हुआ। यह यूनाइटेड स्टेट्स के अमेरिकन एसोसियेशन फार हेल्थ, फिजिकल एज्युकेशन एण्ड रिक्रियेशन से सम्बन्धित है।

अनेक ऐच्छिक संस्थायें हैं जो शारीरिक शिक्षा की प्रगति में सहयोग देती हैं। ये संस्थायें बढ़ती ही जा रही हैं।

शारीरिक शिक्षा पाठ्यक्रम यूनाइटेड स्टेट्स के सदृश्य है। पहले कालेसथेनिकस तथा ड्रिल पर अधिक बल दिया जाता था किन्तु अब अनेक स्पोर्टस, तालबद्ध तथा मनोरंजन की क्रियायें सम्मिलित कर ली गयीं हैं।

कनाडा, विभिन्न प्रकार के स्पोर्ट्स के लिये एक उत्तम प्राकृतिक स्थान है। बर्फ के कारण शीतकाल के स्पोर्टस भी लोकप्रिय है। कुछ लेखक आइस हाकी के आविष्कार का श्रेय कनाडा को ही देते हैं। क्रिकेट यहां लोकप्रिय नहीं हो सका किन्तु बासकेट बाल तथा साफ्टबाल में अधिक रुचि है। रगबी, साकर तथा वहां का फुटबाल अच्छे स्तर पर खेला जाता है।

'लाकरोसे' कनाडा का राष्ट्रीय खेल है जो प्राचीन इन्डियन खेल 'बागाटावे' से निकाला गया है। यह खेल किसी भोज या धार्मिक उत्सव के पश्चात खेला जाता था। एक टीम में ७५ से २०० व्यक्ति खेल सकते थे।

अरजेन्टाइना

अरजेन्टाइना दक्षिणी अमेरिका का दूसरा सबसे बड़ा देश है। क्रान्ति सीमा से लेकर दक्षिणी ध्रुव क्षेत्र तक फैला हुआ यह देश हर प्रकार की जलवायु, तथा विभिन्न प्रकार की भूमि से परिपूर्ण है। अरजेन्टाइना संसार के अनाज संजय स्थान में से ही केवल एक नहीं वरन् शिल्पकारी भी अधिकता से है। ये लोग यूरोप के वंशज है जिनमें ब्रिटिश, फ्रेन्च, जर्मन, इटालियन, स्विस तथा पूर्वी यूरोप आदि आते हैं। ये यहां आकर बस गये और देश की उन्नति में सहयोग दिया। कोयला, लोहा तथा जलशक्ति के अभाव से औद्योगिक उन्नति अधिक नहीं है। यद्यपि

अरजेन्टाइना में 'फारमिंग' की प्रथा बहुत है ७० प्रतिशत लोग शहरों में बसते हैं इन्डियन जाति की जनसंख्या प्राय: शून्य के बराबर है फ्रान्स की संस्कृति के लोग अधिक प्रशंसक हैं।

'फेडरल' शासन प्रणाली की प्रथा १८५३ ई० से ही है। शिक्षा सम्बन्धी विषय राष्ट्रीय तथा प्रादेशिक सरकार के सहयोग से संचालित है। साधारणत: प्रारम्भिक शिक्षा का भार प्रादेशिक सरकार पर है तथा माध्यमिक शिक्षा का भार फेडरल सरकार के ऊपर है। ६ से १४ वर्ष तक शिक्षा अनिवार्य तथा निशुल्क है। माध्यमिक स्कूल जिसे नेशनल कालेज कहते हैं उसमें पाँच वर्ष का कोर्स है। नार्मल स्कूल का चार वर्ष का प्रारम्भिक शिक्षक प्रशिक्षण कोर्स है या सात वर्ष का कोर्स जो नेशनल कालेज में प्राप्त किया जा सकता है तथा इसके पश्चात यूनिवर्सिटी शिक्षा है जिनकी संख्या ६ है। नेशनल इन्सटीटियूट आफ फिजकल एज्युकेशन भी राजधानी ब्युनोस ऐरिस में स्थिति है जहां प्रशिक्षण तीन वर्ष का है।

फेडरल सरकार के द्वारा संचालित स्कूलों का पाठ्यक्रम तथा पाठ्य पुस्तकें समान हैं। शिक्षकों की नियुक्ति भी सरकार के द्वारा ही होती है। पूर्ण समय के माध्यमिक तथा यूनिवर्सिटी के शिक्षक बहुत कम हैं। लेटिन अमेरिकन देशों की यह एक विशेष प्रथा है।

शारीरिक शिक्षा प्रत्येक स्तर पर शिक्षा मन्त्रालय के अन्तर्गत आती है तथा उसी के द्वारा निरीक्षित है तथा यह प्रारम्भिक कक्षाओं में विषय शिक्षक के हाथ में शारीरिक शिक्षा का भार है किन्तु ऊपर की कक्षाओं के लिये शारीरिक शिक्षा विशेषज्ञ नियुक्त किये जाते हैं। शारीरिक शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता है। प्रारम्भिक तथा माध्यमिक स्कूल में दो घंटे प्रति सप्ताह शारीरिक शिक्षा के लिये दिया जाता है।

स्वीडिश प्रणाली को छोड़ कर निलस् बक्ख के व्यायामों की ओर लोगों की रुचि बढ़ रही है। तालबद्ध क्रियाओं तथा लोक नृत्य का भी उचित स्थान है। स्पोर्टस तथा एथलेटिक्स अत्यन्त लोकप्रिय हैं। अमेरिका में खेले जाने वाले खेल साधारणता अरजेनटाइना में खेले जाते हैं।

अरजेन्टाइना में शारीरिक शिक्षा का तात्पर्य मनुष्य को ठीक रखने का

एक साधन है। अवकाश के समय का सदुपयोग तथा सामाजिक मूल्यों को अर्जित करने का एक उत्तम साधन समझा जाता है। घुड़सवारी तथा पोलो में लोगों की रुचि है। 'एल पाटो' एक प्रकार का खेल है जो घोड़े पर बैठ कर खेला जाता है इसमें एक गेन्द होती है जिसमें ६ चमड़े की मुट्ठी होती है, चार खिलाड़ियों की टीम होती है जो कपड़े आदि से अपना अच्छा बचाव कर लेते हैं। उत्तम घुड़सवारी तथा पास के द्वारा गेन्द प्रतिद्वन्दी के बासकेट रिंग के समान गोल में डाली जाती है। बचाने वाले गेन्द लेने आते हैं यदि वे आक्रमणकर्त्ता से आगे बढ़ जाते हैं तो गेन्द उन्हें मिल जाती है।

जंगली शुतुर्मुर्ग का घोड़े पर सवार होकर आखेट करना भी एक असाधारण खेल है।

क्लब तथा अन्य ऐच्छिक संस्थाओं के द्वारा भी शारीरिक शिक्षा का प्रसार किया जाता है।

फुटबाल तथा बाक्सिग में व्यवसायिकता आ चुकी है।

बोलीभिया

बोलीभिया दक्षिण अमेरिका का एक देश है। इसका कुछ भाग क्रान्ति सीमा का है तथा कुछ भाग पहाड़ी है और यही पहाड़ी स्थान उसका धन हैं क्योंकि इनमें से खनिज पर्दाथ जैसे स्पात, चांदी, ताम्बा, ज़िन्क, शीशा तथा सोना आदि अर्जित किये जाते हैं।

जनसंख्या आधे से अधिक शुद्ध इन्डियन है। पश्चिमी भाग में स्पेन की संस्कृति का प्रभाव है तथा कैथलिक धर्म का प्रचार है। ३५ प्रतिशत जनसंख्या 'मेसटीज़ोस' की है जिन्हें 'कोलोस' कहते हैं, शेष युरोपियन हैं। कोलोस तथा श्वेत लोग राजनैतिक विषय तथा व्यापार का नियन्त्रण करते हैं और स्थानीय इनडियन्स श्रम का कार्य करते हैं।

बोलीभिया की शिक्षा व्यवस्था शिक्षा मंत्रालय, 'फाइन आर्ट्स' तथा 'इनडियन अफेयर' के अन्तर्गत है। मंत्री प्रजातंत्र के प्रेसीडेन्ट के द्वारा नियुक्त

होता है। मंत्री अपने कार्यकर्त्ताओं का चुनाव करते हैं जिनमें दो मुख्य हैं, उप संचालक तथा डाइरेक्टर जनरल। ६ विभागों के द्वारा जिनमें शारीरिक शिक्षा का विभाग एक है डाइरेक्टर जनरल शिक्षा सम्बन्धी विषयों का निरीक्षण करते हैं। विशेष संस्था जैसे नेशनल इन्सटीट्युट आफ फिजिकल एज्यूकेशन का भी नियन्त्रण इन्हीं के हाथ है।

निशुल्क सार्वजनिक प्रारम्भिक तथा माध्यमिक शिक्षा की व्यवस्था है। ७ से १४ वर्ष की आयु तक शिक्षा अनिवार्य है। प्रारम्भिक शिक्षा ६ वर्ष की है तथा माध्यमिक शिक्षा भी ६ वर्ष की है जो दो भागों में विभाजित है। निजी माध्यमिक शिक्षा संस्था सार्वजनिक संस्थाओं की संख्या के तुल्य है।

शारीरिक शिक्षा प्रारम्भिक तथा माध्यमिक दोनों वर्गों में अनिवार्य है। माध्यमिक संस्थाओं में तीन घंटे प्रति सप्ताह, पहले दो वर्ष, तद्पश्चात दो घंटे प्रति सप्ताह होती है। बालकों को सैनिक प्रशिक्षण के पूर्व की शिक्षा प्राप्त करना पड़ती है तथा १८ वर्ष की आयु में बोलीभिया की सेना में एक या दो वर्ष सेवा करनी पड़ती है। यूनिवर्सिटी के स्तर पर शारीरिक शिक्षा अनिवार्य नहीं है। स्कूल पाठ्यक्रम के शारीरिक शिक्षा में औपचारिक जिमनास्टिक, अनेक स्पोर्टस जैसे वालीवाल, बासकेटबाल, रगबी, तालबद्ध क्रियायें तथा लोक नृत्य हैं। बोलीभिया की शिक्षा कार्य औपचारिक रीति से संचालित होता है एवं स्वास्थ्य शिक्षा कक्षाओं में भी यही रीति अपनायी जाती है।

अन्तर्राष्ट्रीय समन्वय का एक रुचिकर प्रयोग बोलभिया में किया जा रहा है। 'दि इन्टर अमेरिकन एज्युकेशनल फाउनडेशन' तथा बोलीभिया की शिक्षा मंत्रालय आपस में एक उन्नतिशील समन्वयात्मक शिक्षा कार्यक्रम में सहयोग दे रहे हैं। इनकी योजनाओं में नये पाठ्यक्रम तथा शिक्षा की नयी प्रणाली प्रयोगात्मक स्थिति में हैं। नार्मल स्कूल प्रशिक्षण में संशोधन, कार्य करते हुये प्रशिक्षण, साधनों के अर्जित करने में सहयोग तथा इमारतों को पूरा करना भी योजनाओं में सम्मिलित हैं।

समन्वयात्मक शिक्षा कार्य क्रम के फलस्वरूप १९४४ ई० से अनेक परिवर्तन प्रारम्भिक स्कूलों में हो गये। यह विशेष कर ग्रामीण क्षेत्रों में सत्य है। वर्त्तमान समय में ग्रामीण क्षेत्रों में प्रातः काल होने वाले स्कूलों में पौष्टिक

नाश्ता बनाना तथा परोसना भी सिखाया जाता है। शरीर की तथा बर्तनों की स्वच्छता पर बल दिया जाता है। स्वास्थ्य, स्वच्छता, शारीरिक शिक्षा तथा स्पोर्टस के लिये एक घंटा दिया जाता है। मध्याह्न कृषि शिक्षा तथा पशुपालन में व्यतीत होता है।

बोलीभेरियन गेम्स में वे देश भाग लेते हैं जिन्हें साइमन बोलीभार ने स्वतंत्र कराया था। बोलीभिया, कोलम्बिया, इकवेडोर, पनामा, पेरू तथा बेनेज्युऐला के एथलीट, बोगोटा में १९३३ ई० में, लीमा में १९४७ तथा काराकास में १९५१ ई० में क्षेत्रीय ओलम्पिक प्रतियोगिता के लिये एकत्रित हुये थे।

ब्राज़ील

ब्राज़ील दक्षिणी अमेरिका का सबसे बड़ा स्थल है। इसके विस्तृत बड़े क्षेत्र के कारण तथा जलवायु में बड़ी भिन्नता है। जन संख्या भी इन्डियन नीग्रो तथा यूरोप निवासियों का मिश्रण है। राजभाषा पुर्तगीज हैं एवं दक्षिणी क्षेत्र में जर्मन तथा इटैलियन तथा इन्डियन भाषा, उत्तर में प्रचलित है।

विशाल अमेजन नदी ब्राजील के मध्य के एक बड़े भाग में स्थित है। इसके घने जंगलों का अभी तक अन्वेषण नहीं हुआ हैं। काफी, रूई, कोको, तम्बाकू, अनाज, गन्ना, फल, लकड़ी तथा रबड़, इसके मुख्य कृषि पर्दाथ हैं। कोयला, लोहा, मैंगनीज, क्रोम, सोना, हीरा, निकिल तथा पेट्रोल खनिज पदार्थ हैं। इस आधिक्य के होते हुये भी यहां कमी है। ब्राज़ील की संस्कृति की जड़ यूरोप की परम्परा में है। उसके ध्येय, सामाजिक तथा राजनैतिक स्तर विशेषता पुर्तगाल से प्राप्त हैं। भाषा भी पुर्तगाली है। रेड इन्डियन्स, नीग्रो श्वेत रक्त का मिश्रण दूसरे स्थानों से यहां कुछ अधिक रहा है। यूरोप की वे जाति जो स्थानीय लोगों से मिश्रित नहीं हो सकी उनकी अपनी संस्कृति के भिन्न भिन्न द्वीप ब्राज़ील में पायी जाती है। इनमें इटालियन, पोल्स जर्मन तथा जापान के लोग मुख्य हैं।

ब्राज़ील की औद्योगिक उन्नति के लिये कठिन प्रयास हो रहा है क्योंकि प्राकृतिक भंडार की अधिकता है।

प्रारम्भिक शिक्षा निशुल्क तथा अनिवार्य है। प्रादेशिक सरकार की आर्थिक सहायता २० प्रतिशत है तथा राष्ट्रीय सरकार की सहायता १० प्रतिशत है। फेडरल सरकार माध्यमिक तथा ऊंची शिक्षा का स्वयं निरीक्षण करती है। प्रादेशिक सरकार नार्मल तथा प्रारम्भिक स्कूलों का निरीक्षण करती है। नार्मल स्कूल तीन प्रकार के हैं। एलिमेन्ट्री स्कूल के पश्चात चार वर्ष, जूनियर हाई स्कूल के बाद दो या तीन वर्ष तथा पांच वर्ष का कोर्स जिसमें सांस्कृतिक तथा व्यवसायिक शिक्षा पर बल दिया जाता है।

स्वास्थ्य तथा शिक्षा मंत्रालय की स्थापना १९३० ई० में हुई तथा १९३७ ई० में संशोधित हुयी। इसमें कई एक कार्यालय हैं जिनमें एक के हाथ में शारीरिक शिक्षा कार्य का उत्तरदायित्व है। युद्ध मन्त्रालय, सैनिक शारीरिक शिक्षा (Army Physical Education) स्कूल की देख रेख करती है। सैनिक शारीरिक शिक्षा स्कूल के द्वारा शारीरिक शिक्षा आन्दोलन में अत्यन्त सहायक हुयी। इसकी उन्नति के लिये दो और संस्थायें स्थापित की गयी। एक साओपौलौ में तथा दूसरी नेशनल स्कूल आफ फिजिकल एज्युकेशन एण्ड स्पोर्टस रीओडीजानेरीओं में जो ब्राजील यूनिवर्सिटी से सम्बन्धित है। यहां एक वर्ष का कोर्स चिकित्सकों के लिये दिया जाता है जिसकी डिग्री डाक्टर आफ फिजिकल एज्युकेशन एण्ड स्पोर्ट्स है।

देश के प्रत्येक प्राइमरी, सेकेन्ड्री, व्यवसायिक तथा नार्मल स्कूल में शारीरिक शिक्षा अनिवार्य है। दो घंटे प्रति सप्ताह शारीरिक शिक्षा के लिये दिये जाते हैं। कई एक स्थानों में शारीरिक शिक्षा, शारीरिक शिक्षा व्यवसाय प्रशिक्षित विशेषज्ञों के द्वारा प्रतिदिन दी जाती है। समय समय पर प्रत्येक बालक की स्वास्थ्य परीक्षा की सरकारी आज्ञा है।

प्राइमरी स्कूलों में शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम जिमनास्टिक तथा गेम्स का है। तालबद्ध जिमनास्टिक तथा लोकप्रिय नृत्य भी होता है। ऊंची कक्षाओं में जिमनास्टिक तथा खुले में खेल, व्यक्तिगत तथा टीम स्पोर्ट्स तथा तैरना प्रचलित हैं। बासकेट बाल, साकर, टेनिस की भी प्रथा है। कैम्पिग पर भी ध्यान दिया जाता है। १६ वर्ष के युवकों के लिये जो स्वस्थ हैं, सैनिक शिक्षा की सुविधा है।

ब्राजील के स्पोर्ट्स फेडरेशन से एच्छिक संस्थायें सम्बन्धित हैं। किसी

विषय के कानफेडरेशन बनाने के लिये सरकारी स्वीकृति की आवश्यकता है जिनका निरीक्षण सरकार के द्वारा सम्भव है। यह निरीक्षण नेशनल कांउसिल आफ स्पोर्टस के द्वारा होता है जो शिक्षा मंत्रालय का एक विभाग है।

उत्तम स्वास्थ्य तथा भोजन की आदत के प्रति शैक्षणिक आन्दोलन अग्रसर है। यलो फीवर, टाइफाइड, मलेरिया, तपेदिक तथा गुप्त रोगों के ऊपर पर्याप्त नियन्त्रण है।

ब्राजील के युवक स्पोर्टस प्रिय हैं। सामाजिक स्वतंत्रता के पश्चात महिलाओं ने भी इस ओर ध्यान दिया है। तैरना यहां का मुख्य स्पोर्टस है। शीत कालीन मनोरंजन नहीं के बराबर हैं। जनता को साकर में अत्यन्त रुचि है। रीओ डी जानरीओ के बड़े स्टेडियम में प्रायः २०४,००० व्यक्तियों के बैठने की व्यवस्था है। ब्राजील के धनाढ्य पोलो, घुड़दौड़ तथा 'पेलोटा' खेल में रुचि रखते हैं। आखेट भी अवकाश के समय का स्पोर्टस है।

ब्राजील का रंग तथा ताल के प्रति प्रेम उनके कारनिवल उत्सव के समय प्रदर्शित होता है।

चिली

चिली एक लम्बा सकरा देश है जिस की दक्षिणी पहाड़ी समुद्र में घुसी हुयी है, उत्तर में गर्म मरूभूमि है। चिली का बीच का भाग एक लम्बी घाटी है जहां अधिकतर लोग बसते हैं। इस केन्द्रीय लम्बी घाटी को "वैली आफ पैराडाइज" स्वर्ग की घाटी भी नाम देते हैं। यहां राष्ट्र का औद्योगिक केन्द्र है तथा संसार की एक सब से श्रेष्ठ उपजाऊ भूमि है। जलवायु उत्तम है। यहां के लोग युरोप के वंशज है। यहां के भूमिधरों ने चिली पर शासन किया किन्तु अब उनकी शक्ति क्षीण हो रही है।

१८३३ ई० के संविधान के अनुसार सार्वजनिक शिक्षा, स्टेट का उत्तरदायित्व माना गया। शासक वर्ग के वर्ग विचार के कारण उनके बालक सार्वजनिक स्कूलों में प्रवेश नहीं लेते थे अतएव एक निर्बल तथा अयोग्य शिक्षा प्रणाली की

उत्पत्ति हुयी। प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात अनेक सुधार हुये तथा वर्तमान समय में ७ से १५ वर्ष के बालकों के लिये शिक्षा निशुल्क तथा अनिवार्य है और जनता इस से लाभ उठाती है।

शारीरिक शिक्षा प्राइमरी तथा सेकेन्ड्री स्कूलों में अनिवार्य है। दो या तीन घंटे प्रति सप्ताह इस विषय के लिये दिये जाते है। १८८९ ई० में पेडागोजिकल कान्ग्रेस ने यह सिफारिश की कि शारीरिक शिक्षक प्रशिक्षण के लिये एक विशेष स्कूल स्थापित करना आवश्यक है अतएव जोआक्युईन काबेजास गारसीया अध्ययन के लिये स्वीडेन भेजे गये। १९०६ ई० में वे "इन्सटीट्यूट आफ फिजकल एण्ड मैनुयल आर्ट्स" के निर्देशक नियुक्त हुये। कुछ दिनों के पश्चात यह एक यूनिवर्सिटी स्कूल बन गया तथा अब 'इन्सीटीटयुट आफ फिजीकल एण्ड टेकनिकल एज्युकेशन' के नाम से प्रसिद्ध है।

शारीरिक शिक्षा का कार्य शारीरिक शिक्षा के मुख्य निरीक्षक के द्वारा निरीक्षित होता है जो शिक्षा मंत्री के नीचे हैं। पिछले दिनों शारीरिक शिक्षा मे पर्याप्त उन्नति हुयी है।

एलिमेन्ट्री तथा सेकेन्ड्री संस्थाओं में स्पोर्ट्स प्रतियोगिता का प्रोग्राम है। साकर, फुटबाल, बासकेटबाल, तथा एथलेटिक्स की प्रथा है। औपचारिक जिमनास्टिक कार्यक्रम का सर्व प्रथम स्थान है अल्प संशोधित लिंग प्रणाली का प्रचार है तथा यह प्रत्येक कक्षा को दी जाती है। लड़कियां भी इन में से कई एक खेल खेलती हैं। इन के लिये लोक नृत्य भी है। स्कूल वर्ष के आरम्भ तथा अन्त में शारीरिक परीक्षा की जाती है। स्कूल में जो शारीरिक क्षमता तथा स्वास्थ्य पर बल दिया जाता है उसका प्रभाव स्कूल के बाद के जीवन में भी प्रतीत होता है। स्पोर्टस तथा गेम्स अत्यन्त ही लोक प्रिय हैं तथा अनगिनत क्लब आदि स्थापित हो गये हैं। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी क्लब का सदस्य अवश्य होता है जो नेशनल स्पोर्ट्स काउनसिल से सम्बन्धित होते हैं। यह काउनसिल १९३८ ई० में स्थापित हुयी थी। यह विभिन्न स्पोर्ट्स तथा गेम्स का नियन्त्रण करती है तथा उनकी प्रगति का प्रयास करती है। व्यक्तिगत तथा राष्ट्रीय शारीरिक क्षमता पर बल दिया जा रहा है जिस के लिये राजकीय तथा निजी संस्थाये अत्यन्त प्रयत्न शील हैं।

कोलम्बिया

कोलम्बिया दक्षिणी अमेरिका का पांचवां सब से बड़ा देश है। जलवायू, क्रान्ति सीमा के गर्म जलवायु के प्रदेश से लेकर आनडीज के ठंडे जलवायु के प्रदेश के बीच में है।

यह देश कृषि प्रधान है। शिल्पकारी उन्नति कर रही है। खनिज पदार्थ अधिकता से हैं। पन्ना की खान संसार में विख्यात है।

जन संख्या श्वेत, नीग्रो तथा इण्डियन का मिश्रण है। सामाजिक तथा सांस्कृतिक परम्परा स्पेन की हैं। १९३० ई० तक कैथलिक चर्च शिक्षा प्रचार कर रहा था। केन्द्रीय सरकार में शिक्षा मंत्रालय है जिसके विभिन्न बिभागों के द्वारा शिक्षा व्यवस्थित की जाती है।

एलीमेन्ट्री शिक्षा स्थानीय अधिकारियों तथा विभागीय अधिकारियों के द्वारा नियन्त्रित है। माध्यमिक शिक्षा की निजी व्यवस्था है। केन्द्रीय सरकार नियम आदि का निर्माण करती है तथा थोड़े सार्वजनिक स्कूलों को चलाती है। यूनिवर्सिटी राष्ट्रीय तथा निजी हैं। शिक्षक प्रशिक्षण के लिये नार्मल स्कूल हैं। औद्योगिक तथा कृषि स्कूल भी हैं।

७ से १४ वर्ष की आयु तक शिक्षा निशुल्क तथा अनिवार्य है।

शारीरिक शिक्षा निर्देशक, शिक्षा मंत्रालय का एक विभागीय अध्यक्ष होता है। एलीमेंन्ट्री, सेकेन्ड्री तथा नार्मल स्कूल में शारीरिक शिक्षा की व्यवस्था है। तीन घंटे प्रति सप्ताह इसके लिये दिए जाते हैं।

शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में जिमनास्टिक, स्पोर्ट्स, साकर, बेस बाल, बासकेट बाल, लोक नृत्य, युवक समारोह, एथलेटिक तथा सार्वजनिक कैम्प आदि होता है।

मान्टेसरी शिक्षा प्रणाली का प्रभाव है।

स्वास्थ्य, प्रजातांत्रिक जीवन के प्रति भक्ति, सांस्कृतिक परम्परा की रक्षा तथा शारीरिक क्षमता, शारीरिक शिक्षा का परम ध्येय है ।

एक्वाडोर

एक्वाडोर भूमध्य रेखा पर स्थित है तथा अंग्रेजी शब्द इक्वेटर से एक्वाडोर नाम प्राप्त है । यह तीन भागों में विभाजित है समुद्री तट का क्षेत्र, बीच की ऊंची चौरस भूमि,तथा पूर्वी क्रान्ति सीमा। समुद्री तट का क्षेत्र अत्यन्त उपजाऊ है । अधिकतर लोग बीच की ऊंची चौरस भूमि पर बसते है । कृषि इन का मुख्य व्यवसाय है । इण्डियन्स की संख्या अधिक है । १५ प्रतिशत नीग्रो जिनमें कुछ श्वेत लोग भी हैं रहते हैं । श्वेत लोग भूमिधर हैं और वहां की राजनीति का नियन्त्रण करते हैं । १९३८ ई० के पश्चात यहां की शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया गया था । इस समय एक नियम के द्वारा शिक्षा स्टेट का विषय हो गया । यहां की शिक्षा प्रणाली दूसरे लेटिन अमेरिकन देशों की तरह है । शिक्षा मंत्रालय शिक्षा सम्बन्धी विषयों का संचालन तथा निरीक्षण करता है । ६ तकनीकी विभाग में एक भाग शारीरिक शिक्षा का है । ६ वर्ष का ऐलीमेन्ट्री कोर्स शहर में है । ४ वर्ष का ऐलीमेन्ट्री कोर्स ग्रामीण क्षेत्रों में है जिसमें एक या दो वर्ष की और शिक्षा उनके लिये है जो लेना चाहते हैं ।

चौथी कक्षा तक लड़के लड़कियां साथ पढ़ते हैं इसके पश्चात यह वर्जित है । ७ से १४ वर्ष की आयु तक शिक्षा अनिवार्य है । माध्यमिक शिक्षा दो भागों में है : ४ वर्ष का सामान्य सांस्कृतिक अध्ययन तथा दो वर्ष का विशेष अध्ययन ।

शारीरिक शिक्षा प्रत्येक स्तर पर अनिवार्य है । एलीमेन्ट्री स्कूल में प्रतिदिन आधा घंटा तथा सेकेन्ड्री स्कूल में तीन से चार घंटे होती है ।

१९४३ ई० में नेशनल स्कूल आफ फिजिकल एज्युकेशन की स्थापना हुयी थी । तीन वर्ष का सार्टीफिकेट कोर्स यहां दिया जाता है । दो वर्ष का विशेष कोर्स एथलेटिक्स कोचिंग तथा तालबद्ध जिमनास्टिक तथा नृत्य के शिक्षकों को दिया जाता है । प्रत्येक स्कूल में एक प्रशिक्षित शिक्षक अवश्य है ।

शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में, जिमनास्टिक्स, ताल बद्ध जिमनास्टिक्स, लड़कियों के लिये नृत्य, बाक्सिग, ऐथलेटिक्स, बासकेट बाल, फुट बाल, टेनिस वालीबाल, बेसबाल, तैरना आदि पर अधिक बल दिया जाता है।

मिनिस्ट्री आफ लेबर एण्ड वेलफेयर भी स्वास्थ्य तथा शारीरिक शिक्षा में रूचि लेती है। यह विशेष कर स्वास्थ्य कैम्प आयोजित करती है। मंत्रालय का शारीरिक शिक्षा, स्पोर्ट्स तथा मनोरंजन विभाग, ऐथलेटिक गेम्स तथा स्पोर्ट्स के प्रगति की चेष्टा करता है।

वेलफेयर एन्ड लेबर, नेशनल डिफेन्स, एज्युकेशन, डिपार्टमेन्ट आफ पब्लिक हेल्थ, नेशनल स्पोर्ट्स फेडरेशन, नेशनल लेबर कोनफेडरेशन मंत्रालयों, यूनिवर्सिटीज तथा प्रेस के प्रतिनिधियों के मेल से एक सलाहकार समिति बनाई गयी है।

पारागुए

अर्जनटाइना, बोलीविया तथा ब्राजिल के बीच महाद्वीप के अन्दर पारागुए बसा हुआ है। पारागुए नदी के द्वारा दो भागों में विभाजित हो जाता है जिसे पूर्वी तथा पश्चिमी पारागुए के नाम से पुकारते हैं उद्योग, शहर, जंगल तथा जंगल की उपज, समतल मैदान, छोटे पहाड़ी, कृषि आदि सब पूर्वी पारागुए में पाया जाता है। पश्चिम में घने जंगल हैं।

पारागुए का धन उस की भूमि तथा जंगल हैं।

यहां के लोग स्पैनिश तथा गुआरानी इनडियन के मिश्रण हैं। गुआरानी भाषा का अधिकतर प्रयोग होता है। कैथलिक धर्म का प्रचार है। दूसरे महा युद्ध के पश्चात पोलैन्ड, जमर्नी, इटली तथा रूस से आ कर लोग यहां बसे हैं।

'नेशनल मिनिस्ट्री आफ पब्लिक इन्सट्रकशन' शिक्षा विषय का निरीक्षण करते हैं। नेशनल काउंसिल इन एज्युकेशन के द्वारा उनकी सहायता होती है। ६ वर्ष की प्राइमरी शिक्षा अनिवार्य तथा निशुल्क है। माध्यमिक

शिक्षा का उचित प्रचार नहीं हुआ हैं यह विशेष कर निजी हैं। यह शिक्षा ६ वर्ष की है जो दो भागों में विभाजित है। पहला भाग ५ वर्ष का है दूसरा १ वर्ष की विशेष शिक्षा। १ वर्ष की विशेष शिक्षा यूनिवर्सिटी अध्ययन की तैय्यारी के लिये होती थी। व्यवसायिक तथा औद्योगिक शिक्षा का प्रसार कुछ ही समय से हुआ है। नार्मल स्कूल तथा नेशनल यूनिवर्सिटी का निर्माण हुआ है। शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में विशेष ध्यान शारीरिक विकास पर दिया जाता है। स्पोर्टस तथा गेम्स भी कार्य क्रम में से संयुक्त किये गये हैं। अवकाश के सदुपयोग के लिये ये उत्तम रीति से प्रयोग किये जाते हैं। अध्ययन की परम्परा विशेष रही है अतएव शारीरिक शिक्षा की ओर वह ध्यान नहीं दिया गया जो दूसरे दक्षिणी अमेरीका के क्षेत्रों में दिया गया है

पीरू

पेरू की जलवायु तथा भूमि सतह भिन्न-भिन्न प्रकार की है। यह एन्डीज की पहाड़ी भूमि से लेकर पश्चिमी अमेजन जलाशय तक विस्तृत हैं। एण्डीज पहाड उत्तर से दक्षिण तक तीन भागों में विस्तृत होने के कारण एक बड़ी दीवार की तरह है जिससे तट तथा मुख्य भूमि के बीच यातायात अति कठिन हो जाता है। किसी समय यह क्षेत्र इनके साम्राज्य का केन्द्र था, तद्पश्चात् स्पेन साम्राज्य का केन्द्र हुआ।

कृषि विस्तार की अत्यन्त सम्भावना है। कहा जाता है कि संसार के किसी भी जलवायु या स्थान की चीज की उपज यहां बहुतायत से हो सकती है कुनैन तथा आलू का आविष्कार यहीं से हुआ था। संसार के जंगल की उपज में यह एक प्रमुख देश है। इन्डियन्स तथा स्पेनिस वंशज के लोग यहां पाये जाते हैं। यद्यपि दोनों संस्कृतियों का बहुत कुछ मेल हुआ है तथापि इन्डियन्स अपनी भाषा वस्त्र, व्यवहार, रीति रस्म, उत्सव, नृत्य आदि को सुरक्षित रखने की चेष्टा करते हैं।

शिक्षा का निरीक्षण सार्वजनिक शिक्षा मंत्रालय के हाथ में है जिसके संचालन के ध्येय से ६ विभाग किये गये हैं। शारीरिक शिक्षा तथा स्वास्थ्य विभाग इन में से एक है तथा यह ऐलीमेन्ट्री सेकेन्ड्री, वोकेशनल तथा नार्मल स्कूलों

में अनिवार्य शारीरिक शिक्षा का निरीक्षण करती है पेरू की राजधानी लीमा में नेशनल इन्स्टीट्यूट आफ फिजिकल एज्युकेशन स्थित है जहां तीन वर्ष का कोर्स दिया जाता है।

एलिमेन्ट्री शिक्षा ६ वर्ष की है। सेकेण्ड्री शिक्षा ५ वर्ष की है तथा दो भागों में विभाजित है। लीमा की सान मारकोस यूनिवर्सिटी जिसकी स्थापना १५५१ ई० में हुयी थी नये संसार की एक सबसे पुरानी युनिवर्सिटी है।

शारीरिक शिक्षा के लिए दो घण्टे प्रति सप्ताह दिया जाता है। विद्यार्थियों की वर्ष में दो बार चिकित्सात्मक परीक्षा होती है।

शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में जिमनास्टिक प्रमुख है। साकर, बास्केटबाल, बेसबाल भी प्रचलित है। ऊंचे वर्ग में तैरना, पोलो, टेनिस तथा घुड़सवारी की प्रथा है। बुल फाइटिंग भी अत्यन्त लोकप्रिय है। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी तरह इन स्पोर्ट्स में आनन्द लेते हैं।

उरूगुए

उरूगुए दक्षिणी अमरीका का सब से छोटा जनतंत्र है, दक्षिणी पूर्वी तट पर अर्जनटाइना तथा ब्राजील के मध्य बसा हुआ है। जलवायु न बहुत गर्म न बहुत ठंडी है। अतः स्वस्थकर है।

यह छोटा जनतन्त्र बहुत ही प्रगतिशील है। इसके यातायात संसर्ग की प्रणाली तथा मार्ग उत्तम स्तर पर हैं। जीवन स्तर ऊंचा है। उन अग्रणी देशों में से हैं जहाँ ८ घंटे प्रतिदिन श्रम, वृद्धा अवस्था में आर्थिक सहायता, आकस्मिक घटना बीमा है तथा बाल श्रम वर्जित हैं। मेस्टीज़ोस नीग्रो तथा यूरोपीय वंशज के लोग हैं। जनसंख्या अधिकतर शिक्षित है। मोन्टीवीडीयो दक्षिणी अमेरिका का एक सांस्कृतिक केन्द्र समझा जाता है।

सार्वजनिक शिक्षा तथा समाज सुधार राष्ट्रीय मंत्रालय के आधीन शिक्षा कार्य करते हैं। निर्देशालय में चार विभाग हैं जो स्वसंचालक हैं तथा उच्च माध्यमिक, माध्यमिक, प्राइमरी, नार्मल तथा औद्योगिक स्कूलों को पृथक-

पृथक देखते हैं । ६ वर्ष की प्रारम्भिक शिक्षा है । सेकेन्ड्री स्कूल ४ वर्ष सामान्य तथा दो वर्ष विशेष शिक्षा का हैं । उरूगुए की राजधानी मोन्टीवीडियो में नेशनल यूनिवर्सिटी स्थित है । यहां शिक्षा निःशुल्क है । नेशनल कमीशन आफ फिजिकल एज्युकेशन, प्लेग्राउंड आदि की देख रेख करती है । जहाँ खेल के स्थान की कमी है, वहां बालक इन्हीं स्थानों में सप्ताह में तीन बार जाते हैं ।

शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में जिमनास्टिक पर अधिक बल दिया जाता है । साकर, बेसबाल, टेनिस, बासकेट बाल, पानी का स्पोर्ट, बालीबाल आदि खेल, बहुत प्रचलित हैं । उरूगुए एक अवकाश तथा मनोरंजन का केन्द्र बन गया है । यहाँ लोग बाहर से भी आते हैं । इस कारण अवकाश के सदुपयोग के लिये शारीरिक शिक्षा के प्रयोग पर अत्याधिक बल दिया जाता है ।

वेनेज्युएला

वेनेज्युएला उत्तर में कारेबियन समुद्र से घिरा हुआ है अतएव उसे एक लम्बा समुद्रिक तट प्राप्त है। दक्षिण में ऊंचे पहाड़, झरने तथा दुलर्भ स्थान हैं । समुद्रिक तट क्षेत्र तथा आनडीज़ की ऊंची भूमि पर बड़े शहर, कृषि घाटी तथा राष्ट्र के बन्दरगाह स्थित हैं । उत्तर पूर्व में तेल के सोते हैं जो वेनेज्युएला को संसार के श्रेष्ठ तेल उत्पादक देशों में स्थान देता है । पशु पालन तथा कृषि यहां का मुख्य व्यवसाय है । शिल्पकारी शीघ्रता से उन्नति कर रही है ।

शिक्षा मंत्रालय ऐलीमेन्ट्री तथा सेकेन्ड्री स्कूलों पर नियन्त्रण तथा निरीक्षण करता है । सेकेन्ड्री स्कूलों में ४ वर्ष का कोर्स है तथा एक वर्ष का विशेष कोर्स है । सार्वजनिक शिक्षा निःशुल्क है । नेशनल टीचर्स कालेज तथा नार्मल स्कूल शिक्षक प्रशिक्षण का कार्य करते हैं । राष्ट्रीय शिक्षा मंत्रालय में शारीरिक शिक्षा का एक विभाग है जो स्कूल की शारीरिक शिक्षा का निरीक्षण तथा संचालन करता है । शारीरिक शिक्षा सैनिक तैय्यारी के ध्येय से विशेष रूप से दी जाती है । दो घंटा प्रति सप्ताह शारीरिक शिक्षा के लिये दिया जाता है । शिक्षा कार्यक्रम में स्वीडिश जिमनास्टिक का प्रमुख स्थान है स्पोटर्स, गेम्स तथा तालबद्ध क्रियायें, बासकेट बाल, बाली बाल, एथलेटिक्स का भी उत्तम स्थान है । लड़कियां भी इन विषयों में भाग लेती हैं । बड़े बड़े शहरों में उत्तम खेल के मैदान बनाये गये हैं जहां अच्छी सुविधाएं हैं तथा एक निश्चित कार्यक्रम है ।

१७

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका

उपनिवेश काल (१६०७—१७७५)

एक छोटा साहसी झुण्ड १६०७ ई० में प्रथम बार वर्जीनिया में आकर बसा। यही इंगलैंड के अमेरिकन उपनिवेश का आरम्भ था। सत्तरहवीं शताब्दी में इंगलैंड के सामान्य राजनैतिक आर्थिक तथा धार्मिक हलचल के कारण उपनिवेशियों को अपनी मातृ भूमि छोड़नी पड़ी थी। १५४० ई० हेनरी सप्तम ने इंलिश कैथलिक चर्च को रोम से पृथक कर लिया था। १५८८ ई० में इंगलैंड प्रोटेस्टेन्ट हो गया। इंगलैंड के लोग यूरोप के कैथलिक आक्रमण से सदैव भयभीत थे। चार्ल्स प्रथम के 'डिवीजन राइट' के विचार के कारण पार्लियामेन्ट से संघर्ष था। १६२९ ई० में पार्लियामेन्ट के भंग होने के कारण राजनैतिक उपद्रव का आरम्भ हुआ ही था कि १६४० ई०के बड़े उपद्रव का जन्म हुआ। इन सभी से बचने के लिये कुछ लोग अमेरिका तथा वेस्टइन्डीज की ओर नये निवास स्थान की खोज में आये थे। इसके साथ ही उपनिवेश विस्तार का कारण आर्थिक भी था। कृषि से शिल्पकारी में परिवर्तन होने के कारण कच्चे सामान की आवश्यकता हुयी तथा व्यापार बाहर ले जाने की आवश्यकता का प्रयास हुआ। इस परिवर्तन में लोग अधिकतर नगरों में आकर बसे जिससे बेकारी की समस्या सामने आयी अतएव इसे सुलझाने के लिये नये स्थान का पाना आवश्यक हो गया। ये लोग एटलान्टिक तट की पतली फैली हुयी भूमि पर आकर रहने लगे। इंगलिश उपनिवेशियों के देश परिवर्तन के पश्चात जर्मन, डच, फ्रेन्च स्काच—आइरिश आदि भी बहु संख्या में आकर बसे। बोस्टन, न्यूयार्क, फिलाडेल्फिया तथा चार्लसटन में बसने

वालों की पुरानी संसार की ही संस्कृति रही। वहां के प्राचीन निवासियों का प्रभाव उन पर नहीं के बराबर था।

अट्ठारहवीं शताब्दी के पहले आधे भाग में थोड़े छोटे छोटे उपनिवेश अमेरिका के एटलान्टिक तट पर फैले हुये थे। क्रान्तकारी युद्ध (Revolution) के आरम्भ होने से बसने वाले मुख्य भूमि के अन्दर की ओर बढ़ने लगे। इस समय १३ उपनिवेशों की जनसंख्या प्रायः तीन लाख हो गयी थी जिसमें बोस्टन की जनसंख्या ३० हजार थी।

ये उपनिवेशी अनुरागी तथा धार्मिक भावना के थे। उनके उत्साह का केन्द्र स्वतंत्रता की प्रबल इच्छा थी जिसके कारण अनेकों कठिनाइयों तथा बन्धनों को पार करते हुये उन्होंने एक नये शासन का निर्माण किया जो उनके आने के ३५० वर्ष पश्चात संसार के लिये एक ईर्ष्या का विषय हो गया। विभिन्न धर्म तथा देशों के होते हुये भी वे अपनी समान समस्याओं के कारण संयुक्त थे। उस देश के प्राचीन निवासियों की शत्रुता, फ्रान्स के आक्रमण का भय तथा ब्रिटिश सरकार की अनुचित मांग ने उन्हें एक कर दिया था।

उपनिवेश के दिनों में लोग ग्रामों में रहते थे। दूर दूर स्थित होने तथा यातायात की कठिनाई से आपस में मिलना दुष्कर था। अपने को जीवित रखने के परिश्रम में ही समय व्यतीत हो जाता था। भूमि को उपजाऊ करना, जंगलों को साफ करना, इनडियनस से अपनी रक्षा करना, घर बनाना, भोजन उपार्जन करना, अपने आराम के लिये सुविधाओं को रूप देने आदि में व्यस्त रहते थे।

उपनिवेश के प्रारम्भिक दिनों में शिक्षा माता पिता के द्वारा घर ही में दी जाती थी। जैसे जैसे परम्परा का उपयोग किया जाने लगा। धनाढ्य अपने बालकों के लिये शिक्षक नियुक्त करने लगे। निर्धन बालक दान के द्वारा चलाए स्कूलों में जाते थे। इंगलैंड के निर्धनों के लिये व्यवसायिक शिक्षा का प्रचार यहां भी हुआ।

मासाचूसेट्स बे कालोनी ने सर्व प्रथम माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा की ओर ध्यान दिया। इसका नेतृत्व कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के ६० ग्रेजुएट्स के द्वारा

हुआ। जिन्होंने एक उच्च श्रेणी की संस्था की आवश्यकता का अनुभव किया जहाँ धर्म के प्रचारकों का प्रशिक्षण हो सके। १६३६ ई० में न्यूटन में एक कालेज स्थापित हुआ जिसका नाम १६३८ ई० में हारवर्ड दानकर्त्ता के सम्मान में रखा गया। बोस्टन में लेटिन ग्रामर स्कूल स्थापित हुआ। इसी प्रकार और स्कूल स्थापित होते गये।

इस नये राष्ट्र के प्रमुख कार्यों में से विभिन्न स्टेट्स को भूमि देने के लिये नियम बनाने का हुआ जिससे स्कूल स्थापित किय जा सकें। दूसरे नियम के अनुसार प्रत्येक नगर में जहां ५० परिवार थे उन्हें एक एलीमेन्ट्री स्कूल स्थापित करना तथा शिक्षक नियुक्त करना अनिवार्य हो गया। १०० परिवार के बीच लेटीन ग्रामर स्कूल स्थापित करना अनिवार्य था,

अट्ठारहवीं शताब्दी के अन्त में रूसो, बेसडो तथा पेस्टालोजी की शिक्षा प्रणाली का प्रभाव अमेरीका में प्रवेश कर रहा था। इस नये संसार में स्कूल पाठ्यक्रम में चर्च का बड़ा हाथ था तथा शिक्षा का ध्येय धार्मिक, जीवन की तैयारी तथा कठीन परिश्रम का था। खेल आदि संसार की वस्तुओं को तुच्छ दृष्टि से देखा जाता था।

लड़कियाँ अधिकतर स्कूल नहीं जाती थी। योग्य शिक्षकों का अभाव था। पुस्तकों की कमी थी। स्कूल के घंटे लम्बे तथा देर तक होते थे। शासन कठिन था। एलीमेन्ट्री स्कूल में लिखना, पढ़ना आदि की शिक्षा दी जाती थी तथा बाइबिल मुख्य पाठ्य पुस्तक थी।

माध्यमिक स्कूल फीस तथा स्थानीय सरकार की आर्थिक सहायता से चलाया जाता था। नये इंगलैंड में ये स्कूल युवकों को वकील, चिकित्सक या चर्च के पुरोहित बनाने के साधन समझाते थे। इन स्कूलों में विशेषतया व्यवसायिक व्यक्तियों के बालक प्रवेश लेते थे।

उपनिवेश के दिनों में लेटिन ग्रामर स्कूलों की विशेष प्रथा थी किन्तु क्रान्तिकारी युद्ध के पश्चात तथा बेनजमिन फ्रैन्कलिन की चेष्टाओं से नये प्रकार के स्कूल एकाडमी अमेरीकन शिक्षा का एक प्रभाव पूर्ण भाग सिद्ध हुआ।

एकाडमी कालेज की तैय्यारी के लिये नहीं वरन् जीवन की तैयारी के लिये निर्मित किया गया था। यद्यपि प्रथम एकाडमी की स्थापना अट्ठारहवीं शताब्दी के मध्य में हुई थी, उसके ध्येय का अर्थ क्रान्तिकारी युद्ध के पश्चात ही समझा गया। ये स्कूल विशेषतया परोपकारकों के द्वारा स्थापित किये गये थे तथा अत्यन्त शीघ्रता से इनकी उन्नति हुयी एवं उत्तम प्रकार के माध्यमिक स्कूलों के समान लोकप्रिय हुये।

लड़कियों की जो कुछ भी शिक्षा होती थी वह 'डेम स्कूल' में होती थी। 'फीमेल सेमिनरीज' जो निजी संस्था होती थी वहां लड़कियों को माध्यमिक शिक्षा दी जाती थी। लड़कों के स्कूलों में जब वे अध्ययन नहीं करते थे तो उस अवकाश में लड़कियों की शिक्षा का प्रबन्ध था। क्रान्तिकारी युद्ध के पश्चात प्राय: प्रत्येक एलीमेन्ट्री स्कूल में लड़कियों को प्रवेश प्राप्त था।

उच्च शिक्षा में हारवंड के पश्चात विलियम एण्ड मेरी १६९३ ई० में, येल १७०१ ई० में, प्रिन्सटन एण्ड ब्राऊन १७६० ई० में, डार्टमाउथ १७७० में तथा यूनिवर्सिटी आफ पेन्सलवेनिया जो फ्रेन्कलिन के द्वारा एक एकाडमी के रूप में उनकी शिक्षा प्रणाली के अनुसार स्थापित हुई थी तथा अमेरिका में प्रथम स्टेट यूनिवर्सिटी हुई।

उपनिवेश काल में तथा क्रान्तिकारी युद्ध के पश्चात दैनिक जीवन की आवश्यकताओं को अर्जित करने में समय इस प्रकार व्यतीत होता था कि मनोरंजन के लिये अवकाश मिलना कठिन था। स्वतन्त्र ऐंग्गलिन्कस तथा कठोर पयुरिटनस दोनों ने निरर्थक तथा उन अनोपयोगी समय के प्रयोग के विरूद्ध नियम बना लिया था। डच रिफार्म चर्च के मनोरंजन की ओर कुछ उदार विचार थे। उन्होंने अपनी मंडली को रविवार के दिन चर्च अराधना के पश्चात तथा धार्मिक अवकाश के समय खेल, स्पोर्ट तथा नृत्य में भाग लेने की स्वतंत्रा दी थी। इन सब विरोधों के होते हुये भी सहचर्य की प्राकृतिक प्रवृत्ति के कारण मनुष्य आपस में एक दूसरे से मिलते तथा इस समय के लिये मनोरंजन की क्रियाओं का आविष्कार भी कर लिया। यह दैनिक अवश्यकताओं के फलस्वरूप था तथा बड़े जन समूह के लिये यह एक बड़े आनन्द का अवसर हो गया। कुछ नृत्य तथा स्पोटर्स के लिये समय निकाल ही लेते थे।

१६३० से १६४० ई० के बीच बहु संख्यक उपनिवेशयों का आगमन हुआ जिनमें अधिकांश इंगलिशमैन तथा शेष विभिन्न युरोप के देश के लोग थे। इन नये आने वालों के लिये मनोरंजन का पियुरिटन नियम क्रोध का विषय था जो उन्हें उनके मन चाहे मनोरंजन तथा मनबहलाव की बातों में स्वतंत्रता से भाग लेने को मना करता था। इन्हों ने इन नियमों के विरूद्ध कार्य किया। इनमें से बहुत पश्चिमी सीमा की ओर चले गये। कुछ उन उपनिवेशों में बसे जो उदार दृष्टि कोण के थे। आगन्तुको में से जिन्होंने दिखावटी अनुकूलता दिखायी, स्थानीय सराय उनके लिये मनोरंजन का केन्द्र बन गयी। यहां वे मित्रों से मिल सकते, एक दूसरे के समाचार सुनते-सुनाते ताश आदि खेल सकते, आपस में नृत्य करते तथा मदिरा पान में लीन होते। इन बैठकों के विरूद्ध अनेक नियम बनाये गये किन्तु नये इंगलैंड के ये नगर सराय उपनिवेश तथा राष्ट्रीय काल के आरम्भ में समाज के जीवन का एक स्थायी ढांचा बन गया।

शारीरिक शिक्षा के दृष्टि कोण से उपनिवेश काल के दो व्यक्ति प्रमुख हैं बैनजीमन फ्रैंकलिन और साइमन मूड़ी।

बेनजीमन फ्रैन्कलिन (१७०७-१७९० ई०)—अमेरीका के प्रथम एतिहासिक व्यक्ति थे जिन्होंने उपनिवेश में शारीरिक शिक्षा की उन्नति के लिये परिश्रम किया। फ्रैन्कलिन ने स्कूलों के द्वारा बालकों की शारीरिक शिक्षा क्रियाओं की आवश्यकताओं को मान्यता देने के लिये घोर प्रयास किये। शिक्षा में शारीरिक शिक्षा का कोई उचित स्थान नहीं था वरन् शिक्षा ध्येय शारीरिक शिक्षा तथा खेल के विरूद्ध था। स्कूल कार्य क्रम में सैनिक शिक्षा एक भाग था। फ्रैन्कलिन ने न केवल युवकों के लिये स्कूल के प्रकार तथा पाठ्य क्रम की ओर ध्यान आकर्षित किया बल्कि स्कूल की शारीरिक शिक्षा कार्यक्रमों को भी पूर्ण विवरण दिया तथा उसके प्रयोग के लिये प्रयास किया। फ्रैन्कलिन बड़े अच्छे तैराक थे तथा इस विषय पर इनका पूर्ण अधिपत्य माना जाता था।

साइमन मूड़ी (१७२७-१७९५ ई०) क्रान्तिकारी युद्ध के पूर्व प्रसिद्ध डम्मर ग्रामर स्कूल बाई फील्ड, मासाच्युसेटस् के प्रथम प्रधान अध्यापक, स्कूल

शिक्षा में शारीरिक शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान घोषित करने वालों में से प्रमुख हुये। वे स्वयं शारीरिक शिक्षा बालकों को देते थे और उन के साथ भाग लेते थे।

अट्ठारहवीं शताब्दी में इंगलिश उपनिवेश

नया इंगलैंड

नया इंगलैंड में उपनिवेश राजनैतिक जीवन का केन्द्र, टाउन हाल तथा सभा गृह था यहां सभी प्रकार के वाद विवाद एवं चुनाव होते तथा समाज के नियम बनते थे सामाजिक जीवन में वर्ग विचार था। चर्च में बैठने का स्थान भी सामाजिक स्तर के अनुसार दिया जाता था। दैनिक जीवन में भी यही भावना प्रदर्शित थी। तथापि सभी को यह विश्वास था कि परिश्रम से अपने सामाजिक स्तर को ऊंचा किया जा सकता है।

नये इंगलैंड की भोजन सामग्री फार्म, जंगल तथा मछली मारने से प्राप्त होती थीं। इसके साथ ही वाणिज्य तथा व्यापार प्रचलित था जिसका आधार मदिरा तथा दासत्व था। सत्तरहवीं शताब्दी के आरम्भ से लेकर अट्ठारवीं शताब्दी में कुछ समय तक प्युरीटन जहाज के द्वारा व्यापारी वेस्ट इन्डीज से गुड़ लाकर उपनिवेश में रम बनाते थे तथा उत्तरी अफ्रीका से इसके बदले दासों को लाते थे। प्रथम दासत्व व्यापार, वेस्ट इन्डीज के गन्ने की खेती करने वालों के साथ हुआ। दक्षिणी उपनिवेश के आज्ञा पत्र प्रणाली के समाप्त होते ही नये इंगलैंड के जहाज के द्वारा व्यापार करने वालों को दासत्व का बाजार वर्जीनिया मेरीलैंड तवा कारोलिनास में प्राप्त हुआ।

सत्तरहवीं शताब्दी के अन्त में उपनिवेशकों के निरन्तर आगमन के कारण प्युरीटन निषेध का प्रभाव कम पड़ गया। उपनिवेशयों ने इंगलैंड के अनेक मनोरंजन के साधन प्रयोग किये।

दैनिक जीवन के कठिन लीक से मुक्त होने के लिये नये इंगलैंड के उपनिवेश विशेष दिनों की प्रतीक्षा करते थे जब वे आपस में मिलकर आमोद प्रमोद करें। यह एक प्रसन्नता का दिवस होता था।

'मिलिटिया' सैनिक प्रशिक्षण होता था। जब योग्य नागरिक वर्ष में ८ बार परेड इत्यादि के लिये एकत्र होते थे। इस दिवस पर ऐथलेटिक, परेड, ड्रिल, मल्लयुद्ध, निशानाबाजी आदि होना स्वाभाबिक था। दिन का अन्त आनन्द पूर्ण उत्सव से होता था।

मध्य के उपनिवेश

नये निदरलैंडस में अंग्रेज १६६४ ई० में आकर बसे थे। पूर्वी तथा पश्चमी न्यु जर्सी तथा न्यूयार्क में १७०२ ई० में बसे। यहाँ पर एक राजकीय गर्वनर नियुक्त हुआ। गर्वनर जो आते रहे वे अपने राजनैतिक मित्रों को हज़ारो एकड़ भूमि मोहौक, हडसन तथा कोन्केटिकट नदी के क्षेत्र में देते रहे। नये भूमि धरों ने फ्यूडल स्टेट्स स्थापित कर लिए तथा किराये पर कृषिकों को नियुक्त कर लिया। दक्षिण में क्रान्तिकारी युद्ध तक क्वेकर्स पेन्सलवेनिया पर राजनैतिक नियन्त्रण करते रहे। प्रत्येक इंगलिश उपनिवेश में प्रादेशिक सरकार कार्य कर रही थी। दीलावेयर में भी क्वेकर्स थे। यहां पर सताये हुये जर्मनस तथा स्काच-आइरिश प्रेसबीटिरियनस को स्थान मिला। मध्य उपनिवेश का मुख्य व्यवसाय, कृषि तथा पशुपालन था। फिलाडेलफिया उपनिवेश का सब से धनी नगर था तथा विद्वानों का तीर्थस्थान था।

सामाजिक जीवन न्यूयार्क में सब से अधिक आमोद-प्रमोद से परिपूर्ण था। ऊंचे वर्ग के लोग स्वतंत्रता पूर्वक मनोरंजन की क्रियाओं मे भाग लेते थे। महिलायें लन्दन के नये फैशन को अपनाती तथा उत्सव आदि में भाग लेती थी। स्केटिंग, आइस कार्नीवाल बौल कन्सर्ट, विशेष उत्सव की सभाएं, घुड़दौड़, आखेट प्रतियोगिता, नावचलाना, घुड़सवारी, क्रिकेट, गोलफ, शटलकोर्क, टेनिस आदि में लोग स्वतंत्रता से भाग लेने लगे। उच्च तथा साधारण वर्ग दोनों की इस ओर समान रुचि थी।

दक्षिणी उपनिवेश

मेरीलैंड, दक्षिण कारोलिना तथा वर्जीनिया में दासत्व की प्रथा थी। इस के कारण समाज में तीन वर्ग हो गये, उच्च वर्ग, सेवक, नीग्रो दास तथा

श्वेत निर्धन वर्ग। यहां छोटे प्रकार के भूमिधर थे। कृषि के साथ 'फर' का व्यापार करते थे। अच्छे मकानों में आराम से रहते थे।

नृत्य एक सामाजिक आवश्यकता समझी गयी तथा इस कला में शिक्षा का भी प्रबन्ध था। पिकनिक आदि की प्रथा थी। परिवारों का किसी के यहां एकत्रित होना तथा आमोद-प्रमोद में लीन होना साधारण बात थी। सेवक तथा नीग्रो दास अपने स्वामी के अवकाश कार्यों में भी सहायता करते तथा कभी कभी संगीत तथा वाद्य Instruments वादन भी प्रस्तुत करते थे। कुत्तों का पालन तथा प्रशिक्षण भी एक प्रकार का मनोरंजन था।

सीमान्तर

पहले उपनिवेशी एटलान्टिक के तट पर बसे। भूमि की कमी से उन्हे पश्चिम की ओर बढ़ना पड़ा। स्कोच-आइरिश प्रेसबीटिरियन्स, जर्मन पायटिस्ट्स तथा फ्रेन्च ह्युग्यूनोट्स पश्चिम की ओर पेन्सलवेनिया, मेरीलैंड तथा वर्जीनिया पहुंचे। व्यापार के कारण उपनिवेशी उत्तर तथा दक्षिण कारोलिना, जोरजिया, तथा स्पैनिश फ्लोरिडा तक पहुंचे।

पहाड़ों में मार्गों की कठिनाई के कारण तथा ओहियो उसकी शाखाओं से सिंची भूमि पर फ्रान्स के लोगों के दावे के कारण तथा उपनिवेशियों एवं इण्डियन के बीच संघर्ष के कारण इन नये आगन्तुकों को अलैघनीस के आगे की भूमि की ओर बढ़ना पड़ा।

अलैघनीस के पश्चिम की ओर बसने वाले उपनिवेशक उनसे भिन्न थे जो प्रथम बार एटलान्टिक तट पर बसे थे। प्रथम उपनिवेशकों में से अधिकांश यूनिवर्सिटी की शिक्षा प्राप्त थे किन्तु जैसे और नये लोग आते गये उन्हे कठिन परिश्रम के द्वारा अपने को बसाना पड़ा तथा उनकी शिक्षा, अनुभव के स्कूल में हुयी।

प्रथम उपनिवेशियों ने अपना सामाजिक वैभव तथा मनोरंजन त्याग दिया क्योंकि इस नयी भूमि में प्रत्येक को एक होकर परिश्रम में हाथ बटाना था तथा आपस में एक दूसरे की सहायता करनी थी। भूमि को उपयोगी बनाने के लिये

कठिन परिश्रम की आवश्यकता थी जिसमें प्रत्येक वर्ग के लोग, प्रौढ़, महिलायें तथा वयस्क एक साथ प्रयत्न कर रहे थे।

परिश्रम तथा दैनिक जीवन की कठिनाइयों से मुक्त होने के लिये कुछ अवकाश तथा मनोरंजन की आवश्यकता थी। मनोरंजन की अन्य क्रियाओं के साथ आखेट तथा मछली मारना होता था जिससे भोजन भी प्राप्त हो जाता था। इस समय स्पोर्ट्स का प्रकार व्यक्तिगत था।

१८

प्रारम्भिक राष्ट्रीयता काल

यूनाइटेड स्टेट्स (१७७६-१८६५)

क्रान्तिकारी युद्ध के पश्चात जब यूनाइटेड स्टेट्स की स्थापना हुयी उस समय कोई दृढ़ राष्ट्रीयता की आत्मा का जन्म नहीं हुआ था। इसके विपरीत एक राष्ट्रीयता थी जो ब्रिटिश शासन तथा प्रबन्ध विद्या के प्रतिरोध में उत्पन्न हुई। इस राष्ट्रीयता के आधार पर उन्हे युद्ध की सैनिक विजय कठिनता से प्राप्त हुयी। स्टेट्स नई फेड्रल सरकार को किसी प्रकार के अधिकार समर्पित करना नहीं चाहती थी।

इसके पश्चात १८१२ ई० के युद्ध ने एक निश्चित अमेरिकन आत्मा को जन्म दिया तथा वास्तविक राष्ट्रीयता का निर्माण हुआ। कांग्रेस ने एक राष्ट्रीय सेना तथा जल सेना की आज्ञा दी। नियम बनाये गये जिससे अमेरिकन उद्योग विदेशी प्रतियोगिता से बचाये जा सकें। राष्ट्रीय मुद्रा के निर्माण के लिये बैंक को अधिकार दिया गया। चीफ जस्टिस जौन मार्शला ने अमेरिकन सम्वैधानिक प्रणाली की स्थापना की। राष्ट्रीय साहित्य का जन्म हुआ। राष्ट्रीय संस्कृति के निर्माण में नार्थ अमेरिका रिव्यू ने सहयोग दिया। शैक्षणिक पत्रिका 'एकाडेमिसियन' की उत्पति हुयी जिसने सार्वजनिक स्कूलों तथा निशुल्क शिक्षा को प्रोत्साहित किया। अध्यापकों ने पाठ्य पुस्तके रचीं। व्यापारी, अनुसंधान के निमित्त खोज करने वाले तथा उपनिवेशियों ने जंगलों में प्रवेश किया तथा सीमा को पश्चिम की ओर और विस्तृत किया। मार्ग स्थापित किये गये। राजनैतिक प्रवीणता से फ्लोरिडा स्पेन से प्राप्त हुआ तथा प्रशान्त महासागर के उत्तरी पश्चिमी क्षेत्र पर यूनाइटेड स्टेट्स का प्रभाव बढ़ा। मोनरो सिद्धान्त के

अनुसार यूनाइटेड स्टेट्स ने अपने पश्चिमी गोलार्द्ध को युरोप के हस्तक्षेप से सुरक्षित रखने के अपने विचार को दृढ़ किया।सम्पूर्ण राष्ट्रीय एकता प्राप्त करना आसान नहीं था। सामाजिक तथा आर्थिक शक्तियां इसका विरोध कर रही थीं। दक्षिण में दासत्व की समस्या पूर्वी औद्योगिक संस्थाओं की आर्थिक श्रेष्ठता प्राप्त करने की भावना, कृषि में दक्षिण तथा पश्चिम की प्रतियोगिता, कानून तथा व्यवस्था स्थापित करना आदि मिल कर इस नये प्रजातंत्र को चुनौती दे रहे थे।

प्रारम्भिक राष्ट्रीय काल की विशेषता थी कि अधिक से अधिक लोगों को प्रजातांत्रिक अधिकार मिलता जा रहा था। मतदान का अधिकार सर्वप्रथम उनका था जिनके पास धन था किन्तु यह समाप्त हो गया। निर्धन बच्चे धर्मार्थ संस्थाओं से शिक्षा प्राप्त करते थे किन्तु अब उन्हे शिक्षा राष्ट्रीय कोष से दी जाने लगी। महिलायें अपना स्थान समाज में प्राप्त करने लगीं। यद्यपि १८१२ ई० की लड़ाई तथा मेक्सिको के युद्ध ने विभिन्न रुचि के लोगों को एक कर दिया तथापि अमेरिका में इस बढ़ती हुयी राष्ट्रीयता के साथ दूसरे युरोप के देशों की तरह एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार न बन सकी। अट्ठारहवीं शताब्दी के अन्तिम दिनों तक अमेरिका कृषक था। शताब्दी के समाप्त होते होते अंग्रेजों तथा अमेरिका के लोगों के आविष्कार तथा अनुसन्धान ने कृषि तथा औद्योगिक आन्दोलन की नींव डाली। औद्योगिक आन्दोलन के कारण दो नये सामाजिक वर्गों का निर्माण हुआ। पूंजी वाले तथा फैक्ट्री में कार्य करने वाले। पूंजी वाले वे थे जो उद्योग की व्यवस्था करते। फैक्ट्री में कार्य करने वाले जनता के बहु संख्यक जनसंख्या के अधिकतर लोगों में से थे जो फार्म पर से आते थे। इन्हें फैक्ट्री में १४ से १५ घंटे प्रतिदिन कार्य करना पड़ता था। इनमें स्त्रियां तथा बच्चे भी होते थे, कार्य विशेषत: अस्वस्थकर वातावरण में होता था तथा नगरों में रहने की कठिनाई तथा असुविधा, भीड़ तथा अस्वच्छता के कारण होती थी। कार्य करने की दशा में सुधार की माँग आवश्यक हो गयी। बच्चों को श्रम से हटाया गया तथा श्रमिक यूनियन श्रमिकों के अधिकार को सुरक्षित रखने के लिये बनाये गये। अतएव एक बहुसंख्यक श्रमिक समूह, स्टेट के स्तर पर शिक्षा कानून बनाने की एक बड़ी शक्ति हो गयी। उपद्रव युद्ध से १८३० ई० के बीच उपनिवेशकी बहुत अल्प संख्या में आये थे। उपनिवेशियों के कारण फैक्ट्री, रेल मार्ग तथा निर्माण में श्रमिक संख्या की वृद्धि हुयी।

शिक्षा के ध्येय से इस काल के प्रथम भाग में श्रेष्ठ जनों के झुकाव के

अनुसार सामाजिक वातावरण रहा जिसमें प्राचीन लेटिन ग्रामर स्कूल की प्रथा थी। प्राइवेट ट्युटर, स्कूल की फीस तथा अर्पित धन की व्यवस्था होती थी। इस काल के दूसरे भाग में अमेरिकन राजनैतिक तथा सामाजिक ढांचा प्रजातांत्रिक हो गया। इस काल में जनता ने उपयोगी शिक्षा की मांग की जिसके कारण लेटिन ग्रामर स्कूल. इंगलिश स्कूल तथा एकाडमी में परिवर्तित हो गये।

साधारण जनता और श्रमिकों की उन्नति ने उन्हें शिक्षा नियम निर्माण करने आदि में अधिक शक्ति प्रदान की। सार्वजनिक विचार धारा शिक्षा के व्यापक होने पर बल देने लगी। स्टेट ने एलीमेन्ट्री, सेकेन्ड्री स्कूल, कालेज तथा यूनिवर्सिटी की आर्थिक सहायता तथा निरीक्षण को स्वीकार कर लिया। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में एलीमेन्ट्री स्कूलों की संख्या में वृद्धि हुयी तथा एकाडमी को अधिक मान्यता प्राप्त हुई। सह शिक्षा (Co-education) प्रथा प्रचलित हुई। सभी बालकों के लिये निशुल्क सार्वजनिक हाई स्कूल शिक्षा अभी तक नहीं हुयी थी तथा महिलाओं के लिये कालेज शिक्षा की कोई व्यवस्था नहीं थी। युरोप के लेखकों की पुस्तकें सरलता से अमेरिका में आने लगीं। फ्रोयबेल जो महिला शिक्षा के प्रारम्भ करने वाले तथा किंडरगार्टन के स्थापक थे, अमेरिकन शिक्षा दर्शन को विशेषतया प्रभावित कर रहे थे। जर्मन उपनिवेशकों के कारण इस विचार ने और बल पकड़ा कि शारीरिक शिक्षा के व्यायाम तथा खेल युवकों के सही शारीरिक बढ़ाव तथा विकास के लिये तथा मानसिक उन्नति के लिये अति आवश्यक है।

१८३७ ई० में होरेस मान्न नामक एक प्रसिद्ध शिक्षा सुधारक ने मासाच्युसेट्स प्रणाली की स्कूल शिक्षा में संशोधन किया, स्थानीय डिस्ट्रिक्ट स्कूलों का निरीक्षण केन्द्रित किया, स्कूलों से सम्बद्ध धार्मिक संस्थाओं को पृथक किया तथा युरोप की सबसे उत्तम शिक्षा प्रणाली पर आधारित नयी प्रणालियों से परिचित कराया। सेकेन्ड्री स्कूल साधारण लोगों के लिये अभी तक आवश्यक नहीं समझे गये थे किन्तु अब उसकी मांग बढ़ने लगी। इस शताब्दी के अन्त तक लड़कियां भी सार्वजनिक स्कूलों में प्रवेश लेने लगी थीं। इस नयी शताब्दी में उच्च शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया गया। स्टेट यूनिवर्सिटी तथा चर्च कालेज का विस्तार हुआ। प्रथम महिला संस्था, प्रथम निजी सहशिक्षा कालेज, प्रथम नार्मल

स्कूल तथा येल यूनिवर्सिटी में प्रथम ग्रेज्युयेट कोर्स का निर्माण हुआ। इस काल के अधिकतर स्कूल धार्मिक संस्थाओं के द्वारा स्थापित किये गये थे तथा हस्त कला उद्योग के स्कूल थे। १७९० ई० में प्रथम बार औद्योगिक प्रशिक्षण तथा मानसिक शिक्षा का मेल किया गया। यह प्रजातांत्रिक भावनाओं के अनुकूल था। पेस्टालोजी तथा फेलेनवर्ग के सिद्धान्तों से इन भावनाओं को प्रोत्साहन मिला।

संगठित प्रतियोगिता के खेल का प्रवेश अभी तक अमेरिका में नहीं हुआ था। अनौपचारिक खेल तथा प्रतियोगिता हुआ करती थी। नये समाज के स्थापित होने से श्रम विभाज़ित हो गया अतएव कुछ अवकाश का समय प्राप्त हुआ। इस अवसर पर नयी प्रकार की शारीरिक क्रियाओं का विकास हुआ। जहाज तथा रेल के आने से मनोरंजन ने एक नया रूप लिया। अनेक जर्मन अपने साथ पुराने संसार के उत्सव लाये जिसके आधार पर ४ जुलाई को स्वतंत्रता घोषणा का उत्सव, गायन संगीत, झण्डों के फहराने, पिकनिक, देश भक्ति के वक्तव्य, खेल तथा विभिन्न प्रतियोगिताएं सारा दिन होती थी। स्वतंत्रता इनके लिये व्यक्तिगत विषय था तथा इसमें वे पूर्ग रूप से भाग लेते थे। जेक उपनिवेशियों ने निशाना बाजी की प्रतियोगिता से परिचित कराया था।

स्कूलों में नृत्य की प्रथा चल चुकी थी तथा कुछ लोग इसे लड़कियों के शारीरिक शिक्षा के लिये पूर्ण तथा उसके तुल्य समझते थे। नृत्य को स्कूल स्थिति में लाने के लिये कुछ कालेसथेन्क्सि् फोर्म आदि इसमें संयुक्त किये गये थे।

जिमनास्टिक, कालैसथेनिक्स तथा व्यायाम खेल तथा नृत्य से भिन्न थे। जर्मन उपनिवेशिकी जिमनास्टिक का प्रेम अमेरिका में लाये थे। इनमें तीन ज़हान के मित्र थे जो उच्च श्रेणी के शिक्षक थे। चार्ल्स फौलन, चार्ल्स बेक तथा फ्रान्सिस लाइवर। इन्होंने टर्नन प्रथा का प्रचार किया। इनके आगमन से ही वास्तविक शारीरिक शिक्षा स्कूलों में प्रारम्भ हुई। कुछ दिनों के पश्चात इस जिमनास्टिक के उत्साह में कमी हुयी किन्तु स्कूलों में शारीरिक विकास की आवश्यकता की भावना बनी रही।

गृह सम्बन्धी कर्त्तव्यों के पालन के द्वारा उपयोगी व्यायामों का प्रयोग जो माउन्ट होलीआक फीमेल सेमनरी में आरम्भ किया गया था उसकी नकल बहुत से स्कूलों ने की किन्तु शिक्षकों ने उसे लड़कियों के लिये वास्तविक शारीरिक शिक्षा के तुल्य नही सराहा। महिला शिक्षकों के द्वारा जिमनास्टिक भी लड़कियों के लिये उचित नहीं समझा गया क्योंकि अधिकतर लड़कियों के लिये वह कठिन सिद्ध हुआ। अतएव कैथरीन बीचर ने जो अपने समय की लड़कियों की शिक्षा प्रोत्साहक थी एक अपनी प्रणाली चलायी। उनकी प्रणाली में ३६ पाठ शारीर क्रिया शास्त्र के आधार पर तथा कालेसथेनिक्स में दो कोर्स जिसमें एक कक्षा के लिये तथा दूसरा जिमनेजियम के लिए बनाया गया ये व्यायाम सरल गति के थे तथा संगीत के साथ किये जाते थे। अनेक स्कूलों ने इसे नृत्य के स्थान पर प्रयोग किया।

डा० जार्ज बारकर विनशिप जो हारवर्ड के एक ग्रेज्युएट थे कठिन जिमनास्टिक के प्रति सम्पूर्ण अमेरिका में प्रसिद्ध हो गये। वे भ्रमण कर भाषण देते तथा वेटलिफ्टिंग के प्रदर्शन देते थे। शारीरिक शक्ति इस प्रशिक्षण का ध्येय था।

डा० डीओ लीविस मदिरापान परिमितता कार्यकारी तथा स्वास्थ्य लेक्चरर ने श्रेष्ठ शक्ति का तथा इस विचार का घोर विरोध किया कि जिमनेजिया केवल जिमनास्ट के लिये था। उन्होंने हलके लकड़ी के डम्बबेलस का प्रचार किया। इस धारणा की उन्होंने कड़ी आलोचना की, कि अनिरीक्षित खेल बालकों के शारीरिक विकास के योग्य है। जिमनास्टिक शिक्षक की परम आवश्यकता बतायी। स्कूल के सैनिक शिक्षा की भी आलोचना की। उनका विचार था कि सैनिक शिक्षा ऊपर के धड़ के विकास के लिये व्यर्थ है तथा उससे शरीर में कड़ापन आ जाता है एवं उसमें थकाने वाली स्थिति है। ऐथलेटिक स्पोर्ट्स भी संगठित जिमनास्टिक की तुलना में सदोष बताया। अतएव अपने विचार के अनुसार उन्होने अमेरिकन स्कूल के लिये एक प्रणाली आरम्भ की। उन्होंने व्यायाम के ताल के लिये संगीत का प्रयोग बताया। सेम के बीज की थैली को फेंकना भी एक व्यायाम बताया क्योंकि यह एक हाथ से सरलता से पकड़ा जा सकता है। उनके बहुत से व्यायाम कमची के साथ, क्लब तथा रिंग के साथ किये जा सकते थे। उन्होंने प्राय: ५०० व्यायाम बताये जो सैनिक ड्रिल, स्केटिंग घुड़सवारी तथा नृत्य का स्थान ले सकते थे।

उन्नीसवीं शताब्दी में अनेक स्पोर्ट्स के नियम बनाये गये तथा उन्हें संगठित किया गया। बेसबाल का कदाचित कूपर्सटाउन, न्यूयार्क में १८३९ ई० में आविष्कार किया गया। यह इंगलैंड के राउन्डर्स के आधार पर था। एबनर डबलडे इसके आविष्कारक माने जाते हैं। इसके नये नियम १८४५ ई० में बनाये गये थे। फुटबाल जो पैर से मारने वाला खेल था उसे अमेरिकन कालेज वालों ने रगबी से मिला दिया और खेलने की दूसरी प्रणाली भी संयुक्त की और वर्त्तमान फुटबाल का रूप दिया। येल यूनिवर्सिटी के विद्यार्थी १८०७ ई० में फुटबाल खेलते थे। १८०० ई० में फिलाडेफिया में इंगलैंड तथा फ्रान्स की तरह तैरने वाले स्नान स्थान थे। यह डीलावेयर में स्थित या। १८२७ ई० में लाइबर ने अमेरिका में प्रथम तैरने की शिक्षा देने वाला, स्कूल खोला १८२१ में एक संस्था थी जिसका नाम 'दि ह्यूमन सोसाइटी' था जिसका उद्देश्य डूबते हुये को बचाना था। पानी के स्पोर्टस का प्रचार कालेजों में हुआ। १७९५ ई० में प्रथम गोल्फ क्लब सवाना जौजिया में स्थापित हुआ। प्रथम बेसबाल क्लब न्यूयार्क में १८४५ ई० में बना। उसी वर्ष बेसबाल की राष्ट्रीय एसोसियेशन की स्थापना हुयी। शताब्दी के मध्य में कालेजों के आपस में खेल प्रतियोगिता होती थी। जुलाई १८५९ ई० में बेसबाल प्रतियोगिता पिट्सफिल्ड, मासाच्युसेटस में हुई थी।

नौर्थहाम्पटोन, मासाच्युसेट्स के राउन्ड हिल स्कूल में १८२३ ई० में अमेरिका में प्रथम बार शारीरिक शिक्षा, सामान्य शिक्षा की एक अंग बनी। यहां चार्लस बेक अमेरिका में प्रथम मान्यता प्राप्त शारीरिक शिक्षक नियुक्त हुये थे। इन्होंने जर्मन जिमनेजियम की तरह खुले में एक जिमनेजियम बनवाया तथा सम्पूर्ण स्कूल कक्षा में विभाजित किये गये तथा सप्ताह में तीन दिन शारीरिक शिक्षा प्राप्त करते थे। बेक के बाद यहाँ चार्लस फौलन आये यह भी जर्मन थे। सालेम के लेटिन स्कूल में खेल आदि उनके शैक्षणिक तथा मनोरंजन लाभ के लिये १८२१ ई० से प्रचलित किये गये थे। राउन्ड हिल स्कूल को देख कर १५ दूसरे स्कूलों ने जिमनास्टिक क्लास आरम्भ किया।

उस समय के अनेक शिक्षा सम्बन्धी नेताओं ने यथा विधि व्यायाम, हाइजीन तथा फिजीयालोजी की शिक्षा के द्वारा स्वास्थ्य के लिये शिक्षा प्रचार किया तथा बल दिया कि सम्पूर्ण शिक्षा के लिये यह आवश्यक है। इन्हें शारीरिक शिक्षा के

वास्तविक मूल्य तथा क्षेत्र का अधिक ज्ञान नहीं था। यह साधारण विचार था कि शारीरिक शिक्षा स्कूल में घंटों के पश्चात दी जाती है तथा इसके लिये विशेष शिक्षक की आवश्यकता नहीं। १८५० ई० के आस पास पश्चिमी मध्य तथा पश्चिमी तट पर बहुत से स्कूलों में खेल के अपरेटस लगाये गये थे जिन्हें अवकाश के समय प्रयोग किया जाता था। सिनसिनाटी में पैरलेलबार, होरीजेन्टलबार, होरीजेन्टल लाडर तथा सरकुलर रिंग लगाये गये थे। यहां शारीरिक शिक्षा का एक विभाग स्थापित हुआ तथा एक शारीरिक शिक्षक नियुक्त हुआ।

१८५४ ई० में सेनफ्रान्सिसको के रिनकोन स्कूल में दैनिक कालेसथेनिक प्रोग्राम तथा स्वतंत्र खेल आरम्भ किये गये। इस समय बहुत से नगरों ने एक शारीरिक प्रशिक्षण प्रणाली सार्वजनिक स्कूलों के लिये निर्मित करने की चेष्टा की। १८६० ई० में एक निजी बेस्ट न्यूटन स्कूल में डीयो लिवस प्रणाली के कालिसथेनिक्स की सर्व प्रथम स्थापना हुई। बोस्टन के स्कूलों में भी इसका परिचय कराया गया। प्रत्येक दिन कुछ समय के लिये व्यायाम कराये जाते थे।

इस काल में अनेक लोग लड़कियों के स्वास्थ्य पर शोक प्रकट कर रहे थे तथा इस बात की चेष्टा कर रहे थे कि शारीरिक शिक्षा उनके स्कूल के प्रोग्राम का एक भाग बन जाये। कैथरिन बीचर ने अपने दो स्कूलों में हार्ट फोर्ड तथा सिनसिनाटी में कालेसथेनिकस की प्रथा का प्रयोग किया। दूसरे स्कूलों ने भी इस प्रथा को स्वीकार किया था। कुछ निजी स्कूलों ने एक शारीरिक शिक्षा प्रोग्राम लड़कियों के लिए भी बनाया जो उस समय को देखते हुए उत्तम था। इस प्रोग्राम में स्केटिंग आर्चरी, घुड़सवारी, नृत्य, तैरना, क्रोके (एक प्रकार का खेल जो लकड़ी के गोले तथा लकड़ी की स्टिक से खेला जाता है) चलना तथा कालेसथेन्क्सि दिया जाता था।

कालेज के अधिकारियों ने अपने विद्यार्थियों के स्वास्थ्य की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया न उनके लिये जिमनेजियम था न स्पोर्ट्स के कोई साधन थे। जो कुछ भी थोड़ी मात्रा में रुचि दिखाई गयी वे उनके द्वारा थी जो शिक्षा आदर्श के भक्त थे। युनाइटेड स्टेट्स मिलेट्री एकाडमी के एक सुपरिन्टेन्डेट ने

अपने पद को त्याग कर राष्ट्र की ऊंची शिक्षा संस्थाओं में सुधार के लिये आवाज उठायी तथा यह माँग की, कि प्रत्येक प्रसिद्ध सेमीनरीज की शिक्षा में सबसे बड़ा दोष यह था कि शारीरिक शिक्षा की ओर ध्यान नहीं दिया जाता था ।

१८२६ ई० में हारवर्ड ने चार्ल्स फोलैन को जो जर्मन भाषा के लेक्चरर थे विद्यार्थियों के लिये जिमनास्टिक की व्यवस्था करने को कहा यद्यपि यह शिक्षा कार्यक्रम का भाग नहीं समझा जाता था। इसकी व्यवस्था की गयी और एक प्रकार से जर्मन "टर्नप्लाट्ज" का अमेरिका में स्थानान्तर हुआ । अधिकारियों ने एक खाली हाल को अन्दर के कार्य के लिये प्रयोग किया । विद्यार्थियों ने इस ओर बहुत उत्साह प्रकट किया ।

इस के पश्चात दूसरे कालेजों ने, येल, आमहर्स्ट, विलियम्स ब्राउन तथा बाउडोइन ने खुले में जिमनेजियम का निर्माण किया । शिक्षक नियुक्त हुये तथा सप्ताह में दो से पांच घंटे का क्लास होता था । इसके साथ एक कमरा अन्दर के कार्य के लिये खाली रहता था । पैरलेलबार, हौरीजेन्टलबार, लाडर, रोप मैट उडन होरसेस (Wooden Horses) दौड़, हाइक, फेन्सिग तथा बौक्सिग आदि में शिक्षा दी जाती थी ।

१८३० ई० से १८४०ई० तक हाथ से परिश्रम करने के आन्दोलन ने जो सर्वोत्तम व्यायाम था एवं शारीरिक शिक्षा में नष्ट किये गये समय को उपयोग में लाता था, एक दृढ़ स्थान पा लिया था । अतएव प्रारम्भिक दिनों में हाथ से परिश्रम करने का कर्तव्य शारीरिक शिक्षा का स्थान सम्पूर्ण स्कूलों में लेता था । इस कारण शारीरिक शिक्षा में प्रगति न हो सकी । १८५० ई०में सम्पूर्ण राष्ट्र में शारीरिक शिक्षा विषय में एक नयी रुचि आयी । १८५२ ई० में वर्जीनिया की यूनिवर्सिटी ने एक शारीरिक शिक्षक नियुक्त किया जिसने विद्यार्थियों में पर्याप्त रुचि उत्पन्न कर दी । एमहर्स्ट कालेज में १८५९ ई० में एक जिमनेजियम निर्माण किया गया तथा शारीरिक शिक्षा विभाग स्थापित करने का प्रस्ताव पास किया गया जो यूनाइटेड स्टेट्स का प्रथम कालेज शारीरिक शिक्षा के विभाग का हुआ । इस स्थान पर डा० एडवर्ड हिचकौक नियुक्त हुये । यह प्रथम मान्यता प्राप्त कालेज के शारीरिक निर्देशक हुये । उन्होंने प्रोफेसर का पद भी प्राप्त कर लिया । यह प्रथम शारीरिक शिक्षक थे जिन्हें ऐसी पदवी कालेज में प्राप्त करने का

सौभाग्य मिला। इस पद पर उन्होंने ५० वर्ष तक सेवा की। आधुनिक समय का यह विभाग केवल प्रथम ही नहीं था किन्तु २० वर्ष तक इसके तुल्य कोई और दूसरा नही हुआ। सर्वप्रथम हिचकौक ने कठिन जिमनास्टिक आरम्भ किया किन्तु शीघ्र ही इस निर्णय पर पहुंचा कि सरल जिमनास्टिक उपयोगी है। उन्होंने स्वस्थकर जीवन पर तथा निरन्तर कठिन व्यायाम पर जो प्रसन्नता तथा मनोरंजन देने वाले प्रकार के हों, बल दिया। आरम्भ ही से विद्यार्थियों के आँकड़े एकत्रित किये गये। यद्यपि नार्मल स्कूल शैक्षणिक व्यवस्था में स्थान पा चुके थे, फिर भी शारीरिक शिक्षा का विशेष कोर्स शारीरिक शिक्षक प्रशिक्षण के लिये कहीं व्यवस्था नहीं थी। १८५९ ई० में न्यूयार्क स्टेट नार्मल स्कूल ने शारीरिक शिक्षा को स्कूलों में मान्यता देने के लिये तथा शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिये अनुरोध किया१८६१ई०में रोचेस्टर में प्रथम नार्मल स्कूल आफ जिमनास्टिक स्थापित किया गया। युद्ध के कारण इसे समाप्त करना पड़ा। डिओ लिविस नार्मल इन्सटीट्यूट आफ फिजिकल एज्युकेशन १८६१ ई० के ग्रीष्म काल में बोस्टन में स्थापित हुआ। यह अत्यन्त ही प्रमुख, प्रसिद्ध तथा उपयोगी सिद्ध हुआ। कुछ संस्थायें इस काल में स्थापित हुयीं जो स्कूल न जाने वाले व्यक्तियों को शारीरिक शिक्षा प्रदान करती थीं।

जर्मनी से सताये गये उपनिवेशी जो एक श्रेष्ठ ज्ञान तथा संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते थे उत्तर में आकर बसे। शारीरिक तथा मानसिक विकास में अत्यन्त रुचि रखने वाले अधिक संख्या में एकत्रित हो गये तब प्राचीन देश के जर्मन सोसायटी—टर्नविरायन की स्थापना हुई। १८४८ ई० में सिनसिनाटी में प्रथम स्थापना हुयी उसी वर्ष न्यूयार्क में भी स्थापित हुआ। इसका ध्येय शारीरिक शिक्षा की प्रगति, मानसिक जागरूकता तथा सामाजिकता को बढ़ाना था। जर्मन प्रणाली का व्यायाम पुरुषों, स्त्रियों तथा बालकों को दिया जाता था।

१८५१ ई० में यूनाइटेड स्टेट्स के बोस्टन में प्रथम वाई० एम० सी० ए० की स्थापना हुयी। दस वर्ष में दो सौ से अधिक एसोसियेशन स्थापित हुये। इनके द्वारा शारीरिक शिक्षा कार्य में अत्याधिक प्रोत्साहन मिला।

१८२६ ई० प्रथम सार्वजनिक जिमनेजियम वाशिंगटन गार्डन में

स्थापित हुआ। यह जौन सी वारेन के प्ररिश्रम से सफल हुआ था। फौलेन यहाँ के शिक्षक नियुक्त हुये। स्कूल तथा कालेज जिमनेजियम तथा वाई एम सी० ए० के स्थापित होने से सार्वजनिक जिमनेजियम का अन्त हो गया। १८६० में अमेरिकन इन्सटीट्यूट आफ इन्सट्रकशन की स्थापना हुयी। इस समय सभा में वारेन ने शारीरिक शिक्षा के महत्व पर भाषण दिया था। इस काल में अनेक पुस्तकें तथा एक पत्रिका मुद्रित हुयी।

१८३३ ई० में वारेन की पुस्तक 'दि इम्पार्टेन्स आफ फिजिकल एज्युकेशन' शारीरिक शिक्षा का प्रथम मुद्रित दर्शन कहा जा सकता है।

कुछ विशेष व्यक्ति इस काल में हुये जो शारीरिक शिक्षा को प्रोत्साहन देने वाले थे तथा जिन्होंने अपना पर्याप्त समय इस ओर दिया

प्रथम तीन जर्मन उपनिवेशी शारीरिक शिक्षा के अतिरिक्त, दर्शन कानून, साहित्य, धर्म शास्त्र, राजनैतिक प्रबन्ध तथा इतिहास में प्रवीण थे।

चार्ल्स फोलेन् (१७९६-१८४० ई०) का जन्म रोमराड जमर्नी में हुआ था। ये जहान के मित्र तथा शिष्य थे। १८१९ ई० में राजनैतिक कारणों से जब जहान पकड़ लिये गये थे वे देश से भाग कर जहान के एक और शिष्य चार्ल्स वेक के साथ स्विटजरलैंड पहुंचे। वहां से वे फ्रान्स गये। लाफायेटे के आग्रह करने पर अमेरिका में फिलाडेलफिया १८८४ ई० पहुंचे। फालेन गाइसन युनिवर्सिटी के डाक्टर आफ सिविल लौज थे। उन्हे हारवर्ड युनिवर्सिटी में जर्मन पढ़ाने का स्थान मिला। कुछ दिनों के पश्चात वे जिमनास्टिक की भी शिक्षा देने लगे। बोस्टन के प्रथम सार्वजनिक जिमनेजियम में शिक्षा देने का भार भी उन्होंने अपने ऊपर ले लिया। थोड़े दिनों के बाद जिमनास्टिक की शिक्षा समाप्त कर केवल जर्मन, नीति शास्त्र एवं इतिहास की शिक्षा देते रहे।

चार्ल्स वेक (१७९८-१८६६ ई०) का जन्म हैडेलबर्ग, जमर्नी में हुआ था। ट्युविंगन युनिवर्सिटी से इन्होंने डाक्टर आफ थियोलोजी की उपाधि प्राप्त की थी। बोसटन के प्रसिद्ध राउन्ड हिल स्कूल के प्रधानाचार्य ने इन्हें जिमनास्टिक, बेस बाल, हाकी, फुटबाल तथा लेटिन की शिक्षा देने के लिये नियुक्त किया। बेक १८२० ई० में स्कूल छोड़ कर फिलिप्स टाउन एकाडमी

न्यूयार्क की स्थापना में सहयोग देने चले गये। दो वर्ष पश्चात वे हारवर्ड युनिवर्सिटी में प्रोफेसर आफ लेटिन नियुक्त हुये इन के जीवन के अन्तिम दिन दास्तव की प्रथा को नष्ट करने की चेष्टा में व्यतीत हुये।

फ्रानसिस लाइबर (१८००-१८७२ ई०) का जन्म बर्लिन, जमर्नी में में हुआ था। जेना युनिवर्सिटी से डाक्टर आफ फिलासफी प्राप्त की। ये भी जहान के मित्र थे। जर्मनी में जीवन कठिन पा कर १८१७ में अमेरिका गये। फौलेन के बोस्टन से हटने के पश्चात वह स्थान इन्हें दिया गया। लाइबर ने कहा वहां प्रथम तैरने का स्कूल स्थापित किया। यह युनाइटेड स्टेटस का प्रथम तैरने का स्कूल था। १८४० ई० के समीप उन्हें नये फिलेडलफिया में गिर्राड कालेज के नियोजन के लिये आमंत्रित किया गया। इसके पश्चात उन्होंने राजनैतिक प्रबंध तथा इतिहास में शिक्षा देना आरम्भ किया। अमेरिका के प्रथम 'तत्ववेत्ता राजनैतिक दार्शनिक' प्रसिद्ध थे। उनकी पुस्तक पोलीटिकल इतिहास तथा सिविल लिबर्टी एण्ड गर्वन्मेन्ट ने उन्हे अमेरिका के प्रमुख विद्वानों में स्थान दिया।

कैथरीन ऐस्थर बीचर (१८००-१८७८ ई०) का जन्म ईस्ट हाम्पटन लौंग आइलैंड में हुआ था। वह एक प्रसिद्ध प्रचारक की पुत्री थीं। उन्होंने लड़कियों के लिये एक निजी स्कूल खोला। लड़कियों की व्यायाम की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुये उन्होंने जर्मन जिमनास्टिक की जांच की किन्तु इसे लड़कियों के लिये कठिन पाया। वह शरीर क्रिया शास्त्र में रूचि रखती थी। इस कार्य के साथ उन्होंने लड़कियों के लिये एक व्यायाम प्रणाली का निर्माण किया। १८३१ ई० में उन्होंने अपनी प्रथम पुस्तक 'ए कोर्स आफ कालेसथेनिक्स फार यंग लेडीज, लिखा जो अमेरीका का प्रथम शारीरिक शिक्षा मैनुअल था। १८५८ ई० में दूसरी पुस्तक लिखी-'फिजयालोजी एण्ड कालिसथेनिक्स'। सिनसिनाटी में वेस्टर्न फीमेल सेमीनरी स्थापित की। उसके पश्चात शारीरिक शिक्षा के महत्व पर पूर्व तथा मध्य पश्चिम में लेकचर का भ्रमण करती रहीं। १८६४ ई० में डीओ लिविस के नये स्कूल मासाच्पुसेटस में शिक्षका हुयीं। यह कहा जा सकता हैं कि वह अमेरिकन जिमनास्टिक प्रणाली की प्रथम व्यवस्थापिका थी तथा अमेरीका की प्रथम शारीरिक शिक्षा महिला नेता थी।

डीओ किविस (१८२३-१८८६ ई०) का जन्म औबंन के समीप केयुगा देश न्यूयार्क में हुआ था। उन्हें डाक्टर आफ मेडिसन की सम्मानित डिग्री प्राप्त थी। वे मद्यपान परिमितता तथा स्वास्थ्य पर भाषण सम्पूर्ण देश में देते रहे। अपनी यात्रा में वे जर्मन प्रणाली से परिचित हुये। उन्होंने एक अपनी प्रणाली बनायी। उन्होंने अपना नार्मल इन्सटीट्यूट आफ फिजिकल एज्युकेशन स्थापित किया, यह प्रथम महिला शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण संस्था थी। १८६४ ई० में लेबिसगटन मासाच्युसेट्स में उन्होंने लड़कियों के लिये स्कूल खोला। उन्होंने 'वीमेन्स क्रूसेड' स्थापित किया जो वीमेन्स क्रिश्चियन टेम्परेन्स यूनियन में विकसित हुआ। उन्होंने शारीरिक शिक्षा को लोकप्रिय करने की चेष्टा की तथा इसे स्कूलों में स्थापित करने के लिये आग्रह किया।

विलियम मैकमूलर प्रथम व्यक्ति थे जिन्हों ने पेस्टालोजी प्रणाली से अमेरिका को परिचित कराया। जब उन्हों ने पेस्टालोजी का स्कूल देखा तो उन्हें नये संसार में आने का निमन्त्रण दिया किन्तु उन्होने अपनी आयु तथा भाषा की कठिनाई के कारण उसे अस्वीकार कर दिया। उन्होंने जोज़फ नीफ (१७७०-१८५३ ई०) की सिफारिश की तथा वे फिलाडेलफिया के समीप पेस्टालोजी प्रणाली के स्कूल स्थापित करने के लिये नियुक्त हुये।

नीफ का जन्म अलसासे में १७७० ई० में हुआ था। उन्होंने नेपोलियन की सेना में सेवा भी की थी। सिर में चोट लग जाने के कारण वे वर्गडोफ के पेस्टालोजी के स्कूल में संगीत, फ्रेन्च तथा जिमनास्टिक की शिक्षा देने लगे। वे पोस्टालोजी प्रणाली के एक उत्तम शिष्य थे। उनके पेन्सलवेनिया तथा केन्टकी के स्कूल की बड़ी प्रशंसा हुयी। उनका प्रथम स्कूल फिलाडेलफिया से चार मील की दूरी पर स्कूयेलकिल झरने के समीप था।

अपनी प्रथम पुस्तक 'स्केच आफ ए प्लान एन्ड मेथड आफ एज्युकेशन' में नीफ ने जिमनास्टिक तथा मनोरंजन के महत्व का वर्णन किया था। तैरना, स्केटिंग, हाइकिंग तथा जिमनास्टिक स्टेट में विद्यार्थी भाग लेते थे। सैनिक होने के कारण लड़ाई, कुश्ती तथा सैनिक ड्रिल पर नीफ बल देते थे।

एमोस ब्रोन्सोंन आलकोट (१७९९-१८८८ ई०) ने १८०५ ई० में चेशायर स्कूल कोनेक्टिकट में शिक्षक का स्थान ग्रहण किया था। वह अत्यन्त

ही प्रगतिशील अध्यापक थे तथा पेस्टालोजी दर्शन के शिष्य थे। उनका विश्वास था कि जिमनास्टिक के द्वारा शारीरिक शक्ति का प्रशिक्षण होना चाहिये जिससे वास्तविक अभ्यास के लिये उनकी तैय्यारी होती है। आलकोट सामाजिक मनोरंजन के प्रथम प्रशंसक थे।

हेनरी बर्नार्ड जिन्होने प्रथम टीचर्स इन्सटीच्युट कोनेक्टिकट में स्थापित किया था एक परिश्रमी पेस्टालोजी प्रणाली के प्रचारक थे।

१७९८ ई० में जोसफ लान्कास्टर ने, जो एक इंगलिश स्कूल के शिक्षक थे यह आविष्कार किया कि मोनिटर्स या शिष्य सहायता के द्वारा शिक्षा का व्यय घटाया जा सकता है। उन्होंने मोनीटोरियल प्रणाली का प्रचार किया। इसके द्वारा सर्व प्रथम शिक्षक बड़े तथा बुद्धिमान लड़कों को शिक्षा दें उसके पश्चात ये ही शिष्य दस या बारह के समूह में उस शिक्षा का पुनरर्वतन करें। लन्कासास्ट्रियन प्रणाली इंगलैंड तथा अमेरिका के धमार्थ स्कूल में १८१० ई० से १८३० ई० तक लोकप्रिय थी।

लन्कास्टर प्लेग्राऊन्ड के कार्यों के मूल्य से परिचित थे। इसके द्वारा अध्ययन के पश्चात मनबहलाव, व्यर्थ भ्रमण तथा नैतिक गुणों के विकास सम्भव हैं उन्होंने १५ मिनट प्रतिदिन खेल के घंटे की तथा एक घंटे मध्याह्न में मनोरंजन की व्यवस्था की। एक मैनुअल के द्वारा यह घोषित किया गया था कि प्रत्येक स्कूल के समीप खेल का मैदान होना चाहिये। समय की बचत के लिये बालकों को स्कूल से मैदान तथा मैदान से स्कूल तक वापस जाने में मार्च करना चाहिये।

बिलेट के द्वारा पता चलता है कि बोस्टन मोनिटोरियल गर्लस स्कूल में शारीरिक शिक्षा के कार्य क्रम में कालेसथेनिक्स, कूदना, दौड़, लटकने तथा झूलने के व्यायाम तथा वज़न उठाना तथा नीचा करना था। न्यूयार्क हाई स्कूल जो निजी स्कूल मोनिटोरियल प्रणाली नीचा के अनुसार था, जिमनास्टिक कार्यक्रम का १८२७ ई० में प्रयोग किया।

यूनाइटेड स्टेट्स में राष्ट्रीयता काल (१८६१—१९०० ई०)

सिविल वार के विनाशकारी प्रभावों तथा क्लेश से गुजर कर

यूनाइटेड स्टेट्स शीघ्रता से एक राष्ट्रों के एकत्व की ओर अग्रसर हो रहा था। इस समय अमेरिकन राष्ट्रीयता का निर्माण हुआ। १८९८ ई० में स्पेन तथा अमेरिका के युद्ध में सम्पूर्ण राष्ट्र अपनी विभिन्नताओं को भूल कर एक हो गये।

राष्ट्रीयता का एक पक्ष विभिन्न कार्यों में फेडरल सरकार की बढ़ती हुयी केन्द्रित शक्ति थी। दि इन्टरस्टेट्स कामर्स एक्ट १८८७ ई० तथा १८९० ई० का शारमन ऐन्टी ट्रस्ट ऐक्ट इसके दो उदाहरण थे। राष्ट्रीयता का एक आवश्यक पक्ष था दक्षिण को यूनियन में लाना तथा युद्ध के समय की भावना को मिटा देना तथा युद्ध पश्चात बुराइयों का विरोध करना। आपस में अधिक मिलने से, व्यापार एवं यात्रा से तथा साहित्यिक लेखों से, जिसमें दक्षिण की प्रशंसा की गयी थी, इस ओर कुछ सहायता मिली।

इन सब घटनाओं का आधार विशाल आर्थिक परिवर्तन था जिसके द्वारा अमेरिकन राष्ट्रीयता के विकास में सहयोग मिला। १८६० ई० में प्रशान्त तट से सम्पूर्ण राष्ट्र को अन्तरमहाद्वीपीय रेल की लाइन से संयुक्त कर देना सर्व प्रमुख था। तकनीकी विकास जैसे टेलीग्राफ तथा टेलीफोन का प्रयोग, कृषि तथा उद्योग ने नयी समस्यायें तथा शक्ति प्रस्तुत की। मिसिसीपी के पश्चिम के विस्तृत मैदान कृषि के प्रयोग में आये तथा मशीन की शक्ति एवं उससे श्रम बचाने वाली योजनाओं का फार्मों में प्रयोग हुआ। कोयले, लोहे तथा वाष्प शक्ति के नियन्त्रण से उद्योग उन्नतिशील हुआ। इन दिनों की विशाल प्रगति से भूमि सम्बन्धी अशान्ति तथा श्रमिक असंतोष का जन्म हुआ। इनके प्रतिनिधि राजनैतिक समस्याओं पर अपना प्रभाव डालते रहे। सस्ती बिजली की शक्ति के द्वारा आराम की वस्तुओं का निर्माण हुआ जो सभी को थोड़ी कीमत पर प्राप्त थी। इसके कारण शिल्पकारों तथा उत्पादन करने वालों को एक प्रकार की शक्ति मिली। बड़े कारपोरेशन बने, व्यापार में अनुचित तरीकों का प्रयोग हुआ। अधिक श्रमिकों की मांग हुयी। नगर अधिकता से बढ़ने लगे तथा इसकी संलग्न समस्यायें जैसे राजनैतिक भ्रष्टाचार, गन्दे निम्न वर्गों की बस्ती, संगठित कुकर्म, निर्धनता, वयस्कों की कर्त्तव्यहीनता, बीमारी तथा संक्रामक रोगों की भी वृद्धि हुयी। स्थान की कमी से बालकों को चलते हुये व्यस्त मार्ग पर खेलना पड़ता था।

जब ये बड़े विचार तथा आन्दोलन प्रकाश में आ रहे थे तब शिक्षा में भी बड़ी उन्नति हुयी। शिक्षा दर्शन विकसित हो रहे थे। जर्मनी के कान्ट तथा शेलिंग एवं इंगलैंड के कारलायल तथा कोलरिज आदि से प्रभावित होकर शुल्फ वाल्डू इमर्सन के द्वारा 'ट्रान्ससेनडेन्टलिजम' अर्थात 'इन्द्रियागमवादि' का प्रचार हुआ। इसके अनुसार वास्तविक ज्ञान अनुभव की सीमा के बाद व्यक्ति को चैतन्यता से प्राप्त होता है। अतएव इसमें विश्वास करने वाले अनात्मवाद, अद्यौगवाद तथा मनुष्य के द्वारा मनुष्य को सताने वालों को अनुचित समझते थे अतः ये अनेक सामाजिक तथा राजनैतिक सुधार आन्दोलन के सहभागी थे जिनमें दासत्व प्रथा का विरोध, महिलाओं का अधिकार, मद्यपान परिमितता बन्दीगृह सुधार, तरुण श्रम तथा शाकाहार का प्रचलन आदि था। ये व्यक्तिगत मनुष्य के महत्व तथा मूल्य पर बल देते थे तथा उसके आत्मिक प्रकृति, आत्म-निर्भरता तथा आत्म सुधार की अद्भुत विशेषता को अत्यन्तस राहते थे।

युद्ध के पश्चात इस मत का स्थान 'आइडीयलिस्टिक फिलासफी' मन तथा विचार के दर्शन ने प्राप्त किया।

उत्तम मनुष्यत्व, दो धारी शैक्षणिक दर्शन था। इसमें मन तथा विचार का दर्शन, मानसिक शक्ति मनोविज्ञान से संयुक्त था। इनका विचार था कि मनुष्य को निश्चित गुण या विचार, नैतिक नियम तथा धार्मिक विश्वास उसको पशु तथा स्थूल संसार से पृथक करते हैं। उनके अनुसार शिक्षा मानसिक शक्तियों पर नियन्त्रण तथा नैतिक, आत्मिक तथा सौन्दर्य ज्ञान शक्तियों को विकसित करना है। इस प्रकार की शिक्षा प्राचीन भाषा, साहित्य, गणित, दर्शन, धर्म तथा सूक्ष्म कला से प्राप्त हो सकती है।

सिविल वार के पूर्व शिक्षा प्रगतिशील औद्योगिक समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति अधिक विस्तृत तथा अभ्यास कार्यक्रम के द्वारा करती थी एवं दोनों लोगों तथा सम्पूर्ण वर्गों को निशुल्क आधार पर सम्भावित करती थी।

शिक्षा अनिवार्य कर दी गयी। यह इस विश्वास से किया गया कि प्रत्येक बालक को शिक्षित होने का अधिकार है। इस कार्य के लिये उत्तम शिक्षकों का अभाव था। अधिकतर शिक्षक हाई स्कूल से अधिक शिक्षित नहीं थे।

सह शिक्षा प्रगति कर रही थी। इस शताब्दी के अन्त में प्रत्येक स्टेट ने किसी प्रकार की उच्च शिक्षा जिसमें यूनिवर्सिटी, नार्मल स्कूल या कृषि कालेज था, व्यवस्था कर ली थी। चर्च के द्वारा स्थापित स्कूल भी प्रायः प्रत्येक स्टेट में थे। प्रायः वर्त्तमान समय के ग्यारह मुख्य महिला कालेजों की नींव इसी समय पड़ी थी।

पेस्टालोजी की प्रणाली ने गहरा प्रभाव कर दिया था। फ्रोयबेल तथा स्पेन्सर प्रणाली से एलीमेन्ट्री स्कूलों को विशेष लाभ हुआ।

चार्ल्स डार्विन आदि के प्रभाव से नेचुरल साइन्सेस के अध्ययन की ओर ध्यान आर्कषित हुआ।

उच्च माध्यमिक कालेज तथा यूनिवर्सिटी शिक्षा की स्वतंत्र भावना थी। १८९३ ई० में नेशनल एज्युकेशन एसोशियेशन ने यह घोषित किया कि कालेज के प्रवेश के लिये शिक्षा इस लिये आवश्यक है क्योंकि वह जीवन की तैयारी करती है।

उपनिवेश के प्रारम्भिक दिनों के परिश्रम का अब अन्त हो गया था। अमेरिकन जनता अब एक सरल विश्राम पूर्ण जीवन व्यतीत कर रही थी। चिकित्सकों ने घोषित किया कि सिविल वार में १८-४५ वर्ष के व्यक्ति अधिकतर युद्ध के लिये अस्वीकृत हुये क्योंकि उनमें शारीरिक दोष थे। इस के निवारण का उपाय स्कूल तथा घरों में व्यायाम का विधिवत नियोजन था।

अमेरिकन स्कूलों में विदेशी जिमनास्टिक की प्रथा चल चुकी थी तथा अपना स्थान भी दृढ़ कर चुकी थी। स्पोर्ट्स तथा गेम्स की प्रथा थी किन्तु इन पर विशेष बल नहीं दिया जाता था। कुछ प्रौढ़ इस ओर ध्यान देने लगे थे। नृत्य भी कहीं कहीं लोक प्रिय था।

कैथरीन बीचर के स्वतंत्र व्यायाम ने एक प्रकार के नृत्य का रूप धारण कर लिया था जिसका स्थान आगे चल के कालेस्थेनिक्स ने ले लिया। नृत्य के चार प्रकार प्रमुख थे। (१) बालरूम डान्सः—इसकी प्रथा स्कूलों में नहीं थी। (२) एस्थेटिक डान्सः— यह एक शारीरिक शिक्षा का अंग था। यह अत्यन्त

लोक प्रिय था विशेष कर लड़कियों में। (३) फोक डान्स:—उपनिवेशी अपने अपने स्थानों से अपना लोक नृत्य लाये थे। उसका स्कूलो में प्रयोग हुआ। (४) 'स्कवायर डान्स:— दत इंगलैंड से आया था। यह अमेरीकी नृत्य से संयुक्त होकर अपना रूप परिवर्तित कर चुका था। यह नृत्य मनोरंजन के लिए था एवं स्कूलों में इसका कोई स्थान नहीं था।

अमेरिका के इस काल के शारीरिक शिक्षा की विशेषता उसकी विभिन्न प्रणालियों या अभ्यासों में है। यह विदेश तथा स्थानीय स्रोतों से प्राप्त स्वास्थ्य के उद्देश्यों को दृष्टि में रखते हुये प्रगतिशील था।

उन्नीसवीं शताब्दी में अमेरिका में किसी प्रकार के व्यायाम का कमरा नहीं था। शिक्षकों को शारीरिक शिक्षा देने की तैय्यारी नहीं थी। कार्यक्रम संकीर्ण था।

जर्मन जिमनास्टिक प्रणाली ने अमेरिका में एक दृढ़ स्थान कर लिया था। जेसे जैसे उपनिवेशी आते रहे इसकी दृढ़ता बढ़ती गयी। बहुत से उन अमेरिकनस ने जो यूरोप के दूसरे देशों से आये थे जर्मन जिमनास्टिक में जर्मन राष्ट्रीयता के भाव को स्वीकार करने में असमर्थ रहे। जर्मन जिमनास्टिक में पांच प्रकार की क्रियायें थीं जो जहान से प्राप्त हुयी थी। युद्ध कौशल तथा मार्चिंग, स्वतंत्र व्यायाम, डान्स स्टेप्स, विशेष कर लड़कियों के लिये, आपरेटस पर कार्य तथा गेम्स एवं प्ले जिसे गट्स मथ्स ने विकसित किया था।

पेर हेनरिक लिंग की प्रणाली ने अमेरिका में जर्मन प्रणाली को चुनौती दी। दोनों रीतियों में घोर विरोध था अमर्हस्ट कालेज के शारीरिक शिक्षा निर्देशक डा० एडवर्ड हिचकौक ने लिंग प्रणाली को प्रधानता दी। वाई० एम० सी० ए० के डा० लूथर एच ग्युलिक ने दोनों प्रणालियों की अलोचना की किन्तु स्कूल के बालकों के लिये केवल लिंग प्रणाली के अनुसार कार्य क्रम निर्धारित करने की अनुमति दी।

जर्मन लोगों का कहना था कि स्वीडिश प्रणाली अत्यन्त औपचारिक, अरूचिकर, मनोरंजन मूल्यों से रहित तथा सामाजिक एवं नैतिक प्रशिक्षण में अत्यन्त निर्बल थी। स्वीडिश सहायकों का विचार था कि जर्मन प्रणाली वैज्ञा-

निक आधार रहित, संगीत तथा ताल से अत्याधिक लिप्त, मनोरंजन पर अधिक बल तथा शैक्षणिक परिणाम असंतोषजनक एवं व्यक्तिगत तथा विशेष निर्बलताओं के निवारण के अयोग्य है। उस समय की स्वीडिश प्रणाली की विशेषताएं थीं। दैनिक पाठ्य योजना, दैनिक तथा साप्ताहिक व्यायाम की प्रगति, आदेशों के शब्दों का प्रयोग, सही शारीरिक आसन का रखना तथा चिकित्सा एवं सुधारात्मक व्यायाम। बीसवीं शताब्दी के स्कूल शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में सुधारात्मक जिमनास्टिक का महत्वपूर्ण स्थान था। यह स्वीडिश प्रणाली से ही प्राप्त था। स्वीडिश प्रणाली का आपरेटस कार्य जर्मन प्रणाली से अत्यन्त भिन्न है।

उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भ में फिजिकल कल्चर की डेलसारटे प्रणाली ने अत्यन्त ख्याति प्राप्त की। प्रणाली का नाम उसके संस्थापक फ्रान्कोइस डेलसारटे (१८११—१८७१ ई०) के कारण पड़ा। यह एक वाणी प्रशिक्षण देने वाले एवं ड्रामा के शिक्षक थे। शरीर के भाव शरीर के व्यायाम से उत्तम रीति से सिखाये जा सकते हैं, इस विचार से उन्होंने अपने कार्य के लिये एक प्रणाली निर्मित की। उनका विचार जिमनास्टिक प्रणाली निर्माण करने का कभी भी नहीं था। स्कूलों में इसकी ख्याति बढ़ गयी एवं इसने शारीरिक शिक्षा का स्थान ग्रहण किया। इसकी ख्याति अल्प समय के लिए ही थी।

सिविल वार के पश्चात के काल में कुछ नये खेलों का आविष्कार हुआ तथा पुराने खेलों में परिवर्तन हुआ।

बेसबाल सिविल वार के समय सेना में प्रसिद्ध था। युद्ध के पश्चात शीघ्र ही यह राष्ट्रीय खेल बन गया। क्रिकेट भी ब्रिटिश उपनिवेशियों में खेला जाता था किन्तु बेसबाल की लोकप्रियता ने क्रिकेट के नाम को भी अमेरिका से मिटा दिया।

नेशनल ऐसोसियेशन आफ बेसबाल प्लेयर्स की प्रथम कान्फ्रेन्स १८६७ ई० में हुई। इसमें व्यवसायिकता का आरम्भ हुआ किन्तु साथ ही इतना जुआ, मदिरा तथा बुराइयां इससे सम्बन्धित हो गयी कि आरम्भ के साथ ही इसके अन्त की सम्भावना हो गयी। इसके दोषों को दूर करने का प्रयास होता रहा।

बासकेटबाल का जन्म १८९१ ई० में अमेरिका में हुआ था। इसके जन्म दाता डा० जेम्स ए नायस्मिथ थे। यह अत्यन्त लोक प्रिय हुआ।

साईकिल का आविष्कार १८१६ ई० में जर्मनी में हुआ था। महिलाओं ने १८९० ई० में इस स्पोर्ट में रुचि दिखलायी। इस स्पोर्ट्स के कारण उन्हें अपने वस्त्र में परिवर्तन करना पड़ा जिसकी कड़ी अलोचना हुयी किन्तु उस पर ध्यान नहीं दिया गया। प्रत्येक आयु के लोग इसका प्रयोग करने लगे। १९०० ई० के आस पास यह एक फैशन हो गया। बिजली की गाड़ी के आविष्कार से इसकी रुचि में शिथिलता आ गयी। जब तक इसमें रुचि रही यह जनता की एक बड़ी संख्या के लिये एक शारीरिक व्यायाम का उत्तभ साधन रही।

नेशनल बोलिंग लीग की स्थापना १८७५ ई० में हुयी। यह उपनिवेश काल से ही लोक प्रिय रहा तथा कुछ ही दिनों में एक संगठित खेल हो गया।

फुटबाल १८७३ ई० से कालेज से सम्बन्धित सर्वप्रिय खेल रहा है। समाज में इसकी कड़ी आलोचना हुयी। आरम्भ से ही यह खेल अत्यन्त ही भयानक तथा अनियमित था। १८७४ ई० में इसके नियम संशोधित हुये।

फ्रान्सिस लाइबर के तैरने के स्कूल से तैरने वाले स्नान तथा तैरने के स्थान लोक प्रिय हुये। इसमें पुरुषों तथा स्त्रियों के लिये भिन्न भिन्न स्थान थे। १८६६ ई० में प्रथम 'पूल' बोस्टन में निर्मित हुआ था। १८९६ ई० में जर्मनी से यह पता चला कि इनके द्वारा संक्रामक रोग हो सकते हैं। इसके पश्चात म्युनिसिपल पूल निर्मित किये गये। पहले यह केवल ग्रीष्म काल में ही प्रयुक्त होते थे किन्तु मिलवाडकी का पूल सम्पूर्ण वर्ष प्रयोग होता था तथा उसमें गर्म पानी तथा झरना भी आयोजित था।

टेनिस अमेरिका में १८७४ ई० में आया। लड़कियां भी यह खेल खेलती थीं। सर्वप्रथम यह एक हास्यप्रद वस्तु हुयी तथा लड़कियों के योग्य ही समझी गयी। १८८१ ई० में यूनाइटेड स्टेट्स लान टेनिस एसोसियेशन की स्थापना हुयी।

स्काटलैंड के उपनिवेशी १८५३ ई० में बोस्टन में "कालीडोनियन गेम्स" लाये। यहां से यह सर्वत्र फैल गया। १८७० ई० तक यह अत्यन्त लोक प्रिय हुआ। वर्तमान ट्रैक तथा फील्ड का यह प्रथम रूप था।

बैडमिन्टन १८७८ ई० में प्रथम बार खेला गया।

१८८७ ई० में साफ्टबाल का आविष्कार फारागट क्लब शिकागो में हुआ। वालीबाल का आविष्कार विलियम मोर्गन के द्वारा होलीयोक मासाच्यु-सेट्स में हुआ। प्रथम सार्वजनिक गोल्फ कोर्स १८९५ ई० के आस पास बोस्टन, इण्डियानापोलिस तथा न्युयार्क में बना था।

१८९० ई० में महिला कालेजों में विभिन्न प्रकार के स्पोर्ट्स होने लगे थे।

सिविल वार के समय अधिक संख्या में लोगों की शारीरिक क्षमता स्तर से नीची सिद्ध हुयी अतएव स्कूलों तथा कालेजों में शारीरिक शिक्षा का प्रचार हुआ, साथ ही इसके प्रोत्साहन के लिये व्यवसायिक तथा अव्यवसायिक खेलने वालों की लीग, एथलेटिक क्लब, वाई० एम० सी० ए० आदि संस्थाओं ने सहयोग दिया।

१८७९ ई० में खेल की प्रगति ऐसी थी जिसके लिये उचित स्तर, नियन्त्रण तथा सम्पूर्ण राष्ट्र में प्रचार की आवश्यकता हुयी। इस हेतु नेशनल ऐसोसियेशन आफ अमेचर एथलीट्स आफ अमेरिका' संगठित हुआ। इसका ध्येय व्यवसायिक दोषों का निरोध, एथलीट्स को सभ्य स्तर पर रखना, उचित स्पोर्ट्स का प्रचार, नियम निर्धारित करना एवं भलि भांति स्पोर्ट्स प्रतियोगिताओं का संगठन तथा संचालन करना था। इसी प्रकार की अनेक संस्थायें स्थापित हुयीं।

१८७५ ई०के आस पास इन्टर कालेज स्पोर्ट्स एसोसियेशन्स की विभिन्न खेलों के लिये स्थापना हुयी।

इसी काल में शारीरिक शिक्षा शिक्षक प्रशिक्षण की स्थापना हुयी।

प्रशिक्षण केन्द्र किसी कालेज का एक भाग होता या स्वतंत्र प्रशिक्षण कालेज भी होते थे।

डीओ लिविस ने अपना नार्मल स्कूल १८६१ई०में स्थापित किया था यहां वे अपनी तथा स्वीडिश प्रणाली का प्रशिक्षण देते थे। दस सप्ताह का कोर्स होता था तथा वर्ष में दो बार आयोजित होता था। कुछ ही वर्षों में अनेक व्यक्तिगत तथा संस्थाओं से सम्बन्धित नार्मल स्कूल स्थापित किये गये। अमेरिकन जिमनास्टिक यूनियन का नार्मल स्कूल १८६६ इ० में तथा वाई० एम० सी० ए० कालेज शिकागो में १८९१ ई० सार्जेन्ट स्कूल आफ फिजिकल एज्युकेशन १८८१ ई०, बोस्टन नार्मल स्कूल १८८९ ई०,दि पोसेनीसेक, स्कूल आफ फिजिकल एज्युकेशन १८९० ई० तथा सवेज स्कूल आफ फिजिकल एज्युकेशन १८९८ ई० में स्थापित हुये थे। इन स्कूलों में साधारणत: हाई स्कूल पास प्रवेश लेते थे, चरित्र तथा पारिवारिक दशा पर ध्यान दिया जाता, तथा शारीरिक परीक्षा होती थी।

चिकित्सकों के द्वारा जीव विज्ञान की शिक्षा दी जाती थी अतएव विद्यार्थी को चिकित्सालय या दवाखानों में जाने की आज्ञा बिना किसी बाधा के प्राप्त होती थी। इस कारण सुधारात्मक व्यायाम, शारीरिक दोषों के बाह्य लक्षणों को पहचानने तथा गति के सिद्धान्त आदि कोर्स प्रमुखता प्राप्त करते थे। प्रत्येक स्कूल में संगीत की व्यवस्था थी जो व्यायाम के साथ दिया जाता था। व्यायाम प्रगति, वाणी प्रशिक्षण, मार्चिंग, आपरेट्स कार्य, नृत्य, सुधारात्मक व्यायाम, विभिन्न प्रकार के स्पोर्ट्स तथा स्कूलों में शिक्षण अभ्यास की शिक्षा की व्यवस्था थी। एक वर्ष के कोर्स के लिये सर्टीफिकेट तथा दो वर्ष के कोर्स के लिये डिप्लोमा दिया जाता था। कुछ स्कूल ग्रीष्म काल में कोर्स दिया करते थे।

शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम स्टेट के द्वारा तथा संस्थाओं के द्वारा दिए जाते थे। १८९० ई० में यहींगर तथा उनकी पत्नी ने स्टेट नार्मल स्कूल वेस्ट चेस्टर पेनसलवेनिया में व्यवसायिक कार्यक्रम स्थापित किया।

विलबर पी बोबेन ने १८९३ ई० में मिशिगन स्टेट में एक व्यवसायिक कोर्स स्थापित किया। १८९५ ई० में स्पोर्ट्स शिक्षा भी संयुक्त कर ली गयी

थी । डा० ब्राउन कदाचित उन प्रथम व्यक्तियों में से थे जिन्होंने सेवा में रहते हुये शिक्षकों के लिये भी विस्तृत प्रशिक्षण सेवा प्रदान की । १८९६ ई० में यूनिवर्सिटी आफ मिशिगन में भी व्यवसायिक प्रशिक्षण की योजना थी ।

१८९२ ई० में यह कोर्स समाप्त कर दिया गया । १८९७ ई० में कैलीफोर्निया, इनडियाना तथा नेबरास्का यूनिवर्सिटियों ने व्यवसायिक कोर्स आरम्भ किया । १८९८ ई० में इलिनोईस यूनिवर्सिटी ने व्यवसायिक कोर्स आरम्भ किया । १८९९ ई० में विसकोसिन यूनिवर्सिटी ने सह व्यवसायिक शिक्षा आरम्भ की । कानून के द्वारा शारीरिक शिक्षा अनिवार्य कर देने पर इन संस्थाओं ने इस व्यवसायिक कोर्स की ओर विशेष ध्यान दिया । १९०० ई० में शिक्षा विभाग दूसरी संस्थाओं से पृथक कर दिया गया । इस विभाजन से शारीरिक शिक्षा को लाभ हुआ ।

सिविल वार के पश्चात बोस्टन में प्लेग्राऊन्ड आन्दोलन आरम्भ किया गया । बोस्टन में फर्स्ट चर्च ने १८६८ ई० में खुले में खेलने का मैदान निर्मित किया । १८६८ ई० ब्रुकलाइन नगर, मासाच्युसेटस ने सार्वजनिक प्लेग्राऊन्ड के लिये जमीन खरीदी । वाशिंगटन पार्क शिकागो के चारागाह टीम के खेलों के लिये १८७६ ई० में तथा टेनिस के लिये १८८६ ई० में प्लेग्राऊन्ड खोले गये ।

लेखकों का विचार है कि अमेरिका के वर्तमान प्लेग्राऊन्ड आदोलन का आरम्भ दो बालू के ढेर से हुआ । एक पारमेन्टर स्ट्रीट चैपिल तथा वेस्ट एण्ड नर्सरी बोस्टन में रखा हुआ था । यह मासाच्युसेट हाइजीन एण्ड एमरजेन्सी एसोसियेशन के द्वारा १८८५ ई० के ग्रीष्म काल में रखा गया था । इसका आदेश डा० मेरी जार्कजेवस्का के द्वारा हुआ जिन्होंने बर्लिन के सार्वजनिक पार्क में यह देखा था । बालू के बगीचों 'सैन्ड गार्डन' की शीघ्र उन्नति हुयी । १८८७ ई० में सैन्ड गार्डन्स स्कूल के अन्दर स्थापित किये गये किन्तु उनका इससे कोई विशेष सम्बन्ध नहीं था । वे केवल स्थान देते थे ।

१८८९ ई० में प्रसिद्ध चार्ल सवैन्क के खुले में जिमनेजियम का निर्माण किया गया । यह चार्लस नदी पर स्थित था । यह प्रथम खेल क्षेत्र था जिसे

निर्मित एवं सुसज्जित किया गया। क्लास प्रत्येक दिन दो बार हुआ करता था तथा सम्पूर्ण दिन व्यक्तिगत शिक्षा दी जाती थी।

एमरजेन्सी एण्ड हाइजीन एसोसियेशन का कार्य १९०१ ई० में सफलता पूर्वक समाप्त हुआ जब बोस्टन स्कूल ने अपना सैन्ड गार्डन अपने नियन्त्रण में स्थापित किया। स्कूल अधिकारियों को यह ज्ञात हो गया था कि खेल शिक्षा का एक महत्वपूर्ण अंग है।

फिलाडेलफिया ने बोस्टन के अनुभव से लाभ उठाकर दो ग्रीष्मकालीन प्लेग्राऊन्ड आरम्भ किये। दो वर्ष पश्चात जनता की मांग के कारण बोर्ड आफ एज्युकेशन ने चार पृथक स्थान स्कूल की सीमा में स्वीकार किये जिसका आर्थिक संचालन सिटी काउंसिल के हाथ में था। न्यूयार्क में प्रथम प्लेग्राउन्ड १८९१ ई० में स्थापित किया गया। आउट डोर रिक्रियेशन लीग ने प्लेग्राउन्ड आंदोलन में सहयोग दिया।

शिकागो में प्रथम प्लेग्राउन्ड जेन आडम्स हलहाऊस में १८९४ ई० में स्थापित हुआ। १९०० ई० के पूर्व प्रोविडेन्स, पिट्सबर्ग, ब्रुकलियन, बलटिमोर, मिलावाउकी, कीलवलैंड, मिनीयापोलिस तथा डेनवर नगरों में प्लेग्राउन्ड स्थापित किये गये।

इन प्रारम्भिक प्लेग्राउन्डों की विशेषता यह थी कि वे बालकों के लिये थे, ग्रीष्म काल के अवकाश में प्रयोग में आते थे, खुले स्थान के लिये ही साधन उपयुक्त थे, शहर की घनी बस्ती में यह स्थित थे, आर्थिक सहायता धमार्थ संस्थाओं से प्राप्त होती थी तथा कुछ समय के पश्चात म्युनिसिपल सहायता प्राप्त हुई।

प्ले ग्रान्उड की प्रगति की दूसरी सीढ़ी 'माडेल प्लेग्राउन्ड' था जिनमें हलहाउस प्रथम था।

समाज सेवक तथा बुद्धिमान शिक्षक यह समझने लगे थे कि खेल में शैक्षणिक मूल्य है तथा यह मनोरंजन के साधन भी हैं।

प्ले ग्राऊन्ड के स्थापित होने के कुछ और विशेष कारण थे जैसे, प्लेग्राउड के कारण छोटे बालक गन्दगी से दूर तथा मार्ग के खतरे से सुरक्षित रह सकते थे। धीरे धीरे निरीक्षित खेलों का नैतिक मूल्य प्रकाश में आया। सर्व प्रमुख कारण यह था कि खेल बालकों का जन्मसिद्ध अधिकार था जिसे आयोजित करना प्रौढ़ों का परम कर्त्तव्य था।

इस काल के अन्त में ग्रीष्म काल के कैम्प का भी आरम्भ हुआ। प्रथम तीन व्यक्ति जो इसके संस्थापक थे उनमें एक शिक्षक एक चिकित्सक तथा एक पुरोहित था। अत: शिक्षा, स्वास्थ्य तथा आत्मिक विकास जो कैम्पिग की महत्वपूर्ण देन है उनकी मान्यता आरम्भ से ही रही। फ्रेड्रिक विलियम गन्न संगठित कैम्पिग के निर्माता माने जाते हैं। श्रीमती तथा श्री गन्न जो वाशिंगटन के लड़कों के गून्नरी स्कूल के संस्थापक तथा प्रधानाचार्य के सम्पूर्ण स्कूल को सप्ताह के कैम्पिग के लिये लौंग आइलैंड साउन्ड ले गये थे। कैम्पिग लड़कों के लिये स्कूल कार्यक्रम का एक भाग था।

१८८१ ई० में प्रथम संगठित कैम्प कोकोरूआ न्यू हैम्पशायर में अर्नेस्ट बाख के द्वारा स्थापित किया गया। समय के अनुसार बाख प्रथम न भी कहे जा सकते हों तथापि सावधानी से कैम्प आमंत्रित तथा संगठित करने का श्रेय निश्चय उन्हीं को जाता है। बालकों को उत्तरदायित्व समझने तथा कैम्प के कार्यों में भाग लेने के लिये उत्साहित किया जाता था। कैम्प कोकोरूआ १८८९ ई० तक चलता रहा।

सूम्नर एफ हुले भी कैम्पिग से सम्बन्धित एक मुख्य व्यक्ति हैं। ये वाई० एम०सी० ए० के कुछ लड़कों को एक या दो सप्ताह के कैम्प के लिये प्रत्येक ग्रीष्म काल में (१८८५-१८९१ ई०) तक ले जाया करते थे। अन्त में एक स्थायी कैम्प लेक चाम्पलेन में स्थापित किया। १९०३ ई० में वाई० एम० सी० ए० स्टेट ने कैम्प के उत्तरदायित्व को अपने हाथ में लिया तथा उसके संस्थापक की मृत्यु के पश्चात उसका नाम कैम्प डुले रखा। यह सब से प्राचीन कैम्प है जो आज भी वर्त्तमान है। डुले की भावना ने वाई० एम० सी० ए० को कैम्पिग आन्दोलन के लिये प्रेरित किया जो सारे संसार में विस्तृत है।

कदाचित इस काल में सर्वप्रमुख विकास जो प्रणाली में हुआ वहां 'टेस्ट एण्ड मेजरमेन्ट' परीक्षा तथा नाप में था। 'एन्थ्रपोमेट्रिक मेज़रमेंन्ट' तथा 'स्ट्रेंग्थ टेसटिंग' दो क्षेत्र थे जिनमें विशेष कार्य हुआ। अर्महस्ट कालेज के डा० हिचकोक प्रथम व्यक्ति थे जिन्हों ने 'एन्थ्रोपोमेट्रिक' नाप लिया। इन्होंने आयु, वजन, ऊंचाई, उंगलियों की पहुंच, सीने की चौड़ाई, फेफड़ों का फैलाव तथा प्रत्येक विद्यार्थी की शक्ति का पूरा रेकार्ड रखा। यह उस के कालेज के सम्पूर्ण जीवन में पांच बार किया जाता था। शक्ति का नाप पुल अप की संख्या से किया जाता था। यह सम्भव है कि हिचकोक इस कार्य में इंगलैंड के आरचीबौक्ड मैकलारन से प्रभावित हुये थे।

डा० सार्जेन्ट जब हावर्ड में थे तो उन्होंने मानव शरीर में चालीस नाप का क्रम तैय्यार किया था। ये भी मैकलारेन से कदाचित प्रभावित थे। डा० सार्जेन्ट ने इसे अत्यन्त प्रोत्साहित किया तथा लोकप्रिय करने की चेष्टा की। वह एक सुविकसित तथा सुडौल व्यक्ति के अंगों की अनुकुलता का निर्णय करना चाहते थे। उन्होने टेस्टिंग तथा मेजरमेन्ट पर एक मैनुअल १८८७ ई० में लिखा। १८८५-१९०० ई० तक का समय एन्थ्रोपोमेट्रिक नाप का स्वर्ण काल कहा जा सकता है।

अमेरिकन ऐसोसियेशन फार हेल्थ, फिजिकल एज्युकेशन एण्ड रिक्रियेशन की स्थापना १८८५ ई० में डा० डब्लू जी आन्डर्सन के द्वारा हुई। यह एक प्रमुख व्यक्तियों की सभा थी। अपने दसवें वार्षिक अधिवेशन १८८५ ई० में बोस्टन को हेड क्वार्टर बनाया तथा अपने कार्यों में नार्थ अमेरिकन टर्नर बन्ड के अनुसार संशोधन करने का विचार किया। यह ऐसोसियेशन भविष्य में अत्यन्त ही प्रभावशाली सिद्ध होने वाली थी।

प्रथम शारीरिक शिक्षा कान्फ्रेन्स १८८९ ई० में बुलायी गयी। फ्रान्स के बारोन पीयरे डे कूर्बेटिन भी यहां उपस्थित थे। इसी समय उन्होंने ओलम्पिक खेलों के पुनरुत्थान के विषय निश्चित किये। अनेक दूसरे विख्यात व्यक्तियों ने इस कान्फ्रेन्स में भाग लिया। प्राय: दो हजार व्यक्ति कान्फ्रेन्स में उपस्थित थे। यह शारीरिक शिक्षा की उन्नति की लिये एक महत्वपूर्ण घटना हुयी।

इस व्यवसाय में कुछ ऐसे भी व्यक्ति थे जिन के कार्यों के कारण शारीरिक शिक्षा की दृढ़ नीव पड़ी।

एवर्ड हिचकोक (१८२८-१९११ ई०) एमर्हस्ट कालेज के ग्रेज्युयेट थे। इनके पिता वहीं प्रोफेसर थे। १८५३ ई० में हार्वर्ड युनिवर्सिटी से इन्होंने मेडिकल डिग्री प्राप्त की। १८६१ इ० में इन्हें एमहर्स्ट कालेज में हाइजीन तथा फीजिकल एज्युकेशन के प्रोफेसर का स्थान मिला। अमेरीका के इस प्रथम शारीरिक शिक्षा विभाग के एक लम्बी अवधि तक ये निर्देशक रहे तथा अपने परिश्रम से एक ऐसी प्रथा स्थापित की जो भविष्य में एक आदर्श उदाहरण बन गयी।

एडवर्ड हिचकोक अमेरीकन एसोसियेशन फार एडवान्समेन्ट आफ फिजिकल एज्युकेशन तथा सोसायटी आफ कालेज जिमनेजियम डाइरेक्टर्स दोनो संस्थाओं के प्रथम प्रेसिडेन्ट थे। इन्होंने सर्व प्रथम 'आन्थ्रोपोमेट्रिक' अध्ययन अमेरीका में आरम्भ किया था। इनकी विशेषता यह थी कि वह प्रत्येक कार्य का वैज्ञानिक आधार खोजते थे।

एमी मोरिस होम्स (१८४९-१९३३ ई०) यद्यपि शारीरिक शिक्षा में प्रशिक्षित नहीं थी तथापि एक प्रमुख महिला नेता थी। वसालबोरो मेन में इनका जन्म हुआ था, कुछ दिनों के पश्चात यह एक नामर्ल स्कूल की प्रधानाचार्य नियुक्त हुयीं। १० वर्ष के शिक्षा कार्य के पश्चात वह बोस्टन में श्रीमती हेमेनवे की सेक्रेटरी नियुक्त हुयी। दोनों ने मिल कर संगठन किया, तथा कुमारी होम्स ने बोस्टन नार्मल स्कूल आफ 'हाउस होल्ड आर्टस' का निर्देशन किया। दो वर्ष के पश्चात मासाच्युसेट्स के स्टेट ने इसे ले लिया यह फार्मिगहम स्टेट नार्मल स्कूल का डिपर्टमेन्ट आफ डोमेस्टिक साईन्स बन गया। यह अपने प्रकार के सर्व प्रथम विभागों में से एक था। दो वर्ष पश्चात जब श्रीमती हेमेनवे ने बोस्टन स्कूल की स्थापना की तब उन्होंने कुमारी होम्स को स्कूल का निर्देशक बनाया। कुमारी हेमनवे के उत्तम निर्देशन तथा उच्च शैक्षणिक दर्शन के कारण यह स्कूल महिला प्रशिक्षण का नेतृत्व करने लगा। इन्हीं के प्रबन्ध से स्कूल ने कालेज का स्तर प्राप्त किया एवं १९०९ ई० में वेलजली कालेज का हाइजीन एण्ड फिजीकल एज्युकेशन का विभाग बन गया। १९१८ ई० में ७० वर्ष की आयु में उन्होंने ऐमेरिट्स प्रोफेसर की पदवी प्राप्त

की। इसी वर्ष, सम्मान की मास्टर्स डिग्री इन्हें दी गयी तथा १९३० ई० में इसी प्रकार की डाक्टर की डिग्री भी दी गयी। इन सब विषयों में यह उपाधियां प्राप्त करने वाली यह प्रथम महिला थीं। यह एक अति प्रभावशाली, असाधारण योग्यता तथा आद्योपान्त कार्य करने वाली अदभुत महिला थीं।

डड्ली ए सर्जेन्ट (१८४९—१९२४ ई०) ने अपनी आत्मकथा में अपने जीवन का सविस्तार वर्णन किया है। उनका जन्म बेलफास्ट मेन में हुआ था। हिंगहाम, मासाच्युसेटल में रहते हुये इन्होंने शारीरिक शिक्षा में रुचि प्राप्त की। लकड़ी काट कर अपनी जीविका निर्वाह करते थे। १५ वर्ष की आयु में वह एनाटमी फिजियालोजी तथा हाइजीन का अध्ययन कर रहे थे। अपनी जीविका निर्वाह के साथ वह अपनी बनायी हुयी जिमनास्टिक व्यायाम किया करते थे। मेन में एक जिमनास्टिक प्रदर्शनी देखने के पश्चात उनकी रुचि शारीरिक शिक्षा में बढ़ी। उन्होंने अपने मित्रों के साथ मिल कर एक क्लब स्थापित किया तथा अपने चाचा के खलिहान को जिमनेजियम के रूप में प्रयोग किया। जिमनास्टिक में वह अत्यन्त प्रवीण हो गए उन्होंने जिमनास्टिक में कुछ प्रदर्शन करने के लिये सर्कस की सेवा ग्रहण की। २० वर्ष की आयु में वे बावडोइन कालेज के जिमनास्टिक निर्देशक नियुक्त हुये। दैनिक श्रम तथा स्पोर्टस में पुट्ठों को प्रयोग कर उन्होंने एक जिमनास्टिक की प्रणाली का निर्माण किया जो वास्तविक रूप में प्राकृतिक था। १८७९ ई० में वे हारवर्ड यूनिवर्सिटी में जिमनेजियम निर्देशक तथा शारीरिक प्रशिक्षण के उप प्रोफेसर नियुक्त हुये। यहां उन्होंने आन्थ्रोपोमेट्रिक नाप के आपरेट्स का आविष्कार किया। उन्होंने हारवर्ड में ग्रीष्म कालीन शारीरिक शिक्षा स्कूल तथा सार्जेन्ट स्कूल आफ फिजिकल एज्युकेशन स्थापित किया। इन दोनों प्रशिक्षण संस्थाओं से सैकड़ों शिक्षक प्रशिक्षित हुये। सार्जेन्ट स्कूल के सम्बन्ध में उन्होंने एक कैम्प पीटरबोरो, न्यू हैम्पशायर में स्थापित किया। यही उनकी मृत्यु हुयी। १८८९ ई० के प्रसिद्ध कान्फ्रेंस में इन्होंने शारीरिक शिक्षा के ध्येय पर वक्तव्य करते हुये कहा था कि शारीरिक शिक्षा का ध्येय लय तथा उत्तम संतुलित अंग का विकास है। शारीरिक शिक्षा की आवश्यकताओं पर प्रश्न किये जाने पर उन्होंने उत्तर में कहा था कि जर्मन प्रणाली की शक्ति प्रदान करने वाले गुण, इंगलिश स्पोर्टस की क्रियाशील तथा उत्तेजिक गुण, फ्रेन्च कालेस्थेनिकस का लचीला पन तथा लावण्य तथा स्वीडिश स्वतंत्र गति का समतोल एवं सही होने के गुण, ये सब संगठित कर अपनी आवश्यकता अनुसार प्रयोग करना ही हमारी आवश्यकता है।

एडवर्ड मुसी हार्टवेल (१८५०-१९२२ ई०) मुसी का जन्म एक्सीटर, न्यू हैम्पशायर में हुआ था। जौन हौपकिन्स से डाक्टर की डिग्री तथा एम० डी० मियामी मेडिकल सिनसिनाटी से प्राप्त किया। स्टोकहोम के रायल जिमनास्टिक इन्सटीयूट्ट तथा वियना एवं बोन में भी अध्ययन किया था। एम्र्हस्ट कालेज ने इन्हें डाक्टर आफ ला की डिग्री प्रदान की। ऐसी पदवी पाने वाले यह प्रथम शारीरिक शिक्षक अमेरिका में हुये। सात वर्ष ये जान हौपकिन्स यूनिवर्सिटी के जिमनेज़ियम के डाइरेक्टर तथा शारीरिक शिक्षा के सहायक प्रोफेसर रहे। 'फिजीकल एज्युकेशन इन अमरीकन कालजेस एण्ड यूनिवर्सिटीज' पर देश भ्रमण करने के पश्चात एक लेख लिखा। १८९१ ई० में बोसटन के सार्वजनिक स्कूल के प्रथम शारीरिक शिक्षा निर्देशक नियुक्त हुए। साहित्य एवं बुद्धिमानी से अपने कार्य सम्पन्न करने के कारण उन्होंने इस व्यवसाय को सम्मान के उच्च स्तर पर पहुंचा दिया।

डालफिन हेना (१८५१-१९४१ ई०) का जन्म मारकेसोन, विसकोनसिन में हुआ था। वह रौकपोर्ट स्टेट नार्मल स्कूल से १८७४ ई० में ग्रेज्युयेट हुयीं। कान्सास तथा न्यूयार्क में १० वर्ष तक अध्यापिका का कार्य किया। डीओ लिविस समर स्कूल में १८८४ ई० में इस कारण से प्रवेश किया कि वह महिलाओं की शारीरिक शक्ति में वृद्धि कर सकें। यहां उन्हें निराशा हुई। यहां से वे सार्जेन्ट स्कूल में गयी। बोस्टन में आर्थोपीडिक डाक्टर के साथ रीढ़ की हड्डी के घुमाव के विषय पर तथा डेलसारटे प्रणाली का भी अध्ययन किया। अपने डील डौल तथा आसन के प्रशिक्षण में इस प्रणाली की उत्तमत्ता को संयुक्त कर लिया।

१८८६ ई० में शिक्षिका होकर ओर्वलिन कालेज में गयीं। १८९० ई० मिसीगन युनिवर्सिटी से मेडिकल डिग्री प्राप्त की। उन्होंने आन्थ्रोपोमेट्रिक रिसर्च तथा शिक्षक प्रशिक्षण कोर्स पर कार्य किया था। वह महिलाओं में अमरीकन कालेज की प्रोफेसर की पदवी प्राप्त करने वाली प्रथम महिला थीं।

विलियम जी एन्डर्सन (१८६०-१९४७ ई०) का जन्म जोसफ मिसीगन में हुआ था। इन्होंने डा० आफ पब्लिक हेल्थ की डिग्री हार्वड यूनिवर्सिटी

से प्राप्त की थी। डाक्टर आफ ला की भी सम्मानित उपाधि प्राप्त की। २५ वर्ष की आयु में ब्रुकलियन नार्मल स्कूल आफ फिजीकल एज्युकेशन के संस्थापक तथा प्रेसीडेन्ट हुये। इसके पश्चात चाऊटाऊकुआ समर स्कूल आफ फिजीकल एज्युकेशन के डीन एवं संस्थापक हुए। १८९३ ई० में ये येल युनिवर्सिटी जिमनेज़ियम के सहायक निर्देशक हुये तथा दस वर्ष पश्चात निर्देशक हो गये। येल की सेवा इन्होंने ३५ वर्ष की। १९०५ ई० में यहीं के प्रोफेसर हो गये।

ये अमेरिकन एसोशियेसन फार दि एडवान्समेन्ट आफ फिजिकल एज्युकेशन के संस्थापक थे। ये कालेज जिमनेज़ियम डाइरेक्टर्स सोसायटी के संस्थापकों में से एक थे।

वे इस विषय के लेखकों में से प्रथम थे। उन्होंने पांच पुस्तकें लिखी थीं। प्रयोगात्मक मनोविज्ञान विभाग के लिये उन्होंने एर्गोग्राफ एवं अन्य सामग्री का आविष्कार किया। वह अमेरिकन एकाडमी आफ फिजिकल एज्युकेशन के सदस्य थे।

जार्ज ब्रोसियस (१८३९-१९२० ई०) अमेरिका के फादर जहान के नाम से प्रसिद्ध हैं। मिडिल वेस्ट के सार्वजनिक स्कूलों में शारीरिक शिक्षा के आरम्भ कराने वालों में से ये प्रमुख हैं। इन्होंने ५० वर्ष तक शिक्षक के रूप में सेवा की। इस काल की जर्मन प्रणाली के सर्वश्रेष्ठ शिक्षक थे। नार्मल स्कूल आफ अमेरिकन जिमनास्टिक यूनियन में बहुत से विद्यार्थियों को इन्होंने प्रशिक्षित किया।

ऐलिज़ा एम मोशर (१८४६-१९२८ ई०) एक विख्यात महिला चिकित्सक युनाइटेड स्टेट में हुयीं। महिलाओं की शारीरिक परीक्षा के द्वारा उन्होंने शारीरिक शिक्षा की उन्नति में पर्याप्त सहयोग दिया। उन्होंने महिलाओं के लिये उचित जिमनास्टिक यूनिफार्म के स्तर का निर्माण किया।

राबर्ट जेफरिस राबर्ट्स (१८४९-१९२० ई०) बोस्टन डिपार्टमेन्ट आफ वाई० एम सी० ए० के प्रधान का स्थान ग्रहण करते हुए उन्होंने स्वस्थ्यकर शरीर निर्माण (हाइजनिक बाडीबिल्डिग) का विकास किया। यह वाई० एम

सी० ए० में अत्यन्त प्रचलित था। वाई० एम सी० ए० शारीरिक शिक्षा निर्देशकों में से सर्वप्रमुख थे।

विलियम स्टेचर (१८५८-१९५० ई०) एक विख्यात चिकित्सक तथा इन्डीयानापोलिस एवं फिलाडेलफिया में सार्वजनिक स्कूलों के शारीरिक शिक्षा विभाग के संस्थापक थे। टर्नर सोसायटी के प्रमुख नेता थे। १९०७-१९३५ ई० तक टर्नर पत्रिका 'माइन्ड एण्ड बाडी, के सम्पादक रहे। ये अमेरिकन एकाडमी आफ फिजिकल एज्युकेशन के सदस्य थे।

युनाइटेड स्टेट्स का प्रारम्भिक अन्तर्राष्ट्रीयता काल (१९००-१९१७ ई०)

उन्नीसवीं शताब्दी ने युनाइटेड स्टेटस् में न केवल एक शक्तिशाली राष्ट्रीयता का निर्माण किया किन्तु उसे विश्व राजनीति तथा शक्ति के वृत्त में लाकर उसके अन्तर्राष्ट्रीय कार्यों के द्वारा उसकी गहरी राष्ट्रीयता का प्रमाण दिया। इस देश ने एक नयी निश्चयात्मकता तथा शक्ति प्राप्त की थी। एक राष्ट्रीयता की भावना जो महाद्वीप के विस्तार में अब विकसित नहीं की जा सकती थी अब नये क्षेत्र की खोज करने लगी। आर्थिक परिवर्तन, परमार्थी तथा धार्मिक समूहों ने अन्तर्राष्ट्रीयता के विकास में अपनी उत्साहपूर्ण एवं प्रेरक क्रियाओं के द्वारा सहयोग दिया।

प्रथम विश्वयुद्ध के पूर्व अनेकों राष्ट्र थे जो अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग तथा शान्ति के लिये लालायित थे। इस देश ने पूर्ण रूप से उनका साथ दिया। प्रेसीडेन्ट विलसन ने लीग आफ नेशनस के स्थापित करने के लिये यथाशक्ति चेष्टा की थी। प्रथम विश्वयुद्ध में युनाइटेड स्टेटस् भाग नहीं लेना चाहता था किन्तु वह पृथक न रह सका। युद्ध के समाप्त होने के पश्चात युनाइटेड स्टेटस् संसार के बड़े राष्ट्रों में से एक था।

सामाजिक उन्नति हो रही थी। नगरों में तथा औद्योगिक केन्द्रों में निपुण तथा अर्ध निपुण श्रमिकों की मांग के कारण जनता गांव छोड़ नगरों में बसने लगी। इस कारण से सामाजिक समस्यायें उपस्थित हुयीं।

औद्योगिक क्षेत्रों तथा श्रमिकों के मुहल्लों में घरो में लोगों की भीड़ हो गयी,सुधारक तथा परमार्थी नगरों में बसने वालों की दशा सुधराने में व्यस्त हो गए। तरुणों के दोष में वृद्धि होने के कारण खेल के प्रति जो प्युरीटन भावना थी वह समाप्त हो गयी तथा उनके लिये सार्वजनिक कोष से मनोरंजन की व्यवस्था हुयी। स्त्रियों को स्वतंत्रता मिली तथा औद्योगिक समाज में उन्होंने अपना स्थान ग्रहण किया। विज्ञान के विकास से न केवल उद्योग को लाभ हुआ किन्तु चिकित्सा सेवा, उत्तम स्कूल, सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा शारीरिक सुधार की ओर ध्यान दिया गया। परिणाम स्वरूप तरुण श्रम नियम, ऐच्छिक स्वास्थ्य संस्थायें, स्थानीय प्रादेशिक तथा राष्ट्रीय स्तर पर निर्मित की गयी। स्कूलों में स्वास्थ्य शिक्षा तथा निरीक्षण में उन्नति हुयी। शारीरिक एवं मानसिक रूप से जिन बालकों में कोई दोष हो उनके लिये अधिक चिन्ता की गयी।

नयी शताब्दी के आरम्भ ही से यह मान लिया गया कि स्कूल प्रजातंत्र की नींव हैं अतएव उचित धन, उत्तम मकान तथा साधन तथा उच्च कोटि के शिक्षक उपलब्ध किये गये।

शिक्षा सर्वव्यापी तथा निशुल्क की गयी। उत्तम शैक्षणिक सिद्धान्तों का स्कूलों में प्रयोग किया गया। विलियम जेम्स, जी स्टानली हाल, चार्ल्स एलियोट एडवर्ड एल थोर्नडाइक, वियम किलपैट्रिक तथा जांन डिवी जैसे व्यक्तियों का प्रभाव बालक की प्रकृति की एक दृष्टि कोण से समझने में सीखने की क्रिया में रुचि तथा चेष्टा के आपस के विरोध में अविमुख उत्साह तथा व्यक्तिगत विभिन्नता के ज्ञान में परिलक्षित हो रहा था।

इस नयी शिक्षा ने पाठ्यक्रमेत्तर क्रियाओं तथा विभिन्न प्रकार के क्लब आन्दोलन को प्रोत्साहित किया। अवकाश के समय के स्कूलों का निर्माण किया। प्लेग्राउन्ड तथा सामाजिक केन्द्रों का निर्माण किया। अपाहिज तथा अविकसित व्यक्तियों के लिये विशेष क्लास आयोजित किए। परीक्षा प्रोग्राम को आदेश तथा निर्देश के लिये उत्साहित किया। इन सब प्रभावों का परिणाम स्कूलों में सामाजिक रुचि की वृद्धि में प्रदर्शित हुआ।

१९१८ ई० में नेशनल एज्युकेशनल एसोसियेशन ने शिक्षा के सात

मुख्य सिद्धान्त घोषित किये जिनमें स्वास्थ्य, नागरिकता तथा अवकाश का सदुपयोग था जिनका शारीरिक शिक्षा से घनिष्ट सम्बन्ध था।

इस काल के आरम्भ ही से शारीरिक शिक्षा तथा एथलेटिक्स के विस्तार पर बल दिया गया। ऐथलेटिक तथा प्लेग्राउन्ड आन्दोलन की प्रगति शिक्षा में औपचारिक रीतियों का विरोध प्रदर्शित करती हैं। ये सब संयुक्त होकर प्राचीन जिमनास्टिक प्रणाली के पतन का कारण हुये। शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में औपचारिक तथा अनौपचारिक क्रियायें दोनों मिलाकर दी जाने लगीं।

युद्ध के छिड़ जाने से सैनिक शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। युद्ध के कारण शारीरिक शिक्षा की प्रगति के हेतु कानून बनाने में सहायता मिली। युद्ध में भर्ती की रिपोर्ट से शारीरिक शिक्षा को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता प्रतीत हुयी।

प्रथम स्टेट नार्मल कालेज यपसीलान्टी मिशीगन में १९०३ ई० में स्थापित किया। विलबर पी बोवेन इसके प्रधानाचार्य हुये। उनके प्रयास से १९१५ ई० में प्रथम स्टेट पाठ्यक्रम शिक्षकों के प्रयोग के लिये तैयार किया।

१९२० ई० के बहुत से कालेज तथा यूनिवर्सिटी, शारीरिक शिक्षा में 'मेजर' पाठ्य क्रम प्रदान करने लगे। मास्टर्स डिग्री भी दी जाने लगी। न्यूयार्क तथा कोलम्बिया यूनिवर्सिटी डाक्टरेट की डिग्री भी प्रदान करने लगीं। अनेक निजी शिक्षक प्रशिक्षण स्कूल भी स्थापित हुये। नार्मल कालेज आफ दि अमेरिकन जिमनास्टिक यूनियन, दि अमेरिकन कालेज आफ फिजीकल एज्युकेशन, दि शिकागो नार्मल स्कूल आफ फिजिकल एज्युकेशन तथा जार्ज विलियम कालेज मिडिल वेस्ट के आदि प्रारम्भिक प्रगति में प्रमुख थे।

पूर्व में आरनोल्ड कालेज फार हाइजीन एन्ड फिजिकल एज्युकेशन, दि इन्टरनेशनल वाई० एम० सी० ए० कालेज, इथाका स्कूल आफ फिजीकल एज्युकेशन, पान्जर कालेज, सारजेंन्ट स्कूल फार फिजिकल एज्युकेशन, सावेज स्कूल आफ फिजीकल-एज्युकेशन तथा वेसली कालेज प्रमुख थे।

दक्षिण में जार्ज पीबोडी कालेज विख्यात था।

दि अमेरीकन फिजिकल एज्युकेशन एसोसियेशन ने अपना यह नया नाम १९०३ ई० में रखा। इसके संविधान में संशोधन हुआ जिससे किसी विशेष शारीरिक शिक्षा के अंग के लिये एसोसियेशन का राष्ट्रीय विभाग बनाया जा सके। सर्व प्रथम विभागों सोसायटी आफ सेकेन्ड्री स्कूल डाइरेक्टर्स का बना।

दि सोसायटी आफ कालेज जिमनेजियम डाइरेक्टर्स १९०८ ई० में सोसायटी आफ कालेज डाइरेक्टर्स आफ फिजिकल एज्युकेशस बन गया। ऐसी ही एक संस्था महिलाओं के लिये बनी जिस का नाम था नेशनल एसोसियेशन आफ फिजिकल एज्युकेशन फार विमेन

दि अमेरीकन एकाडमी आफ फिजिकल एज्युकेशन की स्थापना १९०४ ई० में हुयी। एथलेटिक रिर्संच सोसायटी का आरम्भ १९०७ ई० में हुआ। शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम के कार्य निम्न लिखित थे :—

नृत्य एक विशेष विषय था। इसके कई एक प्रकार थे जैसे टेप डान्स, एसथेटिक डान्स, फोल्क डान्स, नेचुरल डान्स, स्कवायर डान्स आदि।

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ से जिमनास्टिक शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम का आधार था। सपोर्टस को मान्यता दी गयी थी तथा इसकी आवश्यकता भी थी किन्तु वह साधारण स्थान लिये था एवं यथार्थ प्रोग्राम का अंग नहीं था। डेलसारटे के लोक प्रियता के कारण जिमनास्टिक की खर्च में कमी हुयी। इसी समय 'हेल्थ थ्रू ऐकसरसाइज' आन्दोलन आरम्भ हुआ। अनेक अधपके शारीरिक शिक्षकों ने प्रशिक्षित व्यक्तियों के अभाव के कारण, शिक्षा देना आरम्भ किया। महिलाओं ने सोसायटी जिमनास्टिक में रुचि लेना आरम्भ किया। यह डेलसारटे प्रणाली के प्रतिरोध में था।

१९०७ ई० में वाई०एम०सी० ए० ने रोवर्ट जेफरी रोबर्ट के द्वारा अपना जिमनास्टिक प्रोग्राम तैयार किया। यह प्रोग्राम हलके जिमनास्टिक का बना हुआ था तथा उनके लिये था जो स्कूल जिमनास्टिक से लाभ नहीं उठा सकते थे। ९५ प्रतिशत कालेज तथा यूनिवर्सिटी अपने फिजिकल एज्युकेशन प्रोग्राम में

जिमनास्टिक रखते थे। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात ही जिमनास्टिक में रुचि अत्यन्त कम हो गयी। अठ्ठारहवीं शताब्दी के अन्त में जर्मन तथा स्वीडिश प्रणाली के जिमनास्टिक में संघर्ष चल ही रहा था। गलिक ने जिमनास्टिक में प्रशिक्षित व्यक्तियों की ऐथलेटिक में प्रशिक्षित व्यक्तियों से तुलना कर के जिमनास्टिक को पीछे हटा दिया। गलिक ने कहा कि जिमनास्टिक करने वालों के पुठ्ठे अवश्यकता से अधिक विकसित रहते हैं, बड़े बड़े सीने तथा कंधे होते हैं किन्तु निर्बल पैर तथा चाल में भारीपन रहता है। ऐथेलेटिक करने वाले सीधे, सुडौल, फुर्तीले तथा सहने की अच्छी शक्ति प्राप्त करते हैं। इस वक्तव्य का जनता पर बहुत असर हुआ क्योंकि गलिक व्यवसायिक तथा अव्यवसायिक दोनों में ही लोकप्रिय थे १९१०ई०में कोलम्बिया यूनिवर्सिटी में डा० थामस डी.वुड ने एक व्यायाम के कार्य क्रम का प्रचार किया जो प्राकृतिक, क्रियाओं, स्पोटर्स तथा गेम्स के आधार पर बना हुआ था। इसका नाम नेचुरल जिमनास्टिक दिया गया।

जमर्न प्रणाली का प्रचार विशेष रूपसे वाई०एम०सी० ए० तथा टर्नर्स के द्वारा उनके बीच अधिक हुआ जो जर्मन स्रोत के थे। अमेरीकन तथा इंगलिश स्रोत के लोग जिमनास्टिक के स्थान पर गेम्स चाहते थे। जर्मन जिमनास्टिक के प्रति सद्‌भाव था अतः जहां जर्मन जन संख्या अधिक थी वहां यह स्कूल तथा स्कूल के बाहर किया जाता था। मिल्लस कालेज प्रथम महिला कालेज था जिसने जर्मन जिमनास्टिक १९०२ ई० में अपनाई। अमेरीकन कालेज में यह लोक प्रिय नही हो सका।

स्वीडिश प्रणाली के सुधारात्मक तथा चिकित्सात्मक व्यायाम ने बीसवीं शताब्दी के पहिले पच्चीस वर्ष में बहुत उन्नति की। इसका विशेष कारण व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति करने की चेष्टा थी। यह प्रायः सम्पूर्ण महिला कालेज में प्रचलित था। १९२० ई० के समीप डेनिश प्रणाली ने इसे चुनौती दी। डा० विलियम स्कार्सट्रोम स्वीडिश प्रणाली के प्रोत्साहक थे तथा इस प्रणाली को अमरीकन आवश्यकताओं के अनुसार संशोधित भी किया था।

नेचुरल जिमनास्टिक नयी शताब्दी के प्रथम बीस वर्षों में अत्यन्त प्रचलित था। यह व्यवसायिक ऐथलेटिक तथा नृत्य गति के आधार भूत तथ्यों

के आधार पर बनी थी। वुड इस के संस्थापक थे। डा० ओ एफ विलियम्स क्लार्क डब्लू हेथरिंगटन तथा रोसालिंड ई कासीडी ने अपने लेखों तथा शिक्षा से इस का प्रचार किया। यह प्रणाली लौक तथा रूसों के सिद्धान्तों की ओर ले जाती है जिसमें व्यक्तिगत विभिन्नता तथा बालक की प्रगति उसके बढ़ाव से मांप करने पर विशेष बल दिया जाता है। यह जहान तथा गथ्स मथस् के कार्यक्रम की ओर फिर लौटना था जिसमें खेल, स्पोर्ट तथा खुले में भ्रमण करना था। जिमनास्टिक पर विशेष बल देने के कारण इन सभी पर ध्यान नहीं दिया जाता था।

डेनिस फन्डामेन्टल जिमनास्टिक उन अमेरीकनस के द्वारा १९२० ई० में लाया गया था जिन्होंने नील्स बक्ख से ओलेरप डेनमार्क में शिक्षा प्राप्त की थी। इस प्रणाली ने लिंग प्रणाली की औपचारिकता स्वीकार की किन्तु ताल बद्ध क्रियाओं को स्थित तथा सही आसन के स्थान पर स्थापित किया। यह महिलाओं में अधिक प्रचलित हुआ।

स्पोर्ट्स प्रायः १९१० ई० में स्कूल शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में सम्मिलित किया गया। यह कालेजों में अत्यन्त लोकप्रिय रहा। इस शताब्दी के नये स्पोर्टस, भ्रमण क्लब, स्पीड बाल, शफलबोर्ड आदि थे।

बेसबाल की अत्यन्त लोकप्रियता थी। यह वर्तमान सौफ्ट बाल में परिवर्तित हुआ।

गोल्फ भी अत्यन्त लोकप्रिय था।

तैरने की शिक्षा अधिक नहीं दी जाती थी। १९०९ ई० में स्वीमिंग पूल सम्बन्धित बैक्टीरिया का अध्ययन किया गया। इसके कारण अमेरीकन एसोसियेशन आफ हाइजीन एण्ड बाथ्स १९१२ ई० में स्थापित हुआ। इसने तैरने के स्थानों का स्तर निर्धारित किया।

ट्रैक एन्ड फील्ड ने प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात पुनः बल प्राप्त किया। नेशनल एम्येच्योर एथलेटिक फेडरेशन की स्थापना हुयी। प्रथम नेशनल चैम्पियनाशिप की प्रतियोगिता १९२१ ई० में हुई।

वालीवाल में यूनाईटेड स्टेट्स वाली बाल एसोसियेशन की स्थापना १९२८ ई० में हुयी । वाइ० एम० सी० ए० में यह अत्यन्त प्रचलित था। इनके द्वारा स्कूलों तथा अन्य संस्थाओं में इसका प्रचार हुआ ।

ओलम्पिक खेल जो एथेन्स में १८९६ ई० में हुआ वह आधुनिक ओलम्पिक खेलों का आरम्भ था । यूनाइटेड स्टेट्स ने इसमें भाग लिया एवं हाईजम्प पोलवाल्ट तथा हौप-स्टेप-जम्प में विजय प्राप्त की। इसके पश्चात यूनाइटेड स्टेट्स ने इस ओर अत्याधिक उन्नति की।

भ्रमण क्लब, सर्व प्रथम स्थायी रूप में डार्टमथ में स्थापित हुआ। प्राय: प्रत्येक कालेज में इसकी प्रथा थी तथा यह अत्यन्त लोकप्रिय हुआ। इसमें सब प्रकार के खुले में होने वाली क्रियाओं की प्रथा थी जो प्रत्येक ऋतु में होती थी।

स्कूल तथा कालेज के आपस के स्पोर्टस का आरम्भ हो गया था। यह प्रतियोगिता विशेष कर फुटबाल में होती थी जिसमें की लड़ाई झगड़े बहुत होते थे यहाँ तक कि अधिकारी ने इसके लिये यह कहना आरम्भ कर दिया कि यह वह बुराई है जो आवश्यक है। प्रेसिडेन्ट रूजवेल्ट ने व्हाईट हाउस में फुटबाल अधिकारियों की एक सभा की जिससे यह दोष हटाया जा सके।

स्कूल के अन्दर के आपस में खेल अर्थात इन्ट्राम्युरल बहुत पहले से ही प्रचलित थे। सम्पूर्ण उन्नीसवीं शताब्दी में यही खेल प्रतियोगिता बालकों के लिये थी। स्कूल के बाहर की प्रतियोगिताओं से इस पर बुरा असर पड़ा तथा इस ओर उचित ध्यान नहीं दिया जा रहा था। १९१३ ई० के पश्चात इस ओर पुन: ध्यान दिया गया। ऐलीमेन्ट्री स्कूलों में यह १९०५ ई० से ही उत्तम रीति से कार्य कर रहा था।

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ से ही महिलाओं का स्पोर्टस शारीरिक शिक्षा विभाग के अन्तर्गत आ गया था१९२०ई०तक इन्ट्राम्युरल स्पोर्टस प्रतियोगिताओं में सर्वप्रमुख था। १९२५ ई० के आस पास 'प्ले डे' एक लोक प्रिय प्रथा बन गयी थी। शताब्दी के आरम्भ से ही स्कूलों की आपस की प्रतियोगितायें होती

रहे किन्तु अधिकारी उस पर नियन्त्रण नहीं करते थे। १९१० ई० तक इसमें पर्याप्त उन्नति हुयी। गर्ल्स एथेलेटिक ऐसोसियेशन की स्थापना हुयी।

कुछ व्यक्तियों के विचार में यह आया कि उद्योग में, कौशल में, चतुर लड़कियां उस उद्योग के द्वारा लोक प्रसिद्ध प्राप्त कर सकती हैं। इसके प्रति विरोध होते हुये भी ए० ए० यु० ने उद्योग में लड़कियों के लिये प्रतियोगिता का आरम्भ किया। १९२० ई० में नेशनल चैम्पियनशिप आयोजित की गई।

३३ प्रतिशत व्यक्ति जो प्रथम विश्व युद्ध में सेना सेवा के लिये भर्ती किये गये थे इन्हें सेवा के अयोग्य घोषित कर दिया गया। इस कारण शारीरिक क्षमता की ओर अब विशेष रीति से जनता का ध्यान आकर्षित हुआ। स्कूल शारीरिक शिक्षा के लिये यह परिपक्व समय था।

इस प्रेरणा के कारण अधिक मात्रा में सुविधायें प्राप्त हुयी तथा शिक्षकों की संख्या बढ़ायी गयी। स्वीमिंग पूल, फुटबाल स्टेडियम, बड़े जिमनेजियम तथा बड़े बड़े एथलेटिक के मैदान सम्पूर्ण देश में उपलब्ध किये गये।

युद्ध के परिचालन में विशेष योजनाओं के प्रति सरकार सदैव शारीरिक शिक्षकों से सलाह लेती रही।

१९३० ई० तक ३९ स्टेट्स ने कानून पास कर दिये थे जिसके द्वारा शारीरिक शिक्षा स्कूल में अनिवार्य कर दी गयी। कानून के अनुसार शिक्षा निर्देशक प्रत्येक स्टेट में नियुक्त कर दिये गये। सर्व प्रथम १९१६ ई० में यह न्यूयार्क में स्थापित किया गया।

अब वह समय आ गया था जब शारीरिक शिक्षा का वास्तविक ध्येय निर्धारित करना आवश्यक हो गया। व्यक्तिगत रूप से शारीरिक शिक्षा के ध्येय व्यक्त किये गये थे किन्तु सामूहिक रूप से इस ओर कुछ नहीं हुआ था। नेशनल एज्युकेशन एसोसियेशन के शारीरिक शिक्षा विभाग के प्रेसिडेन्ट हेथरिंटगन ने व्यवसाय के निम्नलिखित ध्येय घोषित किये, जीवन शक्ति के लिये शिक्षा स्नायु मांसपेशियों के क्रिया में शिक्षा शक्ति तथा चातुर्य के लिये मन गति की शिक्षा, आत्मिक, सामाजिक तथा नैतिक शक्तियों के लिये चरित्र

शिक्षा एवं स्वतंत्र खेल के द्वारा अर्जित मानसिक शिक्षा या सामाजिक विचार क्रिया का विकास।

'फिजिकल कल्चर' शब्द शारीरिक शिक्षा में प्राय: उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से साधारणतय: प्रयोग होता रहा है। उस समय की उच्च शिक्षा 'क्लासिक्स' प्राचीन साहित्य में हुआ करती थी तथा इनके द्वारा 'कल्चर' शब्द अधिकतर प्रयुक्त होता था। यूनिवर्सिटियों में भी 'सोशियल कल्चर' 'रिलिजस कल्चर' ऐसे विषय हुआ करते थे। अतएव 'फिजिकल कल्चर' शब्द भी प्रयोग में आया। सैनिक शिक्षा के प्रभाव से कल्चर शब्द ट्रेनिंग या प्रशिक्षण में परिवर्तित हुआ। शारीरिक शिक्षा के ध्येय निर्धारित करने के कारण 'एज्युकेशन' शब्द सम्मुख आया। अत: विषय का नाम 'शारीरिक शिक्षा' (फिजिकल एज्युकेशन) प्रसिद्ध हुआ।

प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात शारीरिक शिक्षा में आकस्मिक प्रगति हुयी यद्यपि सुविधाओं में वृद्धि हुयी तथा इमारतें बनायी गयीं तथापि वे पूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति में कम रहीं। अनेक स्टेट विभाग ने न्यूनातिन्यून मांग नियुक्त कर दिया। प्रत्येक स्कूल के लिये एक जिमनेजियम अनिवार्य कर दिया गया तथा ४०० बालकों के लिये ३ से ४ एकड़ जमीन आवश्यक हो गयी।

एलीमेन्ट्री स्कूलों में शारीरिक शिक्षा का भार प्रथा अनुसार कक्षा शिक्षकों के ऊपर रहा किन्तु हाई स्कूल आदि के लिये विशेष शिक्षक की नियुक्त होती थी।

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक भाग बहुत से कालेज ऐसे थे जहां शारीरिक शिक्षा के लिये वातावरण अनुकूल नहीं था। ऐसे स्थानों में विद्यार्थी अपने आप शारीरिक शिक्षा कार्य में भाग लेते थे। कुछ ही दिनों के पश्चात इन स्थानों में भी अधिकारियों के द्वारा शारीरिक शिक्षा आयोजित की गयी। १९१३ ई० में मिशीगान यूनिवर्सिटी तथा ओहियो स्टेट यूनिवर्सिटी ने इन्ट्राम्युरल स्पोर्टस के डिपार्टमेन्ट को अपने हाथ में लिया जो विद्यार्थियों के द्वारा अनौपचारिक रूप से चलाया जा रहा था। बड़े बड़े जिमनेजियम तथा फुटबाल स्टेडियम इस काल में बनवाये गये। हारवर्ड यूनिवर्सिटी ने पहला बड़ा स्टेडियम १९०४ ई० में बनवाया जिसमें २३,००० व्यक्ति बैठ सकते थे। मिशी-

न यूनिवर्सिटी स्टेडियम में ९७,००० तथा ओहियो स्टेट यूनिवर्सिटी स्टेडियम में ८५,००० व्यक्ति बैठ सकते थे।

पेन्सलवेनिया की यूनिवर्सिटी प्रथम संस्था थी जहां प्रत्येक विद्यार्थी के लिये चार वर्ष की अवधि का शारीरिक शिक्षा कोर्स अनिवार्य कर दिया गया। शताब्दी के अन्त तक पुरुषों तथा महिलाओं के लिये ३ घंटा प्रति सप्ताह दो वर्ष के लिए सामान्यरूप से आवश्यक हो गया।

प्रथम विश्व युद्ध के समय तक प्रत्येक यूनिवर्सिटी तथा कालेज में जहां महिला विद्यार्थी थीं वहां उनके लिये शारीरिक शिक्षा विभाग स्थापित था। इस अवधि में अनेक महत्वपूर्ण महिलायें थीं जिन्होंने महिलाओं के शारीरिक शिक्षा विभागों के लिये यथेष्ट चेष्टा की तथा महिला शारीरिक शिक्षा को उन्नति के शिखर पर पहुंचाया।

पुरुष कालेजों की अपेक्षा महिला कालेजों की सुविधाओं में दोष थे। महिलायें पुरुषों के जिमनेजियम तथा खेल के मैदान का प्रयोग तब करती थीं जब पुरुषों को इनकी आवश्यकता नहीं होती थी। १९२० ई० के पश्चात प्रायः प्रत्येक के पास अपनी सुविधायें उपलब्ध हो गयीं।

कार्यक्रम में कालेसथेनिक्स, जिमनास्टिक तथा तालबद्ध क्रियायें होती थीं। १९१० ई० के पश्चात स्पोर्ट्स कार्य भी पूर्ण वर्ष के लिये कार्यक्रम में सम्मिलित हुआ। १९२० ई० के आस पास व्यक्तिगत जिमनास्टिक या सुधारात्मक कार्य पर बल दिया गया। इस क्षेत्र में महिलाओं का विभाग पुरुषों की अपेक्षा सदैव आगे रहा।

अनुसंधान (Research) में रुचि जो हिचकोक तथा सर्जेन्ट के द्वारा उत्पन्न की गयी थी वह बीसवीं शताब्दी में अधिक प्रगतिशील हुयी। नए परीक्षण में नयी तथा विस्तृत रुचि उत्पन्न हुयी। फिजीकल अचीवमेन्ट टेस्ट (शारीरिक प्रयत्न प्राप्त परीक्षण) तथा हृदय निपुणता परीक्षण के ऊपर विशेष ध्यान दिया गया। गलिक के अनुसंधान के कारण जो नेशनल रिक्रियेशन एसोसियेशन के द्वारा दिया गया था, परीक्षण की प्रणाली तथा स्तर निर्माण में अत्यंत उन्नति हुयी। अमेरिकन फिज़िकल एज्युकेशन एसोसियेशन ने अपने 'एथलेटिक

बैज टेस्ट, प्रचलित प्रयत्न प्राप्त स्तर के आधार पर १९१३ ई० में निर्धारित किया। गति प्रद योग्यता परीक्षण के द्वारा शारीरिक बुद्धि उपलब्धि का विकास हुआ। कोलम्बिया यूनिवर्सिटी में डा० जार्ज एल मेलान ने १९१९ ई० में प्रथम प्रयत्न प्राप्त परीक्षण दौड़ना, कूदना, चढ़ना, वाल्ट करना, फेंकना आदि स्पोर्ट्स के तथ्यों के प्रयोग से किया। १९२१ ई० में मनुष्य का प्रथम शारीरिक परीक्षण सर्जेन्ट के द्वारा प्रस्तुत किया गया। यह एक ऊपर की कूद थी जिसमें वजन तथा ऊंचाई के प्रयोग आकर्षण शक्ति को पार करने की योग्यता थी। १९२० ई० में बोस्टन यूनिवर्सिटी के फ्रेडरिक रान्ड रोजर्स ने 'फिजिकल फिटनेस इन्डेक्स पर कार्य आरम्भ किया। शताब्दी के आरम्भ में यह निश्चित हो गया था कि व्यायाम के लिये बालकों को उनके हृदय की क्रिया शक्ति के अनुसार वर्गीकृत करना आवश्यक है।

शारीरिक शिक्षक प्रशिक्षण १९०० ई० के पूर्व निजी स्कूलों के द्वारा दिया जाता था तथा ये स्कूल कालेज के स्तर के नहीं थे। इस नयी शताब्दी में ये स्कूल कालेजों से सम्बन्धित हो गये।

कालेज तथा यूनिवर्सिटी ने जो शारीरिक शिक्षक प्रशिक्षण १९०० ई० के पूर्व आरम्भ किया था उनकी संख्या सीमिति थी। जैसे ही यूनिवर्सिटी में इस क्षेत्र में शिक्षक प्रशिक्षण के कार्य में उन्नति हुयी वैसे ही, आर्टस कालेज, टीचर्स कालेज, तथा स्कूल आफ एज्युकेशन में भी यह स्थापित हुआ। स्टानफोर्ड यूनिवर्सिटी ने १९२० ई० में एक स्कूल आफ हेल्थ एन्ड फिजिकल एज्युकेशन स्थापित किया जो यूनाइटेड स्टेट्स में प्रथम था। अनेक कालेज तथा यूनिवर्सिटी ने शारीरिक शिक्षा के बड़े बिभाग अपने यहां स्थापित किये। सार्वजनिक नार्मल स्कूलों में से यापसीलान्टी मिशीगन एक था जहां शारीरिक शिक्षा में विशेषता प्राप्त करने की व्यवस्था थी। स्टेट कानून द्वारा जिससे शिक्षकों की संख्या में वृद्धि आवश्यक हो गयी, अनेक नार्मल स्कूल में शारीरिक शिक्षा की विशेषता प्राप्त करना सुलभ हो गया। १९०१ ई० में कोलम्बिया यूनिवर्सिटी में टीचर्स कालेज फिजीकल एज्युकेशन के स्पेशयलाइजेशन के साथ 'मास्टर्स डिग्री' प्रदान करने में सर्वप्रथम हुआ। दूसरे स्कूलों ने भी इसका अनुसंरक्षण किया। वेलेसली कालेज शारीरिक शिक्षा में 'ग्रेज्युयेट करीक्युलम स्थापित करने में सबसे पहला हुआ। इसमें प्रवेश उन्हीं को प्राप्त था जो

शारीरिक शिक्षा में 'मेजर' के लिये पूर्ण अन्डर ग्रेज्युयेट आवश्यकताओं की पूर्ति कर चुके थे। १९३० ई० तक २८ ऐसी संस्थायें हो गयीं तथा न्यूयार्क एवं कोलम्बिया यूनिवर्सिटी ने १९२८ ई० से ऐसे कोर्स स्थापित किये जिससे डाक्टर की डिग्री प्राप्त की जा सकती थी।

स्कूल को छोड़ अन्य संस्थाओं में जहां शारीरिक शिक्षा की उन्नति हुयी विशेष कर वाई.एम.सी.ए. तथा वाई. डब्लू. सी. ए. हुए।

वाई.एम.सी.ए. ने अपना शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम विस्तृत किया तथा भिन्न-भिन्न प्रकार की सामाजिक संस्थाओं को सहयोग दिया जिससे शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम विशेष कर किशोर युवक तथा प्रौढ़ों को उपलब्ध हो। राष्ट्रीय संगठन ने दो संस्थायें स्प्रिग फील्ड, मासाच्युसेट्स में तथा शिकागो, इलिनोइज में शारीरिक शिक्षक प्रशिक्षण के लिये स्थापित की जिससे उनके शारीरिक शिक्षा विभाग के लिये व्यक्ति प्राप्त किये जा सकें।

१९०६ ई० में डा० जार्ज जे फिशर जो ब्रुकलियन में वाई. एम. सी. ए. निर्देशक थे अन्तर्राष्ट्रीय कमेटी के शारीरिक शिक्षा विभाग के प्रधान नियुक्त हुये तथा १९१० में डा० जौन ब्राउन जो मोन्ट्रीयल तथा न्यूयार्क में भूतपूर्व वाई.एम. सी.ए. निर्देशक थे नेशनल बोर्ड की सेवा में आ गये। जब डा० फिशर अमेरीका के ब्वाय स्काउट में डिप्टी स्काउट एक्जेक्युटिव नियुक्त हुये तब डा० ब्राउन ने उनका स्थान ग्रहण किया। इन दोनों व्यक्तियों के संचालन में अन्तर्राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा प्रोग्राम का विशाल विस्तार हुआ। प्रथम विश्वयुद्ध के समय वाई०एम०सी०ए० के सेवकों ने सैनिकों के मनोरंजन तथा अवकाश के समय का सदुपयोग करके बहुत ही बड़ा कार्य सम्पन्न किया।

शारीरिक शिक्षा सम्बन्धित अनेक संस्थाये भी इस काल में स्थापित हुईं। १९१० ई० में ब्वाय स्काउटस आफ अमेरीका, १९१२ ई० में दि गर्ल्स स्काउट आफ अमरीका, १९१४ ई० में दि कैम्प फायर गर्ल्स आफ अमेरीका, १९११ ई० में दि नेशनल पार्क सर्विस, मनोरंजन तथा कैम्पिग।

मनोरंजन अमेरीकन जीवन का एक अनिवार्य भाग समझा जाने लगा। अतः बड़े शहरों में इसकी व्यवस्था हुयी। मनोरंजन के छोटे स्थान विस्तृत किये

गये जिसमें म्युनिसिपल स्टेट तथा राष्ट्रीय मनोरंजन क्षेत्र सम्मिलित थे। इसके हेतु बड़ी मात्रा में आर्थिक सहायता प्राप्त होती थी। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात मनोरंजन की सुविधाओं में अत्याधिक वृद्धि हुयी।

संगठित कैम्पिग एक विशेष संस्था हुयी है जिसे अमेरिका ने संसार को दिया है। १९२० ई० तक कैम्पिग एक मनोरंजन का साधन रहा है। इसके पश्चात शिक्षा का प्रभाव इस पर हुआ अतः यह शिक्षा के ध्येय को पूरा करने के लिये स्कूल का एक भाग हो गया। अनेक स्कूलों के अपने निजी कैम्प हैं। ओमाहा तथा नेब्रास्का ने १९२० ई० में अपने स्कूल कैम्प स्थापित किये। ये प्रथम स्कूल कैम्प में से थे।

इस शताब्दी में इस विषय पर अत्याधिक साहित्य प्रकाशित हुआ। जैसे, स्कूल जिमनास्टिक एन्ड लाइट अपरेटस्-जेस्सी बानक्रोफ्ट, फिजिकल एज्युकेशन, लूथर एच गलिक, प्रथम पुस्तक फिलोसफी एन्ड प्रिंसिपल्स गेम्स फार स्कूल होम एण्ड प्लेग्राउन्ड-बानक्रोफ्ट, नार्मल कोर्स इन प्ले-हेथरिंगटन एक्सरसाइज इन एज्युकेशन एण्ड मेडिसिन-माकेन्जी, हेल्थ एज्युकेशन-थामस डी उड्ड, हेल्थफुल आर्ट आफ डान्सिग, मिशीगन स्टेट का प्रथम मैनुअल-फिजिकल ट्रेनिंग फार पब्लिक स्कूल,मैनुअल आफ फिजकल एज्युकेशन फार यापसिलान्टी स्कूल, पायोनियर्स आफ मार्डन फिजिकल ट्रेनिंग फेड्रिक इ०, लियोन्र्ड, फिजियालेजी आफ एक्सरसाइज-जेम्स एच मैक करडी, इंट्राम्युरल स्पोर्ट्स-मिचल आदि।

माइन्ड एण्ड बाडी तथा दि अमेरीकन फिजिकल एज्युकेशन रीव्यु दो पत्रिकायें इस शताब्दी में चलती रहीं। फिजिकल ट्रेनिंग-वाई०एम०सी०ए० जिसका नाम दि जनरल आफ फिजिकल एज्युकेशन में परिवर्तन कर दिया गया, प्ले ग्राउन्ड, अमेरिकन जिमनेजियम एण्ड एथेलेटिक रिकार्ड, हाइजीन एण्ड फिजीकल एज्युकेशन नई पत्रिकाओं में से थी।

व्यवसाय की प्रगति के कारण अनेक नेता उत्पन्न हुये। इनमें से कुछ विशेष थे जिनकी बुद्धि तथा उत्साह के कारण समाज तथा शिक्षा में व्यवसाय को ऊंचा स्थान प्राप्त हुआ।

लूथर हालसे गलिक (१८६५-१९१८ ई०) का जन्म होनोलूलू में हुआ

था। मेडिकल डिग्री प्राप्त करने के पश्चात वाई० एम० सी० ए० स्प्रिंगफील्ड प्रशिक्षण स्कूल में जिमनेज़ियम विभाग स्थापित करने के लिये गये। वहाँ से वह न्यूयार्क सिटी में शारीरिक शिक्षा विभाग का संगठन करने गये। उसके पश्चात प्ले ग्राउन्ड एसोसियेशन में सेवा की। इस अवधि में उन्होंने अपना कैम्प लेक सिबागो मेन में स्थापित किया जिसने कैम्प फायर गर्ल आफ अमेरिका को जन्म दिया। १९१८ ई० में वार बोर्ड ने वाई० एम० सी० ए० का कार्य आरम्भ किया। उनकी अनेक महत्वपूर्ण देन जो शारीरिक शिक्षा मनोरंजन, सामान्य शिक्षा तथा अमेरिकन जीवन की पूर्णता की ओर हुयी उसकी तुलना व्यवसाय में किसी और से नहीं हो सकती। वे अनेक संस्थाओं के संस्थापक थे। जैसे, वाई० एम० सी० ए० में शारीरिक शिक्षा की स्थापना, अमेरिका का प्रथम स्कूल ऐथलेटिक लीग, अमेरिका का प्ले ग्राउन्ड एसोसियेशन, न्यूयार्क युनिवर्सिटी समर स्कूल आफ फिजिकल एज्युकेशन, डिपार्टमेन्ट आफ स्कूल हाईजीन आफ दि न्यूयार्क एकाडमी आफ मेडिसिन, वाई० एम० सी० ए० अन्तर्राष्ट्रीय कमेटी के मंत्री, कैम्प फायर गर्ल्स आफ अमेरिका, अमेरिकन स्कूल हाइजीन के संस्थापकों में से एक, दि ब्वाय स्काउट आफ अमेरिका, अमेरिकन फोल्क डान्स सोसायटी तथा अमेरिकन कैम्पिग एसोसियेशन ये पांच पत्रिकाओं के सम्पादक थे। उनके २१ लेख, ९ पैम्फलेट, तथा १४ पुस्तकें लिखी हुयी थी।

थामस डेनिसन उड् (१८६५-१९५१ ई०) जन्म साइकामोर इलीनोइस में हुआ था। मेडिकल डिग्री प्राप्त करने के पश्चात स्टान्डफोर्ड युनिवर्सिटी में फिजिकल एज्युकेशन डाइरेक्टर नियुक्त हुये। उन्होंने 'नेच्युरल प्रोग्राम' की स्थापना की। १९०१-१७ ई० तक वह कोलम्बिया युनिवर्सिटी में शारीरिक शिक्षा तथा हाइजीन के प्रोफेसर एवं निर्देशक नियुक्त हुये। वहीं हेल्थ एज्युकेशन के प्रोफेसर हो गये। ये स्वास्थ्य शिक्षा के प्रथम प्रोफेसरशिप के संस्थापक थे। प्रथम स्कूल स्वास्थ्य प्रोग्राम का खाका युनाइटेड स्टेट्स में प्रथम ग्रेजुएट कार्यक्रम, शारीरिक शिक्षा तथा स्वास्थ्य शिक्षा में तथा विदेशी जिमनास्टिक प्रणाली को स्वदेशी प्रणाली तथा प्राकृतिक जिमनास्टिक में परिवर्तन करने का श्रेय आप को ही रहा। ये बाल विकास के अध्ययन को प्रोत्साहन देने वाले थे तथा शैक्षणिकों के ध्यान इस बात की ओर आकर्षित करने के लिये संघर्ष करते रहे कि बालक के सामाजिक, संवेगात्मक तथा मानसिक विकास एवं शारीरिक विकास में शारीरिक शिक्षा सहायक है। प्रजातांत्रिक जीवन के हेतु बालक की

शिक्षा के प्रति वह बल देते रहे।

वह 'अमेरिकन एसोसिएशन फार एडवान्समेन्ट आफ साइन्स', 'न्यूयार्क एकाडमी आफ मेडिसिन' तथा 'अमेरिकन एकाडमी आफ फिजिकल एज्युकेशन' के 'फेलो' थे। अनेक महत्वपूर्ण कार्यों से उन्होंने व्यवसाय की सेवा की। अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन एवं नेशनल एज्युकेशन एसोसिएशन के स्वास्थ्य समस्या कमेटी का संगठन किया तथा २५ वर्ष तक अध्यक्ष रहे। अमेरिकन चाइल्ड हेल्थ एसोसिएशन की प्रगति की सदैव चेष्टा करते रहे।

राबर्ट टेट मैकेन्जी (१८६७-१९३८ ई०) का जन्म आलमोन्टे, ओन्टारियो कनाडा में हुआ था। शिल्पकार के रूप में उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान प्राप्त हुआ। चिकित्सा, साहित्य तथा शारीरिक शिक्षा में उनकी प्रयत्न प्राप्ति कुछ कम नहीं थी। स्प्रिंगफील्ड तथा हारवर्ड समर स्कूल में वे प्रशिक्षित हुए थे। १८९३ ई० में वे मैकगिल में फिजिकल ट्रेनिंग डिपार्टमेन्ट के निर्देशक हुए तथा मोन्ट्रियल जनरल चिकित्सालय के हाउस फिज़िशियन रहे। १९०४ ई० में पेन्सलवेनिया युनिवर्सिटी के शारीरिक शिक्षा निर्देशक नियुक्त हुये।

'एक्सरसाइज इन एज्युकेशन एण्ड मेडिसिन', 'दि ट्रीटमेन्ट आफ कनवालेसेन्ट सोलजर्स बाई फिजिकल मीन्स' और 'री क्लेमिंग दि मेम्ड' उनकी अनेकों पुस्तकों में से प्रसिद्ध हैं। उनकी शिल्पकारी की बनावट जगत विख्यात है। उनकी बनाई हुयी एथलीटस का ओलम्पिक ढाल किसी और ने कभी नहीं बनाया। उनकी कला प्रसिद्धि के चिन्ह ब्रिटिश युद्ध मेमोरियल 'दि कौल', 'दि होम कमिंग आदि है। इनकी कला की प्रदर्शनी १९२० ई० में इंगलैंड में तथा न्यूयार्क में १९३० ई० में हुई थी।

मैकेन्जी अमेरीकन एकाडमी आफ फिजीकल एज्युकेशन के संस्थापकों में से एक थे तथा उसके प्रथम प्रेसीडेन्ट थे।

क्लार्क डब्लू हेथरिंगटन (१८७०—१९४२ई०) का जन्म लेन्सबोरो मिनीसोटा में हुआ। मिसूरी यूनिवर्सिटी में १९००—१९१० ई० तक शारीरिक शिक्षा के प्रोफेसर तथा जिमनास्टिक एवं एथेलेटिक के निर्देशक रहे। कैलीफोर्निया स्टेट के शारीरिक शिक्षा निरीक्षक रहें। १९२१, २२ ई० में कोलम्बिया यूनिव-

सिटी में शारीरिक शिक्षा के प्रोफेसर रहे। न्यूयार्क स्टानफोर्ड यूनिवर्सिटी में भी प्रोफेसर आफ फिजिकल एज्युकेशन की स्थिति में सेवा की।

ऐथलेटिक रिसर्च सोसाइटी के संस्थापकों और नेचुरल जिमनास्टिक के प्रोत्साहकों में से एक थे। 'स्कूल प्रोग्राम आफ फिजिकल एज्युकेशन' उनकी प्रसिद्ध पुस्तक थी।

जेस्सो एच बानक्रोफ्ट (१८६७—१९५२ ई०) का जन्म विनोना मिनी-सोटा में हुआ था। विनोना नार्मल स्कूल तथा आइओवा मेडिकल कालेज में एक वर्ष रहने के पश्चात मिनियापोलिस में कुछ जिमनास्टिक कोर्स लिया। उन्होंने निजी स्कूल स्थापित किया। १८९३ ई० में ब्रुकलियन सार्वजनिक स्कूल में शारीरिक शिक्षा निर्देशक नियुक्त हुयी। दस वर्ष पश्चात ग्रेटर न्यूयार्क सिटी के स्कूलों में शारीरिक शिक्षा की उप निर्देशिका नियुक्त हुयी। शरीर के डील-डौल तथा आसन पर उन्होंने अनेक 'रिसर्च' किये तथा पुस्तकें लिखीं। स्कूल के बच्चों के मांप के परिणाम स्वरूप स्कूल के बैठने की सीट तथा डेस्क में परिवर्तन किया। उस समय के लिये यह एक विचित्र विषय प्रतीत होता है। 'अमेरीकन पोस्चर लीग' की वह प्रेसीडेंट थी। वह प्रथम महिला थी जो अमेरीकन एकाडमी आफ फिजिकल एज्युकेशन की सदस्यता में ली गयीं थीं।

एलिजाबेथ बर्थनल का जन्म रिचमौंड, इन्डीयाना में हुआ। सार्जेन्ट स्कूल आफ फिजिकल एज्युकेशन से प्रशिक्षित हुई थी। न्यूयार्क सिटी में सार्व-जनिक स्कूल के गर्ल्स एथलेटिक की इन्सपेक्ट्रेस नियुक्त हुयी। कुछ दिनों पश्चात १९१६ ई० में 'एक्जीक्युटिव डायरेक्टर आफ दी अमेरीकन फोल्क आर्टस सोसा-यटी' नियुक्त हुयी। १९२९ ई० में न्यूयार्क फोल्क आर्टस सेन्टर की प्रेसीडेन्ट तथा स्थायी निर्देशिका नियुक्त हुयीं। उनका योगदान व्यवसायिक लड़कियों तथा स्त्रियों की एथलेटिक्स तथा लोक नृत्य क्षेत्रों में रहा है। बर्थनल उन चार महिलाओं में से थीं जो अमेरीकन एकाडमी के शारीरिक शिक्षा में चार्टर सदस्या थीं।

जेम्स हफमैकरडी (१८६६ १९४० ई०) इन्टर नेशनल वाई०एम०सी० ए० स्कूल स्प्रिग फील्ड से प्रशिक्षित थे। १८९३ई०में न्यूयार्क से मेडिकल डाक्टर की डिग्री प्राप्त की। १८९५ ई० में वे स्प्रिग फील्ड में फिजिकल विभाग के निर्देशक

हो गये तथा ३५ वर्ष तक सेवा की। १९३०-३४ ई०तक प्राट इन्स्टीट्यूट के हेल्थ तथा फिजीकल एज्युकेशन विभाग के प्रधान थे। फिजियालोजी आफ आक्सरसाइज में उन्होंने विशेष कार्य किया। इस विषय पर इनकी पुस्तक पहली पुस्तकों में से एक थी। अमेरीकन एकाडमी आफ फिजिकल एज्युकेशन के चार्टर सदस्य थे। दि अमेरीकन फिजीकल एज्युकेशन रिव्यु के सम्पादक २४ वर्ष तक रहे इस अवधि में इन्होंने नेशनल प्रोफेशनल एसोशियेशन को अपने सर्वोत्तम गुणो तथा अपने जीवन का श्रेष्ठ ससय अर्पित कर दिया।

क्लेलिया डी मोरार (१८६३-१९४० ई०) का जन्म अलबानी न्यूयार्क में हुआ था। आरम्भ ही से उन्हें अनुसंधान में रुचि थी। स्त्रियों की शारीरिक अयोग्यता का जो प्रचलित विचार था उसका उन्होंने विरोध किया। स्त्रियों के वस्त्र सुधार में उन्होंने विशेष कार्य किये। महिलाओं को स्पोर्ट्स आदि में भाग लेने के लिये प्रोत्साहित किया। क्रियात्मक रजस्वला के ऊपर अनुसंधान करने के पश्चात उन्होंने यह मिथ्या बिचार दूर किया कि रजस्वला एक निर्बलता है जिसे महिलाओं को सहना पड़ेगा। कष्टदायक रजस्वला के निवारण के लिये उन्होंने व्यायाम बनाए। इन व्यायामों को'मोरार एक्सरसाइज' कहते हैं। स्कीमाटोग्राफ जो डील डौल तथा आसन के प्रशिक्षण में सहायता देता है, उसकी वह सह आविष्कारक थीं। डा० मोशर ने अपने अध्ययन से महिलाओं को जीव क्रियात्मक स्वतंत्रता प्रदान की।

एथेल पेरीन का जन्म वेलेस्ली मासाट्सेट्स में हुआ था। बोस्टन नार्मल स्कूल से प्रशिक्षित हुयी थी। यह द्वितीय महिला थीं जो शारीरिक शिक्षा विभाग की प्रधान हुयीं। शारीरिक शिक्षा के उचित स्तर तथा एथलेटिक्स के प्रसार में नि:संकोच तथा उत्साहपूर्ण सेवा की।

१९१८ से १९३० ई०

विभिन्न प्रकार के मशीनों के आविष्कार से मनुष्यों को अधिक अवकाश प्राप्त हुआ अत: शारीरिक शिक्षा का उत्तरदायित्व बढ़ गया, प्रथम विश्वयुद्ध के पूर्व महिलाओं ने पुरुषों के सदृश्य कार्य करना आरम्भ कर दिया था तथा युद्ध के समय उन्होंने कार्य में पुरुषों का स्थान लिया। युद्ध समाप्ति के पश्चात अपनी प्राप्त स्वतन्त्रता को उन्होंने छोड़ना स्वीकार नहीं किया। १९२० ई० के अमेण्डमेन्ट ने

महिलाओं को मतदान का अधिकार दिया। युद्ध के खिचाव से स्वतन्त्र चलचित्र उद्योग के कारण व्यवहार में परिवर्तन, आर्थिक उन्नति की उमंग तथा अन्य तथ्यों के कारण एक विचित्र रुचिकर सामाजिक स्थिति प्रस्तुत हुयी जो देश के इतिहास में अपूर्व रही।

डिवी तथा किलपैट्रिक के शिक्षा दर्शन पर आधारित प्रगतिशील शैक्षणिक आन्दोलन की ओर अधिकता से ध्यान आकर्षित हुआ। इस विचार के कारण व्यक्ति का सम्मान प्रजातांत्रिक समाज के लिये अनिवार्य था। अतः स्कूल का इस प्रकार होना निश्चित था जहां निर्णय, ज्ञान प्राप्ति, अन्तर करना, सहने की शक्ति आदि, सामाजिक वातावरण की तरह हों जिसके द्वारा शक्तिशाली व्यक्तित्व का जन्म सम्भव हो। इस प्रगतिशील शिक्षा आन्दोलन ने औपचारिक क्रम गति शिक्षा विशेष पर बल नहीं दिया।

यूनाइटेड स्टेट्स के युद्ध में सम्मिलित होने पर शारीरिक शिक्षा के व्यवसाय के व्यक्तियों ने युद्ध के शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में अत्यन्त सहायता दी। सैनिकों के लिये शीघ्रता से कैम्प आयोजित किये गये। उनका संगठन बाद में किया गया। युद्ध के समय की भर्ती के रिपोर्ट से पता चलता था कि अधिकतर व्यक्ति शारीरिक स्वास्थ्य स्तर से नीचे थे। इसके साथ ही जनता की मांग स्वस्थकर जीवन की रही। स्कूलों के लिये स्टेट ने कानून पास किये जिससे स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया जाये। इसके लिये आर्थिक सहायता उपलब्ध की गयी। केन्द्रीय कानून बनाये गये तथा सहायता दी गयी।

सोसायटी आफ डाइरेक्टर्स आफ फिजिकल एज्युकेशन ने शारीरिक शिक्षा के ध्येय प्रचलित शिक्षा को ध्यान में रखते हुये घोषित किये। इसके अनुसार, व्यक्ति की उन्नति उसके सामाजिक सम्बन्ध के क्षेत्र में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। गेम्स तथा ऐथलेटिक्स के द्वारा अनेक सामाजिक गुण विकसित किये जा सकते हैं। इन सामाजिक गुणों के अर्जित करने में उत्तम स्वास्थ्य, शक्ति एवं सहने की शक्ति का विकास, डील डौल एवं आसन तथा नाड़ी तन्तुओं एवं पुट्ठों का नियन्त्रण, सहायक होंगे।

हेथरिंगटन ने अपने शारीरिक शिक्षा उद्देश्यो में बड़ी मांसपेशियों का

क्रिया, उपयुक्तता एवं निपुणता, विकास, सामाजिक स्तर, स्वास्थ्य दशाओं का नियन्त्रण बताया। प्रसिद्ध लेखक विलियम ने कहा कि औपचारिक कालेसथेन्विस एवं जिमनास्टिक शिक्षा के दोष हैं। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि शारीरिक शिक्षा सामान्य शिक्षा का एक अंग है। उनके अनुसार शारीरिक शिक्षा का ध्येय व्यक्ति तथा समाज के लिये योग्य नेतृत्व, उपयुक्त साधन तथा पर्याप्त समय उपलब्ध करना है, जिससे ऐसी परिस्थिति का निर्माण हो जो व्यक्ति तथा समाज के लिये शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ, मानसिक दृष्टि से प्रेरक तथा संतोष प्रद एक सामाजिक दृष्टि से दृढ़ हो।

किलपैट्रिक का यह विचार था कि आधुनिक सभ्यता आधुनिक प्रणाली एवं पाठ्यक्रम की मांग करती है। बीसवीं शताब्दी के मध्य में 'टेस्ट एण्ड मेजरमेन्ट' पर विशेष बल दिया गया।

डेविड के ब्रेस ने यह कहा कि मांप में तीन उद्देश्यों पर बल देना चाहिये। शिक्षा के लिये बालकों का वर्गीकरण, प्रयत्न प्राप्ति का माँप तथा शिक्षा में सीखने की उन्नति। १९२७ ई० में, फ्रेड्रिक रान्ड रोर्जस ने वर्गीकरण के लिये 'फिजिकल फिटनेस इनडेक्स' का प्रस्ताव किया।

ऐलीमेन्ट्री स्कूलों में औपचारिक प्रणाली का प्रभाव था। कार्य क्रम क्लास शिक्षक के द्वारा नियन्त्रित होता था। हाई स्कूल में प्राकृतिक क्रियायें उपलब्ध थी। यह कार्य क्रम भी क्लास शिक्षक ही नियन्त्रित करते थे। जहां सिटी सुपरवाइज़र की प्रथा थी वहां वे उनके द्वारा सहायता प्राप्त करते थे। प्रति सप्ताह १५० मिनट शारीरिक शिक्षा के लिये दिया जाता था।

१९२४ ई० में लेन्डिस की रिपोर्ट से पता चलता है कि कुछ स्कूलों में जिमनेजियम के अभाव से शारीरिक शिक्षा नहीं होती थी। यदि कुछ होती भी थी तो वह १० या १५ मिनट का कालिसथेनिक्स था। कुछ स्कूलों में ३ या ४ घंटे प्रति सप्ताह शारीरिक शिक्षा के लिये दिये जाते थे जो ४५ मिनट का होता था। कुछ इस समय सैनिक शिक्षा दिया करते थे। साधारण प्रथा एक चौथाई समय कालेस्थेनिक्स तथा मर्चिंग के लिये आधा समय गेम्स तथा मनोरंजन जिमनास्टिक के लिये तथा एक चौथाई स्वास्थ्य की शिक्षा, स्नान तथा वस्त्र धारण के लिये दी जाती थी। बेसबाल, बासकेटबाल, साकर फुटबाल, तैरना, टेनिस

ट्रैक तथा फील्ड के खेल में रुचि देखने से आपस के स्कूल प्रतियोगिता में रुचि दिखायी देती है।

किलपैट्रिक के 'प्रोजेक्ट मेथड' को प्रोत्साहन देने से पाठ्य क्रम के बाहर की क्रियाओं पर बल दिया जाता था जो शारीरिक शिक्षक के नियन्त्रण में होता था।

कालेज तथा यूनिवर्सिटी में शारीरिक शिक्षक के विभाग थे। उसका एक निर्देशक होता था यह पद प्रोफेसर के तुल्य, होता था। अधिकतर स्टाफ शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में सहायता देते थे। इनकी सुविधायें जिमनेजियम, खेल के मैदान, स्वीमिंग पूल, ट्रक, बोस्ट हाउस, स्केटिंगरिंक, टेनिस, हैंडबाल तथा स्कावश कोर्टस थे।

१९२२ ई० नेशनल अमेच्यर एथलेटिक फेडरेशन की स्थापना हुयी। शिक्षा संस्थाओं में शारीरिक शिक्षा की प्रगति नियम का स्तर सही करना तथा ओलम्पिक में भाग लेना तथा अवैतनिक खिलाड़ियों में उच्च विचार, इसका मुख्य ध्येय था।

महिलाओं की शारीरिक शिक्षा विभाग में सर्वत्र उन्नति रही। कार्यक्रम में संस्था अनुसार भिन्नता थी। साधारणतः जिमनास्टिक, व्यक्तिगत एवं सामूहिक स्पोर्टस, नृत्य तथा तैरना, होता था। दो से चार घंटे प्रति सप्ताह इस कार्य के लिये दिये जाते थे।

युद्ध के पश्चात स्टेट के कानून जो स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा के लिये पास किये गये थे उसके कारण शिक्षकों की मांग अधिक हो गयी। १९२५ ई० तक ९२ नार्मल स्कूल, कालेज तथा यूनिवर्सिटी, चार वर्ष का कोर्स व्यवसायिक प्रशिक्षण के लिये दे रहे थे। २६ संस्थायें तीन वर्ष का कोर्स चला रहीं थीं। स्पेशलाइजेशन की व्यवस्था थी। समर स्कूल अनेक स्थान में होते थे। इलीनोइस, नेबरास्का, वाशिंगटन तथा विसकोंसिन यूनिवर्सिटी में चार वर्ष की एथेलेटिक्स कोचिंग का व्यवसायिक कार्य क्रम था तथा उसके पश्चात वाचलर्स डिग्री प्राप्त करना सम्भव था। ट्रेनिंग के सम्बन्ध में हेथरिंगटन का विचार इस अवधि में एक महत्वपूर्ण विषय रहा। उनका कहना

था कि शारीरिक शिक्षकों का प्रशिक्षण का भार शारीरिक शिक्षा विभाग, कालेज तथा स्कूल आफ एज्युकेशन का है न कि आर्टस कालेज का।

व्यवसायिक प्रोग्राम में विस्तृत सांस्कृतिक कार्यों के अधिक होने पर उन्होंने बल दिया इसके पक्ष में उन्होंने विसकोंसिन यूनिवर्सिटी का उदाहरण दिया फिजिकल एज्युकेशन मेजर में जुआलोजी, केमिस्ट्री एनाटमी, फिजियालोजी, इतिहास तथा इंगलिश व्यवसायिक पाठ्य क्रम के साथ लेना अनिवार्य था। इस प्रकार के पाठ्य क्रम से शिक्षकों की स्थिति का सम्मान दूसरे विषय के शिक्षकों के तुल्य होगा। १९२७ ई० की कान्फ्रेन्स आफ प्रोफेशनल ट्रेनिंग इन फिजिकल एज्युकेशन में उन्होंने विशेष भाग लिया था। १९३० ई० तक मास्टर्स डिग्री इन फिजिकल एज्युकेशन तथा डाक्टर की भी डिग्री प्राप्त होने लगी थी।

इस अवधि के अन्त में स्वास्थ्य, शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन की एक दृढ़ महत्व पूर्ण स्थिति बन चुकी थी तथा अमेरिकन जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग बन चुका था।

युनाइटेड स्टेट्स के अन्तर्राष्ट्रीयकाल में शारीरिक शिक्षा १९३० ई० के पश्चात्)

१९२० ई० की तुलना में इस नयी अवधि का प्रथम पक्ष एक उतार का समय था। यह उतार यहीं नहीं किन्तु सारे संसार में एक सा था। दूसरे पक्ष में इतिहास के सबसे बड़े युद्ध में यूनाइटेड स्टेटस को भाग लेना पड़ा। उसी के पश्चात कम्युनिजम को रोकने के लिए फिर हथियार का प्रयोग करना पड़ा। इस संकट कालीन अवस्थाओं में भी अपूर्व महत्वपूर्ण शैक्षणिक तथा सामाजिक विकास हुये।

तीव्र गति से हो रही घटानाओं के कारण यूनाइटेड स्टेटस को अन्तर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्व का बोझ उठाना पड़ा। प्रेसीडेन्ट फ्रैन्कलिन डी रूजवेल्ट की 'उत्तम पड़ोसी' की राजनीति की घोषणा केन्द्रीय तथा दक्षिण अमेरिका के लिये राजनीति में अच्छा परिवर्तन था। अत: इस कारण दोनों देशों के आपस में विशेष महत्वपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हुये। इस क्रिया में मोनरो सिद्धान्त का अन्त तथा 'पैन अमेरिकन' सिद्धान्त जो समानता एवं नये संसार के सभी राष्ट्रों के आपस के समझ पर आधारित था, आरम्भ हुआ।

यह भावना संसार के दूसरे क्षेत्रों में अभी व्यापी हुयी थी।

नाजी आक्रमण के कारण पक्षपात हीन दशा में परिवर्तन करना पड़ा। युद्ध के पश्चात शान्ति सुरक्षा की चेष्टा युद्ध के काल से ही आरम्भ हो गयी थी। इसकी प्रथम सीढ़ी १९४१ ई० में एटलान्टिक चारटर था, यह इंगलैंड तथा यूनाइटेड स्टेट्स के बीच शान्ति प्रगति के लिये एक समझौता था। १९४२ ई० में यूनाइटेड नेशन की स्थापना हुयी। यह आक्सिस शक्तियों के विरोध में आपस में समन्वय का प्रतीक था। १९४५ ई० में यूनाइटेड नेशन्स के वास्तविक संगठन के पूर्व अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संस्थायें थीं जैसे एफ० ए० ओ०, यु० आर० आर० ए०, विश्व बैंक आदि। यह युद्ध के समय ही स्थापित हुयी थीं। युनाइटेड नेसन्स के स्थापित होने के पश्चात दूसरी और संस्थायें स्थापित हुई, जैसे सी० ए०ओ० डब्लू०एच०ओ०आई०,एल०ओ० तथा (युनिसको) यू०एन०ई०एस०सी० ओ० यूनाइटेड स्टेट्स ने सदैव अपना उत्तरदायित्व विश्व नागरिक की स्थिति में स्वीकार किया तथा सहायता के हेतु तत्पर रहा।

उतार का प्रभाव सार्वजनिक शिक्षा पर भी अधिकता से पड़ा। आर्थिक सहायता समाप्त हो गयी। अनेक स्कूल बन्द कर दिये गये। शिक्षकों के वेतनों में भारी कटौती हुयी। इस शैक्षणिक संकट में भी शिक्षा व्यवसाय ने उत्साह पूर्ण चेष्टा की कि स्कूल प्रणाली की निपुणता पर जो संकट था उसका विरोध करे तथा आधुनिक शैक्षणिक आवश्यकताओं के प्रति सार्वजनिक विचार को शिक्षित करे।

स्वास्थ्य तथा शारीरिक शिक्षा जो विशेष विषय समझे जाते थे उनका भी उतार के समय जीवित रहना कठिन हो गया। बाहर के संगठनों के कारण कुछ प्रोग्राम बचा लिये गये थे। ये संगठन थे, अमेरिकन फेडरेशन आफ लेबर, दि अमेरिकन लीजीओन, टर्नविरायन तथा सोकोलस। ऐसी ही सहायता 'कमेटी आफ इन्डस्ट्रियल आर्गनाइजेशन' से प्राप्त हुई। फेडरल सरकार ने भी भिन्न संस्थाओं के द्वारा आर्थिक एवं सामजिक सहायता प्रदान की।

उतार के कारण दो तीन प्रभाव उपस्थित थे जो लाभकारी सिद्ध हुये। शिक्षकों की शैक्षणिक योग्यता की वृद्धि में मांग हुयी। १९३० ई० के पूर्व

एलीमेन्ट्री टीचर्स के लिये एक वर्ष का कालेज का कार्य था। किन्तु दस वर्ष बाद व्यवसायिक तैय्यारी के लिये दो से चार वर्ष की आवश्यता हुयी। और शिक्षा के लिये विशेष व्यवस्था की गयी थी।

उतार के कारण युवकों की समस्याओं की ओर भी ध्यान आकर्षित हुआ जिसका निवारण फेडरल सरकार ने की 'सिवीलियन कोन्सरवेशन कोर' एवं नेशनल यूथ एडमिन्सट्रेशन के द्वारा किया। उतार के कारण शिक्षा की शोचनीय दशा थी ही, कि, युद्ध ने उसे एक और धक्का दिया। युद्ध की आवश्यकताओं के कारण, शिक्षा की आवश्यकताओं की पूर्ति न हो सकी। युद्ध की सेवा के लिये शिक्षकों की मांग हुयी एवं उच्च वेतन के लिये सैनिक सेवा स्वीकार की गयी।

युद्ध के पश्चात की अवधि में मंहगाई के कारण सामग्रिक विकास करना कठिन हो गया। जनसंख्या का ग्रामों में बसना, नये ग्रामों का निर्माण तथा बालकों के जन्म में वृद्धि इन सबका मिल कर शिक्षा पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा। एलीमेन्ट्री स्कूल शिक्षा सुविधा एवं शिक्षक न्यूनता के कारण संकट में पड़ गये। जी० आई० बिल आफ राइट्स के कारण सेना से लौटे हुये व्यक्तियों ने इस उदार सहायता से लाभ उठाने के लिये अत्याधिक कालेजों में प्रवेश लिया। यहां तक कि प्रवेश सीमा से बाहर हो गया।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की शिक्षा कहीं कहीं दी जा रही थी। कुछ यूनिवर्सिटी दूसरे देशों की संस्कृति का संयुक्त प्रोग्राम अधिक मात्रा में देती थी। शिक्षा की, दूसरे देशों की शिक्षा के साथ तुलना के अध्ययन में प्रगति हुयी तथा शिक्षकों का आदान-प्रदान हुआ। फेडरल सरकार ने दूसरे देशों के साथ सांस्कृतिक प्रोग्राम के लेने देने की व्यवस्था की।

द्वितीय विश्वयुद्ध के आकस्मिक आवश्यकताओं ने शारीरिक शिक्षा के ऊपर विशेष भार डाला। चार वर्ष तक सैनिक प्रमुख शारीरिक शिक्षा यूनाइटेड स्टेट्स में दी गयी। सैनिक तथा सिविल अधिकारियों दोनों के विचार थे कि स्कूल तथा कालेज सैनिक शिक्षा की अपेक्षा शारीरिक क्षमता के विकास 'फिजीकल फिटनेस' के द्वारा युद्ध चेष्टा को सहयोग दे सकते हैं।

सामान्यरूप से द्वितीय विश्वयुद्ध की अवधि में स्कूल तथा कालेज में एथेलैटिक एवं शारीरिक शिक्षा बनी रही। युद्ध की आवश्यकताओं के कारण शारीरिक शिक्षा से सम्बन्धितवि षयों परजै से मेडिकल परीक्षा, प्रारम्भिक चिकित्सा, संक्रामक रोगों का निवारण तथा नियन्त्रण, भोजन, उत्तम शारीरिक शिक्षा तथा आदेश प्रथम बार सैनिकों के लिये स्पोर्ट्स उनके प्रशिक्षण एवं मनोरंजन के प्रोग्राम का एक भाग बना।

इस अवधि में वैज्ञानिक आन्दोलन शारीरिक शिक्षा का एक अंग बना। युद्ध के काल में शारीरिकशि क्षा ने सेना के लिये अनेक 'रिसर्च' किये। शारीरिक शिक्षा में ग्रेजुयेट अध्ययन की वृद्धि से रिसर्च की ओर रुचि का पता चलता है। शैक्षणिक विकास में व्यक्तिगत विभिन्नता पर बल के कारण उनके ऊपर ध्यान दिया गया जो किसी शारीरिक दोष के कारण असमर्थ थे।

स्कूलों में मनोरंजन के शैक्षणिक मूल्य को स्वीकार करने के कारण सामाजिक शिक्षा की दृढ़ नीव पड़ी। अमेरिकन जीवन प्रणाली में पर्याप्त अवकाश का अवसर प्राप्त हुआ। अत: यह स्कूलों का उत्तरदायित्व हो गया कि वे अवकाश के सदोपयोग के लिये उचित शिक्षा प्रदान करें। शैक्षणिक समस्यायें जो इस शिक्षा में लिप्त थीं वे न केवल चातुर्य एवं क्रियाशील रूपसे भाग लेनेकी रुचि की थी, वरन उनके द्वारा मनोरंजन के विभिन्न रूपों को स्तर देना तथा सराहना था। मनोरंजन, अवकाश के समय का दार्शनिक पक्ष एवं स्वस्थप्रद, संस्कृतिक एवं संतोष प्रदान करने वाले कार्यों को अपने में सम्मिलित करने के लिये विस्तृत हुआ।

यूनाइटेड स्टेट्स के दर्शन एवं आधुनिक शारीरिक शिक्षा के स्वास्थ्य, शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन के प्रोग्राम की सामग्री में सैनिक, वैज्ञानिक, विकास में सहायक तथा सामाजिक बल, चारों संयुक्त हैं।

उत्तार के समय शिक्षा एक आलोचना एवं मूल्यांकन का विषय रही। समस्या को सुलझाने के लिये दि नेशनल एज्युकेशन एसोसियेशन ने एज्युकेशन पौलिसी कमीशन की स्थापना की। उन्होंने शिक्षा के चार उदेश्य बताये 'स्वयं प्राप्ति Self Achievement मानव सम्बन्ध, Human Relation, आर्थिक निपुणता Financial Sufficiency तथा नागरिक

उत्तरदायित्व Civic Responsibility स्कूलों से उत्तम नागरिकता एवं प्रजातांत्रिक जीवन की शिक्षा की आशा की जाती थी किन्तु उद्योग, सेना, सरकार तथा व्यवसाय, विशेषज्ञों की मांग कर रहे थे। सामान्य शिक्षा तथा विशेषज्ञ शिक्षा में विरोध हुआ एवं शिक्षा सन्चालकों के लिये एक समस्या बन गयी।

शारीरिक शिक्षा में पिछली शताब्दी के सिद्धान्त मान्य थे। इस शताब्दी के दो प्रसिद्ध प्रोत्साहित करने वाले व्यक्ति डा० जे० एफ० विलियम्स एवं डा० जे० बी० नाश थे। डा० विलियम का कहना था कि शारीरिक शिक्षा शरीर की शिक्षा नहीं किन्तु शरीर के द्वारा शिक्षा है। १९३० ई० में शारीरिक शिक्षा का एक नवीन ध्येय प्रकाश में आया। यह अवकाश की अवधि के लिये तैयारी का ध्येय था। खेल के प्रति विचार एवं मानव जीवन में उसकी उपयोगिता नये सामाजिक मनोविज्ञान के कारण परिवर्तित हुई। खेल के दो नये सिद्धान्त प्रकाश में आये। क्षति पूर्ति करने का तथा स्वयं को प्रकाशित करने का सिद्धान्त। इन सिद्धान्तों के कारण शारीरिक शिक्षा में मानसिक स्वास्थ्य का मूल्य प्रतीत हुआ। एथलेटिक स्पोर्ट्स आदि में भाग लेने का दूसरा मूल्य विशेष कर नैतिक गुणों के अर्जित करने का नहीं किन्तु युवकों को सामाजिक स्थितियों एवं वातावरण के उपयुक्त होने का अनुभव प्रदान करने में था। कहा जा सकता है कि इस काल में बल शरीर से हटा कर शिक्षा पर दिया गया।

शारीरिक शिक्षा के ध्येय तथा उद्देश्य जो निर्मित हो कर चले आरहे थे उनमें समय समय पर किसी न किसी रूप में कुछ परिवर्तन होता रहा। इस सम्बन्ध में इस काल के सी० एच० मैकलोय, डी० ओर्बटियुफर, फान्क लोयड, एगनेस वेमान, मेबल ली, जाकसन शरमन, चार्ल्स कोवेल, सी० ओ० जाकसन एच० ए० स्काट, हिलडा कोज़मान, डोरथी ला साले, फ्रेडरिक कोज़न, एलमर डी० मिचेल, वाम शल्फ लापोर्ट, लेसली ईर्बिन, जौर्ज स्टाफोर्ड, आर्थर एसलिंगर आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

इस काल में विशेष शारीरिक शिक्षा की प्रगति प्राइमरी ग्रेड्स एवं सेकेन्ड्री स्कूलों में हुई। शारीरिक शिक्षा कार्यों के लिये अधिक मैदान प्राप्त करने के लिये स्कूल कम्युनिटी पार्क तथा सुविधाओं के समीप बनने लगे।

द्वितीय विश्वयुद्ध के समय शैक्षणिक संस्थाओं की सेवा महत्वपूर्ण रही।

अनेक संस्थाओं की सुविधायें सेना के द्वारा प्रयोग की गयी। युद्ध के परिणाम स्वरूप हाई स्कूलों में कुछ विशेष परिवर्तन हुये। शारीरिक शिक्षा के लिये समय वृद्धि, शारीरिक शिक्षा में अधिक संख्या में लड़के तथा लड़कियों का प्रवेश, स्कूल अधिकारियों के द्वारा शारीरिक शिक्षा की रूचि में उन्नति तथा शैक्षणिक मान्यता आदि महत्वपूर्ण परिवर्तन थे। हाई स्कूल शिक्षा का आदेश फिजिकल फिटनेस थ्रू फिजिकल एज्युकेशन फार दि हाई स्कूल विक्टरी कोर पुस्तक के द्वारा होता था जो व्यवसायिक शारीरिक शिक्षकों के एवं सेना के प्रतिनिधियों की सम्मिलित कमेटी के द्वारा प्रकाशित किया गया था।

अशैक्षणिक संस्थाओं के सहयोग से भी शारीरिक शिक्षा में सहायता पहुंची। सेना के विभिन्न प्रशिक्षण केन्द्र एवं कैम्प शारीरिक शिक्षा के साधन सिद्ध हुये। एथेलेटिक्स एवं कालेसथेनिक्स, फिजीकल फिटनेस एवं मनोरंजन के लिये नये भर्ती किये गये जवानों को दिया जाता था। समुद्रपार की मनोरंजन आवश्यकता की पूर्णता के लिये वालीबाल, साफ्टबाल, टच बाल, फुटबाल आदि लोकप्रिय थे।

वाइ० एम० सी० ए० की सेवायें इस ओर सैनिकों एवं सामान्य नागरिकों के लिये समान मात्रा में उपलब्ध थी। अपंग बालकों के लिये अत्याधिक अर्थ व्यय किया गया। इस के प्रति १९३५ ई० सोसियल सेक्यूरिटी एक्ट पास किया गया। विभिन्न स्टेट ने शारीरिक शिक्षा सम्बन्धित नियम पास किया। स्टेट्स में निर्देशक एवं निरीक्षक नियुक्त हुये। नियमों के कारण स्कूल स्वास्थ्य, शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन का संगठन एक स्थान में केन्द्रित कर दिया गया। शिक्षक प्रशिक्षण में उतार का प्रभाव शिक्षकों के योग्यता प्रयोजन की वृद्धि में हुआ युद्ध की अवधि में यह प्रगति थम गयी। युद्ध के पश्चात शिक्षकों की अत्याधिक मांग हुयी। स्कूलों में अधिक प्रवेश एवं शारीरिक शिक्षा में 'मेजर' की व्यवस्था से बहुतायत से उपलब्ध होने के कारण शिक्षकों की कमी मालूम हुयी। १९३० ई० १९५० ई० की अवधि, ग्रेजुएट शारीरिक शिक्षा पाठ्य क्रम के लिये महत्व पूर्ण रहा। मास्टर्स तथा डाक्टर की डिग्री की व्यवस्था हुयी। संस्थाओं में उत्तम प्रशिक्षित शिक्षकों की जिनके पास मास्टर्स डिग्री एवं डाक्टर की डिग्री थी उनकी मांग बढ़ी। यह शिक्षक प्रशिक्षण की प्रगति का मूक प्रमाण था।

व्यवसाय की प्रगति उसके व्यवसायिक संगठन के संगठित होने से प्रमाणित होता है। अमेरीकन फिजिकल एज्युकेशन ऐसोसियेसन में संशोधन हुआ।

इसके भौगोलिक आधार पर ६ डिसट्रिक्ट निर्मित किये गये । १९४८ ई० तक इस संस्था के २९ विभाग बन चुके थे जिनमें मानसिक स्वास्थ्य, सुरक्षा शिक्षा, नृत्य, निजी शारीरिक शिक्षा संस्था, कैम्पिग तथा आउटिंग, व्यवसायिक शिक्षा तथा विद्यार्थी आदि ऐसे विभाग थे । इस बड़ी संस्था का नाम १९३७ ई० में अमेरीकन ऐसोसियेशन फार हेल्थ एण्ड फिजिकल एज्युकेशन में परिवर्तित हो गया । एक वर्ष के पश्चात यह अमेरीकन एसोसियेशन फार हेल्थ, फिजिकल एज्युकेशन एण्ड रिक्रियेशन के नाम से सम्बोधित हुआ तथा इसी के साथ यह नेशनल एज्युकेशन ऐसोसियेशन का एक विभाग बन गया । यह सम्बन्ध इस बात का प्रतीक था कि सम्पूर्ण स्कूल पाठय क्रम एवं शारीरिक शिक्षा में घनिष्टता थी अत: व्यवसायिक समानता भी थी ।

राष्ट्रीय एसोशियेशन के तीन विशेष कार्य रहे हैं जो आज तक विद्यमान हैं । शारीरिक शिक्षा में विस्तृत एवं ज्ञान पूर्ण रूचि की जागृति तथा प्रगति, सही सूचनाओं की प्राप्ति एवं प्रसार व प्रगति के ऐसे साधन उपलब्ध करना जिसके द्वारा शारीरिक शिक्षा का उपयुक्त प्रोग्राम प्राप्त किया जा सके । दो सरकारी प्रकाशन मासिक पत्रिका एवं रिसर्च क्वार्टरली के द्वारा ये कार्य सम्पन्न करने की चेष्टा हुयी ।

सोसायटी आफ कालेज डाइरेक्टर्स आफ फिजिकल एज्युकेशन ने १९३३ ई० में अपना नाम दि कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन एसोसियेशन में परिवर्तित कर दिया । इस में शिक्षक एवं संगठनकर्त्ता सदस्यता प्राप्त कर सकते थे । इनके मुख्य प्रकाशन, 'फिजिकल एज्युकेशन करीक्युलम' ए नेशनल प्रोग्राम, कालेज फेसलटीज़ फार फिजिकल एज्युकेशन, हेल्थ एज्युकेशन एण्ड रिक्रियेशन थे ।

इस अवधि में शारीरिक शिक्षा में महत्व पूर्ण एवं विस्तृत रिसर्च अध्ययन हुये । इस कार्य में दूसरे विभागों के रिसर्च परिणामों का भी उपयोग किया गया । संस्थाओं में शारीरिक शिक्षा विभाग में पृथक प्रयोगशाला निर्माण किये गये ।

यूनाइटेड स्टेट्स ने अनेक अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेन्स में भाग लिया । १९३२ ई० के ओलम्पिक के समय लासआन्जलिस में एक लेक्चर सीरीज़ का आयोजन

किया गया था जिसमें विश्व के विख्यात शारीरिक शिक्षक उपस्थित थे। लन्दन में १९४८ ई० के ओलम्पिक के समय के आयोजित इन्टरनेशनल कांग्रेस आन फिजिकल एज्युकेशन, रिक्रीयेशन एण्ड रीहैबलीटेशन में यू० एस० ए० ने भाग लिया था। १९५२ ई० में फिनलैंड में, इन्टरनेशनल लीग आफ मार्डन जिमनास्टिक का उत्सव हुआ। उसी वर्ष हेलसिंकी के विश्व समारोह शारीरिक शिक्षा स्वास्थ्य एवं मनोरंजन का उत्सव हुआ था। १९४९ ई० में स्टाकहोम में लिंगीयाड वास्तविक रूप से अन्तर्राष्ट्रीय था तथा इसे पूर्ण सफलता प्राप्त हुई।

स्कूल ऐथलेटिक्स की समस्याओं को हल करने के लिये एन० सी० ए० ए० ने दो चेष्टायें की : एक कमेटी बनाई तथा सानीट्री कोड स्थापित किया जिससे ऐथलेटिक स्तर उच्च हो सके। कुछ दिनों के पश्चात ये उस उद्देश्य को पूर्ण नहीं कर सके जिसके लिये बनाये गये थे। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय कालेज ऐथलेटिक्स सुचारू रूप से चल रहा था। एथलेटिक प्रोग्राम का संगठन असैनिक व्यक्तियों के हाथ में रहा। एन० सी० ए० ए० ने राष्ट्रीय प्रतियोगिता में जिमनास्टिक, टेनिस क्रासकन्ट्री, बासकेटबाल, गोल्फ, फेन्सिग, बेसबाल तथा आइस हाकी भी सम्मिलित कर लिया।

१९३० ई० के पश्चात इन्ट्राम्युरल स्पोर्टस ने स्पोर्टस के मनोरंजन पक्ष पर बल दिया। स्पोर्टस में भाग, भाग लेने के आनन्द के कारण लिया जाता था। उत्साह बढ़ाने के लिये उत्तम शारीरिक शिक्षा प्रोग्राम की आवश्यकता है इसमें दो विचार नहीं थे। इन्ट्राम्युरल विभाग के द्वारा स्पोर्टस क्लीनिक, एनुवल ओपेन हाउसेस, फ्रेशमेन ओरियनटेशन तथा प्रिंटेड हैंड बुक की व्यवस्था थी। आधुनिक इन्ट्राम्युरल प्रवृति सह स्पोर्टस की भी है। यह आन्दोलन विवाहित महिलाओं के द्वारा प्रोत्साहित किया गया।

एथलेटिक्स में महिलाओं के संगठन ने स्पोर्टस में लड़कियों तथा महिलाओं के भाग लेने के लिये उचित स्तर एवं नियम स्थापित किए हैं जिसे वे उत्तम रीति से पालन करती हैं। स्कूल की आपस में प्रतियोगिया का विरोध किया है। एगनेस वेमैन, डोरथी एन्सवर्थ, हेलन मैकिस्ट्री, मेबल ली, आना नोरिस, ब्लान्च ट्रिलिंग, एलिजाबेथ हालसी, डोरथी सम्पशन, रूथ इलियट,

गर्ट्रूड मोलटन, ऐनी हौजकिंस, इडीथ गेट्स, मारगरेट बेल, हेलेन कूप्स, हेलेन स्मिथ, ग्रेस जोन्स, हेलेन हाजेलटोन, डोरथा लासा ले, एलाइन वोन बोरिस, रूथ एटकिसन, ग्रेस डेविस तथा लौरों केम्पबेल आदि महिलाओं ने शारारिक शिक्षा उन्नति में सहयोग दिया।

आधुनिक नृत्य ने पर्याप्त उन्नति की। १९३२ ई० में अमेरिकन फिजिकल एसोसियेशन में नृत्य का एक विभाग स्थापित किया गया। दि बेनिंगटन स्कूल आफ डान्स की स्थापना १९३४ ई० में हुई। यह आधुनिक नृत्य शिक्षकों तथा विद्यार्थियों का एक मिलने का स्थान था। नृत्य की दूसरी संस्थायें भी स्थापित की गयीं।

स्कूलों से जो एथलेटिक्स सम्बन्वित नहीं थे, उनमें अमेच्योर ऐथलेटिक्स में अमेच्योर ऐथलेटिक यूनियन एक प्रभाव शाली शक्ति रही। यह कई लाख पुरुषों एवं स्त्रियों के कार्यो का निरीक्षण करती थी एवं १५ स्पोर्ट्स के ऊपर इसका अधिकार था। यह कई एक अन्तर्राष्ट्रीय अमेच्योर स्पोर्टस के फेडरेशन से सम्बन्धित थी।

व्यवसायिक स्पोर्ट्स ने भी युद्ध के पश्चात उन्नति की एवं सर्व प्रिय रहा। व्यवसायिक बेसबाल रात्रि के समय होता था तथा एक उत्तम आर्थिक लाभ का माध्यम था। ऐसे ही अनेक व्यवसायिक खेल होते थे।

यूनाइटेड स्टेट्स, विश्व ओलम्पिकस प्रतियोगिता में सदैव भाग लेता रहा। इस संस्था के उत्तरदायित्व तथा कार्य संचालन में भी इनका उत्तम सहयोग रहा। युद्ध के पश्चात अमेरिका के एथलीट ट्रैक, स्वीमिंग तथा दूसरे आइटम्स में प्रतियोगिता के लिये विदेश जाते थे। सैनिक सेवा एवं सरकार के द्वारा एथलीट्स अच्छी भावना के राजदूत की तरह प्रयोग किये जाते थे।

स्वास्थ्य में सराहनीय प्रगति हुयी। स्वस्थकर स्कूल इमारते बनायी गयी यह स्टेट शैक्षणिक अधिकारियों के द्वारा बनाये गये नियमों के आधर पर निर्माण किया जाता था। इसका आयोजन शिल्पकार, विशेष निरीक्षक, प्रधानाचार्य, सुपरिटेन्डेन्ट्स तथा शिक्षकों के एक मत से होता था जो स्थानीय स्कूल बोर्ड के द्वारा स्वीकृत होता था। इसमें पाठ्य क्रम के वाह्य के कार्य, इन्ट्राम्युरल कार्य

एवं कम्युनिटी रिक्रियेशन प्रोग्राम तथा प्रौढ़ शिक्षा आदि के लिये उचित सुविधा थी। स्वास्थ्य एवं सुरक्षा के ऊपर उचित ध्यान दिया जाता था। स्कूल की इमारत एवं वातावरण सौन्दर्य तथा आधुनिक सुविधाओं का एक प्रतीक था। प्रचीन संकीर्ण शब्द 'स्कूल स्वास्थ्य' स्वस्थकर स्कूल जीवन में परिवर्तित कर दिया गया। हेल्थ एज्युकेशन कमेटी की रिपोर्ट में स्वस्थकर स्कूल जीवन की परिभाषा के लिये कहा गया कि इन शब्दों का अर्थ है, स्वस्थकर वातावरण, स्वस्थकर स्कूल दिवस का संगठन एवं ऐसा विद्यार्थी शिक्षक सम्बन्ध स्थापित करना जिसके परिणाम स्वरूप एक सुरक्षित तथा स्वच्छ स्कूल जो विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के उत्तम विकास एवं जीवन की उपलब्धि में सहायक हो सके। १९३० ई० में प्रसिद्ध व्हाईट हाउस कान्फ्रेन्स बालक की सुरक्षा एवं स्वास्थ्य के सम्बन्ध में हुई थी। बालक स्वास्थ्य विशेषज्ञ बहुत बड़ी संख्या में उपस्थित थे। इससे तीन उद्देश्य प्राप्त हुये। स्वास्थ्य शिक्षा की महत्वपूर्ण प्रगति प्रकाश में आयी, इसके द्वारा स्कूल तथा समाज के जीवन में स्वास्थ्य शिक्षा के महत्व को राष्ट्रीय चेतना प्रदान की, जो साहित्य प्रकाशित हुये वे भविष्य के लिये आदेश के सिद्धान्त हुये। नई सूचनाओं के प्राप्त करने एवं नई जाग्रति के कारण स्वास्थ्य आन्दोलन अधिक शीघ्रता से प्रगति करने लगा। स्कूल अधिकारियों से ६ तरह के कार्यक्रम सम्पन्न करने का आग्रह किया गया। स्कूल स्वास्थ्य उत्तरदायित्व को एक व्यक्ति के हाथ में देना, स्वास्थ्य शिक्षा के लिये समय एवं सुविधा उपलब्ध करना, चिकित्सा परीक्षा एवं उसे कार्य में परणित करना, स्वस्थ वातावरण स्थापित करना, स्वास्थ्य सम्बन्धी व्यक्ति का प्रशिक्षण, कम्युनिटी सम्बन्ध स्थापित करना।

स्माल पाक्स, डिपथीरिया, परटूसिस, टिटनस एवं टायफाइड से रोक थाम के उपाय; क्षय आदि रोगों के प्रभाव से सुरक्षा; दातों की रक्षा; चिकित्सात्मक देख भाल; स्वास्थ्य निरीक्षण; मानसिक स्वास्थ्य सेवा; संतुलित भोजन; आधुनिक स्वास्थ्य सेवा के विशेष कार्य नियमित किये गये थे। इसकी स्थापना १९४५ इ० के फेडरल सरकार की मीटिंग के समय हुयी थी।

कालेज की स्वास्थ्य सेवा में उन्नति हुयी तथा कालेज स्वास्थ्य सेवा एवं एथलेटिक विभाग में उचित समन्वय हुआ। स्कूल स्वास्थ्य शिक्षा एवं सुरक्षा शिक्षा

प्रोग्राम शनैः शनैः उत्तम प्रतीत होने लगा। इसके लिये कम्युनिटी के स्रोत भी प्रयोग में लाये गये। ये विद्यार्थियों को समाज में ले जाकर स्वास्थ्य योजनाओं में उनसे सहायता अथवा सलाह लेते थे। संगठित मनोरंजन आन्दोलन को इस अवधि के आरम्भ में कुछ आर्थिक हानि हुई किन्तु १९३३ ई० के फेडरल सरकार की आर्थिक सहायता के कारण उनकी स्थिति अच्छी हुई तथा कार्य सुचारु रूप से चलने लगा। फेडरल रिलीफ वर्क्स की एक संस्था उन शिक्षकों की बनी जो सेवा में नहीं थे। इनकी महत्ता, आर्टस् एण्ड क्राफ्ट्स, संगीत, ड्रामा, क्लब आदि में प्रदर्शित हुई एवं मनोरंजन जांच भी इसके द्वारा हुआ। १९४१ ई० के युद्ध ने मनोरंजन संस्थाओं को युद्ध कालीन परिस्थितियों से सहयोग करने को बाध्य किया। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात पुनः कम्युनिटी मनोरंजन का उत्थान हुआ। स्कूल की सुविधायें अधिकतर मनोरंजन केन्द्र के समान प्रयोग में लायी गयीं। सार्वजनिक मनोरंजन की वृद्धि से प्रशिक्षित व्यक्तियों की मांग बढ़ गयी। अतः कुछ कालेजों में मनोरंजन पाठ्य क्रम भी दिया जाने लगा।

मनोरंजन कार्यक्रम में अशैक्षणिक संस्थाओं का भी हाथ रहा है। राज्य की ओर से फेडरल, स्टेट, कन्ट्री एवं स्थानीय सहयोग प्राप्त रहा। इनमें नेशनल पार्क सर्विस, युनाइटेड स्टेटस् फोरेस्ट सर्विस तथा मत्स्य एवं वन जीवन सर्विस, फेडरल सरकार की ओर से तथा दूसरी संस्थाओं की ओर से भिन्न भिन्न पार्क आदि सार्वजनिक प्रयोग के लिये स्थापित किए गए थे।

राज्य से पृथक संस्थाओं में से मनोरंजन में सहयोग देने वाला विशेष 'होम' रहा हैं जो बालकों तथा युवकों के लिये था। चर्च औद्योगिक संस्थाओं के द्वारा भी विभिन्न प्रकार की अन्दर एवं बाहर की मनोरंजन सुविधाओं की व्यवस्था थी। यहां शारीरिक एवं अशारीरिक दोनों प्रकार के मनोरंजन की प्रणाली थी। ब्वाय स्काउट, गर्ल्स स्काउट, वाई० एम० सी० ए०, वाई० डब्ल्यू० सी० ए०, वाई० एम० एच० ए०, सी० वाई० ओ० तथा ४ एच क्लब ऐसे स्थानों में मनोरंजन की उत्तम व्यवस्था एवं साधन थे। व्यापारिक मनोरंजन भी अधिकता से था जो जनता अपनी इच्छानुसार प्राप्त कर सकती थी।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय रिक्रियेशन एसोसियेशन ने प्रथम

अन्तर्राष्ट्रीय रिक्रियेशन कांग्रेस जो १९३२ ई० में लास आंजलेस में हुई उसमें ४० देश के प्रतिनिधि उपस्थित थे।

संगठित कैम्प क्रमशः उन्नति करता गया तथा शिक्षा के अन्तर्गत भी उसका प्रचलन हो रहा था। यूथ होस्टेल मूवमेन्ट जो १९३४ ई० में आरम्भ हुआ उससे भी कैम्पिग को लाभ पहुंचा। बोर्ड आफ एज्युकेशन के एक प्रयोग से यह अनुभव प्राप्त हुआ कि कुछ शिक्षाओं के लिये 'कैम्पिग' 'क्लास रूम' की अपेक्षा कहीं अधिक उपयोगी है।

डे कैम्प १९३० ई० के आसपास सर्वप्रिय बन गया था। इसका कारण आर्थिक सुविधा थी। गर्ल स्काउट्स डे कैम्पिग का अधिक प्रयोग करती थी। युद्ध के समय उन बालकों को ग्रीष्म काल में डे कैम्प में ले जाया जाता था जिनकी मातायें युद्ध सेवा में थीं।

सार्वजनिक स्कूल कैम्प अधिकता से किये जाते थे। इससे शिक्षा तथा कैम्पिग का आपस में निकट सम्बन्ध का संगठित प्रमाण प्राप्त होता था। किसी किसी स्टेट ने बोर्ड को यह अधिकार दिया कि वे कैम्पिग को स्कूल पाठ्यक्रम का एक अंग बना लें। युनाइटेड स्टेटस् आफिस आफ एज्युकेशन का विचार था कि ५० से ऊपर स्कूलों में कैम्पिग उनके शैक्षणिक मनोरंजन की क्रियाओं में से एक था। मिशीगन, न्यूयार्क एवं कैलीफोर्निया स्कूल कैम्पिग में अग्रगामी थे। अमेरिकन कैम्पिग एसोसियेशन इस आन्दोलन को प्रोत्साहित करती थी। इसके द्वारा एक पत्रिका कैम्पिग प्रकाशित होती थी। १९४२ ई० के कनवेन्शन में कैम्प के स्तर नियुक्त किये गये थे। १९४९ ई० में प्रायः दस लाख अमेरिकन युवकों ने एक सप्ताह दस हजार कैम्पों में से किसी एक में व्यतीत किया। एक लाख प्रौढ़ों तथा परिवारों ने औपचारिक रूप से कैम्पिग का सुखद अनुभव, किसी राष्ट्रीय पार्क, स्टेट या स्थानीय पार्क, या जंगल में जहां मोटर से पहुंचा जा सकता है, प्राप्त किया। कैम्पिग को प्रोत्साहन देने वालों में डान बीयर्ड, लूथर गलिक तथा अर्नेस्ट थाम्सन सेटोन प्रमुख थे।

'शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में विभिन्नता बहुत अधिक प्रतीत होती थी। इसमें कुछ प्राचीन परम्परागत क्रियायें तथा कुछ नवीनतम मनोरंजन के स्पोर्टस् मिले-जुले थे। क्लेस्थेनिकस, तालप्रदगति, आपरेटस् एवं टम्बलिंग, एथलेटिक

प्रतियोगिता, टीम के खेल, तैरना, जीवन रक्षा, सामूहिक खेल, नृत्य, टेनिस, गोल्फ, हैन्ड बाल आदि प्रोग्राम में विशेष थे। युद्ध के समय शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में शारीरिक क्षमता के विशेष ध्यान से कुछ संशोधन कर दिया गया था।

बालिकाओं तथा महिलाओं की शारीरिक क्षमता पर विशेष ध्यान दिया गया। देश के इतिहास में प्रथम बार महिलाओं को सेना में भर्ती होने की आज्ञा मिली। इस कारण शारीरिक शिक्षा में भाग लेने का प्रोत्साहन मिला। महिलाओं के कार्यक्रम में. पानी का स्पोर्टस्, जिमनास्टिक, रीलेयेस् कालेसथेनिक्स, तालवृद्ध क्रियायें, फील्ड बाल, हाकी, साकर, स्पीड बाल, बासकट बाल, हाइकिंग, स्केटिंग, साइकिल चलाना, स्किइन्ग, घुड़सवारी आदि क्रियायें थीं।

जिनमें शारीरिक असमर्थता थी उनका भी प्रोग्राम प्रायः साधारण विद्यार्थियों के समान था। विशेष दशाओं में अनौपचारिक चिकित्सा व्यायाम से लाभ उठाया जाता था विभिन्न परीक्षण, प्रयत्न प्राप्त एवं चातुर्य तथा व्यक्तिगत प्रश्नोत्तर से प्रगति की मांप की जाती थी। शारीरिक शिक्षा में जीवन पर्यन्त रुचि तथा अवकाश के सदुपयोग की ओर इस अवधि में विशेष ध्यान दिया गया।

स्वास्थ्य शिक्षा में भी प्रगति थी जो त्रुटियां विद्यमान थीं उनका निवारण हुआ। स्वास्थ्य शिक्षा में, मानसिक स्वास्थ्य, मां एवं बालक का स्वास्थ्य, सामाजिक स्वास्थ्य तथा विवाह भी संयुक्त कर लिया गया। स्कूल स्वास्थ्य शिक्षा में यौन शिक्षा का अभाव था। इसकी आवश्यकता प्रतीत होने लगी थी। दि अमेरिकन सोशयल हाइजीन एसोसियेशन ने अपने क्षेत्र के कार्य क्षेत्ताओं की सेवाएं स्कूलों को प्रदान की।

शारीरिक शिक्षा का धारा विशेषतः स्पोर्टस एवं एथलेटिक्स की ओर प्रवाहित होती गयी। इनके द्वारा समाज में प्रतियोगिता के स्थान में समन्वय प्राप्त करने की चेष्टा की जाने लगी। शिक्षक विशेष बल उन स्थितियों पर देने लगे जिनके द्वारा सामाजिक, नैतिक, मानसिक तथा शारीरिक विकास सम्भव हो।

विषय के आधार भूत तथ्यों पर तथा इसके अभ्यास पर विशेष ध्यान

दिया जा रहा था । युद्ध कला 'फिजिकल फिट्नेस' पर बल देने के कारण व्यक्तिगत प्रवीणता एवं प्रगति पर ध्यान दिया जा रहा था । अनेक प्रयत्न प्राप्त परीक्षाओं का निर्माण किया गया, पुश अप, डिप्स, रोप क्लाइम्बिग, बार वाल्ट एवं दौड़ना । जल सेना की वी—१२ टेस्ट में पास करने का स्तर बढ़ता ही जा रहा था । युद्ध काल में सामूहिक व्यायाम की प्रथा प्रचलित थी । पदक आदि के देने से शारीरिक क्षमता में विद्यार्थियों की रुचि बढ़ायी जाती थी । १९४२ ई० में एक स्टेट फिजिकल फिट्नेस कमेटी ने सुझाव दिया, कि प्रत्येक स्कूल में एक फिजिकलके फिटनेस कमेटी हो, शारीरिक, चिकित्सा तथा दातों की परीक्षा हो, ग्यारहवीं तथा बारहवीं कक्षा के लिये सप्ताह में चार बार पूर्ण १५० मिनट का शारीरिक शिक्षा कार्य हो, इन्टर स्कूल प्रतियोगिता या इसके स्थान में उत्तम इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम हो, स्कूल सुविधायें स्कूल घंटे के पश्चात उपलब्ध हो, सेवा करते हुये प्रशिक्षण की सुविधा हो । अधिकतर स्कूलों में यह प्रचलित किया गया ।

प्रोग्राम को एक स्तर देने के लिये पाठ्यक्रम तथा मैनुएल प्रकाशित किये गये । शिक्षा की प्रगति के लिये 'आडिओ विजुअल ऐड्स' प्रयोग में लाये गये । एथलेटिक्स प्रयत्न प्राप्त परीक्षण की उन्नति भिन्न भिन्न आयु के लिये स्तर नियुक्त करने के द्वारा की गयी । मेक्लोंय ने १९३२ ई९ में ट्रैक तथा फील्ड ईवेन्टस' में एक स्तर नियुक्त किया था । दि नेशनल रिक्रियेशन एसोसियेशन ने लड़के तथा लड़कियों के लिये विभिन्न विषयों में स्तर नियुक्त किया था । एन० पी० नेलसन फ्रेड्रिक कोजन तथा हैजल क्युबर्लि के द्वारा एलिमेन्ट्री से कालेज तक के लिये कैलीफोर्निया में क्रमश: प्रयत्न प्राप्त मांप के नियुक्त करने में परिश्रम किया गया था ।

नैलसन एवं कोजन ने वर्गीकरण के लिये ऊंचाई, आयु तथा वजन के मेल से एक मांप का सिद्धान्त स्थापित किया जे० डब्लू किस्टलर, लियोनार्ड लारसन तथा टी० के० क्युरेटोन ने भी टेस्ट बाट्रीज वर्गीकरण के लिये स्थापित किये ।

इस काल में कुछ मनोवैज्ञानिक अध्ययन किये गये जिनका सम्बन्ध शारीरिक शिक्षा से था । सीखने, स्थानान्तर, ध्यान, प्रेरणा, संवेग, पुट्ठों का

खिचाव, दृष्टि, ताल तथा मनोरंजन समय आदि समस्याओं का अध्ययन शारीरिक शिक्षकों या वैज्ञानिकों के द्वारा हुआ ।

सामाजिक अध्ययन भी किया गया तथा उन तथ्यों पर ध्यान दिया गया जिनका सम्बन्ध शारीरिक शिक्षा से था। अन्तरविभागीय रिसर्च भी किये जा रहे थे क्योंकि व्यक्ति के इन्द्रीय संगठन के सिद्धान्त के कारण, चिकित्सा, आंकड़े पाठ्यक्रम, मनोविषलेण, जीवविज्ञान, सार्वजनिक स्वास्थ्य, मनोविज्ञान तथा समाजविज्ञान से व्यक्ति का घनिष्ठ सम्बन्ध था ।

१९

यू० एस० एस० आर० में शारीरिक शिक्षा

यूनियन आफ सोवियत सोशलिस्ट रिप्बलिक संसार के १६ या १७ प्रतिशत क्षेत्र में स्थित है। अत्यन्त ही अल्प समय में यहां की जनता में घोर परिर्वतन आ गया। ज़ार के दिनों में यह देश एक पिछड़ा हुआ देश था किन्तु आज यह संसार के सैनिक तथा औद्योगिक शक्ति में एक प्रमुख देश है।

आन्दोलन के पश्चात की गड़बडी तथा संकट के दिनों में लोगों ने उत्साह एवं बहादुरी से एक नये समाज के निर्माण की चेष्टा की। उनके विचार से सामाजिक एवं आर्थिक अन्याय का कारण पूंजीवादी प्रथा में था। अतः पूँजीवाद व्यक्ति वाद, एवं राष्ट्रीयतावाद का अन्त कर सामूहिक, वर्ग हीन एवं अर्न्तराष्ट्रीय समाज को स्थापित करना था। वर्त्तमान समय में यूनाइटेड स्टेट्स आफ सोवियट रशिया एक सोशलिस्ट देश है। इनकी प्रणाली है कि प्रत्येक व्यक्ति से उस की योग्यता के अनुसार आशा करना एवं प्रत्येक को उसकी आवश्यकता के अनुसार देना। यह ध्येय उसी समय प्राप्त होगा जब कम्युनिजम जो इस देश का प्रमुख राजनैतिक विचार है, पूर्णतया सफल होगा एवं जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति होगी।

इस परिवर्तन को प्राप्त करने के लिये शिक्षा का विशेष सहयोग लिया गया है जिसके द्वारा प्रत्येक युवक एवं युवती कम्युनिज़म के सिद्धान्त में परिपक्व हो जायें। स्कूलों में बालकों को कम्युनिस्टिक दृष्टि कोण में, सामूहिक कार्य, समुद्यौगिक जत्थे, देशभक्ति आदि की शिक्षा देने में पर्याप्त समय व्यतीत किया जाता है। वास्तविक रूप में शिक्षा की यही चेष्टा है कि व्यक्ति अपने को सोशयलिस्टिक विचार के आधीन कर दे।

ज़ारिस्ट रशिया में शिक्षा को उतना महत्व नहीं दिया जाता था जितना कम्युनीस्टिक राज्य प्रबन्ध में है। इसी प्रकार शारीरिक शिक्षा जो अब सम्पूर्ण रूस में विस्तृत है, सोशयलिस्टिक स्टेट के निर्माण के पूर्व विशेष अस्तित्व नहीं रखती थी।

रूस के शारीरिक शिक्षा का सामान्य शिक्षा के समान, राजनैतिक एवं आर्थिक ध्येय के प्राप्त करने के एक साधन के रूप में अध्यापन करना आवश्यक है। सोवियट देश भक्ति में मानसिक स्वतंत्रता, स्पोर्ट्स एवं अवकाश के मनोरंजन के शैक्षणिक ध्येय का कोई स्थान नहीं। सोवियट यूनियन आधारित रूप में अपने शारीरिक शिक्षा प्रोग्राम में सामुहिक रूप से भाग लेने में प्रोत्साहित करता है जिस के द्वारा विश्व शारीरिक क्षमता प्राप्त हो सके। प्रत्येक नागरिक को यथाविधि शारीरिक व्यायाम अदि में भाग लेने एवं सामान्य स्वास्थ्य की आदतों को पालन करने के लिये उत्साहित किया जाता है। इन अभ्यासों के द्वारा यह आशा की जाती है कि सोवियट नागरिक अधिक निपुण एवं रचनात्मक कार्यकर्त्ता बनेंगे। इसके द्वारा सोवियट युवकों की देशभक्ति बढ़ाने का भी विश्वास है। शारीरिक व्यायाम तथा स्वास्थ्य की आदतों के अभ्यास से सैनिक जीवन के प्रशिक्षण पर बल दिया जाता था।

सोवियट यूनियन में एक जटिल एंव विस्तृत शिक्षा प्रणाली विकसित है। नगर के बालकों के लिये सात वर्ष से शिक्षा अनिवार्य है। प्रवेश तीन प्रकार के स्कूलों में प्राप्त हो सकता है। चार वर्ष का ऐलीमेन्ट्री स्कूल, सात वर्ष जूनियर सेकेन्ड्री या दस वर्ष सेकन्ड्री स्कूल आधारित शैक्षणिक योजना के संध्या स्कूल, डाक के द्वारा कोर्स, औद्योगिक व्यापार स्कूल तथा टेक्निकल हाई स्कूल आदि सहायक हैं।

प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात सोवियट यूनियन ने शारीरिक शिक्षा के लिये 'नेशनल सोवियट' स्थापित किया। यह जांच करने एवं प्रोत्साहित करने का साधन था। इस संस्था ने मेडिकल विद्यार्थियों के लिये शारीरिक शिक्षा सिद्धान्त एवं अभ्यास का कोर्स शारीरिक शिक्षा लीडरों के लिये, जो औद्योगिक श्रमिकों के लिये प्रोग्राम आयोजित करते थे, संक्षिप्त कोर्स स्थापित किया। इस संस्था ने १९२४ ई० में सोवियट रिप्बलिक के प्रतिनिधियों को प्रथत

शारीरिक शिक्षा काँग्रेस, जो मास्को में हुयी, बुलाने में अपना प्रभाव प्रयोग किया। इस काँग्रेस ने यू-एस० एस० आर० के शारीरिक शिक्षा के लिये एक योजना तैय्यार की। उनका प्रथम कार्य शारीरिक शिक्षा में आयु, लिंग तथा व्यासाय के अनुसार स्तर निर्माण करना था। मास्को में एक शारीरिक शिक्षा संस्था की भी योजना बनायी गयी जहां शारीरिक शिक्षा लीडर्स का प्रशिक्षण हो सके। काँग्रेस की शिफारिशें थीं कि सामान्य जनता को स्वास्थ्य शिक्षा दी जाये। शारीरिक शिक्षा सम्पूर्ण चिकित्सा विद्यालय, ऊंची संस्थाओं तथा औद्योगिक केन्द्रों में अनिवार्य कर दी जाये एवं प्रत्येक चिकित्सक के लिये बाल स्वास्थ्य में तीन महीने का कोर्स अनिवार्य है।

१९२९ ई० वार्सो में ऐसी ही सभा में कांग्रेस ने सिफारिश की कि प्रत्येक संस्था जिनमें टर्नर सोसायटी, स्पोर्ट क्लब एवं शीतकालीन स्पोर्ट्स संस्था आदि जो शारीरिक शिक्षा प्रोत्साहित करती हैं उन्हें आर्थिक सहायता दी जाये। सम्पूर्ण सोवियत यूनियन में युवक कैम्प स्थापित करने के लिये विशेष आर्थिक सहायता की सिफारिश हुयी।

इस के पश्चात यू० एस० एस० आर० ने 'फिजिकल कल्चर' की एक 'सुप्रीम काऊंसिल' बनायी जिसमें सोवियट रिपब्लिक तथा भिन्न राजकीय विभागों के ६५ सदस्य थे। काऊंसिल का प्रथम कार्य यह था कि उसने प्रत्येक बालक, युवक, कृषक एवं कार्य करने वालों के लिये शारीरिक शिक्षा को अनिवार्य कर दिया। आयोजन को सफल करने के लिये 'सुप्रीम इकोनामिक काऊंसिल से साधन एवं सामग्री उपलब्ध करने के लिये कहा गया। इस प्रोग्राम का मुख्य ध्येय था कि इससे रूस की जनता में एक उच्च स्तर की शारीरिक क्षमता का विकास विभिन्न प्रकार के गतिवाही चातुर्थ का अयोजित करना जो उपयोगी हो। तथा जिनका सैनिक मूल्य हो, एवं प्रत्येक बालक, स्त्री तथा पुरूष में दृढ़ विश्वास है। कि स्वास्थ्य एवं शारीरिक क्षमता बनाये रखने में ही वे सोवियट यूनियन के भविष्य की सफलता में सहायक हो सकेंगे

शारीरिक शिक्षा प्रत्येक स्तर पर स्कूल पाठ्यक्रम का एक अभिन्न भाग बन चुका है। १ से ४ घंटे प्रति सप्ताह शारीरिक शिक्षा के लिये दिया जाता है। इस औपचारिक कार्यक्रम के साथ एथलेटिक कार्यक्रम, नृत्य तथा दूसरी

मनोरंजक एवं अवकाश की क्रियायें भी दी जाती हैं। ये क्रियायें स्कूल के बाद सप्ताह में दो से चार घंटे तक दी जाती हैं। शिक्षा, सेना एवं ट्रेड यूनियन इन क्रियाओं को सहयोग देती है। रविवार अवकाश के दिन तथा छुट्टी में बाहर भ्रमण के लिये योजना होती है। इस के साथ ही कम्युनिस्ट पार्टी युवक संस्था की श्रेणी संगठित करती है जिससे सोवियट विचारों में उनकी शिक्षा उत्तम रीति से हो सके। इन्हीं संस्थाओं के द्वारा और अधिक कार्य एथलेटिक स्पोर्ट्स प्रशिक्षण एवं स्वास्थ्य अभ्यास में सम्भव हो जाता है। आल यूनियन कमेटी आफ फिजीकल कल्चर तथा स्पोर्ट्स, गुणी ऐथलीट् के लिये स्पोर्ट्स स्कूल का निर्देशन करता है। ट्रेड यूनियन्स, राज्य एवं शिक्षक इन विशेष स्कूलों के चलाने में सहयोग देते हैं।

स्कूल काल के आरम्भ में तथा स्पोर्ट्स क्लब में भाग लेने के लिये प्रत्येक बालक का शारीरिक परिक्षण अनिवार्य रूप से होता है। चिकित्सक, नर्स आदि भी नियुक्त किये जाते हैं जो शारीरिक परीक्षण, चिकित्सा निरीक्षण, स्वास्थ्य शिक्षा तथा प्रारम्भिक चिकित्सा की व्यवस्था करते हैं। समर कैम्पस में भी ये शारीरिक शिक्षा प्रोग्राम का निरीक्षण करते हैं यहां १५ वर्ष के ऊपर के बालकों की उपस्थिति अनिवार्य है।

प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात् सोवियट यूनियन इतिहास में एक अत्यन्त श्रेष्ठ स्पोर्ट्स से प्रभावित देश हो गया। प्रायः सत्तर करोड़ रुपया प्रति वर्ष शारीरिक शिक्षा साधन के निर्माण एवं सामग्री खरीदने में व्यय होता है। अमेरिकन तथा ब्रिटिश स्रोतों से इस स्पोर्ट्स में भाग लेने तथा प्रतियोगिता के लिये अवैतनिक एवं किसी प्रकार के पारितोषिक न देने की रीति का प्रयोग ही मान्य था। साकर, बासकेट बाल तथा वालीबाल खेल सर्वप्रिय थे। दूसरी क्रियाओं में ट्रैक तथा फील्ड एथलेटिक्स, जिमनास्टि, आपरेट्स वर्क, पानी के खेल, तीक्ष्ण चान्दमारी एवं अनेक शीतकालिक स्पोर्ट्स आते हैं। स्त्रियां भी स्पोर्ट्स में पुरुषों के उत्साह के समान ही उत्साह से भाग लेती थीं। उनके प्रोग्राम में भिन्नता थी।

यू० एस० एस० आर० कदाचित संसार में प्रथम देश है जहां फिजीकल कल्चर को दूसरे राजकीय विभागों की तरह अधिकार प्राप्त है।

शिक्षकों की कमी को दूर करने के लिये सेकेन्ड्री एवं वोकेशनल स्कूल, शिक्षकों को अपने तीन वर्षीय कोर्स में शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण भी प्राप्त करना पड़ता था। प्रत्येक प्राइमरी स्कूल शिक्षक को अपनी प्रशिक्षण अवधि में विशेष कोर्स करना पड़ता था। आज सोवियट यूनियन में पन्द्रह इन्सटीट्यूट आफ फिजिकल कल्चर, उन्नतालीस फिजिकल कलचर हाईस्कूल तथा तीन विशेष रिसर्च इन्सटीट्युट हैं। शिक्षा संस्थाओं के शारीरिक शिक्षा विभाग इससे पृथक हैं।

सोवियट यूनियन ने मनोरंजन की अनेक सुविधाएं स्थापित की हैं। कैम्पस, विश्राम केन्द्र, यात्रा केन्द्र, स्वीमिंगपूल, जिमनेजियम, स्कींग क्षेत्र, पार्कस आफ कलचर सेनीटोरियम्स, गार्डेन, पुस्तकालय, थियेटर एवं प्रयोगशाला आदि विशेष हैं। युवकों के लिये स्पोर्ट केन्द्र एवं पायोनियर कैम्प प्राय: नि:शुल्क हैं या नाम मात्र का शुल्क है इनमें कुछ संस्था विशेषत: बालकों के लिये हैं। ग्रामीण जनता को मनोरंजन की सुविधायें कलेक्टिव फार्मिग के द्वारा दी जाती हैं।

प्रौढ़ जनता किसी ऐथलेटिक क्लब की सदस्य होकर स्पोर्ट्स, गेम्स एवं जिमानास्टिक में भाग लेते हैं क्लब को राज्य का प्रोत्साहन भलिभांति मिलता है। क्लब चार प्रकार के हैं। ट्रेड यूनियन, ऐच्छिक संस्थायें जैसे डाइनामो तथा स्पार्टक, सैनिकों के लिये तथा विद्यार्थियों के लिये।

युद्ध के समय दो नये जत्थे स्थापित किये गये थे, 'स्मेना', जिसमें जूनियर एथलीट्स भाग लेते थे तथा ट्रूडोवी रिजर्वी जिसमें ट्रेड स्कूल के शिष्य भाग लेते थे।

सिविलियन मिलिट्री ट्रेनिंग के लिये सेना ने आल यूनियन वालेन्ट्री सोसायटी स्थापित की है जिससे जल सेना 'डोसफलोट' तथा थल सेना 'डोसार्म को सहायता प्राप्त हो। सिबिलियन जो इस क्लब में प्रवेश लेते हैं उन्हें मिलिट्री स्पोर्टस तथा आधारभूत सैनिक प्रशिक्षण दिया जाता है।

'फिजीकल कलचर डे' प्रत्येक वर्ष ग्रीष्म काल में मनाया जाता है। इस अवसर पर सम्पूर्ण देश में स्पोर्ट्स उत्सव होता है। इस उत्सव में एथलीटस

की परेड, सामूहिक जिमनास्टिक प्रदर्शनी, उत्तेजना पूर्ण खेल एवं प्रतियोगितायें आदि होती हैं जिसके द्वारा सोबियट जनता को अपनी स्पोर्टस निपुणता रचनात्मक तथा युद्ध के लिये क्षमता प्रदर्शन करने का अवसर प्राप्त होता है। प्रसिद्ध राजनैतिक लीडर्स एवं फिजीकल कल्चर लीडर्स अपने वक्तव्य के द्वारा प्रभाव डालते हैं। तथा उच्चत्तम उन्नति की प्रेरणा करते हैं।

फिजिकल कल्चर प्रोग्राम में, प्रारम्भिक स्कूल कक्षाओं में जिमनास्टिक पर दिया जाता है तद्पश्चात् सेना की तैयारी के लिये तथा अन्त में स्वस्थ रहने एवं अवकाश में मन बहलाव के लिये होता है

शारीरिक क्षमता टेस्टिंग पर भी पर्याप्त बल दिया जाता है। इसमें सेना के प्रकृति के स्पोर्टस एवं कार्य दिये जाते हैं। 'मास्टर आफ स्पोर्ट' परितोषिक के लिये एथलीट्स प्रयत्न करते हैं।

स्थानीय, क्षेत्रीय एवं आल यूनियन प्रतियोगिता अयोजित होती है। इसमें अधिक संख्या में जनता भाग लेती है। जिमनास्टिक प्रदर्शनी की अधिक संख्या में भाग लिया जाता है।

जब सोवियट यूनियन की स्थापना हुयी थी उस समय सोवियट टीम पूंजीवादी देशों की टीम के साथ प्रतियोगिता में भाग नहीं लेती थी। केवल श्रमिक समूहों के साथ यह भाग लेती हैं। १९४१ ई० में रूस ने अपने खिलाड़ियों को लन्दन ओलम्पिक दर्शक की भांति भेजा उन्होंने उसमें भाग नहीं लिया। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् सोवियट यूनियन यूरोपियन 'मीट' में भाग लेने लगी है। १९५२ ई० के हेलसिंकी ओलम्पिक खेल में रूस ने प्रथम बार भाग लिया था।

सोवियट यूनियन ने यह घोषित लिया है कि उनका ध्येय सामूहिक प्रशिक्षण का है। किसी संस्था से भाग लेने वाले एक दो नहीं किन्तु प्रत्येक वर्ग में ४ से ६ प्रतिनिधि तक होते हैं। १८ वर्ष से नीचे युवा, प्रौढ़ प्रतियोगिता में भाग नहीं ले सकते हैं। उच्च श्रेणी के एथलीट कोई दूसरे पद पर कार्य करते या स्पोर्ट्स प्रशिक्षण देते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने के लिये सम्पूर्ण व्यय ट्रेड यूनियन एवं फिजिकल कल्चर कमेटी के द्वारा दिया जाता है। फैक्ट्री

में कार्य करने वाले ऐथलीट प्रशिक्षण एवं प्रतियोगिता की अवधि के समय का पूर्ण वेतन दिया जाता है।

यु० एस० एस० आर० में फिजिकल कल्चर आन्दोलन के आरम्भ ही से यह भावना रही है कि प्रोग्राम वैज्ञानिक रिसर्च के आधार पर आधारित हो। जिन क्षेत्रों से सफल परिणाम प्राप्त हो उन्हें ही रखना है। फैक्ट्री में कार्य करने वालों की गति पर उत्पादन एवं थकान के सम्बन्ध में रिसर्च हुआ है। कहीं कहीं पर ऐथलेटिक मिनट्स का प्रयोग हुआ है जिसमें कुछ चुने हुये व्यायाम के करने से शरीर में ढीलापन आ जाता है एवं विश्राम मिल जाता है।

सोवियट यूनियन में चिकित्सा सेवा निशुल्क हैं। जो संस्थायें शारीरिक शिक्षा कार्य करती है उनका निरीक्षण चिकित्सा सेवा के द्वारा होता है। स्वास्थ्य, स्वच्छता, प्रारम्भिक चिकित्सा, चिकित्सा परिक्षण, रेकार्ड रखना, शारीरिक योग्यता एवं दशा के अनुसार भाग नियत करने का आदेश देना, माता पिता से सम्बन्ध स्थापित करना, बालकों के दिन का गर्म भोजन, समर कैम्प, तथा सम्पूर्ण प्रतियोगिता का निरीक्षण, स्कूल चिकित्सक का कर्त्तव्य है। ट्रेड यूनियन स्पोर्ट सोसायटीज़, फिजिकल कल्चर सर्कल्स तथा अन्य स्पोर्टस क्लबों को भी चिकित्सा निरीक्षण एवं सुरक्षा दी जाती है। प्रत्येक व्यक्ति जो संस्था के सदस्य होकर ऐथलेटिक्स में भाग लेते हैं उनकी चिकित्सा परीक्षा वर्ष में दो बार अनिवार्य है। सामूहिक कार्य या प्रतियोगिताओं पर स्पोर्टस चिकित्सक का निरीक्षण रहता है।

फिजिकल कल्चर का राजनैतिक एवं देश भक्ति का उद्देश्य अनिश्चित रीतियों से प्रदर्शित होता रहता है। उनके झण्डों पर "हम नये संसार का निर्माण कर रहे हैं"। लिखा हुआ मिलना एक साधारण विषय है।

२०

जापान में शारीरिक शिक्षा

शताब्दियों तक जापान दुर्भेद्य रहा है। सत्तरहवीं शताब्दी के आरम्भ में हिराडो में डच लोगों को व्यापार करने के लिये एक फैक्ट्री बनाने की आज्ञा मिली थी। इसके पश्चात जापान की मुख्य भूमि के समीप के द्वीप पुर्तगीज़ जेसुटेस एवं स्पेन के फ्रान्सिसकन तथा डोमिनिकन धर्मावलम्बी आकर बसे। शोगुन्स जो आयेयासू के बाद राज्य कर रहे थे, रोमन कैथालिक धर्मावम्लिबयों को संदेह की दृष्टि से देखते थे अतः वे उनका एवं उनके अनुसरण करने वालों का नाश करने लगे। यह भावना उनकी विदेशियों के द्वारा आक्रमण का भय एवं अपने राज्य को दृढ़ करने के कारण हुई। दो सौ वर्ष पश्चात १८५३ ई० में कोमेडोर मेंथ्यू पेरी चार युद्ध के जहाज के साथ उरगा बन्दरगाह पहुंचे। यह यात्रा युनाइटेड स्टेटस् के साथ व्यापार संधि के निमंत्रण के लिये की गयी। १८५४ ई० में व्यापार की आज्ञा दी गयी। विदेशियों के प्रति विरोध की भावना रखते हुये भी यूनाइटेड स्टेट्स् के कारण, रूस, हालैन्ड, इंगलैंड एवं अन्य देशों को यह लाभ प्राप्त हुआ।

१८६७ ई० में मुत्तसहिटों जब अपने पिता कोमई का शोगुन के रूपमें उत्तराधिकारी हुआ उस समय वह जापान को संसार से पृथक रखना नहीं चाहता था। अतः शोगुन द्वितीय ने अपने जागीरदारी अधिकार का परित्याग किया एवं उसे युवक राजा के हाथ में सौंप दिया जिसे मान्यवर मेंईजी के नाम से सम्बोधित करने लगे। मेईजी के आधीन तथा आदेश से जापान शीघ्र ही एक आधुनिक राष्ट्र में परिवर्तित हो गया। प्रथम विश्व युद्ध के अन्त में जापान की दशा शोचनीय हो गयी थी किन्तु युद्ध के पश्चात अवधि में वह उन्नति करता गया एवं आज एक अत्यन्त उन्नतिशील औद्योगिक देश है।

मेंईजी शासन के समय पश्चिमी विज्ञान एवं तकनीक का जापान में पदार्पण हुआ। साथ ही उनकी अपनी संस्कृति भी चलती रही ।

एलीमेन्ट्री शिक्षा अनिवार्य है। सेकेन्ड्री तथा उच्च शिक्षा उनके लिए है जो उसके लिये व्यय कर सकते हैं। १९३० ई० में राजनैतिक अशान्ति के कारण सेकेन्ड्री स्कूलों में सैनिक शिक्षा सैनिक अधिकारियों के द्वारा दी जाने लगी।

जापान में यूनाइटेड स्टेटस् एज्युकेशन मिशन १९४६ ई० में आया एवं सिफारिश की कि, शिक्षा मंत्रालय के अधिकार पर निषेध होना चाहिये। ऊंची संस्थाओं का संचालन केन्द्र से पृथक होना चाहिये एवं एलीमेन्ट्री तथा सेकेन्ड्री स्कूल स्थानीय निर्वाचित स्कूल बोर्ड के आधीन होना चाहिये। अनिवार्य स्कूल आयु ६ वर्ष से ९ वर्ष कर दी गयी। सेकेन्ड्री शिक्षा विस्तृत की गयी, सह शिक्षा प्रोत्साहित की गयी तथा यूनिवर्सिटी की संख्या बढ़ाई गयी।

शारीरिक शिक्षा का विकास प्राय: दो बड़े भागों में विभक्त किया जा सकता है। मेईजी काल के पूर्व एवं उसके पश्चात १८७१ ई० के पूर्व शारीरिक शिक्षा एवं सैनिक प्रशिक्षण प्राय: एक ही था। तलवार चलाना, फेन्सिग, आर्चरी, तैरना, कुश्ती, जूजिटसू, केमारी (एक प्रकार का फुटबाल) घोड़ा चढ़ना, युद्ध कलाबाजों के द्वारा शिकार आदि प्रचलित थे। डच स्रोतों के द्वारा पश्चिमी चिकित्सा विज्ञान के ज्ञान का प्रचार हुआ अत: शारीरिक शिक्षा का आधार चिकित्सा दृष्टिकोण पर निर्भर हुआ।

१८७१ ई० में जब राष्ट्रीय स्कूल प्रणाली की स्थापना हुई उस सयय डच लोग सेकेन्ड्री स्कूलों में शारीरिक शिक्षा प्रदान करने के लिये आमंत्रित हुये थे। ऐलीमेंट्री स्कूलों में स्विडिश प्रणाली का परिचय कराया गया। मेईजी काल के आरम्भ से जापान की स्कूली शारीरिक शिक्षा का पश्चिमी संसार के शारीरिक शिक्षा से निकट का सम्बन्ध हुआ। जापान की शारीरिक शिक्षा संसार की शारीरिक शिक्षा का एक भाग हुआ जो समकालीन शारीरिक शिक्षा से प्रभावित हुई एवं उसे प्रभावित किया।

मेईजी काल (१८७१-१९१२ई०)में शारीरिक शिक्षा का कार्यक्रम विशेष औपचारिक प्रकार का था। जिमनास्टिक एवं सैनिक प्रशिक्षण तथा ड्रिल पर बल दिया जाता था।

ताईशो काल (१९१३-१९२६ ई०) में स्वीडीश प्रणाली पर बल दिया गया एवं ऐलीमेन्ट्री तथा सेकेन्ड्री स्कूलो में इसका प्रवेश हुआ। शिक्षा मंत्रालय में शारीरिक शिक्षा विभाग की स्थापना हुई जिसने एक प्रोग्राम प्रकाशित किया जिसमें जिमनास्टिक, गेम्स एवं स्पोर्टस था। ओलम्पिक खेलों में विजय प्राप्त करने के कारण स्पोर्ट्स में अधिक रुचि बढ़ी।

शोवा काल (१९२६-१९३५ ई०) में अनौपचारिक बल खेल तथा स्पोर्टस पर दिया गया। १९३२ ई० में जापान की तैराक टीम लासएंजिलस के ओलम्पिक खेल में विजयी हुई। कुछ समय तक शारीरिक शिक्षा एवं स्पोर्ट्स में अत्यन्त रुचि रही तथा शारीरिक शिक्षा को लाभ हुआ।

युद्ध काल (१९३५-१९४५ ई०) में युद्ध के समय का शारीरिक क्षमता प्रोग्राम प्रचलित हुआ। १९३५ ई० में एक राजकीय आदेश के द्वारा स्कूलों में सैनिक प्रशिक्षण के लिए सैनिक व्यक्ति नियुक्त किये गये शारीरिक शिक्षा की दशा में पुनः परिर्वतन हुआ। शारीरिक शिक्षा, सैनिक ध्येय से दी जाने लगी। सैनिक शिक्षा स्कूल जीवन का एक भाग हो गया। स्कावड, ड्रिल, मिलिट्री दांव तथा चाल, राइफिल अभ्यास, बेनट लड़ाई तथा हैंडग्रेनेड के प्रयोग में शिक्षा होती थी। १९४१ ई० शारीरिक शिक्षा विभाग ब्यूरो आफ फिजिकल एज्युकेशन में परिर्वत्तित हो गया तथा इस का उत्तरदायित्व फिजिकल फिटनेस प्रोग्राम डिफेन्स एवं लेबर के लिये नियुक्त हुआ। ७:५०—८:३० प्रातः काल कक्षा टीचर के द्वारा ऐलीमेन्ट्री स्कूल के बालकों के लिये शारीरिक व्यायाम रेडियो से प्रसारित किया जाता था।

१९३६ में १९१३ ई० का बनाया हुआ स्कूल शारीरिक व्यायाम पाठ्य क्रम का संशोधन हुआ। पूर्व पाठ्यक्रम में शरीर विकास पर बल था किन्तु संशोधित पाठ्यक्रम में व्यक्तित्व के विकास के उत्तम शारीरिक विकास पर बल दिया गया। संशोधित पाठ्य क्रम में; सामग्री एवं प्रयोग में स्वतंत्रता, शिक्षा सामग्री के जापानी नाम, शारीरिक शिक्षा कार्यों का उत्तम वर्गीकरण, स्थानीय जापान के व्यायाम एवं स्पोर्ट्स को सम्मिलित करना, लंगिक विभिन्नता को ध्यान में रखते हुये लड़के तथा लड़कियों के कार्य में अन्तर करना, बालकों के व्यायाम तथा स्वास्थ्य निरीक्षण पर विशेष बल देना, बालकों के लिये सही स्पोर्ट्स

चातुर्य का प्रारम्भ, आधार भूत विकास के व्यायाम तथा ताल बद्ध क्रियाओं के करने पर बल आदि विशेष बातें थीं।

वर्त्तमान काल १९४५ ई० से—पाठ्यक्रम संशोधन के पश्चात ही चीन, जापान का युद्ध छिड़ा यह दशा द्वितीय विश्वयुद्ध तक बनी रही। युद्ध की आवश्यकता के कारण उसकी तैयारी के नियम बनाये गये। १९४१ ई० में मिलिट्री ड्रिल शारीरिक शिक्षा प्रोग्राम का प्रमुख भाग बन गया। शारीरिक शिक्षा की अपेक्षा सैनिक प्रशिक्षण पर बल १९४५ ई० अर्थात युद्ध के अन्त तक रहा। युद्ध के पश्चात शिक्षा मंत्रालय ने शारीरिक शिक्षा को उसके सैनिक उद्देश्यों से पृथक किया। जापान में एलाइड पावर्स ने शारीरिक शिक्षा के पुनः संगठन में अत्याधिक सहयोग दिया। ब्यूरो आफ फिजीकल एज्युकेशन का भी पुनः संगठन हुआ। इसके अर्न्तगत शारीरिक शिक्षा के भाग ऐथलेटिक्स, स्टूडेन्ट वेलफेयर एवं स्कूल हाइजीन आदि आ गया। शारीरिक शिक्षा ऐलीमेन्ट्री से लेकर सेकेन्ड्री स्कूल तक अनिवार्य कर दी गयी। सम्पूर्ण देश के शिक्षक एक नये शारीरिक शिक्षा पाठ्य-क्रम का निर्माण करने के लिये एकत्रित हुये। १९४९ ई० में यूनिवर्सिटी में भी शारीरिक शिक्षा अनिवार्य हो गयी। लड़कियों तथा महिलाओं के लिये प्रत्येक स्तर पर डेनिश एवं स्वीडिश प्रणाली की जिमनास्टिक दी जाती थी। तालबद्ध जिमनास्टिक एवं नृत्य में विशेष रुचि पायी जाती थी। साधारण लोक खेल एवं स्क्वायर नृत्य अत्यन्त ही लोक प्रिय हैं। महिलाओं के स्पोर्ट्स में बासकेट बाल, वालीबाल, टेनिस एवं तैरना मुख्य था।

टोकियो की अमेरिकन कालोनी में बेसबाल खेल देखकर जापान के युवक भी खेलने लगे यहां तक कि स्कूलों ने अपनी बेस बाल टीम भी संगठित कर ली। १९०५ ई० में वासेडा यूनिवर्सिटी ने अपनी बेसबाल टीम यू०एस०ए० भेजी थी।

१८७६ ई० में एक अंग्रेज शिक्षक विलियम क्लार्क ने जापान में नाव चलाने एवं ट्रैक एण्ड फील्ड एथेलेटिक्स का प्रचार किया। १९०० ई० में फ्रैन्कलिन एच ब्राउन जो टोकियो में वाई०एम०सी०ए० के निर्देशक थे जापानी युवकों के बीच वालीबाल बासकेटबाल, एवं सामूहिक खेल आरम्भ किये। ब्राउन के प्रभाव से प्रथम जापान की टीम ओलम्पिक खेल जो१९१२ई०मेंस्काट होम में हुआ था उसमें भाग लिया। जापान ने प्रथम फार इस्टर्न ओलम्पिक गेम्स एवं एशियन गेम्स में भी भाग लिया।

लोकप्रिय खेलों में रगबी, साकर फुटबाल, बासकेट बाल, आइसहाकी, स्केटिंग बोलिंग एवं रेगुलेशन अमेरीकन फुटबाल हैं। लड़कियों तथा महिलाओं में बैडमिन्टन एवं साफ्ट् बाल लोकप्रिय है। टेबल टेनिस, नाव चलाना, गोल्फ, पर्वतारोहण एवं स्किइंग भी लोक प्रिय हो रहे हैं।

जापान का स्वदेशी स्पोर्ट 'सूमों' एक प्रकार की कुश्ती है यह ईसा से प्रथम शताब्दी में प्रचलित थी। जूजिटसू का आविष्कार प्राय: १५०० ई० में हुआ। शताब्दियों से इसके अनेक स्कूल खुले हुये हैं। डा० जीगोरों ने १८८२ ई० में विभिन्न स्कूलों के उत्तम भाग को लेकर 'जूडो' का निर्माण किया। यह एक रक्षा का खेल है। तथा इसमें ग्रीक रोमन तकनीक भी सम्मिलित है। 'काराटे' भी एक प्रकार का जूजिट्सू हैं जो चीन से निकला है।

युद्ध के बाद शारीरिक शिक्षा की विशेषता उसके प्रजातांत्रिक भावनाओं तथा वैज्ञानिक चरित्र में हैं। सम्पूर्ण कार्यक्रम व्यक्ति विकास के लिये प्रयुक्त होता है। पाठ्यक्रम तथा उसके बाहर के कार्यों का सम्मेलन भी एक विशेषता थी।

२१

ओलम्पिक खेल

ओलम्पिक खेलों का आरम्भ यूनान में हुआ था। यूनान के छोटे छोटे सिटी स्टेट्स में देवताओं के सम्मान में नृत्य, संगीत तथा खेल के उत्सव हुआ करते थे। इनमें चार मुख्य थे। ओलम्पियन, पाइथियन, नीमियन, तथा इस्थमियन। ऐलिस शहर में ओलम्पिया एक पवित्र स्थान अलफियस नदी के तट पर बसा हुआ था। यहां पर ओलम्पिया खेल के आरम्भ होने के बहुत पहले धार्मिक उत्सव तथा ऐथलेटिक प्रतियोगिता का चलन था।

ओलम्पिक खेल स्पार्टा के युवकों को उनके जिमनास्टिक के गुण प्रदर्शन करने का अवसर प्रदान करता था। प्रथम स्पार्टा की लिखित विजय ईसा से पूर्व ७२० ई० में हुई थी। आने वाली शताब्दी के ८१ विजय में प्रायः ४६ स्पार्टा के द्वारा प्राप्त हुई थी। पच्चासवें ओलम्पिक खेल के पश्चात स्पार्टा की सफलता का अन्त हुआ। स्पार्टा की विजय एवं पतन का कारण उसके विचार में कट्टरता, संकीर्णता एवं उसका स्थिर समाज था।

ओलम्पिक खेल जो राष्ट्र का सर्वोत्तम उत्सव था प्रत्येक चार वर्ष के पश्चात ओलम्पिया में आयोजित किया जाता था। प्रथम खेल इस के पूर्व सन् ७७६ ई० में हुआ। अगस्त मास में यह पांच दिन के लिये होता था। इसका परिचलन साधारण रूप से होता था। प्रतियोगिता में नोबुल्स एवं निम्म्न श्रेणी एक स्तर पर मिलते थे। यह यूनानी संस्कृति की प्रभावशाली शक्ति थी। यह श्रेष्ठ श्रेणी के उत्सव, धार्मिक प्रतिपालन एवं उच्च स्तर के स्पोर्ट प्रदर्शन दोनों एक साथ थे।

यूनान तथा रोम की संस्कृति के आपस में मिलने से दोनों ने एक दूसरे को प्रभावित किया। कुरिन्थ के पतन होने के पपश्चात् ओलम्पिक खेलों में भी

पतन हुआ तथा यह एक स्थानीय विषय बन गया। ईसा के पूर्व सन ८० ई० में ओलम्पिक की पवित्रता के विरुद्ध सुला ने सम्पूर्ण खेल रोम में स्थानान्तर कर दिये किन्तु यह सफल न हो सका एवं यूनान को पुनः लौटाया गया। इसके पश्चात रोमन सम्राटों ने पुनः इसकी प्रगति की चेष्टा की। रोम इस खेल के युद्ध चातुर्य सम्बन्धित भौगोलिक स्थिति के महत्व से परिचित था क्योंकि यह पूर्व तथा पश्चिम के सम्मेलन का केन्द्र था।

थीयोडोसियस जो एक ईसाई सम्राट था। उसने सन ३९४ ई०में ओलम्पिक खेलों को समाप्त कर दिया।

१८९६ ई० में ओलम्पिक खेल के पुनरुत्थान के समय यद्यपि जर्मनी के लोग इसके प्रति अति उत्साहित नहीं थे तथापि उन्होंने एक ओलम्पिक कमेटी स्थापित की। इस कमेटी ने बाधाओं का सामना करते हुये कुछ स्पोर्टस के आइटम में अधिक व्यक्तियों को भाग लेने के लिये प्रोत्साहित किया।

१८४२ ई० की फ्रान्स की क्रान्ति के पश्चात शारीरिक शिक्षा का सर्वनाश हुआ किन्तु १८७० ई० में फ्रान्स तथा पुरूशिया के युद्ध के कारण शारीरिक शिक्षा में पुनः रुचि आरम्भ हुयी। लीडरों का कहना था कि शारीरिक एवं नैतिक पतन के कारण राष्ट्र की शक्ति का पतन हुआ। फ्रान्स की राष्ट्रीय शक्ति के पुनः निर्माण का उपाय विशेष रूप से पियरे डी क्युबेंटिन ढूढ़ने लगे।

अनुचित कार्यों में भाग लेने का प्रतिरोध एवं एक नये फ्रान्स का निर्माण जिनमें शारीरिक शक्ति, नैतिक शासन, स्वयं पर नियन्त्रण आदि जो देश के सम्मान एवं एकत्व को दृढ़ रखने के लिये आवश्यक है, स्पोर्टस के माध्यम से प्राप्त करने का विचार किया।

प्राचीन यूनान के ओलम्पिक खेलों से प्रभावित होकर डे क्युबर्टिन सचे ने स्पोर्टसमैन की आत्मा एवं नियम के द्वारा घोर आधुनिक राष्ट्रीयता की सीमा को पार करने की चेष्टा की। इसमें इनके तीन उद्देश्य थे। शारीरिक शिक्षा एवं स्पोर्टस को विश्वव्यापी बनाना, शारीरिक शिक्षा के प्रयत्न प्राप्त स्तर को ऊंचा करना एवं संसार के युवकों को एक स्थान में लाना जिसके द्वारा मित्रता स्थापित होना सम्भव हो तथा अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष का अन्त हो।

आधुनिक ओलम्पिक खेल का आरम्भ अर्थात पुराने ओलम्पिक खेल का पुनरुत्थान का श्रेय फ्रान्स के बैरन पाइरे दि कूबरटिन को है । १८८४ ई० में बैरन पाइरे दि कूबरटिन ने अंग्रेजी शिक्षा का अध्ययन किया । यह अध्ययन फ्रान्स की उन्नति करने हेतु किया गया था । इस अध्ययन से वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अंग्रेज युवकों के उत्तम प्रशिक्षण का कारण खेलों में सर्वव्यापी रीति से भाग लेना था । इसी विश्वास से प्रेरित होकर उन्होंने प्राचीन ओलम्पिक खेलों के पुनरुत्थान के लिये विशेष चेष्टा की । इस कारण से उन्होंने संसार की विख्यात जिमनास्टिक संस्थाओं तथा एसोसियेशन्स को आमन्त्रित किया जिससे इस विषय पर विचार किया जा सके । जर्मनी ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया । बेलजियम इसके विरुद्ध था । ब्रिटेन दुविधा में था । फ्रान्स का विचार विभाजित था । स्पेन, इटली, यूनान तथा स्वीडेन ने सहयोग दिया । १८९४ ई० में पेरिस में एक सभा हुई जिसमें १७५ प्रतिनिधि उपस्थित थे और उन्होंने एक मत होकर ओलम्पिक खेलोंके पुनरुत्थान का प्रस्ताव किया । इस समय यह निश्चित हुआ कि प्रथम ओलम्पिक खेल यूनान के ऐथेन्स में १८९६ ई० में होगा । यूनान के राज परिवार ने अपनी देख रेख में खेल कार्य लिया । किसी धनी यूनानी व्यापारी ने पुराने स्टेडियम को स्वतंत्र करा दिया तथा दूसरे व्यक्तिगत दान के द्वारा खेल के आर्थिक दायित्व का निर्वाह हुआ ।

अत: प्रथम आधुनिक ओलम्पिक खेल ऐथेन्स के स्टेडियम में स्थापित हुआ जो ईसा के पूर्व ३३० में निर्मित किया गया था । १४३ ई० में पुन: संगमरमर के पत्थरों से बनाया गया था । शीत कालीन ओलम्पिक खेल प्रथम बार १९२४ ई० में आरम्भ हुआ । महिलाओं ने प्रथम बार १९०० ई० में टेनिस में भाग लिया । १९०४ ई० में आर्चरी में, १९१२ ई० में तैरने तथा गोता लगाने में, १९२४ ई० से फेन्सिग तथा शीत कालीन स्पोर्टस में तथा ट्रैक एवं फील्ड में भाग लिया ।

ओलम्पिक खेलों की तिथि एवं देश जहां वे हुये वह इस प्रकार हैं। १८९६ ऐथेन्स, १९०० पेरिस, १९०४ सेन्ट लुईस, १९०८ लंदन, १९१२ स्टाकहोम, १९१६ बर्लिन, १९२० आन्टवर्प, १९२४ पेरिस, १९२८ एमस्टर्डम में प्रथम बार पूर्ण रूप से महिलाओं को प्रवेश दिया गया तथा प्रथम बार भारत

हाकी में विजयी हुआ, १९३२ लासएन्जेलस, १९३६ बर्लिन, १९४० टोकियो, १९४४ रोम-युद्ध के कारण खेल स्थगित हुये, १९४८ लंदन, १९५२ हेलसिंकी, १९५६ मेलबोर्न, १९६० रोम, १९६४ टोकियो तथा १९६८ में मेक्सिको में होगा।

२२

भारतवर्ष में शारीरिक शिक्षा

प्राचीन भारत

पूर्व वैदिक एवं वैदिक काल : शारीरिक शिक्षा का उल्लेख विशेष रूप से प्राचीन भारतीय साहित्य में कहीं नहीं पाया जाता है। धार्मिक शास्त्रों, चित्रों एवं शिल्पकारी से उस समय की शारीरिक शिक्षा का अनुमान लगाया जा सकता है। वेदों में भी शारीरिक शिक्षा का विशेष वर्णन नहीं है। अन्य प्राचीन स्थानों तथा व्यक्तियों के सदृश्य यहां भी शारीरिक परिश्रम दैनिक कार्य के परिणामस्वरूप हो जाता था। यह सम्भव है कि शारीरिक परिश्रम एक साधारण विषय समझा जाता था जिसके वर्णन का कोई विशेष कारण नहीं था तथा इसके प्रति किसी प्रयोजन या प्रणाली के अभाव का अनुभव नहीं किया गया।

शारीरिक विकास एवं शक्ति के प्रति कुछ वेदों के श्लोकों से अनुमान लगाया जा सकता है। कुछ श्लोक देवताओं के लिये लिखे गये थे जिनमें शरीर का वर्णन है। शारीरिक उन्नति में ध्यान देने का प्रमाण मिलता है। दो प्रकार की रीति का विशेष ज्ञान होता है। आसन, जिसका अभिप्राय आत्मिक उन्नति था तथा मल्ल युद्ध या धनुर विद्या जिसका उद्देश्य वीरों तथा योद्धाओं की तैयारी का था। शूर वीरों के बल एवं शक्ति तथा राक्षसों के शारीरिक प्रभाव तथा अंगों के विस्तार से यह अनुमान किया जा सकता है कि शारीरिक बल एवं शक्ति तथा विकसित शरीर सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था एवं प्रभावशाली सिद्ध होता था। इनके द्वारा आधुनिक अर्थ में तो शारीरिक शिक्षा नहीं दी जाती थी किन्तु शरीर को शिक्षित एवं प्रशिक्षित करने के लिए अवश्य किसी न किसी प्रकार की विद्या थी तथा उसे अर्जित करना सम्भव था।

अखाड़ों की प्रथा भी भारतवर्ष में प्राचीन है। यह स्वस्थ एवं शक्तिशाली शरीर के लिये प्रयोग किया जाता था। इतना होते हुए भी उस समय के प्रचलित धार्मिक विचार कि आत्मा को मुक्त करने के लिये शरीर को कष्ट देना आवश्यक है, शारीरिक शिक्षा की प्रगति में बाधक होते रहे हैं।

वैदिक काल की शारीरिक शक्ति एवं विकास का अनुमान वेदों में पाये जाने वाले अश्वारोहण, शास्त्र विद्या, आखेट, मल्ल युद्ध, धनुर विद्या, नृत्य तथा युद्ध के वार्तालाप से लगाया जा सकता है। साहस, उत्साह, शक्ति आदि के जो विभिन्न वर्णन दिये गये हैं वह विकसित एवं शक्तिशाली शरीर के प्रतीक हैं।

सुरों एवं असुरों के संघर्ष का वर्णन अनेक स्थान में पाया जाता है।

बाल विवाह के न होने में, द्रव्यों के ज्ञान से तथा बाल ब्रह्मचर्य से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उस समय शरीर क्रिया एवं विकास का ज्ञान था।

महाकाव्य काल (Epic Period) में रामायण एवं महाभारत आते हैं। रामायण में शारीरिक शिक्षा सम्बन्धी बहुत से वर्णन पाये जाते हैं। राम व रावण युद्ध, आखेट, बनवास के समय भ्रमण या हाईक, निवास या कैम्पिग, स्काउटिंग के नियमों का पालन जिसमें जीव जन्तुओं के प्रति प्रेम, चिन्ह विद्या आदि का वर्णन है।

स्वयंवर प्रथा में प्रतियोगिता होती थी। प्रतियोगिता धनुष चढ़ाने की थी। अच्छे अच्छे शक्तिशाली वीर उसे चढ़ा नही पाये। रामचन्द्र जी ने धनुष चढ़ाया। यहां पर उनकी शक्ति का विस्तार दिखाया गया है। प्रतियोगिताओं आदि में भाग लेने की तैयारी अवश्य होती होगी जिसमें शक्ति एवं बल अर्जित करने पर ध्यान दिया जाता होगा। जिस धनुष के चढ़ाने में इतनी कठिनाई होती उसके चलाने के लिए कैसी शक्ति की आवश्यकता होती होगी ?

हनुमान की शक्ति का विचित्र वर्णन है। ऐसी शक्ति उनके पास थी जिससे पहाड़ उठा लिये जायें। बाली एवं सुग्रीव के संघर्ष का वर्णन है। बन्दरों

की सेना ने पत्थरों को फेंक फेंक कर शत्रु को पराजित किया। विश्वामित्र जी ने रामचन्द्र एवं लक्ष्मण को धनुर विद्या में प्रशिक्षित किया। यह आधुनिक कोचिंग के प्रकार की शिक्षा थी।

महाभारत के घनघोर युद्ध में शक्ति का विशेष वर्णन है। मल्लयुद्ध, गदा युद्ध, धनुर विद्या, भीम की शक्ति, युद्ध कौशल आदि सब शारीरिक योग्यता से सम्बन्धित हैं। भारतवर्ष के समाज का चार वर्गों में विभाजन सुविधा की दृष्टि से किया गया था। प्रत्येक वर्ण के व्यक्तियों का दैनिक शारीरिक कार्यों का भी विभाजन एक प्रकार से हो गया था। ब्राह्मण जो धार्मिक गुरु होते थे वे प्राणायाम, सन्ध्या, आसन, सूर्य नमस्कार, धार्मिक कारणों से करते थे। क्षत्रियों का कार्य युद्ध सम्बन्धी होता था। धनुष विद्या, अश्वारोहण, तलवार चलाना, रक्षा विद्या तथा अस्त्र शस्त्र का प्रयोग केवल शक्तिशाली शरीर के द्वारा ही सम्भव था। उत्साह, साहस तथा वीरता प्रमुख गुण माने जाते थे। वैश्य, सेवा के लिये थे जिन्हें शारीरिक परिश्रम करना पड़ता था। अपने परिश्रम से वे सेवा का कार्य करते थे। शूद्रों के लिये भी अनेक सेवा क्रियायें थीं। इन सब वर्गों के लिये शारीरिक स्वास्थ्य एवं शक्ति एक प्रकार से अनिवार्य थी। महाभारत के रथ चालक युद्ध के वीर ही समझे जाते थे। दो व्यक्तियों के आपस में संघर्ष का वर्णन पाया जाता है। यह प्रतियोगिता के रूप में भी होता था जिसके लिये पारितोषिक रखे जाते थे। भीम तथा जरासन्ध के आपसी युद्ध में पन्द्रह दिन से अधिक समय लगा था।

कौरव एवं पाण्डवों के खेल का वर्णन किया गया है जिसका निरीक्षण कृपाचार्य तथा द्रोणाचार्य करते थे। यह आधुनिक काल के निरीक्षित खेल (Supervised Play) के सदृश्य था। अर्जुन अपने समय के धनुष विद्या में सबसे अधिक निपुण व्यक्ति थे। भीम का गदा उनकी शक्ति एवं शरीर का प्रदर्शन करता है।

'इति डन्डू' एक प्रकार का लोक खेल उस समय प्रचलित था। इसका आधुनिक रूप गुल्ली डंडा या सभ्य रूप में क्रिकेट या बेसबाल कहा जा सकता है। पौराणिक काल में भी शारीरिक शक्ति का चिन्ह पाया जाता है। आधुनिक काल की अनेक शारीरिक शिक्षा सामग्री का आरम्भ इस काल में पाया जाता है।

जाति प्रथा इस काल में जटिल हो गयी थी । तक्षशिला तथा नालन्दा की नींव इस काल में पड़ी थी । शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक शिक्षा दी जाती थी। सन्ध्या, प्राणायाम आदि का प्रचलन था । मल्लयुद्ध में रुचि होती थी। ऐसा प्रतीत होता है कि इस काल में शारीरिक शिक्षा के प्रति विशेष ध्यान दिया जाता था ।

हिन्दू काल : महात्मा बुद्ध की शिक्षा से धार्मिक विचारों में परिवर्तन हुआ । उनका कथन था कि शरीर को कष्ट देने से नहीं किन्तु सुकर्म करने से आत्मिक उन्नति एवं निर्वाण प्राप्त होता है । उन्होंने मोक्ष के लिए मनुष्य को आठ कर्तव्य बताये ।

हिन्दू धर्म का मुख्य धार्मिक स्तम्भ, निराकार ब्रह्म, माया तथा योनियों में जन्म था । पुनर्जन्म के कारण शरीर को महत्व नहीं दिया जाता था । माया के दर्शन के कारण, शरीर, शारीरिक वस्तुयें एवं स्थूल पदार्थ सभी असत्य बताये जाते थे । इनकी कोई वास्तविकता नहीं थी । ये क्षणिक वस्तुयें थीं अतः इनसे दूर रहना ही वास्तविक जीवन था । आत्मा का अस्तित्व था जो शरीर में भी विद्यमान थी किन्तु शरीर की माया से उसे मोक्ष प्राप्त करना आवश्यक था । धार्मिक कार्य एवं पूजा पाठ अनिवार्य था । अपने कर्तव्यों के पालन में भी मोक्ष प्राप्त हो सकता था। राजपूत एवं क्षत्रियों की शारीरिक शक्ति, उत्साह, वीरता आदि संसार में उदाहरण हैं । भारतीय अखाड़े की भी प्रथा प्राचीन काल से किसी न किसी रूप में आयी जिसमें दंड, बैठक, मुगदर, कुश्ती, दौड़, भाग, कूदना, धनुर विद्या, कबड्डी, चिका, तैरना तथा अश्वारोहण आदि कार्य हुआ करते थे । ऐसा प्रतीत होता है कि आधुनिक शारीरिक शिक्षा पर जो बल दिया जाता है उसके अतिरिक्त अन्य सब वस्तुयें शारीरिक शिक्षा में अपने प्रारम्भिक रूप में विद्यमान थीं ।

चीनी यात्री के लेख से नालन्दा विश्वविद्यालय के खेलों का पता चलता है। यह भी बताया गया है कि विभिन्न खेलों में प्रतियोगितायें हुआ करती थीं । उस समय के दैनिक जीवन के लिए शारीरिक शक्ति एवं स्वास्थ्य अत्यन्त आवश्यक थे। बौद्ध भिक्षुक सर्वत्र जाकर ही शिक्षा प्राप्त करते थे । बौद्ध विश्वविद्यालय तक्षशिला का सैनिक प्रशिक्षण विख्यात था । यह राजकुमारों का

प्रशिक्षण केन्द्र था। धनुर विद्या, अश्वारोहण, गज रोहण, रथ चलाना, युद्ध विद्या अस्त्र शस्त्र का प्रयोग आदि प्रमुख विषय थे। ये सर्वश्रेष्ठ शारीरिक शक्ति एवं उसके गुणों के प्रतीक हैं। ईसा से पूर्व सातवीं शताब्दी में यह केन्द्र उच्चकोटि की शिक्षा के लिये विख्यात था। यहां सम्पूर्ण भारत एवं विदेशों से भी व्यक्ति अध्ययन एवं प्रशिक्षण के लिये आते थे। ईसा की बारहवीं शताब्दी में विक्रमादित्य तथा उसके पुत्र के राज्य में एक निश्चित शारीरिक शिक्षा की प्रणाली का पता चलता है। उसमें व्यायाम तथा मल्लयुद्ध के लाभ बताये गये हैं। मल्लयुद्ध, मल्ल विनोद के रूप में दिया हुआ है। मल्ल विनोद में भाग लेने वालों के लिये पौष्टिक भोजन, व्यायाम, आत्म नियन्त्रण एवं अनुशासन से रहना, ब्रह्मचर्य का पालन, अभ्यास में लगे रहना, दांव पेंच का पूर्ण अभ्यास तथा शिक्षकों एवं प्रशिक्षकों के द्वारा प्रशिक्षण प्राप्त करने का वर्णन पूर्णरूप से पाया जाता है। मल स्तम्भ के विशेष व्यायाम भी दिये गये हैं जिन्हें मल्लविनोद के लिए संध्या समय अभ्यास किया जाता था। प्रातःकाल के समय दौड़ना, व्यायाम, तैरना आदि में अभ्यास किया जाता था। मल्लयुद्ध राजाओं का आमोद था। इसके संगठन एवं संचालन का जो नृपों के सम्मुख होता था, सविस्तार वर्णन दिया गया था। समय समय पर भगवान कृष्ण एवं हनुमान शारीरिक शिक्षा के प्रोत्साहक माने गए हैं।

विजय नगर के नृप हर्ष के सुन्दर एवं सुडौल शरीर का वर्णन मिलता हैं। दक्षिण में अखाड़ों की प्रमुखता बतायी गयी है। ये शिक्षा, शारीरिक शिक्षा एवं सैनिक शिक्षा के केन्द्र होते थे। ईसा के पश्चात तेरहवीं शताब्दी में यादवों की निपुण सेना का वर्णन है। वीरों की तुलना गज शक्ति से की जाती थी। दंड पटा का चिन्ह भी पाया जाता है। चौदहवीं शताब्दी में वास्तविक हिन्दू राज्य दक्षिण के विजय नगर में स्थापित किया गया था। राजाओं के व्यायाम आदि में भाग लेने के अनेक वर्णन पाये जाते हैं। पुर्तगाल के लेखकों ने भी अपने लेखो में इस समय के शारीरिक एव सैनिक शिक्षा के विषय पर लिखा है तथा उसके प्रति सम्मान प्रकट किया है। इतिहास के अन्य लेखकों ने भी इसके विषय में लिखा है।

मुस्लिम युग : मुसलमानों ने जब भारत पर आक्रमण किया तो उस समय यहां की सेना भी शक्तिशाली थी। मुसलमान सेना भी भारतीय सेना से कम नहीं थी। भारतवर्ष में मुसलमानों के राज्य स्थापित होने पर विशाल सेना

रखी जाने लगी। ऐसी अवस्था में युद्ध विद्या में अत्यन्त उन्नति हुयी। बलिष्ठ सेना के लिये शारीरिक शिक्षा की उन्नति करना आवश्यक था। योद्धाओं, पहलवानों, शिकार, मनोरंजन, उत्साह एवं वीरता का वर्णन इस काल में बहुतायत से पाया जाता है।

महमूद गज़नी, मुहम्मद गोरी, तैमूर लंग तथा बाबर के निरन्तर आक्रमण तथा हिन्दुओं का साहस एवं शक्ति से उनका सामना करना सेना की शक्ति एवं बल का प्रतीक है। धार्मिक भावनाओं के कारण भी दोनों दलों में बल एवं शक्ति का प्रवाह रहा। मुसलमान काफिरों को ध्वंस करना चाहते थे। भारत में अहिंसा एवं मोक्ष का प्रचार विशेषरूप से हो रहा था। अश्वारोहण, तलवार, तैरना, मल्लयुद्ध आदि अत्यन्त प्रचलित थे। अकबर अनेक खेल खेलते थे। उनकी रानियां भी उनके साथ खेलों में भाग लेती थीं अतः महिलाओं के लिए भी शारीरिक योग्यता एवं मनोरंजन प्राप्त करने के उपाय थे। राजपूत महिलाओं के अश्वारोहण एवं तलवार चलाने तथा वीरता के अनेक वर्णन मिलते हैं। 'आइने अकबरी' में खेलने वालों की तकनीक, उपाय एवं व्यवहार का सम्पूर्ण वर्णन दिया गया है।

महाराष्ट्र काल : महाराष्ट्र में, शिवाजी के कारण वास्तविक शारीरिक शिक्षा की बहुत कुछ उन्नति हुयी। महाराष्ट्र के लोग वीर थे। युद्ध के लिए उन्हें सदैव तैयार रहना पड़ता था। कठिन जीवन, घोड़ों पर चढ़ना, अस्त्र शस्त्र के व्यवहार एवं प्रयोग, परिश्रमी एवं साहसी जीवन तथा अनेक प्रकार के शारीरिक व्यायाम के द्वारा यह तैयारी सम्भव होती थी। इसी काल में मुगल साम्राज्य का विरोध जाटों, राजपूतों, सिक्खों तथा महाराष्ट्रियों के द्वारा हुआ। ये भारतवर्ष की वीर जातियां हैं तथा इनका शरीर स्वस्थ तथा शक्तिशाली हुआ करता था तथा ये युद्ध विद्या में अत्यन्त प्रवीण एवं निर्भय हुआ करते थे।

इसी समय व्यायामशालाओं का निर्माण हुआ। यहां युवक युद्ध के लिये मल्ल युद्ध, दंड बैठक, सूर्य नमस्कार, तलवार, अश्वारोहण, शस्त्रों का व्यवहार, लाठी, भाला, मल्लखम्भ, गत्का, बनैठी, गदा, आसन आदि की शिक्षा प्राप्त करते थे। युद्ध कला के साथ ही वर्ष में क्रीड़ा उत्सव मनोरंजन के लिये मनाया जाता था। साहित्य के द्वारा पता चलता है कि महिलाओं के लिए भी इस

विद्या के अर्जित करने की सुविधायें उपलब्ध थीं। भारतीय इतिहास में कितनी ही वीर नारियों का उल्लेख मिलता है।

श्री समर्थ रामदास स्वामी जो शक्ति एवं कौशल के देवता स्वरूप माने जाते थे उन्होंने अनेक हनुमान मंदिर बनवाये जो शक्ति एवं साहस के प्रेरक थे। इन मंदिरों के साथ अखाड़ा संयुक्त था। सूर्य नमस्कार इन्ही के द्वारा विख्यात किया गया था। इनकी दशाबोध पुस्तक में शक्ति की प्रशंसा दी हुयी है। कई एक अंग्रेज लेखकों ने भारतवर्ष की इस समय की शारीरिक शक्ति एवं वीर सैनिकों की प्रशंसा अपने लेखों में की है। ब्राउटेन उनमें से एक है।

महाराष्ट्र की शारीरिक शिक्षा एवं शक्ति का उत्साह भारत के चहुं ओर फैल गया। राजवंश के लोगों की भी इसमें अत्यन्त रुचि थी। पेशवा व्यायाम आदि में अत्यन्त रुचि रखते तथा स्वयं भाग लेते थे। मल्ल युद्ध का बहुत प्रचार था तथा यह मनोरंजन के लिये भी उपलब्ध किया जाता था।

गुरू बलम्बभदादा देवधर मल्लयुद्ध के एक प्रवीण शिक्षक थे। इन्होंने व्यायामशाला प्रथा को प्रोत्साहित किया तथा अनेक व्यायामशालाएं स्थापित कीं। बाजीराव द्वितीय इनका बहुत सम्मान करते थे। शारीरिक शिक्षा की विचित्रता यह थी कि इसमें उच्च कोटि के व्यक्तियों एवं परिवारों की रुचि अधिक थी।

ब्रिटिश काल—अंग्रेजों ने मुगल साम्राज्य पर विजय प्राप्त की तथा ईस्ट इन्डिया कम्पनी के रूप में भारत पर राज्य करना आरम्भ किया। अंग्रेज जहां भी गये, अपने देश के प्रचलित खेल भी अपने साथ लेते गये। भारत पर राज्य करते हुये वे अपनी शिक्षा प्रणाली एवं खेल इत्यादि को प्रचलित करते रहे। मैक-लेरेन की पद्धति के अनुसार शारीरिक शिक्षा व्यवस्थित हुयी। क्रिकेट, फुटबाल, हाकी, जर्मन जिमनास्टिक, स्वीडिश व्यायाम तथा फौजी ड्रिल आदि शिक्षा संस्थाओं में आरम्भ किया गया, स्वास्थ्य शिक्षा भी दी जाने लगी, यद्यपि भारतीय व्यायाम की ओर अंग्रेजों ने ध्यान नहीं दिया तो भी यह अखाड़ों एवं व्यायामशा-लाओं में अपना अस्तित्व बनाये रहे। भारतीय व्यायाम आदि को जीवित रखने का श्रेय महाराष्ट्र को है।

भारतवर्ष में सुसंगठित रूप से शारीरिक शिक्षा का प्रचार तथा प्रशिक्षण वाई०एम०सी०ए० के द्वारा आरम्भ किया गया। संगठित शारीरिक शिक्षा में ये अग्रगामी थे। भारतवर्ष का प्रथम शिक्षा प्रशिक्षण विद्यालय सैदपेट, मद्रास में इसी संस्था के द्वारा खोला गया। एच०सी०बक्क इसके प्रथम प्रधानाचार्य थे। इस संस्था के द्वारा इस ओर अत्यन्त बहुमूल्य कार्य हुये हैं। उत्तरी भारतवर्ष में कालेज आफ फिजीकल एज्युकेशन लखनऊ यू०पी० में लखनऊ क्रिश्चियन कालेज के अन्तर्गत खोला गया जो इस क्षेत्र में इस विषय में अग्रगामी हुआ तथा उसने बहुमूल्य कार्य किये। इसके संस्थापक श्री इ० डब्लू० मम्बी थे।

अंग्रेजों के चले जाने के पश्चात भारत स्वतन्त्र हुआ तथा शारीरिक शिक्षा ने भी एक नया मोड़ लिया।

भारतीय शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम

योग आसन—भारतीय शारीरिक शिक्षा में योग आसन का बहुत ही श्रेष्ठ स्थान है। इसकी प्रशंसा विदेश में भी बहुत है। अनेक योग आसन की संस्थायें भी स्थापित की गयी हैं। योग की प्रथा भारत में बहुत प्राचीन है। कुछ लेखकों का कहना है कि यह अपने वर्त्तमान रूप में कदाचित ईसा के २०० वर्ष पूर्व स्थापित हुआ। पतांजलि अपने सूत्रों में इसका वर्णन करते हैं।

आसन हठ योग के महत्वपूर्ण भाग हैं। आसन अधिकतर पशु, पक्षियों तथा रेंगने वाले जन्तुओं के नाम पर हैं। आसन में इन्हीं के बैठने, लेटने तथा खड़े होने की अवस्था का अभ्यास किया जाता है। एस०एस० गोस्वामी अपनी पुस्तक 'हठ योग' में कहते हैं 'An Advanced Method of Physical Education and Concentration', is that we find locomotor activities More prominent in the early stages of evolution and these involved lot of muscular activities. At a certain stage of development the most ancient habit of continuous exercise had to be modified due to the new situations which arise with the improved form of mental life of man. It required the suspension of activities for mental concentration and thinking. The result was the incorporation of motionless attitude of the body favouring repose and relaxation'.

योग आसन वे शारीरिक व्यायाम हैं जिनके द्वारा ध्यान के योग्य शरीर तैयार किया जाता है। योग आसन का निकटवर्ती ध्येय शारीरिक स्वास्थ्य संतुलन एवं प्रसन्नता प्राप्त करने का है तथा दूरवर्ती ध्येय भगवान के ध्यान में लीन होने का है। योग आसन में शारीरिक एवं आत्मिकगुण दोनों हैं। योग आसन का अर्थ है ध्यान के लिये विशेष शारीरिक स्थिति।

इस ध्येय को ध्यान में रखते हुये योग आसन दो भागों में विभाजित किये गये हैं, सांस्कृतिक एवं ध्यान सम्बन्धित। योग आसन से दोनों गुण या किसी एक की भी प्राप्ति सम्भव है। योग आसन के प्रोत्साहकों का यह विचार है कि इनके द्वारा शारीरिक स्वास्थ्य एवं विकास अति उत्तम रहता है तथा मानसिक संतुलन भी प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त ध्यान के लिये यह सर्वोच्च माध्यम मान लिया गया है जिसकी प्रथा प्राचीन है तथा साधु सन्तों ने इसका प्रयोग बहुतायत से किया है। इसके प्रति धार्मिक विचार की यह धारणा है कि योग आसन के द्वारा शरीर पर पर्याप्त नियन्त्रण होता है, शरीर के उचित नियंत्रण से आत्मा शरीर से स्वतन्त्र होकर भगवान में लीन हो सकती है।

साधारणत: योग आसन अनेक हैं किन्तु उन्हें चौरासी व्यायामों के अन्तर्गत स्थिति किया गया है। कुछ लेखकों का कहना है कि बत्तीस प्रमुख आसन हैं, जो दैनिक जीवन के लिये लाभकारी हैं। प्रतिदिन १५ से ३० मिनट योग आसन के लिये देने से उत्तम लाभ हो सकता है।

योग आसन की पद्धति : आसन की सही पद्धति जानना अति आवश्यक है। गलत रीति से करने से लाभ के स्थान पर हानि होने की सम्भावना है।

आसनों का अभ्यास पवित्र एवं स्वच्छ अवस्था तथा शुद्ध वातावरण में करना चाहिए। योग आसन करते समय ध्यान नाक की नोक पर होना चाहिये। श्वास क्रिया मध्यम गति से होनी चाहिए। गहरे श्वास का अभ्यास करना चाहिये। श्वास पर नियन्त्रण करते समय ठोढ़ी सीने से मिली हुयी होनी चाहिए। पेट की मांसपेशियों को अन्दर की ओर तथा सम्पूर्ण आन्तरिक शरीर को ऊपर की ओर खींचना चाहिये। यही आसन की विधि है।

भोजन शुद्ध संतुलित एवं साधारण होना चाहिये। दैनिक जीवन अनु-

शासित होना चाहिये। भावनाओं एवं विचारों पर भी नियन्त्रण आवश्यक है। मन वचन एवं कर्म शुद्ध होने चाहियें।

स्कूलों में सिखाये जाने योग्य कुछ आसन : भुजंग आसन, अर्धशलम, धनुर, हल, पश्चीमोतनासन, चक्रासन, वक्र, उतकट, योगमुद्रा, वृक्ष, शलभ, तोलांगुल, अर्धमत्सेयन्दर, बक, कुकुट, बज्र, सर्वांग, मत्सय, शीर्ष, म्यूर तथा कपलभट्ठी आदि।

खो खो—एक दौड़ कर छूने का खेल है। इसका आरम्भ महाराष्ट्र में हुआ। पहले यह ठीक रीति से संगठित नहीं था और एक थकाने वाला खेल था जिसमें कोई विशेष नियम नहीं था। १९१४ ई० में पूना के डेकान जिमखाना के द्वारा एक कमेटी नियुक्त हुयी जिसमें खो खो के विशेषज्ञ उपस्थित थे। उनके द्वारा प्रथम नियम सूत्र निर्धारित किए गए। इससे खेल में अत्यन्त परिवर्तन हो गया। मुख्य स्थानों से इसके प्रति जो प्रस्ताव आये थे उसे भी सम्मिलित कर लिया गया इसके कारण खेल अनुशासितरूप से होने पर आकर्षक हो गया।

१९२४ ई० में एक बार पुनः बड़ौदा के एम० बी० जिमखाना के द्वारा यह परिवर्तित किया गया तथा खेल का सही उल्लेख किया गया। अखिल महाराष्ट्र शारीरिक शिक्षा मण्डल द्वारा नियम बनाये गये तथा छपवाये गये।

भारतीय मुख्य मैदान के खेलों में खो खो एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह एक उत्तम व्यायाम देने वाला खेल है तथा इसमें व्यय बिलकुल नहीं है। नियम साधारण तथा सरल हैं। दर्शकों का भी अच्छा मनोरंजन होता है। खेल में उत्साह, साहस, कौशल, फुर्तीलापन, ध्यान तथा सावधानी आदि गुण विकसित होते हैं।

कबड्डी—यह अनुमान लगाया जाता है कि कबड्डी हु टू टू या डू डू डू अत्यन्त प्राचीन काल से प्रचलित होगा किन्तु कोई प्रमाण नहीं मिलते। हु-टु-टु मराठी भाषा में एक असंगठित सम्मेलन को कहते हैं। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि प्राचीन काल में बगैर किसी नियम के खेला जाता होगा तथा बड़े बड़े झगड़े तथा झंझटों का कारण सिद्ध होता होगा।

१९१८ ई० में तथा १९२१ ई० में सतारा के खिलाड़ियों ने इसको एक

विशेष रूप दिया और उसमें प्रतियोगिता आयोजित की गयी । १९२३ ई० में एम० बी० जिमखाना बड़ौदा ने एक पाम्फलेट प्रकाशित कराया जिसमें हु-टू-टू के नियमों का उल्लेख किया गया था ये नियम एक विशेषज्ञों की विशेष कमेटी के द्वारा बनाए गए थे। गुजरात में यह खेल अत्यन्त लोकप्रिय हुआ। महाराष्ट्र फिजिकल कान्फ्रेन्स के द्वारा बनाये गये नियम वर्तमान खेल के आधार हैं।

लाठी—इसका प्रत्येक शारीरिक शिक्षण विद्यालय में प्रचार है। लाठी व्यायाम, आक्रमण तथा रक्षा दोनों के लिए प्रयोग में आता है। जितनी तेजी, स्वतन्त्रता तथा सरलता से लाठी घुमाई जाय उतना ही श्रेष्ठ माना जाता है।

लाठी वज़न तथा लम्बाई में भिन्न भिन्न होती है। नाप का स्तर कार्य करने वाले की कान की ऊँचाई का है। वज़न हलका होना चाहिये। लाठी के कुछ उदाहरण रामायण तथा महाभारत में भी पाये जाते हैं। कुछ विदेशी पुस्तकों में भी इसका वर्णन है। इनसे यह अनुमान लगाया गया है कि लाठी की प्रथा प्राचीन काल से चली आ रही है और सर्व प्रथम रक्षा का केवल यही अस्त्र था।

लाठी बचाव तथा आक्रमण के अलावा मनोरंजन भी देती है। इसके द्वारा व्यायाम से हाथों में शक्ति आती है तथा शरीर गठित होता है।

लाठी के सामूहिक प्रदर्शन से कार्य करने वालों तथा दर्शकों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

लेज़ियम--यह एक फारसी शब्द है। जिसका अर्थ लोहे के तार का धनुष है। यह एक दूसरे रूप में प्राचीन काल में प्रचलित था। लेज़ियम धनुर्विद्या को सिखाने का एक सरल माध्यम है। इससे ज्ञान तथा मनोरंजन दोनों प्राप्त किये जाते थे।

लेज़ियम शरीर के लिए उत्तम व्यायाम है। इसे बालक बहुत प्रसन्द करते हैं। ये व्यायाम साज़ के साथ भी किया जाता है। इसकी झनझनाहट की ध्वनि भी प्रिय लगती है और बच्चे इसका अभ्यास करना चाहते हैं। प्रत्येक शारीरिक शिक्षण कार्यक्रम का यह एक अंग है।

महाराष्ट्र में लेज़ियम ड्रिल तथा नृत्य की बहुत प्रथा है। सामूहिक प्रदर्शन अत्यन्त मनोरंजक तथा आकर्षक होता है। इसके द्वारा सहयोग, शक्ति, सावधानी, कौशल, फुर्ती ऐसे गुण आसानी से सिखाये जा सकते हैं। लेज़ियम में दो मुख्य प्रणालियां हैं बड़ोदा एवं घाटी।

मल्ल खम्भ--दक्षिण में मल्ल युद्ध में भाग लेने वालों के लिए यह एक प्रकार का व्यायाम था। यह कला पिछड़ी हुई थी। १९ वीं शताब्दी के पहले भाग में बलम्बभठ दादा देवधर के द्वारा यह पुनर्जीवित किया गया बलम्बभठ दादा द्वितीय पेशवा बाजीराव के शारीरिक शिक्षा अध्यापक थे। इन्होंने इसको एक विशेष रूप दिया और बताया कि कुश्ती के लिए यह अनिवार्य है। इन्होंने दो प्रकार के मल्ल खम्भ बनाए। स्थायी तथा दूसरी किसी चीज़ से लटका हुआ। इन्होंने अनेक गतियों का निर्माण किया। राजनैतिक कारणों से पेशवा बाजीराव द्वितीय को वाराणसी जाना पड़ा। दादा भी यहां उनके साथ आए। यहाँ उन्होने अनेक शिष्यों को प्रशिक्षित किया। उनके विशेष प्रिय शिष्य कराडभठ नाना गाडबोले थे।

कराडभठ नाना गाडबोले ने एक प्रसिद्ध जिमनास्टिक संस्था का आरम्भ किया और मल्ल खम्भ तथा कुश्ती में शिक्षा प्रदान करने लगे।

नारायण गुरु देवधर दादा के सब से छोटे पुत्र तथा दामोदर गुरु जो कराडभट के माने हुये शिष्य थे आपस में एक साथ मिले। दामोदार गुरु ने भारत के भिन्न-भिन्न स्थानों में जाकर शिक्षा प्रदान की। इन्होंने बेंत के मल्ल खम्भ का एक नया आविष्कार किया।

बारहवीं शदाब्दी से मल्ल खम्भ का कुछ वर्णन मिलता है किन्तु बालम्बभट दादा इसके प्रमुख प्रचारक थे। श्री सपरे ने भिन्न भिन्न प्रकार के मल्ल खम्भ बनाये। नारायण गुरु देवधर ने बड़ौदा में एक संस्था स्थापित की जहां इस कला की शिक्षा दी जाती थी। श्री सपरे इसी संस्था के सदस्य थे। उन्होंने भिन्न भिन्न प्रकार के मल्ल खम्भ बनाये। भारतीय शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम में यह एक कठिन तथा अत्यन्त लाभकर व्यायाम साधन है। विदेशी इसकी ओर अत्यन्त प्रशंसात्मक दृष्टि से देखते हैं।

डंड—यह भारतीय शारीरिक व्यायाम में सबसे मुख्य, लोकप्रिय तथा लाभदायक व्यायाम है। इसमें किसी प्रकार के आपरेट्स की आवश्यकता नहीं पड़ती है। बहुत ही कम समय में पूरे शरीर का व्यायाम हो जाता है। पश्चिमी शारीरिक शिक्षा में भी डंड के रूप की अवस्था व्यायाम में ली जाती है।

भारतीय पहलवानों ने संसार में अपना नाम पैदा कर लिया है। ये पहलवान अपनी शक्ति तथा सांस के लिए साधारणतः डंड व्यायाम करते हैं। इसे डंड इसलिए कहते हैं क्योंकि यह हाथ के ऊपरी हिस्से को बढ़ाता है।

बैठक—यह डंड का सहायक है। इससे जांघ तथा पैरों की कसरत होती है। इसके भी कई प्रकार हैं। भारतीय पहलवानों ने अपनी टांगों को शक्तिशाली करने के लिये इसी का प्रयोग किया है। देखा गया है कि भारतीय पहलवान पश्चिमी पहलवानों की तुलना में टांगों की शक्ति में बढ़े हुये होते हैं। डंड तथा बैठक भारतीय व्यायाम की एक प्राचीन प्रथा है। क्योंकि साधारणतः इन व्यायामों में किसी विशेष शिक्षक की आवश्यकता नहीं होती यह स्वतंत्र तथा व्यक्तिगत रूप से भारतवर्ष में अनेकों वर्षों से चलती आयी है।

सूर्य नमस्कार—एक सरल रीति का व्यायाम है जो प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है। यह शरीर के पूर्ण व्यायाम के लिये अति उत्तम विधि है।

सामर्थ राम दास जो शिवाजी के गुरु थे उन्हीं के द्वारा यह व्यायाम प्रकाश में आया। सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में शिवाजी ने मराठा राज्य स्थापित किया। शिवाजी के द्वारा राज्य के कोने कोने में यह प्रथा प्रचलित की गयी। वह स्वयं १२०० नमस्कार प्रतिदिन करते थे। उन्नीसवीं शताब्दी में इस प्रथा में शिथिलता आ गई।

भवनरावों पारीत प्रतिनिधि अवध के नरेश ने इस विद्या का अध्ययन किया और इस विद्या के विज्ञान से प्रभावित हो इसका विश्लेषण किया और सूर्य नमस्कार व्यायाम पर एक पुस्तक लिखी जिसमें चित्र भी दिये हुये थे। अपने राज्य में उन्होंने इसे अनिवार्य कर दिया था।

आधुनिक भारत में शारीरिक शिक्षा

शैक्षणिक संस्थाओं में शारीरिक शिक्षा एवं स्पोर्ट्स की स्थिति तथा

नेशनल फिटनेस कोर : इस कथन में, कि भूत एवं वर्तमान में भी शैक्षणिक संस्थाओं में शारीरिक शिक्षा एवं स्पोर्ट्स को उचित स्थान नहीं दिया गया है, कोई दो राय नहीं हो सकती है। यह कहा जा सकता हैं कि प्रगति की ओर चेष्टा की जा रही है तथा स्वतन्त्रता के पश्चात यह बात निश्चित हो गई कि भारत के नागरिकों के लिए स्वास्थ्य एवं शारीरिक निपुणता की अत्यन्त आवश्यकता है। शैक्षणिक संस्थाओं में इस आदर्श तक पहुंचने में अनेक कठिनाइयां हैं।

स्कूल पाठ्यक्रम इतना जटिल कर दिया गया है कि विषयों को पढ़ाने के अतिरिक्त और कुछ करने के लिए समय नहीं बचता। यह जानते हुए कि जिस पाठ्यक्रम में स्वास्थ्य शिक्षा एवं शारीरिक शिक्षा तथा स्पोर्ट्स का उचित स्थान नहीं है, वह अधूरा है, मानसिक शिक्षा के प्रति ध्यान एवं समय अधिक दिया जाता है। अनेक शैक्षणिक अधिकारी ऐसे हैं जो पाठ्यक्रम में परिवर्तन करना चाहते हैं किन्तु यह कैसे सम्भव हो यह समझ में नहीं आता। देखा गया है कि संस्थाओं में समय की कमी के साथ आर्थिक सहायता भी पर्याप्त नहीं है। परिणामत:, सुविधायें एवं साधन की घोर कमी है। उचित प्रशिक्षित व्यक्तियों की सेवायें शारीरिक शिक्षा में उपलब्ध नहीं की जातीं। यदि उन्हें नियुक्त करते भी हैं तो शारीरिक शिक्षा के अतिरिक्त और अन्य काम लेते हैं जिससे शारीरिक शिक्षा कार्य में कमी होती है। साधारणत: प्रधानाचार्य शारीरिक शिक्षा में विशेष रुचि नहीं रखते। बाल्यकाल से शारीरिक शिक्षा में रुचि न होने के कारण विद्यार्थी भी शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम पर विशेष ध्यान नही देते। विद्यार्थियों की अल्प संख्या ही शारीरिक शिक्षा में भाग लेती है। कभी कभी विद्यार्थियों में रुचि होते हुए भी समय के अभाव के कारण वे भाग नहीं ले पाते तथा कभी कभी संस्था में ही कोई ऐसा विशेष प्रोग्राम नहीं होता जिसमें वे भाग ले सकें।

स्कूल में शारीरिक शिक्षा चार भागों में विभाजित होनी चाहिये। शारीरिक क्रिया, स्वास्थ्य शिक्षा एवं स्वस्थ आदत अर्जित करना, शारीरिक एवं चिकित्सात्मक परीक्षा जिसकी देखभाल अन्त तक की जाये एवं स्कूल का स्वस्थ वातावरण।

स्कूल में वैज्ञानिक शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम होना अति आवश्यक है क्योंकि विद्यार्थियों को दक्ष रखने के लिये बड़ी मांसपेशियों की गति तीव्रता

शक्तिशाली होना चाहिए। स्कूल को शक्ति तथा शिक्षा दोनों ही की संस्था होना चाहिए। बड़ी माँस पेशियों की क्रिया से मानसिक विकास का भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। संसार के अधिक शीघ्र ग्राहक जीव वही हैं जिनकी इन्द्रियां निपुण हैं। गति, चेतनता का आरम्भ एवं अन्त है। स्कूल के बालकों की शारीरिक शिक्षा पूर्णतया शैक्षणिक होती है। "Proper action with all it implies is really the aim of all education. Dr. Dowson says "we live not to be, but to do, not to feel and think, but to realise the ends of feeling and thinking in creative activity. Goathe the poet said "In the beginning the deed" and adds "and from far off time creation among things and men has been an eternal epic of deeds".

शारीरिक क्रिया का मन से सम्बन्ध होने के साथ ही साथ शारीरिक क्रिया भावनाओं एवं आदत के निर्माण में भी सहायक होती है। शारीरिक शिक्षा का सह ज्ञान (Concomitant learning) गति युक्त क्रिया के अत्यन्त बहुमूल्य परिणाम होते हैं। Kilpatriek तीन प्रकार का सीखना बतलाते हैं। प्रारम्भिक (Primary) सम्मिलित (Associate) तथा सह ज्ञान (Concomitant) खेलने में प्रारम्भिक ज्ञान खेल के कौशल का सीखना है, सम्मिलित ज्ञान उसके द्वारा अन्य विचार एवं ज्ञान तथा सह ज्ञान जो खेल के साथ प्राप्त होता है।

शारीरिक शिक्षा, मानसिक एवं नैतिक गुणों के विकास में अत्यन्त सहायक है।

उपरोक्त बातों को संक्षेप में शारीरिक शिक्षा के गुण कह सकते हैं। प्रश्न किया जा सकता है कि कितने स्कूल इस महत्व को समझते हैं तथा उसके लिए उचित उपाय करते हैं। उत्तर अत्यन्त शोचनीय होगा। स्कूल जो इस ध्येय के प्राप्त करने के लिए उत्सुक हैं वे उंगलियों पर गिने जा सकते हैं।

स्कूलों में N. C. C. के द्वारा सैनिक शिक्षा पर अधिक बल दिया जा रहा है। इसके कारण शारीरिक शिक्षा के कार्य में बहुत बाधा पहुंची है। इसके साथ ही कुछ बालक अन्य विषयों जैसे स्काऊटिंग, गाईडिंग, सेन्ट जान्स आमब्युलेन्स, रेड क्रास, ए. सी. सी. में भाग लेते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि ध्यान एक विषय पर उचित समय एवं अर्थ के आधार पर नही दिया जा सकता।

यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि स्कूलों में शारीरिक शिक्षा की दशा अत्यन्त शोचनीय है तथा वास्तविक स्तर से बहुत नीचे है।

स्कूलों के लिये भिन्न भिन्न शारीरिक शिक्षा एवं स्पोर्ट्स प्रतियोगितायें जिला, प्रदेश एवं राष्ट्रीय स्तर पर होती हैं। किन्तु इनके लिये गिने चुने बालकों पर ही ध्यान दिया जाता है तथा कभी बालकों में गुण के आविष्कार करने की चेष्टा किसी भी प्रकार से नहीं की जाती। बहुधा यही देखा जाता है कि प्रायः ५००—७०० बालकों के बीच में कदाचित ८ या १० ऐसे बालक हैं जो शारीरिक शिक्षा के प्रत्येक कार्य में स्कूल का प्रतिनिधित्व करते हैं। खेल की एक अच्छी मजबूत टीम भी नही निकल पाती। स्कूलों में शारीरिक शिक्षा के सुधार की अत्यन्त आवश्यकता है।

१९५९ में जनरल भोंसले ने जो एक प्रभावशाली व्यक्ति थे तथा इन्डियन नेशनल आर्मी में प्रशंसापूर्ण कार्य कर चुके थे, तथा बम्बई सरकार के द्वारा डाइरेक्टर आफ रिलीफ एण्ड रीहैबलिटेशन नियुक्त हुए थे १९५२ में यूनियन डिप्टी मिनिस्टर आफ रीहैबलिटेशन नियुक्त हुए, इस अवस्था में उन्होंने शरणार्थियों की दशा देखकर उन्हें प्रशिक्षित करना आरम्भ किया तथा N.D.S. की स्कीम चलाई जो अत्यन्त सफल प्रतीत हुई। वह इसके निर्देशक नियुक्त हुए। यह सर्वप्रथम शरणार्थियों के बच्चों के साथ आरम्भ हुआ था। किन्तु १९५७ में अन्य व्यक्तियों को भी प्रशिक्षण में लिया गया था। सीमा के आक्रमणों के कारण इस आन्दोलन की और मांग हुयी। यह शिक्षा विभाग में संयुक्त कर लिया गया तथा शारीरिक शिक्षा से भी ऊंचे स्तर पर राष्ट्रीय आन्दोलन के रूप में कार्य होने लगा। इसका निर्देशालय देहली में था। सैकड़ों शिक्षक इस स्कीम में प्रशिक्षित किये गये तथा भारत के सम्पूर्ण स्कूलों में इस स्कीम को चलाने के लिए भेजे गये। शारीरिक शिक्षकों को भी इसमें तीन माह का प्रशिक्षण दिया गया। इस स्कीम के द्वारा राष्ट्रीयता पर अधिक बल दिया गया तथा इस भावना की उत्पत्ति के लिए लोक नृत्य, मार्चिंग, स्वदेशी व्यायाम, राष्ट्रीय आदर्श आदि पर अधिक बल दिया गया।

जनरल भोंसले के साथ केन्द्र में दो डिप्युटी डाइरेक्टर्स तथा प्रदेश में रीजनल डाइरेक्टर्स एवं सुपरवाइजर्स नियुक्त हुए। इस स्कीम की सम्पूर्ण आर्थिक

सहायता केन्द्रीय सरकार से प्राप्त हुयी। इस स्कीम के दो केन्द्रीय प्रशिक्षण केन्द्र सरिस्का, राजस्थान १९६० में तथा बरवाहा, मध्य प्रदेश १९६३ में स्थापित किये गये। सर्व प्रथम प्रशिक्षण अवधि ६ माह की थी किन्तु बाद में ९ महीने की हो गयी। सिलेबस में सिद्धान्त एवं अभ्यास दोनों थे। अभ्यास में बड़े खेल, ट्रैक एवं फील्ड कार्यक्रम, ड्रिल, मार्चिंग, जिमनास्टिक, पर्वतारोहण, ताल बद्ध क्रियायें, फील्ड क्राफ्ट आदि थे। महत्वपूर्ण विषय, सांस्कृतिक कार्यक्रम, लोक नृत्य, राष्ट्रीय ध्वजा की महत्ता तथा राष्ट्रीय गान पर बल दिया गया।

यह स्कीम बहुत ही सफल हुई। सफलता की कसौटी वह भावना है कि जिससे यह आरम्भ की गयी थी। वैसे वास्तविक शारीरिक शिक्षा के दृष्टिकोण से इस स्कीम में अनेक त्रुटियां थीं। स्व० पंडित जवाहर लाल नेहरू को, जो उस समय प्रधान मंत्री थे, यह स्कीम अत्यन्त प्रभावशाली लगी तथा इसे प्रोत्साहित करने में इनका बड़ा हाथ था। जनरल भोंसले की मृत्यु के बाद इसमें परिवर्तन होने लगा।

नेशनल फिटनेस कोर (N.F.C.): २६ मई १९५९ ई० पंडित हृदय नाथ कुंजरू की अध्यक्षता में एक कमेटी बनायी गयी। यह कमेटी केन्द्रीय सरकार के द्वारा बनायी गयी थी तथा कुंजरू कमेटी के नाम से प्रसिद्ध हुयी। इसका विशेष ध्यान भारत में शारीरिक शिक्षा का मूल्यांकन करना था। कमेटी ने सम्पूर्ण भारत में भ्रमण किया तथा शारीरिक शिक्षा की अवस्था का अध्ययन किया। १९६३ ई० में उन्होंने अपनी रिपोर्ट दी। कदाचित शारीरिक शिक्षा की इस रूप में भारत में यह पहली रिपोर्ट थी। यह रिपोर्ट राष्ट्रीय शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन आयोजन का बहुमूल्य पूरक सिद्ध हुई।

कुंजरू कमेटी का यह निर्णय था कि राष्ट्रीय स्वास्थ्य के लिये शारीरिक शिक्षा अति आवश्यक है।

स्कूलों की शारीरिक शिक्षा के प्रति उदासीनता की इस कमेटी ने कड़ी आलोचना की। स्कूल में शारीरिक शिक्षा केअन्तर्गत अन्य अंगों के द्वारा विभिन्न

कार्यों में असहयोग तथा लाभ का अभाव पाया गया। विचार यह किया गया कि यदि थोड़े कार्यों पर ध्यान केन्द्रित किया जाये तो उससे अधिक लाभ होने की आशा थी। अतः सम्पूर्ण शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम तथा उसके सहयोग के अन्य विषयों को एक कर दिया गया तथा वह एक Integrated scheme of Physical Education के रूप में आया जिसे बाद में N.F.C. का नाम दिया गया। इस Scheme में शारीरिक शिक्षा, N.D.S. A.C.D. के मेल से एक नया पाठ्यक्रम (Syllabus) तैय्यार किया गया, जो सम्पूर्ण भारत के स्कूलों में आरम्भ किया गया। प्रोग्राम में शारीरिक विकास एवं अनुशासन तथा देश-भक्ति पर बल दिया गया। सिलेबस में शारीरिक शिक्षा के कार्य बहुतायत से लिये गये तथा अनुशासन एवं देश भक्ति की सामग्री एन०डी०एस० से ली गयी। विशेषज्ञों की कमेटी बुलाई गयी जिसमें श्री आर०के० कपूर की अध्यक्षता में, जो ज्वाइंट एज्युकेशन एडवाइज़र थे, मिनिसट्री आफ डिफेन्स, एच०डी०एस० तथा शारीरिक शिक्षा के प्रतिनिधि उपस्थित थे, उसमें सिलैबस पास किया गया।

यह नया प्रोग्राम १९६५-६६ ई० से स्कूलों में आरम्भ किया गया। इस प्रोग्राम में त्रुटियां अनेक हैं तथा कई एक विषय पर इसकी आलोचना की जा सकती है किन्तु इसकी अच्छाइयों के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि एक राष्ट्रीय प्रोग्राम का आरम्भ हुआ जिससे कम से कम सम्पूर्ण भारत में एक ही प्रकार की शारीरिक शिक्षा दी जाने लगी है। क्षेत्रीय विचित्रता एवं विशेषताओं के अनुसार प्रोग्राम में स्थानीय परिवर्तन की भी आज्ञा है। इस प्रोग्राम में अनिवार्य भाग है तथा अनेक ऐच्छिक विषय हैं जिनमें से चुनने की स्वतन्त्रता है। ऐच्छिक विषय में स्काउटिंग, स्पोर्ट्स, नृत्य, ड्रामा, संगीत, समाज सेवा, पर्वतारोहण आदि हैं। एक ऐच्छिक विषय अनिवार्य भी है।

यह नया सिलैबस एन०एफ०सी० स्थायी नहीं है। सेन्ट्रल एडवाइज़री बोर्ड की सिलैबस कमेटी ने एक नया सिलैबस प्रशिक्षण विद्यालयों के लिये १९६७-६८ से दिया है। यह कमेटी एन०एफ०सी प्रोग्राम का भी अध्ययन कर रही है तथा भविष्य में अनेक परिवर्तनों की सम्भावना है।

भारत में शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण कार्यक्रम

शारीरिक शिक्षा भारतीय स्कूलों में अन्य शिक्षा विषय के रूप में १९२०

ई० के पश्चात आरम्भ हुई। इसके पूर्व शारीरिक शिक्षा क्लास स्कूल के घंटों के अतिरिक्त अवकाश प्राप्त सैनिकों के द्वारा दी जाती थी। ये ड्रिल, पी०टी० मार्चिंग आदि बड़े अनुशासित रीति से एवं सेवा की रीति से करते थे। खेल एवं स्पोर्ट्स पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था। ये शिक्षक अधिक शिक्षा प्राप्त व्यक्ति नहीं थे नये शैक्षणिक प्रणालियों से परिचित ही थे।

अंग्रेजों के आने से कुछ अंग्रेजी स्कूल खुले जिनमें खेल आदि सिखाये जाते थे। इसकी नकल दूसरे स्कूलों ने की।

१९२० ई० में श्री एच०सी० बक ने वैज्ञानिक रीति से शारीरिक शिक्षक प्रशिक्षण कार्य मद्रास में आरम्भ किया। उन्होंने एक शारीरिक शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय का आरम्भ किया जो वाई०एम०सी०ए० कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन के नाम से सैदपेट मद्रास में स्थित है। प्रादेशिक सरकार से इसके लिये आर्थिक सहायता प्राप्त हुयी।

१९३२ ई० में श्री ई० डब्लू० मम्बी ने उत्तरी भारत में प्रथम कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन की नींव डाली। यह मेथोडिस्ट चर्च मिशन के द्वारा सहायता प्राप्त करता है।

वास्तविक शारीरिक शिक्षा एवं शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम भारत में हाल ही में आरम्भ हुआ है तथा इस ओर उतनी प्रगति नहीं हुई जितनी होनी थी। इसके अनेक कारण रहे हैं। सरकार की उदासीनता, धार्मिक तथा शैक्षणिक भावनायें, आर्थिक स्थिति, शारीरिक शिक्षा को पूर्ण शिक्षा न समझना, विद्या उपार्जन का गलत विचार, शारीरिक शिक्षा को स्कूल के अतिरिक्त कार्य समझना, शारीरिक शिक्षा में समय की बरबादी समझना, शारीरिक शिक्षा में उचित व्यक्तियों का न आना, शारीरिक शिक्षा को कुश्ती का अखाड़ा समझना, भारतीय एवं विदेशी शारीरिक शिक्षा के प्रति मतभेद आदि इसके मुख्य कारण हैं।

आज प्रायः ५७ शारीरिक शिक्षा विद्यालय विभिन्न स्तर पर शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण का कार्य कर रहे हैं।

(१) दि लक्ष्मी बाई कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन, शक्तिनगर, ग्वालियर (मध्य प्रदेश)

(२) गवर्नमेंट कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन, शिवपुरी, (म० प्र०
(३) ,, ,, ,, ,, पटियाला, (पंजाब)
(४) दि यूनिवर्सिटी डिपार्टमेन्ट आफ फिजिकल एज्युकेशन पंजाबी यूनिवर्सिटी चंदीगढ़
(५) दि वाई० एम० सी० ए० कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन नन्दनम, मद्रास
(६) अलागप्पा कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशय करा‌ईकुड़ी, (मद्रास स्टेट)
(७) मारूथी कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन, पेरियानाइकन—पालायम क्वाइम्बातोर, (मद्रास स्टेट)
(८) दि क्रिश्चिन कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन लखनऊ। (यू० पी)
(९) दि गवर्न्मेंट कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन फार बोयज, रामपुर (यू० पी०)
(१०) दि गवर्न्मेंट कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन फार वीमेन, इलाहाबाद, (यू० पी०)
(११) श्री गान्दी स्मारक कालेज आफ फिजिकले एज्युकेशन समोधपुर, (यू० पी०)
(१२) दि गवर्न्मेंट कालेज आफ फिफिकल एज्युकेशन, विकानेर (राजस्थान)
(१३) ,, ,, ,, ,, जोधपुर (राजस्थान)
(१४) ,, ,, ,, ,, बाराबती स्टेडियम,कन्टक (उड़ीसा)
(१५) ,, ,, ,, ,, पटना, (बिहार)
(१६) दि गर्वन्मेंट कालेज आफ फिजकिल एज्युकेशन हैदराबाद, (अ० प्र०)
(१७) ,, ,, ,, ,, त्रिवेन्द्रम, (केरला स्टेट)
(१८) ,, ,, ,, ,, कोज़ीकोंड (केरला स्टेट)
(१९) इन्सटीच्युट आफ फिजिकल एज्युकेशन, यूनिवर्सिटी आफ कल्यानी, (वेस्ट बंगाल)
(२०) ,, ,, ,, ,, नदिया, कल्यानी, (वेस्ट बंगाल)

(२१) दि पोस्ट ग्रेजुऐट कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन, बानीपुर,
(वेस्ट बंगाल)

(२२) दि गवर्न्मेंन्ट कालेम आफ फिजिकल एज्युकेशन यूनियन सर्कल, बंगलौर
(मैसूर)

(२३) दि वाई० एम० सी० ए० कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन, सिटी
ब्रान्च बंगलौर सिटी, (मैसूर)

(२४) दि वेनियोन स्मिथ सर्टीफिकेट इन फिजिकल एज्युकेशन बेलगाम,
(मैसूर)

(२५) मालैसजेन व्यायामशाला सर्टीफिकेट कोर्स इन फिजिकल एज्युकेशन
धारवार, (मैसूर)

(२६) दि कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन, अपोजिट एल० जी० अस्पतल
मानीनगर, अहमदाबाद—८ (गुजरात)

(२७) श्री सी० पी० व्यायाम महाविद्यालय, राजपीपला (गुजरात)

(२८) सेठ सी० एन० व्यायाम विद्याभवन, अम्बावादी, ऐलिस, ब्रिज,
अहमदाबाद—६, (गुजरात)

(२९) दि कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन, सूरत— (गुजरात)

(३०) इन्डियन इन्सटीच्युट फार डिप्पलोमा इन फिजिकल एज्युकेशन, कलचर
एण्ड रिक्रियेशन, अमरावती, (महाराष्ट्र)

(३१) दि गवर्न्मेंट ट्रेनिंग इन्सटीच्युट फ्रार फिजीकल एज्युकेशन, कान्दीवली
बम्बई—६७, (महाराष्ट्र)

(३२) दि कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन फार वीमेन, बड़ोदा,
(महाराष्ट्र)

(३३) एच० वी० पी० मंडल भारतीय शारीरिक प्रशिक्षण महाविद्यालय,
अमरावती, (महाराष्ट्र)

(३४) दि लोकमान्य तिलक शारीरिक शिक्षण विद्यालय, मिरज (महाराष्ट्र)

(३५) शारीरिक शिक्षण विद्यालय, इस्लामपूर, एस० सतारा, (महाराष्ट्र)

(३६) क्रान्ति स्मृति एस० एस० विद्यालय, व्यायाम मंडल, सतारा, सिटी,
महाराष्ट्र)

(३७) शारीरिक शिक्षण विद्यालय, श्री सरस्वती भवन एज्युकेशन सोसाइटी,
औरंगाबाद, (महाराष्ट्र)

(३८) शारीरिक शिक्षा विद्यालय, पूना, (महाराष्ट्र)

(३९) क्रीड़ा मंडलस सेन्ट्रल कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन, हेल्थ एण्ड रिक्रियेशन नागपुर, महाराष्ट्र)

(४०) दि सिटीजन्स एज्युकेशन सोसायटीज ट्रेनिंग इन्सटीच्युट फार फिजिकल एज्युकेशन, न्यु शुकरावर्त, नागपुर (महाराष्ट्र)

(४१) हीरापुर स्कूल आफ फिजिकल एज्युकेशन, धनबाद, (महाराष्ट्र)

(४२) शारीरिक शिक्षण महाविद्यालय केयर आफ क्रिड़ा मंडल, उमरेद रोड नियर कालेज आफ सायेन्स, नागपुर–३, (महाराष्ट्र)

(४३) सामर्थ व्यायाम मंदिरर्स सी० पी० एड० इन्सटीच्युट, दादर, (महाराष्ट्र)

(४४) दि न्यु एज्युकेशन सोसाइटीज सर्टीफिकेट इन फिजिकल एज्युकेशन कोर्स, कोल्हापुर, (महाराष्ट्र)

(४५) एस० एस० वी० पी० सन्तस सर्टीफिकेट इन फिजिकल एज्युकेशन इन्सटीच्युट, धूलिया, (महाराष्ट्र)

(४६) सी० पी० एक कोर्स, ईस्ट खानदेश विद्याप्रकाशक कोओपरेटिव समाज लिमिटेड, जलगांव, (महाराष्ट्र)

(४७) सी० पी० एड इन्सटीच्युट श्री महेन्द्र एज्युकेशन सोसाइटी, सवारा अकोला डिस्ट्रिक्ट, (महाराष्ट्र)

(४८) सी० पी० एड० कोर्स रेसीडेन्शियल हाई स्कूल, अहमद नगर (महाराष्ट्र)

(४९) ,, ,, ,, मराठा विद्या प्रकाशक समाज, नासिक, (महाराष्ट्र)

(५०) सी० पी० एड० इन्सटीच्यूट उसमानाबाद, (महाराष्ट्र)

(५१) सी० पी० एड० इन्सटीच्युट डिप्रेस्ड क्लास मिशन सोसाइटी, महात्मा फूले, एच० एस० पूना (महाराष्ट्र)

(५२) सी० पी० एड० कोर्स अखिल महाराष्ट्र, एस० ए० मंडल ब्रान्च, मलवाना, (महाराष्ट्र)

(५३) सी० पी० एड० इन्सटीच्यूट नागा समाज सेवा मंडल, महान नगर शोलापुर, (महाराष्ट्र)

(५४) ,, ,, ,, कोर्स संगालि एज्युकेशन सोसाइटीज सिटी हाई स्कूल तासगांव एस० सतारा, (महाराष्ट्र)

(५५) ,, ,, ,, (ऐक्सटर्नल) कोर्स महाराष्ट्र मंडल, तिलक रोड, पूना,

(५६) नेशनल फिटनेश कोर सेन्ट्रल ट्रेनिंग, सरिस्का, अलवर, (राजस्थान)
(५७) ,, ,, ,, बरवहा, (म० प्र०)

वाई० एम० सी० ए०

यूरोप में मध्यकाल में मसीही धर्म के द्वारा शारीरिक शक्ति तथ विकास के प्रति घोर विरोध था। शरीर को शक्तिशाली करना तथा विकसित करना अनुचित समझा जाता था किन्तु इस विश्वास का समय के साथ परिवर्तन होता गया यहां तक कि १९वीं शताब्दी में मसीही समाज ने शारीरिक शिक्षा को चरित्र निर्माण के लिए एक उचित तथा अनिवार्य माध्यम मान लिया। यंग मैन क्रिश्चियन एसोसियेशन ने शारीरिक शिक्षा के द्वारा मनोरंजन, शारीरिक सुधार आदि करने का भार अपने ऊपर ले लिया। वाई०एम०सी०ए० का आरम्भ लन्दन के एक क्लर्क जार्ज विलियम ने किया। १८४१ ई० में इन्होंने अपने कार्य को आरम्भ किया। आरम्भ में युवकों को उचित मार्ग पर लाने के लिए प्रार्थना तथा बाइबिल पढ़ने के उपायों से इन्होंने सहायता ली। युवकों द्वारा एक धार्मिक क्लब बनाया गया। इसका नाम वाई० एम० सी० ए० रखा गया। क्लब का उद्देश्य उन युवकों का धार्मिक दृष्टि से सुधार करना था जो व्यापार तथा व्यवसाय आदि में लगे हुए थे।

१८५१ ई० में अमेरिका के बोस्टन शहर में प्रथम एसोसियेशन स्थापित हुआ। इसाई धर्मावलम्बियों ने इस आवश्यकता का अनुभव किया कि जो युवक घर के वातावरण से दूर शहरों में आते हैं उनके आत्मिक उत्साह के लिए यह एसोसियेशन अनिवार्य है। इसके कारण बड़े बड़े नगरों में इसकी शाखा खुली। १० साल के अन्दर २०० से अधिक एसोसियेशन तथा राष्ट्रीय संस्थाओं की स्थापना हुई।

आरम्भ में वाई० एम० सी० ए० के क्वाटर में पढ़ने का स्थान, धार्मिक पुस्तकालय और सभा हाल होता था। १८५६ ई० में एक राष्ट्रीय समारोह हुआ। वे नेतागण जो उस समय की एथेलेटिक तथा जिमनास्टिक से प्रभावित हुए थे, वहां यह प्रस्तावित किया कि वाई० एम० सी० ए० में तैरने का स्थान तथा जिमनेज़ियम भी होना चाहिए। परन्तु यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं हुआ।

१८६० ई० में इस विचार ने ऐसा जोर पकड़ा कि एसोसियेशन को स्वीकार कर इसका प्रबन्ध करना ही पड़ा। यह इस ध्येय से भी आरम्भ किया गया कि वाई० एम० सी० ए० दूसरे मनोरंजन के स्थानों से जो समाज की दृष्टि में उचित नहीं थे, युवकों को अपनी ओर आकर्षित करें।

लड़ाई के समय में इस संस्था ने सैनिकों की बड़ी सेवा की।

१८६६ ई० मे न्यूयार्क नगर एसोसियेशन ने अपने संविधान में यह लिखा कि एसोसियेशन का ध्येय युवकों का आत्मिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक तथा शारीरिक उन्नति करना होगा। यह उद्देश्य समस्त सभाओं द्वारा मान लिया गया।

वाई० एम० सी० ए० का अपना पहला निवास १८६९ ई० में सेनफ्रानस्सिको, न्यूयार्क तथा वाशिंगटन में बना। सबसे पहले शारीरिक निर्देशक जे० राबर्ट नियुक्त हुए। वे एक प्रसिद्ध जिमनास्ट, वेट लिफ्टर तथा ट्रैक एण्ड फील्ड एथलीट थे। राबर्ट के परिश्रम से वाई० एम० सी० ए० एक ऐसा स्थान बन गया जहां युवक सस्ते मनोरंजन के स्थानों पर न जाकर यहां आते थे। इस स्थान में मसीही मनुष्यत्व, चरित्र निर्माण की शिक्षा दूसरे धार्मिक स्थान से कम न थी।

१८८५ में वाई० एम० सी० ए० का अन्तर्राष्ट्रीय प्रशिक्षण स्कूल खोला गया। दो वर्ष के अन्दर उसमें शारीरिक शिक्षा का विभाग खोला गया। शारीरिक शिक्षा के विभाग ने, जो उस समय सामाजिक सुधारों के लिए कार्य कर रहा था, एक अन्तर्राष्ट्रीय विभाग खोला। कुछ और प्रशिक्षण स्कूल खोले गए।

वाई० एम० सी० ए० का वर्तमान ध्येय व्यायाम मनोरंजन तथा शिक्षा के द्वारा सर्वोत्तम, शारीरिक, आत्मिक विकास, युवा तथा प्रौढ़ पुरुषों में, जो उच्च कोटि के मसीही मनुष्यत्व के विभाग में अति आवश्यक है, था। उनका उद्देश्य स्वास्थ्य नाड़ी पेशियों का विकास, स्वयं संयम, दूसरों के अधिकारों की मान्यता, पवित्र जीवन तथा आदर्श की प्राप्ति है।

लड़ाई के समय वाई० एम० सी० ए० ने संसार के विभिन्न देशों में बड़े

महत्व का कार्य किया। संसार का कोई ऐसा देश नहीं जहां के मुख्य नगरों में वाई० एम० सी० ए० की एक शाखा नहीं हैं। यह देशीय तथा अन्तर्देशीय स्तर पर कार्य करती है। इस संस्था में ऊंच, नीच, गरीब अमीर एवं रंग का भेद भाव नहीं हैं।

भारतवर्ष में शारीरिक शिक्षा वैज्ञानिक ढंग से इसी संस्था के द्वारा संचालित की गयी।

१९०८ ई० में डाक्टर जे हेनरी ग्रे ने प्रथम वाई० एम० सी० ए० कलकत्ता में खोला। उसके पश्चात अनेक वाई० एम० सी० ए० केन्द्र भारतवर्ष में खोले गये। इसी संस्था की चेष्टाओं से भारतीय शारीरिक शिक्षा में परिवर्तन हुआ तथा टीम एवं व्यक्तिगत स्पोर्टस का चलन हुआ एवं मनोरंजन क्रिया में रुचि ली जाने लगी। अंग्रेजी स्पोर्ट्स के साथ ही वालीबाल, बासकेटबाल, था ट्रैक एवं फील्ड एथलेटिक्स तथा प्ले ग्राऊन्ड बाल से भी परिचय कराया। प्ले ग्राउन्ड की प्रथा प्रचलित की गयी एवं बड़े बड़े नगरों में इसकी स्थापना की गयी। सैदपेट मद्रास में प्रथम वाई० एम० सी० ए० स्कूल आफ फिजीकल एज्युकेशन १९२० में खोला गया। १९३१ में यहां पर कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन खोला गया था। यहां सम्पूर्ण भारतवर्ष तथा लंका से व्यक्तियों ने शिक्षक बनने का प्रशिक्षण प्राप्त किया। प्रत्येक वाई० एम० सी० ए० में शारीरिक शिक्षा के पर्याप्त साधन हैं तथा साथ ही साथ छात्रावास भी है। यहां सर्वदा वाई० एम० सी० ए० के ध्येय के अनुसार उच्च शारीरिक तथा आत्मिक विकास का ध्यान रखा जाता है। युवकों के आदर्श चरित्र निर्माण के लिये इस संस्था ने प्रशंसनीश प्रयास किये है। १९३० में जे बुकानन ने, जो कलकत्ता वाई० एम० सी० ए० के निर्देशक थे प्रादेशिक स्तर पर यूथ वेलफेयर काउंसिल की स्थापना की। इसका कार्य सैनिक संस्थाओं की सेवा, स्वास्थ्य सेवा के द्वारा भारतीय युवकों के स्वास्थ्य में उन्नति, तथा प्रत्येक प्रदेश में एक शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण विद्यालय स्थापित करने का था। बुकानन की सेवा शारीरिक शिक्षा के प्रति सराहनीय रही। देश के हित के लिये इस संस्था ने बहुत कार्य किया। युवकों के सर्वोत्तम विकास का प्रयास देश सेवा का ही एक रूप है परन्तु साथ ही संकटकालीन अवस्था में इस संस्था ने बहुत सहायता पहुंचाई। वाई० एम० सी० ए० ने बार्डर एरिया में चीन आक्रमण के समय सैनिक मनोरंजन के

लिये बहुत कार्य किया। पाकिस्तान के द्वारा अल्प संख्यकों पर जो अत्याचार हुआ उसके कारण बहुत से शरणार्थी गारो हिल्स में वहाँ से पीड़ित होकर आये। ये लाखों की संख्या में थे। इनकी हर तरह से देख भाल तथा सहायता का अधिक कार्य दूसरी संस्थाओं के सहयोग में वाई० एम० सी० ए० के द्वारा हुआ जिसमें प्रमुख रूप से भाग लेने वाले श्री बेसिल टी० मसीह हैं जों इस संस्था के एरिया सेक्रेटरी तथा स्थानीय सेक्रेटरी थे।

वाई० एम० सी० ए० की देन सामाजिक, शारीरिक तथा नैतिक, हर दृष्टि से अपूर्व है। भारतवर्ष को इस संस्था से बहुत लाभ पहुंचा है। संसार के मुख्य देशों के बड़े बड़े नगरों में वाई० एम० सी० ए० स्थापित है जहां सब प्रकार के लोगों को सहायता मिलती है। लंदन के वाई० एम० सी० ए० में भारतीय विद्यार्थियों को रहने का स्थान सरलता से प्राप्त होता है। वाई० एम० सी० ए० वर्तमान समय में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अत्यन्त ही उत्तम कार्य कर रहे हैं।

स्पोर्ट्स संस्थायें

स्पोर्ट्स संगठन—जिला स्पोर्ट्स एसोसियेशन प्रत्येक जिला स्पोर्ट्स प्रतियोगिता का भार अपने हाथ में लेता हैं। जिला स्पोर्ट्स कमेटी नियुक्त होती है। शासकीय आर्थिक सहायता एवं एफिलियेशन फी से कमेटी का कार्य होता है।

इसी प्रकार प्रादेशिक स्पोर्ट्स एसोसियेशन की स्थापना होती है। जिला का प्रतिनिधित्व इसमें रहता है। प्रादेशिक प्रतियोगिता में जिलों से एथलीट भेजे जाते हैं।

प्रदेशों के प्रतिनिधित्व से राष्ट्रीय स्पोर्ट्स एसोसियेशन का संगठन होता है। राष्ट्रीय ओलम्पिक में प्रदेश के एथलीट भाग लेते हैं।

राष्ट्रीय ओलम्पिक स्पोर्ट्स एसोसियेशन के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए एथलीट का चुनाव होता है जो प्रदेशीय एवं जिला ओलम्पिक कमेटी के द्वारा भेजे जाते हैं।

भारत में ओलम्पिक खेल : ओलम्पिक खेलों में भारतवर्ष का प्रवेश श्री दुराव जी जमशेद जी टाटा की चेष्टा तथा प्रयत्नों से हुआ। इसी भावना से भारतवर्ष में ओलम्पिक खेल का प्रचार हुआ। प्रदेशों तथा जिलों में भी ओलम्पिक संस्थायें स्थापित की गयी। जिला ओलम्पिक होने के पश्चात प्रदेशीय ओलम्पिक हुआ तथा इसके बाद राष्ट्रीय ओलम्पिक हुआ।

प्रथम राष्ट्रीय ओलम्पिक खेल १९२४ ई० में दिल्ली में हुआ।

१९२६	कलकत्ता,	१९५०	बम्बई,
१९२८	लाहौर,	१९५१	लुधियाना,
१९३०	इलाहाबाद,	१९५२	मद्रास,
१९३२	मद्रास,	१९५३	जबलपुर
१९३४	देहली,	१९५४	देहली,
१९३६	लाहौर,	१९५५	कलकत्ता,
१९३८	कलकत्ता,	१९५६	पटियाला,
१९४०	बम्बई	१९५७	बंगलौर,
१९४२	लखनऊ,	१९५८	कटक,
१९४४	पटियाला,	१९५९	त्रिवेन्द्रम,
१९४६	बंगलौर,	१९६०	देहली,
१९४८	देहली,	१९६१	जालन्धर,
		१९६२	जबलपुर,

अन्तर्राष्ट्रीय ओलम्पिक चित्र में भारतवर्ष का स्थान नहीं के बराबर है। विशेषकर प्रतियोगिता में भाग लेने वाले सेना से आते हैं। यदि वास्तव में देखा जाए तो कुछ ऊंचे स्तर पर शारीरिक शिक्षा में यदि कुछ हो रहा है तो वह भारतीय सेना में ही है। इस कमी के कई कारण हैं।

ग्रामों तथा साधारण स्थानों में शारीरिक शिक्षा का विशेष प्रभाव नहीं है। शैक्षणिक संस्थाओं में भी अभाव है।

भारतीय खिलाड़ी वैज्ञानिक रीति से सीखने में रुचि नहीं रखते। इस कला को अपनाने के लिए जो बलिदान दिये जाने चाहिए उसके लिए भारतीय खिलाड़ी प्रस्तुत नहीं।

कार्यकर्ता तथा एसोसियेशन्स की आपसी गुटबन्दी के कारण उचित कार्य नहीं हो पाता। सरकार भी इससे उदासीन रही।

प्रशिक्षण विशेषज्ञों का अभाव भी है खिलाड़ियों के सम्मुख आर्थिक संकट है जिसके कारण वह खेल में अधिक समय नहीं दे सकते।

स्कूल, कालेज, मुहल्ला तथा ग्रामों के स्तर पर प्रतियोगिता होनी आवश्यक है तभी इसका स्तर ऊंचा हो सकेगा।

भारतीय खिलाड़ियों का साधारण तथा स्वास्थ्य स्तर से नीचा है।

कदाचित १९५० के पश्चात जब से विभिन्न फेडरेशन्स की स्थापना हुयी है तब से कई एक राष्ट्रीय स्पोर्ट्स मीट होती हैं। इन्होंने भारतीय ओलम्पिक खेलों का स्थान ले लिया है क्योंकि राष्ट्रीय खेल अब इस नाम से सम्बोधित नहीं होते हैं। प्रत्येक फेडरेशन विभिन्न समय तथा स्थानों में पृथक पृथक या दूसरे के साथ प्रतिवर्ष खेल आयोजित करती हैं। प्रत्येक दूसरे वर्ष राष्ट्रीय स्पोर्ट्स मीट आयोजित होती है। इसके साथ ही इण्टर जोन मीट भी होती है जिसका राष्ट्रीय स्तर है। अन्तर्राष्ट्रीय ओलम्पिक मीट के ट्रायल के लिये भी राष्ट्रीय प्रतियोगिता होती है।

कहीं कहीं पर अब भी डिस्ट्रिक्ट तथा प्रदेश की स्पोर्ट्स प्रतियोगिताओं को ओलम्पिक के नाम से पुकारा जाता है जो एक भूल है। खेलों में ओलम्पिक के चिन्ह जो वृत (Circle) है उनके प्रयोग की भी मनाही की चेष्टा की जा रही है। जिला प्रदेश एवं राष्ट्रीय स्तर पर ओलम्पिक कमेटियां हैं।

तेइसवां राष्ट्रीय खेल (National Games) प्रतियोगिता मद्रास में १९६८ के जनवरी महीने में हुयी थी। १९६८ ओलम्पिक वर्ष है अतः इस वर्ष के राष्ट्रीय खेल का एक महत्वपूर्ण स्थान रहा। राष्ट्रीय खेल भारत की सर्वप्रमुख प्रतियोगिता है।

भारतीय खेल सभा

आल इण्डिया काउंसिल आफ स्पोर्ट्स की स्थापना केन्द्रीय सरकार के

द्वारा नवम्बर १९५४ ई० में हुयी थी। काउंसिल के सदस्य नेशनल स्पोर्ट्स फेडरेशन के प्रेसीडेन्ट तथा कुछ स्पोर्ट्स की विशेष संस्थायें जो ex-officio सदस्य थे, पांच सरकार के मनोनीत व्यक्ति, कुल टोटल २५ का था। कार्य-कारिणी में सात व्यक्ति थे। काउंसिल का उद्देश्य सरकार को स्पोर्ट्स तथा खेल की उन्नति के लिये सलाह देने का तथा प्रदेशों में स्पोर्ट्स काउंसिल संगठन करने का था।

१९५८ ई० में केन्द्रीय सरकार ने एक एडहाक कमेटी स्पोर्ट्स के लिये बनायी जिसका मुख्य ध्येय देश के स्पोर्ट्स में नीचे स्तर पर होने के ऊपर विचार करना एवं उसके निवारण के लिये उपाय बताने का था। टोकियो में भारत की हाकी में हार होने के कारण दशा शोचनीय हो गयी थी। पटियाला के महाराजा एडहाक कमेटी के चेयरमैन नियुक्त हुये। कमेटी ने समस्या का अध्ययन कर १९५९ ई० में अपनी रिपोर्ट दी। इस रिपोर्ट को पटियाला कमेटी रिपोर्ट कहते हैं। कमेटी ने विस्तार में सिफारिश की तथा ग्रामों में खेल के मैदान की उन्नति के विषय, साधन, टीम के चुनाव, स्पोर्ट्स फेडरेशन एवं स्टेट काउंसिल आफ स्पोर्ट्स को आर्थिक सहायता का उपाय तथा एक नेशनल फेडरेशन की स्थापना की ओर विशेष रीति से ध्यान आकर्षित किया। कमेटी ने इस बात पर भी बल दिया कि प्रशिक्षण तथा प्रतियोगिता का उत्तम अवसर प्राप्त होना चाहिए।

रिपोर्ट में यह भी सिफारिश की गयी कि आल इन्डिया काउंसिल की सदस्यता चेयरमैन को मिलाकर ग्यारह से पन्द्रह तक होनी चाहिए तथा प्रादेशिक स्पोर्ट्स काउंसिल में सात से नौ सदस्य होने चाहिये। रिपोर्ट में इस बात पर अधिक बल दिया गया कि एक केन्द्रीय स्पोर्ट्स इन्स्टीट्यूट का आरम्भ एक तत्कालिक आवश्यकता थी। इस इन्स्टीट्यूट का विशेष उत्तरदायित्व खेल एवं स्पोर्ट्स में उच्च श्रेणी के कोच (Coach) प्रशिक्षित करने का था। एडहाक कमेटी की यह भी सिफारिश थी कि ६५ प्रतिशत सरकारी अर्थ जो स्पोर्ट्स एवं गेम्स के विकास के लिये दिया जाता था वह खेल एवं स्पोर्ट्स की शैक्षणिक संस्थाओं तथा ग्रामीण क्षेत्रों में लोकप्रिय करने के लिये व्यय किया जाये। ३० प्रतिशत स्पोर्ट्स के स्तर में उन्नति लाने के लिये व्यय किया जाये तथा ५ प्रतिशत संगठन के खर्च में व्यय किया जाये। अन्य सिफारिशों में से एक खेल की सामग्री के बनाने तथा सस्ते दामों पर प्राप्त होने का उपाय भी था। वर्तमान

निम्न स्तर के रेफरी तथा अम्पायर के काम की अच्छे प्रशिक्षण के द्वारा उन्नति करने की भी मांग की गयी थी।

आल इन्डिया काउंसिल आफ स्पोर्ट्स १९५९ ई० में पटियाला कमेटी की रिपोर्ट के अनुसार पुनः संगठित किया गया। इसमें १५ सदस्य केन्द्रीय सरकार की ओर से मनोनीत किये गये। डाक्टर सुब्बारायण प्रेसीडेन्ट नियुक्त हुये। सदस्य दो वर्ष के लिये नियुक्त हुये। काउंसिल सलाहकार की स्थिति में कार्य करने लगी। इसके निम्नलिखित अधिकार थे :—

केन्द्रीय सरकार को स्पोर्ट्स एवं खेल के विषय में सलाह देना, सरकार एवं नेशनल स्पोर्ट्स फेडरेशन एवं एसोसियेशन के बीच मध्यस्थता करना, राष्ट्रीय स्तर पर संगठित स्पोर्ट्स संस्थाओं को मान्यता देना तथा केन्द्रीय सरकार को आर्थिक सहायता देने के लिये परामर्श देना।

प्रतिवर्ष काउंसिल की चार सभायें नियत हुयीं। १९५९ ई० में एम० एस० दिलीप सिंह जी प्रेसीडेन्ट नियुक्त हुये। १९६० ई० में पटियाला के महाराजा यादुवेन्द्र सिंह को प्रेसीडेन्ट बनने के लिये आग्रह किया गया।

काउंसिल का कार्य सराहनीय रहा है। इस संस्था ने राष्ट्रीय, प्रादेशिक एवं जिले के स्तर पर कोचिंग कैम्प आयोजित किये हैं। प्रत्येक जिले में स्पोर्ट्स काउंसिल एवं प्रशिक्षित कोच पाये जाते हैं। स्पोर्ट्स में प्रगति की आशा की जा सकती है।

राष्ट्रीय खेल विद्यालय

जुलाई १९५८ ई० में केन्द्रीय सरकार के शिक्षा मंत्रालय के द्वारा स्थापित, स्पोर्ट्स एवं गेम्स के एडहाक इन्क्वाइरी कमेटी को भारतीय प्रतियोगियों का अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता में निम्न स्तर के कारणों का अध्ययन करने को कहा तथा इसके निवारण के उपाय भी बताने को कहा गया। कमेटी के अनेक प्रस्तावों में सर्व प्रमुख प्रस्ताव एक केन्द्रीय कोचिंग इन्स्टीट्यूट का था। एडहाक कमेटी के प्रस्ताव के अनुसार दि आल इन्डिया काउंसिल आफ स्पोर्ट्स

ने केन्द्रीय सरकार को यह सलाह दी कि शीघ्र ही नेशनल इन्स्टीच्यूट आफ स्पोर्ट्स की स्थापना की जाये।

स्थान के निर्णय किये जाने के समय अनेक प्रदेशों ने इसकी व्यवस्था करने की आज्ञा चाही। अन्त में यह मोती बाग भवन में जो हिज हाइनेस महाराजाधिराज पटियाला का निवास स्थान था स्थापित किया गया। इसमें प्राय: ३०० एकड़ भूमि है। डाक्टर के० एल० श्रीमाली जो केन्द्रीय सरकार के शिक्षा मंत्री थे उन्होंने १९६१ ई० में पच्चहत्तर लाख रुपयों की लागत से बने इस नेशनल इन्स्टीच्यूट आफ स्पोर्ट्स का उद्घाटन किया। अपने व्याख्यान में उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि वहां से प्रशिक्षित व्यक्तियों में सेवा एवं प्रचार की भावना होनी आवश्यक है जिससे देश में स्पोर्ट्स का स्तर ऊंचा हो सके। यह स्पोर्ट्स इन्स्टीच्यूट अपने प्रकार का एशिया में एक ही है। जहां खेल एवं स्पोर्ट्स का वैज्ञानिक प्रशिक्षण होता है। इन्स्टीच्यूट का यह उद्देश्य है कि अधिक संख्या में श्रेष्ठ प्रकार के कोच प्रशिक्षित किये जायें जो सर्वत्र उत्तम प्रशिक्षण दे सकें। श्री एम० के० कौल १९६० ई० में प्रथम निर्देशक नियुक्त हुये थे। डाक्टर ए०डब्लू० हावर्ड जो क्रिश्चियन कालेज आफ फिजिकल एज्यूकेशन लखनऊ में अमेरिकन प्रधानाचार्य हैं उपनिर्देशक नियुक्त हुये। इन्स्टीच्यूट के आरम्भ करने का अधिक भार इन्हीं के ऊपर था। इन्स्टीच्यूट के कार्य की देख रेख एक स्वतंत्र बोर्ड आफ गवर्नर्स के आधीन है। इस बोर्ड के ११ सदस्य केन्द्रीय सरकार की ओर से मनोनीत किये जाते हैं। एक सदस्य आल इन्डिया काउंसिल आफ स्पोर्ट्स का प्रतिनिधि होता है।

एन० आई० एस० के उद्देश्य निम्नलिखित हैं :—

(१) उच्च श्रेणी के कोच प्रशिक्षित करना एवं वर्तमान कोच के स्तर को ऊंचा करना।

(२) एक ऐसा केन्द्रीय स्थान होना जहां सर्वश्रेष्ठ स्पोर्ट्स सूचना प्राप्त हो सके।

(३) स्थापित स्पोर्ट्स संस्थाओं को सहायता देना तथा ऐक्स्टेन्शन सेवा देना तथा चुने हुए एथलीट्स एवं खिलाड़ियों को प्रशिक्षित करना तथा राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं के लिये तैयार करना।

(४) शारीरिक शिक्षा विद्यालयों के लिये तकनीक सलाहकारों की सहायता देना।

(५) हाकी, क्रिकेट एवं टेनिस को छोड़कर अन्य खेलों में विदेशी कोच के द्वारा प्रशिक्षण दिया जाता है।

आरम्भ में एन० आई० एस० में तीन प्रकार के प्रशिक्षण थे।

(१) ६ महीने का प्रशिक्षण राजकुमारी अमृत कौर कोचिंग स्कीम तथा अन्य प्रशिक्षित कोच के लिये।

(२) स्पोर्ट्‌स कोच एवं शिक्षक प्रशिक्षित करना।

(३) दो वर्ष का विशेष कोर्स जिनके पास डिग्री या डिप्लोमा हो।

मार्च १९६१ में प्रथम एडहाक कोर्स फुटबाल, वालीबाल, हाकी, क्रिकेट, कुश्ती, जिमनास्टिक एवं एथलेटिक में आरम्भ किया गया। तीसरे एडहाक कोर्स में बैडमिन्टन एवं टेनिस भी सम्मिलित किया गया। १९६३ ई० से तीन वर्षीय कोर्स एथलेटिक एवं जिमनास्टिक में तथा एक वर्ष का कोर्स विभिन्न खेलों में आरम्भ किया गया। रिफ्रेशर कोर्स भी होता है।

एशिया के खेल

दि एशियन गेम्स के स्थापित होने के प्रथम वेस्टर्न एशियाटिक गेम्स फेडरेशन की स्थापना हुयी थी जो प्रत्येक चार वर्ष पर खेल एवं प्रतियोगिता आयोजित करना चाहती थी। द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण यह सम्भव न हो सका तथा उसकी समाप्ति हो गयी।

१९४८ ई० के लंदन ओलम्पिक के अवसर पर श्री जी० डी० सोन्धी ने अपने साथी प्रतिनिधियों को यह विचार दिया कि एशिया के देशों के लिए एक एशियन प्रतियोगिता स्थापित करना लाभकर होगा। यह विचार ग्रहण किया गया तथा शीघ्र ही एशिया के देशों की एक सभा लंदन में आयोजित की गयी। श्री डी०जी० सोन्धी का एशियन गेम्स आरम्भ करने का विचार पूर्णतया स्वीकार किया गया। विधान के निर्माण के लिये एक उप कमेटी नियुक्त की गयी। इस

कमेटी ने प्रत्येक चौथे वर्ष प्रतियोगिता आयोजित करने का निश्चय किया। १९४९ ई० के फरवरी महीने में एशियन देशों के प्रतिनिधियों की एक सभा नयी दिल्ली में बुलायी गयी। विधान स्वीकार किया गया। इस प्रतियोगिता की स्थापना एवं अवधि चार वर्षीय रखी गयी थी जिससे कि विश्व ओलम्पिक खेलों की प्रतियोगिता के पूर्व एशिया के एथलीटस् को ओलम्पिक पूर्व प्रतियोगिता का अनुमान एवं अभ्यास का अवसर प्राप्त हो जाये।

प्रथम एशियन गेम्स नेहरू स्टेडियम नई देहली में १९५१ ई० में हुआ था। इसमें एशिया के ग्यारह देशों ने भाग लिया था। द्वितीय एशियन गेम्स १९५४ ई० में मनीला में हुआ जिसमें अठारह देशों ने भाग लिया। तीसरा एशियन गेम्स १९५८ ई० में टोकियो में हुआ था जिसमें बीस देशों ने भाग लिया।

चौथा एशियन गेम्स जकार्ता में अगस्त १९६२ ई० में हुआ। इस समय कुछ राजनैतिक मतभेद के कारण खेल की आत्मा को कष्ट पहुंचा। के० एम० टी० चीन जो ताइवान का है तथा इस्रायेल को खेलों में भाग लेने की स्वीकृति इन्डोनेशिया सरकार ने नही दी। एशियन गेम्स की कार्यकारिणी कमेटी एवं इन्टर नेशनल अमेच्योर एथलेटिक फेडरेशन के कठिन प्रयास से भी इन दो देशों को जकार्ता प्रतियोगिता में भाग लेने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ। पांचवीं प्रतियोगिता १९६६ ई० में थाईलैन्ड के बैंकाक में हुई। इसमें अठारह देशों ने भाग लिया जिसमें ताइवान तथा इज़रायल भी थे। १९७० ई० का छठवां एशियन खेल दक्षिणी कोरिया के सीयोल में होना निश्चय हुआ है।

ए नेशनल प्लान आफ फिजिकल एज्युकेशन

नेशनल प्लान आफ फिजिकल एज्युकेशन एक पाठ्य क्रम था जिसमें कक्षाओं के क्रमिक रूप से प्रत्येक कक्षा के लिये विभिन्न शारीरिक शिक्षा के कार्य क्रम दिये गये थे। लड़के तथा लड़कियों का पाठ्य भिन्न था। यह केन्द्रीय सरकार के शिक्षा मंत्रालय के शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन सलाहकार कमेटी के द्वारा १९६२ ई० में प्रकाशित किया गया था। यह कार्य डा० पी० एम० जोज़फ के आदेश में किया गया था। कार्य अधिक होने के कारण डा० हितवन्त सिंह की सहायता ली गयी।

जहां तक सम्भव था प्रत्येक क्रिया आलोचनात्मक रूप से देखी गयी, उसके चित्र लेकर उसका अध्ययन किया गया तथा पूर्ण संतोष के बाद ही वह पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया था। इस उत्तरदायित्व में अन्य व्यक्तियों ने भी सहायता दी थी। श्री करण सिंह—एथेलेटिक्स, श्री एस श्रीवातसन—निम्न संगठन के खेल तथा रिले गेम्स, श्री खुशी राम—जिमनास्टिक, श्री सी० एच० दूबे—भारतीय व्यायाम तथा मल्ल युद्ध, स्वामी कुभेलयानन्दा—योग आसन, श्री राम प्रताप सिंह—पानी की क्रियायें तथा ले० कर्नल डी० आर० दत्ता—आदेश एवं स्क्वाड ड्रिल की विभिन्न गतियां तथा मार्चिंग।

स्थानीय क्रियायें तथा शारीरिक शिक्षा की विशेषताओं को पाठ्यक्रम में आवश्यकता अनुसार सम्मिलित करने की छूट दी गयी थी।

इस विषय में our Physical Activities पुस्तक से विवरण आदि के प्रति सहायता प्राप्त की गयी थी।

नेशनल प्लान प्रथम प्रयास था जिसमें भारतीय स्कूलों के लिये क्रमिक शारीरिक शिक्षा क्रियाओं का समूह एवं विवरण दिया गया था।

शारीरिक शिक्षा में अन्य संगठन

केन्द्रीय शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन सलाहकार कमेटी

शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन के उद्देश्य से तथा शिक्षा पद्धति में पर्याप्त स्थान देने के लिए केन्द्रीय सरकार ने सेन्ट्रल एडवाइजरी बोर्ड आफ फिजिकल एज्युकेशन एन्ड रिक्रियेशन शिक्षा विभाग के अन्तर्गत स्थापित किया। यह १९४८ में स्थापित हुआ था। कुछ कार्य होने के पश्चात इस कमेटी का कार्य रुक गया। १९५२ ई० में इसकी पुनः स्थापना हुई। तब से यह सतत कार्यशील है। १९५४ ई० में सरकार ने सम्पूर्ण शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम के सम्बन्ध में समन्वय, विकास में एवं प्रगति के प्रति सलाह मांगी। कमेटी ने सरकार को एक नेशनल प्लान आफ फिजिकल एज्युकेशन एण्ड रिक्रियेशन देने का निश्चय किया। पी० एम० जोजफ इस कमेटी के संयोजक थे। १ दिसम्बर १९५४ ई० में बोर्ड ने तीन और उप कमेटियां बनाईं। लड़कों, लड़कियों तथा शारीरिक

क्षमता स्तर के लिये विभिन्न पाठ्यक्रम निर्धारित किये गये। इनकी मुख्य सिफारिश थी शारीरिक शिक्षा का परीक्षा विषय होना, प्रतिदिन एक घंटा शारीरिक शिक्षा, प्रतिदिन एक घंटा शारीरिक शिक्षा का अन्य विषय पढ़ना, डिप्लोमा प्राप्त व्यक्तियों का उच्च माध्यमिक में निर्देशक होना, प्रत्येक जिले में निरीक्षक होना, प्रशिक्षण विद्यालयों में शारीरिक शिक्षा अनिवार्य विषय किया जाना, स्कूलों में इन्ट्राम्यूरल का होना, आपस में स्कूल प्रतियोगिता, विद्यार्थी नेतृत्व, स्वास्थ्य शिक्षा तथा जनता के लिये शारीरिक शिक्षण उपलब्ध करना।

सेन्ट्रल एडवाइजरी बोर्ड के सदस्य

इसका एक सभापति भारत सरकार द्वारा नियुक्त होता है। अन्य सदस्यों में से चार सरकार की ओर से मनोनीत किए जाते हैं। इसके तीन सदस्य उन शारीरिक शिक्षा विद्यालयों के प्रधानाचार्य होते हैं जिन्हें भारत सरकार मान्यता देती है। एक सदस्य इन्टर युनीवर्सिटी बोर्ड का प्रतिनिधि होता है। शारीरिक शिक्षा में किसी भारतीय संस्था या राष्ट्रीय संस्था से एक सदस्य जिसे बोर्ड मान्यता देती है। आल इन्डिया काउंसिल आफ स्पोर्ट्स का एक प्रतिनिधि भी होता है। एक महिला विशेषज्ञ जिसका चुनाव बोर्ड करता है तथा अन्य सदस्य जिन्हें बोर्ड लेना चाहे।

सभापति तीन वर्ष के लिए होता है। प्रत्येक सदस्य तीन वर्ष के लिए रहेंगे जिनका चुनाव फिर से हो सकता है, कार्यविधि समाप्त होने के बाद।

बोर्ड का कार्य

सरकार को शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन सम्बन्धी उन्नति के हेतु सलाह देना।

विभिन्न संस्थाओं के प्रशिक्षण का संतुलन करना। उद्देश्यों की सफलता के लिए प्रस्ताव, केन्द्रीय सरकार को आर्थिक तथा दूसरी सहायताओं के लिए परामर्श देना, पुस्तकों तथा पत्रिकाओं के लिए सलाह देना, भारतीय सरकार

तथा अन्य संस्थाओं एवं संगठनों के बीच समन्वय स्थापित करना, शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण कालेज के स्तर को ऊंचा उठाना आदि बोर्ड के कार्य क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। किसी समय आवश्यकतानुसार एडहाक कमेटी बनाना तथा नवीन नियम बनाने का अधिकार भी इस बोर्ड को प्राप्त है।

वर्तमान कमेटी एक सलाहकार कमेटी के स्तर की है। इसके हाथ में किसी प्रकार के शासन कार्य एवं आर्थिक अधिकार नहीं है। वर्तमान कमेटी में सब राज्य कर्मचारी सदस्य हैं। यह कमेटी केवल सिफारिश करती है।

कमेटी के कार्य

कमेटी के द्वारा नेशनल प्लान आफ फिजिकल एज्युकेशन, शारीरिक क्षमता अभियान का प्रारम्भ, नेशनल सिलैबस आफ फिजिकल एज्यूकेशन का प्रकाशन, राजकीय लक्ष्मीबाई कालेज आफ फिजिकल एज्यूकेशन तथा नेशनल इंस्टीच्युट आफ स्पोर्ट्स की स्थापना आदि हुई। इसके कार्यों के अन्तर्गत भिन्न भिन्न प्रशिक्षण कालेज को मान्यता देना तथा उनके लिए सिफारिश, सम्पूर्ण भारत वर्ष के प्रशिक्षण कालेज के प्रधानाचार्यों का सेमीनार, इस विषय पर शोध कार्य कराना, एक्सटेंशन सर्विस, इस विषय से सम्बन्धित साहित्य का प्रकाशन कराना इसके कार्यों के अन्तर्गत आता है। केन्द्रीय कमेटी ने यह सलाह दी है कि प्रारम्भिक एवं माध्यमिक संस्थाओं में शारीरिक शिक्षा अनिवार्य हो।

दि इन्डियन नेशनल रिक्रियेशन ऐसोसियेशन

भारत में राष्ट्रीय मनोरंजन एसोसियेशन की स्थापना स्वर्गीय श्री जी० डी० सोन्धी के परिश्रम का फल है। अमेरिका के फीलाडेलफिया में श्री सोन्धी तथा डाक्टर हितवन्त सिद्धू ने १९५६ ई० के अन्तर्राष्ट्रीय मनोरंजन कांग्रेस के अधिवेशन में भारतीय प्रतिनिधि की हौसियत से भाग लिया था। इसका अत्यन्त ही उत्तम प्रभाव पड़ा। फिलाडेलफिया की कांग्रेस ने भारत में राष्ट्रीय मनोरंजन एसोसियेशन के स्थापित करने के लिये पर्याप्त आर्थिक सहायता की प्रतिज्ञा की। जनरल के० एम० करिअप्पा तथा श्री जी०एस० ढिल्लन जो पंजाब लेजिस-लेटिव असेम्बली के स्पीकर थे, दोनों ने मनोरंजन एसोसियेशन की स्थापना में

श्री जी० ऐम० सोन्धी की सहायता की । जनरल करिअप्पा तथा श्री सोन्धी ने भारतीय जनता को इस ओर शिक्षित करने का भार अपने ऊपर लिया तथा इस हेतु भारतीय मनोरंजन के कर्त्तव्य तथा उत्तरदायित्व पर अनेक व्याख्यान एवं भाषण दिये गये । विभिन्न श्रमिक ऐसोसियेशन्स से परामर्श किया गया । श्रमिक सेवा कार्यकर्त्ताओं से भेंट की गयी तथा अन्य संस्थाएं जो इस ओर अग्रसर थी उनसे सम्बन्ध स्थापित किया गया । अन्त में भारतीय सरकार के शिक्षा मंत्रालय को इस बात से प्रभावित किया गया कि मनोरंजन राष्ट्रीय जीवन के लिये महत्वपूर्ण है तथा समाज के अनेक दोष जो प्रचलित हैं इसके द्वारा दूर किये जा सकते हैं । अवकाश के सदोपयोग की शिक्षा से समाज में उन्नति होगी तथा राष्ट्रीय जीवन और विकसित होगा । भारतीय सरकार ने इन प्रस्तावों को स्वीकार किया । मार्च १९६१ ई० में अन्तर्राष्ट्रीय मनोरंजन एसोसियेशन की सहायता से प्रथम राष्ट्रीय मनोरंजन कान्फ्रेन्स चंडीगढ़ पंजाब में बुलायी गयी । अन्य संस्थाओं एवं शारीरिक शिक्षा विद्यालयों को भी आमंत्रित किया गया । कानफ्रेन्स के निम्नलिखित उद्देश्य थे

(१) जनता के अवकाश के समय शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, एवं सांस्कृतिक कार्यों के द्वारा मनोरंजन सम्बन्धी समस्याओं पर विचार करना ।

(२) मनोरंजन की क्रियाओं का कार्यक्रम निर्माण करना तथा अवकाश के सदोपयोग के लिये पर्याप्त शिक्षा का उपाय करना ।

(३) एक संतोष जनक संगठन का निर्माण करना जो इन उद्द श्यों की भलि भांति पूर्ति कर सके ।

राजकुमारी अमृत कौर इसकी प्रथम सभापति नियुक्त हुयीं । जनरल करिअप्पा ऐवं श्री जी० एस० ढ़िल्लन उप सभापति नियुक्त हुये तथा श्री जी० डी० सोन्धी आनरेरी सेक्रेटरी व कोषाध्यक्ष नियुक्त हुये ।

दि आल इन्डिया एसोसिएशन आफ कालेजेस आफ फिजिकल एज्युकेशन

शारीरिक शिक्षा में व्यवसाय में राष्ट्रीय स्तर की एक उचित संस्था की

सदैव कमी मालूम होती रही। कुछ लोगों के प्रयास से १९६२ ई० में आल इन्डिया एसोसियेशन आफ कालेजेस आफ फिजिकल एज्युकेशन की स्थापना हुयी। १९५८ ई० के शारीरिक शिक्षा विद्यालयों के प्रधानाचार्यों का सेमिनार जो केन्द्रीय सरकार के द्वारा नई दिल्ली में बुलवाया गया था उसी में इस एसोसियेशन की नींव पड़ी। जुलाई १९६१ में दि कांग्रेस आफ दि इन्टरनेशनल काउंसिल आफ हेल्थ, फिजिकल एज्युकेशन एन्ड रिक्रियेशन ने जो आई० सी० एच० पी० ई० आर० के नाम से प्रसिद्ध है, नई दिल्ली में अपना अधिवेशन किया। इसमें शारीरिक शिक्षा विद्यालयों के प्रधानाचार्य भी आये थे। इन प्रधानाचार्यों ने आपस में मिलकर आल इन्डिया कालेजेस आफ फिजिकल एज्युकेशन एसोसियेशन के आरम्भ करने का निश्चय किया। इस समय श्री एस० डी० चोपड़ा सेक्रेटरी मनोनीत किये गये।

इसकी प्रथम कान्फ्रेन्स ५–७ फरवरी १९६२ ई० में ग्वालियर के लक्ष्मी बाई कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन में हुयी जिसका उद्घाटन वहां के प्रधानाचार्य डाक्टर पी० एम० जोसफ ने किया। उस कान्फ्रेन्स में डाक्टर पी० एम० जोसफ सभापति भी नियुक्त हुए तथा श्री एस० डी० चोपड़ा सैक्रेटरी एवं कोषाध्यक्ष नियुक्त हुए। संस्था के उद्देश्य निम्नलिखित हैं:—

शारीरिक शिक्षा शिक्षकों को व्यवसायिक तैयारी में प्रगति करना, व्यवसायिक सूचनायें आदि का आपस में आदान-प्रदान, शारीरिक शिक्षा, स्वास्थ्य एवं मनोरंजन के साहित्य को बढ़ाना व छापना, केन्द्रीय एवं प्रान्तीय सरकार के साथ शारीरिक शिक्षकों के व्यवसायिक प्रशिक्षण में सहयोग देना, भारत के प्रशिक्षण विद्यालयों के साथ तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन सम्बन्धी संस्थाओं के साथ सहयोग करना तथा अन्य ऐसे कार्य जिनकी संस्था के उद्देश्यों के पालन हेतु करने की आवश्यकता हो उन्हें करना है।

सदस्यता सम्पूर्ण देश के शारीरिक शिक्षा विद्यालयों के लिये खुली है। साधारण शिक्षक भी सदस्य हो सकते हैं किन्तु उन्हें वोट देने का अधिकार नहीं है।

द्वितीय कान्फ्रेन्स १९६३ ई० में मद्रास में हुयी थी। १९६४ ई० में बम्बई, १९६५ ई० में बंगलौर, १९६६ ई० में अहमदाबाद तथा १९६७ ई० में

मद्रास में हुयी। १९६६ ई० की कान्फ्रेन्स में श्री एस० डी० चोपड़ा सभापति डाक्टर ए० डब्लू० हावर्ड उपसभापति एवं श्री एम० रोबसन सेक्रेटरी एवं कोषाध्यक्ष चुने गये थे।

दि नेशनल स्कूल गेम्स फेडरेशन

दि नेशनल स्कूल गेम्स फेडरेशन की स्थापना १९५४ ई० में हुयी थी। इसी सयय विभिन्न प्रान्तों के शिक्षा विभाग के प्रतिनिधि, कलकत्ता में अखिल भारतीय शारीरिक शिक्षा कान्फ्रेन्स के लिये एकत्रित हुये थे। उस कान्फ्रेन्स में यह निश्चित किया गया कि खेल एवं स्पोर्ट्स के द्वारा शारीरिक लाभ ही नहीं प्राप्त होता किन्तु राष्ट्रीय एकता के लिये यह बहुमूल्य साधन है तथा स्वस्थ्यकर खेल एवं स्पोर्ट्स प्रतियोगिताओं के द्वारा युवकों को परस्पर मिलने का अवसर प्राप्त होता है, एक दूसरे को समझने का अवसर प्राप्त होता है तथा एक शक्तिशाली राष्ट्र के निर्माण करने में सहायता प्राप्त होती है। इस सभा में हाई स्कूलों के लिये अन्तर्देशीय राष्ट्रीय चैम्पियनशिप खेल एवं स्पोर्ट्स प्रतियोगिता प्रत्येक वर्ष करने का निश्चय किया गया। कटक शारीरिक शिक्षा विद्यालय के श्री ए० सी० दास फेडरेशन के जनरल सेक्रेटरी नियुक्त हुए। यह निश्चित हुआ कि दि नेशनल स्कूल गेम्स चैम्पियनशिप, नेशनल गेम्स फेडरेशन के द्वारा प्रतिवर्ष आयोजित की जायेगी। यह प्रतियोगिता हाई स्कूल के मान्य विद्यार्थियों के लिए थी जिनकी आयु १९ वर्ष से कम थी। भाग लेने के लिये ६० प्रतिशत उपस्थिति तथा फीस में बकाया न रहना, एक शर्त थी। कोई विद्यार्थी जो नेशनल ओपेन अमेचर एथलेटिक एण्ड स्विमिंग चैम्पियनशिप में प्रथम तीन स्थानों में यदि एक स्थान प्राप्त कर चुका था तो उसे प्रतियोगिता में भाग लेने की आज्ञा नहीं थी।

फेडरेशन के विधान के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:—

(१) वे सम्पूर्ण ओलम्पिक के एथेलेटिक इवेंन्टस तथा गेम्स एवं स्वदेशी राष्ट्रीय खेल जो भारत के स्कूलों में बालक ऐवं बालिकाओं के लिये उपयुक्त हैं, उनकी प्रगति, प्रोत्साहन ऐवं लोकप्रिय करने की चेष्टा की जायेगी।

(२) भारत के बालक एवं बालिकाओं के शारीरिक लाभ एवं सुधार के लिये कार्य किया जायेगा ।

(३ निर्धारित समय एवं स्थान पर राष्ट्रीय स्पोर्ट्स मीट स्कूल के बालक ऐवं बालिकाओं के लिये आयोजित किया जायेगा तथा इसके लिये सर्टि-फिकेट ऐवं पुरस्कार दिये जायेंगे ।

(४) सम्पूर्ण भारतीय यूनियन में, दूसरे प्रादेशिक स्कूल ऐथेलेटिक तथा गेम्स ऐसोसियेशन के सहयोग से, प्रत्येक प्रकार के ओलम्पिक खेल एवं स्पोर्टस तथा अन्य समान क्रियाओं को अमेच्योर स्तर पर नियन्त्रित एवं विधिवत किया जायेगा ।

(५) ओलम्पिक तथा अन्य प्रतियोगिता में अन्तर्राष्ट्रीय खेलों एवं प्रतियोगिताओं में जिन्हें फेडरेशन की मान्यता प्राप्त है उनमें एथलीटस की पर्याप्त सहयोग प्राप्त करना

(६) प्रान्तीय ऐसोसियेशन के निर्माण करने में प्रोत्साहन एवं सहायता देना तथा उन्हें अपने साथ सम्बन्धित करना ।

(७) जहां तक सम्भव हो अन्तर्प्रदेशीय स्कूल कार्यक्रमों का समन्वय अखिल भारतीय प्रतियोगिता के आयोजित करने के द्वारा, करना ।

प्रथम नेशनल स्कूल गेम्स मीट, मई १९५५ ई० में मध्य प्रदेश के पंचमढ़ी में, फुटबाल, कबड्डी एवं एथलेटिक्स लड़कों के लिये तथा वालीबाल एवं एथलेटिक्स लड़कियों के लिये आयोजित किया गया था । सात प्रदेशों ने इसमें भाग लिया था । कटक में द्वितीय मीट के अवसर पर नौ प्रदेशों ने भाग लिया था । इसके पश्चात इसमें प्रगति होती गयी । बम्बई में पांचवे मीट के अवसर पर प्रायः सम्पूर्ण प्रदेशों ने भाग लिया था तथा प्रतियोगितायों की संख्या १५०० तक हो गयी थी । इसके पश्चात फेडरेशन ने यह तय किया कि मीट प्रत्येक वर्ष आयोजित की जायेगी । इसका दो भागों में आयोजित होना निश्चित हुआ । अक्टूबर से नवम्बर तक लड़कों के लिये फुटबाल, कबड्डी, टेबिल टेनिस तथा तैरना। लड़कियों के लिये खो—खो, टेबल टेनिस एवं तैरना ।

दिसम्बर से जनवरी तक लड़कों के लिये हाकी, बासकेट बाल, वालीबाल, बैंडमिन्टन, जिमनास्टिक तथा एथलेटिक्स तथा लड़कियों के लिये वालीबाल, बासकेट बाल, बैंडमिन्टन, जिमनास्टिक तथा एथेलेटिक्स।

१९६० ई० में अक्टूबर-नवम्बर की मीट इन्दौर में हुयी थी तथा दिसम्बर जनवरी की मीट त्रिवेन्द्रम में हुयी थी। इसके पश्चात नेशनल स्कूल गेम्स चैम्पियनशिप प्रत्येक वर्ष होती रही है। श्री बी० एन० बासू जो बिहार सरकार के स्पेशल स्पोर्टस आफिसर एवं सेक्रेटरी टु गवर्नमेन्ट थे, फेडरेशन के प्रेसिडेन्ट हैं। बारहवीं अक्टूबर—नवम्बर की मीट १९६६ ई० में मद्रास में हुयी तथा दिसम्बर जनवरी की मीट उदयपुर में हुयी।

दि नेशनल कैडेट कोर

दि यूनिवर्सिटी आफिसर ट्रेनिंग कोर प्रथम कुंजरू कमेटी जो केन्द्रीय सरकार के द्वारा निर्माण किया गया था उनके आदेशानुसार समाप्त कर, नेशनल कैडेट कोर में परिवर्तित कर दिया गया। इसमें सीनियर, जूनियर एवं गर्लस डिवीजन बनाये गये। यह नयी स्कीम स्कूल एवं कालेज के लिये निर्माण की गयी। जूनियर डिवीजन १३ से १६ वर्ष के हाई स्कूल के विद्यार्थियों के लिये रखा गया। यह स्कीम, प्रदेशीय सरकार के सहयोग के साथ केन्द्रीय सुरक्षा मंत्रालय के द्वारा चलाया गया। डाइरेक्टर जनरल जो एक सेना का जनरल होता था इस राष्ट्रीय संस्था का प्रमुख होता है। सरल संगठन के लिये प्रत्येक प्रदेश में एक निर्देशालय स्थापित हुआ जो सैनिक अफसर के अधीन था जो ब्रिगेडियर या कर्नल के पद का होता था। सम्पूर्ण एन० सी० सी० संगठन, सेन्ट्रल एडवाइजारी कमेटी के द्वारा नियन्त्रित होती है जिसका सभापतित्व सुरक्षा मंत्री करते हैं। कमेटी के सदस्य सर्विस चीफ, सरकारी प्रतिनिधि, पार्लियामेन्ट के सदस्य तथा गैर सरकारी व्यक्ति होते हैं। प्रत्येक प्रदेश में प्रदेशीय सलाहकार कमेटी है जिसका सभापतित्व प्रदेश के शिक्षा मंत्री करते हैं। इस के अन्य सदस्य सेना तथा शिक्षा विभाग से लिये जाते हैं।

वास्तव में शिक्षा मंत्रालय के नियन्त्रण में यह स्कीम नहीं थी। शैक्षणिक अधिकारियों का हाथ सलाहकार की स्थिति में था, तथा सिद्धान्त आदि के

निर्माण में इनका विशेष हाथ नहीं था। प्रशिक्षण की सामग्री तथा प्रशिक्षण देने वालों की नियुक्त में भी इनका हाथ नहीं था। प्रशिक्षण सैनिक व्यक्तियों के द्वारा दिया जाता है।

इसके मुख्य उद्द`श्य, चरित्र निर्माण, सेवा की भावना, नेतृत्व की योग्यता तथा मित्र भाव उत्पन्न करना, देश सेवा एवं सुरक्षा की भावना तथा राष्ट्रीय संकट कालीन अवस्था में हथियार बन्द सेना को भावी अफसरों के द्वारा सहायता पहुंचाना है।

एन० सी० सी० का प्रशिक्षण चार भागों में विभाजित है।

(१) सामान्य शिक्षा जिसमें ड्रिल, हथियार एवं अतिरिक्त हथियार, रूट मार्च, शारीरिक प्रशिक्षण आदि हैं।

(२) फील्ड क्राफ्ट, समाचार लिखना, चित्र देखना आदि है।

(३) व्यक्तित्व विकास, चरित्र विकास, मित्रभाव, स्वास्थ्य शिक्षा, स्वच्छता आदि हैं।

(४) संगठन का अभ्यास एवं नेतृत्व

कैडेट को ४० मिनट के २५२ घंटे प्रशिक्षण प्राप्त करना आवश्यक है जिसमें १३२ घंटे कैम्प में होना चाहिये। इनको यूनिफार्म, बूट, नाश्ता मुफ्त में दिया जाता है। अधिकांश व्यय सुरक्षा मंत्रालय से होता है। थोड़ा व्यय प्रादेशिक सरकार के द्वारा होता है। प्रथम एवं द्वितीय वर्ष के पश्चात परीक्षा होती है। सफल कैडेट को सर्टिफिकेट दिया जाता है। 'बी' सर्टिफिकेट एक वर्ष के पश्चात, 'सी' सिर्टिफिकेट दो वर्ष के पश्चात दिया जाता है। सर्टिफिकेट 'सी' के पश्चात भारतीय मिलेट्री एकाडमी में सीधे प्रवेश यूनिवर्सिटी डिग्री के प्राप्त करने के पश्चात प्राप्त हो सकता है।

सन् १९६० में एन० सी० सी० राइफल यूनिट कालेज में स्थापित हुयी।

शिक्षा संस्थाओं ने एन० सी० सी० के कई एक दोष बताये हैं। १९६४ के कुंजरू कमेटी की रिपोर्ट ने कालेज स्तर पर एन० सी० सी० ऐच्छिक स्तर पर ग्रहण करने का प्रस्ताव दिया था।

स्काउटिंग एण्ड गाइडिंग

स्काउट संस्था की स्थापना लार्ड वेडन पावेल के द्वारा इंगलैंड में थी। १९०९ ई० में यह भारतवर्ष में स्थापित हुआ।

भारतवर्ष का प्रथम ट्रुप बेंगलौर में कप्तान टी० एच० बेकर के द्व निर्मित किया गया था। मिसेज ऐनीबेसेन्ट के प्रोत्साहन के कारण भार विद्यार्थियों के लिये स्काउटिंग आरम्भ किया गया था। सन् १९१६ में इन्डि ब्वाय स्काउट एसोसियेशन की स्थापना मद्रास में हुयी। १९१८ ई० में समित ब्वाय स्काउट एसोसियेशन की स्थापना इलाहाबाद में हुयी। यह ऐच्छिक सेवा की संस्था थी तथा सरकार का इसमें कोई हस्तक्षेप नहीं था।

इस संस्था का मुख्य ध्येय उन अवसरों को खुले में उपलब्ध करान जिसके द्वारा अच्छी नागरिकता का विकास सम्भव हो सके। प्रत्येक व्यक्ति सदस्यता ग्रहण करते हैं उन्हें शपथ लेनी पड़ती है कि अपनी मान मर्यादा र हुये प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं यथा शक्ति ईश्वर एवं देश के प्रति कर्त्तव्यो पालन करूंगा, सबकी सदैव सहायता करूंगा तथा स्काउट नियमों का प करूंगा। इस संस्था के नियमों के अनुसार विश्वसनीय, भक्ति, सहकारिता, f भाव, नम्रता, जानवरों के प्रति दया, आज्ञा पालन, प्रसन्न चित्त, मितव्ययता पवित्रता सिखायी जाती है।

१९२१ ई० में लार्ड वेडन पावेल भारतवर्ष में आये थे। यहां स्काउ का कार्य देख कर अत्यन्त प्रसन्न हुये। उनकी सलाह से हिन्दुस्तान ब्वाय स्क एसोसियेशन, यूनाईटेड किंगडम ब्वाय स्काउट एसोसियेशन से सम्बन्धित कर f गया। १९२७ ई० में प्रथम स्काउट कान्फ्रेन्स नयी दिल्ली में आयोजित हु १९३८ ई० में भारत में तीन संस्थायें कार्य कर रही थी। ब्वाय स्काऊट एसोि शन आफ इन्डिया, गर्ल्स गाइड एसोसियेशन आफ इन्डिया तथा हिन्दुस स्काउट ऐसोसियेशन।

स्वतंत्रता के बाद यह निश्चित किया गया कि ये सब संस्थायें एक में मिला दी जायें। १९५१ ई० में भारत स्काउट एवं गाईड की एक संस्था निर्मित की गयी जो राष्ट्रीय स्तर तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान ली गयी। कुछ दिनों के पश्चात ब्वाय स्काउट आन्दोलन फिर चलाया गया किन्तु यह नाम मात्र को है।

फेडरेशन आफ आल इन्डिया सेमिनार आन फिज़िकल एज्यूकेशन, प्रिंसिपल आफ फिज़िकल एज्यूकेशन इन्सटीट्यूशन

केन्द्रीय शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन सलाहकार बोर्ड की एक सिफारिश यह थी कि सम्पूर्ण भारत तथा प्रदेशों में शारीरिक शिक्षा पर सेमिनार आयोजित किया जाये जिससे शारीरिक शिक्षा सम्बन्धित व्यक्ति आपस में विचार कर सकें तथा ऐसे सिद्धान्त आदि का निर्माण करें जिससे व्यवसाय की उन्नति हो। सन् १९५८ ई० में २७ फरवरी से १२ मार्च तक मद्रास वाई०एम० सी० ए० कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशशन में प्रथम सम्पूर्ण भारत के शारीरिक शिक्षा विद्यालयों के प्रधानाचार्यों के लिये शारीरिक शिक्षा सेमिनार आयोजित हुआ। यह यूनियन मिनिस्ट्री के एज्युकेशन एवं साइंटिफिक रिसर्च विभाग के द्वारा आयोजित किया गया था। पच्चीस शारीरिक शिक्षा विद्यालयों के प्रधानाचार्य उपस्थित थे। प्रोफेसर मैक एम ग्रीन जो वाई० एम० सी० ऐ० कालेज आफ फिजिकल ऐज्युकेशन में फुलब्राइट स्कालर थे, सलाहकार की स्थिति में आमन्त्रित थे। सेमिनार का उद्घाटन श्री प्रेम कृपाल ज्वाइन्ट सेक्रेटरी भारत सरकार के द्वारा किया गया। मद्रास के गवर्नर ने भी सेमिनार में भाषण दिया। सेमिनार का विशेष विषय शारीरिक शिक्षा के विकास का था जो नेशनल प्लान आफ फिजिकल ऐज्युकेशन तथा रिक्रियेशन सम्बन्धी था जो सेन्ट्रल ऐडवाइजरी बोर्ड आफ फिजिकल एज्युकेशन एवं रिक्रियेशन के द्वारा तैयार किया गया था। सेमिनार में समस्या को दो भागों में विभक्त कर दिया गया। नेशनल प्लान से सम्बन्ध रखते हुये शारीरिक शिक्षा का विकास तथा शारीरिक शिक्षा में व्यक्तियों का व्यवसायिक प्रशिक्षण या तैयारी। अध्ययन के विषय जो रिपोर्ट में बताए गये निम्नलिखित हैं।

(१) शारीरिक शिक्षा का ध्येय एवं उद्देश्य तथा राष्ट्रीय जीवन में उसका स्थान;

(२) शारीरिक शिक्षा की वर्त्तमान स्थिति तथा उसकी प्रगति का उपाय;

(३) शारीरिक क्षमता;

(४) मनोरंजन;

(५) पब्लिसिटी एवं प्रोपोगेन्डा Publicity and Propoganda;

(६) ए० सी० सी०, एन० सी० सी०, एन० डी० एस० तथा अन्य कार्यक्रम जो शैक्षणिक संस्थाओं में वर्त्तमान है।

(७) फेलोशिप एवं स्कालरशिप;

(८) शारीरिक शिक्षा में रिसर्च; तथा

(९) तृतीय पंच वर्षीय योजना में शारीरिक शिक्षा की उन्नति।

सेमिनार ने, सेन्ट्रल ऐडवाइजरी बोर्ड आफ फिजिकल एज्युकेशन के बहुमूल्य सिफारिशों को सराहा तथा नेशनल प्लान को कुछ संशोधन के साथ स्वीकृत किया तथा शिक्षा मंत्रालय को सौंप दिया। उसकी कुछ मुख्य सिफारशें निम्नलिखित थी।

(१) शारीरिक शिक्षकों का वेतन अन्य शिक्षकों के समान हो तथा यूनिफार्म एलाउंस भी उन्हें प्राप्त हो तथा समान योग्यता यदि रखते हों तो होस्टल वार्डेन आदि के नियुक्त के लिये भी उन्हें स्थान दिया जाये।

(२) कोच के प्रशिक्षण चुनाव में शारीरिक शिक्षकों को अवसर दिया जाये।

(३) एक राष्ट्रीय केन्द्र सम्पूर्ण खेल एवं स्पोर्ट्स के प्रशिक्षण के लिये आरम्भ किया जाये।

(४) प्रत्येक प्रदेश में एक शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन का एक बोर्ड हो जो सेमिनार तथा नेशनल प्लान की सिफारिशों को कार्यशील करने में सहायक हो। प्रदेश के शिक्षा मंत्री उस बोर्ड के चेयर मैन हों तथा शिक्षा विभाग के कुछ कार्यकर्ता, कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन के प्रधानाचार्य, वाईस

चान्सलर, स्कूल के प्रधानाध्यापक तथा अन्य व्यक्ति जो स्पोर्ट्स एवं खेल से सम्बन्धित हो सदस्य हो सकते हैं।

(५) मनोरंजन का एक केन्द्रीय बोर्ड केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय के अन्तर्गत स्थापित हो जो प्रदेश के छोटे बोर्ड जो शिक्षा विभाग के अन्तर्गत हों उनसे सम्बन्धित हों। ये केन्द्रीय बोर्ड के आदेश को पालन करने में सहायक होंगे। जिला के स्तर पर निरीक्षण संस्था भी स्थापित हो सकती हैं।

(६) शारीरिक शिक्षा विद्यालयों में मनोरंजन पर परीक्षा के लिये एक पूर्ण प्रश्न पत्र हो।

(७) औद्योगिक संस्थाओं में कम से कम एक मनोरंजन का लीडर हो।

(८) नेशनल प्लान में दिये हुये शारीरिक क्षमता अभियान को कार्यशील किया जाये तथा प्राप्त तथ्यों के अनुसार स्तर परिवर्तन किये जायें तथा रिसर्च का संगठन हो।

(९) स्थायी कैम्प स्थान स्थापित किये जाये। १५ दिन का कैम्प अनिवार्य हो।

(१०) अर्न्तयूनिवर्सिटी यूथ फेस्टीवेल संगठित हो। यह राष्ट्रीय, प्रदेशीय एवं जिला के स्तर पर आयोजित किया जाये।

(११) एन० सी० सी०, ए० सी० सी० तथा एन० डी० एस० माध्यमिक स्तर पर समाप्त कर दिये जायें क्योंकि वे सैनिक शिक्षा के समान हैं। स्काउटिंग एवं गाइडिंग प्रोत्साहित किये जायें।

(१२) कालेज स्तर पर एन० सी० सी० ऐच्छिक हो।

(१३) दि नेशनल रिसर्च काउंसिल आफ फिजिकल एज्युकेशन की स्थापना नयी दिल्ली में अनिवार्य है।

(१४) रिसर्च स्कालरशिप २५०)–५००) तक दिया जाये जिससे उत्तम व्यक्ति इस ओर आकर्षित हों।

(१५) आल इन्डिया जरनल आफ फिजिकल एज्युकेशन ऐण्ड रीक्रियेशन का छपवाना।

(१६) शारीरिक शिक्षा साहित्य को छपवाना।

(१७) प्रत्येक दिन रेडियो प्रोग्राम शारीरिक शिक्षा विषयों पर।

(१८) लक्ष्मी बाई कालेज के समान कम से कम चार और संस्थायें स्थापित करना।

(१९) नेशनल फिजिकल एज्युकेशन वीक, प्रदर्शनी, खेल आदि के द्वारा सम्पूर्ण देश में मनाया जाये।

(२०) सेमिनार ने प्रतिदिन ४० मिनट का घंटा शारीरिक शिक्षा के लिये उचित समझा।

रेकमेन्डेशन आफ दि आल इन्डिया सेमिनार आफ स्टेट इन्स्पेक्टर्स आफ फिजिकल एज्युकेशन एन्ड युनिवर्सिटी डाइरेक्टर्स

दि आल इन्डिया सेमिनार आफ स्टेट इन्स्पेक्टर्स आफ फिजिकल एज्यु-केशन एण्ड युनिवर्सिटी डाइरेक्टर्स, महाबलेश्वर, बम्बई में केन्द्रीय सरकार के शिक्षा मंत्रालय एवं साइन्टिफिक रिसर्च विभाग के द्वारा १६ से ३० मई १९५८ ई० में आयोजित किया गया। सेमिनार में १९ युनिवर्सिटी के प्रतिनिधि, १० प्रदेश के प्रतिनिधि तथा ९ विशेषज्ञ जो केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय के द्वारा मनोनीत किये गये थे, उपस्थित थे।

सेमिनार का उद्देश्य निम्नलिखित था।

(१) वर्तमान शारीरिक शिक्षा निरीक्षण एवं नियन्त्रण की प्रणाली पर विचार तथा युनिवर्सिटी एवं कालेज के स्तर पर नेशनल प्लान आफ फिजिकल एज्युकेशन एन्ड रिक्रियेशन के ध्यान से शारीरिक शिक्षा का विकास।

(२) शारीरिक शिक्षा का कार्यक्रम विकास समाज के लिए विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में।

इस सेमिनार को आल इन्डिया सेमिनार फार प्रिंसिपल्स आफ फिजिकल

एज्युकेशन कालेजेस की रिपोर्ट पर अपने विचार आधारित करने का आग्रह किया गया।

सेमिनार ने शारीरिक शिक्षा के कार्यों पर जो युनिवर्सिटी तथा विभिन्न प्रदेशों में हो रहा है विचार किया तथा समस्यायें जिन पर विशेष ध्यान देना था वे चार मुख्य भागों में विभक्त कर दिये गये।

(१) स्कूल के स्तर पर शारीरिक शिक्षा,
(२) कालेज के स्तर पर शारीरिक शिक्षा,
(३) शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन कम्युनिटी के स्तर पर, तथा
(४) शारीरिक शिक्षा का नियन्त्रण एवं निरीक्षण।

सेमिनार की निम्नलिखित सिफारिशें शिक्षा मंत्रालय को भेजी गयीं।

स्कूल के स्तर पर :—

(१) प्राइमरी शिक्षक प्रशिक्षण में शारीरिक शिक्षा अनिवार्य हो।
(२) स्कूलों में यह परीक्षा विषय हो।
(३) शिक्षकों के लिये रिफ्रेशर कोर्स आयोजित हो।
(४) शारीरिक शिक्षा में २५० लड़कों के लिये एक शिक्षक हो।

(५) प्ले ग्राउंड एवं जिमनेजियम के लिये सरकार से आर्थिक सहायता प्राप्त हो। तथा

(६) प्राइमरी, मिडिल तथा हाई स्कूल के लिये खेल का मैदान क्रमशः पांच, तीन तथा एक एकड़ लड़कों के लिये तथा तीन, दो, एक एकड़ लड़कियों के लिये हो।

कालेज एवं युनिवर्सिटी के स्तर पर :—

(१) शारीरिक शिक्षा विभाग को स्वास्थ्य, शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन विभाग कहना चाहिये।

(२) अनिवार्य एवं ऐच्छिक कार्यक्रम होना आवश्यक है। प्रत्येक विद्यार्थी को दो खेल तथा किसी एक अन्य कार्यक्रम में निपुण होना चाहिये।

(३) कोच की योग्यता शारीरिक शिक्षा निर्देशक के तुल्य होना चाहिये।

(४) मेरिट स्कालरशिप देते समय शारीरिक शिक्षा में खेल की निपुणता पर भी ध्यान देना चाहिये।

(५) एक सलाहकार कमेटी का होना आवश्यक है।

कम्युनिटी रिक्रियेशन :—

(१) शिक्षा विभाग में कम्युनिटी रिक्रियेशन के लिए एक पृथक विभाग का नियत किया जाना।

(२) स्कूल के विद्यार्थियों एवं अन्य व्यक्तियों के लिये स्कूल के बाहर मनोरंजन का प्रबन्ध।

(३) शारीरिक शिक्षा विद्यालयों में उन व्यक्तियों का प्रशिक्षण आरम्भ करना जो मनोरंजन से सम्बन्धित हैं।

(४) केन्द्रीय सरकार के द्वारा राष्ट्रीय उद्यान, पार्क, यूथ होस्टल, पिकनिक केन्द्र, छुट्टी के कैम्प का आयोजन होना चाहिये।

(५) अवकाश के सदोपयोग में जनता की शिक्षा होनी चाहिए। प्रेस, रेडियो, फिल्म आदि से इस ओर सहयोग प्राप्त करना चाहिये।

(६) एक मनोरंजन बोर्ड संगठित करना चाहिए जिसमें सरकारी तथा अन्य व्यक्ति जो ऐच्छिक संस्थाओं के हों सदस्य रहें। यह ग्रामीण स्तर एवं शहर के स्तर पर हो।

निरीक्षण :—

(१) Inspection के स्थान में Supervision शब्द का होना आवश्यक है।

(२) प्रदेश के निरीक्षण अधिकारियों में डिप्टी डाइरेक्टर फिजिकल

एज्युकेशन एवं रिक्रियेशन, तथा अन्य दो प्रादेशिक अधिकारी (एक स्त्री एवं एक पुरुष) तथा डिविजनल व डिस्ट्रिक्ट अधिकारी (पुरुष एवं स्त्री) हों।

(३) इनके स्वतन्त्र कार्यालय हों।

(४) एक प्रादेशिक सलाहकार कमेटी बनायीं जाये जो विभिन्न योजनाओं का समन्वय करे।

एज्युकेशन कमेटी की शारीरिक शिक्षा के लिये सिफारिश (Recommendation of university Education Commission on Physical Education :—एज्युकेशन कमीशन डाक्टर डी०एस० कोठारी की अध्यक्षता में १४ जुलाई १९६४ ई० के प्रस्ताव के अनुसार केन्द्रीय सरकार के द्वारा नियुक्त हुयी थी, कि सरकार को राष्ट्रीय शिक्षा के प्रकार तथा सामान्य सिद्धान्त एवं विचार के प्रति सलाह दें, जिससे प्रत्येक स्तर तथा सर्व प्रकार से शिक्षा का विकास सम्भव हो।

कमीशन के सम्मुख १२ समस्यायें थीं। (१) स्कूल शिक्षा (२) उच्च शिक्षा (३) तकनीक शिक्षा (४) कृषि शिक्षा (५) प्रौढ़ शिक्षा (६) वैज्ञानिक शिक्षा एवं अनुसंधान (७) शिक्षक प्रशिक्षण एवं शिक्षक स्थिति (८) विद्यार्थी सुधार (९) नवीन तकनीक एवं पद्धति (१०) मानव शक्ति (११) शैक्षणिक संगठन एवं संचालन (१२) शैक्षणिक आर्थिक पक्ष।

इसके साथ ही साथ कार्यकारिणी नियुक्त हुयी। (१) महिला शिक्षा (२) पिछड़े हुये लोगों की शिक्षा (३) स्कूल की बिल्डिंग (४) स्कूल समाज सम्बन्ध (५) आंकड़े (६) प्रारम्भिक पूर्व की शिक्षा (७) स्कूल पाठ्यक्रम।

सम्पूर्ण कार्य करने वाले समूह ने अत्यन्त परिश्रम एवं प्रत्येक स्तर एवं वर्ग के लोगों से मिलने तथा स्थान स्थान पर जाकर प्रत्यक्ष निरीक्षण कर अपनी रिपोर्ट तैयार की जो तीन भागों में हैं।

प्रथम भाग में १ से ४ अध्याय तक क्षिक्षा के पुन: व्यस्थित करने का जो प्रत्येक स्तर तथा वर्ग से सम्बन्धित है वर्णन है। इसके अन्तर्गत संगठन शिक्षा प्रणाली का राष्ट्रीय उद्देश्यों से परिचित कराना, सरकार का पुनः संगठन, शिक्षकों की

उन्नति, प्रवेश के सिद्धान्त तथा शिक्षा लाभ एवं अवसर का सामना करना आदि दिये गये हैं। द्वितीय भाग ७ से १७ अध्याय में विभिन्न शिक्षा के स्तर एवं वर्ग का वर्णन है।

७ से १० अध्याय में स्कूल समस्यायें जैसे, निवास, पाठ्यक्रम, शिक्षा पद्धति, पाठ्य पुस्तक, आदेश, मूल्यांकन, संगठन, संचालन एवं निरीक्षण पर विचार है।

११ से १३ अध्याय में उच्च शिक्षा की समस्यायें दी गयी हैं जिसके अन्तर्गत बड़े विश्वविद्यालयों का अस्तित्व, गुणात्मक प्रगति का प्रोग्राम, प्रवेश तथा विश्वविद्यालय शासन।

१४ से १५ अध्याय में तकनीकी शिक्षा, कृषि शिक्षा तथा व्यवसायिक शिक्षा पर विचार है।

१६वें अध्याय में वैज्ञानिक शिक्षा एवं अनुसंधान का वर्णन है।

१७वां अध्याय प्रौढ़ शिक्षा की समस्याओं से सम्बन्धित है।

तृतीय भाग में कार्य सम्पन्न करने की समस्यायें हैं। इसमें दो अध्याय हैं। १८वां अध्याय शैक्षणिक नियोजन एवं संगठन तथा संचालन तथा १९वां अध्याय शैक्षणिक अर्थ व्यय सम्बन्धी विचार है।

शारीरिक शिक्षा के प्रति सिफारिश—कमीशन का यह विचार है कि सरकार केवल शारीरिक क्षमता की ओर ध्यान दे रही है तथा शैक्षणिक मूल्य की ओर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। इस बात पर बल देना आवश्यक है कि इस प्रकार की शिक्षा से न केवल शारीरिक क्षमता ही प्राप्त होती हैं किन्तु शारीरिक निपुणता, मानसिक सतर्कता तथा सहने की शक्ति, टीम या सहयोग का भाव, नेतृत्व, नियम का प्रतिपालन, विजय में अपने को नियन्त्रित करना तथा हार में सन्तुलन आदि ऐसे गुण विकसित होते है। एक संतोषजनक शारीरिक शिक्षा का प्रोग्राम केवल निम्नलिखित पर ही आधारित हो सकता है।

(१) शारीरिक शिक्षा का प्रोग्राम जिनके लिये निर्माण किया जा रहा

है उनकी योग्यता एवं रुचि का ध्यान रखते हुये इस प्रकार आयोजित किया जाये जिससे स्वस्थ एवं योग्य परिणाम उपलब्ध हों।

(२) परम्परा से खेल एवं शारीरिक क्रियाओं के प्रकार जो देश में विकसित हुये हैं उन्हें प्रोग्राम में उचित प्रोत्साहन मिलना चाहिये।

(३) जो क्रियायें प्रचलित की जाती हैं उनके द्वारा बालकों में अपने सम्मान एवं मूल्य की भावना उत्पन्न होनी चाहिये।

(४) जिमनेज़ियम तथा प्ले ग्राउंड के अनुभव से एक दूसरे के साथ उत्तरदायित्व के प्रतिपालन में सहयोग तथा प्रजातांत्रिक समन्वय का विकास होना चाहिए।

(५) शारीरिक शिक्षा प्रोग्राम सामान्य शिक्षा के कार्यक्रम का पूरक हो न कि उसी को दोहराया जाये।

(६) प्रोग्राम आर्थिक अवस्था के आधीन होना चाहिये।

(७) प्रोग्राम प्रत्येक के लिये होना चाहिये न कि केवल कुछ चुने हुये लोगों के लिये। तथा

(८) जिन पर विद्यार्थियों को विशेष कौशल सम्भावना एवं रुचि प्राप्त हो उनके लिये प्रशिक्षग एवं कोचिंग की व्यवस्था करना चाहिये।

शारीरिक शिक्षा में विकास के व्यायाम, ताल बद्ध क्रियायें, स्पोर्ट्स एवं गेम्स, पर्यटन एवं सामूहिक खेल होना आवश्यक है। इन प्रत्येक के साधारण एवं जटिल प्रकार हैं साधारण प्रकार की शिक्षा प्रारम्भिक कक्षाओं में देनी चाहिये तथा जटिल प्रकार की शिक्षा जैसे बालक एवं बालिकायें परिपक्वता प्राप्त कर रहे हों उसके अनुसार देना चाहिये। जो बहुत छोटे हैं, वे मनोवैज्ञानिक एवं शारीरिक रीति से उस स्थिति में नहीं होते जिन्हे औपचारिक तथा कठिन शक्तिशाली प्रकार का कार्य दिया जा सके। उनके आधारभूत गति ज्ञान एवं सामंजस्य का धीरे धीरे विकास करना चाहिये। प्रारम्भिक एवं पूर्व प्रारम्भिक स्तर पर प्रोग्राम इस प्रकार आधारित हो जिसमें उनके आस पास गति के

प्रतिरूप करने की भावना, उनके खेल की इच्छा, उनके अपने साथियों से कुछ उत्तम करने की अभिलाषा आदि आ जाये। यह गति के द्वारा शिक्षा देने की महत्वपूर्ण अवस्था है। बालक को आधार भूत कौशल, जैसे सही चलना, दौड़ना, खेल में धोखा देना, फेंकना आदि पर पूर्ण नियन्त्रण होना चाहिये। ऊंचे प्रकार के समन्वय जैसे यथार्थता एवं निषंड (accuracy and Precision) दूसरे पक्ष में दिये जायेंगे।

जैसे बालक पूर्व किशोरावस्था में बढ़ता है उसकी योग्यता एवं रुचि में परिवर्तन होता है। शारीरिक शिक्षा को उसे अधिक ललकारने वाले या उसकी योग्यता को जांचने वाली क्रियायें देना चाहिये तथा साधारण टीम के खेल तथा कौशल के उच्च प्रकार के लिये अवसर देना चाहिये। किशोर, सेकेन्ड्री स्कूलों में प्रौढ़ों के क्रियाओं का प्रतिरूप करते हैं। उसे स्पोर्ट्‌स, गेम्स तथा एथेलेटिक, उसकी कक्षा के अनुसार देना चाहिये। पूर्वत: सीखे हुये कौशल में आदेश एवं अभ्यास के द्वारा निपुणता लाने की चेष्टा होना चाहिये। यह, वह अवस्था है, जब बालक एवं बलिकायें एक दूसरे से उत्तमतर होना चाहते हैं, अत: शारीरिक शिक्षा पाठ्यक्रम में ऐसे तकनीक हो जिनसे अच्छी कृति सम्भव हो।

प्रारम्भिक अवस्था में केवल अन्त के दो कक्षाओं के अतिरिक्त बालक एवं बालिकाओं के लिये एक समान पाठ्यक्रम प्रयोग किया जा सकता है। इसके पश्चात् पाठयक्रम पृथक एवं भिन्न होना चाहिये जिसमें उनकी विशेष योग्यता एवं रुचि का ध्यान रखना चाहिये। ताल बद्ध क्रियाओं में लड़कियों को रुचि होगी जिन खेलों में परस्पर स्पर्शनीय अवस्था होती है तथा जो अधिक थकाने वाले नहीं होते जैसे बैडमिन्टन, थ्रोबाल आदि भी सर्वप्रिय हैं। अविक शक्ति-शाली खेल जैसे बास्केट बाल, नेट बाल, हाकी आगे चलकर सिखाये जा सकते हैं। कक्षाओं में एथेलेटिक का भी स्थान अवश्य होना चाहिये।

प्रत्येक अवस्था के शारीरिक शिक्षा के प्रोग्राम के निर्माण करने में इस बात का ही केवल ध्यान नहीं रखना चाहिये कि क्या उपयोगी है किन्तु सुविधाओं के सीमित होने के कारण, समय तथा शिक्षकों के अभाव में क्या सम्भव है। कुछ समय से योजनायें जैसे, नेशनल प्लान आफ फिजिकल एज्युकेशन जो विशेषज्ञों के द्वारा केन्द्रीय सरकार के आदेश पर निर्माण किया गया है, दी

नेशनल डिसिप्लनरी स्कीम, तथा आक्सलरी केडट कोर जिनमें अन्य योजनाओं की तरह कार्य समान है, आदि एक दूसरे से कार्य में प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं। शिक्षा मंत्रालय के द्वारा एक विशेष कमेटी पंडित हृदय नाथ कुंजरू की अध्यक्षता में स्थापित की गयी जिसकी सिफारिश है कि एक 'Integrated Scheme' अभिन्न आयोजना हो और ऐसा पाठ्यक्रम हो जिसमें प्रत्येक की अच्छी बाते आ जायें। कमेटी ने विभिन्न योजनाओं के प्रोत्साहकों की मांग का मेल करने की चेष्टा की, जो परिणामत: एक मिश्रित प्रोग्राम नेशनल फिटनेस कोर के नाम से प्राप्त हुआ। यह भय है कि इस नये स्कीम के कार्यशील करने में प्रोग्राम का शैक्षणिक तात्पर्य भुला दिया जाये या उसके प्रति लापरवाही की जाये। इस मेल किये हुये योजना की कड़ी आलोचना हुयी है अतः हम यह सिफारिश करते हैं कि यह पुन: एक बार और परीक्षित किया जाये तथा एक शारीरि कशिक्षा का प्रोग्राम उपरोक्त सिद्धान्त के अनुकूल निर्माण किया जाये।

स्कूल संगठन का दृष्टिकोण—स्कूल संगठन के दृष्टिकोण से स्कूलों का जटिल सम्बन्ध The School Complex का विचार दिया गया है जहां शिक्षक एक स्कूल से दूसरे स्कूल की सहायता कर सकें। शारीरिक शिक्षकों के प्रति भी यही बिचार है।

शिक्षकों को सेवा में रहते हुये प्रशिक्षित होने पर विचार दिया गया है।

सिफारिशों के सारांश में विवरण करते हुये शारीरिक शिक्षा के लिये यह कहा गया है कि शारीरिक शिक्षा, शारीरिक क्षमता, निपुणता, मानसिक सतर्कता तथा चरित्र के विभिन्न गुणों के विकसित करने के लिये महत्वपूर्ण है। आधुनिक शारीरिक शिक्षा प्रोग्राम की परीक्षा एवं उस पर पुन: विचार करना, आवश्यक है। इसकी परीक्षा तथा इस पर विचार बालक के बढ़ाव एवं विकास के आधार भूत सिद्धान्तों के आधार पर होना चाहिये तद्पश्चात उन्हीं आधारों पर इसका निर्माण होना चाहिये।

———

१

शारीरिक शिक्षा सम्बन्धी मनोविज्ञान

शारीरिक शिक्षा का मनोवैज्ञानिक आधार

मनोविज्ञान का अर्थ

आधुनिक युग को समझने के लिये विज्ञान का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। जीवन की जटिलता को समझना वैज्ञानिक विशेषज्ञों का मुख्य कर्त्तव्य हो गया है। प्राचीन कथन 'ज्ञान ही शक्ति है' आज के वैज्ञानिक आविष्करों द्वारा पूर्णतया सिद्ध किया जा रहा है। मनुष्य जो सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ कर्त्ता है उसके विषय में वैज्ञानिक अध्ययन परम आवश्यक प्रतीत होता है। मनुष्य एक अद्भुत प्राणी है जिसके व्यवहार तथा विकास विचित्र हैं। उसको उसके वास्तविक रूप में समझना, उचित वैज्ञानिक अध्ययन के द्वारा ही सम्भव है।

जीवन को सफल बनाने एवं उचित निर्णय के लिये वैज्ञानिक आधार अनिवार्य हैं। मनुष्य का सुख एवं आनन्द एक व्यक्तिगत विषय होते हुये भी सामग्री की सुविधाओं एवं सामाजिक व्यवस्थाओं पर निर्भर है। अपनी योग्य-

ताओं का उत्तम प्रयोग, अपने व्यक्तित्व की उन्नति, समाज में एवं मित्रों के प्रति व्यवहार, वातावरण के अनुकूल समायोजन एवं उस पर प्रभुत्व आदि के सही हल के लिये वैज्ञानिक आधार की सहायता लेनी पड़ती है।

मनुष्य के व्यवहार का विज्ञान अनेक दूसरे विज्ञानों से मिश्रित है। मनुष्य क्रिया शास्त्र उसके अंगों एवं कोष्ठों का अध्ययन करता है। सामाजिक विज्ञान, राष्ट्रों एवं मानव झुण्ड का अध्ययन करता है। इनके बीच मनुष्य के व्यक्तित्व का अध्ययन मनोविज्ञान के द्वारा किया जाता है।

मनोविज्ञान का अध्ययय किसी न किसी रूप में अरस्तू के समय से पाया जाता है। उस समय यह दर्शन शास्त्र का एक अंग था। आध्यात्मिक विचारों की अवनति तथा वाह्य वैज्ञानिक परीक्षण की उन्नति के परिणामतः १९ वीं शताब्दी में यह एक विज्ञान के रूप में विकसित हुआ।

मनोविज्ञान का अंग्रेजी शब्द 'साइकोलोजी' युनानी भाषा से लिया गया है। यह दो शब्दों से, 'साइको' एवं 'लोगोस' से मिलकर बना है जिनका अर्थ क्रमशः आत्मा तथा विचार है। इसका शाब्दिक अर्थ है आत्मा का विचार।

मनोविज्ञान का वास्तविक अर्थ आत्मा का विचार ही है। प्लेटो ने कहा था कि मनुष्य भी प्रकृतितः आत्मा एवं शरीर से निर्मित है। यह दोनों आपस में भिन्न हैं। आत्मा को केवल ज्ञान से ही समझा जा सकता है। अरस्तू ने आत्मा को मुख्य कार्यों का योग समझा था। यह परिभाषा स्पष्ट नहीं है। इसके द्वारा आत्मा क्या है, ऐसे प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिलता। यह दर्शनशास्त्र का विषय है।

इसके पश्चात मनोविज्ञान की परिभाषा मस्तिष्क का अध्ययन बताया गया। इसमें भी कई ऐसे प्रश्न उठते हैं जिनका उत्तर देना कठिन हो जाता है, जैसे मस्तिष्क की प्रकृति, स्थूल पदार्थ से भिन्नता आदि। मस्तिष्क के अध्ययन की परिभाषा में मनोविज्ञान तर्क ज्ञान से मिलता जुलता रहा तथा इसका स्पष्टीकरण नहीं हो सका। आगे चल कर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचेगे कि मनोविज्ञान के लिये मस्तिष्क के सम्बन्ध में कुछ साहसपूर्ण सिद्धान्त निर्धारित करना आवश्यक होगा।

आधुनिक मनोविज्ञान के संस्थापक डेकार्ट (Descartes) माने जा सकते हैं। मस्तिष्क की परिभाषा का अन्त हो जाने के पश्चात यह चेतना का विज्ञान समझा जाने लगा। मनोवैज्ञानिकों ने यह समझ लिया—कि कल्पित दर्शन शास्त्र के विचारों को त्याग कर, यह जानना आवश्यक है कि मस्तिष्क के घेरे में किस वस्तु पर निश्चयीकरण हो सकता है। डेकार्ट इस परिणाम पर पहुंचे थे, कि एक निश्चित विषय यह था, कि, मैं, विचार करता हूं, इच्छा करता हूं एवं अनुभूति करता हूं। इसका अर्थ है, कि मुझमें ही चेतना की अवस्थायें होती हैं या अनुभव के प्रकार होते हैं, जिनकी अन्तर्दर्शन के द्वारा परीक्षा की जा सकती है। डेकार्ट के अनुसार मस्तिष्क का वास्तविक गुण सोचना या विचार करना है। इसके विपरीत बाह्य जगत है। यह बाह्य जगत एवं विचार आपस में संबंधित हैं। मनोविज्ञान इसी संबंध का आविष्कार करना चाहता है। डेकार्ट ने मस्तिष्क की परिभाषा में कहा है कि यह विचार करने वाली विस्तृत वस्तु है जिसका गुण चेतना है। चेतना का अर्थ 'मालूम करने' से लिया जाता था। इसे कैसे जाना जा सकता है। प्रत्येक चेतना व्यक्तिगत है। अन्तर्दर्शन निज के विचारों के जानने के लिये था एवं उसका अध्ययन मन संबंधी विषय तथा विचार था। इस प्रकार का मनोविज्ञान शिक्षा के लिये लाभप्रद नहीं था क्योंकि बुद्धिमान प्रौढ़ को मनोविज्ञान की आवश्यकता न थी वरन उत्तेजित बालक को मनोविज्ञान की आवश्यकता थी। इसके अतिरिक्त विज्ञान होने के कारण, मनोविज्ञान को यह बताना था, कि कोई चेतना विशेष रूप क्यों धारण करती है एवं मनुष्य के लाभार्थ उस पर नियन्त्रण कैसे किया जा सकता है। फलतः मनोविज्ञान चेतना के विज्ञान की परिभाषा में स्वीकृत न हो सका। चेतना अपने अन्य अर्थ में मनोविज्ञान में स्थान रखता है।

इसके पश्चात मनोविज्ञान व्यवहार के विज्ञान के रूप में आया। मनोविज्ञानिकों ने यह प्रश्न किया, कि, हमारी परीक्षा की वास्तविक वस्तु क्या है। वे इस परिणाम तक पहुंचे, कि चेतना की अवस्था अपने अनुभव की परीक्षा तक सीमित है किन्तु व्यवहार के अध्ययन के योग में कोई भी जीवित प्राणी जो व्यवहार करता है समाहित हो जाता है। किसी की चेतनावस्था का सीधा अध्ययन, किसी अन्य के द्वारा संभव नहीं है किन्तु व्यवहार का अध्ययन किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, किसी के क्रोधित होने के समय उसके क्रोध का अध्ययन नहीं किया जा सकता, अपितु उसके बाह्य व्यवहार का अध्ययन हो

सकता है, जैसे आंखों का लाल होना, बंधी हुयी मिट्टी, तमतमाया चेहरा, लड़-खड़ाती बोली, कांपता हुआ शरीर, सूखे होंठ आदि। इन व्यवहारों के द्वारा समझा जा सकता है कि व्यक्ति क्रोधित है। यहां अध्ययन व्यक्ति के क्रोध का नहीं वर्न उसके क्रोधपूर्ण व्यवहार का हुआ। इस परिणाम के प्रभाव क्या हैं? यह अत्यन्त सरल एवं साधारण है। मैं भी उस व्यक्ति के समान एक प्राणी हूं मैं जानता हूं, कि क्रोध की अवस्था में मैं भी इसी प्रकार का व्यवहार करता। जब कोई मेरी तरह ऐसा व्यवहार करता है तो मैं इस परिणाम पर पहुंचता हूं कि वह क्रोधी है, अतः एक लाभदायक मनोविज्ञान के प्राप्त करने के लिये, अपने अनुभव की परीक्षा के परे जाना है एवं व्यवहार का अध्ययन करना है, साथ ही अपने व्यवहार के आधार पर उसका अनुवाद (Interpret) करना है।

मनोविज्ञान की आधुनिक परिभाषा:

It is the interpretation and explanation of behaviour in mental psychical terms. —Ross

यह मानसिक रूप में व्यवहार का अनुवाद एवं उल्लेख है।

It is the science which seek to interprept in psychical or mental terms the behaviour of living organism so for as that is psychically conditioned. —Dr. James Drever

यह वह विज्ञान है जो जीवित प्राणी के व्यवहार को मानसिकरूप में अनूदित करता है जहां तक वह आत्मिकता से निर्धारित होता है।

Psychology is a scientific study of the activity of the individual. —Wood Worth.

मनोविज्ञान व्यक्ति के कार्य का वैज्ञानिक अध्ययन है।

The positive science of behaviour. —Mc. Dougall

The study of mental phenomenon. —Dumvile

यह मानसिकरूप का अध्ययन है ।

It is the science of mind or human nature as revealed in two aspects, the inner which is mind and the outer called action or behaviour.

यह मन या मनुष्य की प्रकृति का विज्ञान है जो दो प्रकार से प्रमाणित होता है, आन्तरिक जो मन है एवं बाह्य जिसे गति या व्यवाहार कहते हैं ।

मनोविज्ञान का क्षेत्र

(१) शिक्षा मनोविज्ञान

पेस्टलोजी प्रथम सर्वश्रेष्ठ शैक्षणिक आविष्कारकों में से एक हैं । बालक का मन शिक्षक का प्रथम दायित्व है इस विचार पर सर्वप्रथम आपने ही बल दिया था । इस बात पर भी बल दिया था कि शिक्षा की कला मानसिकरूप में सही ज्ञान पर आधारित होनी चाहिए । पेस्टलोजी का ध्येय शिक्षा को मनोवैज्ञानिक रूप देने का था ।

सर जौन आडम्स ने एक उदाहरण में कहा था, कि मास्टर ने जौन को लेटिन सिखाई । इसमें सिखाने की क्रिया के कारण जौन व लैटिन हैं । उनका कथन है कि शिक्षा देने के लिए शिक्षक को जौन तथा लैटिन दोनों को जानना है जौन का ज्ञान ही मनोविज्ञान है ।

शिक्षा में मनोविज्ञान, की एक नयी शाखा है । इसके द्वारा बालकों की बुद्धि की माप, उनकी रुचि, इत्यादि का पता लगता है तथा शिक्षा सही विधि से दी जाती है । शिक्षा सम्बन्धी विषयों का अध्ययन प्रयोग द्वारा होता है और उसके परिणाम से शिक्षा को सरल, रुचिकर व उपयोगी बनाया जाता है ।

(२) बाल मनोविज्ञान

इसके द्वारा बालक के स्वभाव तथा रुचि का अध्ययन किया जा सकता है । बालक की मनोवृत्तियों को सही प्रकार से समझना उसके विकास के लिए अति आवश्यक है । माता पिता इस अध्ययन से बहुत लाभ उठा सकते हैं एवं व्यर्थ परेशानियों से बच सकते हैं ।

(३) **वैयक्तिक मनोविज्ञान**

इसके अध्ययन द्वारा मनुष्य स्वयं को तथा दूसरों को सही रूप में समझ सकता है। मनोविज्ञान इसी अध्ययन से आरम्भ हुआ है। इस अध्ययन में अन्तदर्शन से अधिक सहायता मिलती है।

(४) **असाधारण मनोविज्ञान**

इसमें मानसिक दोष के द्वारा जो असाधारण व्यवहार होते हैं उनका अध्ययन होता हैं। इसकी विधि मनोविश्लेषण की है। आधुनिक काल में अप्राकृतिक जीवन के कारण, मनुष्य अनेक दोषों द्वारा ग्रसित है, जिनके कारण व्यवहार में असाधारणता आ जाती है। इस व्यवहार का अध्ययन इसी के द्वारा है।

(५) **सामाजिक मनोविज्ञान**

समाज व्यक्ति के विकास में कौन सा स्थान रखता है तथा समाज के निर्माण में व्यक्ति का क्या उत्तरदायित्व है इसका ज्ञान इसी विज्ञान के अन्तर्गत कराया जाता है। चरित्र तथा व्यवहार के नियम समाज पर ही निर्धारित होते हैं। मूल प्रवृति का परिवर्तन समाज के नियमों के आधार पर ही होता है। उच्च समाज की स्थिति को इसी के द्वारा समझा जा सकता है तथा समाज के मन का पता इसी के द्वारा लग सकता है।

(६) **व्यापारिक मनोविज्ञान**

मालिक तथा श्रमिकों का सही सम्बन्ध इसी के द्वारा ठहराया जा सकता है। शिल्पियों व्यवसायियों के लिए यह विज्ञान उपयोगी है। आधुनिक काल में व्यापार तथा शिल्पकारी उन्नति पर है इस कारण कितने उत्तरदायित्व, कर्त्तव्य, सुरक्षा, भय निश्चयता इत्यादि की समस्यायें उठती हैं जिनका हल इसी में मिलता है।

(७) **सामान्य मनोविज्ञान**

यह सामान्य मनोविज्ञान है जिसमें व्यक्ति के व्यवहार का अध्ययन होता है।

(८) प्रयुक्त मनोविज्ञान

किसी विषय में मनोविज्ञान के नियमों को प्रयुक्त कर उसको समझना तथा उससे लाभ उठाने को प्रयुक्त मनोविज्ञान कहते हैं। इस कारण इसकी अनेक शाखाएं हो सकती हैं।

साधारणतः मनोविज्ञान को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है साधारण तथा असाधारण। यह व्यवहार पर निर्भर करता है। प्रत्येक के वैयक्तिक तथा सामूहिक दो भाग हो सकते हैं।

मनोविज्ञान के अध्ययन की विधियां

मनोविज्ञान एक विज्ञान है अतएव उसके अध्ययन में वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग स्वाभाविक ही है। मनोविज्ञान के सिद्धान्तों को प्रमाणित करने तथा उनकी सत्यता सिद्ध करने के लिये वैज्ञानिक प्रयोगों की आवश्यकता होती है। वैज्ञानिक विधि के पांच मुख्य अंग हैं। जिस विषय का नियम स्थिर करना हो उसके पूर्ण तथ्य एकत्रित करना उनका वर्गीकरण करना, उनके आधार पर कल्पना की सृष्टि, कल्पना का निरीक्षण तथा प्रयोग, अन्त में नियम स्थिर करना।

मनोविज्ञान के अध्ययन की विधियों को दो मुख्य भागों में विभक्त किया जा सकता है। (१) निरीक्षण की विधि (२) विवरण की विधि।

(१) निरीक्षण विधि

इस विधि में मनुष्य में होने वाले अनेक व्यवहार, भाव, क्रियायें व चेष्टाओं आदि का अध्ययन किया जाता है।

इस विधि के दो प्रकार है (अ) अन्तर्दर्शन व (ब) बहिर्दर्शन।

(अ) अन्तर्दर्शन विधि

यह मनोविज्ञान की प्रमुख विधि है। इस विधि में मनुष्य अपनी मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन स्वयं करता है। यह एक प्रकार से आत्म-

निरीक्षण की विधि है। इसमें मनुष्य का मन ही प्रयोगशाला है जहां वह विभिन्न तथ्यों को एकत्रित करता है दूसरे व्यक्ति के मन में क्या हो रहा है, क्या होगा या क्या हुआ था इत्यादि को हम उसी समय समझ सकते हैं जब उसी अवस्था में स्वयं के मन की बातों को देखते हैं।

इस विधि के दोष-अनेक मनोवैज्ञानिक इस विधि को वैज्ञानिक नहीं समझते क्योंकि यह अन्य किसी भी विज्ञान में प्रयोग में नहीं लायी जाती, साथ ही साथ यह भी कहा जाता है कि अपनी मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन कठिन ही नहीं वरन असंभव सा है। वास्तव में जिस समय किसी मानसिक अवस्था का अध्ययन किया जायेगा उस अवस्था का उसी समय उपस्थित होना कठिन है।

साधारण व्यक्ति इस विधि का उपयोग नहीं कर सकते क्योंकि उन्हें इसका अभ्यास नहीं होगा। व्यक्तियों में व्यक्तिगत विभिन्नता के परिणाम स्वरूप उनके विचारों में भी भिन्नता होती है,

इस विधि में स्मृति से अधिक कार्य किया जाता है क्योंकि निरीक्षण के समय वास्तविक दशा उपस्थित नहीं रहती है। अतः वह मानसिक क्रिया न होकर उसकी स्मृति मात्र रह जाती है स्मृति के प्रयोग के समय वास्तविक अवस्था पर ध्यान न देकर केवल अनुमान मात्र से काम लिया जाता है।

बाल मस्तिष्क के अध्ययन में यह उपयुक्त नहीं ठहर सकता किन्तु इस विधि के अतिरिक्त बाल मस्तिष्क का अध्ययन हो भी कैसे सकता है।

इस विधि में दोष हो सकते हैं किन्तु मनोविज्ञान की प्रमुख उपयोगी विधि यही है। मन की बातें मन के द्वारा ही जानी जा सकती हैं। दूसरे व्यक्ति के मन की बातें हम स्वयं के मन द्वारा ही समझ सकते हैं।

(ब) **बहिर्दर्शन विधि** मनोविज्ञान में चेतन तथा अचेतन व्यवहार और मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन होता है। दूसरों के मानसिक अध्ययन के लिए उनके व्यवहारों का निरीक्षण किया जाता है। यह भी मनोविज्ञान की एक मुख्य विधि है। विचार तथा कार्य में घनिष्ठ सम्बन्ध है। कार्यों का निरीक्षण कर उनसे संबंधित विचारों का अध्ययन किया जा सकता है व्यक्ति के मनोभाव

उसके बाह्य व्यवहार से ही ज्ञात हो सकते हैं किन्तु इनको समझने में भी अन्तर्दर्शन की आवश्यकता है।

इस विधि के दोष :

क्योंकि इसमें अन्तर्दर्शन का मुख्य स्थान है अतः संभव है कि दूसरे के व्यवहार का वर्णन करते हुए बहिर्दर्शक अपने ही विचारों का वर्णन करने लगे।

यदि बहिर्दर्शक तथा 'विषयों' के मानसिक विकास में अन्तर होगा तो यह दोषपूर्ण हो जायेगी क्योंकि ऐसी स्थिति में अनुमान से ही कार्य किया जा कता है।

बहिर्दर्शक में यदि किसी प्रकार का पक्षपात होगा तो यह विधि दोषपूर्ण हो जायेगी। यदि विषयी का व्यवहार बनावटी हैं तो विधि दोषित ठहरेगी।

इन सब दोषों के रहते हुए भी वह पद्धति व्यवहार में लायी जाती है। प्रशिक्षण तथा सतर्कता के साथ इसे व्यवहार में लाने से इसके दोषों को दूर करना सम्भव है। अपने ज्ञान के कारण इच्छानुसार नियन्त्रण भी कर सकते हैं।

उपरोक्त दोनों विधियों का संयुक्त उपयोग करने से ही सही अध्ययन तथा विशेष लाभ प्राप्त होगा।

(२) **प्रयोग विधि—**

सुपरिचित तथा सुनियन्त्रित परिस्थिति में किये गये निरीक्षण को प्रयोग कहते हैं। इसमें मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन पूर्व निश्चित परिस्थिति में किया जाता है। यह वैज्ञानिक विधि है जिसके द्वारा प्रत्येक नियम की सत्यता प्रमाणित की जाती है।

प्रत्येक मानसिक क्रिया पर प्रयोग नहीं किया जा सकता है जैसे पागलपन को समझने के लिए किसी को पागल नही बनाया जा सकता है केवल लक्षणों के निरीक्षण से अध्ययन करना पड़ता है।

मन की क्रियायें जैसे रुचि, बुद्धि, स्मरण शक्ति, कल्पना, संवेदना, ध्यान आदि पर प्रयोग किया जा सकता है। प्रयोग में शरीर, मानसिक तथा वातावरण सम्बन्धी उन समस्त बातों का विवरण रखना पड़ता है जिनका प्रभाव विषयी की मानसिक क्रियाओं तथा व्यवहार पर पड़ सकता है।

आधुनिक मनोविज्ञान में बुद्धि माप का प्रयोग तथा व्यवसायिक योग्यता के प्रयोग द्वारा बहुत लाभदायक कार्य किये जा रहे हैं।

विधि के दोष—

मानसिक प्रक्रियाओं पर निर्जीव पदार्थ के समान नियन्त्रण करना कठिन है। सदैव कृत्रिम वातावरण जो प्रयोग के अनुकूल हो कठिन है।

प्रयोगकर्ता के द्वारा विशेष मानसिक दशा समाप्त की जाती है तथा विशेष कृत्रिम उत्तेजना उत्पन्न की जाती है। मानसिक क्रियाओं का स्वाभाविक दशा में अध्ययन होना चाहिये।

बनावटी वातावरण मनःस्थिति के अनुकूल नहीं बनाया जा सकता। इन दोषों के होते हुए भी प्रयोग विधि का उपयोग करना आवश्यक तथा अनिवार्य है। मनोविज्ञान की उन्नति इसी के कारण हुई हैं। दोष होते हुए भी सतर्कता के साथ कार्य करने में अत्यन्त सफलता प्राप्त होती है।

विवरण विधि—

(i) तुलनात्मक बिधि—व्यक्ति के व्यवहार की तुलना अन्य व्यक्तियों तथा पशुओं से की जाती है। तुलना में समानता तथा भेद दोनों पर ध्यान दिया जाता है। मनुष्यों तथा पशुओं की मूल प्रवृत्तियों में विशेष अन्तर नहीं हैं। अतएव वास्तविक रूप जानने के लिए पशुओं के स्वभाव का अध्ययन भी होता है, साथ ही कितने ऐसे प्रयोग हैं जो मनुष्यों पर लागू करके तुलनात्मक विधि के रूप में मनुष्यों से सम्बन्धित नहीं किये जा सकते। अतः उन्हें पशुओं पर व्यवहार में लाया जा सकता है।

मनुष्य की मूल प्रवृत्तियां परिवर्तनशील हैं तथा पशुओं में मनुष्य की तरह विचार का अभाव है। अतः दोनों की तुलना करते समय उनकी परस्पर

विभिन्नताओं पर भी विशेष ध्यान रखना चाहिए अन्यथा त्रुटि होने की सम्भावना होगी।

(ii) मनोविश्लेषण विधि :—आधुनिक मनोविज्ञान चित्त मनोविश्लेषण की विधि द्वारा मन के अन्त:पटल का अध्ययन करता है। इस विधि से मन के २/३ भावों को समझाने का प्रयत्न किया जाता है। मन का २/३ भाग छिपा या अचेतन रहता है केवल १/३ भाग चेतन रहता है। अचेतन मन के प्रबल होने से व्यक्ति के व्यवहार में अस्वाभाविकता आ जाती है। व्यक्ति के ऐसे व्यवहारों को समझने के लिए मनोविश्लेषण विधि प्रयोग में आती है। इस पद्धति के संस्थापक फ्रायड महोदय हैं। मस्तिष्क की गुप्त अवस्थाएं स्वप्न एवं सांकेतिक चेष्टाओं का विश्लेषणात्मक रूप से अध्ययन इस विधि में किया जाता है। इस विधि के द्वारा उन अनुभवों का अध्ययन किया गया है, जो साधारणतया निरर्थक समझी जाती हैं, जैसे भूल, पागलपन, निरर्थक चेष्टाएं आदि। इस विधि के द्वारा यह प्रमाणित होता है कि मनुष्य का प्रत्येक कार्य अर्थपूर्ण है। निरर्थक क्रियाएं गुप्त वासनाओं को प्रकाशित करती हैं।

(iii) **विकासात्मक विधि—**

इस अध्ययन में किसी व्यक्ति अथवा जाति के मानसिक गुण विलक्षणता, एवं स्वभाव के विकास का पूर्ण अध्ययन किया जाता है जिसमें बाल्यावस्था से लेकर वृद्धावस्था तक की बातें आ जाती हैं। वंशानुक्रम तथा वातावरण का प्रभाव कैसे तथा कितने समय में होना सम्भव है इत्यादि अध्ययन इस विधि के द्वारा होता है।

(iv) **व्यक्ति इतिहास विधि—**

मनुष्य के व्यक्तिगत इतिहास के अध्ययन से स्वभाव के कारण का अध्ययन किया जाता है। इसमें व्यक्ति पर विश्वास रखकर प्रश्न किये जाते है और इस प्रकार अन्य स्त्रोतों से भी सहायता मिले तो ली जा सकती है। व्यवहार की रुचियों को समझने तथा सुलझाने के लिए यह अति उपयोगी हैं।

(v) **प्रश्नावली विधि—**

बालक के पूर्ण स्वभाव तथा अनुभव संबंधी तालिका बनायी जाती है।

प्रश्न विभिन्न प्रकार के होंगे। बालक प्रश्नों का उत्तर देता है या सही उत्तर चुन लेता है। इसके आधार पर उसकी योग्यता आदि का अध्ययन होता है।

शिक्षा से सम्बन्धः

स्विस स्कूल शिक्षक पेस्टालोजी उन शैक्षणिक अग्रणियों में से थे जिन्होंने इस बात पर बल दिया कि बालक का मन शिक्षक का प्रमुख उत्तरदायित्व है। उनका कहना था कि शिक्षा कला को सही मानसिक प्रणाली के ज्ञान पर निर्धारित करना आवश्यक है। उनका ध्येय शिक्षा को मनोवैज्ञानिक आधार पर स्थापित करने का था।

किसी सामाजिक विज्ञान के अध्ययन के लिये मानव मन के ज्ञान की एवं उसके कार्य करने की प्रणाली के ज्ञान की आवश्यकता होती है। शिक्षा एक सामाजिक विज्ञान है अतः इसके आधार मनोवैज्ञानिक होने चाहिये जिन पर शैक्षणिक अभ्यास एवं पद्धति की नींव पड़ सके।

एक समय था जब शिक्षक के लिये मनोविज्ञान आवश्यक नहीं समझा जाता था। यह कहा जाता था कि शिक्षा एक कला है एवं कला के लिये कौशल का अभ्यास उपयुक्त है। शिक्षक के लिये विषय का साहित्यक ज्ञान ही पर्याप्त समझा जाता था। इस विचार में इस बात की भूल की गयी।

बालक वह सामग्री है जिसके साथ शिक्षक को कार्य करना है। कोई भी कलाकार जिसे अपनी कार्य करने की सामग्री की प्रकृति का ज्ञान न हो, निपुण नहीं समझा जा सकता है। शिक्षक को विषय ज्ञान में निपुणता की ही आवश्यकता नहीं किन्तु बालक की प्रकृति का ज्ञान जो उसके द्वारा शिक्षित होता है, प्राप्त करना अति आवश्यक है।

मनोविज्ञान में व्यवहार के अध्ययन के कारण, शिक्षा एवं मनोविज्ञान में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुआ। शुद्ध अन्तर्दर्शन के द्वारा जिसके ऊपर पहले मनोविज्ञान आधारित किया जाता था शिक्षा शास्त्रियों को अधिक सहायता नहीं पहुंची थी। अन्तर्दर्शन के द्वारा प्रौढ़ जीवन की मानसिक क्रियाओं का विशेष ज्ञान होता था। बालक की अपनी मानसिक क्रियायें थी एवं अपनी प्रकृति के अनुसार वह

उसका प्रयोग करता था। उसकी इच्छा, आवश्यकता, प्रतिक्रिया एवं व्यवहार का अध्ययन प्रौढ़ अन्तर्दर्शन के आधार पर नहीं किये जा सकते थे। बालक एक छोटे प्रकार का मनुष्य नहीं है अपितु क्रमशः एवं विधिवत मनुष्यत्व प्राप्त करने के लिए उसे बढ़ना एवं विकसित होना है। यह कहना कि बालक एक छोटा मनुष्य है उतना ही सत्य होगा जितना यह कहना है कि Tad pole एक मेंढक है। Tad pole मेंढक नहीं अपितु बनने की पद्धति में है। उसी प्रकार बालक मनुष्य बनने की पद्धति में होता है वह मनुष्य का छोटा नमूना नहीं हैं।

व्यवहारिक मनोविज्ञान के द्वारा ही यह दृष्टिकोण प्राप्त हुआ। अर्थात जिस प्राणी की मानसिक क्रियाओं की परीक्षा करनी थी उसके व्यवहार की जांच करना आवश्यक है। शिक्षा मनोविज्ञान में बालकों के मन, असभ्य एवं मानसिक रोगग्रस्त व्यक्तियों के जो पूर्ण रूप से विकसित नहीं है उनके विषय में ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक हो जाता हैं। अन्तर्दर्शन से इस ओर विशेष सहायता प्राप्त नहीं हुई। अन्तर्दर्शन का मनोविज्ञान में एक अत्यन्त ही प्रमुख स्थान है इसमें दो मत नहीं। इसका दोष यह है कि यह केवल मन से सम्बन्ध रखता है एवं आन्तरिक है। इन सब दोषों के होते हुये मनोवैज्ञानिक प्रयोग में अन्तर्दर्शन प्रणाली महत्वपूर्ण है क्योंकि मानसिक रूप में व्यवहार का अनुवाद अन्त में प्रयोगकर्ता के अन्तर्दर्शन पर ही निर्भर होगा।

व्यवहार का यह नवीन मनोविज्ञान शिक्षा शास्त्रियों के लिये महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ है। शिक्षा के जो भी ध्येय हों, प्रत्येक शिक्षक एक ही अन्त के प्राप्त करने में सहमत है अर्थात वे व्यवहार में तथा उन परिस्थितियों को जो उसके निर्माण के लिये आवश्यक हैं उसमें परिवर्तन लाने की चेष्टा करते हैं। शिक्षा सिद्धान्त एवं मनोविज्ञान साथ ही साथ चलते हैं। शिक्षक अपनी कठिनाइयों में मनोविज्ञान की ओर देखता है एवं नवीन समस्या मनोवैज्ञानिकों को समर्पित करता है।

अंग्रेजी के शब्द Education एवं Instruction जिनका हिन्दी में अर्थ शिक्षा से हैं उनमें भिन्नता है। Instruction का अर्थ केवल आदेश सूचना आदि के देने से है 'Education' का अर्थ सम्पूर्ण शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक शक्तियों के सम्पूर्ण विकास में है। शिक्षा अपने विस्तृत रूप में वह पद्धति है, जिसके द्वारा बालक की विभिन्न प्रकृति, संगठित एवं क्रमबद्ध रूप में विकसित

की जा सके। जे०एस० मिल का कहना है कि जो कुछ भी मनुष्य को रूप देने में सहायक है, जिससे वह वही होता है जो है, या वह जो नहीं है उसके होने में बाधा डालता हैं, वह उसकी शिक्षा का एक भाग है। अतः शिक्षा सामाजिक विज्ञान के रूप में जो बालक के शिक्षा एवं प्रशिक्षण से सम्बन्धित है, मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों एवं स्थापित नियमों से लिप्त है तथा वह क्या एवं कैसे करता है उस पर निर्भर है।

अतएव इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि आधुनिक शिक्षा पद्धतियों में मनोविज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है। इतना होते हुए शिक्षा में अनेक समस्यायें हैं जिसका उत्तर मनोविज्ञान के पास नहीं हैं। मनोविज्ञान शिक्षा के ध्येय से सम्बन्धित नही है। क्योंकि यह एक प्रत्यक्ष विज्ञान है आदर्शात्मक विज्ञान नहीं। मनोविज्ञान उपस्थित तथ्यों से कार्य करता है। इसके क्षेत्र में क्या होना चाहिये नहीं आता है। मनोविज्ञान इस प्रश्न का कि शिक्षा क्यों दी जाती है कोई उत्तर नहीं दे सकता। शिक्षा ध्येय, आदर्श, स्तर एवं मूल्यों से घनिष्ठ सम्बन्ध रखती है अपितु ये मनोविज्ञान के क्षेत्र से बाह्य हैं क्यों और क्या का उत्तर दर्शन से प्राप्त हो सकता है। किन्हें एवं कहां व्यक्ति एवं संस्था से सम्बन्धित है। यद्यपि मनोविज्ञान शिक्षा के ध्येय निर्धारित नहीं कर सकता तथापि वह यह बता सकता है कि ध्येय प्राप्ति सम्भव है या असम्भव। कोई शिक्षक विद्यार्थी के आत्म प्रदर्शन की मूलप्रवृत्ति को विध्वंस करने की चेष्टा रखता हो तो मनोविज्ञान यह बता देगा कि वह असम्भव प्राप्त करने की चेष्टा कर रहा है। ड्रेवर का कहना है कि मनोविज्ञान केवल सम्भव ही नहीं बतलाता किन्तु इसके अतिरिक्त यह समझना कठिन होगा कि ध्येय के प्राप्त करने में सफलता प्राप्त हुयी या नहीं। वास्तविक शिक्षक व्यवहार के आन्तरिक स्रोत में परिवर्तन का प्रयत्न करते हैं जिनसे व्यवहार नियन्त्रित होता है। यह सम्भव है कि व्यवहार किसी नियम के अनुकूल हो किन्तु उसकी भावना या तात्पर्यता असंतोषजनक हो। परिवर्तित व्यवहार के अनुवाद के लिये एवं तात्पर्यता की योग्यता का आविष्कार करने के लिये, मनोविज्ञान की सहायता आवश्यक है। शिक्षक अपने ध्येय के प्राप्त करने की पद्धति में मनोविज्ञान से सहायता प्राप्त करता है। हम कैसे शिक्षा देते हैं एक महत्वपूर्ण प्रश्न है क्योंकि यह शिक्षा पद्धति से सम्बन्धित है। मनोविज्ञान शिक्षा का दर्शन प्रदान नहीं करता किन्तु यह शिक्षा के विज्ञान को सामग्री अवश्य प्रदान करता है।

प्राचीन शिक्षा पद्धति में मनोविज्ञान का वह स्थान नहीं था जो आधुनिक शिक्षा में है। इसका विशेष कारण इस विज्ञान की अपरिपक्वता एवं गलत स्थान पर बल देने का था। शिक्षा सिद्धान्त के इतिहास से पता चलता है कि विभिन्न प्रकार का बल, शिक्षा सामग्री, शिक्षक एवं शिष्य पर दिया गया। प्रथम दो सदैव प्रमुख समझे जाते थे। तीसरे पर अधिक बल नहीं दिया जाता था क्योंकि उसे निष्कर्म (Passive) ग्रहणकर्त्ता समझा जाता था जिसकी कोई विशेष विशेषता नहीं थी। कार्यक्रम स्कूल केन्द्रित था, न कि बाल केन्द्रित। बाल विज्ञान की प्रगति के कारण इसमें परिवर्तन हुआ।

इस विषय की प्रमुखता स्वीकार की गयी है कि बालक एक जीवित प्राणी है जो कि अपने नियमों के अनुसार अपने को निर्धारित करता है। मनोविज्ञान ने शिक्षा प्रणाली के दो सिरों की प्रकृति पर प्रकाश डाली, शिक्षक एवं शिष्य के व्यक्तित्व की परस्पर गतिक्रिया, सामूहिक जीवन का प्रभाव एवं शिक्षा कला में आदेश। आधुनिक काल में शिक्षा विज्ञान के तुल्य किसी और सामाजिक विज्ञान ने मनोविज्ञान से लाभ प्राप्त नहीं किया।

शारीरिक शिक्षा से सम्बन्ध :—

मनोविज्ञान का जो सम्बन्ध सामान्य शिक्षा से है वही सम्बन्ध शारीरिक शिक्षा से है क्योंकि शारीरिक शिक्षा सामान्य शिक्षा का पूरक है। सामान्य शिक्षा का जो मनोवैज्ञानिक आधार है वही आधार शारीरिक शिक्षा का भी है क्योंकि दोनों ही शिक्षा हैं। शारीरिक शिक्षा शारीरिक माध्यम का प्रयोग करती है। शरीर के द्वारा शिक्षा में मनोविज्ञान का बहुत बड़ा हाथ है। शारीरिक शिक्षा उन सरल एवं उत्तम उपायों को सिखाना चाहती है जिससे कठिन से कठिन कौशल दिखाया जा सके। कौशल निपुणता एवं मितव्ययता से सिखाया जाना चाहिए। अतएव उन्हें मनोवैज्ञानिक आधार पर सिखाना आवश्यक होगा, जिनमें सीखने के नियमों, उन तथ्यों तथा दशाओं को जिनसे सीखने में सहायता मिलती है एवं सीखने का स्थानान्तर आदि की ओर ध्यान देना होगा। वैज्ञानिक रूप से कार्य करने पर ही भाग लेने वाला अधिक से अधिक लाभ उठा सकता है।

शारीरिक शिक्षा में भी सीखने का तात्पर्य व्यक्ति में परिवर्तन लाने का

है। व्यक्ति के कौशल कार्य के करने की पद्धति में परिवर्तन, किसी आदत का अभ्यास, किसी कार्य को करने की योग्यता प्राप्त करना, किसी वस्तु या विषय की ओर दृष्टिकोण में परिवर्तन करने के भिन्न भिन्न रूप उपस्थित होते हैं। सीखने का वास्तविक अर्थ व्यक्ति के व्यवहार में प्रगतिपूर्ण परिवर्तन लाने का है। इसका अर्थ यह है कि ज्ञान या कौशल, स्कूल या किसी अन्य स्थिति में अपनी चेष्टाओं के द्वारा अर्जित किया गया है। सीखना जीवन पर्यन्त चलता रहता है। जब पुराने व्यवहार नई स्थितियों के उत्तर देने में असमर्थ हो जाते हैं तो एक आवश्यकता का अनुभव हो जाता है। इस दशा को हल करने के लिये नई प्रतिक्रियायें करनी पड़ती हैं। यही सीखना है।

शारीरिक शिक्षा कौशल के सीखने में मनोविज्ञान के तीन सिद्धान्त बहुत अधिक सहायक होते हैं। प्रयत्न एवं भूल, पूर्ण एवं विभाग रीति तथा उपाधि युक्त करना। कौशल के सीखने में प्रयत्न एवं भूल के द्वारा अभ्यास करने के अवसर पर नाड़ी मण्डल में एक मार्ग स्थापित किया जाता है। उचित ज्ञान पूर्ण अभ्यास के द्वारा भूल का निवारण किया जाता है।

उपाधियुक्त रीति के द्वारा सीखने में नियन्त्रण एवं नियमित करने पर बल दिया जाता है। उत्तेजना के कारण प्रतिक्रिया होती है। विभिन्न उत्तेजनाओं के कारण प्रतिक्रियायें होती हैं उन्हें अनुभव के अनुसार विधिवत किया जाता है।

पूर्ण एवं विभाग सिद्धान्त के द्वारा यह ज्ञान प्राप्त होता है कि व्यक्ति पूर्णरूप से एक ध्येय प्राप्त करना चाहता है। इच्छित वस्तु के विषय जितनी अच्छी अभ्यान्तरिक दृष्टि होगी उतनी ही शीघ्रता से कौशल प्राप्त होगा।

नाड़ी मंडल के जटिल यन्त्र व्यक्ति के व्यवहार को नियन्त्रित एवं विधिवत करते हैं तथा यही नाड़ी मांसपेशियां कौशल के सीखने की पूंजी हैं। सीखने के नियम इसमें सहायक होते हैं। मनोवैज्ञानिक तथ्य जैसे ध्येय का पूर्ण ज्ञान, अभ्यास के समय को नियमित रूप से विभाजित करना, सीखने के पठार का ज्ञान, पूर्ण रूप से कौशल सीखना, करने के द्वारा सीखना, सीखने में नेतृत्व का आदेश, परिणाम प्रगति का ज्ञान, सीखने की वस्तु आयु एवं रुचि में समानता, व्यक्तिगत विभिन्नता, सीखने की भावना, सीखने में संतोष, अपने भूल का ज्ञान,

सीखने के अनुकूल वातावरण, दृश्य उपकरण, अधिकता से सीखना, प्रारम्भिक अवस्था में ही भूल का निवारण, सीखने में आत्म निर्भरता आदि शारीरिक शिक्षा में अत्यन्त सहायक हैं तथा इनकी अनुपस्थिति में उत्तम शारीरिक शिक्षा होना असम्भव हैं।

शारीरिक शिक्षक के लिये मनोविज्ञान का महत्व :—

शारीरिक शिक्षक दूसरे अध्यापकों के समान अध्यापक हैं। जिस तरह कुम्हार को अपनी मिट्टी के विषय में जानने की आवश्यकता है उसी प्रकार शारीरिक अध्यापक को भी बालकों की रुचि, विशेषतायें, विकास के मार्ग तथा विधि, मन, भावनाओं इत्यादि को भली भांति जानना है। खेल एक मूल प्रवृत्ति हैं। इसे शिक्षा में कैसे प्रयोग करें तथा जीवन विकास, चरित्र निर्माण इत्यादि में इनका क्या स्थान है केवल मनोविज्ञान के अध्ययन से ही ज्ञात किया जा सकता है।

अध्यापक को अपने विषय में जानना भी आवश्यक है क्योंकि उसे शिष्यों के सम्मुख उदाहरण स्वरूप होना है। शिक्षक ही विद्यालय का आदर्श होता है। कभी कभी मनुष्य समाज के सम्मुख तो कुछ और तथा गुप्त रूप में कुछ और ही होता है। इस प्रकार सामाजिक जीवन तथा वैयक्तिक (गुप्त) जीवन में समानता नहीं हैं। ऐसे पुरुष दो व्यक्तित्व के होते हैं। दोनों व्यक्तित्व में सदैव संघर्ष रहता है और इसका परिणाम बुरा होता है। इससे व्यक्तित्व के व्यवहार का पता चल जाता है। विद्यार्थियों पर इसका प्रभाव बहुत अनुचित होता है। शारीरिक शिक्षा का अध्यापक, विशेष रूप से बालकों के साथ स्वतन्त्रता से कार्य करता है और इस कारण स्वयं पर नियंत्रण न कर सकने के कारण अपने सही रूप का प्रकाशन कर सकता है। यह अवस्था शोचनीय है। अतएव शिक्षक अन्तर्दर्शन के द्वारा अपने को समझ सकता है तथा पवित्र, आदर्शमय जीवन व्यतीत कर बालकों को अत्याधिक लाभ पहुंचा सकता है।

संसार में सफल जीवन व्यतीत करने के लिए यह आवश्यक है कि हम उसको सही रूप में समझ सकें जिनके साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलना है। मनोविज्ञान दूसरे को समझने में बहुत महत्ता रखता है। दूसरों के प्रति कैसा व्यवहार हो, दूसरों को कैसे प्रभावित करें इत्यादि मनोविज्ञान ही बता सकता है।

मनोविज्ञान तथा शिक्षा मनोविज्ञान के द्वारा अध्यापक प्रणाली, विधि, आयु की विशेषता, रुचि का महत्व, सही पाठ्यक्रम, अभ्यास, तैयारी, शारीरिक क्षमता, प्रवृत्तियों की शक्ति तथा परिवर्तन, शासन आदि मुख्य विषयों का सही ज्ञान प्राप्त करता है। यह शारीरिक शिक्षा के अध्यापक के लिये भी अति आवश्यक है। मनोविज्ञान से यह पता चलता है कि मनुष्य अपनी अतृप्त इच्छाओं के कारण असाधारण व्यवहार करता है। कहा जाता है कि प्रायः आधुनिक रोगों का एक मुख्य कारण यह असाधारण जीवन तथा उसके व्यवहार हैं। इसकी चिकित्सा में शारीरिक शिक्षा का भी प्रयोग किया जाता है। अतएव शारीरिक शिक्षा के अध्यापक के लिये मनोविज्ञान अत्यन्त उपयोगी है। मनोविज्ञान के द्वारा हम यह जानते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति के विकास में वंशानुक्रम तथा वातावरण का प्रभाव होता है इसका नियन्त्रण तथा प्रयोग केवल मनोविज्ञान के द्वारा ही होता है। मनोविज्ञान के द्वारा हम व्यक्ति की विभिन्न मानसिक तथा शारीरिक प्रक्रियाओं से अवगत होते हैं।

व्यवसायिक रुचि जानने के लिये यह बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुआ है। शारीरिक शिक्षा में मनोविज्ञान का एक मुख्य स्थान है क्योंकि शिक्षा सम्बन्धी बातों को छोड़कर श्रेष्ठ प्रतियोगिताओं में विजय मनोवैज्ञानिक आधार पर ही सम्भव है।

इस विज्ञान की विभिन्न परीक्षाओं से शारीरिक शिक्षक, व्यवसाय तथा शिक्षा के कार्यक्रम में बहुत लाभ उठा सकता है।

कुशाग्र तथा मन्द बुद्धि बालकों का स्वभाव तथा समस्याओं को समझना, बालक तथा उनके स्कूल से पृथक सम्बन्धों का सही अनुमान मनोविज्ञान के द्वारा ही हो सकता है।

वास्तव में वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन का कोई ऐसा स्थल नहीं है जहां मनोविज्ञान की आवश्यकता न हो। मनोविज्ञान का प्रभाव बालक के उत्पन्न होने से पहले ही उस पर पड़ जाता है तथा सामाजिक वंशानुक्रम के द्वारा वह अपना प्रभाव मृत्यु के पश्चात् भी समाज में छोड़ जाता है जिससे लोग प्रभावित होते रहते हैं।

२

मानसिक विकास

मन

मन का कोई स्थूल रूप नहीं है। यह एक कल्पित सिद्धान्त हैं जिसे उसकी विशिष्ठ क्रियाओं के द्वारा समझते है। मनोविज्ञान की परिभाषा से यह ज्ञात हुआ था कि वह मानसिक रूप में व्यवहार का अनुवाद एवं वर्णन है, अर्थात यह मानसिक रूप का अध्ययन है। यह जानना आवश्यक है कि मनोविज्ञान का यह केन्द्रित विषय मानसिक रूप है क्या ? इस की आवश्यकता विशेषत: इस लिये हुयी कि कभी कभी जीवित प्राणियों का वर्णन मानसिक स्तर पर न करके मशीन के रूप में किया जाता है। जीवित प्राणी विभिन्नता में एकाई है, स्वाधीन स्वचलित एवं अन्त: प्रेरित तथा बढ़ने एवं अपने जाति के पुन:निर्माण के योग्य है, दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है, जीवन स्वयं समायोजित स्वयं प्रचलित स्वयं रक्षित एवं स्वयं नियन्त्रित है। इस प्रकार की कोई वस्तु मशीन में नहीं पायी जाती अत: मशीन का सिद्धान्त भूल है क्योंकि इस के द्वारा जीवन समझा नहीं जा सकता। साधारण से साधारण जीव मशीन से कहीं उत्तम एवं भिन्न है। अत: इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया है कि मन की स्थिति है। मन का अर्थ कभी कभी 'आत्मा' स्वयं 'मैं' आदि शब्दों से किया जाता है। मैकडूगल कहते हैं कि मन की परिभाषा के लिये कहा जा सकता है कि यह मानसिक या तात्पर्य की शक्तियों की संगठित प्रणाली है। मन अन्त विचार का भाव है। यह क्या है?, इसका उत्तर दर्शन से प्राप्त होता है। इसकी परिभाषा नहीं हो सकती। तथापि इसे वह विषय समझा जा सकता है जो व्यवहार का प्रेरक है एवं उसका नियन्त्रण करता है जिसके कारण व्यवहार, व्यवहार के रूप में, न कि मशीन के कार्य के रूप में प्रदर्शित होता है। मैकडूगल के शब्दों में व्यक्ति का मन वह है जो उसके अनुभव एवं व्यवहार के द्वारा अपने को प्रकाशित करता है। मानव मन

के वर्णन के लिये उसके अनुभवों एवं व्यवहारों को इकट्ठा करके उसके मन की प्रकृति एवं बनावट का अनुमान करना पड़ेगा ।

मन के दो मुख्य काल्पनिक सिद्धान्त हैं । चेतना अनुभव या मानसिक क्रिया, तथा (२) अचेतन, मानसिक संस्कार या मन की बनावट ।

प्रथम रूप में अनुभव मनोविज्ञान की आधार भूत कल्पना है । क्योंकि यही सदैव अध्ययन का विषय रहा है । अनुभव चेतना के तीन मुख्य प्रकार हैं, ज्ञानात्माक Cognitive जानने का अनुभव, क्रियात्मक Conative या करने का अनुभव एवं भावात्मक Affective या भाव का अनुभव । व्यक्ति का अनुभव इनमें से किसी एक का शुद्ध रूप में नहीं होता , इनकी पृथक एवं स्वतन्त्र स्थिति नहीं होती । व्यक्ति का अनुभव एक स्थायी वस्तु है तथा ये तीन सिद्धान्त अध्ययन की सुविधा के लिए बना लिए गए हैं ।

निरन्तर क्षणिक एवं परिवर्तित अनुभव के पीछे किसी स्थायी वस्तु की आवश्यकता है, यह स्थायी वस्तु दूसरा रूप है जो मानसिक संस्कार है । यह अनुभव के पीछे एवं उसे नियन्त्रित करता रहता है । मैकडूगल कहते हैं मानसिक संस्कार वह स्थायी प्रगतिशील मन का ढांचा है जिसका अनुमान मन के प्रकाशित अनुभव एवं व्यवहारिक क्रियाओं के द्वारा किया जाता है ।

मन की तीन प्रमुख शक्तियां हैं ।

(१) संचय करने की शक्ति—Power of Conservation

इस शक्ति के कारण भूत, मन में संचय कर लिया जाता है । मानसिक संस्कार में व्यक्तिगत, सामूहिक एवं परम्परागत अनुभव के परिणाम संचय कर लिये जाते हैं । इसका एक उदाहरण स्मृति हैं । नन महाशय इस संचय को Mneme कहते हैं । यह मन की उस शक्ति का नाम है जिसका गुण है विगत विषयों को संचित करना । Mneme स्मृति से अधिक विस्तृत है । स्मृति केवल Mneme को चेतन अवस्था में लाने की स्थिति हैं ।

२ मन का वास्तविक गुण क्रिया है । Essential attribute of

mind is activity इसी के कारण अनुभव एवं व्यवहार नियम्त्रित होता है। इस क्रिया के भिन्न भिन्न नाम दिये गये है। 'Elan vital' 'the life urge' 'The vital principle' .नन इस शक्ति को Horme कहते हैं। यह मन की दूसरी बड़ी शक्ति है।

'Horme' मानसिक संस्कार या अचेतन मन की क्रिया है। जीवन की वास्तविकता का वर्णन करने के लिए इन सिद्धान्तों का आधार लिया जाता है। इसके उदाहरण स्वरूप जीवन में अग्रसर होना, प्रेरणा, चेष्टा, लगे रहना, इच्छा करना आदि है। ये शब्द भाव या इच्छा (Conation) के अन्तर्गत आते है। भाव या इच्छा Horme का प्रदर्शित रूप हैं। यह जीवन के प्रत्येक स्तर पर कार्य करता है। यह व्यक्ति एवं जाति दोनों से सम्बन्धित है।

(३) मन की तीसरी विशेषता संयोग (Cohesion) है जिसमें 'Mneme' तथा 'Horme' दोनों संयोग से कार्य करते हैं। यह मन की वह शक्ति है जिसके द्वारा विषय व्यवस्थित एवं संगठित किये जाते है। मन की सामान्य शक्ति के अतिरिक्त निश्चित एवं ठीक कार्य भी है जिसके द्वारा व्यक्ति किसी वस्तु की ओर आकर्षित होता है तथा उसके प्रति प्रतिक्रियाएँ होती है तथा अनुभव संचय करता है।

मानसिक विकास के नियम

(१) उत्तेजना के द्वारा विकास का नियम Law of Development by stimulation.

जन्मजात प्रवृत्तियाँ जितनी अधिक उत्तेजित की जायें, सब विषयों के समान होने पर वे अधिक शीघ्रता से उत्तेजित की जा सकती है तथा उतना ही शक्ति शाली वह प्रवृत्तियां होती जायेगी।

(२) परिणाम के अनुभव के द्वारा चुनाव Law of selection by experienced result.

सफल एवं संतोषजनक प्रतिक्रिया दुहरायी जाती है। इस नियम के

कारण व्यक्तिगत सरल प्रतिक्रिया में परिवर्तन, दमन, स्थानान्तर किया जाता है। यह निर्णय दुःख को दूर एवं प्रसन्नता को अपनाने के कारण होता है।

(३) आदत के द्वारा निरोध एवं विरोध का नियम Law of inhibition by habit.

प्रथम बार किये हुये कार्य को पुनः करना। आदत एक बार के करने में नही पड़ती किन्तु बार बार करने ही में पड़ती है। आदत मूल प्रवृत्ति की सेवा में अर्जित होती है, प्रथम प्रतिक्रिया के साथ एक भाव उत्पन्न होता है जिसके कारण दूसरे विषयों की तुलना में प्रथम विषय को ग्रहण किया जाता हैं।

(४) अनित्यता का नियम Law of Transiency.

अनेक प्रवृत्तियाँ एक विशेष आयु पर परिपक्वता प्राप्त करती हैं तथा उसके पश्चात निर्बल हो जाती है।

(५) उत्तेजना के स्थानान्तर का नियम Law of transfer of impulse.

अनुभव के कारण किन्हीं दशाओं एवं परिस्थितियों में मूल प्रवृतियाँ उत्तेजित की जा सकती हैं। ये मूल प्रवृत्तियाँ ऐसी स्थिति में उत्तेजित की जाती हैं जो प्रथम दशा की उत्तेजनाओं के परिणाम एवं कारण से बिल्कुल भिन्न होती हैं। दोनों अवस्थाओं में कोई विशेष समानता नहीं होती। यह उच्च कोटि का मानसिक विकास प्रदर्शित करता है।

(६) भाव या संवेग का मिश्रण Law of fusion of feeling & emotions.

प्रारम्भिक संवेग अपने साथ ही दूसरे संवेगों को उत्तेजित कर उनकी संयुक्ति करते हैं जिसके द्वारा संवेगात्मक अनुभव प्राप्त होता है। यह अनुभव प्रारम्भिक संवेग से भिन्न होता है।

(७) व्यवहार की जटिलता का नियम Law of Complication of Behaviour.

यह नं० (६) के पश्चात होता है। भिन्न भिन्न उत्तेजनायें एक ही समय एक ही स्थिति के कारण उत्तेजित होती हैं तथा भिन्न भिन्न संवेग आपस में मिल कर संवेगात्मक अनुभव उत्पन्न करते हैं। यह व्यवहार सदैव जटिल होगा।

परिभाषा

मानसिक विकास भिन्न भिन्न आयु में भिन्न भिन्न होता है। यह व्यक्ति के बढ़ाव ऐवं विकास के कारण होता है। बढ़ाव एवं विकास में अन्तर है। बढ़ाव वजन एवं डील डौल से सम्बधित है तथा विकास रचना के परिवर्तन से। मानसिक विकास उस समय होता है जब मानसिक सामग्री अधिकता से इकट्ठे हो जाती है। केवल सामग्री के इकट्ठे होने से बढ़ाव होगा जिसका अर्थ है मन में स्थित रखना। विकास का अर्थ है इन सामग्रियों का उनकी समानता एवं विभिन्नता में सम्बन्धित करना आदि। ज्ञान की वृद्धि अनेक दृष्टि कोण से देखी जा सकती हैं।

(i) क्रमिक ज्ञान-अप्रत्यक्ष से प्रत्यक्ष ज्ञान Vague to distinct

(i) साधारण से जटिल Simple to Complex

(iii) बाह्य उत्तेजना से आंतरिक विचार External sense to internal thought

(iv) इन्द्रियों से विचार में प्रगति स्थूल से अस्पर्शनीय Sense to thought Concrete to rbsiract

शक्ति का विकास Growth of faculty

(i) भूत की क्रियाओ से निपुणता प्राप्त होती जाती है तथा वह क्रियाएँ सरल ऐवं तीव्र होती जाती है।

(ii) नयी क्रियायें भी सरल हो जायेंगी।

(iii) जटिल मिश्रित एवं कठिन क्रियाओं के करने की योग्यता प्राप्त करना।

शक्ति का विकास क्रम Order of development of faculties

(i) संवेदना के द्वारा
(ii) संवेदना से प्रत्यक्षीकरण
(iii) प्रत्यक्षीकरण से कल्पना
(iv) अस्पर्शनीय विचार

मानसिक विकास का एकत्व Unity of intellectual development

सरल ज्ञान इन्द्रीय उत्तेजना के प्रभाव के द्वारा होता है। उच्च श्रेणी का ज्ञान जो अस्पर्शनीय विचार है वह उसी शक्ति का विस्तृत रूप है। मानसिक विकास के प्रणाली में कोई रोक नहीं है। वह एक लगातार होने वाली वस्तु है। जो सरल से जटिल की ओर जाती है।

शक्ति का विकास एवं अभ्यास Growth and exercise of faculty

अभ्यास के द्वारा मानसिक क्रियायें सबल होती हैं। प्रत्येक अभ्यास से उन्नति होती है विशेष कर उस दिशा में जहाँ वह प्रवाहित होती है।

विकास एवं रखने की शक्ति Growth and retentiveness

मन की प्रत्येक क्रिया ऐक चिन्ह छोड़ जाती है जिसकी पुनरावृति की संभावन' होती है।

विकास एवं आदत Growth and Habit

इन छोड़े हुये चिन्हों के द्वारा उसी प्रकार की क्रिया होती है जिसमें आदत का निर्माण होता है। मानसिक विकास में आदत एक महत्वपूर्ण विषय है। मानसिक शक्ति के पूर्णतया प्रयोग के लिये उच्च प्रकार के संचय करने की रीति अपनाने की आवश्यकता है।

खंडों का योग :–ज्ञान की वृद्धि जटिलता की ओर ले जाती है। इस का अर्थ है कि अनेक तथ्य एक में मिश्रित हैं। ये विचारों के सम्बन्ध के नियम के द्वारा सम्भव होता हैं। इनकी निकटता एवं समानता से सहायता मिलती है।

ज्ञानआत्मक, क्रियात्मक एवं भावात्मक का एकत्व एवं पारस्परिक निर्भरता

व्यक्तित्व के प्रमुख तथ्य आपस में मिले हैं तथा पृथक नहीं हो सकते। किसी ऐक दूसरे को देखा जा सकता है। पृथक दिखायी देते हुये भी वे एक एकत्व में मिश्रित है तथा एक दूसरे पर निर्भर है

विकास के तथ्य Factors in development

(i) आन्तरिक Internal factors इसमें मन की शक्तियाँ है जो सरल एवं आधार भूत मन की योग्यतायें है।

(ii) वाह्य External प्राकृतिक वातावरण Natural environment तथा सामाजिक वातावरण social environment इसके अन्तर्गत आते हैं।

विकास की विभिन्नता Varieties of development.

एक ही प्रकार से विकास की रीति कार्य करती है तथापि व्यक्तियों के मानसिक इतिहास में असंख्य अन्तर होते हैं। दो व्यक्तियों को एक ही प्रणाली कदाचित बिल्कुल एक सा परिणाम नहीं देती।

मन एवं शरीर सम्बन्ध

अंगों के क्रमिक विकास के द्वारा मनुष्य को अंग एवं मस्तिष्क प्राप्त हुआ। अंगों के विकास का अन्तिम परिणाम नाड़ी मण्डल था। 'मन' शब्द से जो अर्थ समझा जाता है वह अंगों के क्रमिक विकास के अन्तर्गत एक नवीन विषय था। 'मन' 'मस्तिष्क' की क्रिया नही है, मन एक अत्यन्त उच्च स्तर क जटिल अविभाज्य की विशिष्ठ क्रिया है। वह शरीर में किसी एक अंग या अंगों के समूह की क्रिया नहीं है अपितु यह पूर्ण व्यक्ति के सामाजिक एवं शारीरिक वातावरण के प्रति,

प्रतिक्रिया की क्रिया है। मनुष्य शरीर या मन नहीं है। मनुष्य की मन एवं शरीर का एकत्व एक विचित्र अनुभव है।

व्यक्तियों के, मन एवं शरीर के प्रति विचार भिन्न-भिन्न रहे हैं। मन शरीर के अन्दर एक वस्तु समझा गया था। मन एवं शरीर पृथक समझे जाते थे। आधुनिक विचार मन एवं शरीर के एकत्व का है। अंगों के परस्पर कार्य का एक्य सम्बन्ध पूर्ण स्थापित है। अत: पाचन क्रिया की दशा के कारण विचार पर प्रभाव पड़ता है। मन शब्द किसी वस्तु को नहीं अपितु व्यक्ति के कार्य को सम्बोधित करता है। अंगों की एकता के अतिरिक्त उन में विशेषता की विभिन्नता है। विभिन्न अंगों में विशेष शक्तियां हैं जो उनके कार्यों पर निर्भर करती हैं।

मन एवं शरीर में घनिष्ट सम्बन्ध है। जब शरीर का सम्पर्क किसी वाह्य वस्तु से होता है तब उस वस्तु का ज्ञान प्राप्त होता है। मन के विचारों को प्रकट करने के लिए शरीर की इन्द्रियों की सहायता ली जाती है। ज्ञान तथा उद्वेगों में शरीर के जो भाग विशेषतय: कार्य करते हैं उन्हें नाड़ियां कहते हैं। ज्ञान तथा क्रियात्मक साधन, दोनों का समन्वय एवं सुसंगठित रूप देने वाला अंग स्नायु मण्डल है।

स्नायु संस्थान

मस्तिष्क एवं स्नायु मंडल के कारण शरीर की अन्य प्रणालियां सरलता एवं सुगमता से कार्य करती हैं। रक्त-परिभ्रमण, श्वास, पाचन तथा गति इन्हीं के कारण सम्भव होती है। ये इन्द्रीय उत्तेजनाओं का समन्वय करती तथा मांस पेशियों और ग्रंथियों के द्वारा उचित प्रतिक्रिया करती हैं। जहां स्मृति की आवश्यकता होती है वहाँ यह चेतना से कार्य करती है तथा जहां भूत के अनुभव की चेतना की आवश्यकता नहीं होती यह अचेतन रूप से स्वचलित प्रकार का कार्य करती हैं। हृदय की गति, मांस पेशियों की निरन्तर सिकुड़न की क्रिया, त्वचा का पसीना आदि कुछ स्वचलित क्रियायें हैं जो निरन्तर चलती रहती हैं तथा स्नायु मंडल से आदेशित एवं नियन्त्रित होती रहती हैं। ये स्वचलित क्रियायें सहज क्रिया Reflex actions कहलाती हैं।

निम्न श्रेणी के जीवों के स्नायु मंडल विकास के प्रारम्भिक स्थिति में केवल कुछ व्यवहार के प्रकार थे जिन्हें Tropisms कहा जाता है। उच्च

श्रेणी के जीव में मूल प्रवृत्तियों का प्रभाव है जो अपने साथ विशेष संवेग उत्पन्न करता है।

नाड़ी मंडल एक अत्यन्त ही जटिल यंत्र है जिसकी तुलना एक जाल से की जा सकती है जो सम्पूर्ण शरीर में बिछा हुआ है। स्नायु मंडल एक टेलीफोन प्रणाली की तरह है जहां मस्तिष्क स्वयं ही अदल बदल- सम्बन्धित एवं संगठित करने वाला स्रोत हैं मस्तिष्क वह गुण ग्रहण करने का केन्द्र है। जहां सब अन्दर आने वाले संदेश चाहे वे चेतन मन में आयें या न आयें, उनका सूक्ष्म विश्लेषण करने के पश्चात पर्याप्त कार्य आरम्भ किया जाता है सुषुम्ना वर्ग की नाड़ी तन्तु मस्तिष्क से संदेश ग्रहण करती और भेजती हैं। ऊपरी सतह की नाड़ियां सुषुम्ना तथा साधारण शरीर तन्तुओं के बीच संदेश भेजती हैं।

स्नायु मण्डल तीन भागों में विभक्त हैं। (१) त्वक नाड़ी मण्डल, (२) केन्द्रीय नाड़ी मण्डल, एवं (३) स्वतंत्र नाड़ी मण्डल।

(१) त्वक नाड़ी मण्डल (Peripheral Nervous System)

त्वक नाड़ी मण्डल दो प्रकार का है अन्तर्गामी Afferent या ज्ञानवाही (Sensory) एवं निर्गामी (Efferent) या गतिवाही (Motor)। इनकी संयुक्ति एक ओर त्वचा एवं माँस पेशियों से तथा दूसरी ओर सुषुम्ना (Spinal Cord) से रहती है। बाह्य उत्तेजना त्वक -नाड़ी मण्डल द्वारा ग्रहण की जाती तथा शरीर की मांस पेशियों पर इसका नियत्रण रहता है।

नाड़ी के मध्य भाग को नाड़ी कोष (Nerve cell) कहते हैं। गाड़ी के एक सिरे को अक्षतन्तु (axon) कहते हैं। तथा दूसरे सिरे को जिसमें एक या अनेक शाखायें होती है ग्राही या वृक्ष तन्तु (Dendrites) कहलाता है।

व्यक्ति की उत्तेजना या आघात को ग्राही तन्तु ग्रहण करते हैं। यह उत्तेजना नाड़ी कोष तक पहुंचायी जाती है। प्रत्येक नाड़ी या स्नायु कोष से दो तरह की शाखायें जुड़ी रहती हैं। एक ग्रहण करने वाली (dendreit) तथा दूसरी संदेश भेजने वाली अक्ष या मुख्य तन्तु (axon) होती है। इस प्रकार प्रत्येक स्नायुकोष में एक कोष एवं उसके अनेकों फैले हुये अक्ष तन्तु तथा ग्राही तन्तु होते हैं। नाड़ी तन्तु, नाड़ी कोष से और उनकी शाखाओं से बने हैं और जोड़ने वाले तन्तुओं से सहारा पाती हैं। नाड़ीकोष रूप तथा

आकृति में भिन्न होते हैं । उनका एक बीज होता है और अनेकों छोटी शाखायें होती हैं। एक नाड़ी कोष तथा उनकी शाखायें नाड़ी मंडल की आधारित इकाई (Unit) है। जिसे स्नायु कोष (Neurone) कहते हैं। अधिकतर मुख्य तन्तु दो खोल से ढके हैं, बाहरी भाग एक पतली झिल्ली है और अन्दर सफेद चर्बी की वस्तु की बनी चमकदार दिखती हैं। चेता तत्व (Nerve Fibers) जो लम्बी शाखायें है उन पर यह चमकदार चर्बी का आवरण, मेदा सावरण Medulary sheath चढ़ा हुआ है। नाड़ी तन्तु भूरी एवं सफेद Gray and white matter वस्तु की बनी होती हैं कोष सदैव भूरा होता है तथा चेता तत्व सदैव सफेद होते हैं। नाड़ी मंडल के भूरे हिस्से में विचार प्रणाली कार्य करती है तथा सफेद हिस्से में केवल चेता तत्व पाये जाते हैं। त्वक नाड़ी मंडल मुख्य तन्तु के बने होते हैं इसी कारण सफेद होते हैं।

नाड़ी तन्तुओं का मुख्य कार्य प्रभावों को ले जाने का है । उच्च श्रेणी की उत्तेजित विशेषता के कारण नाड़ी तन्तु किसी उत्तेजना के प्रति प्रतिक्रिया करती हैं। सही नाड़ी उत्तेजना की प्रकृति ज्ञान नहीं किन्तु साधारण बिजली के करेन्ट के समान होती है।

केन्द्रीय नाड़ी मंडल से निकलने के समय चेता तत्व अपने दो खोल में स्थित गांठ के रूप में बंधती हैं। इसी प्रकार के अनेक गांठ मिल कर त्वक नाड़ी अथवा स्वतंत्र नाड़ी बनाते हैं। नाड़ी मंडल के कार्य तीन प्रकार से समझे जा सकते हैं।

(१) **अनैच्छिक प्रणाली** जो सहवेदना प्रणाली Sympathetic nervous system तथा सहवेदना नाड़ी प्रणाली Para Sympathetic nervous system के रूप में हैं। ये दोनों प्रणालियां एक दूसरे के विरुद्ध है। सह वेदना प्रणाली शरीर में उन कार्य तन्तुओं का प्रेरक है जिनका कार्य संतोष जनक प्रतिक्रिया, उत्तेजना तथा संकट के लिये महत्वपूर्ण है। जैसे इसके द्वारा भय में ज्ञानात्मक तथा संवेगात्मक ज्ञान होता है जिसके द्वारा सहवेदना नाड़ी प्रणाली कार्य करती है। सह-सहवेदना प्रणाली हृदय में प्रवाह तथा मात्रा कम कर देती है, सांस की गहराई तथा चाल रोकती है और आंतों में कार्य रहित रक्त देती है। इन दोनों प्रणालियों के बीच उनका दायित्व और दूसरे अधिक जटिल यंत्र के स्वतः नियन्त्रण का है। जैसे पेशाब करना, मल त्यागना या बच्चा जनना।

(२) **ज्ञानवाही गतिवाहि प्रणाली** The Sensory Motor System ये गति एवं उत्तेजना पर नियन्त्रण करती हैं। मस्तिष्क के दोनों ओर दो बड़े क्षेत्र इससे ही सम्बन्धित हैं। ये क्षेत्र वृहत मस्तिष्क Cerebrum में स्थित हैं। दो बड़े चेता तत्व के गट्ठर वृहत मस्तिष्क के दोनों ओर से मस्तिष्क के तने से होते हुये सुषुम्ना में जाते हैं। जहां ये समाप्त होते हैं वहां मुख्य तन्तु उत्पन्न करते हैं जो कशेरूकाओं के बीच से होकर त्वक नाड़ी बनते हैं। ३१ जोड़ी नाड़ियां हैं जो इस प्रकार निकलती हैं।

(३) **सहज तथा पारस्परिक व्यवहारिक प्रणाली** कोई पृथक एवं चैतन्य नाड़ी समूह नहीं है किन्तु ये न सुलझने वाली रीति से ज्ञानवाही गतिवाही तथा अनैच्छिक प्रणाली से मिश्रित हैं।

स्नायु कोष तीन प्रकार के होते हैं। बोध–सम्बन्धी (Sensory), कर्म-सम्बन्धी (Motor) तथा केन्द्रीय या संघटनक (Coordinaing) स्नायु कोष।

जहां एक नाड़ी की ग्राही तन्तु तथा दूसरी नाड़ी का अक्ष तन्तु समीपस्थ होते हैं उस स्थान को स्नायु सन्धि (Sensory) कहते हैं। स्नायुसंधि के द्वारा किसी विशेष प्रकार की उत्तेजना एक नाड़ी से आकर दूसरी नाड़ी में प्रवाहित हो जाती है। उत्तेजना सर्वदा एक ही ओर प्रवाहित होती है। एक अक्ष तन्तु का सम्बन्ध कई ग्राही तन्तुओं से हो सकता है। इस कारण विभिन्न दिशाओं से आयी हुयी उत्तेजनायें एक नाड़ी के द्वारा ग्रहण की जा सकती हैं तथा वहां से भिन्न भिन्न दिशाओं में प्रवाहित हो सकती हैं। स्नायु संधि स्नायु सम्बन्धी आवेग (Impulses) को केवल एक ही दिशा में जाने देती है। स्नायु संधि उत्तेजनाओं को किसी विशेष दिशा में प्रवाहित करने में सहायक होती है एवं दूसरी ओर जाने में रुकावट डालती है। साधारणतः उत्तेजना उसी ओर प्रवाहित होती है जिस ओर उसका प्रवाह एक बार हो चुका है। आदत सीखना एवं अभ्यास करना आदि इसी नियम के अन्तर्गत आते हैं। स्नायुसंधि के इस कार्य के द्वारा किसी कार्य के सीखने में सरलता लायी जा सकती है। स्नायु-संधि मस्तिष्क एवं सुषुम्ना के एक भूरे पदार्थ में, जो सूक्ष्म भाग के रूप में होते हैं, स्थित हैं।

सहज या उत्क्षेप क्रिया (Reflex action)

त्वचा में चार विभिन्न प्रकार के ग्रहण केन्द्र एक साथ मिले हुये हैं। (१) दबाव डालने वाली वस्तुओं से प्रभावित होने वाले, (२) ठंडी वस्तु के द्वारा उत्तेजित होने वाले (३) गर्म वस्तुओं से उत्तेजित होने वाले (४) किसी भी तीव्र आधात से उत्तेजित होने वाले। चौथे प्रकार के ग्रहण केन्द्र के द्वारा पीड़ा का अनुभव होता है। ग्रहण केन्द्र आंख, नाक, कान, जीभ तथा मांस पेशियों में होता है जिनके द्वारा देखने, सूंघने, सुनने, चखने आदि का ज्ञान होता है। यह ग्रहण केन्द्र अत्यन्त सूक्ष्म अंशों (Tissues) की बनी होती है। स्नायु सम्बन्धी प्रवाह स्नायु तन्तुओं में होकर सुषुम्ना एवं मस्तिष्क तक पहुंचते हैं। इन्द्रियों द्वारा ग्रहण किये हुये उत्तेजना, ज्ञान वाही नाड़ियों के द्वारा सुषुम्ना तथा मस्तिष्क तक पहुंच कर, गतिवाही नाड़ी के द्वारा ग्रहण की जाती हैं तथा उसी के द्वारा शरीर के बाहर जाती हैं। गति वाही स्नायु का सम्बन्ध विभिन्न मांस पेशियों से रहता है जिसके द्वारा क्रिया होती है।

सभी स्नायु सम्बन्धी प्रवाह मस्तिष्क के ज्ञान केन्द्र तक नहीं पहुँचते। कुछ स्नायु सम्बन्धित प्रवाह, विशेषकर संकट की चेतावनी देने वाले स्नायु सम्बन्धित प्रवाह केवल सुषुम्ना तक ही जाते हैं। वहां वे शीघ्र गतिवाही स्नायु के द्वारा मांसपेशियों में पहुँच कर गति प्रवाह कर देते हैं। यह सुषुम्ना के केन्द्र एक प्रकार के स्थानीय आदेश केन्द्र हैं जो तत्कालिक संदेशों का उत्तर देते हैं। इस प्रकार के तत्कालिक प्रतिक्रिया को सहज या उत्क्षेप क्रिया कहते है। त्वक नाड़ी-तंत्र का सम्बन्ध सुषुम्ना से रहता है। अनेक उत्तेजनाएं सुषुम्ना तक पहुँच कर गतिवाही स्नायु के द्वारा मांस पेशियों तक आती हैं तथा शारीरिक क्रिया में परिवर्तित हो जाती हैं। दूसरी उत्तेजनायें सुषुम्ना तक पहुँच कर मस्तिष्क केन्द्र में जाती हैं तथा वहां ज्ञान केन्द्र के किसी भाग को उत्तेजित करती हैं।

सहज क्रिया के उदाहरण, आंखों का तेज रोशनी में बन्द होना, मुंह में किसी चीज को देखकर पानी आना आदि हैं जो त्वक नाड़ी मण्डल द्वारा संचालित होते हैं। लार एवं आंसू का आना, छींकने एवं ऐसे अनेको सहज क्रियायें जीवन में हैं जो लाभकारी हैं। चेतन विचार की अनुपस्थिति में जीवन रक्षा के

लिये ये क्रियायें होती हैं। नाड़ियों मे कुछ छोटी एवं कुछ बड़ी होती हैं। प्रत्येक जोड़ की एक नाड़ी शरीर के दाहिने ओर से तथा दूसरी नाड़ी शरीर के बायीं ओर से आती हैं।

सहज क्रिया के उदाहरण, आंखों का तेज रोशनी में बन्द होना, मुंह में किसी चीज को देख कर पानी आना आदि हैं जो त्वक नाड़ी मण्डल द्वारा संचालित होते हैं। लार एवं आंसू का आना, छींकने एवं ऐसी अनेक सहज क्रियायें जीवन में हैं जो लाभकारी हैं। चेतन विचार की अनुपस्थिति में जीवन रक्षा के लिये ये क्रियायें होती हैं।

सहज क्रिया की विशेषतायें

(१) इसका प्रायः रक्षात्मक रूप रहता है। विचार आदि करने में समय की आवश्यकता होती है। किसी प्रकार की हिचकिचाहट से जीवन का भय हो सकता है। ऐसी अवस्था में सहज क्रिया जीवन के लाभ के लिये होती है।

(२) व्यक्ति की शक्ति के बाहर होती है। सहज क्रिया हो ही जाती है। रोकने की चेष्टा करने पर भी नहीं रुकती।

(३) इसके सीखने या अभ्यास करने की आवश्यकता नहीं होती है।

(४) सहज क्रिया तत्कालिक होती है। उत्तेजना के होते ही प्रतिक्रिया होती है।

(५) सहज क्रिया स्थानीय प्रतिक्रिया है। जिसमें व्यक्ति के स्नायु मंडल का एक छोटा अंश कार्य करता है।

(६) सहज क्रिया की उत्तेजना एक भाग को उत्तेजित करने के अतिरिक्त दूसरे भागों को भी उत्तेजित कर सकती है। छींकने के साथ सम्पूर्ण शरीर में ठंडक, बालों का खड़ा होना, नाक बहना, आंख लाल होना, सिर में ठनक आदि हो सकते हैं। आवेगों का फैलना चुनाव पर निर्भर है। सहज क्रिया सदैव सम्बद्ध रीति से कार्य करती है। मांसपेशियां एक दूसरे की सहायता करती हैं।

(७) आघातों के एकत्रीकरण से वह प्रबल हो सकते हैं। कई बार एक आघात का असर नहीं होता। यदि बार बार हो तो उनका असर होगा।

(८) यदि एक दूसरे के विरुद्ध दो सहज क्रियायें एक ही समय उत्तेजित हो जायें तो एक दूसरे के कार्य में बाधा डालेंगी। ऐसी अवस्था में सम्भव है। कि एक भी क्रिया न हो या एक दूसरे पर विजय प्राप्त कर लें। ऐसा भी होता है कि पहले एक हो तब दूसरी।

(९) प्रतिक्रिया के अवरोध में वह उद्दीपक का कार्य करती है, तथा पहले की अपेक्षा अधिक कार्योद्यत हो जाता है।

(१०) सहज क्रिया के घट जाने के बाद एक स्थिरता का समय आता है जिसमें वह दुहरायी नहीं जा सकती।

सहज क्रिया दूसरी मानसिक प्रतिक्रियाओं से सम्बन्धित है।

(१) **हेतु पूर्वक प्रक्रिया** Purposive Reaction में लाभ या अभिप्राय की उपस्थिति होती है। यह सहज क्रिया से भिन्न है।

सहज क्रिया में बाह्य उत्तेजना होती है किन्तु इसमें उत्तेजना आन्तरित एवं हेतु लिप्त है। उत्तेजना होने पर अनेक प्रकार की प्रक्रिया की सम्भावना होती है किन्तु उनमें से एक प्रक्रिया होती है जो लाभकर है।

सहज क्रिया अचानक एवं तत्कालिक होती है किन्तु हेतु पूर्वक प्रक्रिया कुछ समय तक ठहरती है। इसमें उत्तेजनाओं के द्वारा मन की स्थायी प्रवृति जागृत होती है। यह एक निश्चित लक्ष्य की ओर ले जाती है। हेतु पूर्वक प्रक्रिया दो प्रकार की होती है। एक में अभिप्राय उपस्थित रहता हैं किन्तु विचार नहीं रहता। यह सहज क्रिया के प्रकार का है। दूसरा चेतन विचार के साथ। हेतु-पूर्वक क्रिया में ध्येय होता है तथा उसी ओर अग्रसर होता है।

(२) मूल प्रवृत्यात्मक प्रक्रिया Instinctive Reaction जन्म जात एवं हेतुपूर्वक क्रिया होती हैं। इनमें परिवर्तन सम्भव है। ये सहज क्रिया के सदृष्य एक सी ही होती हैं।

(३) अभ्यासात्मक प्रक्रिया Habitual Reaction आदत एवं सीखने के द्वारा अर्जित होती हैं। अभ्यास पड़ जाने पर सहज क्रिया की तरह होने लगती है। इनमें परिवर्तन सम्भव है। अभिप्राय उपस्थित रहता है।

(४) विचारात्मक प्रतिक्रिया Thoughttul Reaction सोच विचार के पश्चात प्रक्रिया का होना है। आदत इन्हीं के द्वारा सम्भव होती है। पहले कठिनाई होती है किन्तु बाद में सहज क्रिया के सदृष्य हो जाती है।

(५) संवेगात्मक प्रक्रिया Emotional Reaction वह क्रिया है जो प्रबल संवेग के कारण होती है। यह प्रायः अनियमित एवं व्यर्थ क्रिया होती है।

प्रत्येक सहज क्रिया एक विस्तृत मानसिक संगठन का एक छोटा स्थानीय अंग है जिसका मूल्य जीवन सम्बन्धी है। कुछ साधारण सहज क्रियायें जन्म जात होती हैं जैसे आंख की पुतली का छोटा बड़ा होना।

सहज क्रिया जो नियन्त्रित अवस्था में हो उसे नियन्त्रित सहज क्रिया Conditional Reflex कहते हैं। कुत्ते के मुंह में खाना देख कर लार आता है किन्तु खाने के बर्त्तन, खाना देने वाली परिस्थितियों आदि में भी लार आता है। यह नियन्त्रित सहज क्रिया होगी। इसके द्वारा प्रभाव हीन उत्तेजना प्रभावपूर्ण हो जाती है तथा एक उत्तेजना दूसरी उत्तेजनाओं से संयुक्त हो जाती है।

(२) **केन्द्रीय नाड़ी मण्डल** Central Nervous System

केन्द्रीय नाड़ी मण्डल दो मुख्य भागों में विभाजित है। (१) सुषुम्ना (२) मस्तिष्क

(१) **सुषुम्ना**—Spinal Cord

सुषुम्ना में ३१ जोड़ी नाड़ियां आकर मिलती हैं। प्रत्येक जोड़ में एक ज्ञानवाही एवं दूसरी क्रियावाही नाड़ी होती है। सुषुम्ना के बाहर यह स्नायु मिलकर गट्ठर के रूप में होती है तथा इसी रूप में शरीर के अन्तिम भाग तक जाती हैं। उत्तेजना जिनके द्वारा इन्द्रियां प्रभावित होती हैं दो प्रकार से

कार्य कर सकती हैं। वे सुषुम्ना में पहुंच कर सहज क्रिया में परिणित हो सकती है, या वहां से वह मस्तिष्क में पहुंच कर अपने सम्बन्धित भाग को उत्तेजित कर के ज्ञान उत्पन्न करती हैं जिसका सम्बन्ध क्रिया से रहता है। जैसे, यदि शरीर पर कुछ रेंगता हो तो हम शीघ्र ही झटका देते हैं। यह सहज क्रिया के द्वारा हुआ अपितु यदि यह उत्तेजना मस्तिष्क तक पहुंचे तो वहां रेंगने वाले कीड़े का ज्ञान होगा फिर उसे अलग करने की क्रिया होगी।

सुषुम्ना में पहुंचने पर अन्तर्गामी स्नायु के कई एक भाग हो जाते हैं। एक छोटे भाग का अन्त सुषुम्ना में ही हो जाता है तथा बड़ा भाग मस्तिष्क में जाता है। उत्तेजना के मस्तिष्क तक पहुंचने के साथ ही, सुषुम्ना निर्गामी नाड़ियों के द्वारा आज्ञा देकर शरीर की मांस पेशियों को क्रिया के लिये तैयार कर देती हैं। प्रकृति का यह सुन्दर उपाय शरीर रक्षा के लिये है। साधारणतः मस्तिष्क के द्वारा सुषुम्ना के कार्य का समर्थन होता है किन्तु कभी कभी विरोध भी होता है।

कितनी ही बार किसी कटे हुये स्थान को व्यक्ति अपने हाथों से सहज क्रिया के द्वारा दबा देता है तथा किसी प्रकार की विशेष परेशानी नहीं होती। किन्तु जैसे ही वह कटे हुये स्थान की गहराई को देखता है या रक्त की धार को देखता है तो उसकी दशा बदल जाती है। यह दूसरी स्थिति इस कारण उत्पन्न होती है क्योंकि उत्तेजना मस्तिष्क केन्द्र पर पहुंच कर ज्ञान प्राप्त कर लेती है तथा उस कटे हुये स्थान के विषय में विभिन्न प्रकार के विचार उत्पन्न होते हैं। साथ ही दुःख एवं पीड़ा बढ़ जाती है जो उत्तेजना के चारो ओर फैल जाने के कारण होती है।

सुषुम्ना सहज क्रिया का नियन्त्रण करती है तथा मस्तिष्क में होने वाली क्रिया की सहायक होती है।

शरीर की दाहिनी ओर का भाग मस्तिष्क में बायीं ओर से तथा शरीर की बायीं ओर का भाग मस्तिष्क में दाहिनी ओर से नियन्त्रित होता है। क्योंकि ज्ञान वाही एवं क्रिया वाही नाड़ियां जो सुषुम्ना में स्थापित हैं इसी प्रकार मस्तिष्क से सम्बन्धित हैं।

१२ जोड़ी स्नायु मुख एवं गर्दन के विभिन्न अंगों से सीधे मस्तिष्क में आती हैं। जिस स्थान पर स्नायु एक दूसरे को पार करती हैं उसे सुषुम्ना शीर्षक कहते हैं। यहीं सुषुम्ना का अन्त होता है।

हमारे प्रतिदिन के अनेकों कार्य सुषुम्ना द्वारा ही नियन्त्रित होते हैं। आदत एवं सहज क्रिया पर नियन्त्रण इसका मुख्य कार्य है।

सुषुम्ना शीर्षक :—Medulla Oblongata

यह सुषुम्ना का सबसे ऊपरी बढ़ा हुआ भाग है। सुषुम्ना के नीचे के भाग में होने वाली उत्तेजनायें मस्तिष्क में इसी के द्वारा जाती है तथा मस्तिष्क में होने वाली उत्तेजनायें सुषुम्ना के नीचे भाग की ओर जाती हैं। अपने आप से होने वाले कार्य जैसे सांस लेना, पाचन क्रिया, रक्त संचालन आदि इसी के द्वारा नियन्त्रित होते हैं। अन्तर्गामी नाड़ियां जो हृदय या फेफड़े से आती हैं, यहीं आकर मिलती हैं।

(ii) मस्तिष्क Brain

मस्तिष्क के अनेक भाग हैं एवं भिन्न भिन्न नामों से जाने जाते हैं। यहां मस्तिष्क के तीन विशेष भागों का वर्णन है। (१) मस्तिष्क का या संतु तना (brain Stemy) जिसमें सुषुम्ना विस्तृत रूप में ऊपर बढ़ता है तथा मस्तिष्क के अन्दर (Interbrain) अन्त होता है तथा यहां से बढ़ने वाले दो गोलार्द्ध (२) बृहत या बड़ा मस्तिष्क (Cerebrum) (३) लघु या छोटा मस्तिष्क (Cerebellum)।

मस्तिष्क का तना एवं सुषुम्ना दोनों एक साथ मिलकर सम्पूर्ण स्नायु मण्डल का धुरा बनते हैं।

हाथ एवं पैर के सम्पूर्ण स्नायु ऐवं धड़ के अधिकतर स्नायु का सम्बन्ध सुषुम्ना से है जहां शरीर के इन अंगों का निम्न श्रेणी केन्द्र है। हृदय, फेफड़े, पेट एवं सिर तथा मुँह के स्नायु का सम्बन्ध मस्तिष्क के तने से है जहां इन अंगों का निम्न श्रेणी केन्द्र स्थित है। वृहत ऐवं लघु मस्तिष्क के ऊँचे केन्द्र इन निम्न केन्द्रों से सीधे सम्बन्धित हैं। इन्हीं निम्न केन्द्रों के द्वारा ही ये ऊँचे केन्द्र

मांस पेशियों एवं ज्ञानेन्द्रियों या वातावरण से सम्बन्ध रखते हैं। निम्न श्रेणी के केन्द्र मांस पेशियों का सरल समन्वय करते हैं। उच्च श्रेणी के केन्द्र निम्न श्रेणी के केन्द्रों का समन्वय करते हैं तथा इस प्रकार मांस पेशियों में उच्च कोटि का समन्वय प्राप्त करते हैं।

मनुष्य का बृहत मस्तिष्क शेष स्नायु मण्डल से बहुत बड़ा है। खोपड़ी में अधिक स्थान यही लेता है। इसके दाहिने एवं बायें भाग को गोलार्द्ध (Hemispheres) कहते हैं। दाहिना गोलार्द्ध अधिकतर शरीर के बायीं ओर से तथा बायां गोलार्द्ध शरीर के दायीं ओर से सम्बन्धित है। यह इस प्रकार क्यों है इसका आविष्कार अभी तक नहीं हो सका है। वृहत मस्तिष्क आगे से पीछे तक एक तरह के दरार के द्वारा प्रायः दो भागों में बंटा हुआ है। यह दरार वृहत मस्तिष्क के पदार्थ के सतह के थोड़ा अन्दर तक जाती है किन्तु वास्तविक रूप में उसे विभाजित नहीं करती। वृहत मस्तिष्क के बड़े विभाग जिन्हें गोल टुकड़े (lobes) कहते हैं वे भी वास्तविकता में पृथक अंग नहीं हैं क्योंकि वे नीचे मिले हुए हैं। ललाट के अन्दर का सम्मुख गोल टुकड़ा (frontal lobe) पीछे केन्द्रीय दरार तक विस्तृत है, जिसके पीछे पार्श्व गोल खंड (Parietal lobe) तथा उसके पश्चात गोल खंड (Occipital lobe) मस्तिष्क के पिछले हिस्से में स्थित है। बायें गोलार्द्ध Left hemisphere तथा दायें गोलार्द्ध Right hemisphere के बगल में सिलवियस की दरार Fissure of Sylvius है, जो नीचे शंख गोल खंड Temporal lobe को सम्मुख गोल खंड से पृथक करती है। एक और दरार केन्द्रीय दरार के बीच के पास से आरम्भ होकर दोनों गोलार्द्धों के पार नीचे की ओर सिलवियस की दरार तक चली जाती है। इसे रोलैंडो की दरार Fissure of Rolado कहते हैं।

क्रिया वाही क्षेत्र (Motor area) सम्मुख गोल खंड में केन्द्रीय दरार के आगे है। त्वचा एवं मांस पेशियों के ज्ञान क्षेत्र (Somesthetic) area) केन्द्रीय दरार के पीछे पार्श्व गोल खंड में स्थित है। श्रवण क्षेत्र, शंख गोल खंड के ऊपरी हिस्से में स्थित है। दृष्टि क्षेत्र मस्तिष्क के पीछे गोल खंड में स्थित है।

मस्तिष्क के भूरे एवं श्वेत पदार्थ में अन्तर है। भूरे पदार्थ का एक बड़ा

भाग सतह पर पाया जाता है एवं वृहत मस्तिष्क की छाल (Cortex) कहलाता है। यह छाल दरारों के नीचे चारों ओर फैली हुयी है। अन्दर भी भूरा पदार्थ बहुतायत से है।

श्वेत पदार्थ, में स्नायु तन्तु (Nerve Fibre) होते हैं जो भिन्न-भिन्न दिशाओं में जाते हैं। भूरे पदार्थ में स्नायु कोष अपने वृक्षतन्तुओं तथा अक्ष तन्तु के आरम्भ तथा अन्त के साथ पाये जाते हैं। निम्न श्रेणी के केन्द्र भूरे पदार्थ के समूह हैं जो सुषुम्ना में तथा मस्तिष्क के तने में पाये जाते हैं। उच्च श्रेणी के केन्द्र वृहत मस्तिष्क के छाल Cortex में पाये जाते हैं। ५० प्रतिशत मस्तिष्क एवं सुषुम्ना नाड़ी श्वेत पदार्थ हैं तथा ५० प्रतिशत भूरे पदार्थ। श्वेत पदार्थ में स्नायु तन्तु होते हैं जो भूरे पदार्थ के प्रत्येक भाग को सम्बन्धित करता है जैसे कि वाह्य स्नायु में तन्तु होते हैं जो निम्न श्रेणी के केन्द्रों को मांस पेशियों एवं ज्ञानेन्द्रियों से सम्बन्धित करते हैं।

भूरे पदार्थ में जटिल बनावट के स्नायु कोष, वृक्षतन्तु एवं अक्ष तन्तु पाये जाते हैं।

(३) स्वतन्त्र या आत्म नियन्त्रित नाड़ी मण्डल Autonomic Nervous System :—

आत्म नियन्त्रित स्नायु हृदय, रक्त कोष, फेफड़ों, पेट, आंतों, अन्य आन्तरिक अंगों, पसीने की ग्रन्थियों, बालों की मांसपेशियों एवं आंख की वर्ण पटल में जाती हैं। ये चिकनी समतल मांसपेशियों में जाती हैं जो कार्य करने में धीमी है किन्तु आत्मनियन्त्रित हैं। ये ग्रन्थियों में भी जाती हैं। ये आत्म-नियन्त्रित स्नायु अत्यन्त पतले स्नायु तन्तु के बने होते हैं। इनकी उत्पत्ति मस्तिष्क के तने के कोष में होती है। अत: स्वतन्त्र नाड़ी मण्डल केन्द्रीय स्नायु मण्डल या सामान्य स्नायु मण्डल का भाग है। जैसे पहले समझा जाता था, यह कोई पृथक प्रणाली नहीं है। आत्म नियन्त्रित स्नायु मण्डल के तीन भाग हैं। उच्च, मध्यम एवं नीचे का भाग।

(१) ऊपर का भाग या शीर्षणी (Cranial)

ऊपर के भाग की उत्पत्ति मस्तिष्क के तने से होती है। अन्य परिणामों के अतिरिक्त हृदय की गति को धीमा करना, पेट की ग्रंथियों को रसायनिक पदार्थों

के उत्पादन के लिये उत्तेजित करना एवं पेट की दिवारों की मांसपेशियों को पाचन क्रिया के लिये गति देना, मुख्य कार्य है। अंधेरे में आँखों का नियन्त्रण, थूक का आना, फेफड़ों के कोषों का नियन्त्रण आदि इसी के द्वारा होता है।

(२) **मध्य भाग या सहभावी अंग** (Sympathetic)

आत्मनियन्त्रित स्नायु के मध्यम भाग सहभावी स्नायु के बने होते हैं। इनकी उत्पत्ति सीने की उंचाई पर सुषुम्ना में होती है। पेट एवं हृदय पर इनका प्रभाव ऊपर के भाग के विपरीत होता है। सहभावी स्नायु हृदय को उत्तेजित करते हैं, रक्त चाप बढ़ाते हैं, पेट की क्रिया में बाधक होते हैं तथा संवेग की भिन्न भिन्न शारीरिक क्रियाओं में सहयोग करते हैं।

(३) सहभावी स्नायु अपने विस्तृत होने के कारण नीचे के भाग या अनुत्रिका (Sacral) पर फैले हुये हैं। इनकी उत्पत्ति सुषुम्ना के निचले हिस्से में होती है। यह मल मूत्र त्याग करने एवं काम भाव की उत्तेजना में सहायता करता है। सहभावी स्नायु इसके क्रिया का प्रतिरोध करता है।

आत्मनियन्त्रित स्नायु मण्डल का एक मस्तिष्क केन्द्र है जो हाईपोथलमस (Hypothalmus) में है। यह इन्टर ब्रेन (Interbrain) मस्तिष्क के अन्दर का एक स्थान) का भाग है। इन्टर ब्रेन भाव एवं संवेग में महत्वपूर्ण कार्य करता है। अप्रत्यक्ष रूप से आत्मनियंत्रित स्नायु वृहत मस्तिष्क के छाल (Cerebral ortex) से प्रभावित होते हैं। देखा गया है कि केवल विचार करने से ही हृदय की तीव्रता में कमी होने लगती है, मुंह लाल या पीला हो जाता है या पाचन क्रिया में बाधा या प्रोत्साहन होता है।

गिल्टियां या ग्रंथियां (Glands)

स्वतन्त्र नाड़ी मण्डल का सम्बन्ध शरीर में स्थित अनेक ग्रंथियों से रहता है जो शरीर की उपयोगी क्रियाओं का संचालन करती हैं। एन्डोक्रिन ग्रंथियां (Endocrine glands) आन्तरिक स्राव छोड़ती हैं जो रक्त में मिश्रित होती हैं। ये एक या अनेक अन्तः स्राव या हारमोन (Hormone) उत्पन्न करती हैं जिनमें शरीर या किसी अंग की क्रिया को उत्तेजित या शिथिल करने की शक्ति होती है। कुछ ग्रंथियां, अपना पदार्थ नालियों के द्वारा शरीर के किसी विशेष भाग में डालती हैं। यह स्राव शरीर के उस भाग की क्रिया के

लिये ही लाभदायक होता है। जैसे क्लोम (Pancreas) दो प्रकार का स्राव छोड़ती हैं। एक क्लोमिक स्राव पानक्रियेटिक जूस (Pancreatic Juice) है जो ग्रंथि से आंतों में नलिका के द्वारा छोड़ा जाता है जिसके द्वारा पाचन क्रिया को सहायता मिलती है। किन्तु क्लोम रक्त में एक वस्तु इन्सलिन (Insalin) छोड़ती है। यह स्राव रक्त के द्वारा मांस पेशियों में जाता हैं। ग्रंथियां जो सम्पूर्ण शरीर के लिये स्राव उत्पन्न करती हैं वे स्राव, तन्तुओं से रक्त प्रवाह के समय मिश्रित होकर शरीर को लाभ पहुंचाती हैं। इनके द्वारा शरीर का बढ़ाव, शारीरिक चिन्ह एवं विशेषतायें, तथा संवेग के लिये सामग्री का उत्पादन होता है। इसमें नलिका की आवश्यकता नहीं होती अतः इन्हें नलिका विहीन ग्रंथियां (Ductless glands) कहते हैं।

प्रमुख नलिका विहीन ग्रंथियां आठ हैं। (१) पिनियल (Pineal) (२) पीयूष (Pituitary) (३) कण्ठ मणि या चुल्लिका (Thyroid) (४) उप चुल्लिका (Para Thyroid) (५) थाइमस (Thymus) (६) उपवृका (Adrenal) (७) क्लोम (Pancreas) (८) प्रजनन (Gonads)

(१) पिनियल ग्रंथि (Pineal gland)

लघु मस्तिष्क के समीप मस्तिष्क के पीछे पिनियल ग्रंथि स्थित है। शरीर विकास में इसका महत्व है। लिंग भेद के बाह्य चिन्ह को प्रकाशित करने में सहायक है। स्त्री पुरुषों के स्वरों में अन्तर भी इसी के कारण होता है।

(२) पियूष ग्रंथि (Pituitary gland)

यह अधिपति ग्रंथि 'Master gland' कहलाता है क्योंकि इसके हारमोन का नियन्त्रण दूसरी ग्रंथियों पर होता है। यह मस्तिष्क के नीचे लगी हुयी है। इसके दो भाग हैं तथा दोनों से भिन्न भिन्न स्राव निकलते हैं। सामने के भाग से स्राव, चुल्लिका, प्रजनन, उपवृका छाल (Adrenal Cortex) एवं अन्य ग्रंथियों को उत्तेजित करता है। इस स्राव की अनुपस्थित में ये ग्रंथियां तो साधारण रूप से कार्य करती हैं ना ही विकसित होती हैं। सामने की पीयूष शरीर एवं अस्थि वृद्धि को प्रभावित करता है। बाल्यकाल में आवश्यकता से आधिक स्राव उत्पन्न होने पर शरीर देव सा हो जाता है। आवश्यकता से अधिक

कार्य करने के कारण ग्रंथि के थक जाने की सम्भावना होती है अत: डील डौल बड़े वाले व्यक्ति की मांस पेशियों की शक्ति क्षीण हो जाती है एवं मृत्यु शीघ्र हो सकती है। प्रौढ़ अवस्था में अधिक क्रिया होने के कारण नाक, कान, पैर, हाथ आदि मोटे हो जाते हैं। स्राव के कमी के कारण व्यक्ति बौना हो जाता है।

पिछले भाग के स्राव का प्रभाव आंत एवं रक्त वाहिनी नलियों पर पड़ता है। रक्त चाप, रक्त में चीनी का नियन्त्रण इसी के द्वारा होता है। स्राव की कमी के कारण श्वेत.सार वसा में परिवर्तित होते हैं

(३) कंठ मणी या चुल्लिका ग्रंथि (Thyroid Glands)

चुल्लिका ग्रंथि स्वर यन्त्र के नीचे दोनों ओर गले में स्थित है। चुल्लिका अन्त: स्राव Thyroid hormone जिसे थायराक्सिन Thyroxin कहते हैं एक महत्व पूर्ण रस है। इस रस का उत्पादन इसी ग्रंथि के द्वारा होता है। इसका प्रभाव सम्पूर्ण शरीर पर होता है। यह शरीर की वृद्धि एवं उसे शक्ति-शाली करने में उपयोगी है। बालपन में इसकी त्रुटि से शारीरिक एवं मानसिक विकास में कमी रह जाती है। बालक शरीर में दुर्बल एवं मन्द बुद्धि रहता है। बाल्य काल एवं किशोरावस्था में यह अत्यन्त क्रियाशील रहती है। इसके रस में आयोडिन होता है। इसकी कमी से कन्ठ माला (Goitre) हो जाता है। ग्रन्थियां अपने नाप से बहुत अधिक बढ़ जाती हैं। इसकी कमी से बीमारियों की अधिक सम्भावना, अस्वस्थता जननेन्द्रियां एवं युवावस्था के चिन्ह भली भांति विकसित न होना आदि दोष होते हैं। भय तथा क्रोध की दशा में इस रस का उत्पादन आवश्यक मात्रा में नहीं हो पाता। प्रेम एवं उत्साह के संवेगों में यह बढ़ जाता है। इसे औषधि के रूप में कृत्रिम प्रकार से प्रयोग किया जा सकता है। स्राव के अधिक क्रिया शील होने से व्यक्ति असंतुलित, चिड़चिड़ा, तनाव पूर्ण, चपल एवं चिन्तित अवस्था में पाया जाता है। यदि वह बढ़ने की अवस्था में है तो बढ़ान तीव्रता विशेष कर लम्बाई में होती है। इसके द्वारा मानसिक विकास या ज्ञान की वृद्धि का कोई चिन्ह नहीं।

उपचुल्लिका (Para Thyroid)

ये चार होती हैं एवं चुल्लिका के ऊपर नीचे उसके समीप स्थित हैं।

इन के द्वारा शरीर में कैलशियम (calcium) पर नियन्त्रण होता है। इसकी कमी से शरीर में पीड़ा के साथ खिचाव उत्पन्न होता है तथा स्नायु मण्डल अधिक उत्तेजित अवस्था में रहता है। चुल्लिका की तुलना में यह शान्तिपूर्ण प्रभाव रखता है। इसकी अधिकता से शान्तिपूर्ण अवस्था में प्राप्त होती है, मांस-पेशियां ढीली हो जाती हैं एवं सामान्य आलस उपस्थित होता है।

(५) थाइमस ग्रन्थि (Thymus)

यह वक्षोस्थि के ऊपर एवं गर्दन के निचले भाग में स्थित है। इसके कार्यों का सम्पूर्ण ज्ञान अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है। यह पन्द्रह वर्ष तक प्रायः बढ़ती है तद्पश्चात लुप्त हो जाती है। लिंग की वृद्धि से इसका कुछ सम्बन्ध है। शरीर में इसके बने रहने से मानसिक एवं शारीरिक विकास में क्षति होती है।

(६) उपवृका ग्रन्थि (Adernal)

गुर्दों के ऊपरी भाग पर दो उपवृका ग्रन्थियां स्थित हैं जो एड्रिनलीन (Adrinalin) स्राव उत्पन्न करती हैं। इनके प्रत्येक के एक बाहरी हिस्सा छाल, (cortex) तथा एक आन्तरिक हिस्सा गूदा (medulla) होता है। ये दोनों भाग बनावट एवं क्रिया में भिन्न हैं तथा दोनों अपने ही में नलिका विहीन ग्रन्थियां हैं। गूदा या मेडूला (medulla)से उत्पन्न हारमोन एड्रिनलीन कहलाता है एवं cortex से उत्पादित हारमोन कोरटिन (cortin) कहलाता है।

एड्रिनलीन एक अत्यन्त प्रभावशाली हारमोन है। रक्त में थोड़े ही एड्रिनलीन की मात्रा से हृदय की शक्तिशाली तीव्र धड़कन, रक्तचाप में वृद्धि, आंतों तथा पेट की क्रिया का स्थगित होना, फेफड़ों की वायु नली में विस्तृत फैलाव, जिगर से जमा हुये शक्कर का छोड़ा जाना, मांस पेशियों के थकान में देर होना, स्वतन्त्र पसीना एवं आंखों की पुतली का फैलना आदि होता है। यही कार्य आत्मनियन्त्रित स्नायु मण्डल के सहभाव नाड़ियों के द्वारा भी होता है किन्तु अन्तर यह है कि ये शीघ्रता से कम समय के लिए कार्य करते हैं एवं एड्रिनलीन धीरे-धीरे किन्तु अधिक समय के लिए कार्य करता है।

Adreline cortex के अधिक क्रिया के कारण पुरुष या स्त्री में

पुरुषों की विशेषता की अधिकता होती है। स्त्रियों में इसके कारण शरीर की बनावट एवं उभार की सुन्दरता जाती रहती है, आवाज भारी हो जाती है एवं दाढ़ी आ जाती है।

(७) क्लोम ग्रन्थि (Pancreas)

यह ग्रंथिकोष की रूप में क्लोम में स्थित है एवं स्राव का उत्पादन करती है जिसे इन्सोलीन (Insulin) कहते हैं। इन्सोलीन श्वेतसार को जलाकर ताप एवं शक्ति संचारित करता है। इसकी त्रुटि से रक्त में चीनी आ जाती है जिसे मधुमेह (Diabetes) कहते हैं।

प्रजनन ग्रन्थि (Gonads)

लैंगिक इन्द्रियां स्त्रियों की डिम्ब ग्रन्थियां ovaries एवं पुरुष शुक्र ग्रन्थियां testes प्रजनन कोष रज एव वीर्य के उत्पादन के अतिरिक्त उन हारमोन का उत्पादन करती हैं जिनसे व्यवहार एवं बढ़ाव पर प्रभाव पड़ता है परिपक्वता के समय ये लैंगिक हारमोन प्रजनन इन्द्रियों का विकास एवं लैंगिक विशेषता प्रदर्शित करती हैं। इसके अनुपस्थिति में दोनों लिंगों के व्यक्ति नपुंसक हो जाते हैं।

आसन पर नाड़ियों का नियन्त्रण

किसी पंक्ति में खड़ा होना एक सरल किन्तु थकावट का भी काम है। इस क्रिया में अनेक नाड़ियों तथा मांस पेशियों का कार्य सहज तथा पारस्परिक व्यवहारिक नाड़ी प्रणाली के द्वारा होता और स्वयं चलायमान है।

पहले जो व्यक्ति खड़ा है वह जानता है कि वह खड़ा है किन्तु कुछ ही देर में विचार अन्य विषयों पर जाने लगेगा। कड़ी जमीन का दबाव जो उसके पैर के तलवे में होता है भूल जायेगा किन्तु गिरेगा नहीं, वह खड़ा ही रहेगा। नाड़ी उत्तेजना पैरों के तलवों से नाड़ी मार्ग के द्वारा वृहत मस्तिष्क तक नहीं जाता है। उनमें से बहुतों को सुषुम्ना मस्तिष्क के तने, व मस्तिष्क के केन्द्र में भेज दिया जाता है। जो सुषुम्ना से आगे नहीं जाते, मांस पेशियो को सिकुड़ने या ढीला करने की सूचना देते हैं। जो मस्तिष्क के तने की ओर जाती हैं, उन केन्द्रों के द्वारा ग्रहण किए जाते हैं जिन्हें आंख, कान के पीछे संतुलन

करने का अंग, धड़ तथा गर्दन की मांस पेशियां, कंडरा से भी उत्त जनायें प्राप्त होती हैं।

मस्तिष्क के तने के केन्द्र अपने आप सुषुम्ना के पहले भूरे पदार्थ को आज्ञा देने में जो अन्य नाड़ी तन्तुओं के द्वारा पैर की मांस पेशी वर्ग को आदेश तथा सहायता देते हैं कार्यवाही करते हैं। मस्तिष्क के तने से सूचना लघु मस्तिष्क को जाती है उस सूचना के अलावा जो उन बनावटों से, जो पहले बताये गये हैं मिलती है, जैसे सुषुम्ना तथ खुद पैर के तलवे।

सारांश यह है कि सुषुम्ना को कार्य करने की कुछ स्वतन्त्रता उसके सूचना ग्रहण करने के आधार पर है किन्तु इसका नियन्त्रण मस्तिष्क के तने से होता है जिसे अच्छी तरह पूरी सूचना दी जाती है। इसके बाद मस्तिष्क का तना लघु मस्तिष्क से नियन्त्रित होता है जिसके पास सम्पूर्ण शरीर के उपर्युक्त अंगों या बनावट द्वारा जो भी सूचनायें हो सकती है उसकी इच्छानुसार कार्य करने के लिए आती हैं।

शरीर का आसन बिना चेष्टा के सीधा रखने के लिए जो प्रणाली नाड़ी मण्डल करता है उन प्रणालियों से भिन्न नहीं है जो वह दूसरे आसनों के लिए व्यवहार करता है या किसी जटिल गति के टुकड़े देता है। एक दूसरे उदाहरण से समझा जा सकता है कि सहज तथा पारस्परिक व्यवहारिक नाड़ी प्रणाली कैसे ऐच्छिक गति को करने में सहायता देता है।

कोई व्यक्ति खिड़की के प्रकाश में सुई में तागा डालने के लिए आंखों के इशारे से तागे को सुई में डालने के लिए एकाग्रचित्त होता है। पैर, धड़, सिर, गर्दन की अवस्था जैसे बताई जा चुकी है उसी प्रकार नियन्त्रित होती है किन्तु हाथ की अवस्था तथा हाथ और आंख की गति वृहत मस्तिष्क के कार्य का पूर्ण नियन्त्रण करती है। हाथ की अवस्था जो कंधे के सम्बन्ध में है जिसे हाथ का आसन कह सकते हैं वह एक नाड़ी यन्त्र से नियन्त्रित हैं जो चेतना के बगैर जाने कार्य नहीं करता, यदि वह ऐसा न करे तो गड़बड़ी मच जायेगी। क्योंकि ध्यान बट जायेगा तथा हाथ में जो कार्य है उस पर ध्यान पूर्ण रूप से केन्द्रित नहीं होगा।

यह हाथ की अवस्था वृहत मस्तिष्क के द्वारा कार्य के लिए उपयुक्त

समझ कर नियत हो चुकी है ओर कहना चाहिए कि वृहत मस्तिष्क ने साधारण आज्ञा लघु मस्तिष्क तथा मस्तिष्क के तने को दे दी है तथा छोटी छोटी बातें उनके ऊपर छोड़ दी है, इसलिए हाथ, कंधे के जोड़ के ऊपर और कुछ कोहनी के जोड़ पर जमा हुआ है तथा उंगलियां तथा कलाई को स्वतन्त्र गति के लिए छोड़ रखा है।

लघु मस्तिष्क तथा मस्तिष्क का तना पूर्व अनुभव से कार्य की रीति जानते हुए फौरन केन्द्रगामी नाड़ियों की उत्तेजना के द्वारा संधियां, मांसपेशियों तथा कंडरों से नाड़ी हाथ के हिलने के किसी प्रवृत्ति के लिए आता है, सूचित किए जाते हैं। सही करने वाले केन्द्र त्यागी उत्तेजना भेजी जाती हैं जिससे वर्तमान अवस्था रखी जा सके।

मांस पेशियों के कार्य का नाड़ी समन्वय The nervous coordination of muscle Action:—

मांस पेशियां जो ऐच्छिक गति करती है वे प्रारम्भिक प्रेरक (Prime mover) कही जाती हैं। मांस पेशियां जो गति विरोध करती है उनको विरोधी Antagonist कहते हैं।

कुछ गतियाँ स्थिर आधार चाहती हैं जिनके ऊपर उनका कार्य किया जाये। मांस पेशियाँ जो इस प्रकार का कार्य दूसरी मांस पेशियों की सहायता के लिए करती हैं उन्हें साइनारजिस्टस (Synergists) कहते हैं। प्रत्येक गति जो शरीर के किसी अंग के द्वारा किया जाय साईनाजिस्टिक की क्रिया चाहती है जिससे उनका कार्य सही तथा पूर्ण हो।

यह स्पष्ट है कि संतुलित मांस पेशियों की सिकुड़न, और आसन संगठित रूप से सम्बन्धित है, और यह भी स्पष्ट है कि यदि कोई गति उपयुक्त संधि पर न करना हो तो मांस पेशियों की सिकुड़न प्रारम्भिक प्रेरक समूह में ऐसे मिल जायें कि उतनी ही बराबर की सिकुड़न विरोधी मांस पेशियां तत्वों में हो।

मांस पेशियों की सिकुड़न शरीर की गर्मी का एक श्रेष्ठ स्रोत है। मस्तिष्क में एक नाड़ी केन्द्र है जो ताप का नियन्त्रण शरीर में करता है तथा

यह नाड़ी तन्तुओं को प्रभावित कर सकता है, जो मांस पेशियों को आदेश देते हैं तथा क्रियात्मक माँस पेशियां, जब शरीर ठढा रहता है तब सिकुड़न उत्पन्न करती हैं। यही थरथराना है।

मांस पेशियों की तैय्यारी जन्मजात गुण है जो मांस पेशियों के विश्राम से उत्तेजित होती है। मासपेशियों की तैय्यारी नाड़ी के भोजन प्रवाह को नष्ट कर देने से नष्ट हो जाती है। यह नाड़ी रोग की अवस्था में भी अनुपस्थित रहती है।

स्नायु-मांस पेशियों का कौशल Neuro Muscular Skills

क्रिया वाही गति का उद्देश्य शरीर की गतियों को लाभदायक करना एवं कम से कम शक्ति का प्रयोग करना तथा गति में प्रवीणता, सुडौलता एवं सुन्दरता प्राप्त करने का है। यह व्यक्ति के कार्य, खेल तथा उन गतियों से सम्बन्धित है जहां शारीरिक क्रिया आवश्यक है। गति या क्रिया (Motor) केन्द्रीय स्नायु मण्डल से सम्बन्धित है जहां स्नायु उसे मांस पेशियों के साथ सम्बन्धित करते हैं। इन गति वाही स्नायु के उत्तेजित होने से गति सम्भव होती है। इस उत्तेजना के गति वाही या Motor Impulse कहते है।

प्रवीणता से एवं प्रभाव युक्त क्रियावाही गति उसी समय सम्भव हो सकती है जब मांस पेशी एवं स्नायु मण्डल अनुकूलता एवं मेल से कार्य कर सकें। इसके सही रूप से घटित होने पर थकान शीघ्रता से नही आती, प्राकृतिक गति सरलता से सम्पन्न की जा सकती है एवं दैनिक कार्य सुगमता एवं निपुणता से अधिक समय तक बिना कठिनाई के किया जा सकता है।

शारीरिक शिक्षा क्रियाओं में निपुण शारीरिक गति या 'स्नायु मांस पेशियों के कौशल का अर्थ व्यक्ति को वह योग्यता प्रदान करने से है जिसके द्वारा वह कार्य सम्पूर्णता एवं प्रवीणता से सम्पन्न कर सके। इस क्रिया के द्वारा प्रसन्नता प्राप्त होगी। जिस क्रिया में प्रवीणता प्राप्त होती है उसे करने की इच्छा होती है। अत: शारीरिक शिक्षा का यह एक मुख्य उद्देश्य है कि व्यक्ति में जितने भी कौशल उत्पन्न किये जा सकें, किये जायें जिससे उसकी रुचि विभिन्न एवं विस्तृत रहे। इससे केवल व्यक्ति की प्रसन्नता ही नहीं वरना सामूहिक समस्याओं में समायोजन की उन्नति होगी। कौशल से प्राप्त अन्य लाभ,

शक्ति का अल्प व्यय, साहस में सहयोग, गुण एवं व्यक्ति को मान्यता, मानसिक एवं शारीरिक विकास, क्रिया तथा कार्यों में सुरक्षा से भाग लेना, सुडौलता तथा सुन्दरता के भावों का बढ़ना आदि है।

ऐसे आवश्यक गुण एक दिन में सिखाए नहीं जा सकते। इसे अर्जित करने के लिये वर्षों लग जाते हैं। विकास कालीन अवस्था में ही बालक इन गुणों को उत्तम रीति से अर्जित कर सकता है। शरीर का समन्वय इसी समय से आरम्भ होता है। साधारणत: जो कुछ बाल्यकाल में अर्जित नहीं होता उसे फिर अर्जित करना कठिन ही नहीं असम्भव हो जाता है। अत: कौशल का सीखना जीवन के प्रारम्भिक दिनों से ही होना चाहिये क्योंकि इसी समय प्रौढ़ जीवन की नींव पड़ती है। स्वास्थ्य एवं मनोरंजन से भी इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है। व्यक्ति के प्राप्त कौशल के मूल्यों के दृष्टि कोण से यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है, कि उसके व्यक्तिगत खेल, दो व्यक्तियों के बीच के खेल, एवं टीम के खेल में उचित संतुलन रखा जाए।

शरीर तथा गति के बढ़ाव एवं विकास के लिये आयु का वर्गीकरण शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था की शारीरिक एवं गतिवाही बढ़ाव एवं विकास के विभिन्न पक्ष, स्त्री एवं पुरुष की शारीरिक क्रियाओं में अन्तर एवं सामान्य नियम जो बढ़ाव एवं विकास के लिये मानना आवश्यक है इनका पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है।

(विकास की अवस्था एवं विशेषताओं के लिये उस अध्याय को देखिये)

साधारण नियम जो गति एवं शरीर के बढ़ाव तथा विकास के लिये माने जाते हैं, वे हैं, साधारण बालक के लिये दो से ६ घंटे शारीरिक शिक्षा, वंशानुक्रम एवं भोजन के अतिरिक्त मांस पेशियों का प्रयोग, आसन एवं डौल के दोषों के ऊपर ध्यान, बालक की शारीरिक क्रिया आयु के अनुसार शारीरिक कार्य, बड़ी मांस पेशियों का विशेष प्रयोग, बालक के विभिन्न अंगों का पृथक समय पर तथा तीव्रता से बढ़ना, बालक के मानसिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक बढ़ाव एवं विकास का शारीरिक क्रिया के द्वारा उन्नतिशील होना, कौशल सिखाने के लिये परिपक्वता पर ध्यान देना, रोग, उचित भोजन न मिलना एवं व्यायाम की कमी के कारण बढ़ाव एवं विकास में दोष, प्रौढ़ जीवन के अवकास

सदोपयोगिता के लिये कौशल बाल्यकाल में सीखे जाते हैं, शारीरिक शिक्षा की उपयोगिता एवं आवश्यकता प्रत्येक आयु, अवस्था तथा दोनों लिंगों के लिये है।

कौशल सिखाने की सामान्य पद्धति

(किसी शारीरिक प्रवीणता अथवा कौशल को सिखाने की विधि—शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन की पद्धति का अध्याय देखिये)

कौशल की शिक्षा में कुछ मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का अनुसरण करना आवश्यक है। वे हैं, कि सीखने वाला सीखने की तैयारी में हो, जो कौशल सीखना हो उसका सही नमूना जो समझा जा सके सम्मुख प्रस्तुत होना चाहिए, कौशल के विश्लेषित भाग शिक्षक के द्वारा पूर्ण रूप से वर्णित होने चाहिये, कौशल में अभ्यास, अभ्यास के समय शिक्षक के द्वारा सहायक आदेश; दोषों का निवारण एवं अवरोध; उचित रूप से सराहना, अच्छे फार्म (form) पर सदैव ध्यान, दोषों के न होने देने पर, बल न दे कर, उचित रीति से करने पर बल देना, इतना अभ्यास करना जिससे कार्य मशीन की तरह एवं अपने आप होने वाला प्रतीत हो; क्रिया की सरलता से कार्य पर बल देना; अभ्यास का अवसर इस प्रकार हो जिसमें अधिक से अधिक प्रगति कम से कम समय में हो; कौशल में तीव्रता एवं ठीक से कार्य होना एक साथ ही हो जाती हैं तथापि ठीक से कार्य पर सर्व प्रथम बल देना चाहिये; उचित वस्तु एवं सुविधाओं का अभ्यास के लिये होना आवश्यक है; आत्मलोचन; अभ्यास गति की आदत के लिये तथा उसकी निपुणता में रुचि का होना आवश्यक है।

3

मूल एवं सामान्य प्रवृत्तियां

मनुष्य किसी कार्य में अपनी योग्यता के अनुसार सफलता प्राप्त नहीं कर पाता या योग्यता होते हुये भी आशातीत परिणाम प्राप्त नहीं होता है। ऐसी अवस्था में कहा जाता है कि व्यक्ति में उचित प्रयोजन या तात्पर्य Motivation की कमी है। साधारणतः सफलता योग्यता एवं प्रयोजन या हेतु संयुक्ति से ही प्राप्त होता है। तात्पर्य या हेतु की आवश्यकता जीवन के पग पग पर है। प्रयोजन या तात्पर्य Motive एवं कारण (Incentive) में भिन्नता है। प्रयोजन या तात्पर्य आन्तरिक होता है तथा कारण वाह्य होता है। कारण वह ध्येय समझा जा सकता है जिसे अर्थ या तात्पर्य के द्वारा व्यक्ति प्राप्त करना चाहता है।

तात्पर्य एवं उत्तेजना भी एक नहीं है। उत्तेजना के द्वारा एक विशेष प्रतिक्रिया होती है किन्तु तात्पर्य उत्तेजना के घटित होने के पूर्व वर्तमान रहता है। तात्पर्य के द्वारा अनेकों प्रतिक्रिया उत्तेजित हो सकती हैं। भोजनान्वेषणां में भोजन की प्राप्ति कारण है, भोजन पर दृष्टि उत्तेजना उत्पन्न करता है एवं तात्पर्य भूख लगने की अवस्था है।

Woodworth का कथन हैं "A motive, is a state or set of the individual which disposes him for certain behaviour and for seeking certain goals."

तात्पर्य हेतु या प्रयोजन व्यक्ति की वह दशा है या वह इस प्रकार से आयोजित होता है जिसके कारण किसी प्रकार के व्यवहार एवं ध्येय प्राप्ति की रुचि होती है।

तात्पर्य या हेतु (Motive) किसी प्रकार शक्ति का स्त्रोत नहीं होता। इसमें शक्ति की आवश्यकतायें (Needs) होती हैं। जैसे भूख में यह पता चलता है ईंधन की कमी हो गयी है। यह कहा जा सकता है भूख या कोई तात्पर्य शक्ति प्रवाहित करती है तथा किसी दिशा में उसे आदेशित करती है। इस संदर्भ (Context) में तात्पर्य एक चलाने वाली शक्ति (drive) है। मनुष्य की तुलना एक मशीन से की जा सकती है जिसमें उसकी योग्यता मशीन है जिसे किसी प्रकार की अर्थात्मक शक्ति का प्रयोग करके क्रिया शील किया जा सकता है।

तात्पर्य (Motive) या चलाने वाली शक्ति (drive) व्यक्ति की शक्ति प्रवाहित करती है तथा उसे किसी विशेष दिशा की ओर आदेशित करती है।

मनुष्य एवं जानवरों की प्रेरणा, तात्पर्य आदि के देखने से पता चलता है कि वे व्यक्ति की परिपक्वता के कारण उपस्थित होती है तथा ये सीखी नहीं जाती। अनेकों क्रियायें हैं जिनका सीखने से कोई सम्बन्ध नहीं किन्तु उचित समय पर वे प्रस्तुत होती है। इससे इस निष्कर्ष पर पहुंचा जाता है कि ज्ञानात्मक एवं क्रियात्मक क्रियायें पूर्णत: प्रारम्भिक एवं प्राचीन (Primitive) तथा बिना सीखे होने वाली क्रियाओं में से है। इसका यह अर्थ है कि प्रकृति ने मनुष्यों एवं जानवरों को वह शक्ति प्रदान की है जिससे वे अपने वातावरण के सम्पर्क में कार्य कर सकते है। इस प्रकार की शक्ति के कारण वह कच्ची एवं प्रारम्भिक रीति से अपने वातावरण के साथ व्यवहार कर सकता है। इस प्रकार आविष्कार की प्रेरणा केवल एक ज्ञानात्मक एवं क्रियात्मक क्रिया ही नहीं वरन उससे कहीं अधिक प्रतीत होती है। यह वातावरण से परिचित होने की तैयारी है। इस परिचय के द्वारा व्यक्ति सीखना आरम्भ करता है। इसी शक्ति को, जो प्रकृतिदत्त शक्ति है मूल प्रवृति (Instinct) कहते हैं। मूल प्रवृत्ति एक प्रकृतिदत्त व वंश परम्परा से प्राप्त व्यवहार है। Instinct is an innate or inherited Mode of behaviour.—Ross

मैकडूगल महाशय कहते हैं "मूल प्रवृति एक वह प्रकृतिदत्त शक्ति है, जिसके कारण व्यक्ति किसी विशेष प्रकार के पदार्थ की ओर ध्यान देता है तथा

उसकी उपस्थिति में विशेष प्रकार के संवेग या वेदना की अनुभूति करता है, तथा उस पदार्थ से सम्बन्धित विशेष आचरण करता है।

"Instinct is an innate disposition which determines the organism to percieve or pay attention to any object of a certain class and experience in its presence a certain emotional excitment and an impulse to action which finds expression in a specific mode of behaviour in relation to that object" —Mc. Dougal

मूल प्रवृत्ति में ज्ञानात्मक, क्रियात्मक एवं भावात्मक, जो विचार के तीन रूप हैं, सदैव वर्तमान रहते हैं।

जीवित प्राणियों में, जीवन शक्ति, सार्थक जीव वैज्ञानिक रूप में, दो मुख्य कार्य करती है। पहला, स्वयं को जीवित रखना, दूसरा जाति को जीवित रखना। यही दो मुख्य मूल प्रवृत्तियां हैं। इन्हें 'आत्म' तथा 'काम' की मूल प्रवृत्ति कहते हैं। मूल प्रवृत्तियों को विभिन्न समूह में विभाजित किया जा सकता है।

(i) **शक्ति सम्बन्धी :** भोजन अर्जित करना, भय, डर, क्रोध, घृणा आदि।

(ii) **जाति सम्बन्धी :** काम, शिशु रक्षा।

(iii) **सामाजिक जीवन सम्बन्धी :** दूसरों की चाह, हंसना, नम्रता, आत्म प्रदर्शन।

मैकडूगल के अनुसार १४ विशेष मूल प्रवृत्तियां हैं। इनके साथ संवेग भी उत्पन्न होते हैं। संवेग मूल प्रवृत्तियों के साथ आते हैं तथा इन्हीं के द्वारा मूल प्रवृत्तियों की पूर्ति होती है। जब लड़ाई या संघर्ष की मूल प्रवृत्ति के कारण प्रेरित होकर कार्य किया जायेगा तो क्रोध का संवेग होगा।

मूल प्रवृत्ति	**सम्बन्धित संवेग**
१. पलायन Escape	भय Fear
२. युयुत्सा Pugnacity	क्रोध Anger

३. विकर्षण Repulsion	घृणा Disgust
४. पुत्र कामना या सन्तानोत्पत्ति Parental	वात्सल्य Love
५. शरणागत होना Appeal	दुःख Distress
६. भोग Mating	कामुकता Lust
७. जिज्ञासा Curiosity	आश्चर्य Wonder
८. दैन्य Submission	आत्महीनता Negative self feeling
९. आत्म गौरव Self assertion	आत्माभिमान Positive self feeling
१०. सामूहिक जीवन Gregariousness	एकान्तभाव Lonliness
११. भोजनान्वेषण Food seeking	भूख Appetite
१२. संचय Acquisition	स्वत्व Ownership
१३. विधायकता Constructiveness	रचनात्मक भाव creativeness
१४. हास Laughter	आमोद Amusement

मूल प्रवृत्तियों की विशेषतायें :—

१. जन्म जात ।

२. कुछ मूल प्रवृत्तियां जन्म से कार्य करती हैं, कुछ समय पड़ने पर ।

३. इनमें किसी न किसी प्रकार का प्रयोजन तथा उद्देश्य होगा ।

४. इससे अनुभव प्राप्त होते हैं ।

५. यह सबके लिए समान है, इसमें जाति पाति, देश काल इत्यादि का भेद नहीं रहता ।

६. इनमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन सम्भव है ।

७. इनके साथ एक संवेग अवश्य होगा ।

८. प्रत्येक मूल प्रवृत्ति में ज्ञानात्मक, संवेदनात्मक तथा क्रियात्मक अनुभव प्राप्त होता है ।

९ इसके प्रदर्शन में वैयक्तिक भेद नहीं ।

१०. यह कभी नष्ट नहीं होतीं, कम या तीव्र हो सकती हैं ।

११. एक मूल प्रवृत्ति दूसरे की सहायता करती है।
१२. परिवर्तित क्रियाओं में रूप स्थायी होता हैं।

मूल प्रवृत्तियों का परिवर्तन :

समाज के नियमों के अनुसार कार्य करने के लिए मूल प्रवृत्तियों को उनके वास्तविक रूप में नहीं प्रदर्शित किया जा सकता है। इसलिए उनमें परिवर्तन की आवश्यकता हैं। इनका परिवर्तन निम्न प्रकार से किया जा सकता है।

(१) **दमन** (Depression) मूल प्रवृत्तियों को कुछ समय के लिए इस अवस्था में डाल सकते हैं किन्तु वह नष्ट नहीं होती न ही इनका दमन होता है। दमन के परिणाम स्वरूप मानसिक ग्रन्थियां उत्पन्न हो जाती हैं जिनका परिणाम भयंकर होता है।

(२) **विलियन** (Inhibition) इसके द्वारा मूल प्रवृत्तियों को प्रबल होने से रोकते हैं। इसकी दो विधियां हैं। निरोध तथा विरोध।

(i) **निरोध**—में मूल प्रवृतियों को उत्तेजित होने का अवसर नहीं दिया जाता है, यह विचार करते हुए, कि इसके द्वारा यह नष्ट हो जायेगी। यह सत्य है कि वह नष्ट नहीं होती वरना दुर्बलता आ जाती है।

(ii) **विरोध**–में एक मूल प्रवृति को दबाने के लिए दूसरे को उत्तेजित किया जाता है।

(३) **मार्गा-तीकरण** (Redirection) यह विधि सर्वश्रेष्ठ है। इसमें मूल प्रवृत्ति के मार्ग को बदल कर उसे उपयोगी बना दिया है। लड़ाई की प्रवृत्ति में मनुष्यों को समाज की कुरीतियों से लड़ने के लिए शिक्षित किया जाता है। खेल के द्वारा मार्गान्तीकरण संभव है।

(४) **शोध** (Sublimation) यह भी एक श्रेष्ठ विधि है। इसमें एवं मार्गान्तीकरण में विशेष भेद नहीं है। केवल इतना ही अन्तर है कि मार्गान्तीकरण में मूल प्रवृति का क्रियात्मक रूप पहले जैसा ही रहता है केवल उसका उद्देश्य व मार्ग बदल दिया जाता है।

शोध में मूल प्रवृति का क्रियात्मक रूप भी बदल दिया जाता है तथा उसका उद्देश्य उसकी तृप्ति में हीं निहित रहता है। वासना युक्त प्रेम का शोध ईश्वर प्रेम से किया जा सकता है। काम प्रवृति का शोध, बालकों तथा रोगियों की देख भाल में किया जा सकता है।

सहज क्रिया, प्राणियों को आकस्मिक हानियों से सुरक्षित रखने के लिए प्रकृति की देन है। जैसे छीकना, आंसू, लार, पलक झपकाना। यह प्रकृति दत्त होती है और सदैव कार्य के लिए तत्पर रहती है, कार्य में शीघ्रता व समानता होती है, यह अपरिवर्तनशील है।

सहज क्रिया तथा मूल प्रवृत्तियों में समानता है तथापि कुछ अन्तर भी है। प्रत्येक में, मूलप्रवृत्ति एक सी नहीं होती, किन्तु सहज क्रिया एक सी होती है। सहज क्रिया परिवर्तनशील नहीं, मूल प्रवृति है। सहज क्रिया अनजाने में होती है, उसका विरोध नहीं हो सकता। मूल प्रवृत्ति बुद्धि के साथ तथा नियंत्रण में भी संभव है।

संवेग (Emotion)

मनोवैज्ञानिकों द्वारा मानसिक अनुभव के तीन रूप माने गये हैं। ज्ञानात्मक (Cognitive), क्रियात्मक (Conative) तथा भावात्मक (Affective)। किसी वस्तु के विषय को जानना ज्ञानात्मक रूप है, उस विषय से प्रेरित होकर क्रिया करना क्रियात्मक है तथा उससे उत्पन्न सुख या दुख की भावना भावात्मक रूप के अन्तर्गत आती है।

जब व्यक्ति के मन में संवेग उत्पन्न होते हैं तो वह अनेक प्रकार की भावनाओं तथा क्रियाओं का अनुभव करता है। संवेग मन का वह भावात्मक अनुभव है जो मन में प्रचंडता से उत्पन्न होता हैं। जब व्यक्ति में यह भावात्मक रूप उत्तेजित होता है तो उस व्यवहार को संवेग कहते हैं।

संवेग, किसी अवस्था के ज्ञान एवं उसके प्रतिक्रिया के बीच की अवस्था है। संवेग कार्य का मार्ग दर्शन करता है। दूसरे की भावनाओं को प्रभावित करना एक साधारण विषय है जो स्कूल, परिवार, कोर्ट, चर्च, सभा आदि में प्रयोग किया जाता है। कितने संवेग ऐसे हैं जो क्रियात्मक है एवं क्रिया में

तत्कालिक होते हैं। कितने संवेग ऐसे हैं जो क्रिया सम्भव न होने पर उत्पन्न होते हैं। प्रथम, मूल प्रवृति की साधारण क्रिया में उत्पन्न होता है तथा द्वितीय जब सब मार्ग बन्द दिखायी देते हैं। संवेग के मानसिक एवं शारीरिक विशेषता के कारण प्रत्येक प्रचंड़ संवेग में शारीरिक परिवर्तन होता है। संवेग में शारीरिक परिवर्तन आवश्यक है क्योंकि इसी के द्वारा मूल प्रवृति के कार्य में सहायता प्राप्त होती है।

भावना का मनोवैज्ञानिक अर्थ सुख-दुख का अनुभव ही है। रुचिकर संवेदना से सुख प्राप्त होता है। मूल प्रवृत्तियों की पूर्ति से प्रसन्नता होती है।

भाव से संवेग में तीव्रता अधिक होती है फलतः कार्य में भी तीव्रता होती है।

संवेग की विशेषताएं

(१) संवेग वैयक्तिक अनुभव है—प्रत्येक व्यक्ति का भाव तथा अनुभव उसका अपना होता है जो दूसरे से भिन्न होगा और यह उसकी मानसिक विशेषता पर निर्भर करता है।

इसका अध्ययन कठिन है। कई लोग अपने प्रबल भावों को बनावटी रूप में छिपा लेते हैं।

(२) संवेग की मुख्य विशेषता भाव है—प्रत्येक संवेग सुख या दुःख से संबंधित है। प्रत्येक अनुभव में इन दोनों में से एक का होना आवश्यक है। यदि भाव सामान्य स्थिति में रहे तो संवेग की उत्पत्ति नहीं होगी। प्रबल भावों को ही दूसरे शब्दों में संवेग कहा जा सकता है, भाव जितना प्रबल होगा, संवेग में उत्तेजना का उतना ही आधिक्य होगा।

(३) संवेग व्यापक है

प्रत्येक जीव धारी संवेग का अनुभव करता है। संवेग की उत्तेजना तथा प्रकार भिन्न हो सकते हैं परन्तु संवेग का न होना असम्भव है। मस्तिष्क जितना

विस्तृत होगा तथा विचार में जितनी दृढ़ता होगी, उसी मात्रा में संवेग को नियन्त्रित किया जा सकता है। आत्म नियन्त्रण तथा निरीक्षण से संवेग शिथिल होते हैं। संवेगों पर पूर्ण नियन्त्रण भी हानिकारक होता है अतः किसी न किसी प्रकार इनका विकास होना आवश्यक है।

(४) संवेग, क्रियात्मक अवस्था है

संवेगात्मक व्यवहार के लिए किसी प्रकार का भाव, उत्तेजना उत्पन्न कर सकता है। उत्तेजित अवस्था में संवेग के बाह्य चिन्ह दिखाई दे सकते हैं। उत्तेजना के कारण व्यक्ति विशेष प्रकार का व्यवहार करता है।

संवेग का सम्बन्ध मूल प्रवृत्ति से है मैकडूगल का कहना है कि प्रत्येक मूल प्रवृति के साथ एक संवेग होता है तथा मूल प्रवृत्ति पूर्ति के लिए संवेग की आवश्यकता होती है। जेम्स लैंग इस विचार से सहमत नहीं हैं। उनका कहना है कि संवेग केवल शारीरिक परिवर्तन का अनुभव है साधारण विचार के अनुसार ज्ञान-संवेग क्रिया होती हैं। भय होता है तो हम कांपते हैं। जेम्स लैंग के अनुसार ज्ञान-क्रिया-संवेग होता है कांपने के कारण भयभीत होते हैं। ड्रेवर का कहना है कि मूल प्रवृति की क्रिया के लिये संवेग का होना आवश्यक नहीं। यह उसी समय प्रस्तुत होती है जब कार्य में बाधा उत्पन्न होती है। पलायन में भय सर्वदा उपस्थित नहीं होता। उसमें बाधा के कारण भय होता है।

(५) संवेग का आरोपण संभव है

संवेग दृश्य तथा अदृश्य दोनों पदार्थ के प्रति हो सकता है। किसी व्यक्ति के द्वारा संवेग उत्तेजित होने पर उसके अभाव में वह किसी दूसरी वस्तु पर आरोपित हो सकता है।

जैसे घर का मालिक अपनी पत्नी से झगड़ने के बाद अपने नीचें काम करने वालों पर क्रोधित हो सकता है। प्रेम, भय आदि संवेग इसी प्रकार आरोपित हो सकते हैं।

संवेग के साथ शारीरिक परिवर्तन

कहा जा चुका है कि संवेग क्रियात्मक प्रवृत्ति है। इस क्रियात्मक

प्रवृत्ति के कारण शरीर में इन कार्यों के कारण अन्दर तथा बाहर विशेष परिवर्तन होता हैं। क्रोध के संवेग से शरीर कांपने लगता है, चेहरा तमतमा जाता है, आंख लाल हो जाती हैं, हृदय की धड़कन तीव्र हो जाती है, पाचन क्रिया ठीक काम नहीं करती है तथा रक्त का संचालन तीव्र हो जाता है। ऐसी अवस्था में एड्रिनल रस, एड्रिनल ग्रंथि से उत्पन्न होकर रक्त में मिल जाता है जिससे व्यक्ति के अन्तर्गत असाधारण कार्य करने की शक्ति आ जाती है

संवेग दो भागों में विभाजित किए जा सकते हैं।

(१) रचनात्मक संवेग जैसे प्रेम, आनन्द, जिज्ञासा सहानुभूति- कोतूहल, सहयोग तथा भक्ति इत्यादि।

(२) विध्वंसात्मक संवेग–जैसे क्रोध, लोभ, भय ईर्ष्या।

संवेग के उत्पन्न होने से मन में दो प्रकार के विकार होते हैं। एक अस्थायी तथा दूसरा स्थायी। अस्थायी मानसिक विकार उमंग होता है तथा स्थायी विकार स्थायी भाव कहलाता है।

उमंग :–

उमंग में संवेग का प्रभाव थोड़े समय के लिए ही रहता है इस स्थिति में संवेग पुनः आ सकता। व्यक्ति जब क्रोध के सवेग के कारण उमंग में रहता है तो अनायास ही यदि कोई निर्दोष सम्पर्क में आ जाये तो वह पुनः उस निर्दोष व्यक्ति पर क्रोधित हो सकता है। यदि क्रोध की अवस्था में किसी व्यक्ति का काम बिगड़ जाये और उससे कोई साधारण प्रश्न भी किया जाये तो वह फिर उस प्रश्नकर्त्ता पर क्रोधित हो सकता है। एक उमंग अपनी विपरीत उमंग का भी कारण हो सकती है।

स्थायी भाव (Sentiment) :–

जब मन में एक ही प्रकार का भाव बारम्बार उत्पन्न हो तो वह भाव मन में स्थायी हो जाता है, यही स्थायी भाव कहलाता है उदाहरणार्थ, यदि किसी के प्रति बार-बार प्रेम का प्रदर्शन किया जाय तो कुछ समय बाद उस पदार्थ विशेष या व्यक्ति के प्रति प्रेम का स्थायी भाव बन जाता है।

व्यवहार का आन्तरिक नियंत्रण मूल प्रवृत्तियों में है। जीवन के उच्च नियन्त्रण कैसे अर्जित किये जा सकते हैं ?

अर्जित प्रवृत्तियां मूल प्रवृत्तियों के आधार पर बनती है। व्यवहार के अर्जित नियन्त्रण के विषय में पूछे जाने पर हम आदत की ओर संकेत करते हैं किन्तु आधुनिक शिक्षा मनोविज्ञान में हम सम्बद्ध सहज क्रिया या स्थायी भाव के विषय में बात करते हैं।

यहां आदत तथा मूल प्रवृत्तियों में अन्तर देख लेना लाभदायक सिद्ध होगा।

मूल प्रवृत्तियां जन्मजात हैं तथा आदत अर्जित, जिसका अर्थ एक प्रकार का काम उसी रूप में बार बार दोहराना है। आदत का निर्माण मूल प्रवृत्तियों के द्वारा तथा उसकी सेवा में होता है अतः यह कहा जा सकता है कि आदत वह घिसा-पिटा मार्ग है जिसमें मूल प्रवृत्ति स्वयं को प्रकाशित करती है। अतएव व्यवहार की वास्तविक शक्ति आदत नहीं किन्तु मूल प्रवृति है।

हम देखते हैं कि अनुभव अपने पीछे कुछ परिणाम छोड़ता है जो जन्म जात प्रवृत्तियों से मिल कर संवेगात्मक स्मृति का निर्माग करता है तथा यह व्यक्ति की मानसिक बनावट का एक भाव होता है जो भविष्य के व्यवहार को निर्धारित करता है। स्थायी भाव वह मानसिक बनावट है जो भावना ग्रंथि के प्रकार में तो नहीं वरन् अंश में भिन्न है।

साधारण व्यवहार में स्थायी भाव का अर्थ भाव तथा संवेग से है। जब कोई वस्तु, व्यक्ति या विचार किन्हीं संगठित संवेगों के केन्द्र बन जाते हैं तो यही समूह स्थायी भाव कहलाता है।

स्थायी भाव, संवेग, साधारण या जटिल से भिन्न है क्योंकि यह क्रियात्मक प्रेरणा से अधिक निकटतम सम्बन्ध रखना है, साथ ही साथ यह संवेग की अपेक्षा अधिक स्थायी व एकसा रहने वाला है। उदाहरणार्थ हम घृणा का स्थायी भाव कहते हैं किन्तु क्रोध का भाव संवेग कहलाता है। Mc. Dougal महाशय कहते हैं।

"A Sentiment is a System in which a cognitive disposition ; linked with one or more emotional or conative disposition to orm a structural unit that functions as one whole system."

जैसे देश भक्ति के स्थायी भाव में यदि हम देश भक्त हैं अर्थात देश के ाति हमारे मन में प्रेम है, यदि देश की स्वतन्त्रता या उन्नति संकट में है तो हम भयभीत होते हैं, विरोधी पक्ष पर क्रोधित होते हैं, देश के वीरों के साथ सहानु- भूति प्रकट करते हैं, स्वयं के स्वार्थ को उस पर न्योछावर करने को तत्पर रहते हैं तथा उसके भूत तथा वर्तमान वैभव की प्रशंसा करते हैं तो यहां देश ज्ञानात्मक वस्तु है। हम उसके प्रति क्रियाशील होने की चेष्टा करते हैं। स्थायी भाव, विकास का फल है।

व्यक्ति कुछ ही स्थायी भावों के साथ जीवन आरम्भ करते हैं और वे भी उसके व्यक्तिगत जीव वैज्ञानिक आवश्यकताओं से सम्बन्धित रहते हैं। इस प्रगति के अवसर में स्थायी भाव, व्यक्ति या व्यक्तियों, संस्थाओं जैसे परिवार, क्लब, चर्च तथा चित्र, पुस्तक, गहनतम मित्र या अस्पर्शी गुण जैसे न्याय, पवि- त्रता, दया पर स्थापित होता है।

स्थायी भाव अपनी प्रकृति में शक्तिशाली होता है। वह उस प्रेरणा को शक्ति प्रदान करता है जिससे व्यवहार प्रेरित होता है।

स्थायी भाव का जितना अधिक अभ्यास किया जायगा उस वस्तु विशेष पर उतना ही अधिक ध्यान केन्द्रित किया जा सकता है, परिणामतः वह स्थायी भाव शक्तिशाली हो जाता है।

यहां यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि किसी वस्तु के प्रति स्थायी भाव का निर्माण करने में उस वस्तु विशेष की अनुपस्थिति में भी ध्यान नियंत्रित करने की शक्ति का होना आवश्यक है। Drever महाशय के अनुसार :—

"This experience is not an experience at the perceptual level of intelligence but involves the ideati- onal level as well.

स्थायी भाव उत्पन्न करने के लिये दो बातों का होना आवश्यक है :

(१) वस्तु का ज्ञानात्मक ज्ञान ।

(२) वस्तु के प्रति संवेग उत्पन्न करना, तथा उसके ऊपर उनको संगठित करना ।

स्थायी भाव उचित या अनुचित दोनों हो सकते हैं। अनुचित स्थायी भाव मानसिक ग्रंथियों (Complex) के रूप में हो सकते हैं। कभी-कभी व्यक्ति को इस व्यवहार का ज्ञान नही रहता और उसके मन में अन्तर्द्वन्द होता रहता है । इस अवस्था में स्थायी भाव उसकी चेतना से परे रहता है। इसका कारण अचेतन मन का प्रभाव है। इसको मनोविश्लेषण द्वारा दूर किया जा सकता है

असम्मान का स्थायी भाव

स्थायी भाव ऐक दूसरे के नीचे अपनी महत्ता के अनुसार स्वयं को क्रमश: संगठित कर लेते हैं और एक मुख्य स्थायी भाव के अन्तर्गत समाहित हो जाते हैं । इस स्थायी भाव को इस योग्य होना आवश्यक है कि वह अन्य को अपने अन्तर्गत रख सके ।

कोई साधारण स्थायी भाव यह योग्यता नहीं रखता । इस योग्य केवल एक ही स्थायी भाव हैं । वह है आत्मसम्मान का स्थायी भाव जिसमें प्रत्येक मूल प्रवृत्ति तथा स्थायी भाब स्वयं के चारों ओर संगठित होते है। यदि कोई स्वयं को देख कर अनुभव करे कि वह कुछ संवेगों का अनुभवी है तथा कुछ स्थायी भावों का स्वामी है, तो उसमें स्वयं ही एक स्थायी भाव का उद्गम होगा जो उसके मानसिक जीवन में ऐक प्रधान एकत्व का कारण बन जायेगा ।

चरित्र में सुधार लाने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति का आत्म-सम्मान पुन: स्थापित किया जाय ।

यह देख चुके हैं कि किसी वस्तु, व्यक्ति या विचार के प्रति स्थायी भाव उत्पन्न किये जा सकते हैं। चरित्र के सम्बन्ध में नैतिक स्थायी भावों पर विचार करना है । नैतिक निर्माण का अर्थ है नैतिक स्थायी भावों को अर्जित करता है, उस पर ध्यान केन्द्रित करना और उन्हें स्वयं स्थायी भाव में समाहित

कर लेना। स्वयं का स्थायी भाव स्वयं के ही चारों ओर संगठित होता है। अतएव चरित्र का संगठन स्वयं ही होता है। व्यक्ति में मूल प्रवृत्ति तथा स्थायी भाव प्रमुख स्थायी भाव के चारों ओर संगठित होता हैं जो परिपूर्णता कल्पित उदाहरण स्वयं (Ideal self) है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि यह अर्जित प्रवृत्तियों का कुल योग है, एक मानसिक व्यवस्था है, जो चिर कालिक, दृढ़ सर्वदा, व्यवहार प्रेरित करने वाला तथा समाज के पारस्परिक संबंध का निश्चित परिणाम है।

सर्व साधारण का विश्वास है कि चरित्र आदत का एकत्रीकरण है किन्तु आधुनिक मनोविज्ञान इसे एक मानसिक व्यवस्था के रूप में देखता है जिसका निर्माण आत्म सम्मान के स्थायी भाव के अन्तर्गत समाहित स्थायीभावों के उच्च सहयोग तथा संगठन से होता है।

चरित्र केवल शिक्षा तथा प्रशिक्षण का ही परिणाम नहीं है वरन् जन्म जात नियन्त्रण तथा स्वभाव की देन भी है।

कोई भी व्यक्ति उच्च नैतिक चरित्र प्राप्त कर सकता है। स्वभाव की भिन्नता से व्यक्तित्व में भी भिन्नता आ सकती है।

इच्छा (Will)

अपने जीवन के आरम्भ में हम उन्हीं वस्तुओं पर ध्यान केन्द्रित करते हैं जिसमें हमारी रुचि होती हैं। परन्तु उस समय जीवन प्रगति पथ पर होता है और वह पूर्णता प्राप्ति की ओर अग्रसर रहता है। जब जीवन के अनेक पक्षों की ओर जिन पर हमारा विशेष आकर्षण नहीं, ऐच्छिक ध्यान देते हैं तब इसका अर्थ यह है कि हम अपनी इच्छा शक्ति का प्रयोग करते हैं। इच्छा शक्ति क्या है ? यह मस्तिष्क की पृथक शक्ति नहीं जिसे हम अलग कर सकें। जब हम इच्छा शक्ति के प्रयोग की बात करते हैं तो हमारा अभिप्राय यह होता हैं कि व्यक्ति एक संघर्ष की स्थिति में प्रतिक्रिया कर रहा है तथा सम्पूर्ण व्यक्ति अपनी भूत अनुभूतियों के आधार पर अपना निर्णय या चुनाव भविष्य की अभ्यान्तरिक दृष्टि के अनुसार कर रहा है।

इच्छा का अर्थ संकल्प है। सही इच्छा का अर्थ कार्य करने के आदेश

तथा कार्य रोकने की प्रवृत्ति के संतुलन में है। इसमें दूरदर्शिता, मूलप्रवृत्ति तथा स्थायी भाव के मध्य निर्णय करने की चेष्टा सम्मिलित है।

इच्छा शक्ति स्वयं का उच्च संगठन तथा वह स्थायी भाव है जो कार्य करता है। यह संगठन स्वयं शक्तिशाली है।

नैतिक स्थायी भाव तथा मूल प्रवृत्ति के संघर्ष में यह इच्छा निहित है कि मैं स्वयं कार्य, चरित्र या व्यवहार का श्रेष्ठ आदर्श प्राप्त करूँगा जिसमें स्वयं के आदर्श का भाग समझता हूँ, यह चरित्र के कार्य में परिणित है।

मूल प्रवृत्तियों पर विजय देने वाली वास्तविकता कोई गुप्त शक्ति नहीं वरन् स्वयं मूलप्रवृत्तियां ही हैं जिन्हें स्थायी भाव के रूप में संगठित किया गया हैं।

स्थायी भाव की विशेषता

स्थायी भाव जन्म से ही अर्जित नहीं होते हैं। स्थायी भाव जीवन को गतिशील तथा क्रमबद्ध बनाते हैं।

स्थायी भाव में व्यापकता तथा निश्चितता होती है।

आदत तथा चरित्र निर्माण

आदत (Habit)

मूल प्रवृत्तियों की सेवा में आदत का निर्माण होता है। किसी कार्य को बार बार एक ही स्थिति तथा एक ही रूप में करने से आदत बन जाती है। यह अर्जित होती है। यह एक प्रवृत्ति का रूप धारण कर लेती है जिससे कार्य अपने आप ही हो जाता है। यह एक ऐसी मानसिक प्रवृत्ति हो जाती है जो किसी कार्य की पुनरावृत्ति के कारण अनायास ही मस्तिष्क में स्थान ले लेती है।

आदत के लक्षण

समानता—कार्य बराबर एक ही समान होता है।

सुगमता—जो कार्य एक बार किया जा चुका है उसे पुनः करने में सुगमता आ जाती है ।

रोचकता—कार्य करने में आनन्द आता है । ध्यान की स्वतन्त्रता ।

आदत डालने के नियम

(१) दृढ़ संकल्प के साथ आदत के कार्य को शीघ्रातिशीघ्र प्रारम्भ करना ।

(२) किसी प्रकार की शिथिलता न आने पाये ।

(३) किसी विशेष अवसर के लिये रुकना उचित नहीं । हर समय कार्य करने के लिए उपयुक्त है ।

(४) नित्य प्रति अभ्यास

आदत के निर्माण के लिये बाल्यावस्था ही सर्व उपयुक्त है । जिस प्रकार की आदत की आशा की जाए उसी प्रकार के वातावरण में रहना आवश्यक है । आदत आवश्यक तथा उपयोगी हो । बुरी आदतों के प्रभाव से दूर रहना चाहिए ।

चरित्र (Character)

कहावत है कि चरित्र आदतों का समूह हैं । वास्तव में देखा जाये तो आदत चरित्र पर आधारित है । जिस व्यक्ति में सच्चरित्रता की अच्छी-अच्छी आदतें होती हैं उसी को चरित्रवान कहा जाता है ।

आदतों का चरित्र निर्माण में पूर्ण सहयोग होता है । चरित्र का निर्माण वास्तव में स्थायी भाव के कारण होता है अतएव यह एक मानसिक रूप धारण कर लेता है और व्यवहार को प्रभावित करता है । मैक्डूगल, स्थायी भाव के संगठन को ही चरित्र कहते हैं । कभी कभी मानसिक ग्रन्थियों के कारण स्थायी भाव का संगठन नहीं हो पाता है और सदैव मानसिक संघर्ष बना रहता है । ऐसी अवस्था में उचित चरित्र निर्माण नहीं हो सकता है । सही चरित्र निर्माण के हेतु ग्रंथियों का निवारण आवश्यक है साथ ही साथ इसके द्वारा स्थायी भाव का संगठन आवश्यक है ।

चरित्र निर्माण के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि आत्मसम्मान के स्थायी भाव के अन्तर्गत अन्य स्थायी भाव संगठित हो जायें जिससे यह मानसिक रूप धारण कर व्यवहार को नियंत्रित रखे तथा आदेश दे। ऐसी अवस्था में यदि कोई संघर्ष होगा तो व्यक्ति पूर्ण रूप से उस विचार पर संकल्प के द्वारा विजय प्राप्त करेगा और वही कार्य होगा जो आत्म सम्मान के अनुकूल है।

चरित्र विकास की तीन श्रेणियां हो सकती हैं।

(१) वातावरण के द्वारा निर्माण (२) दण्ड तथा पुरस्कार के द्वारा (३) आदर्श तथा आदेश से प्रेरित होकर।

सामान्य प्रवृत्तियां (Genral Tendencies)

मूल प्रवृत्तियों के अतिरिक्त कुछ और भी प्रवृत्तियां हैं जिन्हें सामान्य प्रवृत्ति (General Tendency) कहते हैं। मैकडूगल के विचार से इन दोनों प्रवृत्तियों में विशेष अन्तर यह है कि सामान्य प्रवृत्ति के साथ कोई विशेष संवेग नहीं होता। परिस्थिति एवं दशा के अनुसार उनके साथ एक या अनेक संवेग देखे जा सकते हैं। कभी कभी इन प्रवृत्तियों को समाज सम्बन्धी मूल प्रवृत्ति कहते हैं क्योंकि ये सामाजिक जीवन के विकास में सहायक होते हैं। ये भी जन्मजात होती हैं। एक ही सामान्य प्रवृत्ति से समय समय पर भिन्न भिन्न संवेग हो सकते हैं। सभी व्यक्तियों में यह एक रूप में प्रकाशित नहीं होतीं।

चार सामान्य प्रवृत्तियां हैं, (१) अनुकरण (Imitation) (२) सहानुभूति (Sympathy) (३) संकेत (Suggestion) (४) खेल (Play)

(१) **अनुकरण** (Imitation) :

सामूहिक जीवन की मूल प्रवृत्ति (Gregarious Instinct) से 'अनुकरण' की उत्पत्ति होती है। प्राणी एक दूसरे की क्रियाओं को देखकर उनका अनुकरण करना चाहता है। सामाजिक विकास में इससे अधिक सहायता मिलती है। आदत, व्यवहार, ढंग, भाषा, बोलना आदि अनुकरण के कारण ही सम्भव होते हैं। इस प्रवृत्ति का मुख्य कार्य, दूसरे जैसा करते हैं, वैसा करने का है।

थोर्नडाइक इस विचार से सहमत नहीं हैं। उनके अनुसार सब सीखना अनुभव का परिणाम है। मैकडूगल एवं ड्रेवर अनुकरण के विचार का समर्थन करते हैं।

इसके पांच प्रकार हैं।

(१) सहज अनुकरण (Sympathetic Imitation)

अनेकों बार प्राणी बिना समझे बूझें दूसरे का अनुकरण करता है। एक बालक के रोने से दूसरा बालक भी रोने लगता है।

(२) ज्ञान-क्रियावाही प्रकार का अनुकरण (Ideo Motor type of Imitation)

मस्तिष्क में स्थित विचार अपने आप ही क्रिया में परिणित किये जाते है। यह अनुकरण अधिकतर अज्ञात अनुकरण होता है। जैसे सिनेमा के एक्टर्स का अनुकरण, सरकस के खिलाड़ी का अनुकरण।

(३) स्वाभाविक अनुकरण (Deliberate Imitation)

किसी आदर्श या व्यक्ति का अनुकरण इस प्रकार का अनुकरण है।

(४) अभिनय अनुकरण (Active Imitation)

यह नं० ३ तथा ४ के बीच आता है, किसी कार्य को देखकर बालक उसका अभिनय करते हैं।

(५) सप्रयोजन अनुकरण (Purposive Imitation)

प्रयत्न एवं ध्यान केन्द्रित कर अनुकरण करना जिस कार्य में प्रयोजन है। तैय्यारी, चेष्टा, कठिनाई एवं कष्ट इसमें आवश्यक है।

अनुकरण का एक और प्रकार है जो अपने शुद्ध रूप में है तथा शैशवास्था में ही सम्भव है। यह है अर्थ रहित अनुकरण (Meaningless Imitation)

ड्रेवर महाशय अनुकरण को दो भागों में विभाजित करते हैं। ज्ञात

अनुकरण (Delibarate) तथा अज्ञात अनुकरण (Unconscious) तथा इनके दो उपविभाग करते हैं (१) प्रत्यक्ष अनुकरण (Perceptual Imitation) इसका आरम्भ तत्कालिक होता है। दूसरे को देखते ही अनुकरण करते हैं।

अवधारणी अनुकरण (Ideational Imitation)

व्यक्ति किसी का अनुकरण, घटना स्थल पर नहीं किन्तु दूसरे स्थान पर उसका अनुकरण करता है।

शिक्षा में अनुकरण का विशेष मूल्य है। भाषा, साहित्य तथा एक पीढ़ी का ज्ञान दूसरी पीढ़ी को अनुकरण द्वारा ही प्राप्त होता है। यह सीखने का एक छोटा एवं सरल उपाय है। शिक्षकों को इस बात पर ध्यान देना है कि जिस बात का वे उपदेश देते हैं अपने जीवन में घटित करें क्योंकि बालक उनका अनुकरण करते हैं।

ज्ञान या ऐच्छिक अनुकरण को प्रोत्साहित करना आवश्यक है। इसके द्वारा आत्म प्रदर्शन की सीमा का ज्ञान हो जाता है। कौशल के सीखने में भी यह अत्यन्त लाभदायक है। शारीरिक शिक्षा में सुन्दर गति, समन्वय, समायोजन, सहयोग आदि का अनुकरण व्यक्ति के अपने कौशल प्रगति में तथा अच्छे फार्म 'Form' के प्राप्त करने में अत्यन्त सहायक होंगे। उत्तम प्रदर्शन 'अनुकरण एवं अभ्यास के सहयोग के साथ अति उत्तम परिणाम देगा। कितने लेखकों का विचार है कि अनुकरण से व्यक्तित्व में दोष आ जाते हैं। जीवन में थोड़े अनुकरण की आवश्यकता प्रतीत होती है।

विलियम जेम्स छोटों के द्वारा बड़ों का अनुकरण स्पर्द्धा (emulation) कहते हैं। स्पर्द्धा में कुछ द्वन्द की भावना होती है। अनुकरण करने वाला जिसका अनुकरण करता है उससे आगे बढ़ना चाहता है इसमें आत्म प्रदर्शन की प्रवृत्ति अधिक कार्य करती है। इसके तीन रूप हैं आत्म स्पर्द्धा, अपने आपको बढ़ाने की इच्छा, व्यक्तिगत स्पर्द्धा, किसी व्यक्ति का अनुकरण, सामाजिक स्पर्द्धा, किसी समूह का अनुकरण।

स्पर्द्धा का शुद्ध भाव Healthy Competition से अत्यन्त लाभ

उठाया जा सकता है। इसमें स्पर्द्धा व्यक्ति से नहीं किन्तु उसके गुणों एवं प्राप्त सफलता को प्राप्त करने एवं उससे आगे बढ़ने की होनी चाहिये। ईर्ष्या नहीं होनी चाहिये।

(२) सहानुभूति (Sympathy)

सहानुभूति वह सामान्य प्रवृत्ति है जिसके द्वारा हम दूसरे के सुख दुःख का अनुभव करते हैं। अंग्रेजी शब्द Sympathy दो शब्दों 'सुन' एवं 'पेथोस' ग्रीक से लिया गया है जिनका अर्थ है एक साथ अनुभव करना।

Sympathy is the tendency to experience the feeling and emotions of others immediately on perceiving the nature, expressive signs of these feelings or emotions. —Drever

दूसरे की भावनाओं को प्रत्यक्ष रूप से देखकर उसी प्रकार का अनुभव करना।

वास्तविक सहानुभूति में निःस्वार्थ निष्कपट एवं सामान्य समाज की 'भलाई' की भावना रहती है। इसमें अवस्थाओं के प्रति भाव, उसे समझना, व्यक्ति के स्थान में अपने को रखना, तथा वह कार्य करना जिससे अवस्था की दशा सुधर जाये, होता है।

सहानुभूति सहज एवं विचार पूर्वक हो सकती है। सहानुभूति में यह आवश्यक नहीं है कि ज्ञान पूर्वक ग्रहण की जाए। यह स्वयं आ जाती है तथा अक्रियात्मक रूप धारण करती है।

कुछ लेखकों का कहना है कि सहानुभूति मानव प्रकृति की निर्बलता है। किन्तु समाज की उन्नति एवं बालक के संवेगात्मक विकास में इसके प्रभाव को भुलाया नही जा सकता।

(३) संकेत (Suggestion)

संकेत उस प्रणाली को सम्बोधित करता है जिसके द्वारा एक व्यक्ति किसी बात पर विश्वास करता तथा उसके अनुसार कार्य करता है, यद्यपि उसके प्रति

उसके पास कोई विशेष कारण नहीं होता। यह केवल किसी व्यक्ति के कहने या प्रभाव के कारण होता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह अचेतन होता है।

"A process of communication resulting in the acceptance with Conviction of the communicated proposition in the absenoe of logically adequate gronuds for its acceptance"

यह प्रवृत्ति सबों में पायी जाती है किन्तु सांकेतिक प्रभाव भिन्न भिन्न व्यक्तियों पर भिन्न भिन्न होता है। संकेत शब्द एवं क्रिया दोनों के द्वारा हो सकती है।

संकेत कुछ तथ्यों तथा दशाओं पर निर्भर है।

(i) आयु (Age) बालक प्रौढ़ों से अधिक संकेत के द्वारा प्रभावित होते हैं।

(ii) स्थापित विचारों का ज्ञान (knowledge of settled Conviction)

(iii) मानसिक स्थिति (Brain Coditions)

(iv) संकेत का साधन (Nature & Source of Suggestion)

(अ) **श्रद्ध** (Prestige) के कारण यह सरलता से होता है बड़ों के द्वारा छोटों का संकेत। शिक्षक के द्वारा शिष्यों का। सर्वदा संकेत हानि कारक होगा। बालकों को स्वतंत्र विचार का अवसर देना चाहिये।

(ब) **समूह** (Mass)

व्यक्ति समूह से प्रभावित होता है। स्कूल, कक्षा, खेल के मैदान आदि में यह कार्य करता है।

(स) **विपरीत** (Contra Suggestion)

अनेक बार व्यक्ति संकेत को ग्रहण नहीं करते और उसके विपरीत भी कार्य करते हैं।

(द) आत्म-निर्देश (Auto Suggestion)

अपने आप अपने को संकेत करना।

(४) खेल

खेल कोई साधारण घटना नहीं है तथा इसे कार्य से भिन्न करना सदैव सरल नही होता। खेल की अनेक महत्वपूर्ण तथा रुचिकर व्याख्याएं दी गयी है।

खेल एक सामान्य प्रवृत्ति है जो उच्चकोटि के समस्त चेतन प्राणियों में पायी जाती है। पशु पक्षी भी खेलते हैं। खेल में स्वतन्त्रता तथा आनन्द का अनुभव होता है।

बालक जन्म से ही खेलता है और जैसे-जैसे जीवन विकसित होता है वह खेलता है किन्तु खेल के प्रकार भिन्न हो जाते हैं।

"Play is joyful spontaneous creative activity in which man finds his fullest self expression" Ross.

रास महाशय का कहना है "खेल वह स्वेच्छा पूर्वक होने वाली स्व-संचालित एवं आनन्द पूर्ण क्रिया है जिसमें व्यक्ति को आत्माभिव्यक्ति का पर्याप्त अवसर मिलता है।

खेल की प्रवृत्ति के अभाव में हमारी शारीरिक और मानसिक शक्तियों का विकास सम्भव नहीं है। खेल का उद्देश्य खेल में ही निहित रहता है। खेल व्यक्तिगत तथा सामूहिक दोनों प्रकार का हो सकता है।

खेल की विशेषताएं :—

खेल में आनन्द की उपस्थिति है। आत्म स्फूर्ति से किये गए कार्य में आनन्द का अनुभव होता है। खेल के परिश्रम में मनुष्य आत्म स्वतन्त्रता तथा उसके द्वारा आनन्द का अनुभव करता है।

खेल में स्वेच्छा की प्रमुखता होती है। वास्तविक खेल किसी भय या बाह्य शक्ति के प्रभाव के कारण नहीं हो सकता। आनन्द, उत्साह, परिश्रम,

प्रसन्नता, स्वतन्त्रता इत्यादि गुण जो खेल के हैं वे इच्छा पूर्वक खेलने ही से हो सकता है। खेलने की भावना स्वाभाविक तथा आन्तरिक है इसकी प्रेरणा भी मन से ही मिलती है।

खेल में सक्रियता:—खेल में किसी न किसी प्रकार की क्रिया अवश्य होती है। क्रिया के रूप तथा प्रकार में भिन्नता हो सकती है। खेल देखना खेल नहीं कहा जा सकता। खेल में सक्रियता से भाग लेना आवश्यक है।

खेल में आत्म प्रकाशन:—खेल में व्यक्ति इच्छानुसार कार्य करता है क्योंकि वह स्वतन्त्र है।

खेल के लक्षण— खेल का ध्येय खेल के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। खेल केवल खेल के लिए खेलते है।

खेल में विशेष वाह्य लक्ष्य न होते हुए भी नियमितता होती है। खेल में कुछ दायित्व हैं जो स्वयं बनाये जाते हैं तथा उनका पालन पूर्ण रूपेण किया जाता है।

खेल में आत्म स्फूर्ति उत्पन्न होती है। खेल स्वतन्त्रता से होता हैं किसी वाह्य दबाव से नहीं। खेल में प्रसन्नता तथा आनन्द प्राप्त होता है, परिश्रम जितना भी कठिन हो आनन्द आता है, थकान नहीं मालूम पड़ती, बालक के खेलों में कल्पना की प्रबलता होती है।

खेल के सिद्धांत

(१) अतिरिक्त शक्ति का सिद्धान्त (Surplus energy theory)

जर्मन कवि शिलर ने इस सिद्धान्त की स्थापना की। हरबर्ट स्पेन्सर ने इसका समर्थन किया। उनका कहना है कि खेल अतिशय शक्ति का व्यवहार है। अनेक जाति के बालकों पर कोई दायित्व न होने के कारण उनमें आवश्यकता से अधिक शक्ति एकत्रित हो जाती है, यह अतिशय शक्ति खेल में प्रयुक्त होती है।

इसको एक सेफ्टी वाल्व के समान समझा जाता है जिसके द्वारा भाप आवश्यकता से अधिक जमा हो जाने पर निकाल दी जाती है। यह उदाहरण पार्शिव जगत से लिया गया है। इसके द्वारा व्यक्ति की मानसिक तथा आत्मिक शक्ति के द्वारा प्राप्त लाभ का स्पष्टीकरण नहीं होता। इसके अतिरिक्त इंजन से निकली भाप द्वारा हम यह कभी भी सोच नही सकते कि इंजन को पहले से कुछ उत्तम बनाया जा सकता हैं किन्तु खेल के द्वारा यही होता है। खेल के द्वारा बढ़ता हुआ व्यक्ति अपनी शारीरिक, मानसिक तथा नैतिक शक्ति को प्राप्त करने में सहायता प्राप्त करता है। खेल का यह सिद्धान्त उपयुक्त नहीं है।

खेल, रूप रहित शक्ति निकालने की अवस्था न होकर, क्यों भिन्न-भिन्न रूप ग्रहण करता है, यह सिद्धान्त इसे स्पष्ट नहीं कर पाता है। जब हम थक चुके होते हैं तो क्यों खेलते हैं।

(२) मनोरंजन का सिद्धान्त (Recreation theory)

बर्लिन के लाजरस ने इस सिद्धान्त को जन्म दिया। खेल पूर्ण प्राप्ति करता है। जब व्यक्ति शारीरिक तथा मानसिक रीति से थक जाता है तो वह मनोरंजन या दिल बहलाव करता हैं। यह परिवर्तन या क्रिया, थकावट की विषनाशक औषधि के समान काम करता है।

यह सिद्धान्त खेल के केवल एक पहलू को स्पष्ट करता है किन्तु बालकों तथा जानवर के बच्चों के अनेक प्रकार के खेलों को स्पष्ट नहीं करता।

(३) पूर्व अभिनय या जीवन की तैयारी का सिद्धान्त (The antici patory or practice theory.)

यह मैलब्रान्ख के द्वारा प्रस्तावित किया गया था तथा काल ग्रूस ने इसे विकसित किया।

इस सिद्धान्त से ज्ञात होता है कि केवल उच्च कोटि के चेतन प्राणी खेलते हैं। उच्च वर्ग के प्राणियों के बालक, जन्म के समय असहाय होते है, तथा कुछ समय तक अपूर्ण रहते हैं। इस समय वह माता पिता पर निर्भर

करते हैं। यह अपूर्णता का समय वह खेल में व्यतीत करते हैं। खेल के रूप जो व्यवहार में आते हैं उनमें जीवन के गम्भीर कार्यों का ज्ञान होता है तथा उन्हीं कार्यों का अभ्यास होता है। जैसे बिल्ली के बच्चे हिलती हुई वस्तु के पीछे दौड़ते हैं। कुत्ते के बच्चे आपस में लड़ते हैं।

बच्चों के रचनात्मक खेल, घर, किला, गाड़ी बनाना, लड़ाई के खेल जैसे कुश्ती, लड़कियों का गुड़िया का खेल, स्पष्ट करते हैं कि भविष्य की प्रौढ़ अवस्था की तैयारी हो रही है।

ग्रूस के अनुसार खेल का निचोड़ उसकी जीव वैज्ञानिक उपयोगिता में हैं। मूल प्रवृत्तियाँ यहां क्रियाशील होती है इससे पहले कि वह जीवन के गम्भीर कार्यों में आवश्यक हो। खेल प्राणियों के भविष्य का पूर्वाभिनय करता हैं। इस सिद्धान्त में महत्वपूर्ण सत्यता है जैसे जन्म के समय असहायता, अपूर्णता का समय आदि।

खेल या ज्ञान मूल प्रवृत्तियों के ढाले जाने पर निर्भर है, जो ज्ञान पूर्वक व्यवहार की कच्ची सामग्री है, जिसके रूप धारण करने के लिये अवसर की आवश्यकता है। यह अवसर अपूर्णता के समय प्राप्त होता है।

बुद्धि प्रकृति की शिक्षा देने की रीति है। इस अर्थ में कि बालकों को वातावरण के अनुकूल होना पड़ता है। अतएव खेल के द्वारा इनकी शिक्षा की आवश्यकता है क्योंकि जन्म के समय असहायता, मूल प्रवृत्तियों को ढांचे में ढालने की संभावना, समय, अपूर्णता का अवसर विधि, खेल ही है। यह पग, प्राणी जगत में साथ ही साथ विस्तृत है।

(४) पुनरावर्तन का सिद्धान्त Recapitulation Theory.

स्टेनली हाल ने उपरोक्त सिद्धान्त की समालोचना की। उन्होंने कहा कि इस विषय में बहुत पक्षपात है, छिछला है तथा सत्य से परे है, क्योंकि यह भूत को पूर्ण रूपेण भुला देता है जहाँ कि खेल का सम्पूर्ण बीज उपस्थित है। पुनरावर्तन के सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपनी समस्त जाति के विकास के इतिहास का अपने जीवन में पुनरावर्तन करता है। बालक विभिन्न प्रकार

के जो खेल खेलते हैं वे केवल भिन्न भिन्न मानव ऐतिहासिक अवस्थाओं का पुनरावर्तन है। वे पूर्व ऐतिहासिक चारित्रिक खेल खेलते हैं जैसे छिपना, तथा ढूंढना, पीछा करना और भागना आदि। यह खेल की क्रियायें अल्प कालीन हैं क्योंकि बालक इन्हें कुछ समय पश्चात ही छोड़ देता है किन्तु इसी अवसर में इन क्रियाओं ने उसके विकास में अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य किये है।

यह दो सिद्धान्त आपस में विरोधात्मक प्रतीत होते हैं। नन महाशय कहते हैं कि यह विरोधी न होकर एक दूसरे के पूरक हैं। खेल में यह स्पष्ट हो जाता हैं कि वे भूत के पुनरावर्तन हैं किन्तु यह उतना ही सत्य है कि वे भविष्य के प्रौढ़ जीवन के लिये सीधे उपयोगी है।

(५) रेचन का सिद्धान्त (Cathartic Theory)

कथार्सिस शब्द अरस्तू के लेखों में से लिया गया है। यह शब्द औषधि विज्ञान के अर्थ में प्रयोग किया गया था। इसके द्वारा शरीर के विकारों का नाश होता है। इसी प्रकार शोकाकुल आत्मा के दोष को दूर करता है। दुखान्त नाटक के करने, से भरे हुये भावों को शान्ति मिलती हैं, जैसे जैसे हम स्वयं को उस नाटक में डालते हैं।

रेचन क्रिया केवल दुखों तक सीमित नहीं है। हम सर्कस के एक क्लाउन या हंसी का स्वांग करने वाले की मूर्खता पर प्रसन्न होते हैं। क्यों ? क्योंकि हम यह चाहते है कि दूसरे उन कार्यों को करें जो सभ्यता के वशीभूत हो हम नहीं कर पाते। सभ्य व्यवहार से बहुधा तनाव उत्पन्न होता हैं। किसी दूसरे के बाद कार्य करना या आप में होते हुये कार्य में मानसिक रूप से भाग लेना कुछ न करने से उत्तम हैं।

यह उत्तम सिद्धान्तों में से एक है। खेल क्रियायें रेचन करनी है, यह भरी हुई मूल प्रवृत्तियों, संवेगों को, जो बाल्यकाल अथवा प्रौढ़ावस्था में सीधे प्रकाशन का अवसर न पा सके उनके लिये एक विकास है। कुछ मूल प्रवृत्तियां प्रदर्शन के लिये पर्याप्त योग नहीं पाती। खेल में मूल प्रवृत्तियों की शक्ति को शान्ति मिलती हैं।

ये विभिन्न सिद्धान्त एक दूसरे के विरोधी नहीं वरन् पूरक हैं। यह एक

अत्यन्त जटिल घटना का विस्तृत वर्णन है जिनके द्वारा खेल के भिन्न भिन्न रूप समझने की चेष्टा की गयी है।

जीव वैज्ञानिक उपयोगिता, पुनरावृत्ति तथा रेचन, खेल में मूल प्रवृत्तियों को कार्य करते हुये दर्शाती है।

शिक्षा सम्बन्धी महत्ता

खेल प्रकृति की शिक्षा विधि है। अतएव यह शिक्षा के क्रियात्मक सिद्धान्त हो सकते हैं।

(१) शिक्षा के द्वारा सर्वोत्तम विकास को सुरक्षित रखना हैं। हाल महाशय का कहना है कि प्रकृति के ऐसा करने की विधि खेल है।

(२) शिक्षा का दूसरा मुख्य दायित्व जन्म जात शक्ति का परिवर्तन, शोध तथा मार्गान्तीकरण द्वारा करना है। रेचन सिद्धान्त के द्वारा खेल के ये ही परिणाम हैं।

अतएव शिक्षक इसे भुला नहीं सकते। खेल द्वारा शिक्षा विधि की मान्यता उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही हैं।

कार्य तथा खेल :—इनकी परिभाषा तथा अन्तर करना कठिन है। यह कहा जा सकता है, कि कार्य वह है जो हमें आवश्यक रूप से करना हैं। खेल वह है जो हमारी इच्छा पर निर्भर करता है। उत्साही कार्यकर्त्ता स्वयं की प्राप्ति के लिये कार्य करता है। उसके लिये कार्य भी खेल हो जाता है। अनिवार्य खेल भी कार्य बन सकता है। इसमें अन्तर कार्य के द्वारा नहीं वरन् कर्त्ता के भावों के द्वारा प्रकट होता है।

वह क्रिया जो प्रसन्नता से की जाय, जो व्यक्ति की स्वयं की इच्छा से की जाय, जिस काम में बाह्य शक्ति की अनिवार्यता का अभाव हो, जहाँ मूल प्रवृत्तियों की शान्ति होती है वही खेल होगा।

जो एक व्यक्ति के लिये खेल होगा वही दूसरे के लिये कार्य हो सकता है। यदि वह किसी दूर की प्रेरणा के कारण हो।

मनुष्य को उच्चता की प्राप्ति खेल की आत्मा से ही हुई है।

खेल द्वारा शिक्षा :

खेल में कार्य करने में आनन्द तथा प्रसन्नता होती है। यही आदर्श यदि गम्भीर कार्यों में प्रयोग में लिया जाय तो यह खेल द्वारा शिक्षा विधि का रूप ले लेगा। खेल द्वारा शिक्षा बालक के स्कूल के गम्भीर कार्यो से अलग नही करती, वरन् इसके प्रयोग में कार्य की रीति को काम करने वाले के लिये प्रसन्न चित्त कर देती है।

बालक की शिक्षा में मान्टेसरी, बेसिक तथा किंडर गार्टन पद्धतियां खेल द्वारा शिक्षा विधि का प्रयोग करती हैं। खेल के द्वारा शिक्षा में निम्न लाभ हैं–

(१) मानसिक विकास।

(२) चारित्रिक विकांस। इमान्दारी, आज्ञा पालन, प्रसन्नता, नेतृत्व, सहयोग, सहनशीलता

(३) इन्द्रीय परिपक्वता।

(४) मूल प्रवृत्तियों का नियन्त्रण।

(५) पूर्ण व्यक्तित्व का विकास।

(६) सामाजिकता का विकास।

(७) विश्व नागरिकता की शिक्षा।

(८) अवकाश का सदोपयोग।

खेल के प्रकार :—

(१) **परीक्षात्मक खेल :—** (Experimental play) वस्तुओं का प्रयोग बिना किसी ध्येय के करना। शैशव काल की यह प्रमुख विशेषता है। यह सर्वथा व्यक्तिगत होता है।

(२) **अंग संचालन या गति खेल** (Movement play) इसमें गतियुक्त खेल विशेष रूप से होते हैं जिसके द्वारा भविष्य के जीवन की तैयारी होती हैं। बालक निरर्थक दौड़ते हैं, बेचैनी होती है, आवाज करते हैं आदि।

यह छिपने तथा खोजने के खेल में परिवर्तित हो जाता है। इसमें अनुकरण का अंश आ जाता है जैसे कूदना, झूमकर चलना, रेंगना, दोनों पैरों पर कूदना आदि।

(३) **रचनात्मक खेल** (Constructive play :) स्काउटिंग तथा कैम्पिग जिसमें तरह तरह की रचना होती है। बालक तरह तरह की वस्तुएं बनाते हैं। बालक वस्तुओं को छूना चाहते हैं और समझना चाहते हैं, कभी भी इस प्रक्रिया में वह वस्तुओं को तोड़ फोड़ देते हैं किन्तु उनका विचार ध्वंसात्मक न होकर रचनात्मक होता है।

(४) **द्वन्दात्मक खेल** (Fighting play) प्रौढ़ावस्था के पहले ये साधारण प्रतियोगिता तथा सरल खेल के रूप में होती है। तत्पश्चात् दलों के मध्य, व्यक्तियों में होता है।

(५) मानसिक, संवेगात्मक तथा इच्छा प्रकाशित करने वाले खेल। (Intellectual, Emotional and volitional play)

इन खेलों में शारीरिक व्यायाम की प्रधानता नहीं होती है। इन खेलों में विचार करने का कार्य प्रधान रूप में संवेगों को उत्तेजित करना तथा किसी कार्य के करने या न करने की शर्त होती है।

इस प्रकार का खेल केवल मानव बालक की विशेषता है। साधारणतया सभी खेलों में ज्ञान संवेग तथा इच्छा का प्रयोग होता है किन्तु इस स्थान में विशेष रूप से मानसिक व्यायाम का खेल होता है।

इसके प्रयोग की विभिन्न विधियां :—

(i) मोनटेसरी विधि (Montessori Method)
(ii) किंडरगार्टन विधि (Kindergarten Method)
(iii) ड्रामा के द्वारा (Drama Method)
(iv) डाल्टन प्लान (The Dalton plan)
(vi) प्रोजेक्ट विधि (Project Method)
(vi) स्काउटिंग तथा गर्ल्स ग्राइड (Boy Scout girls guide)

खेल का एक विशेष रूप–असत्य तथा अदृश्य वस्तु को सत्य या दृष्टमय खेल बनाना (Marke Belief Play)

यह केवल अनुकरण के कारण जहाँ से इस के लिये सामग्री मिलती है नहीं होती। यह अचेतन विधि के द्वारा जीवन की तैयारी के लिये होता है। रेचन पद्धति से यह समझा जा सकता है। बालक के साधारण वातावरण उसके पूर्ण मूल प्रवृत्तियों के शान्ति का क्षेत्र नहीं देती। इस खेल विधि के द्वारा उसे मूल प्रवृत्तियों की प्रेरित शक्तियों के निवारण के लिये मार्ग मिल जाता है।

खेल के द्वारा सभ्यता को देन :–

आधुनिक सभ्यता की कुछ विशेष समस्याए हैं जिन्हें खेल एवं शारीरिक शिक्षा हल करने में अत्यन्त सहायक हो सकती है। युवक समस्या, मानसिक स्वास्थ्य समस्या वृद्धावस्था की समस्या, स्वयंचालक युग की समस्या एवं अणु काल की समस्या।

युवक समस्या : Problems of youth

माता पिता, स्कूल, धर्मिक संस्थाओं एवं समाज के लिये वर्तमान युवक वर्ग एक समस्या हो रहे हैं। वह एक विश्वव्यापी समस्या है। युवकों का असामाजिक व्यवहार संसार के लिये एक चिन्ता का विषय हो रहा है। इसके अनेक कारण हैं। आर्थिक दशा, निम्नश्रेणी का शारीरिक स्वास्थ्य, राजनैतिक अनिश्चयता नैतिक स्तर का नीचा होना, अप्राकृतिक जीवन, वास्तविक नेतृत्व की कमी, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय गौरव की कमी आदि कुछ मुख्य है। समय का दोष अधिक प्रतीत होता है। वर्तमान समय एक तनाव एवं अनिश्चयता का समय है। परिवार, समाज के नेतृत्व में, राजनीति आदि में, धर्म में एक प्रकार का संघर्ष एवं तनाव है। आज के प्रतियोगिता में व्यक्ति दूसरे को नष्ट करने का का विचार करता है। अनात्मवादि एवं तात्विक जीवन का अधिक बल है।

शारीरिक शिक्षा खेल के द्वारा युवकों के जितना समीप पहुंच सकता है उतना किसी और माध्यम के द्वारा सम्भव नहीं। उपरोक्त समस्याओं के हल करने में शारीरिक शिक्षा खेलों का अत्यन्त महत्वपूर्ण हाथ है।

मानसिक स्वास्थ्य (Mental Health)

जीवन की चिन्ताओं एवं बोझ के कारण मनुष्य साधारणतया अप्राकृतिक एवं दो व्यक्तित्व का जीवन व्यतीत करने लगा है। इसके कारण मानसिक ग्रंथियां उपस्थित होती है अत: व्यक्ति मानसिक अस्वस्थता प्राप्त करता है। जीवन के भयानक रोगों का सबसे प्रबल कारण यही बताया जाता है। अधिक लोगों की मृत्यु भी इसके कारण होती है। उचित शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम में खेलों के द्वारा यदि उत्तम कौशल की नीव बाल्यावस्था से डाली जाये तो बालक अपनी चिन्ता, भय, जलन, ईर्ष्या, घृणा आदि को भूल जायेंगे। शारीरिक शिक्षा का स्पोर्ट्स मैन स्प्रिट (Sportsman spirit) के कारण व्यक्तियों के पारस्परिक विचार एवं सम्बन्ध में उदारता, प्रेम एवं दूसरे के अधिकार एवं आवश्यकता की मान्यता पर विशेष ध्यान दिया जायेगा। शारीरिक शिक्षा के खेल अपने अनगिनत क्रियाओं के द्वारा संवेग का उचित प्रवाह जीवन में उच्च विचार एवं उत्तम शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य के कारण, कितनी ही मानसिक दशाओं को उस स्थिति पर नहीं पहुंचने देगी जहां वे आज पहुंच चुकी हैं।

वृद्धावस्था की समस्या (Problem of old age)

उन देशों में जहां शारीरिक शिक्षा उचित रीति से नहीं दी जाती है वहां की वृद्धा समस्या चिन्ताजनक है। वृद्धावस्था की प्रमुख आवश्यकता है उचित स्वास्थ्य तथा किसी कार्य में व्यस्त रहना। जिस वृद्धा ने अपनी बाल्य-वस्था में खेलों में रुचि नहीं ली वह न स्वस्थ्य रहता, न ही उसके पास कुछ करने के लिये रहता है। कुछ न कुछ व्यायाम प्रत्येक आयु के लिये आवश्यक है। बालपन में शारीरिक कौशल का सीखना अति आवश्यक है जिसके द्वारा वृद्धा-वस्था में प्रसन्नता, स्वास्थ्य, सक्रीयता अर्जित की जा सके। प्रौढ़ावस्था का बलिष्ठ स्वास्थ शरीर जीवन के अन्तिम दिनों तक अच्छी तरह कार्य कर सकेगा।

मनुष्य की वास्तविक प्रकृति परिस्थितियों का सामना करने की है। जब यह सामना करने की रुचि मन्द पड़ जाये तो यह समझना चाहिए कि जीवन के अन्तिम दिन आ गये। उत्तम शरीरिक शिक्षा के कारण व्यक्ति मृत्यु

कभी सामना करने के लिये तत्पर रहेगा शारीरिक शिक्षा के खेलों में प्रतियोगिता के कारण ही यह प्रवृत्ति सम्भव है ।

विशेषता एवं स्वसंचालक युग की समस्या

आज मनुष्य का कार्य अपने व्यवसाय में विशेषता प्राप्त करना तथा स्वचालक मशीनों के द्वारा कार्य करने का है । व्यक्ति का स्थान वास्तविक कार्य के परिश्रम में बहुत ही कम है । अधिकतर उसे अकेले कार्य करना पड़ता है जिसमें मानसिक थकान दशा के कारण हो सकता है किन्तु शारीरिक थकान विशेष नहीं होती । इससे सम्बन्धित अणुकाल के आविष्कार हैं जिनके कारण जीवन में अधिक अवकाश एवं कम परिश्रम होगा । इन सबके कारण शारीरिक एवं मानसिक दशा पर जो बुरे प्रभाव पड़ेंगे उनका निवारण केवल शारीरिक शिक्षा के द्वारा ही हो सकता है जिसमें खेलों का प्रमुख स्थान हैं ।

४

वंशानुक्रम तथा वातावरण

वंशानुक्रम तथा वातावरण का प्रभाव

क्या मनुष्य वही है जो वंशानुक्रम उसे बनाता है या जो वातावरण बनाता है अथवा क्या वह स्वयं ही अपने आपको बनाता है ? जीवन के आरम्भ से प्रत्येक व्यक्ति एक उत्पादक बीज कोष है जो दो बीज कोषों, एक माता तथा दूसरा पिता, की संयुक्ति के द्वारा बनता है। निश्चय ही यह वंशानुक्रम का फल है किन्तु यदि वातावरण अनुकूल न मिले तो उसकी मृत्यु हो जायगी या वह बेकार हो जायगा। किन्तु यदि वातावरण उसे उत्तेजित करे तो वह अपनी वंशानुक्रम की प्रकृति के आधार पर प्रतिक्रिया करेगा और इसी के कारण विकसित होगा। वह सीधे न केवल वंशानुक्रम का प्राणी, और न ही वातावरण का प्राणी है। वह स्वयं अपने कार्यों का फल बनता है। यह रीति उसके विकास में आने वाले प्रत्येक पग पर दोहराई जाती है। प्रत्येक पग व्यक्ति की वातावरण सम्बन्धित प्रतिक्रिया है। इस कारण व्यक्ति को प्रत्येक पग पर पहले से भिन्न परिवर्तित अवस्था में छोड़ता है। वंशानुक्रम कभी भी पीछे छोड़ नहीं दिया जाता किन्तु व्यक्ति में वह विकसित अवस्था में ले लिया जाता है।

वंशानुक्रम

यह कहना एक साधारण अनुभव है कि बालक मानसिक तथा शारीरिक गुण माता पिता से प्राप्त करते हैं। साधारण मनुष्य जो अनपढ़ है वह भी अच्छी नस्ल तथा वंशानुक्रम को समझता है तथा उस पर विश्वास करता है। वंशानुक्रम के तत्वों के वर्णन के समय बताया जाता है कि समान समान ही उत्पन्न करता है या वंश उत्पत्ति कर्त्ता के समान चलता है। बिल्ली के बच्चे भी बिल्ली

ही होते है तथा मनुष्य के बच्चे मनुष्य। यह स्मरण करने की आवश्यकता है कि वंशानुक्रम केवल समानता ही नहीं लाता वरन् समानता तथा असमानता दोनों ही का मिश्रण उसमें रहता है। भिन्नता वंशानुक्रम से वैसे ही मिलती है जैसे समानता। वंशानुक्रम जन्मजात व्यक्तिगत गुणों का योग है।

हम अपने माता पिता से शरीर नहीं प्राप्त करते किन्तु केवल एक कीटाणु जिससे कुत्ते को जीवन मिलता है प्रायः मनुष्य के कीटाणु के समान ही होता है फिर भी एक कुत्ता होता है दूसरा मनुष्य। यह ऐसा क्यों है ? जब पुरुष का जीव कोष वीर्य एवं स्त्री का जीव कोष रज या अंड आपस में मिलते हैं एक लाख से अधिक मिश्रित परिणाम की सम्भावना सम जीव कोषों के मिलने से भ्रूण कोष (Zygot) असंख्य भागो में विभाजित होकर मनुष्य के शरीर का निर्माण करते हैं।

(१) वाइजमैन ने अपने सिद्धान्त बीजकोष की निरंतरता के नियम समझाने की चेष्टा की, किन्तु गाल्टन महाशय ने यह बताया की बालक एक प्रकार से माता पिता के ही समान नहीं होता परन्तु अपने पूर्वजों से भी समानता रखता है। कहा जा चुका है कि शरीर बीच कोष से, कोषों के बाहुल्य के कारण बढ़ता है अर्थात स्त्री के अंडो या रज से जो उत्पादक बन जाता हैं। इस अवस्था में बहुत पहले कुछ कोष पृथक कर दिए जाते हैं जो अपनी वास्तविक अवस्था में रहते हैं और सन्तानोत्पत्ति कोष नये व्यक्ति से बन जाते हैं जिनमें से एक पुनः दूसरे मनुष्य के विकास आरम्भ का कारण हो सकता है। ये सन्तानोत्पत्ति कोष शरीर के विकास में कोई भाग नहीं लेते हैं तथा निरन्तर वंशज के उत्पन्न करने वाले नही होते किन्तु बीज कोष के रक्षक स्वरूप हैं जो अपने वंशजों को उत्तराधिकार के रूप में दे देते हैं जिससे वह अपनी सन्तान को उसी तरह देते जायं।

वाइजमैन का यह सिद्धान्त पूर्ण रूप से वंशानुक्रम को स्पष्ट नहीं करता है।

(२) मैंडेल के प्रयोग से जो उन्होंने छोटी एवं बड़ी जाति के बीज से किया, वंशानुक्रम के तथ्यों को समझने की चेष्टा की गयी। इनके प्रयोग से यह परिणाम निकला कि यद्यपि कोष अपने में इकाई है, तथापि वंशानुक्रम के

दृष्टि से वह अनेक परम्परा में जाने वाली इकाइयों का मिश्रण है। अपने सिद्धान्त 'शुद्ध बीज कोषों को पृथक करना' "Segrigation of pure gamets" के द्वारा यह स्थापित किया कि प्रथम मिश्रण से दो रूप हुये (i) शुद्ध एवं (ii) अशुद्ध जो बराबर संख्या में थे। शुद्ध पुरुष बीज कोष तथा शुद्ध स्त्री बीज कोष से परिणाम शुद्ध होगा। इसी प्रकार अशुद्ध के मिश्रण से शुद्ध अशुद्ध (Pure recessive)। शुद्ध एवं अशुद्ध के मिश्रण से एक अशुद्ध शुद्ध (Pure Impure dominant)। अत: शुद्ध शुद्ध (Pure dominant) की संभावना १/४ है। शुद्ध अशुद्ध (Pure recessive) की भी संभावना १/४ है। अशुद्ध शुद्ध (Impure dominant) १/२ है। मैंडल का नियम उस समय लागू होता है जब माता पिता में विभिन्न विशेषतायें हों। इस सिद्धान्त से भी वंशानुक्रम सही रीति से नहीं समझाया गया।

क्रम विकास Evolution :

थोड़े शब्दों में क्रम विकास का अर्थ है कि भिन्न भिन्न प्राणी एक ही पूर्वज से उत्पन्न हुए हैं तथा उच्च श्रेणी के प्राणी क्रमश: नीची श्रेणी के प्राणियों से क्रम से विकसित हुए हैं। इस क्रम विकास की क्रिया नियमानुसार है।

क्रम विकास के सिद्धान्त साधारणतया माने जाते हैं किन्तु उस विकास की रीति के सम्बन्ध में मत दो हैं। जीवित प्राणियों तथा वातावरण के आपस के प्रभाव द्वारा इसका यथार्थ समझने की चेष्टा में भी एक मत प्रकट किया जाता है किन्तु प्राणी शास्त्र वैज्ञानिक दोनों की प्रमुखता पर पृथक पृथक बल देते हैं। इनके दो प्रमुख नाम लामार्क तथा डारविन के लिये जाते हैं।

लामार्क :

लामार्क जीवित प्राणी की क्रिया का वर्णन मुख्य रूप से करते हैं और इसके आधार पर सरल प्राकृतिक वर्णन करते हैं। उनका कहना है कि प्राणी में अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने की अतिरिक्त प्रेरणा होती है इसके कारण वह अपने को वातावरण के अनुकूल बना लेता है तथा इस हेतु वह अपने शरीर की बनावट का भी परिवर्तन कर लेता है। ऐसे परिवर्तन विशेषकर किसी अंग का प्रयोग या गलत प्रयोग सन्तान को समर्पित किए जाते हैं फिर वह उस परिवर्तन में उन्नति करते चले जाते हैं। इस प्रकार पुराने से नई जाति उत्पन्न

होती रहती है। जैसे जिराफ और उनकी लम्बी गर्दन। इसमें दो बातें मानी जाती हैं (१) आंतरिक प्रेरणा की वास्तविकता (२) अर्जित परिवर्तन सन्तान को समर्पित होते हैं।

डारविन :

क्रमिक विकास सिद्धान्त की स्थापना का वास्तविक श्रेय डारविन महाशय को है। उन्होंने प्राकृतिक चुनाव के सिद्धान्त का प्रचार किया। उनके सिद्धान्त में अस्तित्व के संघर्ष तथा योग्य प्राणी का जीवित रहना है। जीवित रहने के लिए प्राणी को एक दूसरे से अधिक योग्य होना है क्योंकि जन्म जात भिन्नता के कारण प्रत्येक व्यक्ति में व्यक्तिगत भिन्नता होती है। डारविन ने संयोग परिवर्तन तथा आकस्मिक परिवर्तन को भी मान्यता दी है।

विरोधी सिद्धान्तों का अध्ययन करते हुये हम यह देखते हैं, कि डारविन का क्रम विकास सृष्टि से मन का बहिष्कार कर देता है। यह मनुष्य की शक्ति को, जिससे वह स्वयं को संभालता है, अंगीकार नहीं करता। मनुष्य अपने वातावरण का दास है किन्तु हम जानते हैं कि यह सत्य नहीं है, क्योंकि मनुष्य न केवल वातावरण के अनुकूल बनता है परन्तु वातावरण को भी अपने अनुकूल बना लेता है। जीवित रहने के लिए योग्यता ही केवल सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्त नहीं बन सकती जिसे हम अपने चिकित्सालयों तथा विश्रामगृहों में देखते हैं।

लामार्क का सिद्धान्त है कि जीवित रहने की इच्छा इस रीति में विशेष क्रिया है अर्थात् मूल शक्ति (Horme) आदत में परिवर्तन लाती है इस लिए बनावट में भी परिवर्तन आता है जो कि क्रम विकास का विषय है और यही हमारी आवश्यकता है।

शैक्षणिक आधार पर हमें यह परीक्षा करनी है कि अर्जित परिवर्तन सन्तान में स्थानान्तरित होते हैं कि नहीं।

इस विवाद में आधुनिक मत यह है कि अर्जित आदतें किसी न किसी मात्रा में स्थानान्तरित होती है। जीवन के आरम्भ से शरीर में जो आदत अर्जित की जाती है, उसमें लगे रहने से यह उसकी बनावट में परिवर्तन लाती है। जैसे लोहार की सन्तान को यदि उसी उत्तेजना के समक्ष डाला जाये तो वह उस

काम को अपने माता पिता की अपेक्षा कम समय में ही सीख लेगा और उनकी बनावट परिवर्तनों में बढ़ती होगी।

मैक्डुगल महाशय ने चूहों पर परीक्षण किया। चूहों को एक बर्तन में रखा जिसमें दो द्वार थे। एक में बिजली का शाक लगता था दूसरे में नहीं। यह इस बात का समर्थन करता है क्योंकि प्रारम्भ में १६५ गल्तियां थीं किन्तु २३वें वंश में केवल २५ गल्तियां ही शेष रहीं।

वातावरण :—

वातावरण के अन्तर्गत वह प्रत्येक प्रभाव आता है जो मनुष्य को जीवन के प्रारम्भ से प्रभावित करता है। मनुष्य की पौष्टिकता, उसके आस पास के कीटाणु, बीमारी के कीटाणु जो जन्म के पूर्व तथा पश्चात् प्रभाव डालते हैं, दुर्घटना, शिक्षा, अनुभव आदि सब वातावरण के अन्तर्गत हैं। वातावरण वाह्य प्रभाव तथा क्रमिक विकास आन्तरिक प्रभाव है।

कितने ही तत्व जो क्रमिक विकास के समझे जाते हैं परीक्षण से वातावरण के अन्तर्गत आते हैं। जैसे सामाजिक वंशानुक्रम।

वातावरण अधिकतर उत्पत्ति शक्ति के समान कार्य नहीं करता किन्तु प्रेरक तथा चुनने की शक्ति की तरह कार्य करता है। हम प्रकृति के संयोग को इस प्रकार व्यवस्थित कर सकते हैं कि जो कार्य उचित हों उनके लिये पर्याप्त उत्तेजना व्यवस्थित करें तथा जो उचित न हों उनको प्रकट होने का अवसर न दें। जब हम अफ्रीका के असभ्य निवासियों तथा एक सभ्य व्यक्ति के वास्तविक जीवन के अन्तर का अध्ययन करते हैं तो वातावरण के प्रचंड प्रभाव को उसकी जाति के उत्तेजकता तथा असभ्य चुनाव की शक्ति को देखकर चकित रह जाते हैं।

दोनों का प्रभाव :—

वंशानुक्रम तथा वातावरण दोनों के संयुक्त प्रभाव से विकास तथा बढ़ाव होता है। बढ़ाव केवल जन्मजात शक्तियों के विकास से ही नहीं होता है और न ही केवल बाह्य शक्तियों का एक अशक्त वस्तु पर प्रभाव डालने से। यह दो तत्वों के पारस्परिक कार्य से संभव है। एक फूल का बीज बिना मिट्टी के जन्म

नहीं ले सकता। किसी पौधे या मानव बीज के बढ़ने के लिये सदैव वातावरण से उत्तेजना तथा अवलम्ब की आवश्यकता होती हैं। वंशानुक्रम के द्वारा दिशा तथा उन्नति की सीमा निर्धारित होती है और वातावरण के द्वारा सहारा तथा बढ़ाव के लिए कुछ अंशों में परिवर्तन होता है। वंशानुक्रम तथा वातावरण विभिन्न व्यक्तियों को स्तर पर लाने के लिये पारस्परिक त्रुटियों की पूर्ति करते हैं।

शिक्षा में उपयोग :—

हर्बट स्पेन्सर कहते हैं कि मस्तिष्क का शरीर के समान एक पूर्व निर्धारित मार्ग है। एक मार्ग जो कुछ अंशों में जाति के ऐतिहासिक भूत से निर्णय किया जाता है। बालक को जाति की तरह सीखना है।

"The education of the child must accord both in mode and arrangement with the education of mankind considered historically"

Nun says "The child is not some things to be moulded in one case by education, in another by heredity."

इनका कहना है कि विकास की रीति में मुख्य विषय बालक ही है। वह अपनी इच्छानुसार वंशानुक्रम की देन तथा शैक्षिक अवसरों का उपयोग करेगा।

अर्जित परिवर्तनों के स्थानान्तरण के विषय में हम यह आशा पूर्वक कह सकते हैं कि एक पीढ़ी की आदत दूसरी पीढ़ी के द्वारा शीघ्रता से सीखी जा सकती है और किसी प्रकार का विरोध क्रमशः समाप्त हो जायगा। हमारा यह प्रमुख उत्तरदायित्व है कि हम यह देखें कि अर्जित आदत उत्तम हो।

शिक्षा में व्यक्तिगत भिन्नता की ओर ध्यान देना परमावश्यक है। शिक्षक इस भिन्नता को मिटा नहीं सकता। मैक्डुगल कहते हैं कि मनुष्यों में उनकी जन्मजात योग्यता को देखते हुए बहुत भिन्नता है। अतएव प्रत्येक बालक को उसकी रुचि तथा स्वभाव के अनुसार शिक्षा देना है। शिक्षा का कर्तव्य है कि यह देखा जाये कि जो कुछ भी सम्भावित योग्यता जिस तरह भी वर्तमान है उसका नाश न हो।

एक पीढ़ी में शिक्षा व्यक्तिगत जीवन को प्रभावित करती है। जब उनके सन्तान होती है तो बीज कोष में उसकी संस्कृति नहीं चली जाती। यह कहा जाता है कि माता पिता के विशेष गुण तो सन्तान में प्रकाशित होते हैं वह वंशानुक्रम के कारण नहीं वरन् माता पिता के साथ रहने के कारण होते हैं। यह वंशानुक्रम के समान प्रतीत होता है इसलिये इसे सामाजिक वंशानुक्रम कहते हैं। सामाजिक वंशानुक्रम एक प्रकार का शैक्षणिक वातावरण है जिसमें संस्कृति, नियम, परम्परा तथा ज्ञान आदि सम्मिलित हैं जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को दी जाती है।

५

स्मृति

जब मस्तिष्क इस प्रकार के कार्य करता है जिससे वह अपनी क्रिया से ग्रहीत विचार अंकित करे, धारण करे तथा प्रत्याह्वन करे तो यह स्मृति के अन्तर्गत आता है। इसकी तीन प्रत्यक्ष स्थितियां या अंग हैं।

(१) समझ (Apprehension)

(२) धारण (Retention) मस्तिष्क, स्वास्थ्य, रुचि तथा चिन्तन पर निर्भर करता है।

(३) प्रत्याह्वन Recall

(१) प्रतिमा (Image) के द्वारा अनुभव मस्तिष्क में एकत्रित किए जाते हैं जैसे नारंगी—गोल, पीली, सुगन्ध, स्वाद आदि इस प्रकार नारंगी की प्रतिमा होता है। यह प्रतिमा एक मानसिक चित्र है।

(२) स्मृति में दूसरा तत्व साहचर्य Assonciation है। पहिले यह विचार था कि स्मृति एक शक्ति होती है किन्तु वास्तविकता यह नहीं है। यह केवल विचारों का साहचर्य है। उत्तम स्मृति का यही गुप्त भेद है। विचारों का साहचर्य वह शक्ति है जिसमें विभिन्न प्रकार के विचार आपस में मिलते हैं।

James says "We have no general memory but only memories for particular things in so far as such things are formed into associated groups in our minds."

साहचर्य का नियम

(अ) सान्निध्य का नियम (Law of Contiguity):—

स्थान तथा समय में जो एक दूसरे के समीप हैं उनमें से एक के याद

करने से दूसरा भी स्मृति में आ जाता है। समकालीन अनुभव तथा एक के बाद दूसरा आपस में मिल जाते हैं और एक साहचर्य बन जाता है।

(ब) समानता का नियम (Law of Similarity) :—

समान अनुभवों का आपस में साहचर्य हो जाता है जिससे एक के द्वारा दूसरे का स्मरण हो जाता है।

इसके अन्तर्गत वैपरीत्य का नियम भी आता है। जब दो विचार आपस में एक दूसरे के विपरीत हैं तो एक की स्मृति दूसरे को भी सामने ला देती है। स्मृति की उपयोगिता इस बात में है कि वह भूत अनुभवों को स्मरण रखती है जिससे वर्तमान उद्देश्य में सहायता प्राप्त होती है।

साहचर्य स्थापित करने की दशायें तथा प्रत्याह्वान में सहायक तत्व-

(१) नवीनता (Recency) तत्कालिक घटनायें अधिक याद रहती हैं। घटना जितनी नवीन होगी उतनी अधिक याद रहेंगी।

(२) पुनरावृत्ति (Frequency) जिस कार्य को बार बार दुहरा लिया जाता है वह उतना ही अधिक याद रहता है। जितनी बार काम को किया जाय उतना ही भली भांति याद होता है।

(३) प्राथमिकता (Primacy) जिस व्यक्ति या वस्तु पर ध्यान देने में प्राथमिकता दी जाय वही अधिक याद रहता है। जिस वस्तु का प्रथम प्रभाव पड़ता है उसकी स्मृति तीव्र होती है।

(४) स्पष्टता (Vividness) जो बात समझ में आ जाय या स्पष्ट हो वह शीघ्र याद आती है।

(५) रुचि की प्रबलता (Interest) जिस वस्तु में रुचि होगी वह शीघ्र याद होगी।

स्मृति के नियम :—

(१) लगे रहने का नियम (The Law of Preseveration) जो अनुभव स्पष्ट तथा समझे हुये हैं वह जाग्रत अवस्था में रहते हैं जैसे मधुर

संगीत। हम चाहें या न चाहें लगे रहने का नियम चलता ही रहेगा। जब व्यक्ति सोने की चेष्टा करता है विचार उस समय भी चलते रहते हैं।

(२) **साहचर्य का नियम** (Law of Association Experince tend to reproduce things by virtue of their association"
—Myers.

स्पीयरमेन इसको स्वीकार नहीं करते। उनका कहना है स्मृति केवल एक मार्ग है जिसके द्वारा मानसिक शक्ति की दृढ़ पूंजी अपना प्रवाह दिखाती है।

(३) **आदत का नियम** (Law of Habit) लगे रहने के नियम तथा साहचर्य के नियम के कारण अनुभवों की पुनरावृत्ति होती है। अभ्यास तथा पुनरावृत्ति उन्हें और शक्तिशाली बना देते हैं रटने की स्मृति इसी प्रकार की है।

स्मृति में सहायक तत्व :–

(१) रुचि, वे वस्तुयें, ज्यादा याद रहती हैं जो हमारे संवेग, स्थायी भाव, स्वयं के स्थायी भाव से संबंधित हैं। रुचि तथा इच्छा, स्मरण करने में अत्यन्त आवश्यक हैं।

सीखने की उत्तम विधियां—

सीखने की विधियां हैं (१) खण्ड विधि (२) सम्पूर्ण विधि। खण्ड विधि में विषय को थोड़ा थोड़ा करके सीखा जाता है। सम्पूर्ण में विषय को पूरा एक साथ याद करने की चेष्टा की जाती है। बच्चों के लिए खण्ड विधि पूर्ण-विधि से अधिक उत्तम है।

मिश्रण विधि में दोनों के अच्छे गुण मिश्रित कर लिए जाते हैं। याद करने के विषय को सरल खण्डों में विभाजित कर लिया जाता है। पहले व दूसरे खण्ड याद करने के बाद तीसरे को याद करने से पहले सम्पूर्ण पुनः पढ़ लिया जाता है।

दूसरी मिश्रण विधि यह है कि कार्य प्रारम्भ से आरम्भ किया जाय और उसी प्रकार करते रहें जब तक कोई कठिनाई उपस्थित न हो कठिनाई पड़ने पर उसे सीखने के पश्चात फिर आरम्भ से याद करना चाहिए जब तक दूसरी कठिनाई न मिले।

स्मरण के लिए अभ्यास के समय का उचित विभाजन होना चाहिए।

(३) पुनरावृत्ति (Revision)

(४) अर्थ युक्त ज्ञान (Meaningful) समझी हुई वस्तु शीघ्र याद होगी।

(५) अभ्यास (Exercise)

(६) इन्द्रियों की सहायता (Help of the senses) जितनी इन्द्रियां एक ही समय में व्यवहार में लायी जाँयगी उतनी शीघ्रता से स्मरण शक्ति कार्य करेगी।

(७) इच्छा (Willingness)

(८) समन्वय (Coordination) ज्ञान का किसी वस्तु से सम्बन्ध उसकी स्मृति को तीव्र करता है।

(९) वस्तु स्थिति (Nature of Subject Matter) सरल वस्तु शीघ्रता से सीखी जायेगी कठिन वस्तु में समय लगेगा।

(१०) वातावरण-स्मृति में बहुत सहायक है। वातावरण के अनुकूल भावना होगी।

अच्छी स्मृति के लक्षण:—

शीघ्र याद कर सकना, देर तक याद रहना, समय पर स्मरण होना, व्यर्थ बातों को भूलना।

विस्मृति (Forgetting:)–

विस्मृति तत्कालिक स्मृति तथा स्थायी स्मृति में अन्तर स्पष्ट करती है। अधिक विस्मृति सीखने की प्रक्रिया के बाद होती है आधी वस्तु सीखने के आधे घंटे बाद ही भूल जाते हैं। उसका २/३ भाग आठ घन्टे से लेकर ६ दिन में, ३/४ ,६ दिन में तथा ४/५ एक माह में विस्मृत होता है। अवनति प्रारम्भिक अवस्था में होती है। पुनरावृति शीघ्र ही होनी चाहिए।

तत्कालिक स्मृति में, लगे रहने का नियम सहायता करता है। स्थायी स्मृति में यह सहायक नहीं, किन्तु साहचर्य आदत का पूर्णरूपेण व्यवहार स्मृति के लिए आवश्यक है।

यह आवश्यक है कि अभ्यास का समय थोड़ा हो किन्तु विस्मृत हो। इसका कारण यह है कि थकावट कम होगी, लगे रहने की प्रक्रिया दोहरायी जायगी, साहचर्य के सम्बन्ध अधिक दृढ़ होंगे।

विस्मृति एक बहुत बड़ी कमी प्रतीत होती है किन्तु यह सत्य है कि प्रत्येक तत्व दृढ़ छाप छोड़ता है। विस्मृति आवश्यक भी है

पहचान तथा प्रत्याह्वनः—

(१) छाप (२) छाप की धारणा (३) इच्छानुसार प्रत्याह्वन। अच्छी स्मृति के लिए वस्तु विषय में रुचि की आवश्यकता है।

पहचान में व्यक्ति जाने हुये अनुभव के प्रत्यक्षीकरण से सहायता प्राप्त करता है। अभ्यास से धारण संभव है।

विस्मरण के उपाय :—

कभी कभी हम किसी बात को भूलना चाहते हैं, लेकिन ऐसा हो नहीं पाता। जितना भूलने की चेष्टा की जाय वह उतना ही स्मृति में रह जाता है। ऐसी अवस्था में जो हम विस्मृति करना चाहते हैं उसे भुलाने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए। कुछ समय पश्चात यह भुला दिया जायगा।

असाधारण भूल (Abnormal forgetting) कुछ भूलें असाधारण होती हैं। इनका कारण संस्कारों की निर्बलता नहीं होती और न रुचि की कमी ही होती है। स्मरण की प्रक्रिया में बाधा होती है। संवेग की उत्तेजना से संशय आने से तथा मानसिक ग्रंथि के कारण असाधारण भूल संभव है।

गतियुक्त स्मृति (Motor memory)—

कौशल के सही सीखने एवं उचित अभ्यास से वह व्यक्ति की प्रकृति में आ जाता है जिससे आवश्यकता पड़ने पर उसे प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार के प्रयोग में व्यक्ति को किसी विशेष चेष्टा करने की आवश्यकता नहीं रहती क्योंकि मांस पेशियों में उस कौशल का अभ्यास या स्मृति रहती है जिस कारण से इच्छा होते ही वह कौशल तत्काल ही किया जा सकता है। यह अभ्यास या गतियुक्ति स्मृति व्यक्ति के जीवन में ही लिप्त हो जाती है तथा जिस

कार मानसिक स्मृति का प्रयोग होता है उसी प्रकार गतियुक्त कौशल का भी योग होता है। उदाहरणार्थ तैरना या साइकिल चलाना ऐसा कौशल है कि ाक्ति एक बार सीख कर फिर कभी नहीं भूलता। अधिक दिन के प्रयोग के श्चात यदि कुछ कमी मालूम होती है तो थोड़े ही प्रयत्न के पश्चात पहले के ार पर कौशलकार्य करने लगता है। मानसिक एवं गतियुक्त स्मृति की प्रणाली ाद्धान्त उपाय एवं अभ्यास समान हैं।

—— ———

६

विकास की अवस्थाएं तथा विशेषताएं

प्रत्येक व्यक्ति इस बात का अनुभव करता है कि शैशवकाल से जीवन के अन्त तक विकास की अवस्थाएँ हैं जिन्हें हम पार करते हैं तथा प्रत्येक अवस्था के विशेष गुण हैं। अवस्थाओं के वर्ग तथा आयु सीमा में कुछ मतभेद है।

वास्तव में इसकी विशेष आयु या समय निश्चित नहीं है। विकास क्रमिक रूप से लगातार होता है। बच्चा बाल्यावस्था में तथा किशोर, युवावस्था में बिना निश्चित समय जाने ही प्रवेश करता है। कभी-कभी नई शक्तियां अचानक आती हैं परन्तु यह नियम है कि वह क्रम से ही परिपक्व होते है। बालकों में व्यक्तिगत भेद पाए जाते हैं। कुछ बालक किसी एक अवस्था में अन्य की उपेक्षा जल्दी आ जाते हैं। और उसे पार भी कर लेते हैं।

डा० अर्नेस्ट जोनस ने मानव जीवन को चार निश्चित भागों में विभाजित किया है।

(१)	शैशवावस्था	Infancy	जन्म से ५ वर्ष तक
(२)	बाल्यावस्था	Childhood	५ वर्ष से १२ वर्ष तक
(३)	किशोरावस्था	Adolescence	१२ से १८ वर्ष तक
(४)	युवावस्था	Maturity	१८ से आगे

शैशवावस्था (जन्म से ५ वर्ष तक)

शारीरिक विकास :—

प्रथम डेढ़ वर्ष की तुलना में बढ़ाव में कुछ शिथिलता आ जाती है। हड्डियों में कैलशियम (Calcium) पूर्ण रूप से नहीं होता इसी कारण गिरने

पर भी नहीं टूटती। तीन वर्ष तक अस्थायी दाँतों की पूर्ण पंक्ति आ जाती है। बड़ी मांसपेशियों का विकास होता है। हाथ, पैर एवं धड़ की मांसपेशियां प्रयोग में लाई जाती हैं। आन्तरिक अंगों का उचित विकास हो जाता है। अत: खाने, सोने तथा मल मूत्र त्याग करने की आदत अच्छी तरह स्थापित हो जाती है। वातावरण के सम्पर्क के कारण, संक्रामक रोग की सम्भावना बढ़ जाती है।

विशेषतायें :—

बालक इस आयु में चंचल एवं फुर्तीला होता है। चिड़चिड़ेपन के द्वारा थकान का पता चलता है। बालक आत्म केन्द्रित होता है अपना निर्णय आप करना चाहता है। उसके खेल में या उसके अधिकार में यदि कोई हिस्सा लेना चाहे तो वह उसे पसन्द नही करता। धीरे धीरे इसमें परिवर्तन होता है।

दूसरे बालकों के साथ खेलने में प्रसन्नता होती है। वह अपनी आयु के बालकों के साथ ही विशेषत: खेलना चाहता है। लड़के लड़कियों से अधिक झगड़ालू होते हैं। गतिवाही एवं पकड़ने तथा दौड़ने, का खेल अधिक खेला जाता है। खेल में कल्पना की भावना होती है।

विकास की सामग्री :—

सुरक्षा विशेष कर परिवार में उचित होनी चाहिये। दूसरे बालकों की संगत करना आवश्यक है। दूसरों की संगत में उन्हें प्रसन्नता होती है।

विभिन्न प्रकार की क्रियायें बालकों के लिए आवश्यक हैं जिनके द्वारा उनके हाथ, पांव, कंधे एवं धड़ की मांसपेशियां विकसित हों। चढ़ना एवं लटकने के प्रकार की क्रियायें आवश्यक हैं।

बालक जनेन्द्रियों से खेलते है। अधिकता से करने पर विचार पूर्वक इसे सम्भालना चाहिये। इनकी उचित आदत का अवसर एवं अभ्यास, सोने, मल मूत्र त्याग करने, सफाई, ढीले कपड़े पहिनने खाने पीने तथा अन्य बातों में जहां किसी परिवर्तन की आवश्यकता है उचित रीति से देना चाहिए। बालक को १२ घन्टे या अधिक सोना चाहिये। मध्याह्न में भी उसे सोना चाहिए। प्रत्येक प्रकार के भोजन की ओर उसकी रुचि बढ़ानी चाहिए किन्तु इसमें बल न प्रयोग किया जाये। बालक को अपने आप कार्य करने का अवसर देना आवश्यक है।

वह दूसरों की सहायता करना चाहता है। इसमें बड़ों को असुविधा होती है किन्तु बालक के दृष्टिकोण से यह अति आवश्यक है।

मनोवैज्ञानिक विशेषतायें :—

इस अवस्था में बच्चा सीधे मूल प्रवृत्तियों के द्वारा प्रेरित होता है। वह उनकी तत्कालिक पूर्ति भी चाहता है। प्रत्येक उत्तेजना असम्बद्ध हो स्वतन्त्रता से कार्य करती है। मूल प्रवृत्तियों का परिवर्तन केवल संतोष व असन्तोष के द्वारा होता है। जला हुआ बच्चा सदैव आग से डरेगा। आगे चल कर सामाजिक वातावरण फिर इसी बात को पारितोषिक तथा दण्ड के द्वारा स्पष्ट करता है।

बच्चे में निर्भरता की भावना होती है। यह केवल शारीरिक सुखों के लिए ही नहीं होती वरन् उसके संवेगों की आवश्यकता के लिये भी। उसकी प्रकृति यह दावा करती है कि उसके प्रति प्रेम प्रदर्शित किया जाय।

कल्पना से पूर्ण शैशवाकाल तारंगिक कल्पनाओं की आयु है। इस समय आत्म प्रदर्शन प्राप्ति की भावना किसी ज्ञात कार्य को बार बार दोहराने में दृष्टिगत होती है। बालक निरन्तर व्यक्तियों तथा परिस्थितियों से प्रभावित होता रहता है जो आत्म शून्यता तथा भय की भावना प्रदान करते हैं। वह खेल में व्यक्ति तथा स्थिति का नाटक करता है। वह विचारों की दुनिया में रहता है। वास्तविकता तथा कल्पना में स्पष्ट अन्तर नहीं कर पाता।

संवेग स्थायी भाव में संगठित होना आरम्भ होते हैं। सर्वप्रथम है स्वयं के शरीर से प्रेम। शैशवकाल शारीरिक अर्थ में आत्म प्रेम की आयु है। इसके पश्चात् मां के विचार पर स्थायी भाव बनाता है। फ्रायड के अनुसार बालक का पिता भी स्थायी भाव का कारण हो सकता है क्योंकि वह भी उसके वातावरण से सम्बन्धित है। किन्तु अद्भुत बात तो यह है कि मां का स्थायी भाव प्रेम का है और लड़के के लिये पिता का भाव घृणा का होता है।

वास्तव में बच्चे की पहली भावना अपने माता-पिता, भाई-बहन की ओर बहुत महत्ता रखती है क्योंकि इसी के द्वारा यह निर्धारित होता है कि उसका भावी संवेगात्मक जीवन का दृष्टि कोण दूसरों के प्रति कैसा होगा।

यह प्रथम सीढ़ी अनैतिक कहलाती है। क्योंकि विवेकयुक्त चुनाव के लिये वे बहुत छोटे हैं। बच्चे दूसरों में बहुत विश्वास करते हैं। अत: उन्हें जो कहा जाये उसे मान लेते हैं।

बाल्यावस्था ५ से १२ वर्ष

बाल्यावस्था के तीन उप विभाग हो सकते हैं ५–७ वर्ष, ८–१० वर्ष, ११–१२ वर्ष।

शारीरिक विकास :—

बढ़ाव धीरे धीरे होता है। प्रत्येक तीन माह के अन्दर किसी प्रकार का बढ़ाव प्रतीत होना चाहिए। पैर तेज़ी से बढ़ते हैं। रीढ़ की हड्डियों में मोड़ आ जाता है।

५ या ६ वर्ष की अवस्था में बालकों के दांत टूटने लगते हैं तथा स्थाई दांत निकलते हैं। हाथ पैरों की मांस पेशियां अधिकता से बढ़ती हैं। मांस पेशियों का बढ़ाव एक सा नहीं होता। गतिवाही कौशल में वृद्धि होती है। आसन एवं डील डौल के दोष इस समय हो सकते हैं। हाथ एवं आंखों का समन्वय अधूरा रहता है। जिस हाथ से अधिक या विशेष कार्य किया जायेगा वह स्थिर हो जाता है। ८० प्रतिशत दाहिने हाथ से कार्य करते हैं।

शरीर की तुलना में फेफड़े छोटे होते हैं। हृदय की वृद्धि तीव्रता से होती है। इसे सब प्रकार के आघात से सुरक्षित करना आवश्यक है विशेष कर किसी रोग के पश्चात। बाल्यावस्था के रोग आग की तरह फैलते हैं। श्वांस की संक्रामकता विशेष रूप से होती है। अक्ष गोलक (Eye Ball) बढ़ते रहते हैं अत: लिखने पढ़ने की उचित आदत डालनी आवश्यक है।

विशेषतायें:— इस आयु में बालक की चमकती हुई आंख, सुवर्ण मुख, सीधे पैर तथा अधिक फुर्ती एवं शक्ति होनी चाहिये। वह कुछ ही देर चुप बैठ सकता है। उसकी क्रिया करने की इच्छा होती है। वह परिणाम की परवाह नहीं करता। वह शारीरिक संतुलन समझता है। एक पैर पर खड़ा हो सकता है, कूद फांद सकता हैं, संगीत में ताल रख सकता है, गेन्द पकड़ सकता है। वह

चढ़ना तथा ऊपर से कूदना चाहता है। शीघ्र थकान मालूम करने लगता है तथा खेल से बाहर बैठ सकता है। आत्म निर्भरता उसमें आने लगती है। वह अपने व्यक्तिगत कार्य कर सकता है। घर के कार्यों में सहायता दे सकता है। वह प्रश्न करना चाहता है। लैंगिक प्रश्नों के उत्तर परिवार से ही प्राप्त होना चाहिये। वह सुरक्षा के विषय समझने लगता है।

मनोवैज्ञानिक विशेषतायें:— बढ़ाव के लिये गति की आवश्यकता होती है। शक्ति पूर्ण तीव्र व्यायाम से अंगों के बढ़ाव में सहायता प्राप्त होगी। इस कारण क्रिया पूर्ण हुल्लड़ के खेल जिसमें स्वतंत्रता से दौड़ना तथा कूदना हो, आवश्यक होता है। अनुकरण की भावना होती है जानवरों की चाल आदि का बालक अनुकरण करता है। आपरेट्स आदि पर कार्य करना चाहता है। छोटे सामूहिक खेलो का आयोजन होना चाहिये। अपनी ओर आकर्षित करने की एवं अपनी बारी शीघ्र लेने की उनकी चाह होती है। ड्रामा एवं तालबद्ध क्रियायें उसके लिये आवश्यक हैं। बालक देर तक ध्यान केन्द्रित नहीं कर सकता अत: क्लास अधिक देर तक नहीं होना चाहिये। बालक को विश्राम एवं १२ घंटे सोना आवश्यक है। व्यक्तिगत स्वास्थ्य के नियम की आदत का प्रशिक्षण होना चाहिये।

८ से १० वर्ष आयु

शारीरिक विकास:—लम्बान एवं वजन साधारणत: धीरे धीरे बढ़ते हैं। दसवें वर्ष में बालिकायें अधिक बढ़ती हैं। उनकी अस्थि परिपक्वता लड़कों से पूर्व होती है। हड्डियों के कैलशियम जमाव में बहुत ही व्यक्तिगत विभिन्नता होती है। इसके कारण संतुलित भोजन का न होना या किसी प्रकार का रोग हो सकता है।

मानसिक परिपक्वता एवं सामाजिक समन्वय का सम्बन्ध अस्थि परिक्वता से है। स्थायी दांत निकलते रहते हैं। दातों की उचित देख रेख होनी चाहिये। शरीर की छोटी मांस पेशियां बढ़ती हैं, हाथ से कार्य करने के कौशल में वृद्धि होती है। मांस पेशियों का समन्वय उत्तम होता है। हाथ एवं आंख का समन्वय बढ़ता रहता है। आसन एवं डील डौल में दोष हो सकते हैं। पुराना रोग, थकान, असंतुलित भोजन, उच्चारण की कठिनाईयों एवं संवेगात्मक असमायोजन के कारण यह दोष उपस्थित हो सकता है। शरीर की तुलना

में हृदय कम बढ़ता है। अस्थि मांस पेशियों के शीघ्र थक जाने के कारण हृदय पर किसी प्रकार का आघात नहीं हो पाता है। अपनी आयु एवं शक्ति से अधिक व्यक्ति के साथ प्रतियोगिता नहीं होनी चाहिये क्योंकि इसमें हृदय पर बोझ पड़ने का भय है फेफड़े भी पूर्णरूप से नही उठे होते हैं। दृष्टिमान्ध (Short sightedness) की सम्भावना होती है। ग्रंथियों तथा बनावट में आन्तरिक परिवर्तन आरम्भ होता है। लड़कियां, लड़कों की तुलना में शीघ्रता से बढ़ती हैं। लड़कों में यह अधिक देर तक चलता रहता है। परिपक्वता का होना आरम्भ होता है, लड़कियों में रजस्राव (Menstruation) १२ वर्ष में साधारणतः होता है।

विशेषतायें :—बालक इस आयु में ठोस होने लगते हैं। स्वास्थ्य उत्तम रहता तथा शक्ति अधिक होती है। वह सदैव शीघ्रता करता हुआ पाया जाता है तथा अस्वच्छ होता है। घटनायें घटित हो सकती हैं। रुचि एवं ध्यान में वृद्धि होती है। उसके ध्येय निकटवर्ती होते हैं। समन्वय में वृद्धि होती है। अपने बनाये समूह में अधिक देर तक खेलता है। टीम के खेलों में रुचि होती है, तथा उनके निर्णय से अपने को बाध्य समझता है। आत्म प्रदर्शन एवं मान की भावना होती है जो, कद बढ़ा के बात करने या विरोध के द्वारा अर्जित करने की चेष्टा की जाती है। ताल ज्ञान में भी वृद्धि होती है। लैंगिक विरोध की भावना होती है। आज्ञा पालन एवं निर्भरता की आशा की जा सकती है। व्यक्तिगत स्वच्छता की देख भाल होती है।

मनोवैज्ञानिक विशेषतायें :—समाज में उसका स्थान सुरक्षित होना चाहिये। नियम बनाने एवं स्तर नियत करने की स्वतंत्रता होनी चाहिये। बड़ों की सहानुभूति की अधिक आवश्यकता है। परिवार के कार्यों में उसे उत्तरदायित्व मिलना चाहिये। शारीरिक नियन्त्रण, शक्ति तथा सहने की शक्ति की वृद्धि का पूर्ण अवसर प्राप्त होना चाहिये। सम्पूर्ण शरीर का प्रयोग एवं व्यायाम होना आवश्यक है। निम्न श्रेणी के खेल आदि जिसमें बालक 'चोर' बनता है, होना चाहिये। हुल्लड़ एवं अधिक आवाज के खेल से प्रसन्नता होती है। ऋतु के खेल में वह आनन्द लेता है टीम के खेल के लिये खेलों का संगठन आवश्यक है। कौशल के अभ्यास के लिये वह तैय्यार रहता है। किसी कौशल में प्रवीणता प्राप्त करने के कारण वह आत्म निर्भरता प्राप्त करता है। समूह के कार्यों में सहयोग, जो उत्तम नेतृत्व का आरम्भ है, बालकों के लिये आवश्यक है। खुले में खेल उन्हें प्रिय है। कैम्पिग, पर्यटन आदि उन्हें भाता है कम से कम

११ घंटे उन्हें सोना चाहिये। मध्याह्न में भी विश्राम करना आवश्यक है। देखने एवं बोलने के दोषों पर ध्यान देना चाहिये। अच्छे आसन ऐवं डील डौल का ज्ञान आवश्यक है।

१०—१२ वर्ष आयु

शारीरिक विकास:—यह एक परिवर्तन का अवसर है। बढ़ाव अधिक होता है। ११ वर्ष की आयु में लड़कियां लड़कों से अधिक लम्बी एवं भारी होती हैं। लड़कों के हाथ पैर शरीर की तुलना में अधिक बड़े होते हैं। स्थायी दांत पूर्ण रूप से आ जाते हैं। मांस पेशियों का बढ़ाव भी अधिक होता है, इसी कारण चंचलता आ सकती है। शारीरिक अंगों के बढ़ाव में समन्वय न होने के कारण नियन्त्रण में त्रुटि आ सकती है। बेढंगापन अधिकतर प्रतीत होता है। हृदय तेज़ी से नहीं बढ़ता। थकान अधिक हो सकती है। विशेष विश्राम की आवश्यकता होती है। छोटी बीमारियां सम्भव हैं। जनेन्द्रिय या जननेन्द्रिय में परिपक्वता शीघ्रता से आती है। लैंगिक विशेषतायें प्रदर्शित होती हैं। बालकों की आवाज में परिवर्तन ऐवं बालों का बढ़ाव होता है।

विशेषतायें:—'स्वयं' की भावना प्रबल होती है। शारीरिक परिपक्वता एवं भाव में अत्यन्त वैयक्ति विभिन्नता होती है।

अधिक वजन, धीमी गति, शिथिलता, गिरता हुआ आसन एवं डील डौल, थकान, सतर्कता एवं चिड़चिड़ाहट बारी बारी से दिखायी दे सकती हैं।

बाहर के कार्यों से रुचि होती है। प्रतियोगिता अधिक होती है। अच्छे खिलाड़ियों के भाव (Sportsmanship) का सम्मान होता है। उच्च श्रेणी के संगठित खेलों में रुचि अधिक होती है। 'स्वयं' के भाव को समूह के लिए कम किया जाता है। अकुशल बालक नये कार्य करने में हिचकिचाता है। अधिक कार्य के कारण थकान अधिक हो सकती है। इससे हानि होने की सम्भावना है। लड़कियां लड़कों की तुलना में शीघ्र थक जाती हैं। अपनी आयु के लोगों से मेल अधिक होता है। सम्मान की ओर ध्यान दिया जाता है। सामुहिकता का भाव एक दो मित्रों के प्रति भाव में परिवर्तित होता है। आर्थिक लाभ के कारण कार्य करने की इच्छा होती है। विपरीत लिंग में रुचि होती है। शारी-

रिक परिवर्तन संवेगात्मक रूप धारण कर सकते हैं। लैंगिक चैतन्यता एवं आत्म चैतन्यता के कारण विपरीत लिंग के व्यक्ति के प्रति लज्जा या संकोच होता है।

मनोवैज्ञानिक विशेषतायें :—

आयु एवं आवश्यकता के अनुसार खेल के चुने जाने के लिये निरीक्षण की आवश्यकता है। सामूहिक रूप से भाग लेने के लिये कौशल की आवश्यकता है इस हेतु उसे उचित सूचना की आवश्यकता होगी। उच्च श्रेणी के संगठित खेल में रुचि होगी। बैठकर रहने वाले या अपने को सुरक्षित रखने वाले बालक को खेल में रुचि उत्पन्न करने के लिये चेष्टा करनी आवश्यक है। लड़के एवं लड़कियों के खेलों में इस आयु से विभिन्नता आ जाती है। अपने मानसिक विकास की तुलना में उसे मांसपेशियो की क्रिया से संतोष प्राप्त होना चाहिये।

रुचि में परिपक्वता, परिपक्व कार्यक्रम के द्वारा विकसित करनी चाहिए। सामाजिक सम्बन्ध एवं सामाजिकता के लिये साधन उपलब्ध होना चाहिये। १० घंटे का विश्राम अनिवार्य है। वैयक्तिक प्रभाव एवं बाह्य रूप के उत्तम प्रदर्शन की रुचि शारीरिक दोषों के निवारण में सहायक होगी।

बाल्यावस्था (Childhood) ५ से १२ वर्ष तक :—

बाल्यावस्था के विकास में मानसिक विकास व शारीरिक विकास एक समान नहीं होता किन्तु वह पानी की लहरों के समान होता है।

तीन वर्ष तक विकास तीव्रगति से होता है इसके पश्चात् एक स्थिरता का समय होता है। ६ से ७ वर्ष में तीव्र गति से विकास होता है जो प्रायः स्थायी होता है। यह मानसिक तथा शारीरिक स्थायी स्थापना, बाल्यावस्था की अन्तिम सर्वश्रेष्ठ विशेषता है। यह ध्यान देने योग्य है कि इस आयु से बालक जटिल विकास की अवस्था में होता है। वह कुछ हद तक वातावरण की अनुकूलता प्राप्त कर लेता है जिसे वह पुनः किशोरावस्था में खो देता है तथा युवावस्था में पुनः प्राप्त कर लेता है।

सामुहिकता की मूल प्रवृत्ति प्रबल हो जाती है वह दूसरे बालकों के साथ समूह में रहता है। अपने ही समान दूसरे बालकों की संगत में आत्म प्रदर्शन के लिये इसे अनिवार्य माध्यम समझता है। वह समूह की गुप्त बातें अन्य को नहीं

बताता। यहां सामुहिकता की मूल प्रवृत्ति अपने वास्तविक रूप में कार्य करती है और सामाजिक व्यवहार का उच्च रूप दृष्टिगत नहीं हो पाता जिसमें दूसरों की भलाई तथा आत्म बलिदान दिखाई दे।

उसका व्यवहार अधिकतर सामाजिक प्रशंसा की आज्ञा में स्थिर होता है जिसका मुख्य अधिकार समूह को है।

बाल्यावस्था के अन्तिम काल की नैतिकता भी समाज के मन के द्वारा नियमित होती है जो शक्तिशाली होती है और उसमें किसी प्रकार समझौता नहीं होता। बालक में यह भावना होती है कि उसका प्रथम दायित्व समूह के प्रति है इसलिये नेता की आज्ञाओं का पालन वह हर मूल्य पर करने को तत्पर रहता है। इसी कारण कभी-कभी उसकी अवस्था शोचनीय हो जाती है क्योंकि साथ ही साथ वह दूसरे सामाजिक समूहों का सदस्य है जैसे, परिवार, स्कूल, समाज आदि।

ग्यारह बारह वर्ष का बालक स्वभावतः ही बहुमुखी होगा, वह अपने मानसिक जीवन का बाह्य वस्तुओं से सम्बन्ध रखता है। कैसे कार्य होता है इसको जानने के लिए वह उत्सुक रहता है। इस कारण अनेक सूचनाएं विभिन्न विषयों पर एकत्रित करता है।

किशोरावस्था १३ से १८ वर्ष तक (Adolescence)

शारीरिक विकास :—

इस आयु में लड़कियां लड़कों से दो वर्ष आगे होती हैं। लड़कियां प्रायः १४ वर्ष की आयु में पूरी लम्बाई प्राप्त करती हैं। लड़के प्रायः १६ वर्ष में प्राप्त करते हैं। दोनों कुछ वर्षों तक बढ़ सकते हैं। अस्थि बढ़ाव पूर्ण हो जाता है। लैंगिक परिपक्वता आ जाती है। मुख एवं शरीर प्रौढ़ अवस्था के चिन्ह दिखलाने लगते हैं। समन्वय में प्रगति होती है। लड़कों में मांसपेशियां कड़ी एवं मजबूत हो जाती हैं। लड़कियों की मांसपेशियां मुलायम रहती हैं। आसन एवं डील डौल में प्रगति होती है। नियन्त्रण एवं लावण्य का प्रदर्शन होता है। हृदय ढाँचे में अधिक बढ़ जाता है। कठिन थकान देने वाली प्रतियोगिता में भाग अधिक नहीं लेना चाहिये क्योंकि हो सकता है कि हृदय एवं रक्त वाहिनी

धमनी (Artery) आपस में क्रमशः न विकसित हुये हों। इस अवस्था में परिपक्वता पूर्ण हो जाती है। ग्रंथियों के कार्य में अस्थिरता हो सकती है। क्षय रोग इस अवस्था में सम्भव हैं।

विशेषता:—शारीरिक रूप से प्रौढ़ता प्राप्त कर लेने पर भी अनुभव में कमी रह सकती है। व्यक्ति इस अवस्था में अत्यन्त संवेगात्मक होता है। वह जीवन में अपना स्थान स्थापित करना चाहता है। संवेगात्मक अस्थिरता सम्भव है। आयु समूह के स्तर प्राप्त करने की इच्छा होती है। माता पिता से अधिक शिक्षक की सुन सकता है। किशोरावस्था में किसी व्यक्ति से जिसे वह सराहता है निकट सम्पर्क स्थापित होता है। लड़के बड़ा होना तथा शक्ति चाहते हैं। लड़कियां सुन्दरता चाहती हैं। शारीरिक आकर्षण पर दोनों लिंगों में ध्यान दिया जाता है। लैंगिक विकास के कारण आत्म चैतन्यता हो सकती है। इस अवस्था में लड़कों की तुलना में लड़कियां लड़कों को अधिक चाहती हैं। लैंगिक विशेष समस्या पारिवारिक स्नेह की कमी एवं दूसरे सम्बन्धों के कारण उपस्थित हो सकती है।

मनोवैज्ञानिक विशेषता:—उनकी आयु का सम्मान करते हुये परामर्श की आवश्यकता होती है। स्वतन्त्रता एवं सुरक्षा में सन्तुलन होना चाहिये। पारिवारिक संगठन की अत्यन्त आवश्यकता है क्योंकि संसार की उलझन से बचने के लिये व्यक्ति परिवार में ही जाता है। इस आयु में बालकों के पास उचित आदर्श एवं कार्य होना चाहिये जिनमें वे अपना अतिरिक्त संवेग एवं शक्ति का प्रयोग कर सकें, परिपक्वता, शक्ति तथा रूचि में विभिन्नता के कारण लड़के एवं लड़कियों का कार्यक्रम पृथक होना चाहिये। लड़कियों की कूल्हे की हड्डियां लड़कों से अधिक चौड़ी होती हैं तथा २० वर्ष तक पूर्ण रूप से विकसित नहीं होती। अतः इस क्षेत्र में किसी प्रकार का खिचाव नहीं होना चाहिये। कंधे की शक्ति में लड़के, लड़कियों से अधिक शक्ति रखते हैं, लड़कियों की जांघें, कूल्हे से एक तिरछे कोण से मिलती है। लड़कियों में गुरूत्व केन्द्र Centre of Gravity नीची है। शरीर की वजन की तुलना में लड़कियों में मांस पेशियों की शक्ति लड़कों से कम होती हैं अतः कठिन आपरेट्स का काम, दौड़ना, हाथों से शरीर के वजन को सहारा देना आदि लड़कियों के लिये नहीं होना चाहिये। १४ या १५ वर्ष की आयु के पश्चात लड़के तथा लड़कियों में पारस्परिक प्रतियोगिता नहीं होनी चाहिये।

(३) **किशोरावस्था (Adolescence) १२ वर्ष से १८ वर्ष तक :-** सैद्धान्तिक रूप से किशोरावस्था जीवन के प्रथम वर्ग की पुनरावृत्ति मानी जाती है। यह जीवन के विकास का द्वितीय पेंचदार घुमाव है। बालक में वह स्थिरता समाप्त हो जाती है जो उसके बाल्यावस्था के अन्तिम काल में थी। विशेषत: यह एक विकास का काल है क्योंकि इसी समय बच्चे स्त्री या पुरुष में विकसित होते हैं। सन्तानोत्पत्ति कार्य का आगमन जिससे किशोरावस्था का आरम्भ होता है, कुछ में तो शीघ्रता से आता है, कुछ में देर से। इसका कारण लिंग, जाति, जलवायु व्यक्तिगत बनावट इत्यादि होता है। साधारणत: लड़कों की परिपक्वता १३ से १४ वर्ष में, लड़कियों की १२ से १६ वर्ष में होती है।

इस आयु में शारीरिक परिवर्तन बहुत तेजी से होता है। हड्डियां तथा मांसपेशियां बढ़ती हैं। लम्बाई तथा वजन में विकास होता है। लिंग विभिन्नता के कारण शारीरिक अंग बढ़ते हैं। जीवन में नवीन जागृति होती है। यह उत्तेजना तथा शक्ति में वृद्धि का समय होता है। जीव आधारित कारणों के द्वारा जीवन में रुचि के परिवर्तन की एक बड़ी सामाजिक महत्ता हो जाती है। कुछ मूल प्रवृत्तियों तथा झुकावों पर, इस आयु में विशेष नियंत्रण की आवश्यकता है जिससे वे समाज द्वारा मान्य मार्गों पर कार्य करें। शिक्षकों का दायित्व इसके प्रति अत्याधिक है।

जीवन, सैकड़ों रीतियों से जिनकी आशा भी नहीं की जा सकती, विस्तृत होता है और उन्हीं में से किसी एक को अपना ध्येय तथा मार्ग चुन लेता है। इसमें विरोधी उत्तेजनाएं, तथा प्रतिरोध आश्चर्य पूर्ण रूप में पाये जाते हैं। इन सबके मध्य में तीन मुख्य विशेषताएं स्पष्ट रूप से दिखायी देतीं हैं।

(अ) स्वयं का बिस्तार (Expansion of selfhood)

(१) यह एक स्वतंत्रता तथा आत्मप्रदर्शन का समय है किन्तु यह बाल्यावस्था के अन्तिम काल से सर्वथा भिन्न है। यह अवलोकन शक्ति की स्वतन्त्रता तथा आत्मप्रदर्शन है जिसने जीवन की वास्तविकता की खोज करना आरम्भ किया है और इस भावना से प्रेरित है कि जीवन से प्राप्त करना तथा जीवन को देना उसका अधिकार है। किसी प्रकार के अधिकार को वह चुनौती दे सकता है।

(२) वह शुद्ध रूप से तथा लगन के साथ दार्शनिकता को अपनाता

है। वह साधारण अनुकरण नहीं करता। वह आन्तरिक गुणों को पहिचानता और मूल योग्यताओं को जानता है।

खेल की पुनरावृति सिद्धान्त से यह ज्ञात होता है कि वह शैशवकाल की मानसिक प्रवृत्ति की ओर अवनति करता है। उसमें निर्भरता की भावना इसी सिद्धान्त के द्वारा समझी जा सकती है।

(ब) सामाजिक मूल्यों का नवीन ज्ञान (New recognition of social values)

प्रथम सामूहिक प्रवृत्ति की उत्तेजनायें, सही सामाजिक व्यवहार के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। किशोरावस्था की स्वतन्त्रता एक नवीन सामाजिक ज्ञान के द्वारा, आत्मप्रदर्शन की इच्छा के कारण तथा अन्य को सहायता देने व दूसरों से सहायता पाने के कारण प्रभावित होती है।

बाल्यावस्था के अन्तिम दिनों में यह भावना थी कि जब वह स्वयं के लिए जीवित है, तो उसे वास्तविकता प्राप्त होती है किन्तु अब किशोरावस्था में वह वास्तविकता को बाल्यावस्था के स्वप्नों से कहीं अधिक गहराई में देखता है।

(स) संवेगात्मक अस्थिरता (Emotional instability)

बाल्यावस्था में जो स्थिरता होती है वह इस समय समाप्त हो जाती है। मानसिक तथा शारीरिक रूप से वह स्वयं को विधिवत नहीं कर पाता। भावों से प्रभावित तथा जिद्दी स्वभाव का होता है। वह इस धोखे में रहता है कि वह स्वयं सभी का आकर्षण बिन्दु है अतएव वह अत्याधिक आत्मचैतन्य रहता है। वह एक तीव्र संवेगात्मक जीवन व्यतीत करता है जिसमें उचित अनुचित व्यवहार की गति उसकी तीव्र उत्तेजना तथा शिथिलता में परिवर्तित प्रतीत होती है। यह अदभुत स्थिति किशोरावस्था के संवेगात्मक जीवन में विधिवत होने की असमर्थता के कारण होती है। उसका नैतिक चरित्र साधारणत: उथल-पुथल में होता है और इस विषय में निश्चित रूप से कुछ कह सकना संभव नहीं। शैशव काल के समान ही वातावरण के अनुकूल स्वयं को बनाने का कार्य उसे प्रारम्भ करना पड़ता है।

किशोरावस्था का सर्वश्रेष्ठ केन्द्रित तत्व जो प्रत्येक पहलू को प्रभावित करता है वह सन्तानोत्पत्ति लिंग के विकास के कारण है। इस समय यह मूल-प्रवृत्ति सर्वाधिक कार्यशील रहती है। इस मूलप्रवृति के परिपक्वता के कारण उसमें कुछ चिन्ता आ जाती है इसलिए बढ़ते हुए बालक को प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है और चतुराई के साथ उस पर नियन्त्रण व देखभाल का होना आवश्यक है। डा० जोन्स कहते हैं कि व्यक्ति शैशवकाल के लैंगिक इतिहास की पुनरावृत्ति है जिसका उच्च स्थान बाल्यावस्था के अन्तिम काल में था यह विशेष तीन गतियों में चलता है—

(१) **आत्मलिंगिक उत्तेजना**

(२) **समान लिंगिक गति**—उत्तेजना पूर्ण मैत्री जो लिंगिक स्वभाव में एक लिंग के दो व्यक्तियों में हो।

(३) **भिन्न लिंगिक गति**—संबंध का पात्र विपरीत लिंग का व्यक्ति।

यह तीनों गतियां एक दूसरे के बाद भी आ सकती हैं और सरलता से एक साथ भी रह सकती है।

लिंग किशोरावस्था का सर्वप्रमुख तत्व है और इसी का ही नहीं वरन् सम्पूर्ण जीवन का ही है।

Slaughter says "Like the over flows of a great river it irrigates and fertilizes great tracks of lifes territory"

किशोरावस्था में शिक्षा का कर्त्तव्य है उसकी शक्तियों का मार्गान्तीकरण तथा शोध किया जाये जिससे उन शक्तियों का प्रवाह समाज के द्वारा अन्य मार्गों पर हो सके। प्रत्येक प्रकार की सृजनात्मक योग्यता में शोध का परिणाम केन्द्रित होना चाहिए। लिंग, शिक्षा का शेष अध्ययन विषय है जिसे छोड़ा नहीं जा सकता। लिंग,शिक्षा की अनुपस्थिति के कारण है अनेक युवकों को भीषण चोट पहुंचती है। किशोरावस्था में अपने ही शरीर को पवित्र करना तथा स्वस्थ रीतियों के द्वारा जीवन के तत्वों का अध्ययन करना है।

युवावस्था (Maturity)—१८ वर्ष से आगे

इस समय के बाद युवावस्था आती है। रुचि फिर बाह्य प्राकृतिक

संसार तथा वस्तुओं की ओर आकर्षित होती है। कल्पना के संसार का अन्त हो जाता है और वास्तविकता सामने आती है। १८ वर्ष का युवक अब संसार का पुरुष हो जाता है।

शैक्षणिक उत्तरदायित्व (Educational Bearing)

यह एक प्रसन्नता का विषय है कि शिक्षा विकास चार अवस्थाओं एवं उनकी विशेषताओं पर आधारित हैं। प्रथम दो अवस्थाओं में चरित्र निर्माण संकेत एवं अनुकरण के द्वारा अधिक सम्भव है। व्यक्तित्व जो बालक के चारों ओर है ऐसी सामग्री या उदाहरण प्रदर्शित करें जिन्हें वह अपने आप ही अपनाले उदाहरण का सदैव एक सा होना तथा सही होना अनिवार्य है। दण्ड एवं पारितोषिक भी एक सा होना चाहिये जिसमें बालक सही कार्य करना सीखे। नये क्षेत्रों में आत्म नियन्त्रण को सीखना आवश्यक है। उन आदतों से सीखना आवश्यक है जो आगे चल कर लैंगिक शुद्धता में सहायता देगी। विकास की बाधक एवं विपरीत परिस्थितियों पर उचित ध्यान देना चाहिये। ये भाव क्रियाशील रीति से हों तथा केवल सैद्धान्तिक हों। लैंगिक विषयों में बालकों की जिज्ञासा का उचित उत्तर देना चाहिये, स्मृति शक्ति का पूर्ण उपयोग करना चाहिये।

किशोरावस्था के शीघ्र बढ़ाव के कारण उचित शारीरिक शिक्षा देनी आवश्यक है। पर्यटन की प्रवृति के कारण बाहर का जीवन अधिकता से व्यतीत करना चाहिये। स्वतंत्रता की भावना को उत्तरदायित्व के द्वारा प्रशिक्षित करना चाहिये। उत्सुकता की भावना के द्वारा बालक को अपने आप सीखने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये। आत्म प्रदर्शन की प्रवृत्ति को दबाना नहीं चाहिये।

स्वस्थ शरीर, अधिक मानसिक एवं प्रयोग, एवं शारीरिक सुन्दरता, प्रशंसा प्राप्त करने की भावना, सामाजिक एवं नैतिक आवश्यकताओं के अधिक प्रवाह के कारण ऐसी आदतों का निर्माण होगा जो जीवन में अमूल्य होंगी। निरर्थक प्रश्नों का स्थानान्तर ज्ञान पूर्ण अध्ययन से होना चाहिये। इस प्रकृति विकास के खुलने में यह आवश्यक है कि किसी वस्तु या व्यक्ति से प्रेम, कुछ ज्ञान की वस्तु तथा कुछ करने की वस्तु अवश्य हो।

तीन रचनात्मक शक्तियां है जो जीवन में चमत्कार उत्पन्न कर सकती हैं। शिक्षा, विभिन्न लिंगों में प्रेम तथा परोपकार एवं समाज सेवा।

७

सीखना

सीखना (Learning)

अधिकतर सीखना संघर्ष के कारण होता है। जिन मूल प्रवृत्तियों के साथ मनुष्य जन्म लेता है वे जीवन के संघर्ष के लिए पर्याप्त नहीं होती। अत: कठिन परिस्थितियों एवं वातावरण में नवीन एवं सर्वोपयुक्त प्रतिक्रियायें सीखनी पड़ती है। सीखना जन्मजात प्रवृत्तियों पर आधारित हैं। इन्हीं प्रवृत्तियों के कारण प्रेरणा या प्रयोजन होता है जो व्यक्ति को संघर्ष के लिए उत्तेजित करती हैं। वह अंधेपन से या ज्ञान पूर्वक अपने कार्य में संतोष प्राप्त करना चाहता है। अपने संघर्ष में वह उन विषयों का आविष्कार करता है जो उसे संतोष के स्त्रोत के समीप लाते हैं। सन्तोष पूर्ण अनुभव की पुनरावृति होती है तथा सीखना आरम्भ होता है।

गतिवाही क्रियायें उस समय कार्य करती हैं जब उन अंगों एवं बनावट में उस कार्य के करने की परिपक्वता आ जाती है। कौशल के सीखने के लिये उन अंगों की परिपक्वता आवश्यक है जिनके द्वारा कौशल सीखा जायेगा। जैसे जैसे व्यक्ति की परिपक्वता होती जाती है वैसे ही कौशल सीखने की योग्यता बढ़ती जाती है। परिपक्वता एवं सीखना आपस में भिन्न नही हैं किन्तु एक सिक्के के दो पहलू हैं। गतिवाही सीखना साधारण या सामान्य सीखने से भिन्न नहीं है। इसके सिद्धान्त अन्य अर्जित विषयों की तरह ही है।

इच्छा या प्रेरणा (Motive) सीखने वाले को उत्तेजित करती है जिससे वह अनुभव प्राप्त कर सके। व्यक्तियों की इच्छा या प्रेरणा में अनगिनत विभिन्नता होती हैं। व्यक्ति होने के कारण बाह्य दबाव नहीं डाला जा सकता। ये प्रेरणा या इच्छा शक्तिशाली आन्तरिक उत्तेजना (Dynamic inner esires होती हैं जो मूल प्रवृत्तियों से प्राप्त हैं।

शारीरिक क्रियाओं के लिये भी प्रेरणा जन्मजात होती हैं। दूसरी शारीरिक क्रियायें अर्जित होती हैं जो प्रशिक्षण एवं वातावरण के द्वारा प्राप्त होती है। इनमें कोई विशेष विभिन्नता नहीं है क्योंकि गतिवाही क्रिया करने की प्रेरणा जिससे आन्तरिक संतोष होता है प्रायः सभी क्रियाओं में एक सी होती है।

प्रेरणा के कारण व्यक्ति कार्यों का चुनाव करता है तथा एक कार्य को दूसरे की अपेक्षा प्रमुखता देता है। चुनाव बाह्य आन्तरिक दोनों कारणों के द्वारा होता है।सीखने के द्वारा मनुष्य में परिवर्तन होता है। इसमें शरीर के अंगों का समन्वय एवं समायोजन होता है। मांसपेशियां एवं स्नायु मंडल सहयोग देते हैं। सम्पूर्ण व्यक्ति सीखता है।

सीखने के नियम—(Laws of Learning)

(१) **परिणाम का नियम** (Law of Effect.) इसे संतोष तथा असंतोष का नियम भी कहते हैं। जब प्रतिक्रिया का संबंध स्थिति तथा प्रतिक्रिया के मध्य संतोषजनक होता है तो यह दृढ़ हो जाता है। यदि इसके विपरीत होता है तो यह कमजोर हो जाता है।

मनुष्य तथा पशुओं में जन्मजात संतोष तथा असंतोष की भावना रहती है। जैसे पारितोषिक संतोष प्रदान करता है तो दण्ड असंतोष। शिक्षा का कर्त्तव्य है कि इस जन्मजात संतोष व असंतोष की भावना को अर्जित संतोष व असंतोष में परिवर्तित कर दे। यह स्थायी भाव तथा आत्मसम्मान के स्थायी भाव से संबंधित होना चाहिए।

जिन क्रियाओं में सफलता और संतोष मिलता है उनका प्रभाव गहन होता है। असंतोष से निराशा होती है।

(२) **अभ्यास का नियम** (Law of Exercise) अभ्यास से वस्तु सम्पूर्ण होती है। कार्य को बार बार करने से सीखने में सरलता होती है। बहुत सी प्रतिक्रियाओं में परिणाम का नियम तथा अभ्यास का नियम एक साथ कार्य करते है। हम उन्हीं वस्तुओं को बार बार करते हैं जिनसे प्रसन्नता मिलती है। निरर्थक काम को बार बार करना व्यर्थ है। बार बार कार्य को करने के लिए प्रसन्नता तथा सफलता आवश्यक है।

अभ्यास न करने से सीखा हुआ कार्य भी भूल सकते हैं। अभ्यास न करने से प्रगति भी कम हो जायगी। अभ्यास से ही दक्षता प्राप्त होती है।

(३) तत्परता का नियम (Law of Readiness) नाड़ी मंडल के द्वारा कभी प्रतिक्रिया होती है और कभी नहीं। जब कार्य करने के लिये कोई तत्पर रहता है तो प्रसन्नता होती है यदि वह तत्पर नहीं रहता तो असंतोष होगा।

सीखने वाले में प्रबल इच्छा होना चाहिये। अरुचि तथा अनिच्छा सीखने में बाधक होती हैं। इच्छा तथा रुचि के साथ सीखने में तत्परता होगी।

सीखने के प्रकार :—

सीखना क्रियात्मक तथा विचारात्मक दो प्रकार का है।

(१) क्रियात्मक सीखना :—

निम्न वर्ग के प्राणी के सीखने का कार्य क्रियात्मक होता है। यह निम्न लिखित प्रकार से होता है।

(अ) प्रयत्न और भूल (Trial and Error)

जन साधारण अधिकाधिक इसी विधि से सीखते हैं। एक कार्य में जब तक त्रुटियाँ होती रहेंगी उसे तब तक बार बार किया जायेगा जब तक उस त्रुटि का निवारण हो और कार्य बिल्कुल सही हो जाय। अभ्यास से ही भूल कम होगी। मनुष्यों की अपेक्षा पशुओं में इसका व्यवहार अधिक होता है। इसमें मस्तिष्क का प्रयोग कम होता है।

(ब) अनुकरण के द्वारा सीखना (Learning by Imitation)

बालक प्रायः दूसरों को देखकर उनका अनुकरण करता है। यह प्रयत्न व भूल द्वारा सीखने से उच्च श्रेणी का हैं। शिक्षा दूसरों का अनुकरण है। इस विधि में एक विशेषता यह है कि अनुकरण साधारणतया बिना लाभ हानि,

अच्छाई बुराई का विचार करते हुये कर लिया जाता है। यदि अनुकरण विचारात्मक हो तो अच्छा होगा।

(२) **विचारात्मक सीखना** (Learning by Insight)

यह सबसे उच्च कोटि का सीखना है। इसमें बुद्धि तथा विचार का योग रहता है। इसलिये यह केवल मनुष्य वर्ग में ही संभव है। इसमें कार्य का निर्णय प्रयत्न तथा भूल के द्वारा नहीं वरन् कल्पना द्वारा किया जाता है। इस प्रकार का सीखना सर्वोत्तम हैं।

(अ) **सम्बद्ध सहज क्रिया से सीखना** (Learning by conditioned Reflex)

प्रत्येक क्रिया का एक स्वाभाविक परिणाम होता है। जैसे अच्छी खाने की वस्तु देखकर मुंह में पानी आना। यदि एक क्रिया से दूसरी क्रिया के परिणाम को जोड़ दिया जाये तो वह परिणाम बनावटी होगा।

कुत्ते को घंटी बजाकर खाना देने के समय लार का आना। तत्पश्चात् बिना खाना दिये घंटी बजाने से भी लार का आना। यहाँ भोजन की प्रतिक्रिया घंटी के साथ हुई।

इस प्रकार से सीखने में सामान्यीकरण द्वारा जिसमें पहले अपूर्ण ज्ञान होता है, ज्ञान प्राप्त होता है। दूध का जला छाछ भी फूंक फूंक कर पीता है।

दूसरा विश्लेषण द्वारा, ज्ञान प्राप्त होता है, जिनमें सीखने वाले में विश्लेषण की दक्षता आ जाती है। अभ्यास के कारण वस्तु विशेष से परिचित हो जाता है।

इसका परिणाम स्थायी नहीं होता। यदि बार-बार घंटी बजाई जाय और खाना न दिया जाए तो कुत्ते के मुंह से लार का आना बन्द हो जायगा। इसमें परिवर्तन सरलता से संभव है।

सीखने में उन्नति (Progress in Learning)

यह कई बातों पर निर्भर करता है, जैसे अभ्यास, रुचि, सीखने की रीति

अनुभव, आयु, शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य, सीखने का वातावरण विषय की जटिलता आदि । सीखने में उन्नति सदा एक सी नही रहती ।

सीखने का पठार (Plateau of Learning)

मनोवैज्ञानिकों के कुछ प्रयोगों के द्वारा यह सिद्ध होता है, कि सीखने का कार्य प्रारम्भ में तो कुछ वेग से होता है, फिर कुछ समय के लिये गति मन्द पड़ जाती है किन्तु अभ्यास करते रहने से पुनः उन्नति दिखाई देती है । इस प्रकार बीच में कुछ समय के लिये गति में जो स्थिरता आ जाती है उसे पठार कहते हैं । हर स्थिति में पठार की उपस्थिति सीखने में अवनति की सूचक नहीं होती । साधारणतया पठार की अवस्था में सीखे हुए कार्य का जमाव होता है इसलिये प्रत्यक्ष रूप में किसी प्रकार की उन्नति नहीं दिखाई पड़ती । सीखने में पठार के कई कारण हो सकते हैं । कुछ कारण इस प्रकार हैं, उद्देश्य के प्रति निराशा, अरुचि, असावधानी, थकान, सीखे हुये ज्ञान की दृढ़ता, शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य, गलत विधि को अपनाना, उन्नति बहुत मन्द होना आदि ।

सीखने के पठार में यह ध्यान देने योग्य है कि अभ्यास करने से फिर प्रगति होगी किन्तु एक ऐसी अवस्था भी आती है जिसके आगे प्रगति संभव नहीं। इसको शारीरिक व मानसिक क्षमता की सीमा कहते हैं । व्यक्तियों की शारीरिक तथा मानसिक क्षमता भिन्न-भिन्न होती है ।

क्रियात्मक सीखने की विधियाँ

(१) अनायास प्रतिक्रिया का होना (Random Respones)

बालक तथा प्रौढ़ अनायास ही जब कुछ कर लेते है तो उसके द्वारा भी कुछ कुछ सीखते हैं ।

(२) व्यर्थ प्रतिक्रिया की अवहेलना (Elimination of wrong Responses)

भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में प्राणी उन प्रतिक्रियाओं को त्याग देता है जिससे असन्तोष होता है और उन्हें बार बार करता है जिससे सन्तोष होता है ।

(३) उत्तेजना में परिवर्तन (Substitution of stimulus)

किसी भी प्रतिक्रिया के लिये एक विशेष उत्तेजना की आवश्यकता होती है किन्तु एक विशेष उत्तेजना के स्थान पर दूसरी, या तीसरी उत्तेजना भी कार्य कर सकती है। मिठाई को देखने से मुँह में पानी आता है। मिठाई के नाम मात्र से मुँह में पानी आ सकता है। जिस डिब्बे में मिठाई रखी जाती है यदि खाली ही बन्द है और यदि सामने लाया जाये तो भी मुँह में पानी आ जायगा।

(४) प्रतिक्रिया का परिवर्तन (Substitution of Responses) व्यक्ति जो कुछ भी सीखता है वह प्रतिक्रियाओं का ही फल होता है। आग से जल जाने पर भविष्य में उसी समान वस्तु को वह सावधानी से छूयेगा। कई प्रतिक्रियाओं के पश्चात हम अनुभव से लाभ उठाकर सहीं प्रतिक्रिया करते हैं और पुनः करने में सरलता भी होती है।

(५) प्रतिक्रियाओं का एकीकरण (Combination of Responses)

बालक सरल से जटिल प्रतिक्रिया की ओर बढ़ता है तथा क्रमशः इन प्रतिक्रियाओं का एकीकरण होता है। इसी कारण इस जटिल जीवन में इन प्रतिक्रियाओं के एकीकरण का प्रत्यक्ष प्रयोग दृष्टिगत होता हैं। किसी कार्य के करने में प्रारम्भ में कठिनाई का अनुभव होता है किन्तु अभ्यास से वही सरल हो जाता है। प्रतिक्रियाओं के एकीकरण से कार्य में सरलता आ जाती है।

सीखना तथा कौशल का स्थानान्तरण (Transfer of Learning and Skills):—

पुराने विचारों के अनुसार स्मृति, सोच-विचार, तर्क कौशल, ध्यान, आज्ञा पालन आदि मस्तिष्क की शक्तियाँ समझी जाती थी जिसमें बढ़ाना व घटाना संभव समझा जाता था जैसे किसी चीज में कुछ जोड़ दिया जाये या फिर निकाल लिया जाये।

यह सही है कि सीखने तथा कौशल का स्थानान्तरण हो सकता है किन्तु पुराने विचारों के अनुसार असम्भव है।

साइकिल चलाने से पैरों में शक्ति आती हैं उससे पहाड़ पर चढ़ने का काम

लिया जा सकता है। उसी तरह नाव खेने से हाथों में जो शक्ति आती है उससे जिमनास्टिक में उपयोग किया जा सकता हैं। जहाँ मांस पेशियो में शक्ति का प्रश्न हैं वहाँ जो शक्ति एक अवस्था में अर्जित की गई हैं वह दूसरी अवस्था में प्रयोग में लायी जा सकती है। यह कौशल की गति के लिये सत्य नहीं है फिर भी इसमें कौशल आ ही जाता है। शक्ति, अर्जित प्रतिक्रियाओं के बिना जिनमें उसका प्रयोग किया जा सकता है, व्यर्थ है।

स्थानान्तर अपने आप नहीं होता। किसी अनुभव में जितना अधिक अर्थ होगा उससे उतना ही कुछ लिया जा सकना संभव है।

खेल में ईमानदारी की भावना को इस प्रकार सामान्यीकरण व्याप्त किया जा सकता है कि व्यक्ति प्रत्येक अवस्था में ईमानदार रहे। किन्तु यह तब तक सम्भव नही होगा जब तक इस नयी स्थिति में जान बूझ कर पुराने अनुभव के अनुसार काम न किया जाये।

सीखना जितना सार्थक होगा, स्थानान्तरण उतना ही सम्भव होगा। जब आवश्यक सम्बन्ध तथा विचार सीख लिये जाते हैं और सामान्यीकरण व्याप्त हो जाता है तब यह जीवन पर्यन्त प्रयोग में लाया जा सकता है।

नियन्त्रित प्रतिक्रिया के दृढ़ रखने के लिये यह आवश्यक है कि उसे सदा सहारा दिया जाय क्योंकि जब कभी स्थानान्तरण होता हैं तो परिणाम यह निश्चित करता है कि उसे सहारे की आवश्यकता है या उसे समाप्त कर देना है।

स्थानान्तरण को ध्यान में रखते हुये विलियन का कार्य महत्वपूर्ण है। विशेष कर जिमनास्टिक के कार्य में। जैसे आसन के प्रशिक्षण में सीधे खड़े होने के लिये झुकने की प्रवृत्ति का विलियन करना है।

विलियन प्राणी का एक साधारण कार्य है विशेष कर आन्तरिक अंगों में।

अस्थिपन्जर के मांस पेशियों में विलियन सीधे प्रयोग होता है। जब किसी मांस पेशी का विलियन होता है तो वह कार्य में अधिक तत्पर हो जाती

है। इससे यह प्रमाणित होता है कि विलियन कार्य में बाधक नहीं वरन् इससे भिन्न हैं। वास्तव में विलियन कार्य के लिये तैयारी करना है। यह परिवर्तन केन्द्र से संबन्धित है इसलिए मांस पेशियों से अधिक नाड़ी तन्तु में महत्वपूर्ण परिवर्तन दिखाता है।

विलियन को शरीर में गति की तैयारी समझना चाहिये। इसका प्रभाव व्यक्ति में गति की योग्यता को बढ़ाना है। यदि इसे कार्य से रोक दिया जाये तो हानि होगी।

शारीरिक शिक्षण में सीखना (Learning in physical education)

शारीरिक शिक्षण तथा दूसरी प्रकार की शिक्षा में कोई विशेष भेद नहीं है। सभी शिक्षा का आधार मनोविज्ञान है तथा वही नियम सर्वत्र व्यवहार में आते हैं। मनोवैज्ञानिक आधार भी एक ही है। यहाँ पर कुछ विशेष बातें हैं जो शारीरिक शिक्षण के दृष्टि कोण से उपयोगी है।

सीखने के लिये अनुभव की आवश्यकता है। उत्तेजनाओं के प्रति, प्रतिक्रिया करने से व्यक्ति सीखता है तथा अनुभव प्राप्त करता है। शारीरिक शिक्षण में इस बात पर जोर देने की आवश्यकता है कि हमारा सीखना विभिन्न प्रकार की प्रतिक्रिया करना है। एक आती हुई गेन्द के प्रति प्रतिक्रिया, एक तेजी से भेजा हुआ टेनिस का गेंद तथा इसी प्रकार की अगणित उत्तेजनाएं है। शारीरिक शिक्षण में सीखना, प्रतिक्रिया करने का प्रकार है। शारीरिक शिक्षा में प्रतिदिन बालकों को अपनी प्रतिक्रिया में उन्नति करना चाहिए।

हम साइनाप्स की विशेषता जान चुके हैं। ज्ञानात्मक स्नायु के देने वाले सिरे तथा गतिवाही तन्तु के ग्रहण करने वाले की संयुक्ति को साइनाप्स कहते हैं। इसी स्थान पर स्नायु प्रवाह ज्ञानात्मक स्नायु के गतिवाही तन्तु पर कूद कर जा सकती है। यह मस्तिष्क तथा मेरुदण्ड में स्थित हैं और उनसे होकर स्नायु प्रवाह एक ही ओर गतिवाही हो सकती है।

मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि यदि यह साइनाप्स की संयुक्ति बार बार की जाये और प्रतिक्रिया संतोष के साथ हो तो ये स्नायु के सिरे आपस में समीप आते जायेंगे, स्नायु प्रवाह के प्रवेश में बाधा कम हो जायगी और संयुक्ति

सरलता से होगी। किसी शारीरिक कार्य को बार बार सही रीति से करने में यदि संतोष हो तो वह कार्य सरलता से किया जाता है।

मनोवैज्ञानिक प्रयोगो से यह प्रमाणित है कि यदि कोई वास्तविक रूप में यह मान ले कि वह शक्ति शाली है और किसी कार्य को कर सकता है तो वह साधारण स्थितियों में भी अधिक शक्ति दिखायेगा। प्रत्येक कार्य के लिये विश्वास होना आवश्यक है कि वह किसी भी कार्य को ठीक प्रकार से कर लेगा।

मानसिक प्रयत्न और भूल के द्वारा सीखने में शारीरिक शिक्षण में लाभ होगा। इसके द्वारा खेलने वाले नयी-नयी स्थितियों को समझते हैं। साथ ही साथ उसमें कौन सी प्रतिक्रिया होगी इसका भी अनुमान लग जाता है। आदेशित निरीक्षण के द्वारा यह और लाभदायक प्रमाणित होगा। शारीरिक शिक्षा में प्रतिक्रिया योग का विकास अत्यन्त आवश्यक है। किसी दी हुई उत्तेजना के उत्तर में यदि एक प्रतिक्रिया केवल की जाये तो उतना लाभ नहीं होगा जितना कि प्रतिक्रियाओं के योग से होगा।

जटिल कौशल अनेक प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप हैं। शारीरिक शिक्षण में कौशल के करने में या उसकी गति में सही समय पर करने की कुशलता अनिवार्य है। गति यदि सही समय से तथा सही समय पर नहीं की जायगी तो उसमें पूर्णता प्राप्त नहीं होगी।

शारीरिक कौशल में सही समय पर कूदना, आरम्भ करना, पुश अप करना, टेक आफ लेना इत्यादि बहुत ही आवश्यक है। अभ्यास के द्वारा जो प्रतिक्रियायें सहायता नहीं देती उनके निवारण से यह संभव हो सकता है। सही प्रतिक्रियाओं का प्रयोग तथा गलत प्रतिक्रियाओं का निवारण ही इसका नियम है।

गतिवाही कौशल का विकास (Development of motor skills)

(१) विषय को सीखने की रुचि तथा तैयारी हो। (२) साफ नमूना जो समझ में आ जाये उसका प्रदर्शन। (३) कौशल का विश्लेषण तथा शिक्षक का समझाना। (४) विषयों के प्रदर्शन में निरीक्षण, अध्ययन तर्क

के पश्चात अभ्यास । (५) अभ्यास के समय शिक्षक के निर्देश तथा सहायता। (६) सही प्रकार का अभ्यास । (७) सही करने का अभ्यास । (८) अपने आप कार्य हो इसका अभ्यास । (९) सरलता तथा सुगमता से कार्य करना। (१०) ठीक रीति तथा तेजी पर जोर। ठीक होना पहले आवश्यक है। (११) अभ्यास के समय का विभाजन ऐसे हो कि थोड़े समय में ज्यादा से ज्यादा सीखा जाये। (१२) उपयुक्त वस्तु तथा साधन का प्रयोग। (१३) आत्मलोचन का प्रचार। (१४) पूर्णता प्राप्त करने के लिये अभ्यास। (१५) अभ्यास तथा प्राप्ति में संतोष। (१६) कार्य के अभ्यास में रुचि। (१७) कार्य का अभ्यास उसी प्रकार करना जिस प्रकार उसका व्यवहार किया जाये। (१८) प्रदर्शन साफ हो। (१९) पूर्ण ध्यान की आवश्यकता। (२०) सही, तीव्रता तथा स्वच्छता के साथ कार्य करना।

8

ध्यान एवं रुचि

ध्यान

दूसरी विकसित मानसिक शक्तियों की तरह ध्यान की उत्पत्ति भी मूल प्रवृत्तिगत व्यवहार में है। मूल प्रवृत्तियों में तीन भाग होते हैं। ज्ञानात्मक, क्रियात्मक एवं भावात्मक। भावात्मक का विकास संवेग में दिखायी देता है। क्रियात्मक का विकास इच्छा में दिखायी देता है। मूल प्रवृत्ति का ज्ञानात्मक भाग ध्यान का प्रारम्भिक रूप है। शिक्षा एवं प्रत्येक प्रकार की मानसिक क्रिया में ध्यान आवश्यक है। मन को सक्रिय करने के लिये किसी वस्तु की ओर ध्यान देना आवश्यक है। यह कोई विशेष मानसिक शक्ति नहीं है किन्तु यह मन या व्यक्ति की क्रिया है जो वस्तु की ओर ध्यान देता है। दृष्टि से जब किसी वस्तु पर ध्यान दिया जाता है तो वह वस्तु सफाई से दिखायी देती है। उसके चारों ओर की चीजें धुंधली दिखायी देती हैं। इसी प्रकार चेतना में ध्यान की वस्तु स्पष्ट रहती है तथा दूसरी वस्तुएं अधिक स्पष्ट नहीं होती। अतएव कहा जा सकता है कि विचार की वस्तु को स्पष्टता से मन के सम्मुख लाने को ध्यान कहते हैं।

इस विचार में दोष है क्योंकि इससे यह पता नहीं चलता कि हम ध्यान क्यों देते हैं।

आधुनिक मनोविज्ञान ध्यान के विषय में संवेग एवं क्रिया पर निर्भर है। Mc. Dougal "Striving to cognize, or striving considered from the point of view of its effect on Cognitive process".

ध्यान कोई ज्ञान की शक्ति नहीं है। यह एक प्रकार की चेष्टा करना है। जितनी शक्तिशाली इच्छा होगी उतना ही अधिक ध्यान होगा। ध्यान उसी ओर आकर्षित होगा जिस ओर प्रवृत्ति की स्वाभाविक रुचि होगी। हम उस वस्तु की ओर ध्यान देते हैं जिससे हमारा तात्पर्य है या जिससे प्रयोजन है या जिस ओर हम प्रेरित होते हैं। अत: यह कहा जा सकता है कि प्रवृत्तियां हमारे लिये हमारे ध्यान की वस्तु का चुनाव करती हैं।

रुचि का अर्थ (Meaning of Interest) :—

(१) रुचि का अर्थ है कि किसी वस्तु से हम सम्बन्धित हैं या किसी वस्तु से हमें लगाव है। इन शब्दों से व्यक्ति के बाह्य का बोध होता है। जैसे हम कहते हैं कि उसकी रुचि खेल में है।

(२) रुचि से व्यक्ति के अनुभव का बोध होता है। यह आन्तरिक प्रयोग है। जैसे वह खेल में लीन है। यदि रुचि केवल अनुभव है तो विचार करने के समय उसे उपस्थित नहीं होना चाहिए। किन्तु जहां रुचि है, वहां रुचि विचार की अनुपस्थिति में भी वर्तमान रहती है। अतएव रुचि की इस स्थायी स्थिति को समझने के लिये इसे एक दशा समझा जाता है जिसका अर्थ संस्कार से है।

(३) मनुष्य की आधारभूत रुचि उसकी स्वयं की प्रवृत्ति है। किन्तु इनके साथ ही स्थायी भाव हैं। जो अर्जित रुचि हैं। Interest is a disposition in its dynamic aspect" Drever.

किसी विषय का ज्ञान उसमें रुचि उत्पन्न नहीं करता। रुचि विशेषत: इच्छा है। रुचि एक क्रियात्मक दशा है। यह प्रवृत्ति स्थायीभाव या स्वयं संगठित व्यक्ति का रूप है।

ध्यान एवं रुचि का सम्बन्ध

ध्यान एवं रुचि एक सिक्के के दो पहलू हैं। रुचि में ध्यान लिप्त है। रुचि ही क्रिया शील दशा में ध्यान हो जाती है। "Interest is latent attention and attention is interest in action."

वह ध्यान जो प्रवृत्तियों या स्थाई भाव के द्वारा प्रेरित है तथा जिसमें

इच्छा शक्ति की आवश्यकता नहीं होती उसे अनिच्छित (ध्यान Non Volitional) कहते है।

जब किसी वस्तु में आनन्द या रुचि न आये तथापि ध्यान लगाया जाये तो उसे बाध्य ध्यान (Non Voluntary, forced) कहते हैं।

आकस्मिक घटना से किसी ओर ध्यान देने को सहज ध्यान (Non Voluntary Spontaneous) कहते हैं।

इच्छा यथा रुचिवर्धक ध्यान को इच्छित ध्यान Voluntary attention कहते हैं।

अर्जित ध्यान Acquired attention उसे कहते हैं जहां अर्जित की हुई रुचि की ओर ध्यान आकर्षित हो।

रुचि Interest एवं प्रसन्नता Pleasure कभी कभी एक ही अर्थ में प्रयोग किये जाते हैं किन्तु इनमें भिन्नता है। उदाहरण के लिये एक आपरेशन रुचिकर हो सकता है किन्तु उसमें प्रसन्नता नहीं है।

ध्यान के कारण (१) बाह्य प्रेरक उत्तेजना की प्रबलता Intensity of **stimulus** जो उत्तेजना प्रबल होगी ध्यान उसी ओर जायेगा। बाजार के शोर में भी हम मोटर की आवाज सुनते हैं।

(२) **परिवर्तन** Change :—जब वस्तु साधारण हो तो हम ध्यान नहीं देते किन्तु यदि उनमें कोई परिवर्तन हो तो हमारा ध्यान उस ओर जायेगा। मोटर चलाने वाले मशीन के किसी पुर्जे की खराबी से कोई छोटी आवाज भी हो तो सुन लेते हैं।

(३) **विषय की नवीनता** Newness :—किसी वस्तु में यदि कोई नयापन आ जाये तो ध्यान उस ओर आकर्षित होगा।

(४) **विरोध** Contrast :—दो विभिन्न रंगो में एवं एक मोटे तथा दुबले के विरोध में उस ओर ध्यान आकर्षित होगा।

(५) **गतिशीलता** Movement :—गतिमान वस्तु की ओर स्थिर वस्तु की अपेक्षा अधिक ध्यान आकर्षित होता है।

(६) पुनरावृत्ति Repetition :—घटना के बार बार होने से ध्यान उस ओर आकर्षित होगा इसमें नवीन घटना से अर्थ है। जो दैनिक है उस ओर विशेष ध्यान आकर्षित नहीं होता।

(७) विचित्रता Strangness :—असाधारण वस्तु की ओर ध्यान आकर्षित होता है।

आन्तरिक प्रेरक

(१) जन्म जात एवं मूल प्रवृत्तियों के कारण Innate tendencies & Instincts.

(२) अर्जित प्रेरक, शिक्षा, आदत, रूचि Acquired Motive Training Habit Acquired Interest

ध्यान की कुछ विशेषता

(१) ध्यान चुनाव प्रधान होता है (Selective)

(२) एक वस्तु से दूसरी वस्तु पर हटता रहता है (Shifting Nature)

(३) किसी एक क्षण ध्यान का क्षेत्र सीमित होता है (Attention on a limited area at a time.)

(४) लक्ष्य पूर्णता (Purposeful)

सब प्रकार के ध्यान का शिक्षा में महत्व है। मूल प्रवृत्ति एवं सामान्य प्रवृत्ति के द्वारा बालकों का ध्यान होता है। स्थायी भाव, रुचि एवं अनैच्छिक ध्यान, ज्ञान पूर्ण शिक्षा में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। चरित्र निर्माण में ऐच्छिक ध्यान की अत्यन्त आवश्यकता होगी क्योंकि इच्छा के द्वारा ही नियन्त्रण सम्भव होगा। इसी के कारण व्यक्ति उन वस्तुओं की ओर ध्यान लगा सकता है जिस ओर विशेष रुचि न हो किन्तु वस्तु लाभ कर हो एवं करना आवश्यक हो।

प्रत्येक शिक्षा में ध्यान की आवश्यकता है। ध्यान की अनुपस्थिति में सीखना असम्भव है।

२

बुद्धि

बुद्धि के माप के कारण शिक्षा मनोविज्ञान में एक नया प्रकाश आ गया है। यह अपने ही में एक विज्ञान हो रहा है तथा इसके अध्ययन के अतिरिक्त शिक्षा मनोवैज्ञानिक एक अधूरा विषय रह जायगा। मानसिक योग्यता के माप के साथ ही, बुद्धि की प्रकृति का आविष्कार हो रहा है।

बुद्धि के माप के दो प्रकार हैं। (१) बुद्धि का माप एवं (२) व्यक्तित्व वर्णन।

बुद्धि माप की आवश्यकता

विद्यार्थियों की योग्यता में वैयक्तिक अन्तर का जानना आवश्यक है। इस ओर ध्यान न देने से अधिक समय एवं शक्ति नष्ट होती है। प्रत्येक व्यक्ति एक ही पद्धति के अनुसार शिक्षित नहीं किया जा सकता है। बुद्धि मांप के कारण प्रत्येक को उसकी आवश्यकता एवं योग्यता के अनुसार दिया जा सकता है।

बुद्धि माप के द्वारा चाहे वह व्यक्तिगत हो या सामूहिक स्वाभाविक जन्म जात योग्यता का पता चलाया जाता है जिसे शिक्षित करना है। साधारण माप की पद्धतियां दोष पूर्ण है क्योंकि वे शक्तियों को छोड़ कर ज्ञान पर विशेष बल देती हैं। बुद्धि मांप जन्म जात योग्यता की परीक्षा करती है न कि अर्जित ज्ञान की।

बुद्धि माप की महत्ता यह है कि वह बालक के शिक्षित होने की सम्भावित योग्यता का पूर्व ज्ञान करती है।

बुद्धि मांप के कारण मन्द बुद्धि बालक की समस्याओं का उचित हल

हो जाता है तथा उनके लिये उचित व्यवस्था होती है। इस परीक्षा के द्वारा यह पता चलता है कि बालक की योग्यता परीक्षा के लिये उसकी वार्षिक एवं मानसिक आयु दोनों पर ध्यान देना आवश्यक है ।

बुद्धि मांप के द्वारा बालकों के अनुदान, स्कूल में प्रवेश, व्यवसाय का चयन आदि में उचित एवं सही सहायता प्राप्त हो सकती है ।

बुद्धि का स्वरूप (Nature of Intelligence)

बुद्धि मांप क्यों की जाती है ? वह कौन सी वस्तु है जो नापी जाती है ?

(१) बुद्धि मांप के द्वारा स्वाभाविक जन्मजात योग्यता की मांप होती है।

(२) इनके क्षेत्र में बुद्धि के कार्य आते हैं, संवेग नहीं। अतः इसके द्वारा किसी के चरित्र के विषय में कुछ कहा नहीं जा सकता ।

बुद्धि क्या है, इसके विषय में मतभेद है। इसकी अनेक परिभाषायें हैं। इन सब मतभेदों के होते हुए ऐक बात स्पष्ट है कि यह व्यक्ति का जन्म जात गुण है कुछ जन्म से ही बुद्धिमान होते है तथा कुछ मन्द बुद्धि । बुद्धिमान व्यक्ति, मन्द बुद्धि की तुलना में अपने आप को वातावरण में सरलता एवं उत्तम रीति से समायोजित कर सकता है। वह उच्च स्तर के मानसिक कार्य कर सकता है जब कि मन्दबुद्धि वाला नहीं कर सकता है। उनकी विश्लेषण की शक्ति संयोग, समझ, वर्गीकरण, विचार आदि सरलता से होंगे ।

बुद्धि के तीन मुख्य सिद्धान्त —

(१) बुद्धि एक योग्यता की इकाई है जो सम्पूर्ण बुद्धि प्रणाली में सामान्य है। सामान्य बुद्धि अपने आप को विभिन्न प्रकार से प्रदर्शित करते हुये एक जटिल इकाई गुण है तथा यह भिन्न भिन्न विशेषताओं का योग नहीं है। इसका मांप, ऐच्छिक ध्यान, समस्या सम्बन्ध एवं विचार का शीघ्र एवं सही रीति से समझने के द्वारा किया जा सकता है। यह सिद्धान्त स्पीयरमैन के नाम से सम्बन्धित है। इस सामान्य योग्यता के लिये वे चिन्ह 'जी' g प्रयोग करते हैं।

(२) दूसरे सिद्धान्त के अनुसार बुद्धि दो तीन योग्यताओं का समूह मानी जाती है। बिने (Binett) का यह मत है कि बुद्धि मानसिक शक्तियों

एवं योग्यताओं का समूह है। उनके अनुसार योग्यता के तीन प्रमुख गुण होने चाहिये। (१) किसी समस्या की समझ बूझ, मन को उसके हल की ओर आदेशित करना तथा उस ओर ध्यान रखना। (२) दशा की आवश्यकता अनुसार मस्तिष्क का समायोजन (३) आत्म विश्लेषण अवलोकन एवं आलोचना।

(३) थोर्नडाइक कहते हैं कि बुद्धि अनेकों स्वतंत्र विशेषताओं का औसत average है। बुद्धि के द्वारा सम्पूर्ण जन्मजात मानसिक योग्यताओं का प्रतिनिधित्व होता है।

बुद्धि का विकास—(Growth of Intelligence)

बुद्धि, बाल्यकाल से प्रौढ़ता तक बढ़ती रहती है। ऐसा पता चलता है कि बुद्धि की सीमा ऐवं बढ़ने की गति प्रत्येक व्यक्ति के लिये निश्चित है। सीमा एवं गति के विषय में मनोवैज्ञानिकों को अभी तक ठीक पता नहीं है किन्तु इस बात का पता है कि विकास की आयु के समय बुद्धि उपलब्ध (I.Q.) बाराबर की सी रहती है।

साधारण बालकों का सर्वोच्च विकास भिन्न भिन्न मनोवैज्ञानिकों के द्वारा पृथक पृथक दिये हुये हैं। यह १५, १६ या १८ वर्ष तक निश्चित किया गया है। सर्वोच्च विकास के पश्चात व्यक्ति अपनी बुद्धि में नहीं बढ़ता है किन्तु वह अधिक अनुभव प्राप्त करता है, उसके दृष्टिकोण विस्तृत होते हैं तथा किसी दिशा में वह विशेषता प्राप्त करता है।

बुद्धि माप की परीक्षा (Intelligence Test)

सर्वप्रथम विधिवत बुद्ध मांप की परीक्षा का श्रेय फ्रान्स के मनोवैज्ञानिक Alfred Binett को है। अनुभव से उन्हें यह ज्ञात हुआ कि बालक की सही परीक्षा प्रणाली बातचीत के रूप के कुछ प्रश्नों के द्वारा हो सकती है। उन्होंने माप का एक ढंग बनाया। जिसने क्रमशः संशोधित होकर वर्तमान रूप धारण किया। उन्होंने बुद्धि का माप मानसिक आयु के द्वारा निर्धारित करने का निश्चय किया अतः उन्होंने कुछ प्रश्न इकट्ठा किये जो किसी दी हुई आयु के लिये उपयुक्त था। प्रश्नों का सही उत्तर मानसिक आयु का एक अंश मान लिया गया। जैसे यदि किसी वर्ष के लिये ६ प्रश्न दिये गये थे तो एक प्रश्न के सही उत्तर का अर्थ दो माह मानसिक आयु थी।

थीयोडोर साइमन जो फ्रान्स के एक दूसरे मनोवैज्ञानिक थे, Binett का साथ दिया तथा उनकी परीक्षा Binett Simon के नाम से प्रसिद्ध हो गयी। उन्होंने तीसरे वर्ष से आरम्भ करके प्रौढ़ आयु तक के लिये ५४ परीक्षाओं का निर्माण किया। प्रत्येक समूह के लिये पांच परीक्षाएं नियुक्त की गयी।

मानसिक आयु प्राप्त करने की प्रणाली

वार्षिक आयु ली गयी। उदाहरणार्थ ७ वर्ष। बालक को उस आयु के प्रश्नों को उत्तर देना था। इस परीक्षा की अलोचना की गयी। इसके लिये कहा गया कि परीक्षा में यह मान लिया गया है कि मानसिक आयु वार्षिक आयु के साथ चलती हैं (२) मूल्यांकन सही रीति से नहीं होता क्योंकि थोड़ी सफलता के लिये कोई अंक नहीं दिये जाते हैं।

परीक्षा का संशोधन

टर्मन के द्वारा इसमें संशोधन किया गया जिसका नाम The Standford Revision हुआ। उनके माप में ९० परिक्षायें थीं। प्रत्येक समूह के लिये ६ प्रश्न थे। Terman ने मानसिक आयु पर बल नहीं दिया किन्तु मानसिक मांप का परिणाम उन्होंने मानसिक उपलब्धि Intelligence Quotient के रूप में रखा जो मानसिक आयु एवं वार्षिक आयु का अनुपात ratio है।

$$\frac{\text{बुद्धि उपलब्धि}}{\text{Intelligent Quotient}} = \frac{\text{मासिक आयु}}{\text{वार्षिक आयु}} \times १०० \text{ (सुविधा के लिये)}$$

बुद्धि उपलब्धि के आधार पर बालकों का विभाजन :—

प्रतिशत बुद्धि उपलब्धि		बुद्धि स्तर के अनुसार विभाजन
I. Q.	Percentage	
०	२५ %	जड़ Idiot
२५	५० ,,	मूर्ख Imbecile
५०	७० ,,	मूढ़ Morone

७०	८० ,,	निर्बल बुद्धि Border Line
८०	९० ,,	मन्द बुद्धि Dull
९०	११० ,,	सामान्य बुद्धि Normal
११०	१२० ,,	तीव्र बुद्धि Brigth
१२०	१४० ,,	प्रखर बुद्धि Very Superior
१४० से ऊपर तक		प्रतिभाशाली Genius

लन्दन संशोधन

Burt एवं Simon ने यह अनुभव किया कि Binett की मांप प्रणाली बड़ों की अपेक्षा छोटों के लिये उत्तम थी। लन्दन संशोधन मांप में ३ से १६ वर्ष की आयु के लिये ६५ प्रश्न थे। अभी तक मांप व्यक्तिगत रूप से होते रहते थे। सामूहिक परीक्षा का निर्माण हुआ। इसमें उच्च प्रकार की मानसिक क्रियाओं का एवं विशेष विषयों को प्रमुख स्थान दिया गया। यह लिखित परीक्षा थी जो सम्पूर्ण समूह को एक साथ देनी पड़ती थी। Burt ने यह अनुभव किया कि उत्तम परीक्षा के लिये, थोड़े प्रश्नों की तुलना में अधिक संख्या के छोटे प्रश्न और भी लाभ कर सिद्ध होंगे।

कार्य सम्पन्न परीक्षा (Performance Test)

इस परीक्षा के द्वारा किसी कार्य के कराने के द्वारा बुद्धि की मांप की गयी। कार्य में कौशल, चातुर्य्य एवं बुद्धि के प्रदर्शन पर ध्यान दिया गया। इस परीक्षा में वस्तुओं को आपस में मिलाना या जोड़ना, वस्तु का निर्माण करना, पहेली एवं समस्या मूलक कार्य करना, चित्र पाठन, अधूरे कार्य को पूर्ण करना आदि कराये जाते थे। उदाहरणार्थ (Seguin Farm-board) के लिये दस लकड़ी के चौकोर, त्रिकोण, वृत्त के टुकड़े थे जिन्हें बोर्ड के अन्दर सजाना था। (Jigsaw Puzzle) में चित्र आदि सजाना पड़ता है।

मानसिक स्वास्थ्य

मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ:—

व्यक्तित्व का पूर्ण विकास एवं सामंजस्य तथा समन्वयात्मक रूप से उसके

प्रवाह, जिसमें वह समाज के नियमों के नियन्त्रण में, सरलता एवं सुगमता से अपना स्थान लेता है, उत्तम मानसिक स्वास्थ्य है। संवेगात्मक संतुलन, मुख्य स्थायी भाव (Dominant Instinct) के अन्तर्गत व्यक्तित्व की इकाई रखना तथा उसके परिणाम स्वरूप शक्तिशाली इच्छा एवं चरित्र का निर्माण ही प्रदर्शित होता है। मानसिक स्वास्थ्य की अनुपस्थिति में जैसे शरीर के रोग से रोगी पीड़ित रहता है उसी प्रकार मन चंचल, अव्यवस्थित, असंतुष्ट अनुशासनहीन तथा चरित्रहीन रहता है। इन मानसिक रोगों का प्रभाव शरीर पर भी प्रदर्शित होता है।

मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति प्रसन्न शुद्ध एवं एक खुली हुयी पुस्तक के समान होगा जिसकी प्रत्येक बात जानी जा सकती है। वह जैसे बाहर है उसी प्रकार अन्दर है। उसमें छल कपट या ऐसी कोई वस्तु नहीं होगी जिसे छिपाने की चेष्टा की जाये।

मानसिक रूप से अस्वस्थ्य व्यक्ति इसके बिल्कुल विपरीत होगा। वह दो व्यक्तित्व वाला व्यक्ति होगा जिसमें सर्वदा संघर्ष होता रहेगा। वह स्वयं अपने आप को भली भांति नहीं समझ सकता न दूसरे उसे अच्छी तरह समझ सकते हैं। उसके कार्यों की कोई निश्चयता नहीं रहती। उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। वह बाहर कुछ और अन्दर कुछ होगा। वह चिन्तित व्यक्ति एवं परेशान रहेगा। इन सबों के छिपाने की चेष्टा में एक विचित्र रूप धारण कर लेता है। उसकी इस प्रकार की मानसिक प्रवृत्ति उसके छोटे छोटे कार्यों में प्रदर्शित होती रहती है जिसके द्वारा अनुभवी मनोवैज्ञानिक उसे अच्छी तरह समझ लेता है।

कारण

व्यक्ति में संवेगात्मक स्मृति होती है जो उसके मानसिक संस्कार का एक भाग बन जाती है। ये भावना ग्रंथियों (Complexes) के रूप में पायी जाती है। यदि वे मन में स्थित हो जायें तो चरित्र विकास में कमी रह जायेगी। ये मानसिक विकार के परिणाम होते हैं।

जब वातावरण का स्वास्थ्यकर प्रभाव व्यक्ति पर नहीं पड़ता है तब मानसिक विकास सही एवं उत्तम रीति से नहीं होता। बाल्यकाल से परिपक्वता

तक का विकास सुचारू रूप से नहीं होता एवं संतोषजनक नहीं हाता। इसका यह अर्थ नहीं कि प्रगति नहीं होती किन्तु यह सम्भव है कि प्रगति के साथ ही नीचे स्तर की ओर अवनति हो। यह विकास की असफलता के इस सिद्धान्त ने फ्रायड महाशय के मनोविश्लेषण मनोविज्ञान के द्वारा अधिक प्रकाश पाया। यह नवीन या अचेतन मन के मनोविज्ञान के नाम से भी प्रसिद्ध है। यह अचेतन मन का मनोविज्ञान लिंग Sex या काम वासना पर विशेष बल देता है। फ्रायड महाशय मन के अचेतन भाग से, अधिक सम्बन्धित है। मनोविश्लेषण मनोवैज्ञानिकों के लिये अन्तरदर्शन मनोविज्ञान का चेतन मन, केवल मन की सतह है। वास्तविक अध्ययन का विषय गहरा विस्तृत अचेतन मन (Unconscious) है जिसका अन्तरदर्शण को ज्ञान नहीं है।

अचेतन (Unconscious) मानसिक संस्कार (Mental Structure) है जिसका गुण संयोग एवं क्रिया है। अतएव अचेतन में (१) अनुभव एवं व्यवहार के निर्धारित करने की तथा (२) उन्हें संयुक्त एवं नये रूप में मिश्रित कर एक नये सम्पूर्ण में निर्माण करने की, शक्ति है।

जन्म के समय भावनायें, दशा तथा अनुभव कुछ भावना ग्रंथि छोड़ जाते हैं जो समाप्त नहीं होती, किन्तु क्रियाशील अचेतन तथ्य की तरह कार्य करती रहती है। परिणामतः वह मानसिक संस्करण का संशोधन करती रहती है। व्यक्ति या वस्तु के प्रति स्थाई भाव होता है तथा विभिन्न स्थाई भाव मुख्य स्थाई भाव के अन्तर्गत आने की या व्यक्ति इच्छापूर्वक लाने की चेष्टा करता है।

कभी कभी यह विकास सुचारू रूप से नहीं होता। स्थाई भाव के निर्माण में कुछ इधर उधर की प्रवृत्तियां आती हैं जो दूसरों से संयुक्त नहीं होती। ये प्रवृत्तियां जीवित रहती हैं तथा अनुभव एवं व्यवहार में कार्य करने की चेष्टा करती हैं। इस कार्य में मुख्य स्थाई भाव या मुख्य मानसिक प्रवाह से उनका संघर्ष होता है। यह मानसिक संघर्ष सम्पूर्ण अस्वाभाविकता (Abnormalities) की जड़ है।

व्यक्ति को इस संघर्ष का ज्ञान हो सकता है। मनोविश्लेषण मनोवैज्ञा-

तिकों का कहना है कि यह संघर्ष आन्तरिक मन की प्रणाली में हो सकता है जिसका व्यक्ति को ज्ञान नहीं तथा वह यह भी नहीं जानता कि उसका मन विभिन्न उत्तेजनाओं की संघर्ष भूमि है। मनोविश्लेषण द्वारा उस असाधारण व्यवहार जिसे समझाया नहीं जा सकता, समझा जाता है। मानसिक संघर्ष दुःख दायी एवं थकान देने वाला होता है। इस अस्तव्यस्तता में मन शान्ति अर्जित करने का प्रयत्न करता है।

समस्या का हल उस समय होता हैं जब ग्रंथि या स्थाई भाव परस्पर एक दूसरे से मिलकर रहते हैं। व्यक्ति को समस्या के हल करने के लिये उस दशा या संघर्ष का ज्ञान होना आवश्यक है। मनोविश्लेशण मनोवैज्ञानिक ऐसी स्थिति में स्वप्न के विश्लेषण, शब्द सहचर्य जिनके द्वारा अचेतन उत्तेजनाओं का प्रकाशन होता है आदि की सहायता लेते हैं।

यह सरल नहीं होता क्योंकि यह सम्भव है कि ग्रंथियों का संगठन शक्ति शाली हों तथा ये मानसिक संस्कार के महत्वपूर्ण अंग बन चुके हों। इसी के द्वारा व्यक्तित्व अस्थिरता या दो व्यक्तित्व वाले व्यक्ति का वर्णन किया जा सकता है। जब मानसिक ग्रंथि अधिक शक्तिशाली नहीं होती तो उसका शक्ति पूर्वक दमन भी किया जा सकता है। यह दमन की शक्ति मुख्य व्यक्तित्व के प्रभाव से आती है।

मानसिक ग्रंथियां भेष बदल कर भी कार्य करती हैं। यह निर्दोष भेष बदलाव, स्वप्न, रात को उठकर निद्रावस्था में चलना, छोटी छोटी चालाकियों या चतुर व्यवहार, निरंतर चिन्ता आदि के द्वारा प्रदर्शित होती हैं। फ्रायड महाशय का कहना है, आकस्मिक घटना, किसी चीज का भूलना आदि समय के कारण नहीं किन्तु अचेतन संघर्ष के कारण होता है। जब किसी दिशा में आवश्यकता से अधिक उत्साह दिखाया जाये जैसे अधिक सफाई तो दोष का भाव प्रतीत होता है। जब शक्ति से अधिक कार्य का भार अपने ऊपर लिया जावे तो उसमें अयोग्यता का भाव प्रतीत होता है।

ये भावना ग्रन्थियां जो मानसिक अस्वस्थता प्रकट करती है उनका कारण अभिलाषाओं की अपूर्ति, आत्म प्रकाशन में अवरोध, स्थाई भावों की विकृति वासनाओं की अतृप्ति, अत्याधिक नियंत्रण, अनुचित व्यवहार, अपने को न समझना अशिक्षा आदि के कारण होती हैं। व्यक्तिगत शारीरिक दोष, पारिवारिक सम-

स्थायें, सामाजिक परिस्थितियों, वातावरण का अनुकूल न होना भी मानसिक अस्वस्थता उत्पन्न कर सकती है ।

मानसिक स्वास्थ्य के लिये शिक्षा का उत्तरदायित्व :—

आत्मज्ञान एवं आत्मनिर्भरता का विकास, सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास, वातावरण की अनुकूलता, आत्मसम्मान को सुरक्षित रखना, उचित शारीरिक स्वास्थ्य व्यायाम एवं मानसिक शिक्षा, समय का सदोपयोग, प्रेमपूर्ण वातावरण, बड़ों का सहयोग एवं उचित नियन्त्रण, उचित स्वतन्त्रता, उचित मनोरंजन आदि के द्वारा शैक्षणिक संस्थाये उचित सहायता पहुंचा सकती हैं ।

शिक्षा को रुचिकर करना, उचित अनुशासन, शिक्षकों के द्वारा बालकों के साथ व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित करना, शिक्षकों को आदर्श पूर्ण होना, संस्था का वातावरण इस प्रकार हो जहाँ बालक उत्सुकता एवं प्रसन्नता पूर्वक आना चाहे, परिवार एवं समाज के साथ शैक्षणिक संस्थाओं के उचित सम्बन्ध के द्वारा बालक का मानसिक स्वास्थ्य उचित स्तर पर रखा जा सकता है ।

असामान्य बालक

किशोरावस्था की समस्या Problem of Adolescence

(१) स्वयं को संगठित करने में कठिनाई । अर्न्तमुखी होने की संभावना दिवास्वप्न में लीन रहना ।

(२) उमंगों के विभिन्न छोरों तक पहुँचना इसका प्रमुख चिन्ह हैं ।

(२) अनियमित होने की प्रवृत्ति ।

बालअपराधी Delinquency

(१) निर्णय करने में असफलता के कारण, (२) अत्याधिक शक्तिशाली काम प्रवृत्ति (३) साधारण जो विकास में सम्मिलित नहीं हुई हैं उनके कारण,(४) वंश परम्परा संबंधी, (५) शारीरिक कारण, (६) वातावरण संबंधी प्रवृत्तियाँ पारिवारिक तथा वातावरण आदि इनके अनेक रूप हो सकते हैं । इधर

उधर घूमने की प्रवृत्ति, झूठ बोलना, चोरी तथा बलवा करने वाले समूह का संगठन आदि इसके परिणाम हैं।

इनकी चिकित्सा संभव है

(१) संघर्ष को समझना, (२) दबी प्रवृत्तियों को मार्गान्तिकिरण या शोध तथा, (३) व्यक्तित्व के पुनः संगठन के द्वारा लाभ होगा। दण्ड जो उचित नहीं तथा जो दोष के तुल्य नहीं वह कभी लाभदायक नहीं हो सकता।

व्यवहार का श्रेष्ठ स्रोत, विचार नहीं किन्तु संवेगात्मक प्रवृतियाँ हैं व्यक्तित्व के साथ या उससे अलग करके।

दुर्बल बुद्धि Mentally Deficient

(१) **मन्द बुद्धि** Dull

यह बौद्धिक कार्यों में पिछड़े हुए किन्तु शारीरिक तथा सामाजिक कार्यों में सामान्य होते हैं। इनकी शिक्षा के लिए अधिक परिश्रम करना पड़ता है। इनकी शिक्षा में प्रोत्साहन, प्रत्यक्ष ज्ञान तथा सहानुभूति पूर्ण व्यवहार आवश्यक है।

(२) **निर्बल बुद्धि** (Feeble minded)

साधारण विद्यालय से लाभ नहीं पा सकते। साधारण मानसिक कार्यों में असमर्थ होते हैं। इनमें सूझ, तर्क तथा हल करने की शक्ति का अभाव होता है। इनकी शिक्षा विशेष विधि तथा साधन से होती है।

(३) **मूढ़ बुद्धि :—**

शरीर सुरक्षा की क्रियायें कर लेते हैं। थोड़ी बुद्धि के कार्य कर सकते हैं। इनको शिक्षित करना कठिन हैं। केवल हाथ पैर चलाने वाले कार्य कर सकते हैं।

अकाल परिपक्व बालक (Precacious child)

ये वे बालक हैं जो आयु के पहले मानसिक रूप से प्रौढ़ हो जाते हैं।

ऐसे बालक आरम्भिक अवस्था में कुशाग्र बुद्धि के प्रतीत होते हैं परन्तु कुछ समय पश्चात् साधारण स्थिति में आ जाते हैं। यह अधिक सतर्कता के कारण तथा बड़ों की प्रशंसा इत्यादि के कारण हो सकता है।

विकलांग (Physically handicapped)

ऐसे बालक पंगु होते हैं। हाथ पैर से लूला या लंगड़ा होना, शारीरिक दोष के कारण, लोगों की दृष्टि में हीन भाव से देखे जाते हैं इसी कारण इनके मन में मानसिक ग्रंथि बन जाती है। अपमान के कारण उनके मन में सदैव ऐक संघर्ष रहता है। जब उन्हें असमर्थता के कारण विचारों की पूर्ति करने का अवसर नहीं मिलता तो वे अनैतिक कार्यो द्वारा संतोष प्राप्त करते हैं। जहाँ चिकित्सा होने की सम्भावना हो वहाँ चिकित्सा होनी चाहिऐ।

मनोविश्लेषण विशेषज्ञों से सहायता प्राप्त की जा सकती है।

ऐसे बालकों के लिए यदि विशेष शिक्षा का प्रबंध हो तो उत्तम है।

कुछ और विशेष वर्ग में हैं जैसे दृष्टिहीन Blind, क्षीण दृष्टि Partially blind, बधिर Deaf, क्षीण श्रवण शक्ति वाले Hard of hearing, वाक दोष युक्ति Defective speech, गूंगे Dumb.

पिछड़े हुये बालक (Backward child)

जो शिक्षा की साधारण सतह से नीचे है वे ही पिछड़े बालक हैं। इन बालकों का पिछड़ापन दूर किया जा सकता है। पिछड़ापन बौद्धिक जन्मजात एवं अर्जित कारणों से हो सकता है। कुछ बालक सामान्य बुद्धि में कमी होने के कारण पिछड़ जाते हैं। कुछ में विशिष्ट विषय में पिछड़ापन होता है। शारीरिक दोषग्रस्त बालक भी पिछड़े हो सकते हैं। मानसिक अस्वस्थता के कारण भी बालक पिछड़ा हुआ हो सकता है। परिवार, वातावरण तथा विद्यालय भी पिछड़ेपन का कारण हो सकते हैं।

शारीरिक शिक्षा द्वारा दोषयुक्त समायोजन का विरोध एवं उचित मानसिक स्वास्थ्य का प्रोत्साहन Role of Physical education in preventing maladjustment and promotion of proper mental

health. Karl Menninger M.D. का कहना है कि मानसिक स्वास्थ्य के लिये सर्वोत्तम अवरोध एवं चिकित्सा उपाय आनन्ददायक शारीरिक शिक्षा की क्रियायों में भाग लेने का है।

अधिकांश मानसिक चिकित्सालय एवं संस्थायें इस बात को मान्यता प्रदान करती है कि संतोषजनक तथा आनन्ददायक शारीरिक क्रियाओं में भाग लेने से लाभ होता है। अतएव वे पूरे समय के लिये शारीरिक शिक्षक एवं निर्देशक नियुक्त करते हैं जिनका कार्य शारीरिक एवं मनोरंजन की क्रियाओं का संगठन, संचालन एवं नियन्त्रण करना होता है। एक सर्वप्रमुख लाभ जो शारीरिक शिक्षा क्रियाओं से सदैव प्राप्त हुआ है, वह है तनाव से स्वतन्त्रता एवं विश्राम।

बड़ी मांसपेशियों की क्रियाओं से जो बहुमूल्य लाभ, तनाव एवं जीवन के दबाव के कम करने में प्राप्त हुआ है उसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता कठिन एवं थकाने वाले कार्यों के कारण तनाव एवं संवेगात्मक दबाव या अधिक संवेग उत्तेजित करने वाली दशा या परिस्थितियों के कारण स्नायु-मांस पेशियां एवं मानसिक अकुशलता उत्पन्न हो सकती है। इनके द्वारा घोर चिन्ता की भावना उत्पन्न हो सकती है जो व्यक्ति के संवेगात्मक सन्तुलन एवं अच्छे स्वास्थ्य-मय जीवन के लिये हानिकारक सिद्ध हो सकती है। ऐसे हानिकारक तनाव एवं बोझ की स्थिति में शक्तिशाली एवं तीव्रता से किये गये शारीरिक क्रिया के द्वारा विश्राम प्राप्त होता है।

मनोवैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व व्यवहार के गुण एवं विशेषता अपने आप एवं दूसरों के द्वारा सम्मान, शरीर एवं शारीरिक शक्ति से सम्बन्धित है। बालकों के लिये सम्मान प्राप्त करने का सरल उपाय खेल आदि में विजय प्राप्त करने के द्वारा है। आयु के बढ़ने के साथ यह प्रवृत्ति भी बढ़ती जाती है।

मनोवैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक चिकित्सक स्नायु सम्बन्धी 'स्वयं' को ढूढ़ने के लिये शारीरिक गति का प्रयोग करते हैं।

अनेक परीक्षाओं का निर्माण हुआ जिनके कार्य परिचालन द्वारा, बालक की आवश्यकता, इच्छा, भाव, असफलता एवं आन्तरिक विचार का ज्ञान होता है। हम अपने विचार एवं भावना, शरीर के अंगों के द्वारा प्रदर्शित करते हैं।

व्यक्तित्व की इकाई का शारीरिक शिक्षा में बहुत ही महत्व पूर्ण अर्थ है। शारीरिक क्रियाओं में सफलता, आत्मविश्वास एवं आत्म निर्भरता प्रदान करती है। शारीरिक शिक्षा अन्तर्मुखी व्यक्ति को बहिर्मुखी बना सकती है। हीनता की भावना, शारीरिक क्रियाओं में सफलता के कारण कम हो जाती है। शारीरिक क्रियाओं में लीन होने से व्यक्ति अपने आपको भूल कर क्रियाओं पर विशेष ध्यान देता है। इस भावना से अनगिनत लाभ प्राप्त होते हैं। शारीरिक क्रियाओं में सफलता के कारण व्यक्ति को जीवन की दूसरी समस्याओं के हल करने के लिये एक उत्साह एवं विश्वास प्राप्त होता है।

बालकों में शारीरिक कौशल की उत्तम नींव डालने से मानसिक स्वास्थ्य की समस्याओं को भली भांति हल किया जा सकता है। स्कूल के शारीरिक क्रिया कार्यक्रम को उचित रूप देने से बालक अपने प्रारम्भिक जीवन से ही अपनी चिन्ताओं को भूलने में तथा अपने भय, ईर्ष्या, घृणा आदि को दूर रखने में समर्थ होंगे। शारीरिक शिक्षा की Sportsmanship की भावना जीवन क्षेत्र में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी। शारीरिक शिक्षा, के द्वारा मानसिक विकार दूर होंगे। शारीरिक शिक्षा स्वास्थ्य संवेगात्मक प्रवाह के द्वारा, जीवन के उज्वल दृष्टिकोण अपनाने के द्वारा, तथा उत्तम शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के द्वारा, मानसिक दशाओं के सुधारने एवं स्वास्थ्य प्रदान करने में समर्थ होगा।

१०

थकान

साधारणतः थकान से हम उस सांकेतिक चिन्ह का वर्णन करते हैं जिसमें शक्ति के अधिक व्यय हो जाने के कारण क्रिया न करने की एक सामान्य प्रवृत्ति हो जाती है। यह क्रिया न करना, मानसिक या शारीरिक दोनों में से एक हो सकती है। जो कुछ भी हो, दोनों ही अवस्था में उत्पादन की कमी या निम्न श्रेणी का कार्य, परिणाम स्वरूप होता है। थकान का अनुभव करना तथा थकना दोनों समान अनुभव नहीं हैं। एक व्यक्ति जिसे अपने कार्य में रुचि है थकता नहीं है किन्तु शक्ति क्षीण होती है। दूसरा व्यक्ति जिसे अपने कार्य में अरुचि है वह थकान का अनुभव करता है किन्तु उसकी शक्ति अधिकता से व्यय नहीं हुई तथा उसने अधिक कार्य नहीं किया।

Lock का कहना है कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन होता है। Roussou का कहना था, निर्बल शरीर मन को निर्बल कर देता है। मन एवं शरीर का सम्बन्ध भली भांति ज्ञात है। यह निश्चय है कि शरीर मन को शक्ति प्रदान करता है तथा प्रत्येक मानसिक कार्य में स्नायु कोष के द्वारा उत्पादित शक्ति का व्यय होता है। इन स्नायु कोषों के केन्द्र में मींगी (Nucleus) होता है जिसमें शक्ति संचित रहती है तथा कोष का संचालन होता है।

शारीरिक थकान, मांसपेशियों या स्नायु के थक जाने के कारण हो सकती है। मांसपेशियों की थकान, उनकी संचित शक्ति के व्यय होने पर विषैले पदार्थ उत्पन्न होने के कारण होती है। शारीरिक थकान एक स्थानीय दशा होती है जो स्नायु मांसपेशियों के यन्त्र में कहीं होती है। इसमें मांसपेशियां तथा गतिवाही स्नायु आते हैं। यह प्रदर्शित किया जा चुका है कि चेतातत्व (Nerve Fibres) प्रायः नहीं थकते। मांसपेशी दूसरी रचना है जो नहीं थकती है। प्रथम गतिवाही अगीन्द्रय (Motor end plates) थकती है।

व्यायाम के समय मांसपेशियों में कुछ परिवर्तन होते हैं। इन्हें शारीरिक एवं रसायनिक परिवर्तन कहा जा सकता है। शारीरिक परिवर्तन में उतनी शक्ति के द्वारा खिंचाव जिससे क्रिया सम्भव हो सके, गर्मी का उत्पादन तथा शक्ति का विकास होता है। रसायनिक परिवर्तन में, ग्लायकोजेन (Glycogen) का व्यय लाकटिक एसिड (Lactic Acid) का उत्पादन तथा कार्बन डाई आक्साइड (Carbon dioxide) का उत्पादन होता है। वास्तविक कार्य में वे पृथक नहीं, उनकी कार्य प्रणाली एक ही है। इनके मेल की क्रिया से मांस-पेशियों का खिंचाव होता है। मांसपेशियों का ग्लायकोजन (Glycogen) मांसपेशियों के स्नायु उत्तेजना के द्वारा तोड़े जाते हैं तथा उसके द्वारा लाकटिक एसिड (Lactic Acid) का उत्पादन होता है। लाकटिक एसिड का एक भाग अक्सिकरण के द्वारा कार्वन डाई आक्साइड तथा पानी बन जाता है। शेष फिर ग्लाइकोजन बन जाता है। विश्राम करती हुई मांसपेशियों में लाकटिक एसिड थोड़ी मात्रा में पायी जाती है। अक्सिकरण वह प्रणाली है जिसके द्वारा अतिरिक्त वस्तु हटाई जाती है।

स्नायु थकान केन्द्रीय स्नायु मण्डल से सम्बन्धित है। अनेक शरीर क्रिया शास्त्रियों ने यह प्रदर्शित किया है कि मानसिक थकान कोई दशा नहीं होती या केन्द्रीय स्नायु मण्डल की थकान नहीं होती। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि व्यक्ति ऊब जाते हैं, रुचि खो बैठते हैं तथा मांसपेशियों की थकान का अनुभव करने लगते हैं इससे पहले कि स्नायु मण्डल में किसी प्रकार की थकान का अनुभव हो। अनेक तथ्य हैं जो थकान को प्रभावित करते है जैसे आयु, लिंग, ज्ञान, व्यक्तिगत विभिन्नता, दिन का समय, सप्ताह का दिन, कार्य परिवर्तन, शारीरिक आसन एवं डील डौल तथा भिन्न-भिन्न विषय।

थकान के लक्षण (Symptoms of Fatigue) :—

ध्यान एकाग्रता का अभाव, शारीरिक शिथिलता, कार्य में त्रुटि होना, श्वाँस की गति में तीव्रता, संवेदना शक्ति का अभाव व्याकुलता, जम्हायी, मचलना, बड़ी गलतियां, विस्मृति, वाकपटुता में कठिनाई, तुतलाना, खेल की इच्छा, व्यग्र, मानसिक भ्रमण एवं दोष पूर्ण आसन, मुख के कोण का गिराव, मांथे की सिकुड़न की खड़ी रेखायें, आंख अन्दर धंसी हुयी, चंचल आंखें, मुख पर शून्य भाव, तथा सुन्दर गति की कमी में दिखायी देती हैं।

थकान दूर करने के उपाय (Recovery from Fatigue)

जब मांसपेशियां अपने वास्तविक विश्राम की अवस्था से पहुँच जाती हैं तो थकान दूर हो जाती है। यह उस समय होता है जब क्रिया के कारण एकत्रित अतिरिक्त वस्तु हटाई जाती है तथा ग्लाकोजिन जो शक्ति का कारण है वहां पहुँचाया जाता है।

यह बताया जा चुका है कि स्नायु उत्तेजना मांसपेशियों के ग्लायकोजन पर आघात पहुँचाता है तो एक अतिरिक्त वस्तु जो उत्पन्न होती है उसे लाकटिक एसिड (Lactic Acid) कहते हैं। यह थकान के लाने में बहुत कार्य करती है। अग्निसकरण (Oxidation) के द्वारा Lactic Acid अपने स्थान से हटायी जाती है तथा जिगर एवं मांसपेशियों में ग्लायकोजिन के फिर से आने के कारण शक्तिशाली है। शक्तिशाली व्यायाम के समय लाकटिक एसिड का उत्पादन शीघ्रता से होता है जिसके कारण विशेष मात्रा में थकान का अनुभव होता है। यदि उसे तत्काल ही नहीं हटाया जाये तो क्रिया असम्भव होगी। व्यायाम के समय लाकटिक एसिड कुछ क्षार (Alkalies) के द्वारा प्रभावरहित कर दिया जाता तथा रक्त में मिश्रित कर दिया जाता है। मांस-पेशियों के द्वारा जो लाकटिक एसिड तथा कारबोनिक एसिड (Carbonic-Acid) निकलते हैं वे रक्त एवं शरीर के अन्य रसों के क्षार के द्वारा प्रभाव रहित कर दिये जाते हैं। इस क्षार (Alkalies) को बाधक (Buffers) कहते हैं।

जब इतना लाकटिक आसिड बनता है कि व्यक्ति के साधारण आक्सीजन श्वांस में लेने पर भी उसे प्रभावरहित नहीं कर सकता तब मांसपेशियों में कमी आ जाती है 'Run in debt'। इसके लिये आक्सीजन अधिक मात्रा में लेना पड़ता है जिसे 'Oxygen debt' कहते हैं जिसकी आवश्यकता विश्राम के समय पूर्ण वास्तविक अवस्था प्राप्त करने के लिए होती है। अतः विश्राम करने से थकान दूर होती है। कार्य परिवर्तन में भी एक प्रकार का विश्राम मिल जाता है जिससे थकान दूर हो सकती है। खेल, मनोरंजन, शक्ति वर्द्धक भोजन आदि भी थकान दूर करने में सहायक होते हैं।

कुछ लेखकों का कहना है कि स्नायु, मांस पेशियों की अपेक्षा शीघ्रता से थकते हैं। मानसिक कार्य यदि अधिक देर तक किया जाये तथा कठिन प्रकार का

हो तो उससे थकान उत्पन्न हो सकती है। बड़े बड़े योग, घटाना, गुण, मानसिक समस्यायों का हल करना, किसी विषय का निर्णय या चयन या कार्य के मार्ग दर्शन आदि में मानसिक शक्ति व्यय होती है।

शरीर की थकान से मन भी थक जाता है। कितनी बार जब, मानसिक थकान के विषय में कहा जाता है तो वह वास्तव में मानसिक थकान न होकर केवल शारीरिक विकलता एवं विश्राम रहित दशा होती है। उदाहरणार्थ जब कोई दफ्तर में आठ घंटे कार्य करता है तो वह दिन के अन्त में थकान का अनुभव करने लगता है, यह सम्भव है कि उसके बैठने का आसन, रीढ़ की हड्डी पर बोझ, आंखों एवं उंगलियों के अधिक व्यायाम के कारण थकान का अनुभव होता हैं। स्कूल में अधिकतर थकान इसी प्रकार की होती हैं।

थकान में एक विशेष प्रकार, संवेगात्मक थकान का है। यह बार बार के संवेगात्मक दबाव के कारण होता है जो शारीरिक एवं मानसिक थकान से कहीं अधिक भयानक होता है। विरोधी आलोचना, असहायक एवं असफल प्रगति रिपोर्ट विशेषतया उस स्थान में जहां भावना यह हो कि आलोचना आदि भ्रम, ईर्ष्या या अज्ञानता के कारण हो रहा है। इनके द्वारा इस प्रकार की संवेगात्मक प्रतिक्रिया होगी जिसका परिणाम शारीरिक एवं मानसिक थकान के सदृष्य होगा।

स्कूल में एक प्रकार की और थकान सम्भव है जहां कार्य एक साएवं अरुचिकर होता है। बैठकर घंटों सुनना जहां आत्म विकास एवं खेल का कोई अवसर प्राप्त न हो, थकान के चिन्ह प्रदर्शित कर सकता है, यद्यपि कि विद्यार्थी ने मानसिक या शारीरिक रीति से किसी प्रकार का कार्य न किया हो।

औद्योगिक मनोविज्ञान से पता चलता है कि कार्य में व्यक्तिगत रुचि उत्पन्न करने तथा अपनी प्रगति पर गौरव करने से अधिक शीघ्रता से थकान नहीं आती। जीवन के आदर्श एवं दृष्टिकोण, थकान के भाव से व्यक्ति को दूर रखते हैं। कार्य का संगठन आवश्यक है। शारीरिक वातावरण सुनियन्त्रित होना आवश्यक है।

कहा जाता है कि प्रत्येक थकान का अधार एक है तथा आधारभूत रूप में

थकान एक सी ही होती है। इसकी परिभाषा करते हुये कहा जा सकता है कि—

"It is the feeling of pain with difficulty in taking action, It is a subjective impression united with an objective importance".

११

व्यक्तित्व

व्यक्तित्व शब्द का प्रयोग अपने में भिन्न भिन्न अर्थ रखता है। कुछ के अनुसार व्यक्तित्व चरित्र का फल होता है। कुछ इसे संतुलन शक्ति समझते हैं जिसके द्वारा बुरे तथा भले कार्य की समीक्षा होती है। व्यक्तित्व का अर्थ शरीर मन, संवेदनायें, मूल प्रवृत्तियां, उद्वेग, प्रत्यक्ष ज्ञान, कल्पना, स्मृति, बुद्धि, विवेक, शरीर गठन, सौष्ठव तथा मुखाकृति से भी लिया जाता है।

वास्तव में ये व्यक्तित्व के रूप हैं। व्यक्तित्व न शरीर है न मस्तिष्क और न व्यक्ति का बाह्य रूप। व्यक्तित्व उसके सम्पूर्ण मानसिक तथा शारीरिक व्यवहार का दर्पण है। जिसके द्वारा व्यक्ति मनुष्य तथा मनुष्यत्व को लिये हुए होता है। मनुष्य की विभिन्नताओं में एकत्व स्थापन करने वाली शक्ति व्यक्तित्व है। P. T. Nunn का कथन है,

"Personality is the characterstic integration of an individual's structure, modes of behaviour, interest, attitude, capacities, abilities and aptitude".

व्यक्तित्व एक वह शक्ति है जिसे हम केवल समझ सकते हैं तथा इसका विकास व्यक्ति के शारीरिक तथा मानसिक रूप में देख सकते हैं। इन्हीं गुणों के सही तथा पूर्ण विकास से व्यक्तित्व का विकास होता है।

व्यक्तित्व के तत्व

(१) बुद्धि (Intelligence)

यह अर्जित तथा जन्म जात होती है। इन्हीं कारणों से एक ही वाता-

वरण में एक ही साधन के साथ शिक्षित होने पर भी दो व्यक्ति समान नहीं होते। मनुष्य की बुद्धि में परिवर्तन लाना संभव है। मनुष्य में विशेषता यह है कि वह शिक्षित हो सकता है और अपनी शक्तियों पर बुद्धि द्वारा नियंत्रण रख सकता है। मनुष्य का ज्ञान उसकी बुद्धि पर निर्भर करता है। जन्म से कोई मन्द तथा कोई प्रखर बुद्धि का होता है। दोनों की बुद्धि तथा उपयोगिता की सम्भावना है। सही विकास के लिए ज्ञान की आवश्यकता होती है।

(२) **उद्वेगात्मक जीवन** (Emotionality)

उद्विग्नता अथवा भावुकता का अर्थ उस क्षमता और सहन शक्ति से होता है जिसके कारण किसी प्रकार की उत्तेजना के कारण शीघ्र किसी भाव को व्यक्त कर देता है। उदाहरणार्थ प्रेम, प्रसन्नता, सहानुभूति, क्रोध, घृणा, दु:ख, संकोच, दया, आशा, निराशा, गंभीरता, उत्तरदायित्व, विरोध, उत्साह आदि भाव प्रकट करता है। यह सभी में पाये जाते है तथा समयानुकूल प्रदर्शित होते हैं। इन्हीं के द्वारा उसका विकास भी होता है।

कुछ मनोवैज्ञानिकों ने भावुकता की दृष्टि से चार प्रकार के व्यक्ति बताये हैं प्रफुल्ल (Elated), उदास (Depressed), क्रोधी (Irritable), चंचल (Unstable.)

प्रफुल्ल व्यक्ति इनमें से श्रेष्ठ हैं। किन्तु इसके साथ सफलता के लिए गम्भीरता की भी आवश्यकता है।

(३) **व्यक्ति का रूप** (Physical Appearance)

साधारणत: व्यक्तित्व को शारीरिक रचना के अर्थ में ही प्रयुक्त किया जाता है। इसमें लम्बाई, रंग, रूप, आवाज, वस्त्र, मुखाकृति, स्वास्थ्य, सुडौलता, आदि से अर्थ होता है। शारीरिक अंग की विकृति से भी व्यक्ति के व्यक्तित्व पर विशेष प्रभाव पड़ता है। यह मानसिक ग्रंथि का कारण भी हो सकता है।

(४) **सामाजिकता** (Sociability)

व्यक्तित्व का विकास समाज में समाज के द्वारा ही होता है। व्यक्तित्व निर्णय में सामाजिकता के आदर्श गुण कसौटी की भांति हैं।

(५) चरित्र (Character)

चरित्र आदतों का समूह है। आदत मूल प्रवृत्तियों की सहायता से ही बनती है। यदि मूल प्रवृत्तियों पर नियन्त्रण है तो आदतें अच्छी होंगी अतएव चरित्र भी सुन्दर होगा। चरित्र मनुष्य के सही विकास का चिन्ह है। चरित्र ही इच्छा शक्ति है जिसके द्वारा भले बुरे के संघर्ष में भले की ही जीत होती है, मनुष्य में चरित्र सर्वश्रेष्ठ है तथा शिक्षा तथा प्रशिक्षण इसी ओर संकेत करता है।

(६) मानसिक दृढ़ता (Mental forcefulness)

इसके बिना आत्मबल की कमी रहती है। सही चरित्र निर्माण से मानसिक दृढ़ता आती है। जब संवेग तथा मूल प्रवृत्तियाँ नियंत्रित होकर आत्म सम्मान के स्थायी भाव के अन्तर्गत आये तो मानसिक दृढ़ता होगी। इसी का दूसरा नाम इच्छा शक्ति है। इच्छा शक्ति प्रबल हो तो मानसिक दृढ़ता होगी। डा० युन्ग ने सामाजिकता की दृष्टि से तीन प्रकार के मनुष्य बनाये हैं—

(१) अन्तर्मुखी (Introvert)

ऐसे व्यक्तियों का मन अपने विचारों में व्यस्त रहता है। सांसारिक विषयों का प्रभाव उन पर नहीं पड़ता। ऐसे व्यक्ति सदैव एकान्त की आकांक्षा रखते हैं। यह एकाग्रचित्त, सूक्ष्म बुद्धि तथा अध्ययनशील होते हैं, अन्य लोगों के प्रति अधिकतर उदासीनता की प्रवृत्ति रखते हैं। इनका ध्यान सदैव अपनी ओर ही केन्द्रित रहता है।

(२) बहिर्मुखी (Extrovert)

इनका दृष्टिकोण बाह्य होता है। यह अत्याधिक सामाजिक होते हैं। एकान्त में नहीं रह सकते हैं। सदैव समाज में अन्य लोगों से सम्पर्क बढ़ाने की चेष्टा करते हैं। ऐसे लोग सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक कार्यों में अधिक रुचि लेते हैं। यह अपने विचार सरलता से प्रकट कर सकते हैं।

(३) उभयमुखी (Ambivert)

कुछ ऐसे व्यक्ति भी होते हैं जिनमें दोनों प्रकार की विशेषतायें पायी जाती हैं। यह दोनों के मध्य का है।

व्यक्तित्व का विकास (Development of Personality)

व्यक्तित्व के विकास में वंशानुक्रम तथा वातावरण दोनों सहायक हैं। दोनों के प्रभाव से विकास होता है। वंशानुक्रम से शरीर, मानसिक शक्ति तथा प्रवृत्ति एवं बुद्धि प्राप्त होती है। वातावरण के अन्तर्गत परिवार, स्कूल शिक्षा, समाज आदि आते हैं।

बालक में व्यक्तित्व विकास के लिये उसे पूर्ण स्नेह की आवश्यकता है। सर्वप्रथम बालक अपने विकास के लिये दूसरों पर निर्भर करता है यदि वह अन्य लोगों पर विश्वास कर सके और सभी ओर से उसे प्रेम मिले तो व्यक्तित्व के विकास के लिए यह और उत्तम होगा।

बालक के संतुलित व्यक्तित्व के विकास में उसके माता पिता के स्वस्थ संबंधों का महत्व सर्वाधिक है। जब तक माता पिता में प्रेम का अभाव है बालक में प्रेम भावना का आना कठिन है। परिवार का वातावरण सहयोग का होना चाहिये। बालक के प्रथम छः वर्ष बहुत महत्वपूर्ण वर्ष हैं। बालक का भौतिक व्यवहार का योग इसी आयु में बनता है।

शिक्षा संबंधी संस्थाओं का बालक के प्रति उत्तरदायित्व उसके विकास के हेतु अत्यन्त आवश्यक है।

समाज की छाप बालक पर अवश्य पड़ेगी। बालक के लिए सुन्दर सामाजिक वंशानुक्रम का होना आवश्यक है।

व्यक्तित्व का विकास एक जटिल क्रिया है। बालक में परिवर्तन धीरे धीरे व क्रम से होते हैं। जैसे जैसे उसकी आयु बढ़ती है उसकी बुद्धि में भी वृद्धि होती रहती है। साथ ही साथ वह विभिन्न क्रियाओं के करने का कौशल प्राप्त करता है।

बालक प्रारम्भ से ही मूलप्रवृतियों के आधीन रहता है। इनके साथ संवेग उत्पन्न होते हैं और इन संवेगों को सही स्थायी भाव के अन्तर्गत करना आवश्यक है जिससे बालक के जीवन में नियन्त्रण तथा आदेश इन्हीं उच्च नियन्त्रणों से हो सके। इसके लिये सही वंशानुक्रम तथा वातावरण का ज्ञान तथा उनका स्थान समझते हुये उनके गुणों का प्रयोग करना है।

व्यक्तित्व के विकास में किसी प्रकार की मानसिक ग्रंथि बाधक न हो इसको ध्यान में रखना चाहिये।

बालक के प्रारम्भिक वर्षों में एक प्रकार की मनोवृत्ति बन जाती है जो उसके विकास में केन्द्रित रहती है।

बालक के व्यक्तित्व का विकास उसके जन्म लेने से पूर्व ही आरम्भ होता है उसके पश्चात प्रत्येक पग पर जिन वस्तुओं के सम्पर्क में वह आता है। उनसे प्रभावित होता है। व्यक्तित्व विकास वंशानुक्रम को सही वातावरण के द्वारा विकसित करने को ही कहते हैं।

शारीरिक शिक्षा के द्वारा व्यक्तित्व का समायोजन

हम यह समझ चुके हैं कि व्यक्तित्व को दो दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। पहला, जिस प्रकार व्यक्ति दूसरे को प्रभावित करता है, दूसरा, मानसिक स्वास्थ्य का दृष्टिकोण। अन्तिम अर्थ में चरित्र एवं व्यक्तित्व का प्रायः एक ही अर्थ है। यथार्थ व्यक्तित्व, व्यक्ति की रुचियों का योग है। अतः इसके प्राप्त करने की सर्वोत्तम रीति उन अनुभवों के द्वारा है जो प्रयोजन युक्त आत्म-संचालित क्रियाओं से प्राप्त है। जीव वैज्ञानिक परम्परा व्यक्तित्व के विकास को सीमित करती है किन्तु अनेक व्यक्तियों के लिये यह सत्य नहीं है। प्रायः प्रत्येक को ज्ञान, शरीर एवं व्यक्तित्व के विकास की योग्यता प्राप्त है। प्रश्न यह उठता है कि क्या, व्यक्तित्व का निर्माण एवं उसके प्रति आयोजन सम्भव है? मनोवैज्ञानिक तथ्यों के अवलोकन एवं अध्ययन से यह पता चलता है कि व्यक्तित्व निश्चय ही से परिवर्तित एवं नियन्त्रित किया जा सकता है। मानव व्यक्तित्व के विभिन्न रूप हैं तथा अनुभव के द्वारा उसे रूप दिया जा सकता है। जन्मजात प्रवृत्तियां जीवन के महत्वपूर्ण प्रभाव हैं, जिनका प्रयोग एवं मार्गान्तिकरण करना है न कि उनके प्रभुत्व के अन्तर्गत आना है।

उत्तम समग्रता पूर्ण (Integrated) व्यक्तित्व का अर्थ स्वस्थता से समझा जाता है। वह व्यक्ति जिस में कम से कम विरोधी रुचि है उसे समग्रता-पूर्ण व्यक्ति कहा जा सकता है। आदर्श जीवन वह है जिसमें विरोधी रुचि बिल्कुल न हो।

मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि वह व्यक्ति जो निर्णय करने में असफल

होते हैं तथा अपनी रुचि में संघर्ष होने देते हैं वे निम्न स्तर के मानसिक स्वास्थ्य का अभ्यास करते हैं तथा यह सम्भव है कि वे एक अरोग्य व्यक्तित्व अर्जित कर रहे हैं।

शारीरिक शिक्षा में असंख्य ऐसी अवस्थायें उपस्थित होती हैं जहाँ व्यक्तित्व के संगठन एवं समग्रता का अवसर प्राप्त होता है। ये अवस्थायें नैसर्गिक होती हैं तथा वातावरण स्वतन्त्र होता है जहां बालक अपने आप, अपनी रीति से बिना किसी प्रकार के वाह्य प्रभाव के अपने को विकसित करता चला जाता है। शिक्षक या निर्देशक केवल सहायता प्रदान करते हैं उनके ऊपर प्रभुत्व नही दिखाते।

शारीरिक शिक्षा मानव संतोष एवं प्रसन्नता तथा सभ्यता के विकास की विशेष बाधाओं से सम्बन्धित है। यह विशेषकर अविकसित व्यक्तित्व के कारण होता है, व्यक्तित्व विकास दूसरों के साथ क्रिया में भाग लेकर आत्म अभिव्यक्ति के द्वारा सम्भव है। क्रिया संस्कार निर्माण करती है "Function develops structure" यह व्यक्ति के लिये भी उतना ही सत्य है जितना मांसपेशियों के लिये है। पारिवारिक जीवन में वर्तमान परिवर्तन, मनोरंजन, उद्योग तथा अन्य सामाजिक संस्थाओं ने व्यक्तियों के अवसर पर प्रतिबन्ध लगा रक्खे हैं जिससे स्वस्थकर एवं बहुमूल्य आत्म अभिव्यक्ति सम्भव नहीं हो पाती। अतऐव, आधुनिक समाज में उचित मनोरंजन की व्यवस्था का उत्तरदायित्व शारीरिक शिक्षा का हो जाता है। इस व्यवस्था के कारण वे अवसर प्रदान हो सकेंगे जो व्यक्ति को अपने अधिकार प्राप्त करने एवं सौद्देश्य, अर्थमय तथा रुचिकर मार्गों का प्रयोग करने का अवसर प्रदान करेंगे।

मनोरंजन की क्रियाओं में भाग लेते हुये व्यक्तियों का आदर्श एवं विश्वास के विकसित होने की चेष्टा एवं आदेश होना आवश्यक है। व्यक्ति जिन आदर्श एवं विश्वास पर अपनी नींव डालते हैं वे शक्ति एवं प्रेरणा के प्रभाव के प्रवाह के उपयुक्त साधन सिद्ध होते हैं, ये व्यक्तित्व के विकास के हेतु अत्यन्त बहुमूल्य सिद्ध होते हैं, व्यक्ति के आदर्श उसके व्यवहार की प्रेरणा एवं नियन्त्रण करते हैं, अधिकांश व्यक्तियों में अधिक शक्ति पाई जाती है जिनका प्रयोग विकासात्मक अव्यक्त क्रियाओं में हो सकता है। शारीरिक शिक्षा का आदर्श एवं विश्वास का आदर्श एवं विश्वास के आरम्भ करने, विकसित करने तथा स्थिर रखने की सेवा में जो

व्यक्तित्व विकास में क्रियाशील है, लीन होना चाहिये। इस प्रकार स्वतन्त्रता की भावना, आत्मनिर्भरता, आत्म प्रदर्शन, प्रभुत्व शक्ति, आत्मविश्वास, सामाजिकता, शारीरिक सुडौलता एवं वृद्धि, कौशलपूर्णता, शारीरिक एवं मानसिक स्वस्थता, शक्ति एवं क्रियाशीलता शारीरिक शिक्षा के द्वारा अर्जित किये जायेंगे। इनके संगठन एवं सम्यक विकास से व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास सम्भव होगा।

व्यक्तिगत विभिन्नता

एक ही आयु के व्यक्ति प्रत्येक गुण मे विभिन्न होगे। ऊंचाई, वजन तथा शक्ति में, बीमारी के लगने में स्नायु स्थिरता एवं मानसिक संतुलन में, उच्चारण, गणित, संगीत, एथेलेटिक्स, अजिर्त ज्ञान एवं कौशल में, संवेग, भाव, तथा नैतिकता आदि में प्रत्येक वस्तु में व्यक्तिगत विभिन्नता प्रदर्शित होगी। कोई भी ऐसा मानसिक या शरीरिक गुण नहीं है जिस में व्यक्तिगत विभिन्नता न पायी जाती हो। मानव जाति के सदस्यों में यह विभिन्नता परिमाण सम्बन्धी होती है गुण सम्बन्धी नहीं। गुणों की दृष्टि से मनुष्य एक से ही होते हैं क्योकि उन में एक ही प्रकार की प्रवृत्ति संवेग, योग्यता, ज्ञान, स्मृति, कल्पना, विचार, संतोष एवं असंतोष होता है। अन्त परिणाम विश्लेषण से यह प्रत्यक्ष होगा कि सम्पूर्ण विभिन्नतायें विशेष योग्यताओं के परिमाणिक मिश्रण के कारण होती है। मानव गुण जैसे विश्वस्तता या आरम्भ करने की शक्ति आदि प्रत्येक व्यक्ति में कई एक योग्यताओं एवं प्रवृत्तियों का मिश्रण है जो कुछ परिमाण में अवश्य पाये जाते हैं।

प्रकार के सिद्धान्त

बाल्यकाल ही से हम मनुष्यों का वर्गीकरण करते हैं। उन्हें हम विभिन्न प्रकारों में विभाजित करते है। जैसे अच्छा, बुरा, लम्बा, नाटा, चमकता हुआ, तथा धुंधला आदि, व्यक्तियों के विभिन्न प्रकारों का बिना वास्तविक वर्गीकरण किये हुये विचार करना कठिन है। परीक्षा के द्वारा व्यक्तिओं में घोर विभिन्नता का ज्ञान होता है। कितनों का कहना है कि व्यक्तित्व के अनेक प्रकार है। ध्यान का अध्ययन करते हुये हम लवलीन Intensive भाग तथा करने वाला Distributive जमने वाली Fixating तथा चंचल fluctuating, स्थिर Static एवं गतिशीलdynamic प्रकार पाते हैं।

स्मृति में निश्चय संचय करनेवाला Sure retainer एवं शीघ्र स्मरण करनेवाला Quick memorizer साक्षी देने में Stern ने परीक्षा की तथा दो प्रकार पाये। वाह्य (Objective) तथा (Subjective) आन्तरिक। प्रथम प्रकार के व्यक्ति जैसा देखते हैं वैसा बताते हैं तथा प्रत्येक वस्तु का वर्णन करते हैं। दूसरे प्रकार के व्यक्ति रिपोर्ट के वर्णन में अपनी स्वयं की विशेषता अधिक दिखाई देती है इसमें वस्तु का कम किन्तु अपना वर्णन अधिक होता है। Meumamn तथा Stern विश्लेषण analytic करने तथा संयुक्त Synthetic करने वाले प्रकार के व्यक्तियों के विषय में बतलाते हैं। प्रथम प्रकार वस्तु को उसके अंगों में एक दूसरे से पृथक देखते हैं जिसमें विभाजन की प्रत्यक्ष लकीरें हो तथा दोषों का निवारण करते हैं। दूसरे प्रकार के व्यक्ति उन वस्तुओं को जो पृथक हैं एक साथ लाते हैं तथा संयुक्ति उत्पन्न करते हैं। वे वास्तविक निवारण की ओर ध्यान नहीं देते। Stern, अनायास (Spontaneous) तथा केवल प्रतिक्रिया करने वाले (Merely reactive) का भी वर्णन करते हैं। प्रथम प्रकार के व्यक्ति मानसिक कार्य अपने आप करते हैं। दूसरे प्रकार के व्यक्ति के लिये वाह्य उत्तेजना की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार व्यवहारिक (Pragmatic) या तारंगिक (Fantastic) में विभिन्नता होती है। इसी प्रकार के असंख्य उदाहरण व्यक्तिगत विभिन्नता या प्रकार के दिये जा सकते हैं।

उपरोक्त से अधिक आधारभूत Jung के प्रसिद्ध प्रकार वर्हिमुखी (Extrovert) तथा अन्तर्मुखी (Introvert) हैं। अन्तर्मुखी वाह्य जगत की वस्तुओं से विशेष सम्बन्धित नहीं हैं। उनका अपने ही विचारों एवं भावों से अधिक सम्वन्ध रहता है, वह विषय पर अनुभव की वस्तु से अधिक बल देता है। वर्हिमुखी वाह्यजगत से सम्बन्धित होता है वह अनुभव की वस्तु पर बल देता है। जीवन एक या दूसरे प्रकार से आरम्भ होकर भी परिस्थितियों के कारण वास्तविक प्रकृति में परिवर्तन सम्भव कर देता है। उत्तम शिक्षा के द्वारा यह चेष्टा होनी चाहिये कि व्यक्ति किसी प्रकार के अन्तिम सिरे तक न पहुंचे, इतना होते हुये भी मनोवैज्ञानिक शुद्ध प्रकार का उदाहरण नहीं दे सकते। थोरन्डाइक का कहना है कि—

"Variations among individuals are so gradual and continuous that they do not admit of rigid classifications into types. There is only one type the mediocre."

उनके कथनानुसार केवल एक प्रकार की केन्द्रीय प्रवृत्ति हो सकती है जिसके चारों ओर मिलकर प्रत्येक प्रकार की विभिन्नता सम्भव हो सकती है। उडवर्थ इस मध्यस्थ समूह को Ambiverts कहते हैं उनका कहना है कि—

"Classifying every body as either an extrovert or an introvert is bad any way for ever those who are most enamoured with the type theory admit a middle class of Ambiverts and admit that this middle class is large, 'If not largest of the three.'

व्यक्तिगत समानता

दोनों विचारों के बीच की समानता प्रत्यक्ष हैं। समझौते का आधारभूत विचार यह है कि व्यक्तिगत विभिन्नता मान ली गयी है तथा इसे भुलाया नहीं जा सकता। सभी को एक प्रकार की चिकित्सा नहीं दी जा सकती। शिक्षा में इस सिद्धांत का प्रभाव बालकों के प्रकार के अनुसार वर्गीकरण करने में नहीं किन्तु व्यक्तिगत आवश्यकता के अनुसार शिक्षा देने का है। प्रत्येक बालक के लिये यह आवश्यक है कि वह शिक्षा का मार्ग अपने लिये अपनी आवश्यकता के अनुसार ग्रहण करे तथा जहां शिक्षक की सहायता की आवश्यकता हो उसे मिलती रहे।

बालक जब प्रौढ़ जीवन में प्रवेश होकर अपने को उस जीवन में स्थित करना चाहते हैं तो उनकी एक विशेष भावना दूसरों से भिन्न न होने की होती है। वे दूसरों के समान होना चाहते हैं। यह भावना उन्हें अपने आप में असुरक्षित विचार के कारण होती है तथा वे दूसरे के होकर रहना चाहते हैं, अतः वे शरीरिक रीति से अपने मित्रों के समान रहना चाहते हैं। उनकी तरह करना एवं वस्त्र धारण करना चाहते हैं। यह बढ़ने की आयु की एक विशेषता है किन्तु यह समानता की अनिवार्यता कम होती जाती है जब संतोषजनक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है तथा व्यक्तिगत विभिन्नता का ज्ञान हो जाता है। जैसे किशोर बालक पृथक व्यक्तित्व को समझ जाता है जिसके विचित्र एवं विशेष प्रदर्शन की रीति है तथा अपने में सुरक्षित होने की भावना प्राप्त कर लेता है क्योंकि दूसरे उसको मान्यता देते हैं, वह यही भावना उनको जिनकी भी अपनी प्रदर्शन की रीति है, दिखलाता है। इस परिवर्तित सम्बन्ध की भी व्यक्तिगत विभिन्नता है जो कई एक तत्वों पर निर्भर करता है।

व्यक्तिगत विभिन्नता के देखते हुये कुछ समानता भी देखना आवश्यक है। मानव जाति का प्रत्येक सदस्य समान है जो कुछ भी विभिन्नता है वह श्रेणी की हैं क्योंकि आधारभूत तथ्य एक ही हैं। इनकी विभिन्नता वातावरण के सम्पर्क में ही होती है। शिक्षा भी आधारभूत समानता उत्पन्न करने की चेष्टा करती है। शरीर क्रिया प्रकृति में भी समानता है। परम्परा की समानता वंशानुक्रम में चली आती है।

संवेगात्मक नमूने में भी समानता पायी जाती है, कहा जा चुका है कि मानव जाति के वंशनुक्रम तथा परम्परा की समानता विभिन्नता आन्तरिक एवं बाह्य वातावरण के कारण विभिन्न परिणामों में उनका अन्त होता है जिनके द्वारा व्यक्तिगत विभिन्नता आ जाती है। व्यक्ति के बढ़ाव विकास में, विभिन्नता होती हैं। सामाजिक प्रभाव का विभिन्न असर पड़ता है। शिक्षा में विशेषता एवं शिक्षा का विस्तार विभिन्नता उत्पन्न करती है। सीखने की भावना भी विभिन्न है। मानव जाति में लैंगिक विभिन्नता होती है। आयु, जाति (Race) भाव एवं संवेग में विभिन्नता होती है। विभिन्न व्यक्ति की इच्छा एवं चरित्र में विभिन्नता होगी। क्रियावाही प्रेरणा, क्रियावाही गति, तीव्रता, यथार्थता, समन्वय व्यक्तित्व, आदि में एक व्यक्ति दूसरे से भिन्न होता है।

शिक्षा :

व्यक्ति की समानता एवं विभिन्नता को देखते हुये शिक्षा की यह चेष्टा है कि व्यक्ति को विभिन्न प्रकार की योग्यता की शिक्षा दे जिससे वह अपना समायोजन कर सके। शारीरिक शिक्षा के द्वारा विभिन्न प्रकार की शिक्षा दी जा सकती है तथा योग्यता उत्पन्न की जा सकती है।

The greater the variety of specific movement the child goes through in his early maturing and developing period the more likely he is to possess the motor movement equipment to fit well the numerous demands of adult life. Skinner.

कार्य क्रम में विभिन्नता (variety) होनी आवश्यक है। शरीर नियन्त्रण कौशल आन्तरिक अंगों की शक्ति, सामाजिक भावना एवं चरित्र में शक्ति शाली रूप से भाग लेना आवश्यक होती हैं। तथा विभिन्न शरीरिक

गतियां भी सम्भव होती है। व्यक्तित्व का उचित विकास होना आवश्यक है जो शारीरिक शिक्षा के द्वारा पूर्ण रूप से सम्भव है। व्यक्तित्व का परिवर्तन सरलता से सम्भव है। शिक्षा योग्यता के अनुसार होनी चाहिये। शिक्षा में आयु एवं परिपक्वता का पूर्ण ध्यान रखना आवश्यक है। लैंगिक विभिन्नता के सिद्धान्त पर कार्य होना चाहिये। व्यक्ति की विभिन्नता एवं समानता के ध्यान से बालकों का उचित वर्गीकरण करके शिक्षा देना उचित है।

अचेतन मन एवं उसका प्रभाव

अचेतन मन, मन का वह संस्कार है जो उसके जीवन का २/३ हिस्से का नियन्त्रण करता है। (मानसिक विकास के अध्याय में मन की बनावट तथा उस की शक्ति का वर्णन है)। अचेतन मन की क्रियाओं के अध्ययन में मनोविज्ञान की एक शाखा मनोविश्लेषण (Psychoanalysis) की स्थापना हुयी जिसके द्वारा अत्यन्त बहुमूल्य कार्य सम्भव हो सका है। इसके द्वारा मन के गुप्त स्तर की भावनाओं आदि के ज्ञान में सफलता प्राप्त हुयी है। इसका श्रेय Freud को है। उन्ही के कार्यों के द्वारा इस अचेतन मन के विज्ञान नें ख्याति प्राप्त की।

मनोविश्लेषण (Psychoanalysis)

Freud के अनुसार मानसिक विकारों की चिकित्सा का केवल एक उपाय व्यक्ति बाल्यकाल में उस विकास के आरम्भ की खोज थी। ये रोगी को सम्मोहन (hypnotise) न कर उसे विश्राम एवं तनाव रहित अवस्था में उसके विचार एवं स्मृति का स्वतंत्र प्रवाह स्वतंत्र साहचर्य्य के द्वारा प्राप्त करने की चेष्टा बतलाते हैं। ऐसी स्थिति में वह अपने को आलोचक के रूप में नहीं होना आवश्यक बतलाते थे। स्मृति एवं विचार मुख्यतः व्यक्ति सम्बन्धित परीधि में रखा जाता था। स्वप्न भी पूछे जाते थे तथा उसका विश्लेषण स्वतंत्र साहचर्य्य के द्वारा समझने की चेष्टा की जाती थी। स्वप्न की विभिन्नता वस्तुओं को बारी बारी लेकर स्वतंत्र विचार का अवसर दिया जाता था तथा उससे यह पता चलाने की चेष्टा की जाती थी कि व्यक्ति के जीवन में वह किस बात का संकेत करता है। कुछ समय पश्चात बाल्यावस्था की संवेगात्मक भावनाओं की स्मृति होती थी। इस प्रकार मनोविश्लेषण कर्ता व्यक्ति के वर्तमान विकार के कारण का पता चला कर मनोवैज्ञानिक रीति से उसकी चिकित्सा करता है जिसे (Psycho Therapy) कहते हैं।

Freud ने प्रेरणाओं के संघर्ष अचेतन या अनेक प्रेरणाओं का विश्लेषित चरित्र पर अधिक बल दिया, प्रारम्भिक प्रेरणायें विशेष तीन समझी जाती हैं, सुरक्षा (Security,) संतोष (Pleasure) तथा सफलता (Achivement (Freud) के कथनानुसार असमायोजन (Maladjustment) संतोष की अप्राप्ति के कारण होता है। इसे वह लैंगिक इच्छा Sex desire कहते हैं। बालकों में भी यह पाया जाता है। बालक माता का दूध पीने, मल मूत्र त्यागने तथा मां के प्यार में संतोष पाते हैं। इनमें बाधा पड़ने से उसे कठिनाई होती है तथा वह एक संघर्ष की अवस्था में पड़ जाता है। यही जीवन के सम्पूर्ण असमायोजन का मुख्य कारण प्रतीत होता है।

मानसिक चिकित्सा (Psycho therapy) में दो बातें आवश्यक हैं, सर्व-प्रथम समस्या या विकार के स्त्रोत का ढूढ़ना तथा व्यक्ति को उनका सामना करना। द्वितीय उसे आशा पूर्वक सम्पूर्ण जीवन, स्वास्थ्य तथा उत्तम समायोजन की ओर उत्साह पूर्ण कदम उठाना। संकेत एवं सम्मोहन (Suggestion and Hypnosis) तथा मनोविश्लेषण (Psychoanalysis) चिकित्स की दो पद्धत्तियां हैं।

अचेतन मन के विज्ञान के द्वारा असमायोजित व्यक्तियों को अत्यन्त लाभ पहुंचा है। इसी के द्वारा असमायोजन जो अचेतन मन में छिपी हुयी भावनाओं एवं संघर्ष के कारण हो सकता है, प्रकाश में लाकर व्यक्ति को उचित समायोजन की ओर ले जाता है। मनुष्य के जीवन के प्रारम्भ से ही ऐसी अवस्थायें, भावनायें आदि उपस्थित होती हैं जिन्हें समाज की मान्यता प्राप्त नहीं। अनेक बार ये शक्तियां दबायी जाती हैं। ये मनुष्य के जीवन से कभी समाप्त नहीं होती किन्तु अचेतन मन में चली जाती हैं। Freud के अनुसार चेतन मन तथा अचेतन मन के बीच एक द्वारपाल (Libido) या Censor है जो इस प्रकार की असामाजिक भावनाओं को अचेतन मन से चेतन मन में आने से रोकती हैं। कभी कभी वह सतर्क नहीं होता। उसी समय व्यक्ति की कुछ ऐसी क्रियायें होती हैं जो उसके चरित्र से समायोजित नहीं होती तथा व्यक्ति को उसका पता भी नहीं होता एवं वह चिन्तित भी हो जाता है। यह वह समय हैं जब अचेतन मन में छिपी हुयी भावना द्वार पाल को धोखा देकर या छिपे हुये रूप में चेतन मन में आ जाता है। ये मानसिक विकार के कार्य के रूप

में प्रदर्शित होते हैं। अचेतन मन की तीन प्रबल वासनायें बतायी गयी हैं। काम वासना, आत्मप्रकाशन की वासना एवं समाज प्रेम की वासना। जब इन वासनाओं का उचित प्रकाशन या तृप्ति नहीं होती तो ये ग्रंथियों के रूप में कार्य करती हैं तथा मानसिक विकार उत्पन्न करती हैं।

अचेतन मन की छिपी हुयी या दबी हुयी प्रवृत्तियों या भावनायें सांकेतिक चेष्टाओं के रूप में प्रदर्शित होती हैं। दाँत से नाखून काटना, पैर हिलाना, खड़े हुये पैर से जमीन खोदना, किसी प्रकार की गति, मुद्रा आदि सांकेतिक चेष्टाओं के अन्तर्गत आता है जो अनजाने में की जाती है इनका आदेश अचेतन मन के द्वारा होता है। Freud के अनुसार स्वप्न में भी व्यक्ति का अचेतन मन कार्य करता है। अचेतन मन की दबी हुयी वासनायें स्वप्न के रूप में स्वतंत्रता से आती हैं। जो कुछ व्यक्ति चेतन अवस्था में नहीं कर पाता वह स्वप्न में करता है। काम वासना स्वप्नों का मुख्य कारण है। उत्तेजनाओं की पूर्ति न होने से भी उन्हें हम स्वप्न में देखते हैं। प्यासे सो जाने से स्वप्न में पानी देखा जा सकता है। वास्तविक इन्द्रीय उत्तेजना जैसे अलार्म की घड़ी, पेट का दर्द आदि स्वप्न में आते हैं जो भ्रम के रूप में होगा। मुंह पर सूर्य की चमकती हुयी किरण आग के अंगारे का स्वप्न दे सकती है। अनेक बार यह स्वप्न के समान होता है। कभी कभी इन्द्रीय उत्तेजना स्वप्नों को, जो हो रहे है, प्रभावित करते हैं तथा वे स्वप्नों के सम्बन्ध में ही अनुवादित होते हैं। स्वप्न से इच्छा की पूर्ति होती है।

स्वप्न, प्रसन्नता एवं अप्रसन्नता देने वाले दोनों होते हैं।

दिवास्वप्न (Day Dreams)

Wood Worth का कहना है कि दिवा स्वप्न एक प्रकार का खेल हैं यह विश्वव्यापी है तथा इसकी मानसिक एवं गतिवाही क्रिया स्वयं प्रेरणा देने वाली हैं। व्यक्तिगत प्रयोजन भी दिवा स्वप्न के कारण होते हैं। दिवा स्वप्न वाला व्यक्ति सदैव भविष्य की ओर देखता है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह भविष्य का आयोजन करता है किन्तु यह प्रभाव हीन आयोजन होता है जिसकी कल्पना का नियन्त्रण नहीं अतः यह वास्तविक आयोजन न होकर केवल एक कल्पना का खेल रह जाता है।

प्रभुत्व दिवा स्वप्न (Mastery Day Dreams)

इस प्रकार के दिवा स्वप्न में एक नायक होता है। बहुधा वह नायक व्यक्ति स्वयं होता है। कभी वह विजयी तथा कभी हारने वाला नायक होता है। दोनों अवस्थाओं में स्वयं का महत्व होता है। इस प्रकार नायकता की प्रेरणा अपने में पूर्ति चाहती है। ऐसे स्वप्नों के द्वारा इच्छा की क्षणिक पूर्ति प्राप्त होती है। इसमें बिना कष्ट किये सफलता प्राप्त होती है। यह सफलता किसी प्रकार के आत्म अधिकार प्रदर्शित करने में परिवर्तित किया जाता है। कभी कभी नायक व्यक्ति स्वयं नहीं होता किन्तु कोई अन्य व्यक्ति जो व्यक्ति से निकट सम्बन्ध रखता हो। माँ अपने पुत्र में अपने गौरव की पूर्ति उसको दिवा स्वप्न के नायक बना कर करती है। अपनी विजय हार या दुःख को प्रदर्शित करके भी व्यक्ति नायकता का पाठ करता है। इस प्रकार का दुखित नायक अपने को सदैव सही समझता है। किशोरावस्था में बालक की स्वतंत्रता को बड़ों के द्वारा इसी प्रकार की बाधा मालूम पड़ती है।

दिवा स्वप्न में जो इच्छायें कल्पना के खेल में पूर्ति प्राप्त करती हैं वे प्रायः आत्म अधिकार के अन्तर्गत आती हैं। प्रेम में वे प्रेम स्वप्न के अन्तर्गत आती है। दिवा स्वप्न के अनेकों प्रकार हैं। हास्यास्पद दिवा स्वप्न जिस में व्यक्ति अनायास हंसता है तथा प्रश्न किये जाने पर उस का काल्पनिक कारण ढूंढ लेता है। जो विचार या इच्छा कल्पना में पूर्ति प्राप्त करते हैं, वे दिवा स्वप्न का रूप लेते हैं। भय या चिन्ता के दिवा स्वप्न होते है जहाँ अनायास चिन्ता या भय किया जाता है। इसकी कोई आवश्यकता नहीं होती। यही अपूर्ण इच्छा का भेष बदलना है। काई बालक मां बाप के साथ भी रहते हुये जब स्वतंत्र होने की इच्छा करता हैं तब इच्छा होने पर भी वह चिन्तित हो जाता है। यदि मां उसके पास से कहीं चली जाती है तो वह उसके कारण भयभीत एवं चिन्तित होता है जहाँ भय या किसी प्रकार की चिन्ता की कोई सम्भावना या स्थान नहीं। मनोवैज्ञानिक इस असाधारण भय या चिन्ता का कारण यह बतलाते हैं कि चिन्ता या भय इसलिये होता है क्योंकि उसकी इच्छा है किसी प्रकार की घटना हो जिससे वह सरलता से स्वतंत्र हो सके। ऐसी स्थिति प्रत्येक भय या चिन्ता में नहीं होती। भय या चिन्ता के वास्तविक एवं सही कारण होते हैं तथा शुद्ध विचार के कारण हानि की सम्भावना में यह प्रदर्शित होती है।

चिन्ता वास्तविक कार्य के स्थान पर, जब वह सम्भव नहीं होता, तब की जाती है। चिन्ता एक आन्तरिक खेल भी हो सकता है। यदि कोई वास्तविक चिन्ता करता है तो उस की पूर्ति के लिये कार्य करता है। अनेक बार अनायास चिन्ता कर के हम उस अवसर की तैयारी करते हैं, जब बिन घटना घटित हुये व्यक्ति निकल आता है। जब मां अपने बालक के लिये चिन्तित होती हैं तो वह उस के आने को तैयार करती है। यदि उसे वास्तविक विश्वास हो कि वह संकट में है तो वह मार्ग में जा कर उसे सहायता देना चाहेगी। वह भय का आनन्द, सुरक्षा की पूरी आशा करते हुये करती है।

दिवा स्वप्न से लाभ तथा हानि (Advantages & Disadvantages of Day Dreams)

दिवास्वप्न, उस समय होता है जब कुछ कार्य करने के लिये नहीं होता बलिष्ठ व्यक्ति अपने अवकाश में आमोद के लिये इसे प्रयोग करता हैं। जो निर्बल हैं तथा कार्य नहीं कर सकते वे इसकी आड़ में अपनी इच्छा की पूर्ति करते हैं। दिवास्वप्न कल्पना के प्रयोग की दोषपूर्ण रीति है।

(मानसिक विकार का अचेतन मन से सम्बन्ध, मानसिक स्वास्थ्य के अध्याय में विस्तार से दिया गया है।)

सामूहिकता का मनोविज्ञान

सामूहिकता प्राणी की प्रवृत्ति है। मनुष्य एवं जानवर, दोनों में यह पायी जाती है। व्यक्ति नैसर्गिक रूप में सामाजिक है। मनुष्यों की उपस्थिति में वह संतोष एवं विश्राम प्रकट करता है तथा उनकी अनुपस्थिति में चंचलता एवं कष्ट। एकान्त, भय है। भीड़, प्रसन्नता है। छोटे बच्चे भी एकान्त में रोते हैं। असभ्य लोगों में यह सुरक्षा एवं भोजन के लिये आवश्यक होता था। सामाजिक तथा सामूहिक जीवन की उत्पत्ति यहीं से हुयी। स्ट्राइक, पारस्परिक भावना आदि इसी प्रवृत्ति के कारण होते हैं। इस प्रवृत्ति से लाभ, दूसरों के साथ समन्वय प्राप्त करने का है। अतएव यह आवश्यक है कि बालक अपनी आयु तथा रुचि के व्यक्तियों के साथ रहे। यह प्रवृत्ति, किशोरावस्था के आरम्भ में प्रदर्शित होती है, बालक समूह की भावना प्रदर्शित करता है, उस में रहना चाहता है तथा दूसरों की अपेक्षा उन्हीं की सुनता है। इस प्रवृत्ति के कारण शारी-

रिक क्रियाओं की खेल आदि में इच्छा होती, साहसपूर्ण क्रियाओं में लीन, टीम में कार्य करना आदि होता है।

स्कूलों में इस प्रवृत्ति के दबाव के कारण अनुशासन की समस्या उपस्थित होती है। स्कूलों में इस प्रवृत्ति के सही प्रवाह के लिये उचित उपाय करना आवश्यक है। स्कूल के खेल के मैदान, स्कूल शासन, क्लब, सोसायटी तथा विभिन्न प्रकार के क्लासों के द्वारा इस प्रवृत्ति के प्रवाह का उपाय हो सकता है। यहां, यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि केवल समूह की सदस्यता से सामूहिक वास्तविकता प्राप्त नहीं की जा सकती है। जब व्यक्तियों में समान ध्येय तथा प्रेरणा रहती है तथा वे सामूहिक रीति से अपना व्यवहार उनके अनुसार नियन्त्रित करते हैं तब एक वास्तविक समूह या समाज की उत्पत्ति होती है। ऐसी सामूहिकता में सामाजिकता सदैव उपस्थित रहती है। अपनी जाति के साथ रहने के कारण सामाजिक आमोद प्रमोद, खेल, नृत्य, विलास आदि सम्भव होता है। इन्हीं क्रियाओं के द्वारा जाति विस्तृत होती है तथा समान रुचि, अपने आप सहायता तथा एकता की भावना की उत्पत्ति होती है जो सुप्रबन्ध के स्थापित करने के लिये अति आवश्यक है। विश्व शान्ति के लिये Cubertin ने ओलम्पिक खेलों का पुनरुत्थान इसी भावना के अन्तर्गत किया था।

सामाजिकता के साथ शारीरिक शिक्षा का घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसके मनोरंजन के कार्यक्रम, उत्सव, समारोह, नृत्य आदि सामाजिकता के प्रगति में अत्यन्त सहायक हैं। प्रजातांत्रिक वातावरण के लिये सामाजिक नियन्त्रण का प्रचार एवं प्रोत्साहन, शारीरिक शिक्षा की उत्तम रीति तथा ईमानदारी से खेलने के द्वारा सरलता से प्राप्त किया जा सकता है। खेलने वाले जब यह समझते हैं कि खिलाने वाला ईमानदारी से खेल खिला रहा है, जब नागरिक न्यायकर्त्ता के निर्णय का सम्मान करते हैं तो व्यक्तियों में यह भावना होती है कि न्याय प्रचलित है। न्याय की भावना, प्रजातान्त्रिक सामाजिकता के विकास एवं उसे सुरक्षित रखने के लिये एक उचित भावना है। न्याय की भावना के विकास के लिये शारीरिक शिक्षा में सहने की, दूसरों के साथ ईमानदारी, उदारता आदि की शिक्षा का बहुमूल्य अवसर प्रदान करते हैं। यही एक माध्यम है जो सरलता एवं नैसर्गिक रीति से न्याय की भावना की शिक्षा प्रदान करता है। जिमनेज़ियम, खेल के मैदान, तथा अन्य शारीरिक शिक्षा के माध्यम के द्वारा यह

भावना निरन्तर प्रदर्शित है जो व्यक्तिगत एवं स्वार्थपूर्ण प्राकृतिक भावनाओं का मार्गान्तिकरण करती रहती है।

शताब्दियों से व्यक्ति दो शक्तियों के द्वारा प्रभावित रहा है। प्रथम जटिल प्रभाव का समूह जिसे आन्तरिक प्रेरणा या जन्मजात प्रवृति कहते हैं तथा द्वितीय वे विभिन्न प्रकार के सामूहिक साधन जिसे वातावरण कहते हैं। ये दो प्रभाव जीव वैज्ञानिक एवं सामाजिक परम्परा हैं। मनुष्य के जीवन में ये पूर्ण रूप से सर्वत्र कार्यशील रहते हैं।

प्रजातांत्रिक जीवन के लिये 'सामूहिक पद्धति' (Group Process) एक अत्यन्त ही लाभदायक प्रणाली है। स्कूलों में, कक्षा वादविवाद, सार्वजनिक प्लेटफार्म, ट्रेडयूनियन, विपरीत दल, क्लब, सोसायटी आदि इसी प्रणाली के प्रत्यक्ष रूप हैं। यद्यपि यह सामूहिकता कीभावना से प्रेरित होती है तथापि अनेक बार विचार परामर्श आदि जो इस प्रणाली के द्वारा होते हैं वे दोषपूर्ण एवं अप्रजातांत्रिक होते हैं। यह निश्चय है कि समूह सम्बन्धित समस्याओं का प्रस्ताव विश्लेषण तथा हल, प्रजातांत्रिक रीति से हो। शासन में बिधान के लिये समूह के प्रतिनिधित्व के द्वारा, स्कूल शासन में विद्यार्थी प्रतिनिधित्व, समाज में चरित्रवान एवं सम्मान प्राप्त व्यक्तियों के द्वारा प्रतिनिधित्व तथा अन्य संस्थाओं में प्रतिनिधित्व के द्वारा समूह की उपस्थिति एवं निर्णय सम्भव होता है। अनेक ऐसी समस्यायें है जब समूह में व्यक्तिगतरूप से बिचार करने तथा मत देने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार के जीवन के लिये उचित शिक्षा की आवश्यकता है।

सामूहिक पद्धति के लिये विशेष बातें

इस बात का विश्वास कि प्रत्येक व्यक्ति कुछ न कुछ प्रदान कर सकता है। समूह में विभिन्नता होते हुये यह आशा करना कि किसी दी हुई समस्या पर योग्य निर्णय सम्भव है। सामूहिक चेतना प्राप्त करने के लिये प्रारम्भिक व्यक्तिगत शिक्षा लाभ कर सिद्ध होती है ये तीन प्रमुख बातें हैं।

इस बात से सहमत होना कि समूह में भाग लेने में, मनोवैज्ञानिक बाधायें नेता के अनौपचारिक रीति, मैत्रीभाव तथा उचित तकनीक के द्वारा हठायी जा सकती है। इस बात पर ध्यान देना कि कुछ शारीरिक दशाएं या

अवस्थाएं भाग लेने के लिये प्रोत्साहित कर सकती हैं, जैसे बैठने का संगठन, प्रकार आदि, शरीर पर वातावरण का प्रभाव तथा लम्बी अवधि में कुछ छूट। निर्णय की प्रगति में समानता उसी समय सम्भव है जब ध्येय समूह के हों, लीडर के नहीं। उचित समय पर उचित सारांश देना, निर्णय के अर्जित करने में सहयोग देगा। इस बात को मान लेना कि कुछ विषय ऐसे हैं, जिन पर तत्कालिक निर्णय सम्भव नही तथा उसे भविष्य के लिये छोड़ देना, यह विचार करते हुये कि समय का अन्तर निर्णय के पहुंचने में किसी प्रकार का अन्तर नहीं होने देगा। यह विश्वास कि मित्रता, पारस्परिक निर्भरता एवं सम्मान, गम्भीरता एवं इमानदारी जो लीडर के द्वारा प्रदर्शित होते हैं उनका प्रभाव संक्रामक है तथा यह भावना समूह में पैठ जायेगी। इस बात को ध्यान में रखना कि विरोधी दल की भावनाओं तथा दृष्टिकोण के सम्मान के कारण उस समय के निर्णय के लिये कुछ व्यक्तिगत बलिदान की आवश्यकता होती है। यह निश्चित है कि कोई समस्या सदा के लिये हल नहीं हो जाती तथा किसी न किसी समय विरोधी विचारों में से एक, मान्यता प्राप्त कर सकता है। इस विचार पर बल देना है कि समूह के किसी सदस्य का विचार महत्वपूर्ण हो सकता है तथा समस्याओं के समझने में समूह के सदस्य विभिन्न समय लेंगे। अतः कार्य क्रम की प्रगति की तीव्रता ऐसी होनी चाहिये कि समानता को अर्जित करने में कठिनाई न हो चाहे निर्णय की समानता को समझने की अयोग्यता क्यों न हो।

समूह पद्धति में सदस्यों के एक मत होने का आदर्श होना चाहिये। जहां सम्पूर्ण एक मत न हों वहां बहुमत होना आवश्यक है। इस पद्धति की निर्बलता अल्पमत Minority असन्तुष्ट Dissedents तथा संघर्ष करने वाले हैं। कभी कभी व्यक्तिगत विचार के परिवर्तन के लिये सामूहिक प्रभाव डाला जाता है। यदि यह व्यक्तिगत स्वतन्त्रता भंग करता है तो उचित प्रतीत नहीं होता।

शिक्षा का उत्तरदायित्व

व्यक्ति के लिये ऐसे समाज या समूह का निर्माण करना जिससे बालक का जीवन सुखी हो न कि समाज-विध्वंसक। वातावरण अवांछनीय तथ्यों से शुद्ध होना चाहिये। सामूहिक जीवन के द्वारा चरित्र के सुन्दर गुण जैसे सहयोग,

उदारता, प्रेम, सहनशीलता सहानुभूति, सेवा, परोपकार, सहने की शक्ति, निर्भरता, लगे रहना, पारस्परिक समझ तथा संयुक्ति आदि अर्जित करने के उचित साधन उपलब्ध करना आवश्यक है। सभ्यता का विकास समूह पर निर्भर है। शिक्षा के ध्येय से एक समान बालकों को एक समूह में रखना शारीरिक शिक्षा विशेषज्ञों से मान्यता प्राप्त है। कितनों का विचार है कि समूह का निर्माण सफलता के अनुसार होना चाहिये।

यह विचार विश्वव्यापी है कि बालकों का सामूहिक वर्गीकरण, ध्येय के स्थिर करने के उद्देश्य से तथा सफलता के स्तर एवं प्रतियोगिता के लिये अत्यन्त आवश्यक है।

अनुशासन एवं व्यवहार

अनुशासन का साधारण अर्थ है व्यवहार का नियन्त्रण एवं आदेश। आदर्श विचार के अनुसार, प्रत्येक अनुशासन का ध्येय व्यक्ति के द्वारा आत्म अनुशासन प्राप्त करने का है। वे शिक्षक या लीडर जो शिक्षार्थियों के कार्य का आदेश तथा उनकी प्रेरणाओं को सही दिशा में आदेशित एवं केन्द्रित करते हैं उन्हें शक्ति एवं अधिकार के द्वारा नियन्त्रण करने की आवश्यकता नहीं होती। ऐसी अवस्था में वह शिक्षा के साथ ही कार्य के प्रति आदत एवं भावना, विशेष सीखने के अनुभव तथा जीवन के प्रति शिक्षित कर रहे हैं। अनुशासन के कई और अर्थ सम्भव हैं। अनुशासन का अर्थ सुप्रबन्ध (order) से भी हो सकता है। अनुशासन का अर्थ नियन्त्रण (control) भी हो सकता है। इस का अर्थ दण्ड भी हो सकता है।

समाज अपने नियमों के अनुकूल प्रतिक्रिया की आशा करता है। इसके साथ ही उत्तम व्यवहार को सीखना, ज्ञानपूर्ण विचार एवं दूसरे के अधिकार को मान्यता देना, समाज के द्वारा सराहा जाता है। अपने कार्य में निर्भरता, समूह के नियम के प्रति अनुकूलता, उद्यता, कार्य करने का उत्तरदायित्व लेना, इमानदारी, सहना आदि ये शिक्षा के उत्तम परिणाम हैं। इनके प्राप्त करने के लिये बालकों को अधिक सहायता एवं आदेश की आवश्यकता होती है। उत्तम शिक्षा के लिये आत्मानुशासन की आवश्यकता है। आत्मानुशासन में आदेश का प्रतिपालन नहीं वरन् ज्ञान एवं समझ की वृद्धि तथा अपने एवं दूसरों के प्रति उत्तरदायित्व ग्रहण करने का है।

नैतिक एवं सामाजिक नियम तोड़े जा सकते हैं जिनका कोई तत्कालिक प्रभाव सम्भवत नही पड़ सकता। नियम को ग्रहण करने, मान्यता देने तथा पालन करने के लिये एक लम्बी शिक्षा की आवश्यकता होती है। औद्योगिकता, मितव्ययता, सतर्कता, स्वच्छता, नियत समय की आधीनता, विधिपूर्वक कार्य को करना, दूरवर्ती ध्येय के प्राप्त करने लिये केन्द्रित एवं प्रचलित समस्याओं के प्रति प्रचलित तार्किक आक्रमण आदि जो समाज के द्वारा मान्यता प्राप्त गुण हैं, इन सभी के द्वारा आत्म अनुशासन प्रभावित होता है। इनके अर्जित करने के लिए कठिन, बहुधा अरुचिकर अभ्यास का अवलम्बन लेना पड़ता है। इसके पूर्व की अभ्यास के द्वारा ये व्यक्ति के व्यवहार की इच्छित क्रियाओं के अन्तर्गत आ जाये उनकी उपयोगिता का ज्ञान उसके लिए आवश्यक है। शिक्षा की किसी पद्धति पर विचार करना कठिन है जहां यह प्रशिक्षण सम्भव हो,वहां निषेध की तकनीक, दबाव एवं कठिन मांग का प्रयोग न हो। इस भ्रम में नहीं पड़ना चाहिये कि कर्तव्य के सीखने में अधिक सरलता के कारण अधिक रुचि होगी। सीखने की समस्यायें, सीखने वालों के लिये एक टक्कर लेने की वस्तु होना चाहिये। इस में व्यक्ति की यथार्थ चेष्टा प्रयुक्त होती है।

उचित शिक्षा का वातावरण सुप्रबन्धित होना चाहिये तथा विद्यार्थियों में अनुशासन आवश्यक है। सुप्रबन्ध एवं अनुशासन (order and discipline) के लिये कौन सी पद्यति का उपयोग करना चाहिये इसमें मत भेद होगा। अनेकों शिक्षक हैं जो अनुशासन, बालक के असभ्य व्यवहार के विरुद्ध की गयी क्रिया समझते हैं। वास्तविक अनुशासन बालक के स्वयं के द्वारा अपने व्यवहार का नियन्त्रण है जिसे आत्म नियन्त्रण या अनुशासन कहा जा चुका है। इस वातावरण में शिक्षक का सहयोग उसके द्वारा उचित स्थान पर आवश्यक सामग्री का उपलब्द्ध एवं आयोजित करना, गम्भीरता, एक सा स्वभाव, कार्य के प्रति उत्साह, अपनी सहायता, तथा समयानुकूल आदेश उन्हें देने में होता है जिन्हें वह समझता है कि उनको अपने आप सीखना है। विद्यार्थियों का सहयोग उन्हें क्या करना है, क्यों करना है तथा यथार्थ रूप में करने के द्वारा होता है। सुप्रबन्धता, भिन्न भिन्न क्रियाओं मे भिन्न भिन्न होगी। किसी दशा में ध्यान पूर्वक शान्ति दूसरे स्थान में उत्तेजना पूर्ण तर्क किसी स्थान में गति, वार्तालाप, प्रश्न एवं उत्तर, अधिक गति, बारी लेना आदि होगी सुप्रबन्धता, तात्पर्य के ऊपर आधारित है। जब सुप्रबन्धता अनुपस्थित हो तो यह समझना आवश्यक है कि इस शिक्षा में तात्पर्य का अभाव है।

अनुशासन तकनीक के प्रयोग करने के दो आवश्यक कारण प्रतीत होते हैं। एक व्यक्ति या समूह की रक्षा के लिये। दूसरा जिससे शिक्षा में सुगमता हो। प्रथम विशेषत: बालकों के लिये प्रयोग करना पड़ता है। बड़ों के लिये भी कभी कभी यह आवश्यक हो जाता है। दूसरा जिससे शिक्षा में सुगमता हो, सतह पर भ्रमपूर्ण प्रतीत होता है। शिक्षा में सफल होने के लिये उसका बालक के जीवन में वास्तविक प्रेरणा के रूप में आना आवश्यक है अन्यथा वहां बहिष्कार करने की प्रेरणा होगी तथा सुगमता के अन्त होने पर उस शिक्षा का भी अन्त हो जायेगा। शिक्षा या सीखने में यह आवश्यक है कि दोषी प्रतिक्रिया के द्वारा असंतोष तथा उचित प्रतिक्रिया के द्वारा संतोष प्राप्त हो। बालक के अनुशासन में उसकी रक्षा के लिये दृढ़ता होनी चाहिये तथा सुगमता में दण्ड की आवश्यकता हो सकती है। यह दण्ड या असंतोष उचित व्यवहार के आदेश के साथ होना चाहिये।

बाधक व्यवहार Disturbing Behaviour

मनोवैज्ञानिक Horney का कहना है कि हमारा सम्पूर्ण व्यवहार दूसरों के सम्बन्ध में होता है। यह या तो लोगों की दिशा में, लोगों से दूर होगा या फिर लोगों के विरुद्ध होता है। All our behaviour in relations to others is either moving toward people, moving away from people or moving against people.

कुछ व्यवहार के नमूने से केवल शिक्षक को बाधा पहुंचेगी तथा कक्षा या करने वाले पर उसका कोई प्रभाव नहीं होगा। ये व्यवहार की विभिन्नता के कारण होता है। अनेक बार बालक एवं बालिकायें अपनी क्रियाओं से अपने को बाधा पहुंचाती हैं। इसके द्वारा शिक्षक या कक्षा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जैसे कोई कौशल के सीखने में गलती करे। अनेक बालक निम्न प्रकार की बाधा के होते हुए भी कक्षा को बाधा नहीं पहुंचाते क्योंकि उनमें संवेगात्मक स्थिरता है। दूसरे चिड़चिड़े हो सकते हैं, बिना कारण रो सकते हैं। कुछ व्यवहार ऐसे होते हैं जिनसे शिक्षक को बाधा हो किन्तु उन पर ध्यान नहीं पड़ता। ऐसा व्यवहार बालकों द्वारा उन परिस्थितियों में प्रयोग किया जाता है जहां वे उस अवस्था से हटना चाहते हैं जिसमें उनकी इच्छा नही या उसका वे सामना नहीं कर सकते। कुछ विद्यार्थी उस दशा से हटते हुए जिसका सामना

वे नहीं कर सकते, अनैतिक व्यवहार करते हैं। वे बालकों की तरह क्रिया करते हैं। दूसरे को दोषी ठहराते, सहानुभूति की आशा करते, अपने पर तरस खाते एवं क्षमा करते हैं क्रोधित होते एवं संवेगात्मक क्रिया प्रदर्शित करते हैं। आक्रमण करने वाले व्यवहार से अधिक बाधा होती है। इससे कक्षा एवं शिक्षक दोनों को बाधा होती है। कठिन प्रकृति के अनुशासन समस्या के आधारभूत कारणों की जांच करनी चाहिये। प्रदर्शित व्यवहार की नहीं किन्तु कारणों का निवारण होना आवश्यक है। बदला लेने या अधिकार दिखाने की भावना से व्यवहार के लिये दण्ड देना उचित नहीं तथा उससे कोई लाभ नहीं। इस प्रकार के दण्ड की आधुनिक प्रणाली में मान्यता भी नहीं है। व्यवहार के लिये परिणाम के अनुसार फल प्राप्त करने की दूसरी रीति दण्ड देने की है। चिकित्सा प्रणाली के द्वारा व्यवहार की समस्याओं का निवारण अति उत्तम है जिसके अन्तर्गत आधारभूत कारणों की जांच एवं निवारण के उपाय किये जाते हैं। व्यक्ति का व्यवहार उसकी आवश्यकताओं एवं उसके प्राप्त होने की रीति प्रदर्शित करती है। इसमें किसी प्रकार का संदेह नहीं कि बालक उसी प्रकार का व्यवहार करते हैं जिस प्रकार का व्यवहार शिक्षक या लीडर चाहते हैं।

कार्यवाही करने में विद्यार्थी की भलाई होनी चाहिये तथा कक्षा का सम्मान भी रखना चाहिये। व्यवहार को व्यक्तिगत अपमान नहीं समझना चाहिये किन्तु उसे वाह्य रूप देना चाहिये इससे कक्षा को यह विदित होगा कि शिक्षक विद्यार्थी से प्रभावित, भयभीत या क्रोधित नहीं है। धीमी आवाज, सम्मान, दृढ़ता के साथ क्रिया करने का अर्थ, समस्या से दूर नहीं जाना, किन्तु आत्मनिर्भरता, परिपक्वता का चिह्न है। शिक्षक का विद्यार्थियों के प्रति भावना का अत्यन्त अधिक असर होता है। बालकों में विश्वास होना, उनके प्रति प्रेम, तथा उनसे उच्च व्यवहार की आशा, उनके आत्म अनुशासन के अर्जित करने में अत्यन्त सहायक होगा। जो शिक्षक बालकों की इस धारणा से कार्य करते हैं कि उसके विद्यार्थी ध्यान देंगे, सम्मान एवं समन्वय प्रदान करेंगे एवं मित्रभाव प्रदर्शित करेंगें वे उनसे कहीं अधिक सफलता प्राप्त करेंगे जिन्हें इनकी आशा नहीं।

बाधा का प्रतिरोध (Preventing problem behaviour) सर्वप्रथम मुख्य एवं सम्भावित बाधा देने वाले को पहचानना। साथ ही उन्हें भी

पहचानना जिन्होंने परिपक्वता प्राप्त नहीं की है तथा संवेगात्मक रीति से अस्थिर हैं।

अतिरिक्त शक्ति के द्वारा होने वाली बाधाओं को समाप्त कर देना चाहिये। उत्तम कक्षा संगठन से व्यवहार की समस्याओं की कम सम्भावना है स्कूल अनुशासन वह पद्धति समझनी चाहिये जिससे बालकों की सहायता हो सके। बालकों का व्यवहार प्रजातान्त्रिक भावनाओं के अनुकूल विकसित करना चाहिये। निम्नश्रेणी की गतिवाही योग्यता, निर्बलता, ग्रंथियों की उचित क्रिया का न होना तथा अन्य असाधारण स्वास्थ्य समस्यायों के कारण भी अनुशासन की समस्या उपस्थित हो सकती है। इनकी चिकित्सा आवश्यक है।

———

१२

परीक्षा एवं माप प्रकार तथा तकनीक

मूल्यांकन (Evaluation) एवं माप (Measurement) शिक्षा, शारीरिक शिक्षा तथा शिक्षा के अन्य क्षेत्रों को अनेक लाभ प्रदान करती है। इन्हीं के कारण शिक्षा व्यवसाय की वर्तमान उन्नति हो सकी है। मूल्यांकन एवं माप किसी विशेष तात्पर्य के लिये होना चाहिये। ऐसे तथ्यों का इकट्ठा करना जिनका कभी भी प्रयोग नही होगा शक्ति ऐवं समय की बरबादी है।

Measurement of any sort is good only if it helps the individual discover things which may aid him in becoming a more efficient teacher and thus provide better for needs of children under his direction. —Nixon & Cozen.

माप की पद्धति को प्रोत्साहित किया जाता है इसलिये नहीं कि जादू की लकड़ी की तरह जो कुछ विद्यार्थियों के विषय में जानना है उसकी माप हो जाये किन्तु बालकों की सीमित सफलता के अध्ययन हेतु सहायक सामग्री की तरह हो। परीक्षा के परिणाम के विश्लेषण से कितनी ही बार शिक्षक की योग्यता बढ़ाने की सम्भावना रहती है। यह शिक्षक के आत्म, मूल्यांकन में अत्यन्त ही उपयोगी सिद्ध होगा।

मूल्यांकन एवं माप के अर्थ में कुछ भिन्नता है। मूल्यांकन एक विस्तृत शब्द है। यह वह प्रणाली है जिसके द्वारा शिक्षा ध्येय के अर्जित करने की सफलता की आलोचना की जाती है "Evaluation is the process of appraising the effectiveness of the attainment of educational goals." यह एक पद्धति है तथा इसमें अनेक विभिन्नताएँ हैं।

यह एक निरन्तर करने की प्रणाली भी हो सकती है या समय-समय पर की जाती है। माप के द्वारा स्थिति का पता चलता है। मूल्यांकन प्रणाली उस स्थिति के शैक्षणिक महत्व की आलोचना करती है।

मांप स्तर मान्यता प्राप्त परीक्षाओं का प्रयोग, सफलता की नाप, क्रमानुसार करने की नाप, स्कोर कार्ड तथा दूसरे मांप करने के साधन प्रयोग करता है। इनके प्रयोग से समय, दूरी, गिनती, तौल या गुण के चिन्ह में परिणाम अंकित किये जा सकते हैं। गुणात्मक मूल्यांकन प्रणाली में मांप के विपरीत जिसकी परिभाषा परिमाण मूल्याकन प्रणाली बतायी गयी है; सरल निरीक्षण क्रमानुसार करना, प्रतिदिन का कार्यक्रम अंकित करना, परीक्षार्थी का इतिहास, व्यक्तिगत रिकार्ड, आत्मालोचन, चेकलिस्ट तथा अन्य पद्धतियां जिनके द्वारा आन्तरिक निर्णय किया जाता या निरीक्षण अंकित किया जाता है, आते हैं। माप के द्वारा बाह्य, विधिपूर्वक सूचना उन गुणों के प्रति जिनका विश्लेषण सम्भव है प्राप्त होता है। अन्य मूल्यांकन की पद्धतियों का ध्येय मनुष्य के व्यवहार पक्ष के प्रति सूचना देना या सामाजिक संगठन के प्रति सूचना देना है जिनका सरलता से वाह्य विश्लेषण सम्भव नहीं।

आधुनिक रिसर्च से यह पता चला है कि बालकों को अच्छी रीति से समझने के लिये तथा युवकों एवं प्रौढ़ों के प्रति पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिये न केवल सही मांप, जो परीक्षा कार्यक्रम से प्राप्त होता है उसकी सहायता आवश्यक है वरन यह भी जानना अति आवश्यक है कि व्यक्ति कैसे बढ़ता है जिनका निरीक्षण चरित्र विकास, कार्य में रुचि, भाग लेने के प्रति भावना तथा दूसरों के प्रति व्यवहार में प्रदर्शित होता है। मूल्यांकन पद्धति के परिणाम के द्वारा शिक्षक अपनी योग्यता बढ़ा सकता है तथा शैक्षणिक कार्यक्रम में वर्गीकरण के द्वारा, दोष का जानना तथा निवारण के लिये आदेश, प्रेरणा, विद्यार्थियों की प्रगति की आलोचना तथा शिक्षा पद्धति के द्वारा उन्नति कर सकता है।

प्रत्येक विद्यार्थी की आवश्यकताओं को पूर्णरूप से पूरा करने के लिये तथा उत्तम शिक्षा प्रदान करने के लिए यह आवश्यक है कि ऐसी तकनीक प्राप्त हो जिससे बालक की विशेषता एवं उसके विकास की सम्भावना निर्धारित की जा सके। इसके लिये बहुमूल्य प्रणालियां आयोजित हैं। इनके किसी एक

के प्रयोग से बालक के प्रति इतनी सूचना प्राप्त नहीं हो सकती जिस पर बालक का कार्यक्रम आधारित किया जाये। यह सम्भव है कि अनेक पद्धतियों के प्रयोग से उपयुक्त सूचना प्राप्त की जा सके जिसके द्वारा संगठन एवं संचालन-कर्त्ता तथा शिक्षक, शिक्षा एवं शारीरिक शिक्षा का कार्यक्रम प्रचलित कर सकें जो प्रत्येक बालक की स्थिति के अनुकूल समायोजित होगा।

शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम के लिये ब्रेस के द्वारा निम्नलिखित परीक्षायें दी गयी हैं।

1. Intelligence tests, 2. Anthropometric tests, 3. Health tests, 4. Physical fitness tests, 5. Physical capacity tests inclding strength and efficiency tests, 6. Sensory capacity tests, 7. Motor ability tests to measure native motor ability as distinguished from degree of learning or achievment, 8. Achievement tests, 9. Practice tests, 10. Knowledge tests, and 11. Attitude tests.

यह पूर्णतया समझ लेना आवश्यक है कि प्रत्येक वर्ग की परीक्षायें केवल एक प्रकार की योग्यता का माप करती हैं। केवल एक या दो परीक्षायें बालकों के लिये हितकर सिद्ध नहीं होगी क्योंकि इनके द्वारा बालक के विषय में पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना असम्भव है। परीक्षा, वही लाभकर है जो कुछ अंश में सही रीति से उस माप को करे, जिसके लिये वह निर्धारित है। प्रत्येक परीक्षा का प्रयोग उसी रीति से करना चाहिये जिस उपयोग के लिये वह निर्मित की गयी हो। यह आवश्यक है कि सभी विद्यार्थियों को अनेक परीक्षायें दी जायें जिनमें प्रत्येक भिन्न-भिन्न योग्यता का माप करती है। इसके द्वारा शिक्षक अपने विद्यार्थियों की शक्ति एवं निर्बलता का ज्ञान प्राप्त कर सकता है।

कोई माप या मूल्यांकन का यन्त्र अभी तक इस प्रकार का नहीं है जिस के द्वारा व्यक्ति के पूर्ण व्यक्तित्व के तथ्यों का माप हो सके। बालकों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं के निर्धारित करने के लिये अनेक विशेष पद्धतियों में परीक्षा एवं निरीक्षण ऐसे हैं जो विद्यालयों में सरलता एवं कम समय में किये जा सकते हैं। इस नियोजन में Intelligence tests, Medical examination, Posture tests, Anthropometric and Physical capacity tests, Physical

fetures fitness tests, Motor ability tests, Achievement tests, Rhythmic tests, and knowledge tests हैं।

बुद्धि माप (Intelligence Tests)

विद्यालय के प्रत्येक बालक को यह परीक्षा देनी चाहिये। इसका प्रयोग शारीरिक शिक्षक को करना आवश्यक है। इसके लिये Stanford Binet परीक्षा एक उत्तम परीक्षा है। इसे दूसरे तथ्यों के साथ जो बालक के विषय में उपलब्ध हैं प्रयोग करना चाहिये।

चिकित्सात्मक परीक्षा (Medical Examination)

प्रत्येक बालक की सम्पूर्ण एवं ध्यानपूर्वक चिकित्सात्मक परीक्षा होनी अति आवश्यक है। यह परीक्षा कम से कम वार्षिक होनी चाहिये। वर्त्तमान परीक्षा की तुलना पिछली परीक्षा से अवश्य होनी चाहिये। यदि कोई परिवर्तन प्रदर्शित है तो यह परिवर्तन वर्त्तमान दशा से अधिक महत्व रखता है।

चिकित्सात्मक परीक्षा का अनुवाद स्कूल कार्यक्रम तथा शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम के सम्बन्ध में करना चाहिये।

चिकित्सात्मक परीक्षा में, ग्रंथियों, नाक, गला, फेफड़े, हृदय, पेट, दांत, आंख, कान, पेशाब की जाँच, रक्त कोष परीक्षा, Tuberculin Test तपेदिक के लिये, संक्रामक रोग की सम्भावना एवं गुप्त रोग, डील डौल एवं आसन, संतुलित भोजन की स्थिति, शरीर की मांस पेशियां एवं शरीर क्रिया, त्वचा, बनावट, अंगों का उचित अनुपात में होना, नाप तथा विभिन्न अंगों के रूप की परीक्षा करना आवश्यक है।

आसन एवं डील डौल की परीक्षा (The Posture Examination)

आसन एवं डील डौल शारीरिक शिक्षा में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। यह यदि Orthopedic Surgeon के सहयोग में किया जाये तो अति उत्तम होगा। जहाँ यह सम्भव नहीं वहां शारीरिक शिक्षक स्वयं इस परीक्षा को कर सकते हैं। किसी प्रकार की सलाह एवं आदेश के पहले विशेषज्ञों से परामर्श आवश्यक है। अच्छे आसन का मूल्य सौन्दर्य सम्बन्धित, सामाजिक, आर्थिक

तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी है। आसन एवं डील डौल के द्वारा व्यक्तित्व प्रदर्शित होता है। अच्छे आसन एवं डील डौल के द्वारा व्यक्ति अपना रूप तथा युवावस्था का लचीलापन अधिक समय तक रख सकता है। सीधे आसन के कारण यह अधिक सम्भव है कि व्यक्ति के जीवन में एक स्वस्थकर दृष्टिकोण हो, अपने साथियों का सम्मान प्राप्त हो तथा समाज का सुयोग्य सदस्य हो। शरीर की अच्छी बनावट उत्तम अंगों की क्रिया के लिये आवश्यक है। कितने लेखकों का विचार है कि सीधा आसन (Erect Posture) मनुष्य के वास्तविक विकास का बाधक है। उनका विचार है, कि यह सीधे खड़े होने की अवस्था के साथ, शरीर के आन्तरिक अंगों का उचित समायोजन नहीं हो सकाहै। इसी असमायोजन के कारण शरीर के अनेक दोष उपस्थित हैं। उचित आसन के लिये कोई विशेष आदेश नहीं दिया जा सकता क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति भिन्न है। तथापि कई एक आवश्यकतायें हैं जो सबके लिये समान मानी जा सकती हैं। शरीर के विभाग इस तरह संतुलित किये जायें कि शरीर का सीधा आसन रखने में मांस पेशियों की, कम से कम शक्ति प्रयोग हो। यह भी आवश्यक है कि पैर जो शरीर का आधार है उसी की सीध में उसके वजन के नीचे हो।

शरीर का उत्तम संतुलन उस समय प्राप्त होता है जब शरीर के भाग निम्नलिखित प्रकार हों।

(१) सिर ढोढ़ी के साथ अन्दर की ओर जिनका संतुलन कंधे पुट्ठों एवं घुटनों पर हो।

(२) सिर के साथ वक्षस्थल (Thorax) का रखना, जैसे नं० १ में। पसलियों का कोण, पेट के अन्दर करने से बड़ा करना तथा इस स्थिति में स्थित करना जिससे वक्षोस्थि (Sternum) आगे शरीर में उस अंग का भाग हो जो सब से आगे है।

(३) निचला पेढ का हिस्सा अन्दर तथा चपटा रखना।

(४) शरीर के नीचे के अंग सिर तथा धड़ के इस सीध में हो कि जाँघ की हड्डियों का निचला भाग तथा जघांस्थि (Tibia) का ऊपरी हिस्सा आपस में एक दूसरे का इस प्रकार विरोध करें जिससे शरीर के वजन का सहारा मांस पेशियों की कम से कम शक्ति प्रयोग के द्वारा हो सके।

शरीर की अच्छी रचना उस समय तक सम्भव नहीं है जब तक नीचे के हिस्से की मांस पेशियों का संतुलन वज़न उठाने वाली सिधाई के सहायक न हो, जो पैरों के सन्धि यन्त्र की रक्षा करेगा।

दोष पूर्ण आसन के साधारण प्रकार, गोल कंधे (Kyphosis) रीढ़ की हड्डी का अन्दर घुसना (Lordosis), रीढ़ की हड्डी का बगल से अन्दर मुड़ना (Scoliosis) तथा चपटा पैर (flat feet) पेट का आगे बढ़ना (Visceroptosis) है।

Bancroft triple posture test के द्वारा माह में एकबार आसन की परीक्षा होती है जब वह (१) खड़ा हो (Standing test) (२) जब मार्च कर रहा हो (Marching test) तथा जब वह व्यायाम कर रहा हो (Exercise test)

Cramption test के द्वारा पीठ दीवार पर सटाकर (Back wall test) तथा पेट दीवार से सटाकर (Front wall test) के द्वारा आसन की परीक्षा होती है।

आन्थ्रोपोमेट्रिक तथा शारीरिक योग्यता परीक्षा

इस परीक्षा के द्वारा यह बताया जाता है कि व्यक्ति का शरीर पूर्ण सुडौल शरीर से कितना भिन्न है। इस परीक्षा से शरीर की योग्यता, दशा या शक्ति का कोई विशेष ज्ञान नहीं होता। शरीर की मांसपेशियों के बड़े होने की तुलना में मांसपेशियों की शक्ति पर विशेष बल दिया जाता है। निपुण शारीरिक क्रिया में मांसपेशियों की शक्ति का अधिक महत्वपूर्ण स्थान है। मांसपेशियों की शक्ति से शारीरिक शक्ति का अनुमान किया जा सकता है।

Roger's strength index परीक्षा के द्वारा एथेलेटिक योग्यता देखने के लिये परीक्षा के ६ आइटम हैं जो १२ मिनट में समाप्त किये जा सकते हैं। अंकों के टोटल के द्वारा 'strength index' निकाला जाता है।

एथलेटिक्स शक्ति के लिये परीक्षा

Mc cloy के द्वारा बालकों का वर्गीकरण उँचाई, वजन तथा आयु के

अनुसार करने के द्वारा होता है। उनका कहना है कि इन्हीं तीन के द्वारा पूर्ण एथेलेटिक निपुणता का ज्ञान नहीं हो सकता। उन्होंने सात और शारीरिक क्रिया, मानसिक एवं चरित्र के तथ्य बताये जिनके द्वारा एथेलेटिक योग्यता की निपुणता प्राप्त होती है। आयु, उँचाई एवं वजन एथेलेटिक योग्यता के जानने के लिये तीन सर्व प्रमुख तथ्य हैं। उनके तीन वर्गीकरण हैं।

(१) २० आयु + ६ उँचाई + वजन — सब आयु के लिये
(२) ६ आयु + वजन — १७ वर्ष के ऊपर की आयु
(३) १० आयु + वजन —१५ वर्ष के नीचे की आयु

समूह के अन्दर उच्चता या गिरावट के देखने के लिये चार आइटम जिसमें ऐक दौड़, एक ऊंची कूद, एक लम्बी कूद तथा एक फेंकना हो उसके द्वारा एथेलेटिक की योग्यता जानी जा सकती है।

सामान्य, एथेलेटिक योग्यता के जानने के लिये Cozens Test of General Atheletic Ability का प्रयोग किया जा सकता है। यह कालेज के स्तर के लिये है। इस परीक्षा में परललबार पर डिप, दूरी के लिये बेसबाल फेंकना, दूरी के लिये फुटबाल मारना, खड़े होकर कूदना, ४०० मीटर की दौड़, लम्बी डाइव, तथा छकाना है।

परीक्षा तथा माप के उद्देश्य

(१) व्यक्तिगत आवश्यकता के अनुसार कार्यक्रम बनाना तथा उनको जानना।

(२) व्यक्तिगत विकास का भिन्न भिन्न कार्यों में माप।
(३) शिक्षा का परिणाम नियुक्त करना।
(४) शिक्षा प्रणाली में सहायक होना।
(५) वर्त्तमान परिणाम के आधार पर भविष्य की रूप रेखा।
(६) एक साधारण स्तर की नियुक्ति।
(७) माप के अनुसार वर्गीकरण।
(८) रुचि तथा प्रेरणा उत्पन्न करना।
(९) आविष्कार के लिए सामग्री।

उत्तम परीक्षा तथा माप की विशेषता

कहा जा चुका है कि शारीरिक शिक्षा वैज्ञानिक आधार पर निर्भर है तथा व्यवहारिक विज्ञान होने के कारण परीक्षा तथा माप सम्भव है। इस लिए इनकी विशेषता वैज्ञानिक ही होगी।

(१) परीक्षा तथा माप व्यवस्था अनुकूल हो :—

जो वस्तु व्यवस्थित हो उसी की परीक्षा तथा माप हो। इसकी जांच इसके परिणाम के द्वारा जो दूसरी जगह व्यवहार में आयेगी सही या गलत समझा जायेगा।

(२) विश्वास योग्य हो :—

परीक्षा तथा माप ऐसे हों जो एक दी हुई अवस्था में सदैव ठीक आयें। विश्वास योग्य होने पर ही उस पर निर्भर किया जा सकता है। ऐसी अवस्था में ही वह किसी आधार का कार्य कर सकेगा।

(३) उसका परिणाम देखा जा सके तथा उसके प्रमाण हों।
(४) सरल हो।
(५) प्रयोग के द्वारा एक स्तर नियुक्त हो जो नियम का आधार हो।

शारीरिक शिक्षा परीक्षा तथा माप के तत्व :—

शक्ति, वेग, लचीलापन, सहने की शक्ति, सामतुल्य, शोभायुक्त सम्पादन।

अभी तक भारतवर्ष में इस विषय में प्रगति नहीं हुई है और न कोई ऐसा शारीरिक परीक्षण या माप है जो सम्पूर्ण भारतवर्ष के लिऐ एक सा हो, कहीं कहीं पर इस विषय में कुछ काम हुआ है। शारीरिक क्षमता अभियान जो केन्द्रीय सरकार की ओर से चलाया गया है केवल एक ऐसी परीक्षा है जो समस्त भारतवर्ष के लिए एक है। किसी विशेष स्थान के लिए वहाँ की जलवायु या भौगोलिक स्थिति तथा लोक रीति तथा संस्कृति के आधार पर परीक्षा के तत्वों की सहायता से शारीरिक परीक्षा तथा माप की जा सकती है।

क्रिश्चियन कालेज आफ फिजीकल एज्युकेशन में शारीरिक परीक्षण तथा माप के लिए निम्नलिखित आइटम हैं।

एजीलिटि रन (Agility run)
वर्टिकल जम्प (Vertical Jump)
पुश अप (Push up)
चिनिंग (Chinning)
कर्ल्स (Curls)

एथेलेटिक्स के पाँच आइटम (Pentathlon) तथा दस आइटम (Decathlon) भी परीक्षा के रूप में किये जा सकते हैं।

एक अच्छे स्तर की शारीरिक परीक्षा तथा माप में निम्नलिखित पर ध्यान देना आवश्यक है :—

(१) दौड़ना, कूदना, चढ़ना तथा फेंकना ये प्राकृतिक कार्य परीक्षा में होने आवश्यक है।

(२) तेज गति, लचीलापन, शक्ति तथा सहने की शक्ति में परीक्षा।

(३) औसत योग्यता को मालूम करना जिससे परीक्षा न बहुत कठिन न बहुत आसान हो जाये। परीक्षा ऐसी होना चाहिये जो व्यक्ति के शारीरिक गुणों को आजमाने के लिये ललकारे तथा यह एक यथाविधि व्यायाम करने की आदत डालने में सहायक हो।

(४) परीक्षा में भाग लेने वालों को इसका पर्याप्त पूर्व ज्ञान हो जिससे वे अपनी तैयारी कर सकें।

(५) माप में सफलता या असफलता बतायी जा सकती हैं या किसी तालिका के अनुसार कार्य के लिये अंक दिये जा सकते हैं जिसके अनुसार वर्ग निर्धारित किया जायेगा।

परीक्षा में चुनाव की कसौटी :—(Criteria for Selection)

(१) ध्येय जिसके लिये परीक्षा की आवश्यकता है।
(२) परीक्षा की सामग्री का मूल्य एवं तात्पर्य।
(३) उसकी सत्यता।

(४) उसका बाह्य रूप।
(५) निर्भरता।
(६) आर्थिक एवं समय में मितव्ययता।
(७) संगठन एवं अंक के लेने देने में सरलता।
(८) स्थान तथा समूह की अनुकूलता।
(९) उसी के समान या उसी के बराबर अन्य परीक्षायें।
(१०) अनुवाद का आधार एवं सहायता।
(११) कितने दिन तक परिणाम सत्य रहेगा।
(१२) कितनी सरलता से परीक्षा के साधन प्रयोग किये जा सकते हैं।

वर्गीकरण (Classification)

अच्छी शिक्षा के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि एक योग्यता के बालक एक स्थान पर एक साथ सिखाये जायें। एक योग्यता के व्यक्तियों को एक साथ लाने को वर्गीकरण कहते हैं।

वर्गीकरण के लाभ

(१) व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।
(२) प्रतियोगिता अच्छी तथा विस्तृत होती है।
(३) व्यक्तिगत रुचि बनी रहती है।
(४) कार्य क्रम में आसानी होती है।

वर्गीकरण के लिये किसी एक तत्व को आधार बनाने में सफलता नहीं होगी।

बहुत सी प्रणालियां जो शिक्षा में अपनायी गई हैं उनकी नियमित व्यवस्था तथा यथाक्रम वर्णन किया जा सकता है उनको तथा यन्त्र सम यथार्थता दी जा सकती है। वर्गीकरण के लिये मान्य परीक्षा तथा उन्नति की माप के लिये परीक्षा ने इनका उपयोग सही परिणाम के अंकित करने के द्वारा बढ़ा दिया हैं। सम्भव है कि इस मांप में इस प्रकार लीन हो जायें कि अवस्था की आरम्भिक तत्व की ओर पूर्ण रूप से ध्यान न दिया जाये। इस व्यक्तिगत कार्यों के करने तथा मांप में उसकी सामाजिक महत्ता भुला देने की सम्भावना है। किसी मान्य स्तर की प्राप्ति द्वारा यह सम्भव है, कि शिक्षा की योग्यता का

स्तर जो आदेश पर निर्धारित है, लुप्त हो जाये। मांप जो आकड़ों में अंकित है तथा जो देखे जा सकते हैं वे उन अनदेखी चीजों के महत्व को कम कर देती है जो वास्तविक होती हैं।

बालकों के प्रत्येक प्रकार के विकास महत्वपूर्ण हैं तथा शिक्षक उनकी उन्नति आदतों के अर्जित करने में, रूचि के विकास में, भावनाओं के परिवर्तन में तथा उस प्रगति में जो देखी जा सकती हैं कर सकते हैं। इसका अर्थ है कि वैसा माप प्रयोग में लाया जाये कि बाह्य वस्तुओं का मूल्यांकन करते हुये आन्तरिक विशेषताओं एवं चरित्र का भी मूल्यांकन, विशेषज्ञों के द्वारा किय जाये, जिससे ये व्यक्ति के विकास में सहायक हों। परीक्षा अपने आप में अन्त नहीं, वे केवल माध्यम हैं जिसके द्वारा बालकों के शिक्षा कार्य में उन्नति की जा सकती है। परीक्षा तथा उसके मांप में महत्वपूर्ण प्राप्ति हो सकती है किन्तु सर्वप्रमुख प्रश्न यह उठता है कि व्यक्ति का इस परीक्षा तथा मांप के बाद क्या होगा ?

परीक्षा के द्वारा कार्य में व्यक्तिगत रूचि की उन्नति योग्यता के विकास तथा सही साधनों के चुनाव के द्वारा शिक्षा की वैज्ञानिक प्रणाली पर बल दिया जाता है। क्रियावाही कौशल में व्यक्तिगत सफलता स्तर की प्राप्ति के विषय में बहुत कुछ जानना है तथा उस कार्यक्रम को भी जो न केवल संतोष जनक बढ़ाव उत्पन्न करेगा किन्तु अत्यन्त संतोषजनक व्यक्तिगत अनुभव तथा उच्चतम स्वीकृत सामाजिक परिणाम प्रदान करेगा।

(इसके साथ रेकार्ड एवं रजिस्टर के अध्याय में परीक्षा देखिये)

व्यक्तिगत मांप एवं परीक्षण में आंकड़े स्थापित होते है। कुछ विशेष आंकड़ो की शब्दावली इस प्रकार हैं।

1. The frequency distribution curve.

मान लिया कि किसी बड़े ग्रुप को एक मनोवैज्ञानिक परीक्षा दी जाती है। परीक्षा के द्वारा यह जानने की चेष्टा होगी कि अंकों का बटवारा किस प्रकार हुआ। सर्व प्रथम हम अंकों को एक प्रकार से सजाते हैं जिसे Frequency distribution) कहते हैं। उदाहरण के लिये कालेज के १०० छात्रों के द्वारा परीक्षा में निम्नलिखित अंक प्राप्त हुये

४ ५ ५ ५ ४ ६ ६ ५ ७ ६ ५ ५ ५ ७ ६ ५ ४ ५ ४ ५
६ ५ ६ ३ ७ ६ ७ ६ ६ ८ ७ ६ ७ ६ ७ ७ ६ ६ ६ ६
७ ८ ६ ७ ५ ५ ७ ६ ६ ५ ६ ७ ६ ६ ७ ५ ६ ७ ६ ४
८ ६ ६ ५ ७ ६ ५ ७ ७ ८ ५ ६ ५ ६ ५ ७ ७ ६ ६ ७
७ ६ ७ ७ ६ ६ ६ ५ ४ ६ ५ ६ ५ ५ ५ ५ ७ ६ ९ ५

इन अंकों में सब से कम ३ तथा सब से अधिक ९ हैं। ये तथा इन के बीच के अंक ऊपर से नीचे सजाये जाते हैं

अंक	बार
३	१
४	६
५	२८
६	३६
७	२४
८	४
९	१
	१००

प्रत्येक अंक के बार बार आने का नम्बर प्राप्त करने पर बटवारा ग्राफ के द्वारा समझाया जा सकता है। ग्राफ a **Frequency polygon, a histogram** या a bar **diagram** के रूप में हो सकता है। प्राप्त अंक नीचे से ऊपर (**Ordinate**) तथा जितनी बार एक अंक प्राप्त किया गया है उसको नीचे बायें से दाहिने (**Abscissa**) सजाया जाता है

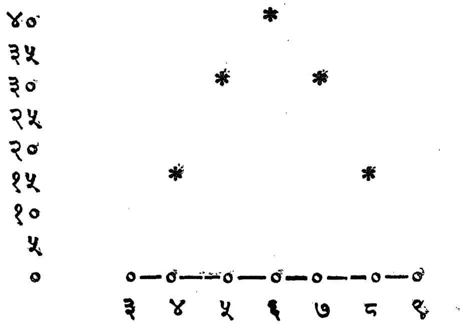

Frequency Polygon

क्योंकि परीक्षार्थी १०० हैं, Ordinate के द्वारा, व्यक्ति जो भाग ले रहे हैं, इनके प्रत्येक प्राप्त अंक की गिनती एवं प्रतिशत आंकड़ा मालूम किया जा सकता है। कभी कभी Frequency distribution परीक्षार्थी की गिनती जो प्रत्येक अंक प्राप्त कर रहे हैं तथा कभी कभी परीक्षार्थी का प्रतिशत आकड़ा उनका, जो प्रत्येक अंक प्राप्त कर रहे हैं निकाला जाता है।

जब दोनों सिरों की गिनती में अधिक अंकों का अन्तर होता है तो उनके समूह Class interval में करने की आवश्यकता हो जाती है। इस प्रकार Abscissa पर के प्रत्येक अंक किसी विशेष गिनती सम्बोधित नहीं करते किन्तु गिनती का एक समूह दर्शाते हैं।

यदि परीक्षार्थियों की गिनती बहुत बड़ी है तो Frequency Polygon Normal Proability curve का रूप ले लेता है। इस प्रकार के curve अनेक तथ्यों के द्वारा निर्धारित होते हैं जिन्हें Chance Factors कहा जाता है।

यह एक विशेष ध्यान देने का विषय है कि जब बहुत अधिक व्यक्तियों की परीक्षा होती है तो अधिकतर मनोवैज्ञानिक मांप तथा जीव वैज्ञानिक तथ्य जैसे ऊंचाई तथा वजन प्रायः Normal Probability curve के अनुसार वितरित होते हैं

क्योंकि इसमें गणित की विशेषतायें हैं इसलिये Normal Probability curve तुलना करने का एक अच्छा उपाय है। जब भी कोई मांप का वितरण इस के बहुत समान होता है तो इसकी विशेषता पर निर्धारित किसी आंकड़े के उपाय को प्रयोग करने में हानि नहीं। Frequency distribution curves के निकालने में इस तथ्य का ज्ञान होता है कि परिणाम संभावना (Probability) के कितने समीप है इस के अतिरिक्त और भी अन्य उपयोगितायें हैं।

यदि किसी दिये गये अंक को व्यक्ति जो प्राप्त कर रहे हैं वितरण के एक सिरे पर दूसरे सिरे से अधिक हैं तो Skewness की मात्रा प्रतीत होती है। यदि curve बीच में झुका हुआ (Bimodal) है तो इस से यह ज्ञात होता है कि जिन व्यक्तियों की परीक्षा हुयी वे दो विभागों में बंटे हैं, Dominant

या Submissive यदि झुकाव अनेक हैं तो अनेक प्रकार के Multimodel व्यक्ति प्रदर्शित है। यदि दो भिन्न समूहों की परीक्षा हुयी है जैसे पुरुष एवं स्त्री, दो जाति, बालक एवं प्रौढ़ तथा प्रत्येक के लिये वितरण कर्व Distribution curve निकाला जा रहा है तो एक दूसरे के बीच की निकटतम समानता का पता चलता है। Skewed, Bimodal तथा Multimodal वितरण मनोवैज्ञानिक जांच में बहुत कम दिखायी देते हैं।

मध्य प्रवृति का माप (Measures of Central Tendency)

किसी एक विषय या भिन्न भिन्न विषयों पर मांप का झुकाव मालूम करने में तथा भिन्न भिन्न समूहों के क्रिया या एकही समूह की भिन्न भिन्न समय पर क्रिया की तुलना के लिये एक ऐसा मांप प्राप्त करने की आवश्यकता है जिस से वास्तविक क्रिया का पता चल जाये। मध्य प्रवृति के माप का यही तात्पर्य है।

The Mode, इस गिनती से बार बार होना प्रदर्शित होता है। यह सीधे frequency distributions के निरीक्षण से प्राप्त हो सकता है। चित्र में व्यक्तियों के अंकित अंकों में ६ सब से अधिक है तो यह mode है।

The Median, सब से बीच के अंक को median कहते हैं।

The Mean, इस से औसत का पता चलता है। यह मध्य प्रवृति का सबसे अधिक प्रयोग किया जाने वाला मांप है। यह सम्पूर्ण अंकों का योग उनकी गिनती से विभाजित करने के पश्चात प्राप्त होता है। चित्र के अंकों का योग ५९२ है तथा परिक्षार्थियों की गिनती १०० है। ५९२ को १०० से विभाजित करने पर औसत mean ५.९२ प्राप्त होगा।

सम्पूर्ण सामान्य वितरण में mode तथा mean एक दूसरे के समान ही होते है। ये तीन मध्य प्रवृति के मांप यद्यपि मूल्य में परस्पर बहुत ही समीप होते हैं तथापि आपस में कदाचित ही बदले जा सकते हैं। वितरण की प्रकृति से यह आदेशित होता है कि कौन सा माप तुलना के तात्पर्य के लिये उपयुक्त होगा। जब वितरण विशेषता Skewed होता है तब mean से उत्तम मध्य प्रवृति का प्रदर्शन mode एवं median से होता है। यह इस कारण

होता है कि mode तथा median सिरे के अंक के अधिकता से प्रभावित नहीं होते। mean सिरे के अंक के आधिक्य से अधिक प्रभावित हो सकता है।

विभिन्नता (Variabilty) के लिये सब से अधिक मांप जो प्रयोग किया जाता है उसमें mean के मालूम करने की आवश्यकता होती है। परस्पर सम्बन्ध (Corelation) के माप में भी mean की आवश्यकता होती है।

शारीरिक निपुणता परीक्षा (Physical efficiency tests)

मानव इतिहास के आरम्भ से ही शारीरिक निपुणता एक महत्व-पूर्ण विषय रहा है। प्राचीन मनुष्य अपनी व्यक्तिगत शारीरिक शक्ति एवं जीवशक्ति के ऊपर शारीरिक जीवन के लिये जिसके द्वारा आधारभूत कौशल जैसे लचीलापन, संतुलन, दौड़ना, चढ़ना तथा अन्य कौशल प्राप्त थे, निर्भर था। संसार के इतिहास में उस समय का पता चलाना कठिन नहीं जब से शैक्षणिक कार्यक्रम में शारीरिक निपुणता के महत्व पर बल दिया गया। अधिकतर विचार यही है कि शारीरिक निपुणता की परीक्षा एवं परिभाषा उसे सम्पूर्ण निपुणता का एक भाग समझ कर ही करना चाहिये। निपुणता के प्रति सम्पूर्णता के विचार में अनेक भाग हैं जिसके अन्तर्गत मानसिक, संवेगात्मक, सामाजिक एवं शरीर क्रियात्मक विषय आते हैं। सम्पूर्ण निपुणता की उन्नति के द्वारा जीवन अधिक अर्थपूर्ण हो जाता है।

'Physical efficiency or fitness refers to the organic capacity of the individual to perform the tasks of daily living without undue tiredness and fatigue and still have a reserve of strength and energy available to meet satisfactorily sudden emergency demands placed upon him !

शारीरिक निपुणता एक व्यक्तिगत विषय है। प्रश्न उठ सकता है कि शारीरिक निपुणता किस लिये ? इसका उत्तर प्रत्येक व्यक्ति को अपनी तरह देना है। यह उत्तर उसके सामान्य स्वास्थ्य स्थिति, उसके व्यवसाय, उसकी रुचि, आवश्यकता एवं योग्यताओं तथा अन्य तथ्यों के सम्बन्ध में देना होगा। कोई एक उत्तम निपुणता नहीं है जिसकी प्राप्ति के लिये सभी को चेष्टा करना है।

भिन्न-भिन्न परिभाषाओं में शारीरिक निपुणता के मांग की विभिन्न

गिनती है ये भाग तीन बड़े वर्ग में आते हैं। चिकित्सा या शारीरिक क्रिया (Medical or Physiological function,) मानव शरीर नाप की दशा (Anthropometrical condition) शारीरिक या गतिवाही क्रिया (physical or Motor function.)

चिकित्सा क्रिया में सात बड़े भाग है (१) स्नायु संस्थान (Function of the Nervous system) (२)हृदय की क्रिया, रक्त संचालन संस्थान तथा रक्त (function of the heart, circulatory system and blood) (३) पाचन क्रिया संस्थान (Function of the digestive system) (४) श्वांस क्रिया संस्थान (Function of the respiratory system) (५) मांस पेशियों की क्रिया (Function of the muscular system) (६) एन्डोक्रिन ग्रन्थि की क्रिया (Function of the endocrine system) तथा (७) सामान्य स्वास्थ्य (general health.)

Arthropometric दशा के सात मुख्य भाग किये गये (१) आसन एवं डीलडौल (Posture) (२) उंचाई-वज़न सम्बन्ध (Height & weight relationship) (३) लचीलापन (flexibility) (४) स्थूल वजन (dead weight,) (५) उंचाई या बनावट (Height & structure) (६) शरीर की बनावट (Body structure,) तथा (७) अस्थि-मास पेशिय-वसा सम्बन्ध (Bone-muscle fat relationship) ये पुनः तीन वर्गों में विभाजित किये गये (अ) शरीर विकास (ब) आसन तथा (स) लचीलापन। शारीरिक क्रिया के ४० भाग किये गये थे जिन्हें ६ मुख्य वर्गों के अन्तर्गत लाया गया (१) यथथिता या ठीक (Accuracy,) (२) लचीलापन (flexibility,) (३) संतुलन (Balance,) (४) शक्ति (Strength,) (५) सहनशक्ति (Endurance,) तथा (६) तीव्रता (speed.)

शारीरिक निपुणता, पूर्ण निपुणता का केवल एक भाग है। इसके दूसरे भाग हैं मानसिक, संवेगात्मक तथा सामाजिक निपुणता कोई भी मांग अपने में स्वतंत्र नहीं है। प्रत्येक परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। अध्ययन के द्वारा यह सिद्ध किया गया है कि मानसिक, संवेगात्मक तथा सामाजिक प्रभाव, शारीरिक बढ़ाव, ऐथेलेटिक्स, में, शारीरिक कृति एवं क्रिया उद्योग एवं अन्य क्रियाओं पर प्रभाव डालता है। इसी प्रकार यह भी प्रदर्शित है कि मानसिक

कार्य करने की योग्यता पर शारीरिक थकान, संवेगात्मक घबराहट तथा मनोवैज्ञानिक बाधाओं का पूर्ण प्रभाव पड़ता है। अतः यह निश्चित है कि किसी प्रकार की शारीरिक निपुणता के अध्ययन में मानसिक,संवेगात्मक तथा सामाजिक निपुणता का विचार करना आवश्यक है।

अनुसंधान से यह पता चला हैं कि शरीर की क्रिया विश्राम की हालत में तथा परिश्रम की अवस्था में भिन्न होती है तथा एक दूसरे में कोई सम्बन्ध नहीं है। हलके तथा कठिन कार्य में भी एक दूसरे का कोई सम्बन्ध नहीं है। दूसरे अनुसंधान से यह पता चला है कि प्रत्येक व्यक्ति में विभिन्न कारणों से कार्य के बड़े समूह के लिये किसी न किसी प्रकार की त्रुटि या अकुशलता अवश्य पायी जाती है। अतः इस बात पर सावधानी एवं ध्यान रखने की परम आवश्यकता है कि शारीरिक क्रिया ही केवल अपने आप में निपुणता की परीक्षा नहीं हो सकती है। अन्य अनुसंधानों से पता चलता है कि इस विषय में हमारा अध्ययन अन्य सम्बन्धित क्षेत्रों की ओर भी होना चाहिए, जैसे (i) क्रिया करने एवं व्यवहार में सम्बन्ध, (ii) मानव शारीरिक बनावट एवं शारीरिक आन्तरिक अंगों के आपस में विभिन्न निपुणता के तथ्यों के साथ सम्बन्ध (iii) विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण का प्रभाव (iv) अकस्मात आवश्यकता एवं प्रयोग के लिये शारीरिक शक्ति का आरक्षण।

शारीरिक निपुणता के लिये अनेक परीक्षाएं उपलब्ध हैं जिनका प्रयोग किया जा सकता है। यहां परीक्षा के तीन विभाग दिये जाते हैं। 1. Standard Achievement test. 2- Physical efficiency test, 3- Special tests for strength & stamina.

———

स्टैन्डर्ड अचीवमेन्ट टेस्ट्स

लड़कों के लिये

कार्य	कक्षा ५	कक्षा ६	कक्षा ७
५० मीटर दौड़	९ सेकंड	८.७ सेकंड	
उंची कूद	८.४ सेंटी २ फिट-९ इंच)	८९ सैंटी (२ फिट-११ इंच)	
लम्बी कूद	२.५९ मी (८ फिट-६ इंच)	२.७४ मी (९ फिट-० इंच)	
क्रीकेट गेंद फेंकना	२३.९० मी (८५ फिट-० इंच)	२८.९५ मी (९५ फिट-० ईंच)	

लड़कियों के लिये

५० मीटर दौड़	९.३ सेकंड	९.१ सेकंड	८.९ सेकंड
३० सेकंड रस्सी पर कूदना Skipping	४०	४५	५०
गेंद टप्पा देना ३० सेकंड	४०	४५	५०
क्रिकेट गेंद फेंकना	१२.१९ मी (४० फिट)	१३७.१ मी (४५ फिट)	१५.२९ मी (५० फिट)
सिट अप Sit ups ३० सेकंड	१०	१२	१४

फिजीकल एफीशियेन्सी टेस्ट्स

लड़कों के लिये

कार्य	कक्षा ७	कक्षा ८	कक्षा ९	कक्षा १०	कक्षा ११
१०० मी दौड	१७ सेकंड	१६.५ सेकंड	१६ सेकंड	१५.५५ सेकंड	१५.२५ सेकंड
उंची कूद	९१ सें० (३ फिट-० इंच)	९६ सें० (३ फिट-२ इंच)	१.०१ मी० (३ फिट-४ इंच)	१.०६ मी० (३ फिट-६ इंच)	१.११ मी० (३ फिट-८ इंच)
लम्बी कूद	३.०५ मी० (१० फिट-० इंच)	३.२० मी० (१० फिट-६ इंच)	३.३५ मी० (११ फिट-६ इंच)	३.५० मी० (११ फिट-६ इंच)	३.६६ मीर (१२ फिट-० इंच)

नेशनल फिजीकल एफीशियेन्सी टेस्ट्स

लड़कों के लिये १२ वर्ष से नीचे ग्रुप I

बाटरी 'ए'

क्रिया	तीन स्टार	दो स्टार	एक स्टार
१०० मी० दौड़	१३ सेकंड	१४ सेकंड	१५ सेकंड
लम्बी कूद	१५ फिट (४.५७ मी)	१३ फिट (३.९६ मी)	१२ फिट (३.६६ मी)
गोला फेंकना (१२ पोंड)	२८ फिट (८.५३ मी)	२५ फिट (७.६२ मी)	२० फिट (६.१० मी)
उंची कूद	४ फिट-६ इंच (१३७.१६ सें)	४ फिट (१२१.९२ से)	३ फिट-५ इंच (१०४ सें)
८०० मीटर दौड़	२ मिनट ४० सेकंड	३ मिनट १० सेकंड	२ मिनट २० सेकंड

बाटरी 'बी'

१०० मी० दौड़	१३ सेकंड	१४ सेकंड	१५ सेकंड
लम्बी कूद	१५ फिट (४.५७ मी)	१३ फिट (३.९६ मी)	१२ फिट (३.६६ मी)
अपने बराबर वजन ले जाना	४०० गज (७.६६ मी)	३०० गज (२७४ मी)	१०० गज (९१ मी)
दण्ड एवं बैठक	२ मिनट में ५० दण्ड ५० बैठक ५० सेकंड में	१ मि० १० सेकंड में ३० दण्ड ३० बैठक ३० सेकंड	३६ सेकंड में १५ दण्ड १५ बैठक ३० सेकंड में
८०० मी० दौड़	२ मि० ४० सेकंड	३ मि० १० सेकंड	३ मि० २० सेकंड

एन० बी०

बाटरी 'ए' उनके द्वारा जो राष्ट्रीय पारितोषिक प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हों।

लड़के ग्रुप II १८—३४ वर्ष

बाटरी 'ए'

१०० मी० दौड़	१२.५ सेकंड	१३.५ सेकंड	१४.५ सेकंड
उंची कूद	५ फिट (१५२.४० सेन)	४ फिट ९ इंच (१४४.७२ सेन)	४ फिट ६ इंच (१३७.१६ सेन)

लम्बी कूद	१८ फिट (५.४९ मी)	१६ फिट (४.२२ मी)	१५ फिट (४.५७ मी)
गोला फेंकना (१६ पौंड)	२८ फिट (८.५३ मी)	२४ फिट (७.३२ मी)	२० फिट (६.१० मी)
८०० मी० दौड़	२ मि० १५ सेकंड	२ मि० ३० सेकंड	२ मि० ५० सेकंड

बाटरी 'बी'

१०० मीटर दौड़	१२.५ सेकंड	१३.५ सेकंड	१४.५ सेकंड
लम्बी कूद	१८ फिट (५.४९ मी)	१६ फिट (४.८८ मी)	१५ फिट (४.५७ मी०)
चिनिंग अप	१४	९	७
या			
अपने बराबर वजन ले जाना	८०० गज (७३२ मी)	६०० गज (५४९ मी)	४०० गज (३.६६ मी)
दण्ड या बैठक	४ मिनट में १०० दण्ड	३ मिनट में ७५ दण्ड	२ मि० ५ सेकंड ५० दण्ड
	२ मिनट में १०० बैठक	१.३० सें ७५ बैठक	५५ सेकंड ५० बैटक
८०० मीटर दौड़	२ मिनट १५ सेकंड	२ मिनट ३० सेकंड	२ मिनट ५० सेकंड

बाटरी 'ए' उनके द्वारा जो राष्ट्रीय पारितोषिक प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हों,

पुरुष ग्रुप III ३५—४४ वर्ष

१०० मीटर दौड़	१४ सेकंड	१५ सेकंड	१६ सेकंड
लम्बी कूद	१५ फिट (४.५७ मी)	१४ फिट (४.२७ मी)	१३ फिट (३.९६ मी)
गोला फेंकना (१६ पौंड)	२० फिट (६.१० मी)	१८ फिट (५.४९ मी)	१६ फिट (२.२२ मी)
२०० मीटर दौड़	३ मिनट ४ सेकंड	३ मिनट १० सेकंड	४ मिनट ४० सेकंड
१०० पौंड वजन ले जाना	४०० गज (३६६ मी)	३०० गज (२७४ मी)	२०० गज १०३ मी)
चीलिंग अप	८	६	४
दंड	५० — ४ मिनट में	४० — ३ मिनट में	३० — २ मिनट ५ सेकंड
एवं			
बैठक	५० — २ मिनट में	४० — १ मिनट ३० सेकंड	३० — ५५ सेकंड में

इन में से कोई तीन आइटम चुन लेना है ।

पुरुष ग्रुप IV ४५ वर्ष एवं ऊपर

१०० मीटर दौड़	१५ से०	१७ से०	१६ से०
लम्बी कूद	१३'. (३·९६ मी०)	११' (३·३५)	१०'. (३·०५ मी०)
गोला फेंकना (१६ पौंड)	१४' (५·४९ मी०)	१६'' (४·८८ मी०)	१४'' (४·२७ मी)
८०० मी दौड़	४ मि० ४० से०	५ मी०	(५ मी० २० से०)
५० पौंड वज़न ले जाना	२०० गज (१८३ मी०)	१५० गज (१३७ मी०)	१०० गज (९१ मी०)
चिनिंग अप	५	३	२
दंड एवं	४ मी० में ३०	३ मी० में २०	२ मी० ५ से० में १०
बैठक	२ मी० में ३०	१ मी० ३० से० में २०	५५ से० में १०

(i) कोई तीन आइटम चुनना है ।

(ii) बाटरी 'ए' तथा 'तीन स्टार' राष्ट्रीय पारतोषिक प्रतियोगिता के लिये भाग लेने की स्वीकृति पा सकते हैं ।

लड़कियां ग्रुप I १६ वर्ष से नीचे

बाटरी 'ए'

१०० मी० दौड़	१६ से०	१७ से०	१९ से०
लम्बी कूद	१२'' (३·६६ मी०)	१०'. (३·०५ मी०)	८'. (२·४४ मी०)
गोला फेंकना (८ पौंड)	२०'' (६·१० मी०)	१६'' (४·८८ मी०)	१४'' (४'२७ मी०)
ऊंची कूद	८'' (१२१.९२ से०)	३''६'' (१०६·६८ सेन)	३'' (९१·४४ से०)
२०० मी० दौड़	३३ से०	३५ से०	३८ से०

बाटरी 'बी'

(अ) ५० मीटर दौड़	८ से०	९ से०	१० से०
(ब) १०० "	१६ से०	१७ से०	१९ से०
हौप्पिंग २५ मीटर	७ से०	८ से०	९ से०
गेंद फेंकना	५५'. (१६.७६ मी०)	४५'.(१३.७२ मी०)	३५'.(१०.७७ मी०)
परिवर्तित पुल अप	११	९	७
शटल रेस	४५ से०	५० से०	५५ से०

महिलायें ग्रुप II १६ से ३० वर्ष

बाटरी 'ए'

१०० मीटर दौड़	१४.५ से०	१५.५ से०	१७ से०
ऊँची कूद	४':(१२१ ९२ से०)	३'.९" (११४.३० से०)	३'.६"(१०६.६८ से०)
लम्बी कूद	१४'. (४.२७ मी०)	१२'.(३.६६ मी०)	१०'. (३.०५ मी०)
गोला फेंकना	२२' (६.७० मी०)	२०'. (६ १० मी०)	१६'. (४.८८ मी०)
२०० मीटर दौड़	३२ से०	३४ से०	३६ से०

बाटरी 'बी'

५० मी० दौड़ या	८ से०	८.५ से०	९ से०
१०० मी० दौड़	१४.५ से०	१५.५ से०	१७ से०
२५ मीटर हौप्पिंग या	६.५ से०	७ से०	८ से०
लम्बी कूद	१४' (४.२७ मी०)	१२'. (३.६६ मी०)	१०'. (३.०५ मी०)
गेंद फेंकना	६५' (१९.८१ मी०)	५५'. (१६.७६)	४५'. (१३.७२ मी०)
परिवर्तित पुल अप	१२	१०	८
२०० मीटर दौड़	३२ से०	३४ से०	३६ से०

कोई पांच आइटम चुनना है। बाटरी 'ए' राष्ट्रीय पारितोषिक प्रतियोगिता के लिये।

माहिलायें ग्रुप II ३१ वर्ष एवं ऊपर

५० मीटर दौड या	१२ से०	१४ से०	१६ से०
८०० मीटर चलना	८ मी०	९ मी०	१० मी०
खड़े होकर कूद या	४'.६" (१३.७१६ से०)	३'.६" (१०६.६८ से०)	३'.(९१.४४ से०)
२५ मीटर हौप्पिग	९ से०	१० से०	१२ से०
गोला फेंकना ८ पौंड या	१६'(४.८८ मी०)	१४'. (४.२७ मी०)	१२'. (३.६६ मी०)
गेंद फेंकना	४५': (१३.७२ मी०)	३५'.(१० ·.६७ मी०)	२५'.० (७.६२ मी)

शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन का संगठन, संचालन तथा निरीक्षण

१

संगठन तथा संचालन

संगठन तथा संचालन का अर्थ—संगठन शब्द का अर्थ है, तथ्यों को एकत्रित करना, भिन्न भिन्न वस्तुओं को एक स्थान पर केन्द्रित करना तथा इन विभिन्न विभागों को एक एकत्व में संयुक्त करना। इस प्राप्त संगठन को जिसमें संयुक्ति एवं सहयोग की भावना होगी, केन्द्रित कर सुगमता से कार्य परिचालन करना ही संचालन है।

शारीरिक शिक्षण में कई एक विभाग हैं, जैसे, एथेलेटिक स्पोर्ट्स, चिकित्सा, स्वास्थ्य, स्कउटिंग, सेन्ट जोन्स एमब्युलेन्स, मनोरंजन, इन्ट्राम्युरल, तैरना आदि। इनमें प्रत्येक का कार्य पृथक है, किन्तु सब मिल कर एक ही ध्येय रखते हैं, अर्थात् बालक का समुचित विकास।

इन विभागों के संगठन में बहुत से प्रश्न तथा कठिनाइयां उपस्थित होती हैं जिनका हल करना अत्यन्त आवश्यक है। प्रश्न एवं कठिनाइयां संगठन के पूर्व कुछ मध्य में तथा संगठन के पश्चात उपस्थित होंगी। यदि विचार पूर्वक आयोजन किया जाये तथा प्रत्येक पहलू को उस के वास्तविक रूप में समझने की

चेष्टा की जाये तथा उनके परिणाम को भलीभांति समझ लिया जाये तो समस्या अत्यन्त ही सरल प्रतीत होगी। परिणाम जानते हुये कठिनाइयों का सामना करने में साहस एवं उत्साह प्राप्त होता है।

किसी भी अधिकारी को जो प्रधान स्थान प्राप्त करते हैं अपने आधीन विभिन्न विभागों को एक साथ रखना तथा साथ ही उनके कार्यों को ऐसा रूप देना पड़ता है, कि प्रत्येक विभाग अपने वर्ग का कार्य करते हुये तथा उचित रूप से दूसरे वर्गों को सहयोग दें जिस से सब मिल कर सुगमता से एक ही ध्येय को पहुंचे।

सर्वप्रथम संगठन के ध्येय का निश्चित करना है। ये ध्येय, साधारण शिक्षा, शारीरिक शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा तथा मनोरंजन से घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित हैं। ध्येय के निर्धारित करने के पश्चात उसी के आधार पर आर्थिक प्रबन्ध, शासन नियम, कार्यक्रम का विस्तार, सुविधाओं आदि का ध्यान करना पड़ता है।

संगठन के विचार से यह मानना पड़ेगा कि कुछ कार्यकर्त्ताओं का पद दूसरों से अधिक दायित्व तथा महत्ता रखता है। कार्य के सुगमता से संचालन के लिये यह आवश्यक है, कि प्रत्येक पद के अधिकारी पद के अधिकार तथा दायित्व को भलिभाँति समझ लें। इसे समझने के पश्चात ही पदाधिकारियों की नियुक्ति होनी चाहिये। विद्यालय में संगठन के लिये प्रत्येक कार्यपूर्ण माध्यम को अपनाना चाहिये जिससे शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों को लाभ हो।

संगठन की परिभाषा देने में यह कहा जा सकता है कि, संगठन कार्य के यत्न का मार्ग है। यह सुगम तथा उन्नतिपूर्ण कार्यों में सहायक है जिसके द्वारा कठिनाइयों का अनुभव शून्य के बराबर रहता है।

संगठन तथा संचालन के विषय में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि संगठन, केवल एक माध्यम है अन्त नहीं जो किसी ध्येय की पूर्ति के हेतु अपनाया जाता हैं। इस ओर भी ध्यान देना आवश्यक हो जाता है कि आवश्यकता से अधिक संगठन में कड़ापन न आ जाये क्योंकि इसके कारण अस्वाभाविकता, कठोरता, कार्य में विलम्ब, तथा अयोग्यता आ जाने की सम्भावना हो जाती है। संगठन का उद्देश्य सर्वदा यही है कि, सही विद्यार्थी,

सही शिक्षा उपार्जन, सुयोग्य शिक्षक के द्वारा, उसी मूल्य पर जो शासन या राज्य व्यय कर सके, तथा उन परिस्थितियों के आधीन जिससे सीखने वाला अपनी शिक्षा से लाभ उठा सके, उपलब्द्ध हो। परिस्थितियों का अध्ययन, सर्वश्रेष्ठ प्रोग्राम, कार्य करने की रीति तत्कालिक तथा भविष्य के संगठन के उद्गम हो सकते हैं।

संगठन के तीन क्षेत्र हैं। कार्यक्रम, सुविधायें तथा कार्यकर्त्ता। ये परस्पर एक दूसरे पर अवलम्बित तथा सम्बन्धित हैं। कोई भी कार्यक्रम जो लिखित रूप में है वह उपलब्ध सुविधाओं पर निर्भर हैं तथा उसी समय क्रियाशील हो सकता है जब कोई उसे करने वाला हो।

संगठन का दायित्व कार्य संचालन का है। संस्था के कार्यक्रम को यथाविधि कार्य रूप देना ही उसका परम कर्त्तव्य है। अतः ऐसी स्थिति में संगठन कर्त्ता इस प्रकार की दशा एवं सामग्री आयोजित करता है जिससे शिक्षक उत्तम रीति से शिक्षा दे सकें। शारीरिक शिक्षा का संगठन कर्त्ता प्रायः प्रशिक्षण देने के कार्य में स्वयं भाग लेता है इस लिये आवश्यकताओं एवं समस्याओं से वह परिचित रहता है।

संगठन कर्त्ता को सिद्धान्त एवं प्रणाली के अन्तर का उचित ज्ञान होना चाहिये। सिद्धान्त का निर्धारित करना संस्था का कार्य है किन्तु उसे उचित रूप से पूर्ण करना संगठन कर्त्ता का कार्य है। उचित प्रणाली का प्रयोग संगठन कर्त्ता के ऊपर निर्भर करता है।

वही संगठन कर्त्ता निपुण एवं योग्य कहा जा सकता है जिसका व्यक्तित्व प्रभावपूर्ण हो, जिसके पास प्रबन्ध नियम को कार्यशील करने की उत्तम योग्यता हो, जो उदारचित्त हो, जो सूझ बूझ से कार्य करने वाला हो तथा जो चतुर हो। प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व में शारीरिक एवं मानसिक दोनों गुण आते हैं। इसमें स्वास्थ्य एवं शक्ति, भद्रता एवं प्रसन्नचित के साथ संयुक्त होकर उसे सबों का प्रेम पात्र बना देते है। प्रबन्धक नियम के कार्यशील करने की योग्यता के कारण वह समस्याओं का हल शीघ्र कर लेता है तथा उसके हृदय में सदैव न्याय की भावना होगी। उदार होने के कारण अपने सहयोगियों के साथ सरलता से कार्य कर लेता है तथा अपने ऊपर भार डालने से हटता नहीं।

सूझ बूझ के कारण भविष्य की आवश्यकताओं, प्रबन्ध, नियमों तथा उत्तम उपाय को चुन लेना उसके लिये सरल होता है। चतुरता के कारण वार्तालाप, भाव, प्रतिक्रिया में नियन्त्रित रहता है। अतएव दूसरों के साथ कार्य करने या उन्हें प्रभावित करने में कठिनाई नहीं होती।

इन गुणों के कारण विद्यार्थी उसके पास तक पहुंच सकते हैं। उनके बीच मैत्री भाव रहता है, वह पक्षपात नहीं करता तथा एक सहायक एवं आदर्श बन जाता है।

संगठन कर्त्ता संगठन का प्रमुख व्यक्ति होता है तथा उसके हाथों में अधिकार होता है। अधिकार, स्थान के उत्तरदायित्व के कारण प्राप्त होता है। ऐसी स्थिति में संगठन कर्त्ता के विचारो एवं दृष्टिकोण से बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। संगठनकर्त्ता को यह समझना आवश्यक है कि उसे व्यक्तियों के साथ कार्य करना है अतः प्रजातांत्रिक भावनाओं से आदेशित होना अति आवश्यक है।

संस्था या विभाग में संकट या कठिनाई उसी समय प्रस्तुत होती है जब उस के सिद्धान्त या आदर्श दृढ़ एवं पूर्ण रूप से स्थापित, नहीं होते। प्रबन्ध नियम के द्वारा कार्य करने की प्रणाली प्रदर्शित होती है। दृढ़ संगठन के लिये आयोजित प्रणाली का होना आवश्यक है। संस्था के प्रत्येक व्यक्ति जब इन से परिचित रहते हैं तो उन्हें उनके द्वारा आदेशित होने में अधिक कठिनाई नहीं होती। मत भेद उसी समय प्रकट होता है जब अधिकार एवं उत्तरदायित्व के प्रति विचार में भिन्नता होती है। स्थानीय अवस्था के कारण प्रबन्ध नियम प्रभावित हो सकते हैं। संगठनकर्त्ता के लिये कुछ प्रबन्ध नियम इस प्रकार हो सकते हैं। जैसे जहां तक सम्भव हो कार्य प्राप्त तथ्यों के अनुसार हो। अपने आधीन कार्य करने वालों के प्रति न्याय हो। विद्यार्थियों के प्रति तथा प्रतियोगिता करने वालों के प्रति न्याय हो। विद्यार्थियों के प्रति न्याय हो। जनता के प्रति ध्यान हो। अपने विरोधियों तथा प्रतियोगिता करने वालों के प्रति सम्मान हो। शिक्षा प्रणाली के प्रति श्रद्धा हो।

संगठनकर्त्ता को दो मुख्य कार्य करने पड़ते हैं। सर्वप्रथम उसे संगठन करना है, द्वितीय उसका संचालन करना है। इस उद्देश्य को प्राप्त

करने के लिये यह आवश्यक है कि (१) अधिकार तथा उत्तरदायित्व सही रीति से सौंपे जायें। (२) प्रत्येक अपने स्थान के लिये उचित रीति से तैयार एव प्रशिक्षित हो। (३) एक से अधिक अधिकार दूसरों को कम से कम मात्रा में सौंपा जाये, तथा (४) समन्वय पर बल दिया जाए तथा उसे उत्साहित किया जाये।

शारीरिक शिक्षा में संगठन का आधार, उस प्रवीणता तथा कौशल को सिखाना जो सामान्य प्रयोग के हों, वह प्रवीणता जो किसी समूह, संघ, कक्षा या टोली में हों, प्रवीणता जो व्यक्तिगत हों, होना चाहिये। किसी संस्था की संगठन योजना में शिक्षा संचार का विशेष ध्यान होना चाहिये। इसकी कसौटी यह है कि शारीरिक शिक्षण प्रत्येक के लिये हो, इस का सम्बन्ध मनुष्य के पूर्ण विकास से हो तथा इसके प्रत्येक कार्य शिक्षा सम्बन्धित एवं उसके भाग हों।

एच० सी० बक के द्वारा दिये गये संगठन तथा संचालन के कुछ सिद्धान्त :—

शारीरिक शिक्षा, जीव विज्ञान आधारित आवश्यकता है अतएव ऐसे संगठन की आवश्यकता है कि प्रत्येक के लिये यह उपलब्ध हो। यह एक दैनिक आवश्यकता है अतएव प्रत्येक के लिये प्राय: एक घंटा होना चाहिये। व्यक्तिगत विभिन्नता का विचार करते हुये प्रत्येक की आवश्यकताओं तथा योग्यता के अनुसार शारीरिक शिक्षा का कार्य होना चाहिये। मनुष्य रुचि में भिन्न है अतएव व्यक्तिगत रुचि का ध्यान रखना अनिवार्य है। प्रत्येक बालक की भिन्न २ आयु में भिन्न भिन्न विशेषतायें होती हैं। ग्रुप संगठन में इन पर ध्यान होना चाहिये। प्रत्येक संस्था में एक ही समान सुविधा, साधन, खेल के मैदान इत्यादि नहीं हो सकते। प्राकृतिक क्रियाओं के प्रति प्रतिक्रिया शीघ्रता से होती है। शारीरिक शिक्षा में सम्पूर्ण मनुष्य शिक्षित होता है। संगठन इसी हेतु होना चाहिये। छोटे ग्रुप में शिक्षा उत्तम रीति से होती है

संगठन में शैक्षणिक तथा अवरोध के उपायों का व्यवहार करना उचित है जिससे शारीरिक स्वास्थ्य, नैतिकता तथा व्यक्तित्व का बचाव एवं उन्नति हो। स्कूल के बाद विद्यार्थी मनोरंजन चाहते है। अतएव संगठन के द्वारा ऐसी योजना होनी चाहिये जिसमें इनके द्वारा प्राप्त गुण दूसरे कार्यो में व्यवहृत हो सके। शारीरिक शिक्षा से आनन्द प्राप्त करने के लिये अनुकूल समय तथा साधन की आवश्यकता है। भिन्न भिन्न प्रकार के कार्यो का होना आवश्यक है।

प्रत्येक व्यक्ति की ओर उचित ध्यान देना है । उचित परिणाम के लिये शिक्षा तथा कोचिंग की आवश्यकता है । संगठन के साथ उचित स्वस्थकर उपाय तथा मल मूत्र त्याग करने तथा स्नान के लिये उचित स्थान होना आवश्यक है । शारीरिक शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा तथा मनोरंजन का संगठन एक ही प्रधान संगठन कर्त्ता के आधीन होना आवश्यक है । प्रबन्धकर्त्ता जो संगठन का प्रमुख है, संगठन के कार्यों को, कार्यकारिणी की देख भाल तथा शिक्षा की भावनायें समान करता है । उसे समस्याओं का नवीन सुलझाव तथा समस्यानुकूल प्रगति के साथ कार्य करने में निपुणता दिखाना चाहिये ।

संगठन चार्ट बनाने में निम्न लिखित पर ध्यान देना आवश्यक है —

विद्यार्थी, शिक्षक, सुगमता, समय तथा संस्था का प्रकार । संगठन में इनका उचित स्थान होना चाहिए जिसे सब मिल कर उत्तम परिणाम दे सकें ।

इसके अतिरिक्त (१) प्रत्येक को अपने कर्त्तव्य तथा दायित्व का सम्मान करना तथा पालन करना चाहिये ।

(२) योग्यता तथा दक्षता से दायित्व पालन करना चाहिये (३) संतुलन तथा सहयोग विभिन्न विभागों में होना चाहिये जिससे कोई विभाग पृथक कार्य न करें ।

कक्षा के संगठन तथा संचालन के सिद्धान्त

एक साधारण आधार पर शिक्षा कार्यक्रम नियोजित करना जिसमें प्रत्येक विद्यार्थी भाग ले सके । वर्त्तमान संसार में जीवित रहने के लिये यह परम आवश्यक है । शारीरिक शिक्षा प्रत्येक के लिये अनिवार्य हो । यह इस उद्देश्य से कि प्रत्येक विद्यार्थी एक ऐसी रुचि अर्जित करले जिस के द्वारा उन कौशलों को जिसे वह सीखता है साधारण जीवन में प्रयोग कर सके तथा अपने अवकाश के समय उनका उपयोग कर सके । इसके लिये रुचिकर कार्यक्रम तथा प्रशिक्षित शिक्षक आवश्यक हैं ।

जहां तक सम्भव हो, कार्यक्रम ऐसा हो कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी रुचि के अनुसार कार्य चुन ले । कदाचित रुचि संकीर्ण हो, ऐसी अवस्था में रुचि विस्तार के लिये कुछ कार्यक्रम अनिवार्य भी होंगे । विद्यार्थियों का वर्गीकरण,

उनमें कार्य की रुचि, आवश्यकता, एक स्तर की प्रतियोगता, शिक्षा में उन्नति, योग्यताओं का ध्यान तथा कार्यक्रम चलता रहे, इस कारण आवश्यक है। एक वर्ग में कितने विद्यार्थी रहेंगे यह साधन, सुविधा तथा शिक्षकों पर निर्भर हैं। किन्तु यह जानना आवश्यक है कि इतने व्यक्ति न हो जिससे व्यक्तिगत रूप से ध्यान न दिया जा सके।

शारीरिक शिक्षा से छूट विद्यार्थियों को उचित कारण और सही रीति से मिलना चाहिये, ऐसा सम्भव है कि कोई ऐसा कार्य किसी दूसरे स्थान में किया जा रहा है जिससे व्यक्ति को वही लाभ है जो स्कूल के कार्यक्रम से हो। ऐसी अवस्था में छूट दी जा सकती है। यदि कार्यक्रम में भाग लेने के लिये अंक दिये जाते हैं तो प्रत्येक विद्यार्थी को नियम से परिचित कराना चाहिये। इस योजना का विशेष उद्देश्य होना चाहिये। यह अति आवश्यक है कि प्रत्येक बालक की प्रतिक्रिया प्रोग्राम के सम्बंध में अध्ययन की जाये, जिससे कार्यक्रम में उचित परिवर्तन किये जा सके।

संरक्षिता जहाँ तक सम्भव है वह देनी आवश्यक है। इसका अर्थ यह नहीं कि विद्यार्थी वह कार्य न करे जिसमें चोट, खतरे इत्यादि की सम्भावना हो। इसका अर्थ यह है कि प्रशिक्षित शिक्षक अपने अनुभव तथा योग्यता से भावी जोखिम को समझ कर ऐसा कार्य कराये जिससे दुर्घटना शून्य के बराबर हो। सही शिक्षा के द्वारा भी विद्यार्थी चिताये जा सकते हैं जिससे वे कार्य करते समय सही नियमों का पालन करें तथा सतर्क रहें।

शारीरिक शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा तथा मनोरंजन का संयुक्त कार्यक्रम होना अति आवश्यक है। यह सम्भव है क्योंकि इन की भावनायें, रुचि, तथा प्रेरणा एक सी हैं। इन्हें शिक्षा के अन्तर्गत होना चाहिये क्योंकि ये शिक्षा के अंग है और इन्हीं के योग से शिक्षा प्राप्त होगी। स्कूल का अर्थ इन सब का योग है। बहुत सी चीजें जो विद्यार्थी शारीरिक शिक्षा में सीखते हैं वे अपने मनोरंजन के लिये प्रयोग करेंगे। अतएव स्कूल के कार्यक्रम का उद्देश्य मनोरंजन सम्बन्धी होना अनिवार्य है। सही मनोरंजन से समाज में अवकाश के समय के सदोपयोग की समस्या हट जायेगी। व्यक्तित्व के विकास में यह अति आवश्यक है।

भारतवर्ष में तीन मुख्य मौसम हैं। गर्मी, बरसात तथा जाड़ा। शारीरिक

शिक्षण के कार्य बहुत कुछ मौसम पर निर्भर है। जैसे ग्रीष्म ऋतु में तथा बरसात में अधिकतर फुटबाल, शीत काल में हाकी, क्रिकेट, एथेलेटिक्स इत्यादि होते हैं। ऋतु के ध्यान से शारीरिक शिक्षा का कार्यक्रम भी निर्धारित करना आवश्यक है। ग्रीष्म ऋतु में लम्बी छुट्टियां होती हैं तथा सूर्य की तेजी से यह सम्भव नहीं कि कठिन शारीरिक परिश्रम किया जाये। जो कुछ सम्भव हैं वह संध्या समय। शीतकाल में सूर्य की तेजी न होने से बहुत से कार्य दोपहर में भी हो सकते हैं। कठिन परिश्रम भी किया जा सकता है।

अतएव सिद्धान्त उद्देश्य तथा संगठन प्रणाली में शारीरिक कार्यक्रम के निर्माण करने में मौसम पर ध्यान देना आवश्यक है।

स्थानीय दशा —

किसी भी प्रोग्राम में स्थानीय स्थिति का मालूम करना अति आवश्यक है। इस में स्थानीय रुचि, आवश्यकता, सुविधायें तथा सामान जो उपलब्ध है उनका जानना आवश्यक है क्योंकि शारीरिक कार्यक्रम उन्हीं के आधार पर निर्मित होगा। जो सुविधायें संभव नहीं उन्हें प्रोग्राम में रखने से कोई लाभ नहीं। प्रत्येक स्थान की स्थानीय दशा भिन्न भिन्न होती हैं इसलिये प्रत्येक स्थान के कार्यक्रम में भी विभिन्नता होगी।

समय तथा कार्य:—

प्रारम्भिक संस्थाओं में पांच पीरियड तीस मिनट के प्रत्येक सप्ताह में होने चाहिए।

जूनियर तथा सीनियर हाई स्कूल में प्रत्येक सप्ताह पांच पीरियड एक एक घंटे के होने चाहिए। ये पीरियड इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम, दूसरे बाहर के कार्यक्रम तथा स्कूल के बीच की छुट्टी के समय के कार्यो से पृथक है। इन्ट्राम्युरल कार्यक्रम सप्ताह में दो दिन होना चाहिये। प्रत्येक बालक को कम से कम ६ माह में तीन हाईक, पिकनिक, कैम्प तथा दूसरे बाहर के मनोरंजनों में भाग लेना चाहिये।

शारीरिक शिक्षा के एक व्यापक कार्यक्रम में शिक्षण, अभ्यास, सुधार के व्यायाम तथा विश्राम के लिये निश्चित समय रहता है। शिक्षण का समय

स्कूल के दैनिक कार्यक्रम में दिया जाता है। यह समय उन कौशलों की उन्नति के लिये प्रयोग करना चाहिये जो सिखाये जा रहें हैं, अभ्यास के घंटे में वास्तविक खेल की स्थितियों में उन कौशल का प्रयोग करना चाहिये जो शिक्षण घंटे में सीख चुके हैं। ये इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम या प्रतियोगिता के रूप में हो सकती है। यह घंटा प्रायः स्कूल समाप्त होने के बाद होता है। सुधार व्यायाम या चिकित्सात्मक जिमनास्टिक का घंटा उनके लिये होता है जिन्हें व्यक्तिगत आदेश की आवश्यकता है जो इन व्यायामों से लाभ पा सकते है। विश्राम के लिए अनौपचारिक रूप से कुछ मिनटों के लिये खेल इत्यादि होना चाहिए। जहाँ यह प्रथा है वहां बालक तीन चार मिनट की स्वतंत्रता प्राप्त करते हैं जिस से बैठने के कारण जो दोष या थकावट मालूम हो वह दूर हो जाये।

शारीरिक शिक्षण के लिये दिन में समय:—

हाई स्कूल तथा कालेज में स्कूल के प्रति घंटे में शारीरिक शिक्षण का कार्यक्रम हो सकता है। अनुभव से पता चलता कि शारीरिक शिक्षण के घंटे दैनिक कार्यक्रम के मध्य में हों तो उत्तम है। इससे विशेष लाभ बालकों को दूसरे विषयों से विश्राम देना है। कुछ लोगों का विचार है कि मध्य के घंटों में बालक ध्यान लगा नहीं पाते अतएव यह समय शारीरिक शिक्षा के लिये उत्तम प्रतीत होता है। कक्षा के कार्य में तेज शक्ति वर्धक कार्य तथा कौशल पूर्वक शिक्षा होनी चाहिये। वैसे कार्यक्रम भी होना चाहिये जो बालक अपने अवकाश के समय प्रयोग कर सके।

दैनिक, विशेष तथा वार्षिक कार्यक्रम :—

प्रत्येक स्कूल के लिए शिक्षा विभाग के द्वारा पाठ्यक्रम निर्धारित है। इसके साथ कुछ ऐसे कार्य हैं जो आवश्यक समझे जाते हैं। शारीरिक शिक्षा अध्यापक सम्पूर्ण कार्यक्रम को जो एक वर्ष के अन्तर्गत एक कक्षा में समाप्त होना चाहिये, समय के अनुसार (जो स्कूल के दैनिक कार्यक्रम के अनुसार सम्पूर्ण वर्ष में मिलेगा,) विभाजित कर लें। इस से यह पता चल जायेगा कि एक कार्य के लिये कितना उचित समय दिया जा सकता है। इसी समय के अनुसार कार्यों का ग्रुप या सेक्शन बना लिया जाना चाहिए। प्रत्येक ग्रुप या सेक्शन को फिर उनके आधारभूत तत्वों में ऐसा विश्लेषण करना चाहिये जिससे

जितना समय उस के लिए निर्धारित है उतने ही में यह कार्य पूर्ण रूप से समाप्त हो जाये। यह विभाजन यूनिट या इकाई के रूप में हो। प्रत्येक यूनिट दैनिक पाठ्यक्रम में सिखाया जायेगा। ग्रुप का विश्लेषण प्रत्येक दैनिक पाठ्यक्रम के द्वारा निर्धारित समय में समाप्त कर दिया जायेगा।

कुछ विशेष कार्य, समय तथा विशेष अवसर के अनुसार किये जायेगें। सभी स्कूलों तथा कालेजों में ऐसे अवसर नियुक्त होंते है तथा उनके विशेष कार्य होते है, जैसे स्कूल स्पोर्ट्स, शिक्षा सप्ताह पारितोषिक वितरण समारोह, गणतन्त्र दिवस, स्कूल दिवस इत्यादि। इन अवसरों पर भिन्न भिन्न प्रकार के शारीरिक शिक्षा के कार्य होते हैं। शारीरिक शिक्षा, स्वास्थय शिक्षा तथा मनोरंजन का संगठन तथा संचालन, सिद्धान्त, उद्देश्य तथा विधि का ध्यान रखते हुये सामयिक अवस्था, स्थानीय स्थिति, समय तथा कार्यक्रम के आधार पर होना चाहिये।

———

२

सर्वजनिक प्लेग्राउण्ड, बड़े छोटे खेल, स्पोर्ट्स शारीरिक क्षमता, युवक, समारोह, नगर ग्राम तथा औद्योगिक क्षेत्रों में मेला उत्सव आदि का संगठन

आधारित संगठन

किसी बड़े उत्सव या संस्था के संगठन तथा संचालन के सम्बन्ध में जो प्रबन्ध कर्त्ता अनुभवी नहीं होते वे सब कुछ अपने ही आप करना चाहते हैं। इस हालत में प्रायः असफलता प्राप्त होती है और आवश्यकता से अधिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है तथा उलझनें होती हैं। ऐसे संगठन के प्रत्येक भाग से अपने को सम्बन्धित रखने की भावना से कार्य सुचारु रूप से कभी भी नहीं चल सकता हैं। एक, दो, या तीन विभाग तक एक व्यक्ति के नियन्त्रण में आपत्ति नहीं हो सकती, किन्तु जहां इस से अधिक विभागों का प्रबन्ध करना है वहां सहायता लेना अनिवार्य है।

प्रत्येक स्थान में ऐसे लोग मिल जाते हैं जिनके ऊपर दायित्व का विश्वास किया जा सकता है तथा जो कार्य करने की रुचि रखते हैं, ऐसे लोगों से अवश्य सहायता लेनी चाहिये। जो केवल पद का वैभव चाहते हैं वे कार्य करने वाले लोग नही होते और उनसे सर्तक रहना चाहिये।

जिन्हें सहायता देने की इच्छा है उन्हें उन विभागों के कार्य सौंप देना चाहिए जिसमें वे रुचि रखते हों और थोड़ी बहुत जानकारी भी उस विषय में हो। ये लोग बालकों की संस्था में 'नायक' तथा प्रौढ़ों की संस्था में 'सेक्रेट्री' के नाम से पुकारे जायेंगे। ये सेक्रेट्री, नायक या वह सदस्य जिसे मीटिंग बुलाने

का हक है अपने कार्य में दक्ष नहीं हो सकते हैं इस लिए उनके लिए नियन्त्रण तथा आदेश की आवश्यकता होगी। जो मुख्य संगठन कर्त्ता है वह केन्द्रीय नियन्त्रण रखता है ओर भिन्न भिन्न मुख्य सहायक जिन्हें सहायता की आवश्यकता है उन्हें सहायता देता है। वह कहा जा सकता है, कि मुख्य संगठन कर्त्ता जनरल सेक्रेट्री हो जाता है और दूसरे विभिन्न विभागों के सेक्रेट्री हो जाते हैं। जनरल सेक्रेट्री प्रत्येक मीटिंग में, जो सेक्रेट्री अपने अपने विभाग के कार्य के लिये बुलाते हैं, अपने पद के कारण उपस्थित रहता है जहां वह अपने अनुभव, आदेश तथा ज्ञान के द्वारा सुझाव में सहायता देता है। एक मुख्य कार्य कारणी सभा जनरल सेक्रेट्री और दूसरे सेक्रेट्री की होती हैं जहां विशेष उद्देश्य, नियम तथा मुख्य बातों का निर्णय होता है जिसके द्वारा छोटी कमेटियों को आदेश दिया जाता है।

सार्वजनिक क्रीड़ा स्थल

ये विभिन्न प्रकार के हो सकते हैं, जैसे म्युनिस्पिल प्लेग्राउन्ड या वाई, एम, सी, ए प्लेग्राउन्ड या कोई सरकारी मैदान जहां लोग जाकर मन बहलाव की चीजों में भाग ले सकते हैं। सार्वजनिक प्लेग्राउन्ड में यह आवश्यक है कि बालकों, युवकों तथा प्रौढ़ों के लिये पृथक व्यवस्था हो तथा महिलाओं के लिये भी। उपाय ऐसा होना चाहिये कि प्रत्येक विभाग के सदस्य अपने ही स्थान में रहें और एक दूसरे से मिश्रित न हो।

मुख्य शारीरिक शिक्षण निर्देशक की देख रेख में ही कार्य होगा। इस कार्य के चलाने के लिये एक कमेटी होगी जहां प्लेग्राउन्ड सम्बन्धित बायों का निर्णय होगा। जहां क्रीड़ा स्थल सरकारी या कारपोरेशन का हो वहां मैदान की देख भाल के लिये गार्डन आफिसर नियुक्त होना चाहिये। उन्हें भी कमेटी का सदस्य बनाना चाहिये किन्तु उन का कार्य संचालन उन के विभाग तथा उन की आज्ञाओं से होगा। कमेटी का मुख्य कार्य निर्देशक की सहायता तथा धन उपार्जन करना होगा। शारीरिक शिक्षण तथा मनोरंजन के प्रत्येक कार्य में मुख्य संगठन प्रायः एक सा ही होगा संगठन का एक ढांचा नीचे दिया जा रहा है:-

सम्पूर्ण कार्य कारिणी समिति

मुख्य कार्यकारिणी कमेटी (Executive Committee)– सभा-

कार्य विभाजन का सिद्धान्त एवं कर्त्तव्य की सीमा की व्याख्या आवश्यक है जिस से आधुनिक शिक्षा के अनुसार भिन्न भिन्न विषयों में विशेष ज्ञान, विशेषज्ञों के द्वारा प्राप्त किया जा सके। प्रत्येक कार्यकर्त्ता का कर्त्तव्य निर्धारित होना चाहिये जिससे उसे पूर्ण ज्ञान हो कि उसके क्या दायित्व हैं तथा उसे क्या करना है। वह अपने अधिकार की सीमा से परिचित होगा।

मुख्य संगठन कर्त्ता या निर्देशक का एक विशेष गुण दूसरों को अपना अधिकार सौपने का सिद्धान्त होता है। इस प्रकार अधिकार सौपने से स्वतंत्रता तथा दक्षता से कार्य सम्पन्न किया जाता है।

एकत्व तथा समायोजन के सिद्धान्त के अनुसार एक स्पोर्टस का समूह जिसकी अपनी विशेष रुचि है सम्पूर्ण विभाग की सेवा में हाथ बटाएँ, तथा स्वतंत्र समूह की रीति से कार्य न करे।

प्रजातांत्रिक भावनाओं के अनुसार तथा भाग लेने के सिद्धांत के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को संगठन के प्रबन्ध एवं नियम निर्धारित करने में भाग लेने का अवसर प्राप्त होना चाहिये। इस से समन्वय स्थापित होगा तथा रचनात्मक संकेत प्राप्त होंगे। यह प्रत्यक्ष है कि प्रबन्ध नियम को कार्यशील करना प्रवर्तक अधिकारी का कार्य है।

शैक्षणिक नेतृत्व के सिद्धांत के अनुसार नेतृत्व का विकास एवं प्रशिक्षण अत्यन्त आवश्यक प्रतीत होता है। एथेलेटिक, स्पोर्ट्स आदि शैक्षणिक विषय हैं अत: निर्देशक को ऐक शिक्षक भी होना चाहिये जो सम्पूर्ण समय के लिये संस्था में हो। जो शारीरिक शिक्षा से सम्बन्धित हैं उनका उचित प्रशिक्षण होना आवश्यक है।

एथेलेटिक एवं स्पोर्टस कमेटी

संगठन कर्त्ता या निर्देशक के लिये एक सलाहकार समिति की आवश्यकता है। यह संगठन की एक प्रजातांत्रिक प्रणाली है।

प्रवर्तक अधिकारी या निर्देशक के हाथ में प्रत्येक प्रवर्तक अधिकार निहित होगा जिसे नियमों के अनुवाद, सामान्य नियम प्रबन्ध को रूप देने, प्रतिशोध पर विद्यार्थियों की योग्यता निर्धारित करना, एथेलेटिक एवं स्पोर्टस

प्रतियोगिता तालिका को मान्यता देना, अधिकारियों की नियुक्ति एवं व्यय के लिये अर्थ की आज्ञा देने का भी अधिकार अन्य अधिकारों के साथ होगा।

सलाहकार समिति का प्रर्वतक अधिकारी सभापति होगा। सभा बुलाने का अधिकार उसे प्राप्त होगा।

स्कूल के प्रधानाचार्य का यह कर्त्तव्य है कि वे एक शारीरिक शिक्षा संगठन, संगठित करें। प्रत्येक विषय में संगठन कर्त्ता एवं समिति प्रधानाचार्य के प्रतिनिधि समझे जायेंगे जो स्वतंत्र रूप से कार्य करेंगे।

प्रदर्शन का संगठन:—

उचित समय तथा लोगों के अवकाश का ध्यान, समय निश्चित करने के लिये दिया जाने वाला प्रदर्शन उचित है या नहीं, भाग लेने वालों की रुचि, उसको श्रेष्ठ स्तर पर लाने का परिश्रम तथा समय, प्रदर्शन के प्रकार पर निर्भर है।

१-४ घंटे के प्रतिदिन अभ्यास में प्राय: तीन माह एक प्रदर्शन के लिये आवश्यक है। जिमनास्टिक, पिरामिड, भिन्न-भिन्न छोटे तथा बड़े खेल, स्वदेशी व्यायाम, फ्री हैंड व्यायाम (Free hand exercise) स्काउटिंग, एम्बुलेन्स जल क्रीड़ा इत्यादि में प्रदर्शन दिये जा सकते हैं।

प्रशिक्षण कार्यक्रम:—

निश्चित समय पर अभ्यास आरम्भ करना। लम्बे प्रशिक्षण में अनिच्छा न हो उसके लिये मनोरंजन होना आवश्यक है। प्रदर्शन की रूप रेखा बना लेना चाहिए। इसका अभ्यास तथा आवश्यक परिवर्तन कर लेना चाहिए। जहाँ तक हो रूप रेखा वही हो। श्याम पट पर प्रत्येक स्थान तथा अवस्था दी जाये। नायक तथा नियन्त्रण करने वाले ठीक स्थान पर नियुक्त कर दिये जायें।

जहां प्रदर्शन हो उस स्थान पर कुछ अभ्यास करना आवश्यक है। प्रदर्शन क्रमानुसार हो। जब अधिक आइटम हो तो प्रत्येक का आरम्भ, अन्त स्थान तथा समय निश्चित हो। कार्य ऐसा हो कि लगातार मालूम हो और किसी प्रकार का खाली समय या रुकावट न हो। सामान लाना तथा ले जाना

नियमानुसार तथा सुन्दर रूप से हो। जो आदेश के शब्द देने हो वे केवल कार्य करने वालों के लिये ही हो, जनता न सुने। प्रदर्शन सही, साफ, श्रेष्ठ, साधारण हो। साधारण चीज सही की जायें, वह उसमें अधिक शोभा देती है इसकी अपेक्षा कि कठिन चीजों को गड़बड़ी की हालत में किया जाये।

प्रदर्शन के दो घंटे पहले सब कार्यकर्त्ता उपस्थित हों।
भोजन, जलपान इत्यादि प्रदर्शन के पश्चात हो।
प्रदर्शन के लिये संगीत तथा बैन्ड का इन्तज़ाम उत्तम है।
लाउड स्पीकर साफ हो—बोलने वाला अनुभवी हो।
सब प्रकार की रोशनी का प्रबन्ध हो।
प्रदर्शन में भाग लेने वालों के लिये विशेष वस्त्र हों।
प्रत्येक के द्वारा उत्साह तथा नम्रता की झलक दी जाये।
किसी प्रकार की आक्समिक घटना के लिये सदैव तैयार रहें।

कुछ ऐसे कार्यकर्त्ता उपस्थित रहें जो वास्तविक कार्यकर्त्ताओं के अनुपस्थिति या चोट लग जाने के कारण भाग न ले सकने पर भाग ले सकें। इस कारण आवश्यक है कि साधारण अभ्यास में एक स्थान के लिए एक से अधिक व्यक्ति प्रशिक्षित किये जाये। किसी भी छोटी चीज को छोटा न समझा जाये। प्रत्येक चीज अपने-अपने स्थान पर महत्व रखती है।

राष्ट्रीय शारीरिक क्षमता—

केन्द्रीय सरकार ने शारीरिक शिक्षा को केन्द्रीय सलाहकार कमेटी द्वारा राष्ट्रीय शारीरिक क्षमता का आरम्भ १९५९ में किया। इस अभियान का उद्देश्य सर्व साधारण में शारीरिक क्षमता की भावना उत्पन्न करने का था। इस में कुछ परीक्षण रखे गये। ये तीन श्रेणी में थे। एक स्टार, दो स्टार तथा तीन स्टार।

सम्पूर्ण परीक्षण दो हिस्सों में विभाजित थे सीनियर तथा जूनियर। महिलाओं के लिये भी यही प्रबन्ध था। इसके चलाने के लिये सम्पूर्ण भारतवर्ष में केन्द्र स्थापित किये गये। समयानुसार दो या तीन दिन प्रति केन्द्र में दिये गये जहाँ सर्व साधारण अपनी आयु के अनुसार आकर परीक्षण में भाग ले सकती थी। कार्य परिचालन के लिये प्रत्येक केन्द्र पर कार्यकर्त्ता प्रशिक्षित

किये गये थे। यह कार्य क्रम प्रत्येक वर्ष होता है और पहिले से अधिक इसमें उन्नति हुयी है और जनता रुचि दिखा रही है।

सरकार के द्वारा इस पर अवलोकन करने के लिये कई एक गोष्ठियां आयोजित की गई है तथा स्थान-स्थान पर राजकीय व्यय से परीक्षण भी दिये गये हैं।

स्काउटिंग तथा गर्ल्स गाइड

स्काउटिंग संस्था लार्ड बेडन पावल के द्वारा इगलैन्ड में स्थापित की गई थी। यह ब्वाय स्काउट के नाम से प्रचलित थी। यही संस्था भारतवर्ष में थी। स्वतंत्रता के पश्चात इसके नाम में परिवर्तन हुआ अब यह भारत स्काउट्स तथा गाइड्स के नाम से पुकारी जाती है। कुछ लोग हैं जो भारत स्काउटस् तथा गाइडस के विरोध में ब्वाय स्काउटस् संस्था चला रहे हैं किन्तु ये नाम मात्र को है। भारत स्काउटस् तथा गाइडस् को राजकीय मान्यता है तथा आर्थिक सहायता भी मिलती है।

संगठनः—

प्रत्येक नगर में स्थानीय संस्था। जिसमें स्कूल के स्काउट मास्टर लाइफ मेम्बर्स तथा जिला के अधिकारी गण होते हैं। जिला स्काउट कमिश्नर प्रधान होता है तथा जिला एसोसियेशन का सभापति मुख्य होता है। जिला तथा सहायक स्काऊट कमिश्नर प्रदेशीय हेड क्वार्टर से नियुक्त किये जाते हैं। जिला के प्रत्येक ग्रुप स्थानीय संस्था के द्वारा हेड क्वार्टर में रजिस्टर्ड होते हैं। स्काउट मास्टरर्स के वारंट भी प्रदेशीय हेड क्वार्टर से मिलता है। प्रदेश में प्रदेशीय तथा उप प्रदेशीय कमिश्नर होता है। प्रदेशीय हेड क्वार्टर में हेड क्वार्टर कमिश्नर तथा चीफ कमिश्नर होता है।

हेड क्वार्टर के कार्य संचालन के लिये स्टेट चीफ आर्गनाईज़िग कमिश्नर तथा रीजन में कार्य चलाने के लिये असिसटेन्ट आर्गनाईजिग कमिश्नर नियुक्त किये जाते हैं जो स्टेट चीफ आर्गनाइजिग कमिश्नर से आदेशित होते हैं तथा प्रदेशीय तथा डिस्ट्रिक्ट स्काउट कमिश्नर की सलाह तथा सहायता से अपने क्षेत्र में प्रशिक्षण कैम्प इत्यादि करते हैं।

प्रदेश की काउंसिल में जिले से सदस्य चुन कर भेजे जाते हैं। राष्ट्रीय हेड क्वार्टर दिल्ली में है जहां राष्ट्रीय चीफ रहते हैं। यही संगठन गर्ल्स गाइड के लिये भी है। भारत स्काउट्स अन्तर्राष्ट्रीय संगठन से मिला हुआ है और वहां से इस संस्था को मान्यता प्राप्त है।

समस्या:—

चरित्र विकास के लिये स्काउटिंग से बढ़ कर और कोई संस्था नहीं किन्तु अभी तक भारतवर्ष में यह वह उन्नति नहीं कर सकी हैं जो विदेशों में हुई है इसके कई एक कारण हैं। स्कूलों में कई एक एसोसियेशन हैं तथा अन्य कार्यक्रम होते हैं। मिलिट्री ट्रेनिंग अनिवार्य होने के कारण तथा उसमें कुछ लाभ के कारण अधिकांश उसी में जाते हैं। स्काउटिंग के लिये समय नहीं रहता। संस्थाओं को स्काउटिंग में विशेष रुचि नहीं, अतएव नाममात्र के लिये ट्रुप रहता है और विशेष अवसर पर लड़कों को रैली में लाकर खड़ा कर दिया जाता है। बालकों को इस संस्था की महत्ता के विषय में प्रायः कुछ मालूम नहीं होता, किसी प्रकार की शिक्षा या प्रशिक्षण ढंग से नहीं दिया जाता।

अध्यापक या स्काउट मास्टर भी बहुत कम हैं जिनको इसमें विशेष रुचि हो। इसमें कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाता या किसी तरह की छूट नहीं। घरेलू कारण तथा समय की कमी से कभी कभी चाहते हुये भी स्काउट मास्टर सही कार्य नहीं कर सकते है। माता पिता भी इस संस्था के गुण से विशेष परीचित नहीं होते अतएव वे अपने बालकों को इस संस्था में यदि भाग लेने से मना नहीं करते तो उत्साह भी नहीं देते।

संस्थाओं में प्रथा यह भी है कि शारीरिक शिक्षण अध्यापक इस कार्य को भी संभाले। यह शारीरिक शिक्षण का एक अंग अवश्य है किन्तु शारीरिक शिक्षण अध्यापक को इस कार्य के लिये दूसरे अध्यापकों से सहायता मिलनी चाहिये क्योंकि उसके पास काम बहुत अधिक होता है। सहायता न मिलने के कारण इस कार्य की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता।

स्काउटिंग में प्रशिक्षित अध्यापकों की आवश्यकता है जो स्काउटिंग प्रशिक्षण लेकर कार्य कर सकें। प्रशिक्षण स्काऊट मास्टर की बहुत कमी है।

स्काउटिंग में संकटकालीन प्रशिक्षण बहुतायत से दिया गया है और राज्य सरकार ने आर्थिक सहायता भी दी है ।

लार्ड बेडन पावल ने यह संस्था अवैतनिक रुप में चलायी जो अब वैतनिक पद होने के कारण भी वह उत्साह जो पहिले था नहीं है तथा समाज कभी कभी सही भावना को भी गलत समझ लेता है ।

कैम्पिग तथा हाईकिंग स्काउटिंग के प्राण स्वरूप हैं । प्रशिक्षण तथा स्काउटिंग में सही भावना उत्पन्न करने के लिए ये अनिवार्य है । स्कूलों में प्रधानाचार्य की आज्ञा से स्काउट मास्टर इन कार्यों को अपने हाथ में लेता है । स्काउट मास्टर ट्रुप काउनसिल के द्वारा कार्य करता है ।

हाइक तथा कैम्प, पेट्रोल तथा ट्रुप के लिये हो सकता है ।

संगठन:—

स्काउट मास्टर प्रबन्धकर्त्ता
निर्णय, ट्रुप काउंसिल में होगा ।
स्कूल के प्रधानाचार्य की आज्ञा ।
बालक के माता पिता की आज्ञा ।
जिस स्थान पर जाना हो वहां के मालिक की आज्ञा ।
जाने से पहिले कार्यक्रम तथा समय निर्धारित होना चाहिये ।
कैम्प स्थान पर पीने के पानी की सुविधा । समय अनुकूल हो ।

हाइकिंग की दूरी विश्राम करते हुए तथा आनन्द पूर्वक तय की जाये जिस से यह कठिन नहीं किन्तु मनोरंजक मालूम हो । दूरी बालकों की क्षमता के अनुसार हो ।

लौटने का मार्ग भिन्न हो, हाइक अपनी टोली में हो, प्रत्येक कार्य टोली में हो ।

समस्या विशेष आर्थिक होती है । माता पिता की अरूचि । बालकों में इस प्रकार की रुचि का अभाव । स्काउट मास्टर तथा संस्था के द्वारा प्रोत्साहन न मिलना ।

युवक समारोह :–यह समाज की उन्नति के लिये अति आवश्यक है। युवकों का आपस में मिलना, एक दूसरे के विचार जानना, आपस में सहयोग इत्यादि राष्ट्रीय एकता के लिये अति आवश्यक है। यह कई प्रकार के हो सकते है। वाद विवाद, कवि सम्मेलन, सांस्कृतिक कार्यक्रम, debate एथेलेटिक प्रतियोगिता, छोटे बड़े खेलों में प्रतियोगिता, जल क्रीड़ा इत्यादि।

ये कुछ घंटों से लेकर कई दिन के कार्यक्रम का हो सकता है और एक से लेकर अनेक कार्य हो सकते है

यदि युवक समारोह, युवक तथा युवतियों के मिश्रण से है तो उसमें नियन्त्रण की अत्याधिक आवश्यकता है, दोनों के बीच स्वतंत्रता की आवश्यकता है किन्तु एक सीमा तक। इस आयु में सही मार्ग से भटकना आसान है। इसमें अनुभवी अध्यापिकाओं का होना आवश्यक है जो आधुनिक विचार की हों, किन्तु बुद्धि, नियन्त्रण तथा नम्रता से काम ले।

साधारणत: शिक्षक, परामर्श देने वाले तथा प्रधान प्रबन्धकर्त्ता होते हैं किन्तु युवक तथा महिलाओं की कमेटी में तथा कार्य करने के लिये दायित्व समर्पण करना चाहिये। युवकों के विचार को सदा सम्मान की दृष्टि से देखा जाये और जहां गलती होने की सम्भावना हो उन्हें परिणाम से आगाह कर देना चाहिये जिससे वे भविष्य में पग सम्भाल के रखें। युवक समारोह में भाग लेने के लिये प्रशिक्षण की आवश्यकता है। अपने कालेज या स्कूल के प्रतिनिधि की स्थिति में यह आवश्यक है कि स्कूल तथा कालेज के विशेष गुण उन सदस्यों में दिखाई पड़े। उन्हें ऐसा विवेक बनाना पड़ेगा जिससे उन्हें भय रहे कि किसी तरह अपनी संस्था या उन परिवारों से जहां से वे आते हैं किसी प्रकार का धब्बा न लग जाये और लोगों के सम्मुख मान हानि न हो। यही गुण राष्ट्र की तथा व्यक्ति की उन्नति में अत्यन्त लाभदायक प्रमाणित होंगे।

प्रतिनिधियों को अपने अपने झण्डे तथा विशेष वस्त्र प्रयोग करना चाहिये। कुछ सामाजिक तथा सांस्कृतिक कार्यक्रम ऐसे हो जिसमें विशेष प्रतियोगिता न हो किन्तु एक समूह होकर कार्य किया जाये। श्रमदान भिन्न भिन्न रूप में भिन्न-भिन्न व्यक्तियों द्वारा किसी उत्तम कार्य के लिये सामूहिक रूप में दिया जा सकता है। इसके लिए पर्याप्त नियोजन की आवश्यकता है और यह समारोह का एक उत्तम कार्य हो सकता है।

युवक समारोह मनोरंजन की प्रतियोगिता के लिये तथा सांस्कृतिक बातों के अध्ययन के लिये होना चाहिये। भारतवर्ष ऐसे देश में यह आवश्यक है कि युवकों तथा युवतियों को यह आदेश दिया जाये कि यह प्रत्येक का सौभाग्य है कि उन्होंने शिक्षा तथा अनेक प्रकार के लाभ प्राप्त किए हैं और इसके बदले उनका कर्त्तव्य है कि कुछ मात्रा में वे अपने भाग्यहीन देशवासियों की सहायता करें जिससे वे भी कुछ न कुछ इन का स्वाद ले सकें।

कार्य-क्रम आयोजन

सम्पूर्ण शारीरिक शिक्षा कार्य-क्रम में तीन भाग हैं। सेवा, इन्ट्राम्युरल तथा स्कूल के आपस में प्रोग्राम।

सेवा प्रोग्राम वह है जो राजकीय आवश्यकता है तथा शासकीय नियमों के अन्तर्गत कार्य करना अनिवार्य है। इसके अनुसार विद्यालय के कार्य तथा समय निर्धारित है। विद्यार्थियों की उपस्थिति अनिवार्य है। शिक्षा पर बल दिया जाता हैं तथा प्रत्येक बालक को, कम से कम, आवश्यक शारीरिक शिक्षा देने का ध्येय होता है, इन्ट्राम्युरल कार्यक्रम प्रत्येक बालक के लिये आयोजित होता है।

स्कूल के आपस की प्रतियोगिता में अधिक श्रेष्ठ श्रेणी के खेलनेवालों की प्रतियोगिता होती है,वर्त्तमान शारीरिक शिक्षा पाठ्यक्रम इस प्रकार विधिवत तथा विषय के सर्वश्रेष्ठ उच्च विचारों के अनुसार निर्धारित नहीं है जैसे अन्य विषय हैं।

लड़ाई के समय यह पता चला कि अधिकांश व्यक्ति शारीरिक रीति से योग्य नहीं थे। इस बात पर भी प्रकाश पड़ा कि स्कूल शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम मनोरंजन के उद्देश्य अर्जित करने में असफल रहे हैं।

इस अयोग्य कार्य क्रम का एक मुख्य कारण समय का अभाव रहा है। समुचित समय शारीरिक शिक्षा के लिये नहीं दिया गया है इस कारण शारीरिक शिक्षा के उद्देश्य प्राप्त नहीं हो सके हैं। शारीरिक शिक्षा की सुविधायें भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्द्ध नहीं हो सकी है। पाठ्यक्रम के निर्माण करने में शैक्षणिक रीति के ऊंचे स्तर की पद्धति का प्रयोग नहीं किया गया है।

शारीरिक शिक्षा के पाठ्यक्रम निर्माण करने का आधार

पाठ्य क्रम के निर्धारित करने में दो मुख्य विषय पर ध्यान करना उचित है।

उस समाज की आवश्यकता जहाँ पाठ्यक्रम चलाया जायेगा तथा बालकों की विशेषता एवं आवश्यकतायें जिनके लिये पाठ्यक्रम निर्माण किया जा रहा है। बालक की आवश्यकतायें दो प्रकार की होगी। वैयक्तिक तथा सामाजिक। वैयक्तिक आवश्यकतायें केवल व्यक्ति की स्वयं के लिए होंगी साथ ही उसके सामाजिक सम्बन्ध का भी ध्यान रखना होगा। शिक्षा का एक विचित्र दायित्व है जहाँ उसे सामाजिक एवं वैयक्तिक आवश्यकताओं को साथ ही पूरा करना है। सामाजिक आवश्यकताओं के कारण स्कूल के ध्येय निर्धारित किए जायेंगे किन्तु यह किस प्रकार होगा, बालक की प्रकृति के अनुसार निश्चित किया जायेगा।

कार्य क्रम के चुनाव का सिद्धान्तः—

शारीरिक क्रिया के सिद्धान्त

शरीर की बड़ी मांस पेशियों का एवं विस्तृत शारीरिक गति का होना जो तीव्रता एवं शक्ति के साथ किये जायें।

बालक के बढ़ाव एवं विकास से सम्बन्धित लक्ष्य के द्वारा पाठ्यक्रम निर्धारण का आदेश होना चाहिये।

वैयक्तिक शारीरिक योग्यता एवं शक्ति के अन्तर का ध्यान रखना चाहिये तथा उसके लिये उचित उपाय उपलब्द्ध करना चाहिये। जहां तक सम्भव हो कार्यक्रम बाहर खुले में होना चाहिये।

मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त

प्राकृतिक खेलों का अधिकतर उपयोग होना चाहिये। लिंग एवं आयु की मनोवैज्ञानिक विशेषताओं के अनुसार क्रिया निर्धारित होनी चाहिए।

वैयक्तिक विशेषताओं तथा अन्तर का पूर्ण ध्यान होना चाहिए। संवेग

उत्तेजित करने वाली क्रियाएँ विशेष रूप से रखी जायें। क्रिया में रुचि एवं प्रगति का ध्यान रखा जाये। उचित समय एवं सीखने के उपाय उपलब्ध हों।

सामाजिक सिद्धान्त

क्रिया अवकाश के समय प्रयोग करने योग्य हों।
क्रिया सामाजिक उन्नति दायक हों।

पाठ्यक्रम सामाज के आदेश एवं आवश्यकता के अनुसार हो। वैयक्तिक चरित्र विकास की सामग्री बहुतायत से हो। वैसी क्रियायें होनी चाहिये जो वर्त्तमान सामाजिक संस्था को प्रतिविम्बित करती हैं तथा भविष्य की रुचि एवं भावनाओं का ध्यान रखती हैं।

क्रियायें ऐसी हों जो आजीवन, अपने घर या उसके आस पास की जा सके।

भारतीय बालकों की आवश्यकतायें।

डील डौल एवं आसन प्रशिक्षण शरीर की मांस पेशियों एवं आन्तरिक अंगों का विकास, शारीरिक बल एवं रोग को दूर रखने की शक्ति। गतिवाही कौशल, स्नायु-मांस पेशी समन्वय एवं ताल। आत्मनियन्त्रण एवं आत्म शासन का प्रशिक्षण, स्पोर्टस्मैनशिप का प्रशिक्षण। उपयुक्त खेल के मैदान, संगठित एवं निरीक्षित खेल। कम से कम एक घंटा प्रति दिन शारीरिक क्रिया, खेल, व्यायाम एवं स्वास्थ्य की आदतें स्वस्थकर वातावरण तथा स्कूल की दशा, उचित चिकित्सा एवं स्वास्थ्य निरीक्षण एवं परीक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा प्रशिक्षित व्यक्ति जो निरीक्षण कर सकें।

पाठ्यक्रम तालिका

शिक्षा कार्य की निपुणाता के लिये समय का समुचित उपयोग होना आवश्यक है। यह एक जटिल समस्या है तथा इसे अनेक तथ्य प्रभावित करते हैं। इनमें ये मुख्य हैं। स्कूल वर्ष की अवधि, दैनिक स्कूल अवधि, दैनिक छुट्टी तथा अवकाश का समय, विषयों की अनिवार्यता, इन विषयों का बालक के दृष्टिकोण से पारस्परिक महत्व, विभिन्न प्रकार के विषयों का थकान से सम्बन्ध, थकान के सामान्य तथ्यों तथा इन तथ्यों का अवकाश, विश्राम के घंटे

आदि से सम्बन्धित महत्ता, सम्पूर्ण प्रकार सामान्य व्यायाम के प्रति समय का प्रयोग तथा विद्यार्थियों की संख्या एवं पृथक कक्षाओं की संस्था।

पाठ्यक्रम--

पाठ्यक्रम से पढ़ाई की श्रेणी का विषय समूह सूचित होता है जिसका एक विधिवत क्रम तथा सीमित समय होता है। आयोजित अनुभवों का यह क्रमिक प्रबन्ध ही पाठ्यक्रम के विचार की पूर्ति करता है। शारीरिक शिक्षा में भी इसी प्रकार शारीरिक शिक्षा के आयोजित अनुभव का क्रमिक प्रबन्ध शारीरिक शिक्षा के पाठ्यक्रम के विचार की पूर्ति करेगा।

शारीरिक शिक्षा पाठ्यक्रम में यद्यपि निश्चित स्कूल के विषय आयोजित है तथापि स्कूल के अतिरिक्त कार्यक्रम भी जैसे इन्ट्राम्युरल, एक प्रकार से पाठ्यक्रम के अर्न्तगत ही आता है।

अध्ययन का पाठ्यक्रम---

पाठ्यक्रम की सामग्री जो किसी विषय की शिक्षा के लिये विधिवत की गयी हो वह अध्ययन का कोर्स है। यह आवश्यक है कि बालकों की शिक्षा, प्रजातांत्रिक भावनाओं से आदेशित हो इसी प्रकार समाज एवं परिवार का सहयोग प्राप्त हो सकेगा। शारीरिक शिक्षा पाठ्यक्रम के निर्धारित करने में, अवस्था का विश्लेषण, शिक्षित किये जाने वालों की विशेषता का अनुमान, प्रोग्राम का ध्येय एवं उद्देश्य तथा अवस्था या परिस्थिति, विद्यार्थियों की विशेषता, ध्येय एवं उद्देश्य से सम्बन्धित कार्यक्रम के चुनाव पर ध्यान देना आवश्यक है। इसके साथ ही, सम्बन्धित मूल्य की कसौटी, क्यों कि अनेक क्रियाओं में से कोई एक सर्वश्रेष्ठ तथा उत्तम होगी; रुचि की कसौटी, कार्य-वाही उपयोगिता की कसौटी, परिपक्वता की कसौटी, अनुभव की कसौटी जिसमें जो कार्य करना है उसमें प्रारम्भिक अनुभव प्राप्त हो, सुरक्षा की कसौटी, प्राप्त सफलता की कसौटी जिसमें कार्य उद्देश्य प्राप्त करने में सहायक तथा ध्येय के अन्तर्गत हो आदि पाठ्यक्रम के निर्धारित करने में सहायक होंगे।

शारीरिक शिक्षा पाठ्यक्रम की सामग्री—

समायोजन की क्रियायें--

समायोजन की क्रियायें व्यक्तिगत आवश्यकता के अनुसार दी जाती है।

ये विशेषत: चिकित्सा व्यायाम का रूप लेती हैं। यह चिकित्सा एवं स्वास्थ्य परीक्षा के पश्चात् ही निर्धारित किया जा सकता है।

छोटे बड़े खेलकूद, स्पोर्ट्स एथलेटिक्स, पानी के खेल-इनके अन्तर्गत प्रत्येक प्रकार के खेल आते हैं। जहाँ तक सम्भव हो क्रिया बाहर खुले स्थान में होनी चाहिये। इन के द्वारा प्राकृतिक गति का प्रशिक्षण हो जाता है। जो व्यक्ति प्राकृतिक गति में प्रशिक्षित हो जाता है वह अपने शरीर को भली भांति प्रयोग कर सकता है। इससे तनाव में कमी तथा सुरक्षा की सम्भावना है। आन्तरिक अंगों की क्रिया सुचारू रूप से होती है। विशेष महत्व का विषय यह है कि इसी प्रयोगशाला में व्यक्ति जीवन स्तर के बहुमूल्य विषयों को सीखता है। अच्छे स्पोर्ट्समैन की भावना, इमानदारी से खेलना, दृढ़भक्ति, समन्वय, आज्ञा पालन, दूसरे के अधिकार की मान्यता आदि पर तर्क वितर्क से कुछ लाभ नहीं किन्तु खेल के मैदान में इन गुणों का व्यक्ति में प्रदर्शन होता है तथा उच्च श्रेणी प्राप्त करने की चुनौती होती है। व्यायाम के अतिरिक्त ये क्रियायें व्यक्ति के अन्दर के तनाव को कम करती हैं। इन के द्वारा शान्ति एवं संतुलन प्राप्त होता है। ये विश्वास एवं उत्साह के आन्तरिक स्त्रोत को जागृत करती हैं।

स्वदेशी शारीरिक शिक्षा कार्य तथा लोक रीति के कार्य--

इसके द्वारा मनोरंजन, व्यायाम आदि के अतिरिक्त राष्ट्रीय गौरव का शैक्षणिक लाभ होगा।

आत्मपरीक्षा के प्रतिद्वन्दिता तथा आत्म सुरक्षा की क्रिया—

इसके द्वारा व्यक्तिगत योग्यता का अनुभव होगा तथा अपनी सुरक्षा करने की विद्या प्राप्त होगी।

आधारभूत कौशल---

चलना, दौड़ना, चढ़ना, फेंकना, लटकना, कूदना, उछलना, तथा ले जाना जो प्राकृतिक गति हैं वे ही प्रत्येक प्राकृतिक क्रियाओं की आधारभूत तथ्य हैं। इनके वास्तविक तथा उचित रूप से क्रियाशील करने ही में उत्तम कौशल की प्राप्ति हो सकती है। आधार भूत कौशल के दैनिक जीवन में उचित प्रयोग से निपुणता, शक्ति, जमा करने तथा बल उत्तेजना में प्रगति होगी।

पर्यटन एवं बाहर खुले स्थान में क्रिया– कैम्पिग, हाइकिंग आखेट आदि **औपचारिक क्रियायें** :–मार्चिग, जिमनास्टिक, कालेसथेनिक्स आदि शारीरिक शिक्षा एवं स्वास्थ्य शिक्षा सम्बन्धित वैज्ञानिक अध्ययन का ज्ञान।

स्कूल के अन्दर (इन्ट्राम्युरल) शारीरिक कार्यों का संगठन

यह दो लैटिन शब्दों से बना है Intra (अन्दर) तथा Mural (दिवार) जिसका अर्थ है दीवाल के अन्दर या स्कूल के अन्दर खेल कूद के कार्य जो स्कूल के अन्दर विद्यार्थियों में आपस में चलाया जाये उसे Intramural कहते हैं। इसका प्रमुख ध्येय है प्रत्येक के लिये खेल तथा खेल प्रत्येक के लिये।

विद्यालय के शारीरिक शिक्षण कार्यक्रम में आदत, प्रवीणता, भाव और ज्ञान इत्यादि की शिक्षा दी जाती है तथापि इन्ट्राम्युरल कार्यक्रम के द्वारा ये और उत्तम रूप से उत्पन्न किये तथा बढ़ाए जा सकते हैं। इस कार्यक्रम में प्रत्येक विद्यार्थी को इच्छापूर्वक भाग लेने का समय मिलता है और एक ही स्कूल के विद्यार्थी आपस में एक दूसरे से खेलते और बाज़ी लेते हैं।

शारीरिक शिक्षा का सबसे आनन्दमय कार्यक्रम यही होता है, क्योंकि इसके द्वारा औसत दर्जे के लड़के को भी अवसर मिलता है जिस से स्पर्द्धा की तृप्ति की भावना और खेल के आनन्दमय बहुमूल्य अनुभव प्राप्त किया जा सके। इस कार्यक्रम के द्वारा प्रसन्नता तथा शिक्षा सम्बन्धी लाभ प्राप्त किए जाते हैं। यह जीवन विकास के लिये अत्यन्त आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति को किसी न किसी प्रकार स्पर्द्धा की भावना प्राप्त हो। शारीरिक शिक्षा ही सर्वोत्तम साधन इसके लिये प्रतीत होता है।

इन्ट्राम्युरल के लक्ष्य–प्रत्येक विद्यार्थी के लिये योग्यता पर ध्यान न देते हुये प्रतियोगिता में भाग लेने का अनुभव। प्रतियोगिता हर एक स्तर पर और भिन्न भिन्न कार्यों में होती है जिसके कारण कोई छूटता नहीं। भिन्न भिन्न कौशल तथा चातुर्य के सीखने का उत्साह तथा अवसर देना। नेतृत्व, अनुशासन तथा अनुकरण की शिक्षा तथा अवकाश। सामाजिक सम्बन्धों तथा मैत्रीभाव का विकास जो कक्षा के अन्दर नहीं हो सकता है। यहां एक दूसरे से खुल कर मिलने का अनुभव, एक दूसरे को पहचानने में सहायक, अपनी आयु में मिलना इत्यादि अनुभव, जीवन के लिये अत्यन्त लाभदायक हैं। सामुदायिक भावना या

किसी जत्थे में होने की भावना वा प्रकाश का अवसर देना। उच्च कोटि के खिलाड़ी के गुणों के विकास का अवसर देना। खुशी, आनन्द तथा आमोद प्रमोद देना। दिल बहलाने वाले या विश्राम देने वाले स्पोर्ट्स या खेल से मानसिक तथा शारीरिक स्वास्थ्य प्रदान करना। यह किशोरावस्था में अत्यन्त आवश्यक तथा उपयोगी है। स्कूल में प्रवेश के समय खेल ऐसे होने चाहिये जो आसानी से सीखे जा सकें तथा जिसमें खेलने से आनन्द आये।

वर्त्तमान जीवन के बोझ तथा स्कूल के परिश्रम से विश्राम तथा मन बहलाव देना। ऐसे कौशल तथा योग्यता के लिए अभ्यास देना जो दूसरे स्कूलों तथा कालेज के साथ खेलों में व्यवहार में लाया जा सके। खेल तथा शारीरिक कार्यों में एक ऐसी रुचि उत्पन्न करना जो आजीवन रहे न कि जब तक कार्य अनिवार्य हो तभी तक रहे। प्रशिक्षण विद्यालयों में छात्र शिक्षकों को अवसर प्रदान करना जिससे वे प्रतियोगिता का संगठन तथा संचालन में अभ्यास का अनुभव प्राप्त करें तथा अधिकारियों का कर्त्तव्य तथा रेफरी करना सीखें।

इन्ट्राम्युरल का संगठन—इसका संगठन शारीरिक शिक्षा विभाग के द्वारा होना चाहिये। इससे शारीरिक शिक्षा के बढ़ाने में बहुत सहायता मिलती है क्योंकि इसमें स्कूल के सम्पूर्ण विद्यार्थीगण अपने अपने ग्रुप में भाग ले सकते हैं। विद्यार्थियों की रुचि, सहायता तथा निर्देश इसकी सफलता के लिये आवश्यक है। इसका यह अर्थ नहीं कि शिक्षकों के निर्देशन की आवश्यकता विद्यार्थियों को नहीं। उनका निर्देश तथा सहानुभूति पग पग पर आवश्यक है। इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि इन्ट्राम्युरल में शिक्षक व विद्यार्थी किसी एक का कोई खास जोर इस पर न रहे।

इन्ट्राम्युरल निर्देशक—संगठन तथा संचालन का प्रधान दायित्व, नियम तथा उद्देश्य को निर्धारित करता है। इन्ट्राम्युरल की सफलता की कुंजी निर्देशक ही हैं। वह फुर्तीला, कर्मठ तथा दूरदर्शी होता है। विद्यार्थी तथा शिक्षक दोनों का ही प्रेमपात्र होता है। इन्ट्राम्युरल कमेटी का सभापति होता है। निर्देशक शारीरिक शिक्षा विभाग का प्रमुख या कोई अनुभवी शिक्षक हो सकता है। चुनाव उसके अनुभव के आधार पर होना चाहिये।

शिक्षक निरीक्षक—प्रत्येक खेल किसी न किसी शिक्षक की आधीनता

और नियन्त्रण में होता है जिसमें वह निपुण है तथा उस खेल के प्रति उसे अनुराग है और वह उसे बताना चाहता है। वह इन्ट्राम्युरल सभा का, अपने पद के कारण सदस्य होता है। सम्पूर्ण कार्य उसी की देख रेख में होता है। आवश्यकता अनुसार काट छाँट, तैयारी, खेल का प्रकार, मैदान की तैयारी तथा अधिकारियों की नियुक्त करता है। उसका स्थान विद्यार्थियों तथा निर्देशक को सम्बन्धित करना है।

विद्यार्थी प्रबन्धक—इन्ट्राम्युरल बिभाग का अधिकतर कार्य विद्यार्थी प्रबन्धकों के द्वारा होता है। इसमें सीनियर तथा जूनियर मैनेजर्स नियुक्त किये जाते हैं। इनमें से एक विद्यार्थी, विद्यार्थी प्रबन्धक नियुक्त किया जाता है जो इन्ट्राम्युरल निर्देशक की सहायता करता है। बहुधा निर्देशक सलाहकार की स्थिति में होता है तथा विद्यार्थी प्रबन्धक को वास्तविक कार्य की अनुमति देता है। सीनियर मैनेजर्स के कार्य कार्यक्रम तैयार करना, विभिन्न टीमों को उनके खेल एवं खेल के स्थान की सूचना, प्रचार, प्रोत्साहित करना, प्रतियोगिता के तथ्य एकत्रित करना, जूनियर सहायकों को दायित्व सौंपना तथा कार्यक्रम का सामान्य निरीक्षण आदि हैं।

ओफिसियलस् (Officials)—इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम की सफलता उत्तम ओफीसियेटिंग पर निर्भर करती है। स्कूल के शिक्षक जो नियम से परिचित हैं, अन्य इन्ट्राम्युरल कमेटी के सदस्य या प्रत्येक टीम का एक रेफरी के द्वारा उत्तम ओफीसीयेटिंग सम्भव है। इन्ट्राम्युरल निर्देशक शारीरिक शिक्षा अध्यापक भी इस कार्य में सहयोग देंगे। यदि कोई शारीरिक प्रशिक्षण विद्यालय उस स्थान पर हो तो उन से उचित सहायता प्राप्त हो सकती है। इन्ट्राम्युरल ओफिसीयेटिग एसोसियेशन भी कहीं स्थापित की जाती है तथा उसके द्वारा प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

इन्ट्राम्युरल हैंड बुक (Intramural Hand Book)—यदि सम्भव हो तो इन्ट्राम्युरल हैंड बुक की प्रथा होनी चाहिये। इसके द्वारा विद्यार्थियों को इन्ट्राम्युरल विभाग का, उसके संगठन, संचालन, नियम, नेतृत्व, कार्यक्रम, अंक प्रणाली तथा अन्य सूचनायें जो उन्हे प्राप्त होनी चाहिये सरलता से प्राप्त होती हैं।

हाऊस कैप्टन : वह अपनी यूनिट का प्रमुख होता है और टीम के चुनाव

में सहायता देता है। उसके हाऊस के सभी खिलाड़ी उसकी निगरानी में रहते है। जिस स्थान पर जो खेलने योग्य हैं उन्हें वह स्थान देता है। इन्ट्राम्युरल कमेटी में उसका स्थान महत्वपूर्ण है तथा उसके द्वारा विद्यार्थियों का विचार कमेटी के सम्मुख लाया जाता है।

यूनिट कोच : प्रत्येक हाऊस का अपना कोच हो सकता हैं जो प्रशिक्षण दे। इनके द्वारा प्रशिक्षण तथा अभ्यास का समय नियुक्त किया जाता है और हाऊस के नियम बनाये जाते हैं जिस से उस हाऊस के सदस्य खेल में भाग ले सकें।

टीम कैप्टन : प्रत्येक टीम के लिये एक कैप्टन नियुक्त होता है। वह तालिका जिसमें दिनांक, स्थान, समय इत्यादि खेल के दिये होते हैं अपने पास रखता है। टीम का पूर्ण दायित्व उसी के ऊपर होता है विशेषत: खेल के मैदान में।

इन्ट्राम्युरल कमेटी : यह एक प्रजातान्त्रिक संगठन है। अतएव आपस में एक दूसरे को समझने तथा सहायता की भावना होनी चाहिये।

सभापति—इन्ट्राम्युरल निर्देशक प्रत्येक मीटिंग का सभापतित्व करता है। उसकी अनुपस्थिति में विद्यार्थी सभापति स्थान ग्रहण कर सकता है।

मंत्री—(यूनिट के प्रतिनिधियों में से चुना हुआ) मीटिंग का विवरण रखता है। उसके दो सहायक मंत्री होने चाहिये। एक मैदान तथा साधनों की देख भाल करने के लिये तथा दूसरा रेकार्ड रखने के लिये।

कोषाध्यक्ष—(सदस्यों में से चुना हुआ) आर्थिक व्यय तथा लाभ का लेखा रखता है।

विशेष पद : प्रोजेक्ट आफिसर प्रसिद्धि तथा सूचना आफिसर, पारितोषिक तथा जलपान इत्यादि।

प्रतियोगिता के यूनिट

हाऊस प्रणाली—विद्यार्थी वर्ष के प्रारम्भ में किसी हाऊस में अपनी शारीरिक योग्यता परीक्षा के अनुसार रखे जाते हैं। इस बात का ध्यान रखा

जाता है कि सब हाऊस बराबर रहें। प्रत्येक हाऊस अपना कैप्टन चुनता है। प्रत्येक हाऊस यूनिट के रूप में ए०, बी०, सी०, इत्यादि वर्गों में प्रत्येक खेल में भाग लेता है। लड़के लड़कियों के लिये खेल पृथक होते हैं। मनोरंजन के कार्यक्रम के अवसर पर दोनों साथ होते हैं। यह छात्रावास के लिये अति उत्तम प्रणाली है।

जहाँ छात्रावास न हो वहाँ Vertical System के आधार पर हाऊस काम करता है। इसमें विद्यार्थी आरंभ से अन्त तक उसी हाऊस में रहते हैं। प्रत्येक हाऊस में प्रत्येक आयु तथा कक्षा के विद्यार्थी होंगे। हाऊस के कोई भी नाम दिये जा सकते हैं। यदि Horizontal System का व्यवहार करना हो तो इसमें कक्षा के अनुसार जिसमें विद्यार्थी अपने ग्रुप में भाग लेते हैं, होगा। प्रत्येक ग्रुप के लिये प्रतियोगिता होगी।

यह आसान है लेकिन इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम की दृष्टि से ठीक नहीं। विशेष विषय के अनुसार भी ग्रुप बन सकते है। जैसे इतिहास जीवविज्ञान, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान इत्यादि। रूचि के अनुसार भी ग्रुप बन सकते हैं। भौगोलिक दृष्टि से तथा मुहल्ले के आधार पर ग्रुप बन सकता है।

इन्ट्राम्युरल के कार्यक्रम

विद्यार्थियों की रुचि का ध्यान रखते हुये जो सुविधा उपलब्ध हो उनके आधार पर अनेक खेलों में से कुछ ध्यान पूर्वक चुन लेना चाहिए। जैसे, एथेलेटिक्स, स्वदेशी खेल, बड़े छोटे खेल, मनोरंजन कार्यक्रम, कमरे के अन्दर के खेल, पानी के खेल, स्काउटिंग कार्यक्रम, उन मन बहलाव के खेलों पर ज़ोर देना चाहिए जिनके गुण भविष्य जीवन में उपयोगी हों।

इन्ट्राम्युरल का समय

इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम का समय स्कूल के शारीरि शिक्षा कार्यक्रम से पृथक है और पृथक समय पर होता है। बार-बार के खेल से ही रुचि जीवित रखी जा सकती है। समय के निश्चित करते समय इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि ज्यादा से ज्यादा विद्यार्थी कार्यक्रम में भाग ले सकें।

संध्या समय स्कूल के बाद, स्कूल कुछ पहिले बन्द किया जा सकता है। यह हफ्ते में दो दिन हो सकता है।

दोपहर– हफ्ते में एक दिन आधे दिन के लिए दिया जाये जैसें शनिवार जिसमें इन्ट्राम्युरल कार्यक्रम हो। छुट्टी के दिन।

रात्रि के समय— अच्छे जिमनेजियम में यदि प्रकाश का प्रबन्ध है तो कुछ कार्यक्रम हो सकता है। टिफीन की छुट्टी में, स्कूल आरम्भ होने से पहले खाली घंटे में भी हो सकता है इन्ट्राम्युरल कार्यक्रम सम्पूर्ण वर्ष होना चहिए।

इन्ट्राम्युरल में पारितोषक रुचि तथा उत्साह के लिए यह आवश्यक है कि परिश्रम तथा सफलता को मान्यता दी जाये। यह किसी न किसी पारितोषिक के रूप में हो सकता है। परितोषिक के आर्थिक मूल्य का कोई महत्व नहीं है। ये मान पत्र, मेडिल, पुस्तक, कालेज कलर, कप, शील्ड, मानपट पर नाम-छोटे झंडें, इत्यादि के रूप में हो सकते हैं।

इन्ट्राम्युरल प्रतियोगिता के कुछ विशेष नियम प्रत्येक विद्यार्थी एक ही टीम में खेलें। स्कूल के प्रथम टीम के लड़के इसमें न खेलें। जो टीम उन लड़को को खिलायें जो वर्जित हो तो उन्हें दण्ड देना आवश्यक है। जो खिलाड़ी खेल के अच्छे गुणों के अनुसार भद्र कार्य नहीं करता वह निकाल दिया जाए। जो स्वस्थ न हो वे न खेलें। स्कूल में प्रत्येक बालक को खेलने का अवसर दिया जाये। किसी टीम में कोई भी बालक बिना भाग लिए न रह जाए। किसी खेल के लिए कोई आर्थिक लाभ न हो,

प्रोटेस्ट के नियम केवल नियम के सुझाव तथा वर्जित विद्यार्थी के खेलने के कारण—ऐसे नियम, स्थान के अनुसार परिवर्तित हो सकते हैं।

इन्ट्राम्युरल सूचना तथा प्रचार रुचि बढ़ाने के लिए विद्यार्थियों को तरह-तरह सूचित करते रहना चाहिए। इसके द्वारा दूसरे विद्यार्थियों को जिन्हें रुचि नहीं है उनकी रुचि जागृत होगी। जो खेल रहे हैं उनका उत्साह बढ़ेगा।

सूचना तथा प्रचार से विभाग का कार्य सुगम तथा उत्तम होगा क्योंकि इसकी सूचना सभी को होगी और प्रत्येक अपने को इसके लिए तैयार करेगा।

प्रचार का माध्यम विद्यालय की पत्रिका, नोटिस बोर्ड पर, पर्चे तथा विज्ञापन दैनिक पत्रिकाओं द्वारा।

प्रचार की सामग्री कार्यक्रम, दिनांक, स्थान, अधिकारियों के नाम, किसी विशेष चीज की जिसे लोग पसन्द करते हो। कार्यक्रम की विशेष बातें। टीम को सफलता तथा प्रगति। पिछला परिणाम।

अंक प्रणाली यह पता लगाने के लिए कि पूरे वर्ष के अन्तर्गत किस व्यक्ति या टीम ने अच्छा किया

३ अंक प्रत्येक विजय के लिए २ अंक बराबर के लिये, १ अंक पराजित होने पर, ० न खेलने पर।

संरक्षित यह शारीरिक शिक्षकों का उतरदायित्व है कि खेल में खतरनाक चीजें उपस्थित न हों और यदि सम्भव हो तो उसका उचित उपाय करें। इसके निम्नलिखित उपाय हैं:—

डाक्टरी जांच खेलने के लिए यह जांच आवश्यक है। उचित शारीरिक तैयारी होती है। शरीर की तैयारी कार्य के लिये होनी चाहिए। बीमारी या चोट के बाद डाक्टरी आज्ञा, शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में भाग लेने के लिये होना आवश्यक है। अस्वस्थकर बातों की रोक, एक ही ग्लास से पानी पीना, फर्श पर थूकना, मल मूत्र का ध्यान कि यह उचित स्थान पर हो। एक ही तौलिया व्यवहार करना, एक दूसरे का यूनिफार्म जो स्वच्छ न हो पहनना।

आवश्यकता से अधिक अभ्यास जीतने के ध्यान से नहीं होना चाहिये। शक्ति के बाहर कार्य कभी नहीं होना चाहिये। सदैव पराजित होना या सदैव सरलता से विजय प्राप्ति रोकना चाहिए इसके द्वारा व्यक्तित्व पर हानिकर भावनाओं को तथा उनके प्रभावों को रोका जा सकता है।

प्रत्येक चोट की सही चिकित्सा होनी चाहिये यह स्कूल के कर्त्तव्य के अन्तर्गत चोट से बचने के जितने उपाय या सामग्री हो सदैव उपलब्ध हो।

प्रतियोगिता सदैव अपने ग्रुप में हो जो एक शक्ति योग्यता, ऊँचाई वजन के हों। सामान तथा सुविधायें सही रखना चाहिये। फिसलने वाले फर्श,

मैदान जो समतल नहीं हैं, जो सामान सुरक्षित नहीं हैं अतएव कार्य के योग्य न हो उन्हें ठीक करें। अच्छे अधिकारी हों, सही तथा प्रशिक्षित नेतृत्व होना आवश्यक है क्योंकि इसकी अनुपस्थिति में अनेक हानि की सम्भावना है।

स्कूलों के आपस में शारीरिक शिक्षा प्रतियोगिता कार्यक्रम का संगठन

स्कूलों के आपस में खेल इत्यादि से शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम की उन्नति होती है। ये प्रतियोगितायें शिक्षा के उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही होनी चाहिए जैसे स्वास्थ्य, खाली समय का सदोपयोग, अच्छी नागरिकता तथा चरित्र निर्माण। ये प्रतियोगितायें एक अच्छे अनिवार्य शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम के स्वर्णिम गुण हैं और ऐसा समझा जा सकता है कि एक अच्छे इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम का उत्तम परिणाम है। कार्यक्रम में आपस के स्कूलों में, जो एक बराबर के हैं, खेल इत्यादि होते हैं।

स्कूल कालेज या जिला स्पोर्ट्स संस्था का उद्देश्यः— भिन्न भिन्न स्कूल में विद्यार्थियों में मेल उत्पन्न करना, इन संस्थाओं में उच्च कोटि के खेल का स्तर रखना। इन खेलों को आर्थिक लाभ के लिए नहीं खेलना चाहिए तथा इनसे राष्ट्रीय संगठन की भावना उत्पन्न करना चाहिए। यह निम्नलिखित से प्राप्त किये जा सकते हैं:— स्कूल के बाहर के खेलों को बढ़ावा देने से, वार्षिक प्रतियोगिता तथा एथेलेटिक प्रतियोगिता तथा भिन्न भिन्न मौसम के खेल की प्रतियोगिताओं के करने से। नगर के स्कूलों के, एक नगर से दूसरे नगर के स्कूलों, जिला तथा प्रान्तीय प्रतियोगिता के द्वारा, खेल दिवस समारोह तथा प्रदर्शनी से खेलों तथा एथेलेटिक्स में क्लीनिक करने से हो सकते हैं।

स्कूलों की प्रतियोगिता के कुछ विशेष उद्देश्यः—जितनी प्रतियोगिता हो वे शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम के फलस्वरूप होनी चाहिए। खिलाड़ियों या खिलाड़ी को किसी स्कूल, शहर या सिखाने वाले के नाम के लिए नहीं खेलना चाहिए। खेल या स्पोर्ट्स ऐसे हों जो जीवन पर्यन्त खेले जायें। प्रतियोगितायें शारीरिक शिक्षण के कार्यक्रम के परिणाम स्वरूप होना चाहिए।

प्रत्येक विद्यार्थी अर्थात् सम्पूर्ण विद्यालय के खेलने पर ज़ोर देना चाहिये न कि केवल कुछ ही विद्यार्थियों पर जो स्कूल की टीम में हों। स्कूलों के सभी कार्यक्रम का प्रबन्ध करने का दायित्व स्कूल के ही सदस्यों की कमेटी का होना चाहिये।

विद्यार्थियों में आत्मविश्वास तथा कार्य करने की भावना की उत्पत्ति के लिये टीम की देख रेख का भार उन्हीं को सौंप देना चाहिये, विजय की चेष्टा में सफाई से खेलना, नम्रता, दया, आत्मनियन्त्रण तथा जिस स्कूल से खेल हो रहा हो उसके प्रति मैत्रीभाव सदैव रहना चाहिये। अच्छे खिलाड़ी के जो आदर्श हैं वे खेलने, देखने वाले, जीतने या हारने वाले सभी के लिये एक है। कोचिंग अभ्यास ज्यादा देर तक या आवश्यकता से अधिक नहीं होनी चाहिये।

प्रतियोगिता का प्रबन्धः-प्रबन्ध का सम्बन्ध उत्तरदायित्व से है। स्कूल की आपस की प्रतियोगिताओं में उचित प्रबन्ध के न होने से असंतोष होता है और जनता भी आलोचना करती है।

श्रेष्ठ प्रबन्ध का अर्थ है चातुर्य के साथ नियोजन। इससे कठिनाई छोटी छोटी चीजों पर ध्यान व देने में होती हैं। छोटी छोटी बातों को ध्यान में रखने के लिए चेक लिस्ट (check list) होना चाहिए जिसमें प्रत्येक आवश्यकता की वस्तु तथा कार्य लिखे हों और उसके पूरा हो जाने पर उसे काट देना चाहिये। साधारणतः इस लिस्ट में, आफिशियल्स के खिलाने के दिन, सामान का इकट्ठा करना, विज्ञापन तथा दूसरे विज्ञापन के सामान, डाक्टर, टिकट, साधनों की देख भाल तथा मरम्मत, दर्शकों के लिये बैठने का प्रबन्घ, मुख्य अतिथि, उनका स्वागत तथा स्कूल के कार्यक्रम से उनका परिचय, टीमों का अतिथि सत्कार तथा दैनिक व्यय से उनका परिचय, आने जाने की सुविधायें, समय इत्यादि, भिन्न भिन्न कमेटी, उनका उत्तरदायित्व, सूचना, पत्रकारों को निमन्त्रण, शौचालय तथा जलपान गृह का आयोजन इत्यादि होते हैं।

चेक लिस्ट का विस्तार

कार्यकर्त्ता—विद्यार्थियों से सहायता लेना चाहिये। स्कूल के अध्यापक गण, स्कूल के निम्न श्रेणी के परिश्रम कर्त्ता।

प्रचार—दैनिक पत्रिकाओं में, पोस्टर्स, निमन्त्रण, प्रेस, बैन्ड, बीच की छुट्टी में मनोरंजन का कुछ प्रबन्ध।

सामान—यूनिफार्म, गेंद या खेल का सामान, आफिशियल्स की आवश्यकता की चीजें। पिस्तौल, कार्टरीज. झण्डी, स्कोरबुक, घड़ी, सीटी।

सुविधायें—खेल का मैदान, खम्भे, गेट टिकट बेचने का स्थान, पीने का पानी, शौचालय, बैठने का इन्तजाम, सवारियों के खड़े होने का इन्तजाम।

संगठन—आने वाली टीमों को लिखना, समय तथा तिथि पक्की करना, फिक्सचर भेजना, सुविधायें बतलाना, उनकी आवश्यकताओं के विषय में पूछना।

इन्टर स्कूल शारीरिक शिक्षा प्रतियोगिता एसोसियेशन:—स्कूल के आपस के शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम प्रतियोगिता के संगठन एवं संचालन के लिए एक संगठित संस्था की बहुत आवश्यकता है। जिसे स्थिति या स्थान में संगठन संस्था स्थापित हो उसको सभापतित्व सदैव एक ऐसा व्यक्ति करे जो स्कूलों के निरीक्षण का अधिकार रखता है। जैसे, जिला में डिस्ट्रिक्ट इन्सपेक्टर आफ स्कूल्स। रीजन के कार्यक्रम में उस रीजन के डिप्टी डाइरेक्टर। प्रदेश के कार्य क्रम में शिक्षा निर्देशक।

सम्पूर्ण नगर को जोन्स या क्षेत्र में विभाजित कर उस जोन का एसोसियेशन स्थापित किया जा सकता है। इस प्रकार कार्य करने में, संगठन एवं संचालन में अत्यन्त सरलता होगी।

शारीरिक शिक्षा सुविधायें

शारीरिक शिक्षा की उपयुक्त सुविधायें उसके ध्येय एवं उद्देश्य पर निर्धारित हैं। सुविधायें इस प्रकार की होनी चाहिये जिनके द्वारा विद्यार्थियों के उन उचित कौशलों, आदत एवं भावनाओं के सीखने में सरलता हो, जिन्हे संस्था मान्यता प्रदान करती है।

आधुनिक शारीरिक शिक्षा पाठ्यक्रम की उन्नति के कारण जिस में सम्पूर्ण विद्यार्थीगण के लिये स्पोर्ट्स आदि संयुक्त कर दिये गये हैं, उचित स्थान एवं सुविधाओं की मांग बढ़ गयी है। उपयुक्त सुविधाओं को उपलब्ध करना ही आज की समस्या है। आवश्यक सुविधायें दो भागों में विभाजित हो सकती हैं। बाहर खुले में तथा घर के अन्दर। यह प्रमाणित है कि बाहर

खुले में क्रिया कहीं अधिक संतोषजनक एवं स्वस्थकर होती हैं। घर के अन्दर की सुविधा का उसी समय प्रयोग होता है जब बाहर का मौसम क्रिया में बाधक होता है। आधुनिक शारीरिक शिक्षा प्राकृतिक गतियों पर विशेष बल देती है अतः लम्बे चौड़े खेल के मैदान की आवश्यकता होती है। यह खेल के मैदान भी एक प्रकार से कक्षा ही हैं। अतः इनकी उचित देख भाल तथा इन में उचित साधन का होना आवश्यक है। आधुनिक शारीरिक शिक्षा ने बाहर खुले में पदार्पण किया है।

यह उचित है कि प्रत्येक संस्था कम से कम एक पूर्ण नाप के स्तर का खेलने का क्षेत्र प्रत्येक टीम के खेल के लिये तथा व्यक्तिगत स्पोर्ट के लिये जिस का अधिक प्रचलन हो, उपलब्ध करें। यह आवश्यक है कि इतने खेल के मैदान एवं कोर्टस हो जिनमें प्रत्येक लड़का प्रति दिन उन खेलों में भाग ले सके जिसमें उस की रूचि है। उपयुक्त साधनों का आयोजन ही आवश्यक नहीं किन्तु यह आबश्यक हैं कि ये सुविधायें विद्यार्थियों के द्वारा सरलता से प्रयोग के लिये प्राप्त हो सके। खेल को प्रत्येक रीति से सरल करना आवश्यक है। स्कूल तथा कालेज की साधन की सुविधायें इस प्रकार हो सकती है:—

(१) एक ४०० मीटर का ट्रैक जिस में उपयुक्त रन वे (Runway) हो तथा फील्ड इवेन्ट्स के लिये पिट हो (२) प्रत्येक विद्यार्थी वर्ग के लिये पृथक फुटबाल फील्ड जिसमें हाकी भी खेला जा सके। (३) एक बासकेट बौल कोर्ट, दो वौली बाल कोर्ट, तथा निम्नश्रेणी के खेलों के लिये उचित स्थान। (४) साफ्टबाल डाइमन्ड (५) एक टेनिस कोर्ट प्रत्येक ७५ विद्यार्थियों के लिये। (६) एक जिमनेज़ियम (७) एक स्वीमिंग पूल (८) इन डोर रिक्रियेशन रूम जिसमें सुविधाये हो।

जितनी बाहर की सुविधायें हो वह संस्था से ज्यादा दूर न हो। खेल के मैदान का क्षेत्र प्रारम्भिक स्कूल के लिये कम में कम २ एकड़, मिडिल स्कूल ४ एकड़, हाई स्कूल ७ एकड़ तथा कालेज के लिये १२ एकड़ होना चाहिये।

जिमनेजियम की बनावट एवं देख भाल– जिमनेजियम स्कूल बिल्डिंग के एक सिरे पर बनाया जा सकता है या खेल के मैदान के समीप बनाया जा सकता है। आधुनिक विचार के अनुसार जिमनेज़ियम को एक ऐसा स्थान

बनाना चाहिये कि एक से अधिक कार्यक्रम हो सके। विदेशों में जिमनेज़ियम के अन्दर एक पूर्ण बास्केट बाल कोर्ट का निर्माण किया जाता है जिस में हज़ारों लोगों के बैठने का प्रबन्ध भी होता है। भारतवर्ष ऐसे देश में आर्थिक कमी के कारण यह सम्भव न हो किन्तु जिमनेजियम जहाँ तक हो सके बड़ा बनाना चाहिये। हाई स्कूल के लिये कम से कम ६०'×९०' तथा कालेज के लिये ८०'×१९०' होना चाहिये। छत २० फुट से ऊंची होना चाहिये। फर्श यदि सम्भव हो तो लकड़ी की होनी चाहिये। यदि सिमेंन्ट की हो तो बहुत चिकनी नहीं होनी चाहिये। दीवार ठोस तथा चिकनी होनी चाहिये क्योंकि उस में आपरेटस् फिट किये जायेंगे। खिड़कियां ८' से ऊपर होनी चाहिये। प्रकाश का उपयुक्त प्रबन्ध होना चाहिये। खिड़की एवं दरवाजे बड़े होने चाहिये तथा बाहर की ओर खुलना चाहिये। सुविधा के अनुसार छत, पक्की या खपरैल या शीट की हो सकती है। गर्डर के सहारे कई एक आपरेटस फिट किये जा सकते हैं। जिमनेजियम के आपरेटस , हटाने वाले होने चाहिये जिस से प्रयोग के बाद वे वहां से हटाये जा सके तथा दूसरे कार्य के लिये प्रयोग में आ सकें। फर्श पर चारो ओर किसी प्रकार की बाधा न हो। बिजली की रोशनी का उचित प्रबन्ध होना चाहिये। बैडमिन्टन आदि खेल के चिन्ह रंगीन पेन्ट से लगाये जा सकते हैं। जिमनेज़ियम के जो खुलने के स्थान हो वहां बरामदा बनाने में धूप तथा बरसात के पानी से रक्षा होगी। कहीं कहीं बरामदा भी प्रयोग में आ जाता है।

जिमनेजियम के आपरैटस ५० विद्यार्थियों के लिये। बालबार्स ३ खंड के १२, बाल्टिग हौर्स २, वार्लटिंग बाक्स ४, हौरिजोन्टल तथा पैरलल वार्स १ बीम २, वैलेन्सिग बेन्च ६, रोप ४, रोप लाडर ३, कोको मैट ६, बड़े कोको मैट ६, छोटे क्वायर मैट ६, पन्च बैग १।

जिमनेजियम के सामने के सिरे के कोने में शावर, ड्रेसिंग रूम, शौचालय होना आवश्यक है। जिमनेजियम की बनावट इस प्रकार होना चाहिये कि उस की धुलाई हो सके। सामान रखने के लिये स्टोर रूम हो। मैट आदि जो मैले या फटने वाले हो उन्हे किसी ऊंचे स्थान पर रखना चाहिये। उन्हे समय समय पर धूप में रखना चाहिये। मैट आदि जमीन पर खींच कर कभी न लाये जायें। फर्श बचाने के लिये उस पर आपरेटस भी न खींचें जायें।

कपड़े के गद्दे पर खोल होना आवश्यक है जिन्हें उचित समय पर धुलवाना चाहिये। जिमनेज़ियम डैम्प प्रूफ हो जिस से सीलन न आ सके।

स्वीमिंग पूल– प्रत्येक आयु के व्यक्तियों के लिये तैरना एक संतोष जनक क्रिया है। भारतवर्ष की जलवायु के लिए यह एक उत्तम स्पोर्ट माना जाता है जो वर्ष के अधिकांश समय तक किया जा सकता है। इस के द्वारा सम्पूर्ण शरीर का उत्तम व्यायाम सम्भव है। मनोरंजन एवं शारीरिक क्रिया के अतिरिक्त भारतवर्ष ऐसे देश में जहां नदी नाले आदि बहुतायत से हैं तथा जहां बाढ़ के आने में कोई रोक थाम नहीं हैं वहां के प्रत्येक व्यक्ति को तैरना अनिवार्य रूप से सीखना चाहिये। इससे अपनी रक्षा तथा दूसरों की सहायता हो सकती है। जिस नदी, तालाब, पोखरे का पानी शुद्ध हो वहां तैरना सम्भव हैं। स्वीमिंग पूल आधुनिक समय में एक अनिवार्य साधन सा प्रतीत होता है।

स्वीमिंग पूल की बनावट :—यह अंधेरे में नीचे की सतह में नहीं बनाना चाहिये। ऐसे स्थान में होना चाहिये जहां पर्याप्त रोशनी हो। पूल ऐसी दिशा में होना चाहिये जहां सूरज की रोशनी बहुतायत से मिल सके। पूल की सतह एवं दीवाल हलके रंग के चिकने ईंट या टाइल की बनी होनी चाहिये। स्कूल के लिये ६०'×४२' का पूल पर्याप्त होगा। इसकी गहराई एक सिरे पर ३', क्रमशः दूसरे सिरे तक १०' की होनी चाहिये। ढलान क्रमिक होनी चाहिये, लेन्स Lanes के लिये गहरे रंग के टाइल्स ७' की दूरी पर लगाना चाहिये।

Diving Board १, ३, ५, १० मीटर की ऊंचाई पर होना चाहिये। इस में स्प्रिंग बोर्ड तथा फिक्सड बोर्ड दोनों होंगे। जितना ऊंचा डाईविंग बोर्ड होगा उतनी ही पानी की गहराई होनी चाहिये।

वैसे पूल उत्तम होते हैं जिसमें शुद्ध पानी का आना सदैव जारी रहता है। थूक एवं अन्य सामग्री पानी की सतह पर से बाहर निकालने के लिए गहरे Scum gutters बने होने चाहिये। यह तैरने वालों के पकड़ने के काम में भी आता है, पूल के चारों ओर के स्थान की दूरी ६' से ८' की हो। यह स्थान चिकना या फिसलने वाला नही होंना चाहिये।

दर्शकों के लिये एक पृथक दरवाजा होना चाहिये तथा उनके बैठने का स्थान पूल से दूर हो जिससे किसी प्रकार के कीटाणु प्रवेश न कर सके।

पानी को शुद्ध रखने के लिये chloronating या brominating तथा a fillering system का प्रयोग होना चाहिये ।

पूल के प्रयोग के समय एक प्रशिक्षत शिक्षक का निरीक्षण अनिवार्य है, उसके साथ कोच, तथा लाइफ गार्ड का होना भी आवश्यक है । ये व्यक्ति उत्तम तैराक एवं जान बचाने की विद्या जानने वाले होना चाहिये । कृत्रिम स्वांस की प्रणाली का उत्तम ज्ञान होना चाहिये । जब तक निरीक्षक उपस्थित न हो, किसी को पूल के अन्दर जाने की आज्ञा नहीं होनी चाहिये । पूल के प्रयोग करने वालों को स्वास्थ्य शिक्षा देना भी आवश्यक है । दैनिक, साप्ताहिक तथा मासिक रिकार्ड रखना आवश्यक है । इसमें प्रयोग करने वालों की संख्या, समय, ताजे पानी का आना, पानी शुद्ध करने का उपाय एवं दवा आदि का लेखा रखना चाहिये । पानी का अलकलाईन रिएक्शन (Alkaline reaction) सदैव रखना चाहिये । पूल में जाने का मार्ग, लौकर रूम, शौचालय, स्नान का स्थान, पैर धोने का स्थान आदि होना चाहिये । इसका फर्श प्रत्येक दिन धुलना चाहिये । प्रयोग करने वाले प्रत्येक व्यक्ति की चिकित्सा एवं स्वास्थ्य परीक्षा होनी चाहिये । प्रयोग करने वालों को किसी प्रकार का रोग जैसे त्वचा के रोग, संक्रामक रोग आदि नहीं होने चाहिये । पूल के प्रयोग करने वालों को सर्व प्रथम शौचालय का प्रयोग करना चाहिये जिससे मूत्राशय खाली हो । पूल में प्रवेश के पूर्व साबुन लगा कर स्नान करना अनिवार्य है । जहां तक सम्भव हो दो व्यक्ति साथ तैरें । अकेले नहीं तैरने देना चाहिये । बाल छोटे कटे हुये नहीं हो तो टोपी का प्रयोग करना चाहिये । ध्यान रखना चाहिये कि कोई ऐसा कार्य न हो जिसके द्वारा पानी के अशुद्ध होने की सम्भावना हो । किसी प्रकार का मजाक पानी के अन्दर नहीं होना चाहिये । पानी के खेल नियमानुसार निरीक्षण के अन्तर्गत हो । महिलाओं को मासिक स्राव के अवसर पर पूल प्रयोग नहीं करना चाहिये ।

खेल के मैदान— बाहर खुले में खेल के मैदान के आयोजित करते समय निम्नलिखित पर ध्यान देना आवश्यक है । स्थान ऐसा हो जहां आसानी से पहुंचा जा सके । सामान्य क्षेत्र की ओर किसी प्रकार का घेरा होना आवश्यक है । जैसे सम्पूर्ण खेल के मैदान भी घिरे हो तो उसकी देख भाल अच्छी रीति से होगी । ऐसे खेलों में जिसमें दर्शकों के आने की संभावना है जैसे फुटबाल आदि का मैदान सामान्य खेल के मैदान के कोने में होना चाहिये । सही आयोजन

अत्यन्त महत्वपूर्ण जिससे मैदान छोटे छोटे हिस्सों में बट कर बरबाद न हो। जो स्थान प्रयोग में नहीं आते उसे उसी प्रकार छोड़ देना चाहिये। मैदान का कुछ अंश उनके लिये होना चाहिये जो खेल में प्रवीण नहीं है तथा जिन्हें भाग लेने में हिचकिचाहट होती हैं। मैदान समतल हो। पानी जमा नहीं होता हो तथा पानी निकलने का उचित प्रबन्ध हो। कहीं कहीं जमीन का फर्श पक्का भी बनाया जा सकता है, जैसे बास्केट बौल कोर्ट, टेनिस कोर्ट आदि। यह किस प्रकार का होगा, स्थानीय दशा एवं अर्थ पर निर्भर है। यदि प्राकृतिक बाधा मैदान में या समीप हो तो खेल के मैदान उनके सम्बन्ध में आयोजित होना चाहिये जिससे वे बाधक न हो सकें। खेल के मैदान तथा भिन्न भिन्न स्थान में में जाने के मार्ग का आयोजन ऐसा हो कि मैदान के बीच से जाना न पड़े। पानी का नल खेल के मैदान के समीप हो। खेल के मैदान के समीप स्टोर रूम हो जहां खेल के सामान जमा किये जा सकें तथा आसानी से प्रयोग के लिए निकाले जा सकें। खेल के मैदान की स्थिति इस प्रकार हो कि खेलने वालों को सूरज की रोशनी से कठिनाई न हो। खेल के मैदान के कोने में शौचालय होना आवश्यक है साथ ही मुंह हाथ धोने एवं स्नान करने की भी सुविधा हो। जहाँ अधिक जमीन उपलब्ध न हो तथा विभिन्न खेलों के लिये खेल का मैदान न बनाया जा सके वहां जो कुछ प्राप्त है उसी के उचित आयोजन से अनेकों समस्यायें सुलझ सकती हैं। जैसे, फुटबौल फील्ड में हाकी भी खेला जा सकता हैं। उसके चारों ओर ट्रैक भी बनाया जा सकता है। फील्ड इवेन्टस् के पिट बाहर की ओर कोनों के खाली स्थान में बनाया जा सकता है। क्रिकेट की पिच मैदान के बीच में बनाया जा सकता है। इसी प्रकार सावधानी एवं चतुरता से नियोजन करने पर मौसम के अनुसार कम से कम खेल के मैदान अधिक से अधिक कार्यों के लिये उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। जहां अपना खेल का मैदान प्राप्त करना असम्भव हैं वहां पब्लिक पार्क, सार्वजनिक खेलने के स्थानों, स्टेडियम आदि की सहायता से खेल तथा उसकी भावना जो जीवन विकास के लिए अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है विकसित रखी जा सकती है।

३

शारीरिक शिक्षा सामग्री

अन्य व्यापारिक अभ्यास की तरह सामग्री खरीदना भी एक कौशल है। भिन्न भिन्न सामग्री खरीदने के अपने तकनीक हैं जिन्हें खरीदने के लिये जानना आवश्यक है। खरीदने वाले को सामग्री की अच्छी पहचान होना चाहिये। उसे अच्छी तरह देख भाल कर तथा उसकी लागत के अनुसार कीमत समझ कर खरीदना चाहिए। खरीदने के समय दो बातों का ध्यान होना चाहिए। विद्यार्थियों की सेवा की उन्नति तथा अल्प व्यय। अच्छी खरीदारी वही समझी जायेगी जहां अच्छी सामग्री के लिये कम कीमत देना पड़े।

खरीदने के काम में सरलता एवं चतुरता आ सकती है, यदि सामग्री का पर्याप्त रेकार्ड रखा जाए। रेकार्ड के रखने से दाम तथा सामग्री के प्रयोग की अवधि का पूर्ण ज्ञान हो जाता है। साथ ही आवश्यकता से अधिक सामान जमा होने की सम्भावना नही होती तथा उचित सामान, उचित समय के लिए प्रस्तुत रहता है। सामान खरीदने का भार विशेषत: शारीरिक शिक्षा निर्देशक या एथेलेटिक डाइरेक्टर पर होता है। अत: उन्हें इस विषय में उचित ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिये।

सामान खरीदने में निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक है—वही सामान खरीदे जाएं जिन्हें मान्यता प्राप्त है तथा नियम के अनुसार हैं। सदैव उत्तम सामग्री लेनी चाहिये, दाम बाजार के भाव के अनुकूल हों, एक साथ अधिक मात्रा में सामग्री लेना लाभ कर है, सामग्री के प्रयोग करने के बहुत पहले उसे खरीदना चाहिये जिससे शीघ्रता न करना पड़े क्योंकि शीघ्रता में सामग्री समझना तथा अन्य स्थानों में देखना सम्भव नहीं हो सकता। सामग्री खरीदने में कमीशन लेना उचित नहीं क्योंकि इस में खरीदने वाले को ही

हानि होती है, सामग्री मान्यता प्राप्त दुकानों से जहां अच्छी सामग्री उचित दाम पर मिलने की सम्भावना रहती है, लेना चाहिए, यदि छोटी दुकान से अच्छी सेवा तथा उचित दाम पर सामग्री प्राप्त हो तो उन्हीं से सम्बन्ध रखना चाहिये। सम्पूर्ण सामग्री एक ही स्थान से न ली जायें। अच्छी दुकानों के बीच सामग्री की मात्रा बांट देनी चाहिए। बेचने वाले के कहने से नही किन्तु अपनी इच्छा एवं आवश्यकता के अनुसार सामग्री खरीदना चाहिए। वर्त्तमान सामान की लिस्ट बनाकर नयी सामग्री का आर्डर देना उचित है। दुकानों से सामग्री के दाम आदि के लिये टेन्डर मंगाना आवश्यक है। प्रत्येक सामग्री का आर्डर लिखित रूप या अपने फार्म पर होना चाहिए। जो सामग्री ठीक न हो उसे शीघ्र ही लौटा देना चाहिए।

सामग्री की देख माल—अच्छी सामग्री के प्रति व्यय उसी समय उचित समझा जाता है यदि उन्हें अच्छी तरह रखा जाये तथा प्रयोग किया जाये। वह निर्देशक जो अपनी सामग्री को उचित ढंग से सफाई, मरम्मत तथा सही रीति से उन्हें जमा कर नहीं रखते वह मितव्ययी नहीं कहे जा सकते। यदि सामग्री की उचित देख भाल की जाए तो उनका जीवन बढ़ जाता है तथा नई सामग्री के आने की सम्भावना रहती है। उचित देख भाल के लिए निम्नलिखित बातें आवश्यक हैं।

किसी व्यक्ति को नियुक्त करना जो सामग्री की देख भाल कर सके। वह सम्पुर्ण सामग्री का स्टाक रजिस्टर रखता है। जो विद्यार्थी स्कालरशिप या स्टाइपेन्ड के लिये कार्य करते हैं, वे इस कार्य को अच्छी रीति से कर सकते हैं। जो सामग्री का इन्चार्ज है उसे ही सामग्री बाहर देने का अधिकार हो।

सामग्री की सम्पूर्ण लिस्ट सदैव रहना चाहिये। उचित स्टोर रूम हों जहां सामग्री रखी जा सके। इन्चार्ज के अतिरिक्त दूसरों को स्टोर रूम में प्रवेश वर्जित होना चाहिए। विद्यार्थियों को उचित शिक्षा के द्वारा यह शिक्षा देना कि सामग्री स्कूल का धन है तथा उनके प्रयोग के लिये उन्हें दी जाती है। सामग्री का नुकसान उन की तथा उनके संस्था की हानि है। जो सामान बाहर ले जाते हैं अपने हस्ताक्षर से ले जायें। जो सामान बाहर जाते हैं उनका उचित रिकार्ड होना चाहिये। जो सामान ले जाते है यह उनका कर्त्तव्य है कि उसी रूप में उसे लौटा दें, जो सामग्री खेल में टूट जाती या मरम्मत के योग्य होती है उसकी

ओर उसी समय ध्यान आकर्षित कर देना चाहिये। कोई सरल उपाय सामग्री लेने तथा देना का निर्मित कर लेना चाहिये। प्रत्येक सामग्री पर संस्था का चिन्ह होना चाहिये। इन्ट्राम्युरल कार्यक्रम के लिये तथा स्कूल के बाहर की प्रतियोगिता के लिये उचित यूनिफार्म की आवश्यकता है। बराबर साफ यूनिफार्म विद्यार्थियों को देना चाहिये। टम्बलिंग तथा मल्ल युद्ध के गद्दे सदैव साफ रखना चाहिये। यदि उनके खोल हों तो उन्हे धुलाना चाहिये। चमड़े की बनी हुयी सामग्री सूखे स्थान में रखना चाहिये। यह ठंड़े स्थान में हो जहां सूखना सम्भव न हो। मैल हटा कर उस पर उचित प्रकार की चिकनाई जैसे ग्रीस आदि लगाना चाहिये। ये सामग्री शुद्ध वायु में रहे जिससे इन पर फफून्दी आदि न लगने पाये। स्टोर रूम में सूर्य के प्रकाश की भी आवश्यकता हैं जिस से हानि कारक कीड़े उपस्थित न हों। चमड़े की सामग्री को पानी से बचाना चाहिये। बुनी हुई सामग्री की धूल साफ कर देनी चाहिये। जो धुलने वाली सामग्री हैं उन्हें धुला कर रखना चाहिये। बुनी हुयी सामग्री को कीड़ों के काटने से बचाना चाहिये। लकड़ी की सामग्री पर सफाई तथा पालिश होनी आवश्यक है। उन्हें घुन लगने से बचाना चाहिये। जो लकड़ी जमीन के नीचे जाती है उसे अलकतरा या अच्छे रंग जिससे कीड़े न लगें, रंगना चाहिये, प्रत्येक सामग्री के रखने का उचित स्थान होना चाहिये। मौसम समाप्त हो जाने पर सामग्री की भली भांति सफाई कर उचित रूप से रखना चाहिये तथा समय समय पर उसे देखते रहना चाहिये।

टूटी हुयी सामग्री तथा जिनका प्रयोग न हो किसी ऐसे स्थान में रखे जायें जिससे वे सुरक्षित रहें। इनको मरम्मत के लिये प्रयोग किया जा सकता है। वही सामग्री हटा देनी चाहिये जो बिल्कुल बेकार हों। मरम्मत उसी सीमा तक हो जहां मितव्ययता हो। ऐसी मरम्मत से कोई लाभ नहीं हो सकता जो सेवा के योग्य न हो तथा कुछ समय तक काम न दे। बेकार सामान के बेंच देने से कुछ आमदनी हो सकती है।

सामग्री की आवश्यकता— स्कूल के शारीरिक शिक्षा के ध्येय के अनुसार सामग्री की आवश्यकता होगी। शारीरिक शिक्षा में सामग्री शिक्षा देने के साधन हैं। उचित सामग्री के न होने से प्रशिक्षण अपूर्ण होगा। यह अवश्य है कि सामग्री उपलब्ध करना आर्थिक अवस्था पर निर्भर है तथापि प्रत्येक स्कूल

एवं कालेज की यह चेष्टा होनी चाहिये कि उचित प्रोग्राम के चलाने के लिये कम से कम जो सामग्री की आवश्यकता हो उसे पूरी की जाये।

सामग्री उचित हो। कभी कभी यह देखा गया है कि वैसी सामग्री से कार्य चलाने की चेष्टा की जाती है जिनके द्वारा शिक्षा देने में कठिनाई होती तथा बालकों में रुचि उत्पन्न करने में बाधा होती हैं। उत्तम स्तर की सामग्री के प्रयोग करने से कार्य करने में रुचि बढ़ सकती है। सीखना सरलता से हो सकता है। आधुनिक शारीरिक शिक्षा तथा स्पोर्ट्स आदि में कितनी ही सामग्री है जो अनिवार्य है तथा उनके अतिरिक्त कार्य दुलर्भ ही नहीं असम्भव होगा। समय जानने के लिये स्टीप वाच, खेल के यूनिफार्म स्तर के गेन्द, बल्ले, पोल, गोला, डिसकस, जैवलिन आदि अनेक ऐसी सामग्री हैं।

शारीरिक शिक्षा एवं स्पोर्टस आदि के द्वारा उचित विकास के लिये तथा हानि से बचने के लिये पर्याप्त सामग्री, साधन एवं सुविधाओं का होना अत्यन्त आवश्यक है। प्रोग्राम का उचित रूप से चलना सामग्री पर उतना ही निर्भर है जितना गाड़ी के चलने के लिये पहिये।

४

नेतृत्व एवं व्यवसाय की तैयारी

सामाजिक दृष्टि से नेतृत्व की आवश्यकता है तथा यह आवश्यकता बहुतायत से है क्योंकि व्यवहार का नाप एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक लोगों के द्वारा ही पहुंचाया जाता है। अतएव इस बात की आवश्यकता है कि समाज के ऊँचे आदर्श नेताओं के द्वारा आने वाली पीढ़ी को दिये जायें। प्रौढ़ व्यक्तियों के नेतृत्व का नाप बालक है क्योंकि बालक वही करेंगे जो वे अपने बड़ों को करते हुये देखते है। वर्त्तमान बालक भूत के नेतृत्व का प्रतिविम्ब है। शारीरिक शिक्षा की उन्नति के कारण इस में नेताओं की संख्या कुछ बढ़ी है।

नेतृत्व की परिभाषा भिन्न भिन्न व्यक्तियों के द्वारा भिन्न भिन्न रूप में दी गयी हैं। विद्वानों का कहना है कि यह एक प्रभाव है तथा कुछ लोगों का कथन हैं, कि ये परिवर्त्तन के कार्यकर्त्ता हैं। कितनों का मत है, कि नेता वह है जो दूसरों को निर्देश देते तथा नेतृत्व करते हैं। यदि कोई नेता अपने कार्यों तथा प्रभाव के कारण दूसरों में परिवर्त्तन लाये तो वह सफल नेता समझा जाता हैं। शिक्षा कार्य भी नेतृत्व की परिभाषा के अन्तर्गत आता हैं। शिक्षक नेतृत्व करता हैं जिससे विद्यार्थी अपनी आवश्यकताओं का प्रदर्शन करें, कक्षा के कार्य में उचित भाग लें तथा कक्षा में एक सदस्य के रूप में व्यवहार करें। वह उनके लिये शिक्षा सम्बंधी सामग्री तथा साधन लाता है। शिक्षा का ध्येय यही हैं कि प्रत्येक बालक जो शिक्षा ग्रहण करता और शिक्षक के सम्पर्क में आता है उसके परिणाम स्वरूप ऐसा हो जाये कि जो भी उस के सम्पर्क में आये, वह उससे प्रभावित हो तथा उसके गुण दूसरे अपनाने की चेष्टा करें। सही नेतृत्व का अर्थ यही है तथा शिक्षक के नेतृत्व का अर्थ भी यही है।

नेतृत्व के गुण—साहस तथा उत्साह, निष्पक्ष, मैत्रीभाव, ईमानदार, न्यायी

दयालु, विस्तृत विचार, निष्कपट, चरित्रवान आदि हैं। विद्यार्थी जो कुछ शिक्षक से सीखते हैं वे भूल जा सकते हैं किन्तु शिक्षक का प्रभाव बहुत दिनों तक रहता है। हो सकता है आजीवन रहे। किसी स्कूल की उन्नति तथा अवनति शिक्षकों के ही हाथ में है। एक बुद्धिमान शिक्षक जो पूर्ण प्रशिक्षण तथा तैयारी में हो, जिस का व्यक्तित्व आनन्ददायक हो, जिसके जीवन का दर्शन दृढ़ आधार पर हो, उसके पास बच्चों को उत्तम नागरिक तथा समाज का आदर्श सदस्य बनाने का अधिक अवसर तथा साधन है, इस स्थिति में शारीरिक शिक्षा का शिक्षक स्कूल में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। प्रत्येक अध्यापक यहाँ तक कि एक उत्तम अध्यापक भी सफल शारीरिक शिक्षण का शिक्षक नही बन सकता। शिक्षक का शरीर सुडौल तथा विकसित होना चाहिये तथा अधिकतर खेलों और स्पोर्ट्स में तथा शारीरिक शिक्षण कार्यों में उसे कुशल होना चाहिए। उसे केवल करने ही वाला नहीं किन्तु ऐसा होना चाहिये कि वह अपना ज्ञान दूसरों को सिखा सके। उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली तथा आनन्द दायक होना चाहिये। उसे एक चरित्रवान तथा ज्ञानी पुरुष होना चाहिये तथा मानव सहानुभूति से पूर्ण होना चाहिये। उसके व्यवसाय तथा कार्य में एकता होनी चाहिये। एक सही शारीरिक शिक्षण का अध्यापक केवल अपने कार्य में दक्षता प्राप्त करने से ही नहीं होता। उसमें निम्नलिखित गुण आवश्यक हैं जो कि अध्यापक के व्यक्तिगत गुणों के आधार पर होंगे।

व्यवसायिक योग्यता—

जिस स्तर पर कार्य करना है उसी के योग्य शिक्षा में योग्यता होनी चाहिये जैसे सार्टिफिकेट, डिप्लोमा, बी० पी० एड०, एम० पी० एड, पी० एच० डी० इत्यादि। इस में व्यवसाय की खास प्रशिक्षण की आवश्यकता है जो एक, दो या तीन वर्ष में जैसी आवश्यकता हो किया जा सकता है। बिना प्रशिक्षण के किसी को इस व्यवसाय में रहने का कोई अधिकार नहीं।

साधारण शिक्षा की योग्यता—

जिस स्तर पर व्यवसायिक प्रशिक्षण होगा उसी स्तर की सामान्य शिक्षा की योग्यता भी आवश्यक है। क्योंकि सार्टिफिकेट के लिए अन्डर ग्रेजुएट तथा डिप्लोमा इत्यादि के लिये पोस्ट ग्रेजुएट होना आवश्यक है, इस के बिना प्रशिक्षण विद्यालयों में प्रवेश प्राप्त न हो सकेगा।

वैयक्तिक गुण :—

ऊपर दिये जा चुके हैं। भारतवर्ष में अधिकतर उच्च माध्यमिक स्कूलों के लिये ही शारीरिक शिक्षा के अध्यापक प्रशिक्षित किये जा रहे हैं। बच्चों के तथा प्रारम्भिक पाठशालाओं की आवश्यकताओं के लिये कोई उचित ध्यान नहीं दिया जा रहा है। यह सभी मानते हैं कि बच्चों के शारीरिक विकास की अत्यधिक आवश्यकता है किन्तु इस हेतु कुछ किया नहीं जा रहा है। बच्चों का शारीरिक विकास उन की नैसर्गिक प्रगति के लिये आवश्यक है। इस का दुखद परिणाम यह होता है कि ये बच्चे जब उच्च माध्यमिक स्तर पर पहुंचते हैं तो संगठित शारीरिक शिक्षण का पूर्ण लाभ नहीं उठा सकते हैं। कालेजों में भी खेल के प्रोग्राम के सिवाये विशेष कुछ नहीं है। ऐसी अवस्था में भविष्य के नेताओं में बहुत कुछ त्रुटियां रह जायेंगी।

साधारणतः प्रशिक्षण कालेजों में साधारण शिक्षक तैयार किये जाते हैं जो प्रायः सब विषयों से परिचित होते हैं किन्तु किसी एक विषय में विशेष निपुणता नही होती है। समय आ गया है कि विशेषताओं की ओर ध्यान आकर्षित हो। स्कूलों में शारीरिक शिक्षा के अध्यापक को केवल शारीरिक शिक्षा के लिये ही रखने की प्रथा है विचार करने से पता चलता है कि शारीरिक शिक्षा का अध्यापक यदि अन्य विषय का शिक्षक भी हो तो अधिक प्रभाव डाल सकता है और इस कार्य के लिये कुछ अधिक शिक्षक भी मिल सकेंगे। इसमें मत भेद हैं किन्तु इस पर विचार करना आवश्यक है।

वर्त्तमान शिक्षा दर्शन इस बात को मानता है कि हम करने के द्वारा ही सीखते हैं। सफल जीवन की नींव स्कूलों में ही डालनी चाहिये। इस लिये बच्चों को उन गुणों में जो जीवन को सफल बनाने के लिये आवश्यक हैं शिक्षित करना चाहिये। उनमें से एक लीडरशिप या नेतृत्व है जिसके आधार पर सहयोग, भक्ति, सामाजिकता इत्यादि गुण विकसित किये जा सकते हैं। शारीरिक शिक्षा से उत्तम माध्यम इस कार्य के लिये मिलना कठिन है।

यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि बच्चे ग्रुप या समूह में रहना चाहते हैं और अपने लीडर या नेता की बात सुनते हैं। इस गुण का उपयोग करना चाहिये। यह सत्य है कि प्रत्येक बालक लीडर नही बन सकता तथा उनसे बहुत

अधिक आशा भी नहीं की जा सकती है किन्तु अधिकतर बच्चों को ट्रेनिंग का अवसर दिया जा सकता है यह भी स्मरण रखना चाहिये कि इसके लिये समय की आवश्यकता है अतएव जिस पद पर भी बालक को रखा जाये उस पर उचित समय तक रहे। जो बच्चे नेता बनने योग्य हैं वे उसके चिन्ह शीघ्र दिखलायेंगे। इस बात पर ध्यान देना चाहिये कि आवश्यकता से अधिक लीडर के ऊपर ध्यान न दिया जाये। सम्भव है कि छोटी-छोटी आज्ञायें लीडर दे, तो भी ट्रेनिंग ऐसी होनी चाहिये कि प्रत्येक बालक अपना उत्तरदायित्व समझ सके।

नेतृत्व प्रशिक्षण के साधारण निर्देश:-(१) बच्चों को दायित्व दिया जाये जिससे वे अपने लीडर चुनलें। उनकी टीम का नाम तथा रंग पृथक हो।

(२) लीडर को साफ और ज़ोर से अच्छी तरह बोलने की ट्रेनिंग दी जाये। छोटी साधारण आज्ञा देने का अभ्यास दिया जाये जैसे दौड़ो, जाओ, रुको, बदलो, कूदो। यदि कुछ मिनटों तक पूरी कक्षा को आज्ञा बोलने का अभ्यास करया जाये तो यह अत्यन्त लाभदायक होगा। लीडर को अपनी रीति से आज्ञा देने का अवकाश देना चाहिये तथा अपने शब्द व्यवहार में लाने का अवसर मिलना चाहिये।

(३) प्रत्येक टीम में एक उपनायक चुना जाना चाहिए। कभी कभी ग्रुप को दो हिस्सों में विभाजित करलें जिसमें एक हिस्सा उपनायक के साथ हो।

(४) ध्यान रहे कि नायक तथा उपनायक दोनों टीम के सदस्य हैं इसलिये उनको अपनी बारी भी टीम के साथ लेना है।

नायक पद केवल नाम मात्र के लिये नहीं होना चाहिये बल्कि उत्तरदायित्व भी मिलने चाहिए। यह उत्तरदायित्व पहले सरल बाद में कठिन होने चाहिए। लाइन ठीक करना तथा अभ्यास की अवस्था लेना इत्यादि। नायक किसी भी बालक की अवस्था अपने आप न ठीक करे, नायक को ठीक काम करने पर उसकी प्रशंसा करनी चाहिये। आपरेट्स लाने तथा ले जाने की जिम्मेदारी नायक की होनी चाहिए। इसका अर्थ यह नही है कि वह अपने आप करे। जहां सहायता की आवश्यकता हो, वहां नायक आरम्भ करे किन्तु प्रत्येक बालक को सहायता देने का अवसर हो। नायक का कर्त्तव्य अध्यापक के आदेशानुसार कार्य करना है।

नेतृत्व करने का अवसर—ग्रुप का नायक बनाना या टीम का कप्तान, उप नायक, कक्षा का कप्तान, खेल का अधिकारी, कमेटी का सदस्य, गर्म करने की कसरत का लीडर।

नायक चुनने की विधि—(१) अध्यापक के द्वारा निम्नलिखित आधार पर चुनाव। (क) नैसर्गिक योग्यता। (ख) नायक बनने के गुण की झलक। (ग) रुचि। (२) कक्षा के द्वारा चुनाव। (३) कुछ टेस्ट पास करने पर नायक का चुनाव। (४) अपनी इच्छा प्रकट करने करने पर। (५) अपनी बारी से नायक बनना।

नायक की कसौटी—(१) क्या वह प्रजातान्त्रिक है ? क्या वह स्वतंत्रता से मिलता है और सब की सहायता करता है। क्या वह चतुर तथा दयालु है। (२) क्या उत्तरदायित्व लेता है ? क्या उसके ग्रुप का विश्वास उस पर है ? (३) क्या उसे अपने ग्रुप के प्रति चिन्ता रहती है ? क्या वह ग्रुप के भविष्य के लिये चिंतित तथा प्रयन्तशील है ? (४) क्या वह नये कार्य आरम्भ करने तथा नयी चीजो के करने में रुचि रखता है ? (५) क्या वह इमानदार है और अपनी गलती मानता है ? क्या वह अपक्षपाती है ? (६) क्या उसे अपने साथियों की सफलता पर गर्व होता हैं ? (७) क्या वह आदर करने वाला, अधिकारियों व नियमों को मानने वाला और पालन करने वाला है ? (८) क्या उसे सर्वदा आदेश देने की आवश्यकता होती है या वह अपने आप कार्य सम्भाल लेता है ? (९) क्या वह समय का पालन करता है ? यदि उसमें यह सब गुण हैं तो वह सफल नायक है।

नायक के पीछे चलना—नेतृत्व उसी समय सम्भव है जब कोई नायक के पीछे चलने वाला हो, वास्तविक प्रजातन्त्र नेतृत्व के अपनाये जाने पर निर्भर है। बालकों को यह समझने में कठिनाई नहीं होती क्योंकि यह उनके लिये स्वाभाविक जान पड़ता है। जब नायक का चुनाव अपने आप उसके गुणों की श्रेष्ठता के कारण सहपाठियों के वोट के कारण होता है तो उसके पीछे चलना स्वाभाविक है। नेतृत्व तथा पीछे चलने के योग से अनेक गुण विकसित किए जा सकते हैं। जैसे भक्ति, सामूहिक भावना आदि। शिक्षा कार्यक्रम में नेतृत्व, पीछे चलना तथा नागरिकता से पृथक नहीं किए जा सकते है।

अनुकरण के विकास की कसौटी—(१) क्या बालक नायकता को मानता

तथा सम्मान करता है तथा नायक के विचारों को महत्व देता है ? (२) क्या वह नायक के द्वारा दिये हुये कार्य को प्रसन्नता से करते हुए समूह से सहयोग करता है ? (३) क्या वह दूसरों के अधिकार को मान्यता देता या स्वार्थी है ? (४) क्या वह अपने आप को कर्त्तव्य के कारण बलिदान करता है ?

शिक्षक की समस्याएं—

जीवन में अनेक प्रकार की समस्यायें उत्पन्न होती हैं। समस्याओं का होना आवश्यक भी है। व्यक्ति पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा वह उसके व्यक्तित्व, प्रशिक्षण, अनुभव परिस्थिति आदि पर निर्भर करता है। वास्तविक व्यक्ति अपनी समस्याओं को सफलता की सीढ़ी बना देते हैं। जैसे पतंग वायु के विरोध में उंचा चलता जाता है वैसे ही व्यक्ति अपनी समस्याओं का सामना कर सफलता प्राप्त करता जाता है। शिक्षक के सम्मुख वैयक्तिक, व्यवसायिक, सामाजिक आदि समस्यायें उपस्थित होगी। स्कूल में अन्य शिक्षकों, कार्यकारणी कमेटी, अधिकारियों एवं छात्रों के साथ वैयक्तिक सम्बन्ध, समन्वय एवं समायोजन की समस्या आ सकती हैं। व्यवसायिकता में दूसरो के द्वारा हीनता की दृष्टि से देखा जाना, अनुचित पारिश्रमिक आदि की अनेक समस्यायें उपस्थित हो सकती है। समाज में पर्याप्त स्थान एवं सम्मान के न पाने से अनेक समस्यायें उपस्थित होती है। कुशल शारीरिक शिक्षक इन समस्याओं का उचित हल करने के योग्य है एवं ऐसा किया भी जा रहा है।

शारीरिक शिक्षा के सम्मुख आधुनिक स्थिति में कुछ सामान्य समस्यायें हैं जिनका परिणाम विशेष एवं महत्वपूर्ण है। उनका उचित हल, व्यवसाय एवं व्यक्ति दोनों के लिये आवश्यक है।

शारीरिक शिक्षा एक ऐसा विषय है जो समाज के द्वारा उचित रीति से समझा नहीं गया:—शारीरिक शिक्षा व्यवसाय संसार के अन्य सभी व्यवसायों की अपेक्षा प्राय: तुच्छ समझा जाता है। साधारण व्यक्ति को इस विषय का ज्ञान नहीं कि वह इस से क्या लाभ प्राप्त कर सकता है। जनता इसे सफल जीवन से सम्बन्धित नहीं कर पाती। बहुधा लोग इसे सह लेते हैं क्योंकि यह एक प्रकार की शिक्षा है। वर्त्तमान समय की शैक्षणिक संस्थाओं में भी शारीरिक शिक्षा को सब से अन्तिम स्थान दिया जाता है। सब से पहले आवश्यकता पड़ने पर पाठ्यक्रम से हटाया जाता तथा परीक्षा आदि में उतीर्ण होने के

लिये इसका कोई प्रभाव नहीं होता। प्राय: प्रत्येक संस्था में प्रवेश के लिये किसी न किसी विषय की आवश्यकता होती है किन्तु शारीरिक शिक्षा विषय का कोई उपयोग या स्थान दिखाई नहीं पड़ता। कागज की कार्यवाही के लिये शारीरिक शिक्षा नाम मात्र के लिए है। समय, स्थान, सुविधा, सामग्री, साधन सभी संतोष-जनक नहीं हैं। बालकों की आयु एवं आवश्यकता के अनुसार उन्हें विकास की क्रियायें प्राप्त नहीं होती। शारीरिक शिक्षक के सम्मुख अनेक विषय उसके लिये समस्या है, जिस के निवारण में उसका सहयोग आवश्यक है।

शारीरिक शिक्षा का दृढ़ स्थान नहीं हो सका है:—शारीरिक शिक्षा में विशेष रिर्सच नहीं हुई है। यह एक परम्परा सी चली आयी है। अनेक प्रश्न हैं जिनके उत्तर देने में शारीरिक शिक्षा असमंथ है। भारतवर्ष में इस की बहुत कमी है। बालकों की शक्ति, शारीरिक योग्यता आदि का उचित ज्ञान नहीं है। शारीरिक क्षमता अभियान के द्वारा कुछ स्तर निश्चित किये गये हैं जो सत्य प्रतीत नहीं होते तथा उन में कमी पायी जाती है। कोई भी राष्ट्रीय शारीरिक योग्यता का स्तर स्थित नहीं हुआ है। सैनिकों के लिये स्तर स्थित हैं किन्तु सर्व साधारण के लिये नहीं। अभी तक यह ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ, कि वे क्रियायें जो शारीरिक शिक्षा में हैं, किस आयु या कक्षा में बालकों को दी जाये, जिस से, अधिक से अधिक सीखने की निपुणता हो। यह भी ज्ञात नहीं कि व्यैयक्तिक सफलता का स्तर भिन्न आयु एवं कक्षा में दिये हुये शारीरिक शिक्षा क्रियाओं का क्या है? उत्तम मानव सम्बन्ध स्थापित करने के लिये शारीरिक शिक्षा का क्या महत्व है, किसी वैज्ञानिक मूल्यांकन करने के यन्त्र के द्वारा माप नहीं की गयी है।

अनुवादित विचार के विकास में शारीरिक शिक्षा का क्या प्रभाव है पता नहीं। ऐसे ही अनेक प्रश्न एवं समस्यायें हैं जिनका उचित उत्तर शारीरिक शिक्षा के द्वारा नहीं दिया गया है। यह शारीरिक शिक्षक की समस्या एवं उनका कर्त्तव्य है कि इनका उत्तर प्राप्त किया जाये। क्रियाओं का वैज्ञानिक प्रणाली से चुनाव, मूल्यांकन तथा समायोजन शारीरिक शिक्षा का केन्द्र है जिनका उचित उत्तर प्राप्त नहीं। किसी विशेष आयु या कक्षा के लिये अंग कौशल, ज्ञान तथा समायोजन पर उचित प्रकाश होना चाहिये। शारीरिक शिक्षक की यह समस्या है, कि वह उचित उत्तर के द्वारा अपने व्यवसाय एवं विषय को दृढ़ करे।

उचित नेतृत्व का अभाव–उचित नेतृत्व का बहुत अभाव है। शारीरिक शिक्षा व्यवसाय की ओर आकर्षण नहीं है। उच्चकोटि के प्रशिक्षित व्यक्ति इस में नहीं आना चाहते। भारतवर्ष में राजकीय अरुचि के कारण भी यह व्यवसाय उतना ही बढ़ा जितना बढ़ना चाहिये था। इस व्यवसाय को उचित आर्थिक सहायता नहीं प्राप्त हुई। यह सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा गया। इसके स्तर को ऊँचा करने की चेष्टा करना प्रत्येक शारीरिक शिक्षक का कर्त्तव्य है। इन समस्याओं ने उसके लिये एक विशाल रूप धारण कर लिया है तथापि इसका निवारण होना आवश्यक है। स्तर ऊंचा करना है। जनता एवं समाज को शिक्षित करना है, जिससे उन्हें यह ज्ञान प्राप्त हो कि जीवन के लिये यह एक ऐक प्रमुख विषय है जिसमें पूर्ण शिक्षित एवं उच्चकोटि के व्यक्तियों की आवश्यकता है।

स्कूल के पाठ्यक्रम का मूल्यांकन एवं उसमें परिवर्तन– शैक्षणिक पद्धति अपने स्थापित उद्देश्यों को अर्जित करने में असफल रही है। उसके स्वास्थ्य, नैतिक चरित्र, अवकाश का सदोपयोग, उत्तम पारिवारिक सदस्यता तथा उत्तम नागरिकता का ध्येय पूर्ण रूप से प्राप्त नही हो सका। मानसिक रोग की बढ़ती अनैतिकता, अपराध, आत्मिकता से अधिक संसारिक बातों पर बले अनियंन्त्रण शासन के प्रति शिथिलता, अधिकांश पारिवारिक समस्यायें। बाले अपराध, असमाजिकता तथा स्वार्थ आदि से यह ज्ञात होना आवश्यक है।

शिक्षा में केवल सूचना से सफल जीवन प्राप्त नहीं हो सकता। शिक्षा में व्यवहार का परिर्वतन, सामाजिक, शारीरिक, मानसिक तथा संवेगात्मक जीवन के क्रियाशीलता में उन्नति एवं उत्तमता आना आवश्यक है। इसके प्राप्त करने के लिये सम्पूर्ण शैक्षणिक संस्कार में यह स्थित कर देना आवश्यक होगा कि व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक आवश्यकतायें क्या है तथा इन अनुभवों को पाठ्यक्रम में सम्मिलित करना जिससे वांछनीय गुण प्राप्त हो सकें। परिर्वतन के द्वारा शारीरिक शिक्षा का स्थान इन गुणों के प्राप्त करने में स्पष्ट हो जायेगा। पाठ्य क्रम में शारीरिक शिक्षा को उचित स्थान देना होगा। यह एक बड़ी समस्या है जो शारीरिक शिक्षक के सम्मुख है।

निर्बल भारतवर्ष—भारत के नागरिकों का स्वास्थ्य स्तर से नीचा है। हम कठिन परिश्रम के योग्य नहीं। उचित शारीरिक योग्यता हमें प्राप्त नहीं।

अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता में हम सब प्रकार से पिछड़े हुये हैं। निपुणता का उचित स्तर प्राप्त करने के लिये शक्तिशाली शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम स्थापित होना आवश्यक है जिसके द्वारा सफल अनुभव का अवसर तथा मनोरंजन प्राप्त होगा जो शारीरिक मानसिक एवं संवेगात्मक एवं सामाजिक योग्यता के प्रति उत्तेजित करेगा। इसे प्राप्त करने के लिये शारीरिक शिक्षा बालकों की आवश्यकता रूचि तथा योग्यता के अनुसार आयोजित होनी चाहिये। हाई स्कूल तथा कालेज में प्रत्येक दिन एक घंटा शारीरिक शिक्षा होनी आवश्यक है। स्कूल के इन्ट्राम्युरल एवं स्कूल के आपस की प्रतियोगिता प्रोग्राम के कारण बहुत उन्नति सम्भव है। चेष्टा यह होनी चाहिये कि इन प्रोग्रामों में अधिक से अधिक व्यक्तिगत भाग ले सके तथा ये खेल प्रतियोगिता केवल जीतने के लिये नहीं किन्तु वास्तविक विकास के ध्येय से हों।

——

५

रेकार्ड एवं रजिस्टर

किसी भी विषय में रेकार्ड रखने तथा उससे सहायता या आदेश लेने से विषय उन्नति करता तथा स्थायी रहता है। शारीरिक शिक्षा में प्रगति अर्थ पूर्ण रेकार्ड के रखने में हुई है। इस रेकार्ड के रखने में अनेक चीजें आती हैं, जैसे विद्यार्थी सम्बन्धी भिन्न २ सूचनायें, कार्यक्रम की भिन्न भिन्न चीजें, सामान तथा साधन सम्बन्धी बातें, आदि। विशेषत: शारीरिक शिक्षा में रेकार्ड प्रत्येक बालक की योग्यता, भाव, सफलता, चेष्टा तथा उन्नति पर ध्यान देता है। इससे न केवल बालक की उन्नति का ही पता चलता है किन्तु शिक्षक के कार्य का मूल्य भी ज्ञात हो जाता है। उसे विधिवत करता तथा उसका विस्तार बतलाता है। रेकार्ड यदि केवल एक लेखा पत्र रखने के लिये हो तो उससे कोई लाभ नहीं। रेकार्ड के द्वारा शैक्षणिक ध्येय में सहायता मिलनी चाहिए। रेकार्ड अंक करने में सरल तथा समस्याओं के समझने में इन्हें ऐसे रखना चाहिए कि आवश्यकतानुसार शीघ्र ही प्राप्त हो। वर्ष के अंत में इन्हीं के आधार पर वार्षिक लेखा तैयार हो सकता है जो भविष्य के लिये आदेश दे सकता है।

रिकार्ड का क्षेत्र–(१) उपस्थिति लेखा, जिन्हें क्षमा किया गया है उनका लेखा। (२) जो साधन, सामग्री एवं सुविधायें वर्त्तमान हैं उनका लेखा तथा उनकी दशा अंकित करना (३) उन सामग्री एवं सुविधाओं का लेखा जिन्हें खरीदने के लिये आर्डर दिया गया है।, (४) परीक्षा, नाप, क्रमिक अंक, वर्गीकरण के परिणाम रखना, (५) प्रगति की रिपोर्ट पर ध्यान देना-अंक देना (६) स्वास्थ्य परीक्षा से प्राप्त एवं महत्वपूर्ण तथ्यों का रिकार्ड रखना (७) पाठ्यक्रम तालिका एवं खेल तथा स्पोर्ट्स तालिका रखना (८) मीटिंग तथा कान्फ्रेन्स आदि के दिनांक रिकार्ड रखना (९) घटना एवं चोट का रिकार्ड

रखना (१०) विद्यार्थियों को क्रिया में भाग लेने, तथ्य, समय जो दिया गया एवं प्रयोग हुआ, स्थान, खेल तथा स्पोर्ट के नाम का लेखा रखना (११) चुनाव करना, किसी कार्य के परिणाम तक देख भाल करना या सलाह देना। (१२) रिकार्ड एवं रिपोर्ट की एक प्रणाली स्थापित करना, (१३) बालक के चारित्रिक विकास पर प्रोग्राम के प्रभाव का रिकार्ड रखना, (१४) आवश्यक रजिस्टर रखना, (१५) जिस मात्रा में विद्यार्थी अभाव एवं निश्चयता शारीरिक, सामाजिक तथा मानसिक वृत्ति के प्रति प्रदर्शित करती है उनका लेखा रखना।

रजिस्टर—उपस्थिति लेखा रजिस्टर जो स्वस्थ हैं उनके लिये शारीरिक शिक्षा अनिवार्य है और उन्हें ७५ प्रतिशत उपस्थिति प्राप्त करनी चाहिए, अभ्यास तथा सिद्धान्त के कार्य का लेखा पृथक पृथक होना चाहिए, उन विद्यार्थियों को जो पहली टीम में खेलते हों सिद्धान्त के क्लास से अवकाश नहीं देना चाहिए जब तक वे उस समय स्कूल के लिये न खेल रहे हों। चिकित्सा तथा डाक्टरी के कारण से अनुपस्थिति मान्य है। प्रत्येक विद्यार्थी का व्यक्तिगत प्रगति लेखा तथा पूर्ण वर्ष का कार्य लेखा के आधार पर शारीरिक शिक्षा वियष पर अंक दिये जायेगें। इसमें एक मोटे रजिस्टर में प्रायः एक पृष्ठ पर एक विद्यार्थी का नाम होगा। प्रत्येक कक्षा के लिये ऐक रजिस्टर उपयुक्त होगा।।

खेल के सामान का स्टाक रजिस्टर—प्रत्येक पृष्ठ पर एक सामान का नाम यदि वह सामान अधिकता से प्रयोग हो। जो सामान अल्प प्रयोग के हैं उनमें तीन चार के नाम एक पृष्ठ में आ सकते हैं। प्रत्येक सामान के नीचे जहाँ से वे मिले हैं तथा मूल्य अंकित होना आवश्यक है। यदि सामान किसी से खो जाये तो उस से मूल्य ले लेना उचित है। जो सामान प्रयोग के योग्य न हो उन्हें एक पृथक स्थान पर लिख लेना चाहिए।

प्रत्येक वर्ष के अंत में पूरे सामान की जांच होनी चाहिये और एक मोटी लाल लकीर से समाप्त कर देना चाहिये जिससे नये वर्ष के आरम्भ ज्ञात हों। वर्ष के अन्त में उचित अधिकारी यदि सामान की जांच कर के हस्ताक्षर कर दें तो उत्तम है। इससे किसी प्रकार के अनुचित प्रयोग की सम्भावना नहीं होगी। जो आपरेट्स या फिक्सचर खेल के मैदान या जिमनेजियम में हो उनका भी लेखा रखना चाहिए। उनकी मरम्मत तथा देख-भाल का दिनांक तथा मूल्य अंकित रहना चाहिए।

गेम्स फण्ड का कैश रजिस्टर होना चाहिए– स्कूल की जो प्रथा हो उसी आधार पर यह रखा जायगा। शारीरिक शिक्षक अध्यापक के पास १० रुपये तक एडवान्स रहना चाहिए जिसके द्वारा वह आवश्यक छोटा कार्य या मरम्मत अपनी इच्छा से करा लें। इसके लिये भी एक रजिस्टर रखना आवश्यक है जिसमें दैनिक व्यय सही रीति से दिखाया जाये।

वार्षिक रिपोर्ट रजिस्टर—सम्पूर्ण तथ्यों की एक संक्षिप्त रिपोर्ट।

वैयक्तिक शारीरिक शिक्षा रेकार्ड रजिस्टर–इस रजिस्टर में व्यक्तिगत विद्यार्थी का उसके सम्पूर्ण स्कूल जीवन के शरीरिक शिक्षा का वर्णन होगा, जैसे, निपुणता रुचि, कौशल प्राप्ति, टीम में खेलना आदि, कल्चर या पारितोषिक की प्राप्ति, लीडरशिप के गुण, स्कूल के अतिरिक्त कार्यक्रम में रूचि, स्वास्थ्य तथा चिकित्सा परिक्षा, व्यक्तित्व, व्यवहार, चरित्र, शारीरिक शिक्षा निर्देशक की उसके प्रति भावना एवं विचार, वैयक्तिक दोष, किसी प्रकार का अवगुण।

शारीरिक परीक्षा तथा डाक्टरी जांच का रेकार्ड–इसके अन्तर्गत निम्न लिखित स्वास्थ्य सेवा आती हैं। समय समय पर चिकित्सात्मक परीक्षा, जो भी दोष पाया जाये उस की उचित चिकित्सा जब तक हो जाए जब तक उससे आराम न मिले। स्वास्थ्य सम्बन्धी सूचना प्राप्त करना, दैनिक स्वास्थ्य निरीक्षण, रोग अवरोध का प्रोग्राम, प्रारम्भिक चिकित्सा, स्कूल के व्यक्तियों के लिये स्वास्थ्य निरीक्षण, विद्यार्थियों को अवकाश देना।

डाक्टरी निरीक्षण फार्म (Medical Inspection form)

नाम··· ... ...जन्म तिथि .. ..

पता ·· ··· ··· ···· ··· ·· स्कूल ·· ··· ··· ··· ··· ··· ···

संक्रामक रोग का इतिहास .. ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···

पिता का व्यवसाय··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···· ··· ···

परिवार··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···

टीका लगा या नहीं··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···

तिथि				
स्कूल के वर्ष				
कक्षा				
ऊँचाई				
वजन				
सीने की चौड़ाई सांस के साथ				
,, ,, छोड़ कर				
कमर की चौड़ाई				
पोषण				
दृष्टि, दाहिना-बायां				
श्रवण दाहिना-बायां				
दांत तथा मसूड़े				
टान्सिल				
ऐडोनोयड्स				
गर्दन की ग्रन्थि				
स्पिलीन				
जिगर				
नाक				
त्वचा				
गुप्त रोग				
हृदय				
फेफड़ा				
कायफोसिस				
लोरडोसिस				
स्कोलियोसिस				
तोंद				
पैर				
नाड़ी की अवस्था				
हर्निया				
लगने वाली बीमारियां				
चिकित्सा की सिफारिश				
शारीरिक शिक्षा से अवकाश				
चिकित्सा जिमनास्टिक कक्षा की सिफारिश				
माता पिता को सूचना				

परिमाण का रिकार्ड

तिथि	माता पिता का कार्य	चिकित्सा	जिमनास्टिक चिकित्सा	परिणाम

परीक्षा--परीक्षा एक शैक्षणिक प्रणाली है, उन्नतिशील शारीरिक शिक्षा से यह पता चलता है कि बालक की शिक्षा उस समय तक पूर्ण नहीं होती जब तक उसे सुसंगठित एवं क्रमिक शारीरिक शिक्षा एवं स्वास्थ्य शिक्षा न दी जाये। कई एक दिशाओं से यह शारीरिक शिक्षा की आलोचना है कि शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम सुसंगठित नहीं है तथा परीक्षा स्तर से नीचे है। जब तक परीक्षा पर ज्ञान पूर्वक विचार न किया जाये, ज्ञान पूर्वक परिचालन न किया जाये तथा अनुवादित न किया जाये तब तक वह सामान्य शिक्षा का सहायक नहीं समझा जायेगा।

विद्यार्थियों की उचित सेवा के लिये उस में जन्मजात योग्यता तथा वर्त्तमान योग्यता का जानना आवश्यक है। सम्पूर्ण परीक्षाएँ इनमें से किसी एक की परीक्षा करता है। अधिकांश परीक्षाएँ सामान्य योग्यता या विशेष कौशल का मांप करती हैं। शारीरिक शिक्षक के लिये सामान्य गतिवाही योग्यता महत्व पूर्ण हैं। शारीरिक शिक्षा की उत्तम परीक्षा पद्धति केवल बालक की वर्त्तमान योग्यता की ही माप नहीं करती किन्तु भविष्य में योग्यता की पहुंच की माप करती है। प्रत्येक विद्यार्थी एक समान नहीं हो सकते। शरीर, प्रशिक्षण, लचीलापन, शक्ति विभिन्न इन्द्रीय एवं स्नायु मांसपेशियाँ समन्वय, स्तर पर से भिन्नता देखने पर ध्यान देना चाहिये। शारीरिक शिक्षा में उन्नति का माप आखों से देखा जा सकता है। प्रगति प्रत्येक शिक्षा का ध्येय है। बालक को अपनी प्रगति देख कर संतोष होता है। परीक्षा विशेष शैक्षणिक प्रयोजन तक ही सीमित होनी चाहिये।

परीक्षा निम्नलिखित ध्येय से होनी चाहिये। (१) समान विद्यार्थियों, को एक समूह में करने के लिये। यह लिंग, नाप, परिपक्वता, शक्ति, तीव्रता तथा कौशल के आधार पर किया जा सकता है (२) आदेश के लिये जिसके द्वारा प्रगति शीघ्रता से हो। (२) क्रमिक करने के लिये (४) प्रेरणा के लिये, (५) उद्देश्य अर्जित करने की प्रगति की माप के लिये, (प्र) शारीरिक उद्देश्य जैसे, शक्ति की प्रगति, मांस पेशियों की सहने की शक्ति रक्तसंचालन एवं मांस में सहने की शक्ति, शारीरिक आसन एवं शरीर बनावट में सफलता, पोषण की स्थिति (ब) सामान्य योग्यता में शक्ति विकास के लिये बुद्धि (स) ज्ञान की परीक्षा (द) चरित्र एवं व्यक्तित्व विशेषता में प्रगति (ध) स्वास्थ्य परीक्षा (६) रिसर्च के लिये परीक्षा। (इस के साथ मनोविज्ञान में परीक्षा एवं माप का अध्याय देखिये)

स्वास्थ्य के विचार (Concept of Health)–प्रथम बार जब पाठ्यक्रम से स्वास्थ्य को स्थान दिया गया था तो उस समय स्वास्थ्य का अर्थ शारीरिक आरोग्यता से था। व्यक्ति उस समय रोगी समझा जाता था जब उसे बिस्तर पर लेटे रहना पड़ता था अन्यथा वह निरोग समझा जाता था। शारीरिक दोष एवं रोग पर अधिक बल दिया जाता था। आधुनिक स्वास्थ्य के ज्ञान से यह पता चलता है कि मन या स्नायु की गड़बड़ी, स्वास्थ्य के लिये घातक है तथा संवेगात्मक दोष, शारीरिक दोष के समान हानिकारक एवं गहन है। आधुनिक स्वास्थ्य की परिभाषा है Health is considered that condition, Mental and physical, in which the individual is functionally well adjusted internally as concerns all body parts and externally as concerns his environment. इसका अर्थ है कि स्वास्थ्य अंगों की स्वस्थता एवं स्वास्थ्य व्यक्तित्व है। Health is that quality of life that renders the individual fit to live most and serve best.

स्वास्थ्य के निरीक्षण के लिये प्रत्येक स्कूल में एक स्वास्थ्य कमेटी की आवश्यकता है जो आदेश एवं नेतृत्व दे सके। एक स्कूल चिकित्सक का होना आवश्यक है जो चिकित्सा सम्बन्धी सलाहकार हो। संस्था में एक ऐसे व्यक्ति का होना आवश्यक है जिसका दायित्व स्कूल स्वास्थ्य से हो। उसे स्वास्थ्य सलाहकार कहा जा सकता है। यह स्थान शारीरिक शिक्षा निर्देशक को दिया जा सकता है। स्वास्थ्य सलाहकार का कर्तव्य, स्कूल की सफाई का निरीक्षण, वैयक्तिक स्वास्थ्य शिक्षा, बीमारी के पश्चात् स्कूल लौटने पर विद्यार्थी को देखना तथा उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति, बीमारी के कारण अनुपस्थिति की सूचना प्राधनाचार्य को देना, छोटे दोष आदि की चिकित्सा, अन्य शिक्षकों को स्वास्थ्य की सलाह देना तथा जिन विद्यार्थियों को आवश्यकता हो उन्हें चिकित्सक के पास भेजना आदि है।

स्कूल स्वास्थ्य प्रोग्राम का क्षेत्र, स्वस्थ्यकर स्कूल जीवन, स्वास्थ्य सेवा तथा स्वास्थ्य शिक्षा है।

स्वस्थकर स्कूल जीवन–स्वस्थकर स्कूल जीवन का एक विस्तृत अर्थ है। इसके द्वारा एक शुद्ध वातावरण, दैनिक स्वस्थकर स्कूल जीवन का संगठन तथा

इस प्रकार का शिक्षक विद्यार्थी सम्बन्ध हो जिसके द्वारा सुरक्षित एवं स्वच्छ स्कूल का निर्माण तथा उत्तम विकास जीवन के लिये प्राप्त हो। प्रत्येक स्कूल का यह कर्तव्य है कि वह अपने विद्यार्थियों को स्वच्छ वातावरण की परिधि में रखे। ज्ञान पूर्वक आयोजित, स्वास्थ्यकर रूप से प्रबन्धित, साधन पूर्ण, सुरक्षित एवं स्वच्छता से रखा हुआ स्कूल, बालक के स्वास्थ्य के विकास एवं रक्षा के लिये अति आवश्यक है।

स्वास्थ्य शिक्षक एवं निर्देशक, स्कूल को प्रति दिन भली भांति स्वास्थ्यकर रख सकता है। यदि किसी प्रकार बालकों पर स्कूल के कारण शारीरिक वा मानसिक जोर अधिक पड़ रहा हो तो वह एक अस्वास्थ्यकर दशा समझी जायेगी। इस ओर कुछ तथ्यों पर ध्यान देना आवश्यक है जैसे, स्कूल कितने घंटे होता है, घंटों का नम्बर तथा घंटे की अवधि, विद्यार्थियों पर बोझ, अध्ययन घंटे का प्रकार एवं नम्बर, क्रियाओं का स्थान, गृह कार्य, विश्राम के घंटों का नम्बर, अवधि तथा प्रकार, तथा पाठ्यक्रम के अतिरिक्त की क्रियायें।

स्वास्थ्य शिक्षा—स्वास्थ्य शिक्षा, सीखने के अनुभव का वह संगठन है जो लाभकर स्वास्थ्य ज्ञान, भावनाओं तथा अभ्यास के विकास की ओर आदेशित होता है। स्वास्थ्य सेवा तथा स्वास्थ्य स्कूल जीवन से बालक स्वास्थ्य विषय को बहुत सीखते हैं किन्तु स्वास्थ्य शिक्षा का वास्तविक अर्थ पृथक क्लास से है। स्वास्थ्य ज्ञान का आधार मत तात्पर्य बालक को स्वास्थ्य के विषय से संतोषजनक ज्ञान, लाभकर भावनाओं तथा उपयुक्त आदेश से परिपूर्ण करना है जिससे ऐसी आदतों का निर्माण हो जो संवेगात्मक, मानसिक एवं शारीरिक जीवन को और दृढ़ करें।

स्वास्थ्य शिक्षा से ही स्वास्थ्य व्यवहार सम्भव है। अज्ञान, पक्षपात, एवं संदेह दूर करना आवश्यक है। शारीरिक शिक्षा व्यक्ति को स्वस्थ रखने की धारणा रखता है। स्वास्थ्य का अर्थ रोग से केवल स्वतंत्रता नहीं किन्तु सब प्रकार की शारीरिक अंगों, मानसिक एवं सामाजिक निपुणता है।

व्यक्ति की पूर्ण परीक्षा वातावरण में तथ्यों के रेकार्ड, रोग के तथ्यों का रेकार्ड, विद्या अर्जित करने में तथ्यों के रेकार्ड, समायोजन के तथ्यों का रेकार्ड, सामाजिक सम्बन्ध के तथ्यों का रेकार्ड, स्वास्थ्य अभ्यास के तथ्यों का रेकार्ड तथा परीक्षा के तथ्यों के रेकार्ड से प्राप्त होगा।

स्वास्थ्य सुरक्षा— शारीरिक शिक्षा में भाग लेने के पूर्व चिकित्सात्मक परीक्षा, कठिन शारीरिक परिश्रम के पूर्व उचित शारीरिक दशा, बीमारी या चोट लग जाने के पश्चात भाग लेने के लिये चिकित्सक की आज्ञा। अस्वच्छ क्रियाओं को वर्जित करना, उन विद्यार्थियों के लिये विशेष व्यवस्था जो अंग से दोषी है तथा साधारण क्रियाओं में भाग नहीं ले सकते। अपरिपक्व विद्यार्थियों की शारीरिक योग्यता पर ज़ोर नहीं डालना चाहिये। शारीरिक क्रिया में निरन्तर असफलता से विद्यार्थियों को बचाना चाहिये तथा अधिक सरलता से सफलता भी प्राप्त नहीं होनी चाहिये। जो घायल हों या चोट लगी हो उनके लिये उपयुक्त चिकित्सा एवं चिकित्सालय का प्रबन्ध होना चाहिए। प्रत्येक भाग लेने वाले के लिए उपयुक्त बचाव का साधन उपलब्ध होना चाहिए। बराबर योग्यता रखने वालों के बीच प्रतियोगिता होनी चाहिए। सामग्री एवं साधन सुरक्षित दशा में रखना चाहिए। योग्य रैफरी का होना आवश्यक है। प्रशिक्षित योग्य, तथा सचेत एवं कुशल नेतृत्व की घोर आवश्यकता है। यह मान लिया गया है कि शारीरिक शिक्षा एवं स्पोर्ट्‌स के द्वारा उचित स्वास्थ्य प्राप्त हो सकता है। इनके द्वारा सम्पूर्ण व्यक्ति की पूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।

शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम के परिणाम स्वरूप भारतवर्ष की सम्पूर्ण शैक्षिक संस्थाओं में प्रत्येक बालक में खेलने की आदत, व्यायाम तथा स्वास्थ्य विकसित होना चाहिए। जैसे ही खेल, व्यायाम तथा स्वास्थ्य परम्परागत हो जाएगा, राष्ट्रीय शक्ति तथा चरित्र निश्चित एवं दृढ़ हो जायेंगे।

शिक्षकों तथा स्कूल के अधिकारी वर्ग के द्वारा यह चेष्टा होनी चाहिए कि बालकों के लिये एक आरोग्य वातावरण प्राप्त हो। साफ-सुथरा स्कूल का घेरा, चारों ओर की चीजें साफ, साफ शौचालय आदि के द्वारा उच्च नागरिकता की भावना बालकों में उत्पन्न की जा सकती है। स्वास्थ्यकर जीवन भी आदत के द्वारा बनाया जा सकता है। कक्षा, कमरे की मेज़, कुर्सियां, प्रकाश, वायु प्रवेश, सफाई आदि का उचित प्रबन्ध आवश्यक है जिससे बालकों का स्वास्थ्य सुरक्षित हो और अनेक स्वास्थ्यकर भावनाएं बनें। स्वास्थ्यकर रहना, सिखाने की एक ही प्रणाली है, वह है, स्वास्थ्य में अभ्यास करने के द्वारा तथा बालकों की सहायता करना जिससे वह स्वस्थ रहने का अभ्यास कर सकें। उचित डाक्टरी निरीक्षण जिसका सहयोग शारीरिक तथा स्वास्थ्य शिक्षा से हो, वर्ष में एक बार डाक्टरी

निरीक्षण ही काफी नहीं है न ही अनेक डाक्टरी निरीक्षण उपयुक्त हैं यदि उस निरीक्षण के परिणाम पर ध्यान न दिया जाए तथा उसको ठीक नहीं किया जाये। डाक्टरी निरीक्षण समय पर होना चाहिए। डाक्टरी निरीक्षण अत्यन्त आवश्यक है। डाक्टरी निरीक्षण का सम्बन्ध शारीरिक शिक्षा के अध्यापन से होना चाहिए जिससे डाक्टरी परिक्षण के परिणाम के अनुसार उन बालकों का स्वास्थ्य सुरक्षित रहे तथा जिन्हें डाक्टरी चिकित्सा, जिमनास्टिक चिकित्सा या पौष्टिक भोजन की आवश्यकता हो उसकी व्यवस्था कर दी जाये इससे पहिले कि वे शारीरिक व्यायाम कक्षा में भाग ले सकें।

साधारण शिक्षा से कोई लाभ नहीं है, यदि व्यक्ति यह न जानता हो कि जीवन में कैसे रहना है तथा शिक्षा काल में मान्यता प्राप्त आदतों के साथ, स्वास्थ्य की उन आदतों को जो जीवन पर्यन्त लाभदायक सिद्ध होती हैं, अर्जित न करे। स्वास्थ्य शिक्षा के द्वारा बालकों को मानव शरीर का ज्ञान दें तथा उसकी रक्षा के उपाय तथा उसके पूर्ण विकास की क्रिया का परिचय करायें। साधारण शिक्षा की अवस्था तथा शैक्षिक वातावरण इस प्रकार होना चाहिए कि स्वास्थ्य की आदत साधारण नैसर्गिक प्रकार से बगैर उस ओर विशेष ध्यान आकर्षित कराये सीखी जा सके। स्वस्थकर शैक्षणिक वातावरण में स्वास्थ्य की आदत अर्जित करने की प्रेरणा मिलेगी। सप्ताह में उपयुक्त समय स्वास्थ्य शिक्षा के लिये देना चाहिये जिससे बालक निम्नलिखित बातों से परिचित हो सकें।

(१) शरीर रचना तथा शरीर क्रिया से परिचित हो सकें।

(२) इस बात की महत्ता को समझ लें कि स्वस्थकर रहना, मानसिक योग्यता सामाजिक मान्यता तथा नैतिक शक्ति के लिये अनिवार्य है।

(३) जिससे प्रारम्भिक सहायता, आवश्यकता पड़ने पर दे सकें।

(४) व्यायाम् करने न करने के भले बुरे परिणाम मालूम हों।

(५) रोग के कारण तथा उससे बचने के उपाय जाने।

(६) संतुलित भोजन के विषय में ज्ञान तथा भिन्न भिन्न भोजन पदार्थ के गुण शक्ति की मरम्मत के लिये, बढ़ाव के लिये और गलत भोजन के परिणाम जानें।

(७) स्वयं स्वस्थं रहकर गौरव के पात्र हो तथा दूसरों को भी उसके लाभ बतायें।

परीक्षण प्राप्त किए व्यक्तियों द्वारा कार्य का निर्देश तथा निरीक्षण-इसके लिए उन, व्यक्तियों की आवश्यकता है जिन्होंने उच्च प्रशिक्षण प्राप्त किए हैं। शैक्षणिक तथा अध्यात्मिक गुणों का एक अच्छे शारीरिक कार्यक्रम के द्वारा अर्जित करना ही ध्येय है। उन अध्यापकों की आवश्यकता नहीं जो केवल व्यायाम करा सकें आवश्यकता उन शिक्षकों की है जिनका कोई ध्येय, उद्देश्य, आदर्श हो, मानव प्रकृति के ज्ञान में रुचि हो तथा पर्याप्त शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण में योग्यता रखते हों तथा इसके साथ ही बुद्धि तथा कौशल द्वारा बालकों की रुचि तथा आवश्यकताओं का निरीक्षण कर सकें। जो बालक स्कूल जाने वाले हैं उनके लिये सर्वश्रेष्ठ नेतृत्व की आवश्यकता है विशेषकर शिक्षा के इस मुख्य क्षेत्र में जो मनुष्यत्व के चरित्र निर्माण के तत्वों से विशेष सम्बन्ध रखते हैं।

स्कूल स्वास्थ्य

स्कूल की बिल्डिंग—खुले स्थान तथा शुद्ध वायु में स्थित होनी चाहिए उस में सूर्य का प्रकाश आये जो आसानी से खोला या बन्द किया जा सके, औद्योगिक केन्द्रों से दूर, शहर के बाहर रेलवे स्टेशन तथा जहां यातायात अधिक हों वहां से दूर होना चाहिये।

स्कूल की स्थिति ऐसे केन्द्रीय स्थान में हो जहां बालकों को अधिक दूरी न तय करनी पड़े। स्कूल सूखी साफ ज़मीन पर बनाया जाना चाहिये। स्कूल के मैदान को कुछ ऊंचे पर स्थित होना आवश्यक है जिससे बरसात का पानी जमा न हो सके। स्कूल के पास ही खेल का मैदान हो जहां किसी प्रकार की बाधा या अन्य आकर्षण न हों। भवन सुन्दर, मजबूत तथा उपयोगी होना चाहिये। स्कूल भेद्य मिट्टी (Porous soil) पर निर्मित करना चाहिये। भवन का मुख्य द्वार पूर्व पश्चिम दिशा में होना चाहिये जिससे शुद्ध वायु तथा सूर्य की किरण सुगमता से आ सके। भवन की नींव गहरी पक्की होनी चाहिये, दीवारें पक्की होनी चाहिये। फर्श अधिक चिकना न हों, छत मजबूत और मोटी हो, बहुत ऊंची मंजिल नहीं होनी चाहिये, अधिक से अधिक दरवाजे एवं खिड़कियां तथा रोशनदान हो तथा चौड़े नीचे बरामदे हों।

कक्षागृह ऐसा होना चाहिये जिसमें ५० बालक आसानी से बैठ सकें तथा चारों ओर खाली स्थान हों तथा बीच बीच में आने जाने के स्थान हों।

प्रत्येक विद्यार्थी को कम से कम २२५ घन फुट वायु, ५×३ फुट फर्श मिलना चाहिये। कमरा खुला हुआ हो। कमरे कीं सफेदी हल्के रंग की होनी चाहिये।

विद्यार्थियों के अलग बैठने तथा लिखने पढ़ने का प्रबन्ध—बालक को पूरे बैठक पर बैठना उचित है जिससे सम्पूर्ण जांघ उस पर आ जांये। कुर्सी के पिछले हिस्से से Sacrum छूना चाहिये। डेस्क के ऊपर का हिस्सा चपटा समतल होना चाहिये। कुर्सी तथा मेज अलग अलग होनी चाहिये।

शौचालय, पेशाब घर, स्नान स्थान—स्कूल के पीछे कक्षा गृह से कुछ दूर होना चाहिये। इस स्थान की सफाई पर उचित ध्यान देना चाहिये। पानी का उचित प्रबन्ध होना चाहिये। शौचालय Flushed होना चाहिये जिसकी बनावट साधारण होनी चाहिये। दीवार एवं फर्श 'ग्लेज़्ड' चिकना होना चाहिये। जहां भी पानी संग्रह किया जाता हो वह किसी प्रकार खुला हुआ नहीं होना चाहिये। दूषित होने के अतिरिक्त छोटे बच्चों का उस में गिर जाने का भय है।

खेल के मैदान—की व्यवस्था एक स्थान पर होनी चाहिये। इतना स्थान होना उचित है कि स्कूल का प्रत्येक बालक किसी न किसी खेल की क्रिया में भाग ले सकें। छोटों तथा बड़ों के लिये पृथक प्रबन्ध होना चाहिये। यदि स्कूल शौचालय तथा पीने के पानी का प्रबन्ध समीप हो तो अन्य व्यवस्था का प्रयोजन नहीं, अन्यथा उसके लिये भी व्यवस्था होनी आवश्यक है। खेल के मैदान सड़क से दूर हों। बाहर की ओर पेड़ लगे हों अच्छी घास लगी होनी चाहिये जिससे खेलने के समय धूल न उड़े। मैदान समतल हो तथा ऐसा हो जहां पानी का जमाव न हो सके। खेल के मैदान में किसी प्रकार की बाधा या गड्ढा न हो। खेल के मैदान के बीच कोई रास्ता भी होना चाहिये। मैदान साफ सुथरा होना चाहिये। आपरेट्स आदि एक सुरक्षित कोने में होने चाहिये जो स्वतंत्र खेल में बाधक न हो।

व्यक्तिगत स्वास्थ्य प्रशिक्षण—यह स्कूल का उत्तरदायित्व है कि बालकों को सम्पूर्ण शरीर की स्वच्छता की शिक्षा उचित रीति से दी जाये, स्वच्छता का अर्थ केवल त्वचा की स्वच्छता से नहीं है। इसके अन्तर्गत वस्त्र, जूते, कमरे की सफाई, घर की सफाई, बगीचे की सफाई, मैली वस्तु को उचित रीति से रखना,

साफ बिस्तर, साफ शौचालय, सड़क तथा शहर की सफाई आदि आती हैं। प्रारम्भिक उचित स्वास्थ्य की आदत को अजित करना अत्यन्त आवश्यक है।

स्वास्थ्य प्रशिक्षण की तीन अवस्थायें होती हैं।

अभ्यास कराने की अवस्था–वह समय है जब बालक स्वास्थ्य की आदत सीखता है, उसे सिखाया जाता है तथा बिना प्रश्न किये उसे आज्ञा मानना पड़ता है। मुंह हाथ धोना, कपड़े साफ रखना, समय पर शौच आदि करना, स्नान, विश्राम, भोजन आदि करने की उचित आदत सिखायी जाती है।

द्वितीय अवस्था सामाजिक मान्यता—की है जब बालक दूसरे के द्वारा अच्छी स्वास्थ्य की आदतों के लिये सराहा जाता है, इसके पश्चात वह इन आदतों को अर्जित करता है क्योंकि दूसरे भी ऐसा करते हैं।

तृतीय अवस्था आत्म सम्मान— जब वह आत्म सम्मान के लिये अच्छी स्वास्थ्य की आदत अर्जित करता है। वह एक आदर्श बनना चाहता है तथा एक आदर्श का अनुकरण करता है।

प्रशिक्षण के लिये विषय ज्ञान की आवश्यकता है। यह अंध आज्ञा पालन पर नहीं निर्धारित करना चाहिये किन्तु उचित शिक्षा के द्वारा होना चाहिए। ज्ञान पूर्ण अभ्यास से परिणाम उत्तम होगा। यह आवश्यक है कि स्वास्थ्य के प्रति बालक का स्थायीभाव निर्मित हो। यह उसी समय सम्भव होगा जब उसे स्वास्थ्य के तथ्यों का ज्ञान, स्वास्थ्य के प्रति उचित भावना हो तथा उचित स्वास्थ्य के प्रति प्रतिक्रिया हो।

शिक्षकों को इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि स्वास्थ्य केवल शारीरिक विषय नहीं है। यह संवेगात्मक भी है। ये दोनों परस्पर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। भयभीत बालक तथा अप्रसन्न बालक कभी भी स्वस्थ नहीं रह सकता। शारीरिक स्वच्छता से संवेगात्मक स्वच्छता उत्पन्न होती है। स्वच्छता चरित्र का प्रतीक है। स्वच्छता की शिक्षा में शिक्षक का उदाहरण महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

व्यक्तिगत स्वच्छता में प्रत्येक दिन व्यायाम, स्नान, दांतों तथा नाखूनों की सफाई, बालों की सफाई, अन्दर, बाहर स्वच्छ कपड़े, बिस्तर तथा कमरे की

सफाई, जूते तथा मोजों की सफाई आदि आते हैं। उचित समय पर संतुलित भोजन जो नियन्त्रित हो, विश्राम, शौच आदि तथा सोना भी व्यक्तिगत स्वास्थ्य के अन्तर्गत आते हैं। संवेगात्मक रीति मन, वचन तथा कर्म को शुद्ध रखना भी व्यक्तिगत स्वास्थ्य के तथ्य हैं।

चरित्र—

Character is the sum total of the individual's behaviour tendencies as established by his habits and attitude.

शारीरिक शिक्षा क्रियाओं में भाग लेने के द्वारा, जो प्रभाव मानव प्रतिक्रिया की आदत के व्यवहार में निर्माण या परिवर्तन करने में सफल हैं, वह चरित्र तथा व्यक्तित्व को प्रभावित करती है। चरित्र की परीक्षा के साथ किसी शारीरिक अंग की शक्ति की परीक्षा की तुलना नहीं की जा सकती न इस का विचार ही किया जा सकता है। उसी प्रकार स्वास्थ्य की परीक्षा तथा चरित्र की परीक्षा में कोई सम्बन्ध नहीं। यह प्रत्यक्ष है कि उत्तम चरित्र उन अनुभवों से प्राप्त होता है जो रचनात्मक रूप से स्वस्थ्य है, जो चेष्टा की प्रेरणा करते तथा दूरदर्शी एवं मान्य ध्येय के अर्जित करने में सहायक हैं।

यह कहा जा सकता है कि चरित्र उस प्रकार का व्यवहार है जो क्रिया के अन्त परिणाम एवं समस्याओं पर विचार करता है। इस प्रकार का चरित्र वातावरण एवं वंशानुक्रम का उत्पादन है।

चरित्र शिक्षा के क्षेत्र में अनेक प्रभाव हैं जो विभिन्न अवस्थायें निर्माण करती हैं जिन में तथा जिन के प्रति व्यक्ति प्रतिक्रिया करता है। यही अनुभव है तथा इसी के द्वारा जीवन निर्मित होता है। चरित्र अनुभव से प्रवाहित होता है। परीक्षा या रेकार्ड का महत्व केवल यह है कि किस मात्रा में विद्यार्थी स्वस्थ्यकर, रचनात्मक एवं उचित अनुभव में भाग ले रहे हैं।

स्कूल के द्वारा चरित्र शिक्षा देने का अर्थ यह है कि इस प्रकार की पद्धतियां अपनायी जायें जिनके द्वारा बालक योग्य कार्यों में लीन हो जायें तथा दूसरों के साथ कार्य करते हुये उच्च तात्पर्य एवं उत्तम आदर्श को सम्भव करें। शारीरिक शिक्षा में अनेक बहुमूल्य प्राकृतिक अवसर प्राप्त होते हैं जिसमें

जीवन के दृष्टि कोण के निर्णय करने में सहायता मिलती है। यह मान लिया गया है कि प्रत्येक व्यक्ति में यह भावना उत्पन्न हो कि अपना सर्वोत्तम सदैव दें। बहुधा सर्वोच्च नहीं दिया जाता क्यों कि अवस्था में न कोई अर्थ होता है न कोई रुचि। इस के लिये परीक्षा एवं रिकार्ड की आवश्यकता होती है। चरित्र शिक्षा, को विषय के रूप में नहीं सिखाया जा सकता। आदतों का निर्माण एवं चरित्र का विकास सदैव होता रहता है। यह क्रिया सम्बन्ध है कहा जा चुका है कि यह व्यक्ति की प्रतिक्रिया है। यह सामाजिक एवं नैतिक व्यवहार सम्बन्धित है। चरित्र के फल स्वरूप,उत्तम व्यवहार का आदर्श, भावना एवं अन्तरात्मा तथा व्यवहार की आदत की आशा की जाती है। शारीरिक शिक्षा क्रियायें वह प्रयोगशाला है जहां इनका क्रियात्मक रूप से अभ्यास किया जाता है। शारीरिक शिक्षा क्रिया एवं एथेलेटिक्स् की अनेक क्रियाओं में जिनमें परस्पर स्पर्श होता है वे चरित्र शिक्षा के लिये महत्वपूर्ण हैं। इस में, शारीरिक ध्येय के प्राप्त करने की परीक्षा एवं माप में, चरित्र एवं व्यक्तित्व की विशेषताओं एवं गुण की प्रगति का भी माप होता है। यह परीक्षा एवं माप विस्तृत अध्ययन पर निर्धारित है जिनके रिकार्ड से ही उत्तम परिणाम प्राप्त किया जा सकता है।

पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कार्य—विद्यार्थियों के लिये, दैनिक स्कूल कार्य के पश्चात् या विद्यार्थियों के अवकाश के समय जो कार्य होता है, जो विशेष रीति से पाठ्यक्रम से सम्बन्धित नही है, न उस के करने या न करने का किसी के ऊपर प्रबन्धक प्रभाव पड़ता है, उन कार्यो को पाठ्यक्रम के अतिरिक्त के कार्य की संज्ञा देते हैं। कभी कभी पाठ्यक्रम के अतिरिक्त के कार्य भी पाठ्यक्रम की तालिका में ही सम्मिलित कर लिये जाते हैं किन्तु करने या न करने की स्वतंत्रता करने वालों को होती है।

शैक्षणिक ध्येय, सर्वदा अवकाश के सदोपयोग के प्रति रहा है। इस ओर कितना किया गया है वह एक मत भेद का विषय है। यह स्पष्ट है कि इस ओर अधिक प्रगति नहीं हुई है।

अवकाश के सदोपयोग विशेष कर विद्यार्थियों के ही द्वारा उनके विभिन्न कार्यों के द्वारा जो पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कार्य थे, हुआ है। अनेक बार उन्हें इस कार्य में किसी प्रकार का उचित सहयोग शिक्षकों से प्राप्त भी नहीं हुआ। व्यक्ति अवकाश के समय क्या करता है, बहुत कुछ उसके प्रशिक्षण पर निर्भर है।

भविष्य की एक प्रमुख आवश्यकता जीविका उपार्जन करने की नहीं किन्तु जीवन व्यतीत करने की होती है। अतएव यह स्कूल का कर्त्तव्य है कि वह बालकों को अवकाश के सदोपयोग की शिक्षा बहुतायत से दें। यह प्रशिक्षण बालक के प्रारम्भिक दिनों से ही आरम्भ होना चाहिये तथा उसके स्कूल जीवन के अन्त तक निरन्तर रहना चाहिए। हमारे अधिकांश बालक हाई स्कूल से अधिक अध्ययन नहीं कर पाते हैं। अतएव शिक्षा का उपाय इस प्रकार होना चाहिए कि रुचि में वृद्धि हो तथा व्यक्ति के उन अदृश्य गुणों को जागृत करें तथा कौशल में प्रशिक्षित करें जिससे किसी मन बहलाव के कार्य एक hobby का या एक उद्यम का विकास हो या रुचि के ज्ञान की प्रगति करे, जिसका परिणाम अपने अवकाश के एक घंटे का प्रयोग, वैयक्तिक उन्नति, परिवार को धनी तथा सामाजिक प्रबन्ध की प्रगति में हो। इसके द्वारा भोग विलास (pleasure) से अधिक वास्तविक आनन्द (happiness), शक्ति के अतिरिक्त भलापन, ख्याति नही किन्तु निपुणता की विशेष आशा की जाये। यदि शिक्षा के द्वारा अवकाश के सदोपयोग सांस्कृतिक तथा रचनात्मक प्रदर्शन का प्रशिक्षण नही होता तो वह अपने ध्येय में असफल है। यह आवश्यक है कि स्कूल के द्वारा रचनात्मक अवकाश की आदत तथा रुचि के विकास के लिये अधिक शक्ति तथा समय व्यतीत किया जायें।

कितने ही स्कूल, स्कूल के पश्चात् एथेलेटिक तथा मनोरंजक क्रियाओं के प्रोग्राम की व्यवस्था रखते हैं। इनका आयोजन इस प्रकार होता है कि वे प्रकृति में विशेष शैक्षणिक हों तथा केवल खेल या मनोरंजन का अवसर न हो। यह प्राय: स्कूल की ही ओर से होता है तथा शारीरिक शिक्षा विभाग के अन्तर्गत कार्य होता है। इस कारण शारीरिक शिक्षा के ध्येय तथा स्कूल के अतिरिक्त कार्यों का ध्येय प्राय: एक सा ही होता है। इस प्रकार के स्कूल पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कार्यों का उद्देश्य, (१) उन क्रियाओं के करने का अवसर प्रदान करना जो शारीरिक शिक्षा कक्षा में किये जा चुके हैं, (२) शारीरिक, सामाजिक, संवेगात्मक एवं नैतिक विकास की प्रतियोगिता दशाओं के लिये अधिक अवसर प्रदान करना, (३) विभिन्न प्रकार के निरीक्षित कार्यक्रम उपलब्ध करना जिसके द्वारा अवकाश के समय का सदोपयोग हो, तथा (४) कौशल एवं विकास में प्रत्येक आयु तथा स्तर के व्यक्तियों को भाग लेने का अवसर प्रदान करने का है।

इस कार्यक्रम के लिये विशेष निश्चित समय नहीं होता। समय कितना दिया जायेगा वह क्रिया की प्रकृति, भाग लेने वाले विद्यार्थियों की विशेषता तथा विद्यार्थियों एवं समाज की रुचि एवं भाग लेने पर निर्भर करता है।

कार्यक्रम के प्रकार—स्कूल के पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कार्यों में अनेक क्रियायें एवं संगठन तथा आयोजन आ सकते हैं। विशेष रुचि का क्लब स्थापित्त किया जा सकता है जैसे नृत्य, जिमनास्टिक, तैरना आदि। ये इस ग्रुप के व्यक्ति इसे केवल विद्यार्थियों के लिये अथवा समाज में अन्य व्यक्तियों के लिये भी रखें। ऐसी अनेक अवस्थायें हैं जहां स्कूल तथा समाज मिलकर इस प्रकार का कार्य कर रहे हैं। दूसरा प्रकार, पूर्णरूप से व्यवस्थित इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम का हो सकता है जो प्रत्येक आयु, स्तर तथा कौशल के लिये उपयुक्त हो। ग्रुप तथा टीम, स्कूल में सीखे हुये कौशल स्तर एवं अनुभव के अनुसार भी बनाया जा सकता है। इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम के बाद की दूसरी सीढ़ी बाहर के या आपस में स्कूल की प्रतियोगिताओं की होती है। बहुत से स्कूलों में स्कूल के आपस में प्रतियोगिता का उत्तम संगठित कार्यक्रम है। इनके द्वारा लीडरशिप का उत्तम प्रशिक्षण होता है। स्कूल के पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कार्यक्रम में बालकों को और अधिक शारीरिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा नैतिक प्रशिक्षण का लाभदायक अवसर प्राप्त होता है जिससे स्कूल के कार्य में भी सहायता हो जाती है। यह कहा जा सकता है कि स्कूल के पाठ्यक्रम के अतिरिक्त के कार्यों द्वारा स्कूल के शैक्षणिक ध्येय का अधिक विस्तार सम्भव होता है।

५

बजट एवं वित्त

आय तथा व्यय की योजना को बजट कहते हैं। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि बजट आशा की हुयी आमदनी पर, होने वाले खर्च का सही अनुमान है।

स्कूल के शारीरिक कार्यक्रम की योजना उस समय तक पूर्ण नहीं मानी जा सकती जब तक उसके व्यय का सही उपाय न निर्धारित किया जाये। शारीरिक शिक्षण में साधारणत: इस समस्या पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता, स्कूल में शारीरिक शिक्षा के विभाग तथा उसके कार्य का हम ध्यान भी नहीं कर सकते यदि उसके व्यय के लिये उचित प्रबन्ध न हो। यह आय व्यय बजट के बगैर हो ही नहीं सकता। अतएव यह आवश्यक है कि कार्यक्रम आरम्भ करने से पहले यह नियत कर लिया जाये कि आवश्यकता क्या है और उसके लिये आर्थिक धन कहां से आयेगा। इसी आर्थिक धन का उचित प्रबन्ध जिससे व्यय पूरे वर्ष सुचारु रूप से चले, सही वार्षिक लेखा होगा।

शारीरिक शिक्षा के प्रति व्यय उसी प्रकार होगा जैसे स्कूल के दूसरे विषयों के लिये होता है। नागरिकता, अच्छे खिलाड़ी के गुण, चरित्र निर्माण, स्वयं पर शासन, स्वास्थ्य अवकाश के समय का सदोपयोग इत्यादि की शिक्षा दूसरे विषयों से कहीं अधिक शारीरिक शिक्षा के द्वारा दी जा सकती है किन्तु हमारे नेता अभी तक इस बात को नहीं समझ सके हैं। इसका अर्थ यह है कि जो आर्थिक स्थिति शारीरिक शिक्षा की होनी चाहिये, नहीं है।

शारीरिक शिक्षा के लिये धन उपार्जन करने की विधि— १- विद्यार्थियों का मासिक तथा वार्षिक शुल्क, २- संस्था से सहायता, ३- सरकार से सहायता,

४- धन जमा करने की दूसरी विधियां—स्कूल के तमगे इत्यादि बेचना, एथेलेटिक कार्निवल, स्कूल में ड्रामा, जिमनास्टिक का प्रदर्शन, कौन्सर्ट, विविध प्रोग्राम, दूकाने लगाना, पत्रिकाओं में सूचना, स्कूल कार्य दिवस, रद्दी कागज जमा करना तथा बेचने का दिवस, दान के लिये प्रार्थना, सरकारी सहायता, स्कूल श्रमदान इत्यादि ।

व्यय–१— एक ऐसी विधि प्रयोग में लानी चाहिये जो आसानी से समझी जा सके तथा आसानी से काम में लायी जा सके। आर्थिक विषयों में किसी तरह की लापरवाही नहीं होनी चाहिए । २—जो आय होती है या जो व्यय होता है सही विधि से चढ़ाना चाहिए । यह साफ तथा संक्षिप्त होना चाहिए । पूरी आय तथा व्यय का रिकार्ड सदैव तैयार रहना चाहिए जिससे यदि कोई किसी समय निरीक्षण करना चाहे तो कर सके । ३—जितनी आय है व्यय उतना ही होना चाहिये । ४—रुपये की बरबादी किसी तरह न हो । इसे हर एक तरह से रोकना है ।

एथेलेटिक बजट—किसी प्रोग्राम को सफल बनाने के लिए आवश्यक है कि उसके व्यय का निर्णय पहिले ही कर लें । बजट, आय का वार्षिक लेखा है। इसके द्वारा शारीरिक शिक्षा का नियोजन भली प्रकार से किया जा सकता है। साधारणतः बजट संक्षिप्त होता है । प्रत्येक आइटम के अन्तर्गत पर्याप्त आर्थिक सुविधा होनी चाहिये जिससे जो परिवर्तन आवश्यक हो वह किया जा सके। एथेलेटिक बजट में भी आय व्यय बराबर करना है ।

इसकी जानकारी पिछले अनुभव के आधार पर होगी । कहा जाता है कि पिछले तीन साल के अनुभव के आधार पर बजट बहुत ही अच्छा बन सकता है । सही बजट में, प्रोग्राम के सभी आइटम लिये जायें तथा नियमानुसार आर्थिक वितरण किया जाये जिससे कार्य सुगमता तथा सुचारु रूप से हो और उसके व्यय के लिये पर्याप्त धन हो ।

बजट की तैयारी—बजट बनाने के लिये कोई निश्चित नियम नहीं दिया जा सकता है जो सभी अवस्थाओं में प्रयोग किया जा सके । साधारण नियम ये हैं । (१) पिछले तीन साल में धन कैसे इकठ्ठा किया गया तथा कैसे व्यय हुआ । इस बात पर ध्यान देना है कि किस आइटम के आय व्यय में अस्थिरता

रही तथा इस परिणाम से कार्यक्रम कैसा रहा। (२) वर्ष की आय क्या है। यही आधार होगा जिस पर व्यय नियत होगा। (३) धन आने के कौन कौन से साधन हैं। इनका विश्लेषण करना और देखना कि कहां तक ये स्रोत फल देते रहें।

व्यय सम्बन्धित प्रश्न–(१) क्या, यही कार्यक्रम इस वर्ष भी चलेगा। इससे अलग अलग व्यय के शीर्षक का ज्ञान हो जायेगा। (२) क्या, इस वर्ष कोई नया आयोजन है। क्या, यह आर्थिक स्थिति के अनुसार है। क्या, इसके व्यय के लिये सही धन दिया जा सकेगा। (३) गत वर्ष किन-किन बातों की रोक थाम की जा सकती थी जिससे आर्थिक व्यय की बचत होती ? इनके लिये भविष्य में कौन-कौन से उपाय किये जा रहे हैं ?

व्यर्थ व्यय को रोकना तथा आय के सम्पूर्ण स्रोत को ढूंढना तथा उचित रूप से उन चीजों के लिये व्यय करना जिसे मान्यता दी गयी है, सही बजट के गुण हैं।

बजट—बजट में आय तथा व्यय का अलग अलग विभाग होना चाहिये। यह वास्तविक आवश्यकता बतलाती है। बजट तैयार करके गेम्स कमेटी के सम्मुख लाना चाहिये। प्रत्येक आय व्यय के आइटम को एक-एक करके देखना चाहिए। आइटम में आय तथा व्यय का हिसाब रखते हुये संकटकालीन अवस्था के लिये भी उपाय होना चाहिये जिससे ऐसे समय पर भी व्यय किया जा सके।

एक विभाग के दूसरे विभाग में धन का हेर फेर नहीं होना चाहिये जब तक कि कमेटी की आज्ञा न हो। बजट की देख भाल का दायित्व जिसका है उसे अपने सही विचार से कई एक व्यय, अपने आप करने पड़ते हैं, किन्तु ऐसे व्यय कमेटी के सम्मुख आने चाहियें। वर्ष में प्रायः तीन बार बजट की जांच होनी चाहिये जिससे बजट की अवस्था मालूम होती रहती है। साधारण दैनिक व्यय का हिसाब प्रति दिन पूरा कर देना चाहिये और ध्यान रखना चाहिये कि आय व्यय बराबर रहें। रसीद पर अंक हों और वह फाइल की जायें। बीस रुपये से अधिक व्यय पर रेवन्यु स्टैम्प हो। व्यय से पहले देखिये कि इसके लिये आज्ञा है या नहीं यदि है तो किस शीर्षक के अन्तर्गत। आवश्यकता से अधिक रुपये पास में नहीं होना चाहिये। पैसा एडवान्स नहीं देना चाहिये। सामान खरीदने के लिये टेन्डर लिया जाना जरूरी है तथा जो कमीशन मिलता है वह बिल में

दिखाया जाये । दैनिक व्यय के लिये पृथक पुस्तक होनी चाहिए । टिकट, लिफाफे तथा स्टेशनरी इत्यादि के लिये अलग हिसाब होना चाहिये । वर्ष के अन्त में किसी रजिस्टर्ड एकाउन्टेन्ट से हिसाब की जाँच करवाना चाहिये । इस जांच की रिपोर्ट गेम्स कमेटी के सम्मुख आनी चाहिये ।

बजट से लाभ–व्यय को आय के अन्तर्गत रखना तथा निश्चित धन प्रत्येक विभाग को देना जिससे कार्य भली भांति चल सके । बजट के द्वारा निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर मिलता है । वेतन में कितना व्यय होता है यदि इसमें अधिक व्यय हुआ तो कठिनाई होगी । थोड़े समय (Part time) कोच का एलाउन्स । क्या प्रत्येक वर्ष एक्युपमेन्ट खरीदना है ? खरीदने का कार्य कुछ वर्षों के लिये हो तो लाभ होगा । मरम्मत के लिये कुछ हिस्सा है या नहीं ? धोबी के लिये इस स्कूल का खर्च दूसरे स्कूलों की तुलना में कैसा है ? क्या कुछ खास लड़कों पर पैसा खर्च होता है या पूर्ण स्कूल पर । प्रत्येक स्पोर्ट पर क्या खर्च होता है ? यदि सुधार हो तो कहां हो जिससे कार्य में विशेष बाधा न पड़े ।

गेम्स फण्ड का उचित व्यय–खेल के सामान का व्यय । व्यक्तिगत विद्यार्थियों के खेलने का सामान इस पैसे से नहीं आना चाहिए । इनडोर खेल के सामान के लिये खर्च, खेल के मैदान की देख भाल, जिमनास्टिक आपरेटस, नाव, तैरने का स्थान, वार्षिक चन्दा तथा एफिलेयेशन शुल्क, खेल में भाग लेने का शुल्क, खेल में भाग लेने के लिये सवारी खर्च, १५ से अधिक लड़कों के साथ एक शिक्षक, खिलाड़ियों के लिये दैनिक भत्ता, साधारण खेलों में दूसरे स्कूलों के लिये जलपान, वार्षिक स्पोर्ट्स समारोह का व्यय, प्रोग्राम की छपायी, पारिश्रमिक, सजावट, शामयाना, खेलने वालों के लिये पानी, अधिकारियों के लिये जलपान, पारितोषिक, स्कूल से मीटिंग में जाने का खर्च, प्रारम्भिक चिकित्सा का सामान, लिखने इत्यादि का सामान, विशेष प्रशिक्षण के लिये साधन, शारीरिक शिक्षा, मासिक, यूनिफार्म, स्काउटिंग तथा गाइडिंग, सेन्ट जान एम्बुलेन्स, किताब, रजिस्टर इत्यादि का व्यय ही गेम्स फंड का उचित व्यय है ।

बजट का मुख्य उद्देश्य प्रत्येक विद्यार्थी के लिये सर्वश्रेष्ठ सेवा का होना चाहिए । असंगठित तथा अव्यवस्थित बजट से कितने ही लोगों ने अपने ऊपर कलंक लगा लिया है । बजट के संचालन में किसी उत्तम पद्धति का प्रयोग करना चाहिये ।

बजट का नमूना—

आय	रु० पै०	व्यय	रु० पै०
१, पिछला बैलेन्स		१, सामान	
२, चन्दा तथा डोनेशन		२, मरम्मत	
३, शुल्क		३, दूसरे स्कूलों से स्पोर्ट्स प्रतियोगिता	
४, राजकीय सहायता		४, इन्ट्राम्युरल	
५, दूसरे मद की आय		५, विशेष कार्य	
६, संस्था की सहायता		३, स्काउटिंग	
		७, फर्स्टएड	
		८, एफिलियेशन शुल्क	
		९, किताब	
		१०, स्टेशनरी	
		११, वेतन	
योग		योग	

प्रायः कालेज तथा सेकेन्ड्री स्कूलों में पाठ्यक्रम के शारीरिक शिक्षा के लिये वित्त सेवा, संस्था के बजट के द्वारा ही होती है। अतः निर्देशक का दायित्व पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कार्यों के बजट का होगा। सभी अवस्थाओं में यदि बजट, निर्देशक-प्रधानाध्यापक तथा खजांची के द्वारा हो तो किसी प्रकार अव्यवस्थित अवस्था आने की सम्भावना नहीं होती। रुपये का लेन देन सदैव बैंक के द्वारा बैंक से होना चाहिये। इससे आडिट करने में सरलता होती है।

७

मूल्यांकन

'मूल्यांकन' एवं 'माप' लगभग एक समान ही हैं किन्तु इन्हें भिन्न मानना ही श्रेयस्कर है। साधारणतः माप, कम सही, विश्वसनीय, तथा बाह्य समझा जाता है। मूल्यांकन, आन्तरिक, अधिक विश्वसनीय तथा सही समझा जाता है। कभी कभी मूल्यांकन अपनी क्रिया में माप की भी क्रिया सम्मिलित कर लेता है। इस प्रकार के विचार में मूल्यांकन एक ओर वह नाप समझा जायेगा जिसमें सूक्ष्म माप प्रयोग होते हैं तथा दूसरी ओर वैयक्तिक निर्णय रहते हैं। ऐसा देखा गया है कि कभी कभी माप भी ऐसे विस्तृत रूप से प्रयोग किया जाता है जिसमें मूल्यांकन केवल उस के एक पहलू के समान प्रयोग होता है।

शिक्षा में माप, परिमाण रूप में कितना क्रमिक, कितना परिमाण, किस सीमा तक, संख्या में कितना तथा ऐसे ही शैक्षणिक रूप के अन्य प्रश्न का उत्तर देता है। मूल्यांकन के द्वारा बालक के लिये अनुभव का लाभ, इस अनुभव के प्रति उसके विचार, क्या समाज में इसके स्थान का ज्ञान उसे है? आदि ऐसे प्रश्नों का उत्तर प्राप्त होता है। माप, शैक्षणिक तथ्यों को संख्या के रूप में प्रदर्शित करता है। मूल्यांकन माप के मूल्यों के ज्ञान को प्राप्त करने की चेष्टा करता है। अनेक अनुभव ऐसे हैं जो संख्या के द्वारा प्रदर्शित नहीं किये जा सकते। मूल्यांकन प्रश्नों का बिल्कुल सही उत्तर प्राप्त करना चाहता है। यह माप को तुच्छ नहीं समझता। मूल्यांकन, माप योग वस्तुओं के माप के लाभ की आलोचना करता है। आधुनिक कई एक वस्तुओं का जिनका माप हो रहा है उसकी उपयोगिता की आलोचना भी करता है। सारांश यह कि मूल्यांकन किसी अनुभव या सीखने के लाभ पर बल देता है। माप शैक्षणिक रूप के संख्यक गिनती पर बल देता है।

शारीरिक शिक्षा में मूल्यांकन–आधुनिक काल में बालक को सर्वोपरि महत्ता दी गई है । पाठ्यक्रम, बालक केन्द्रित है; स्कूल बालक केन्द्रित हैं। पाठ्यक्रम से बालक पर बल देने का परिवर्तन मूल्यांकन के द्वारा ही हुआ। जितना ही हम बालक को समझना चाहते हैं उतना ही यह प्रतीत होता है कि माप की संख्या तथा परिमाण के रूप से आगे बढ़कर हमें यह ज्ञात करना है कि उसकी शिक्षा उसके लिये तथा उसके साथ क्या कर रही है ?

यह एक विचित्र विषय लगता है कि शारीरिक शिक्षा की अन्तिम आलोचना समाज के हाथ में है, शिक्षक के हाथ में नहीं । यह परीक्षा छोटे छोटे माप के द्वारा निर्मित नहीं होती । यह शारीरिक शिक्षा का विचार एवं मूल्यांकन जिस प्रकार व्यक्तियों के जीवन में प्रदर्शित होता है उसके द्वारा प्राप्त होता है। माप से किसी शक्ति के परिमाण का पता चल सकता है किन्तु उस शक्ति का लाभ या प्रयोग क्या है मूल्यांकन से पता चलेगा । बालक की भावनाओं, रुचि तथा मूल्य का महत्व उसकी वर्तमान शिक्षा से कहीं अधिक है ।

मूल्यांकन, तात्पर्य तथा परिणाम— शारीरिक शिक्षा का वास्तविक परिणाम व्यक्ति एवं समाज के जीवन तथा विचार से सम्बन्धित होना चाहिये। आन्तरिक अंगों की शक्ति, स्नायु मासपेशियों का कौशल तथा उपयोगी सामाजिक व्यवहार सर्वप्रमुख एवं महत्वपूर्ण हैं । शारीरिक शिक्षा का मूल्यांकन उसको नये क्षेत्रों की ओर आदेशित करता है ।

मूल्यांकन तथा व्यवहार—मूल्यांकन के द्वारा शिक्षक बालक के व्यवहार को देखता है, उसके चरित्र को देखता है, उसकी क्रिया एवं प्रतिक्रिया, शारीरिक शिक्षा क्रिया के अवसर पर देखता है । शिक्षक सम्पूर्ण बालक में रुचि लेता है। मूल्यांकन के द्वारा वह जानना चाहता है कि क्रिया के अवसर पर सम्पूर्ण बालक को क्या होता है ? कौशल के करने के पश्चात् उस सीखने से वह क्या करता है? कक्षा के तथा उसके बाहर की विभिन्न अवस्थाओं में बालक क्या करता है ? क्या वह अपने निर्णय में परिपक्वता प्राप्त कर रहा है तथा यदि हां तो कैसे प्राप्त कर रहा है ? उसके मूल्यों, समझ, आत्म उत्तरदायित्व, एकत्व, निराशा, असंतोष, सामाजिक सम्बन्ध में प्रगति आदि किस प्रकार हो रही हैं तथा उनका क्या प्रभाव है ? क्या वह विश्वसनीयता, स्पष्टवादिता, संवेगात्मक स्थिरता के गुण अर्जित कर रहा है ? क्या ये अर्जित किये हुये गुणों की कोई वास्तविकता है? क्या यह

उपयोगी है कि बालक के विषय में ये ज्ञान शिक्षक प्राप्त करें जिससे वे उसे और भलि-भांति समझ सकें तथा उसे आदेश दे सकें तथा अपने सिखाने के परिणाम पर रोक थाम करें ?

मूल्यांकन की पद्धति—अवलोकन के द्वारा-(१) इससे वाह्य दृष्टि या देखने से अधिक अर्थ है। इसमें आंखों के अतिरिक्त और इन्द्रियां भी प्रयोग में आती हैं। (२) शारीरिक शिक्षा में अनुभव इस बात का प्रमाण नहीं है शिक्षक महत्व पूर्ण चिन्हों का अवलोकन कर ही लेंगे। जो शारीरिक शिक्षा में अनुभवी नहीं हैं वे शारीरिक शिक्षा सम्बन्धी व्यवहार के गुण का अवलोकन नही कर सकते। (३) अस्थाई परिणाम पर भी सतर्कता के साथ पहुंचना चाहिये। उचित परिणाम के लिये कुछ समय तक ज्ञानपूर्ण अवलोकन की आवश्यकता है (४) अवलोकन का अनुवाद व्यक्ति अपने अनुभव से करता है जिसमें दोष सम्भव है। (५) हम यह विचार करते हैं कि व्यवहार के प्रदर्शन के देखने से हम उसे समझते हैं। (६) अवलोकन कर्ता को तटस्थ रूप से अवलोकन चाहिए। (७) दूसरी निश्चित एवं सही पद्धति के सम्मुख अवलोकन का स्थान कम है। मूल्यांकन की अन्य पद्धतियों में, रुचि का अंकित करना, चेक लिस्ट, प्रश्नावली, स्कोर कार्ड, क्रमिक नाप, व्यक्तित्व माप, सम्भाषण, आलोचना, चित्र,चल चित्र, निर्णय, भावनाओं, सामाजिक परिपक्वता, संवेगात्मक स्थिरता आदि की परीक्षा; डायरी रखना, केस हिस्ट्री, कमेटियां, निरीक्षण, सामूहिक वाद विवाद, आत्म परीक्षा तथा आत्म आलोचना आती हैं।

———

८

शारीरिक शिक्षा का निरीक्षण

शारीरिक शिक्षण तथा मनोरंजन में पहले निरीक्षण का अर्थ इन्सपेक्टर के द्वारा निरीक्षण का था जब वह आ कर शिक्षक के कार्य का लेखा लेता था। इसका परिणाम यह हुआ कि इन्सपेक्टर के आगमन को शिक्षक किसी भयानक संक्रामक रोग के सदृश्य समझने लगे। निरीक्षक सदा शिक्षक की गलतियों की ओर ध्यान देते थे। इस प्रणाली के द्वारा शिक्षक को शिक्षा सिद्धान्त के बनाने की योग्यता की कमी समझी जाती थी। वर्त्तमान निरीक्षण उसकी सही विधि की खोज करता है। इसके द्वारा विद्यार्थियों की प्रकृति, समाज की बदली हुई आवश्यकतायें, कक्षा में पढ़ाने के गुण, सही अनुशासन इत्यादि की जांच कर उनके परिणाम को शिक्षक के पास पहुंचाता है। दूसरे शब्दों में निरीक्षण का अर्थ है शिक्षा सम्बन्धी नेतृत्व जो एक पूर्ण समय के शिक्षक या संगठन कर्त्ता के द्वारा व्यवहार में समयाभाव के कारण करना कठिन है।

निरीक्षण क्या है ?—यह एक सेवा है जो शिक्षकों को ही प्राप्त है जिससे शिक्षक तथा दूसरे अपने उत्तरदायित्व का भली भांति पालन कर सकें। संगठन कर्त्ता संगठन के सम्बन्ध में कितने ही निर्णय करता है। एक निरीक्षक का कार्य उस समय सर्वोत्तम होगा जब वह ऐसे परामर्श दे जिससे संगठनकर्ता के निर्णय में सहायता हो। निरीक्षण का मुख्य उद्देश्य शिक्षा की उन्नति करने में है। यह केवल शिक्षक तथा विद्यार्थी के संबंध से ही नहीं किन्तु प्रधानाचार्य तथा दूसरे लोगों के द्वारा जो इस से सम्बन्धित हैं किया जा सकता है।

शारीरिक शिक्षण में हम यह कह सकते हैं कि निरीक्षण वे विशेष माध्यम हैं जो शिक्षक के शिक्षा कार्य के बढ़ाने तथा स्वास्थ्य शिक्षा तथा मनोरंजन की उन्नति करने में प्रयोग किया जाता है।

विशेष निरीक्षण—यह उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में आया जब नये विषय, कार्यक्रम में सम्मिलित किये गये थे और शिक्षक इन विषयों के पढ़ाने की योग्यता नहीं रखते थे। निरीक्षक भी उन विषयों से परिचित नहीं थे। शारीरिक शिक्षा भी इन विशेष विषयों में से एक था। शारीरिक शिक्षा में निरीक्षण १९१० ई० के पहले नहीं था। शारीरिक शिक्षण निरीक्षण अब बहुत से देशों में मान्यता प्राप्त करता है।

निरीक्षक का सम्बंध संगठन के सदस्यों तथा शिक्षकों से:—

शारीरिक शिक्षण निरीक्षक एक विशेषज्ञ है जो सलाह देता है। वह न केवल शिक्षक तथा प्रधानाचार्य को सलाह देता है वरन् शिक्षा निरीक्षक को भी सलाह देता है।

टेकनिकल निरीक्षक—संगठन कर्ता, स्कूल निरीक्षक, प्रधानाचार्य, शिक्षक।

निरीक्षक का कर्त्तव्य—निरीक्षक का कर्त्तव्य शारीरिक शिक्षण में स्थानीय विभागों के नियम पर निर्भर है, नीचे कुछ कर्त्तव्य दिये गये हैं। निरीक्षक प्रधानाचार्य का विशेष विद्या संबन्धी (Technical) सलाहकार है। निरीक्षक सीधे शिक्षक के साथ कार्य करता है। निरीक्षक का मुख्य कार्य शिक्षा की उन्नति करना है। उत्तम निरीक्षक का गुण शिक्षकों में जोश पैदा करना है जिससे वे शिक्षा में प्रेम तथा उसके परिणाम का आनन्द ले सकें। निरीक्षक कोई इन्सपेक्टर नहीं किन्तु शिक्षक का सहायक है। निरीक्षक का कर्त्तव्य है शिक्षा सम्बन्धी बातों को दिखाना तथा कानफ्रेंस बुलाना। निरीक्षक का कर्तव्य है कि प्रधानाचार्य तथा शिक्षक का प्रशिक्षण करे। प्रधानाचार्य, संगठन कर्ता तथा निरीक्षक दोनों ही हैं। निरीक्षक अपने क्षेत्र में विशेषज्ञ है। निरीक्षक को अपने विचारों तथा व्यवहार में प्रजातांत्रिक होना चाहिये।

निरीक्षण की विधि—

बाहर के विशेषज्ञों को बुलाना।
नये शिक्षकों के लिये विशेष सभा करना।
अच्छे शिक्षकों द्वारा प्रदर्शन दिलवाना।
संक्षिप्त पर्चों के द्वारा सूचनायें देना।

शिक्षकों के पास जाना जिससे उनकी आवश्यक सहायता उनकी कठिनाइयों में दी जा सके।

शिक्षकों के लिये शिक्षा सेवा का निर्माण करना जैसे स्पोर्टस क्लीनिक, वर्कशाप, एक्सटेन्शन कोर्स, स्टेडी ग्रुप, कान्फ्रेंस।

शिक्षकों को वैयक्तिक सलाह एवं आदेश।

निरीक्षक के गुण—निरीक्षक को एक शिक्षित व्यक्ति होना आवश्यक है। अपने कार्यक्रम के दौरान में उसे अनेक व्यक्तियों तथा ग्रुप से मिलना पड़ता है। अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है तथा उन्हें सुलझाना पड़ता है। नीचे उसके कुछ गुण दिये जाते हैं।

उन वैयक्तिक गुणों को रखना जिससे उसे, उसके नेतृत्व में सहायता मिल सके। वह एक प्रभावशाली व्यक्ति हो जिसमें दूसरों पर प्रभाव डालने की शक्ति हो और स्वयं पौरुष तथा जीवन शक्ति से परिपूर्ण हो। उसे अपने कार्य की महानता पर अर्थात निरीक्षण कर्त्ता के कार्य पर तथा वर्त्तमान समाज में शिक्षा की महत्ता पर पूर्ण विश्वास होना चाहिये। उसे नये विचारों को अपनाना चाहिये तथा दूसरों की योग्यता को सराहने वाला होना चाहिये। उसे उत्तरदायित्व लेने के लिये सदैव तैयार रहना चाहिये तथा उसके पालन में किसी तरह की हिचकिचाहट या टालने की भावना नहीं होनी चाहिये। योजनाओं में सुचारु रूप से परिवर्तन करने की योग्यता होनी चाहिये, साथ ही साथ शिक्षकों में तथा शिक्षण अवस्थाओं में उन्नति की खोज के उपाय करना चाहिये। उसे एक सामाजिक व्यक्ति होना चाहिये जो दूसरे लोगों से मिलने वाला हो और उनके गुणों को सराहने वाला हो, जो दूसरो के साथ कार्य करने में आनन्द ले तथा उनके ग्रुपों तथा अधिकार को सम्मान की दृष्टि से देखे। प्रत्येक काम में ईमानदार हो और निष्कपट हो। अपने विषय में निपुण हो जिस से अपने नेतृत्व के कार्य का उत्तम लेखा दे सके। निरीक्षक कम से कम ग्रेजुएट हो। कार्यक्रम, स्कूल संगठन, शारीरिक सुविधायें तथा साधन, शारीरिक शिक्षा के प्रोग्राम के विभिन्न अंगों से परिचित, स्वास्थ शिक्षा, सामाजिक मनोरंजन इत्यादि के कार्य परिचालन का ज्ञान रखता हो। उपरोक्त का अर्थ प्रत्येक योग्यता जो निरीक्षक में होनी चाहिये उसकी सम्पूर्ण व्याख्या करना नहीं, केवल तात्पर्य यह है कि निरीक्षक एक विशेषज्ञ तथा सम्मान करने योग्य पुरुष हो।

विद्यार्थियों का निरीक्षण—कहा जा चुका है कि शिक्षण ही वह सरल तथा श्रेष्ठ प्राकृतिक माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्तित्व का विकास पूर्णरूप से हो सकता है। इस माध्यम में व्यक्ति की स्वतंत्रता से, जिस तरह कार्य होता है, उस तरह किसी और माध्यम से संभव नहीं। बालक स्वतंत्रता के वातावरण में अपना विकास करता है। किन्तु इस वातावरण में बालक के अनजाने शिक्षक का श्रेष्ठ हाथ है जो वातावरण को बालक के सही विकास के अनुकूल बनाता रहता है। अतएव यह आवश्यक है कि शारीरिक शिक्षण का प्रत्येक कार्य प्रशिक्षित शिक्षक के पूर्ण निरीक्षण तथा नियन्त्रण में हो। समयानुकूल शिक्षक का आदेश बड़े उच्च परिणाम प्राप्त कर सकता है। शिक्षक, जो बालकों के कार्यों का निरीक्षण करते हैं उनका ध्येय प्रत्यक्ष रूप में बालकों को मालूम नहीं रहता। वह अपना ध्येय जानते हैं किन्तु निरीक्षक जो कि शिक्षक है उसका ध्येय व्यापक होता है।

विशेषतः बालक की बढ़ती आयु में जिस समय वह अपने लाभ तथा हानि को भलि भांति नहीं समझ सकता, जब कि वह छोटी सी भूल, बेइमानी, तथा गलती इत्यादि को मामूली बात समझता है, उस समय निरीक्षण की अत्यन्त आवश्यकता है जिससे यह छोटी बात जो आगे चल कर भयंकर रूप धारण कर सकती है आरम्भ में ही नष्ट कर दी जाये। अधिकतर खिलाड़ियों में अनुशासनहीनता प्रायः इस कारण आती है, कि स्कूलों और कालेजों में खेलों का संगठन दोषपूर्ण होता है और खेलते समय बालकों के आचरण का सही निरीक्षण नहीं होता। स्कूलों में यह प्रथा है कि अप्रशिक्षित अध्यापक खेल का निरीक्षण करते हैं, इससे बढ़कर दोष कदाचित और नहीं हो सकता। जिन अध्यापकों को शारीरिक गुणों के द्वारा चरित्र के विकास का ज्ञान नहीं हो वह बालक की प्रगति तथा अनुशासन इत्यादि में क्या सहायता कर सकते हैं। इन्ट्राम्युरल ऐसे कार्यक्रमों में जहां विद्यार्थियों को काफी स्वतंत्रता दी जाती है, जो कि उनके व्यक्तित्व विकास के लिये अनिवार्य है तो भी शिक्षक का निरीक्षण सदैव रहता है। स्कूल तथा कालेज में बिना शिक्षक के निरीक्षण के शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम कभी भी नहीं होना चाहिये।

शिक्षक के निरीक्षण से संरक्षिता का प्रश्न हल हो जाता है। जिमनेज़ियम में जहां चोट लगना सम्भव है, पानी में जहां डूबने का भय है, हाइक या पर्यटन

में जहां अनुशासनहीनता हो सकती है, प्रतियोगिताओं में जहां विभिन्न प्रकार के प्रश्न एवं समस्यायें उपस्थिति हो सकती हैं जैसे, बालक का एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाना उसकी देख भाल क्योंकि हानि की सम्भावना हो सकती है आदि, शिक्षक के निरीक्षण की अनुपस्थिति में यदि बालक अकेला छोड़ दिया जाये तो बिना पतवार के नाव को धार के बीच छोड़ने के सदृश्य होगा।

विभिन्न प्रकार की संस्थाओं में निरीक्षण की प्रकृति—

जहाँ भी शारीरिक शिक्षा का कार्य हो रहा हो वहां निरीक्षण की आवश्यकता होगी। कार्य में निपुणता एवं प्रगति तथा उसे उत्तम स्तर पर लाने के लिये निरीक्षण सेवा अनिवार्य है।

साधारणत: शारीरिक शिक्षा की मुख्य संस्थायें जो भारतवर्ष में कार्य कर रही हैं वे हैं, सामान्य शैक्षणिक तथा प्रशिक्षण संस्थायें, म्युनिसिपल प्लेग्राउन्ड, वाइ० एम० सी० ए०, औद्योगिक संस्थायें, अखाड़ा, मंडल, व्यायामशाला, क्लब एवं ऐसोशियेशन। सामान्य शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थाओं में पूर्ण व्यवसायिक रीति से तैयार, प्रशिक्षित एवं अनुभवी निरीक्षक का होना आवश्यक है जिससे शिक्षा एवं प्रशिक्षण ऊंचे स्तर का हो, शारीरिक शिक्षा शिक्षकों की सेवा में प्रगति हो तथा परिणाम का माप जो शिक्षा कार्यक्रम, एवं प्रशिक्षण से प्राप्त हो वही सही एवं प्रेरक हो। एक उत्तम निरीक्षक शिक्षकों की सेवा को उत्तम, सरल एवं बहुतायत से सफल कर सकता है। उत्तम निरीक्षक पाठ्यक्रम तालिका के बनाने, टुर्नामेन्ट तथा स्पोर्टशीट के प्रबन्ध में, सभा एवं कान्फ्रेन्स के बुलाने में, सूचनायें एवं साहित्यों के उपलबद्ध करने में, सेवा में रहते हुये प्रशिक्षण की व्यवस्था आयोजन के द्वारा तथा समाज के सम्बन्ध के लिये प्रोग्राम आयोजित करने में शिक्षक की सहायता करता है एवं आदेश देता है।

छोटे स्कूलों या संस्थाओं में तथा प्रारम्भिक पाठशालाओं में—निरीक्षक का कार्य शारीरिक शिक्षा के प्रत्येक पक्ष में कक्षा शिक्षक के सहायक के रूप में होगा बहुतों का मत यह है कि प्रत्येक पक्ष का विशेषज्ञ होना चाहिये किन्तु भारतवर्ष ऐसे देश में आर्थिक दशा के कारण यह सम्भव नहीं। इसकी विशेष आवश्यकता भी प्रतीत नहीं होती क्योंकि आंकड़ों से यह पता चलता है कि जहां इस प्रकार के विशेषज्ञों का प्रबन्ध है वहां के बालकों की प्रगति तथा जहां यह प्रथा नहीं है, वहां के बालकों की प्रगति में विशेष अन्तर नहीं है।

यह सदैव सम्भव है कि जहां विशेषज्ञों की आवश्यकता हो वहां उनकी सेवा कुछ अवसर के लिये उपलब्ध कर ली जाये। औद्योगिक संस्थाओं में शारीरिक शिक्षा की समस्या भिन्न है एवं वहां का निरीक्षण भी शिक्षा संस्थाओं से भिन्न होगा। औद्योगिक शारीरिक शिक्षा निरीक्षक को औद्योगिक मनोविज्ञान एवं समस्याओं से पूर्ण परिचित होना चाहिये। निरीक्षण इस प्रकार से हो कि औद्योगिक कार्य करने वालों को विभिन्न कौशल सिखाने में सहायता प्राप्त हो जिससे प्रत्येक प्रकार के श्रम में थकान देर में तथा कम हो। कार्य में विशेषता प्राप्त करने की प्रणाली के कारण उद्योग में अधिक शारीरिक कार्य नहीं हो पाता। मशीनों के द्वारा कार्य करने के कारण व्यक्ति की गति सीमित रहती है। अतएव औद्योगिक निरीक्षण के द्वारा उपयुक्त एवं संतोषजनक गतियुक्त क्रिया के होने में सहायता आवश्यक है। अनेक अवस्थायें उद्योग में प्रस्तुत होती हैं जहां व्यक्ति विवश होकर कार्य करता है। उस कार्य में उसे रुचि नहीं होती। ऐसी अवस्था में उसके मानसिक विकार की सम्भावना है। शारीरिक शिक्षा निरीक्षण मे इस प्रकार की अवस्थाओं के निवारण के लिये ऐसी क्रियायें आयोजित होनी चाहियें जिनसे प्रसन्नता प्राप्त हो। निरीक्षण की सेवा, सुरक्षा, मनोरंजन, अवकाश के लिये क्रियाओं तथा कौशल के सिखाने में अधिकता से होना चाहिये। शारीरिक शिक्षा निरीक्षण का कर्त्तव्य है कि औद्योगिक वातावरण को स्वस्थ एवं मनोरंजक रूप दें। उद्योग में कार्य करने वाले तथा प्रबन्धकर्त्ता दोनों ही सम्पूर्ण मनोरंजन के प्रोग्राम में शारीरिक शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान जानते हैं। इसके मानसिक एवं शारीरिक लाभ से वे भलीभांति परिचित हैं। इसके परिणाम स्वरूप, उत्तम स्वास्थ्य, अधिक निपुणता, उत्पादन में वृद्धि, तथा कार्य करने वालों को अधिक प्रसन्नता प्राप्त होती है। अत: निरीक्षण के द्वारा इन गुणों को अधिक मात्रा में प्राप्त करने की चेष्टा होनी चाहिये। कितने ही औद्योगिक स्थानों में कार्य करने वालों को निवास स्थान प्राप्त हैं। अत: उनके लिये शारीरिक शिक्षा का उपाय सरलता से हो सकता है। किन्तु विशेष ध्यान उनकी ओर देना है जिन्हें दूर जाना होता है तथा उनके पास अधिक समय वहां मनोरंजन के लिये नहीं होता। निरीक्षण का कर्त्तव्य है कि उनके मनोरंजन का भी उपाय उपलब्ध हो। ऐसे व्यक्तियों के लिये यदि कुछ समय कार्य के घंटों के बीच दिये जायें तो आपत्ति नहीं होनी चाहिये। कम से कम उनके अवकाश पर तथा समय-समय पर मनोरंजन एवं शारीरिक शिक्षा का कार्य होना आवश्यक होगा, यद्यपि इसके द्वारा वह

लाभ सम्भव नहीं हो सकेगा जो उन्हें प्राप्त होना चाहिये। समस्यायें अनेक हैं। स्थान तथा समय के अनुसार उचित उपाय करना निरीक्षण का सर्वश्रेष्ठ कर्त्तव्य हैं।

ऐथेलेटिक क्लब तथा अन्य स्पोर्ट्स संस्थाओं में—वे व्यक्ति सदस्य होते हैं जिन्हें कुछ खेलों या स्पोर्ट्स में या सम्भव है पूर्ण शारीरिक शिक्षा में रुचि होती है। इनके प्रबन्ध में सहायता, इनके संगठन, संचालन तथा धन प्राप्त करने में निरीक्षण का अधिक सहयोग होगा। ये व्यक्ति विशेषकर दफ्तर, व्यवसाय, व्यापार आदि के ग्रुप होते हैं। इनके पास समय का अभाव रहता ही है। ये विशेषकर संध्या समय अपना कार्य करते हैं। इनके लिये घर के अन्दर के खेलों का भी आयोजन होना चाहिये। निरीक्षण के द्वारा इनकी क्रियाओं में प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिये।

चिकित्सालयों में—विशेष प्रकार के मनोरंजन एवं शारीरिक शिक्षा की भी व्यवस्था रोगियों के लिये होती है। इन रोगियों के लिये जो व्यायाम यदि नहीं कर सकते या किसी प्रकार के गतिप्रद क्रिया में भाग नहीं ले सकते उन्हें दूसरे व्यक्ति या साधनों के द्वारा मनोरंजन पहुंचाया जाता है। उचित निरीक्षण के द्वारा ऐसा उपाय हो सकता है कि वे भाग न लेते हुये भी अपने को उस मनोरंजन का एक भाग समझें। ऐसी अवस्था तथा केवल दूर से एक दर्शक की अवस्था में घोर अन्तर हो जाता है। यहां क्रिया प्रत्येक की अवस्था तथा आवश्यकता के अनुसार होती है। प्रत्येक कार्य चिकित्सक की सलाह तथा उनके आदेश के अनुसार किया जायेगा।

म्युनिसिपल प्लेग्राउन्ड—सार्वजनिक होते हैं तथा प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्रता से उसका प्रयोग कर सकताहै। ऐसे स्थान में जहां विभिन्न विचार वर्ग-स्थिति तथा आयु के व्यक्ति आते हैं वहां संगठन एवं संचालन का कार्य कुछ कठिन हो जाता है। ऐसी अवस्था में उत्तम निरीक्षण की आवश्यकता है जिससे इस विभिन्नता में एकता हो तथा कार्य प्रजातांत्रिक उपाय से चलाया जा सके। निरीक्षण का कार्य उचित कार्यक्रम तथा प्रशिक्षण सम्बन्धित होना चाहिये। प्लेग्राउन्ड की देख भाल म्युनिसिपल गार्डन के हाथ में होनी चाहिये। कुछ धार्मिक संस्थाये हैं जो अपने धर्मावलम्बियों के लिये मनोरंजन एवं शारीरिक शिक्षा का उपाय करती हैं। कुछ ऐसी धार्मिक संस्थायें हैं जो प्रत्येक

की शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन का अत्यन्त उत्तम प्रबन्ध करती हैं, जैसे वाई० एम० सी० ए० यहां का संगठन एवं संचालन कठिन होता है। उचित निरीक्षण की सहायता से वाई० एम० सी० ए० का कार्य सम्पूर्ण संसार में सराहनीय रहा है। वाई० एम० सी० ए० में उचित शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन के अतिरिक्त रहने के लिये छात्रावास (hostle) की भी प्रथा होती है। अतएव उत्तम निरीक्षण के द्वारा बहुमूल्य शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन का कार्य सम्भव है।

यूथ होस्टल—एक नयी प्रथा चली है जिसके अन्तर्गत विभिन्न स्थानों में इस संस्था के सदस्यों के लिये सस्ते दामों में रहने के लिये होस्टल का प्रबन्ध है। व्यक्ति हाइक, पर्यटन आदि के लिये एक स्थान से दूसरे पर स्थान पर सरलता से तथा अल्प व्यय में जा सकते हैं। उत्तम निरीक्षण से व्यक्ति के श्रेष्ठ गुणों का विकास इसके द्वारा किया जा सकता है।

दण्डित व्यक्तियों—के लिये भी आधुनिक ज्ञान के अनुकूल शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन उपलब्ध हैं। पहले यह विचार किया जाता था कि इन्हें किसी प्रकार का लाभ प्राप्त नहीं होना चाहिये। अतः शारीरिक शिक्षा या सामान्य शिक्षा इनके लिये उस अवसर में सम्भव नहीं थी। किन्तु वर्तमान समय में सब प्रकार की सेवायें इनके लिये उपलब्ध हैं जिसमें शारीरिक शिक्षा एवं मनोरंजन का विशेष स्थान है। इसके द्वारा व्यक्ति में उचित परिवर्तन लाना सम्भव है तथा उसे उच्च नागरिकों में स्थान प्राप्त कराया जा सकता है। उचित निरीक्षण के द्वारा उनकी मनोवृत्ति में परिवर्तन लाने के लिये शारीरिक शिक्षा का उत्तम उपयोग होगा।

१

मनोरंजन

मनोरंजन शब्द, ह्यूमेनिस्ट (Humanist) के द्वारा प्रथम प्रयोग किया गया था। इन्होंने मनुष्य के मनोरंजन का प्रयोजन समझा था। जैसे ही मनुष्य का अवकाश अधिक होता गया वह उसमें कुछ न कुछ करने की चेष्टा करने लगा। यही चेष्टा आज अवकाश के सदोपयोग के लिये मनोरंजन कार्य क्रम के द्वारा व्यवस्थित रूप से होती है। सुविधा एवं नेतृत्व के होने से ही मनोरंजन क्रिया में भाग लिया जाएगा यह सत्य नहीं है। व्यक्ति को इस में भाग लेने के लिये शिक्षित करना आवश्यक होगा।

कभी कभी, खेल (play), अवकाश (leisure), तथा मनोरंजन (recreation) परस्पर एक दूसरे के लिये प्रयुक्त होते हैं। ये आपस में एक नहीं हैं। अवकाश वह समय होता है जो व्यक्ति ने अपने लिये अर्जित किया है जिसमें वह जो चाहे उसे करने की स्वतंत्रता है। यह निश्चय है कि यह दूसरों की स्वतंत्रता तथा लिखित या अलिखित देश के नियम, किसी प्रकार इस अवधि में बाधा नहीं डालते। व्यक्ति अपने स्वतंत्र अवसर पर जो क्रियायें करता है उसके लिये अवकाश शब्द प्रयोग नहीं करना चाहिये। अवकाश केवल वह स्वतंत्र समय है जो व्यक्ति प्रयोग कर सकता है। अवकाश में खेल या मनोरंजन हो सकते हैं।

खेल से बालकों के मनोरंजन की क्रिया का अर्थ है, या प्रौढ़ के लिये जो उसे जीविकोपार्जन के कार्य से पृथक करता है। खेल सदैव मनोरंजक नहीं होता।

मनोरंजन, अवकाश का सदोपयोग माना गया है। व्यक्ति से यह आशा की जाती है, कि वह अपना अवकाश का समय इस प्रकार प्रयोग करेगा जिससे उसके व्यक्तित्व एवं पूर्ण विकास में लाभ हो। अतः मनोरंजन का अर्थ

अवकाश की क्रियाओं से है। ये क्रियायें रचनात्मक होती हैं। वे समय व्यतीत करने के लिये नहीं वरण समय प्रयोग करने के लिये होती हैं। वे मानसिक, शारीरिक एवं सामाजिक रीति से स्वास्थ्यकर होती हैं।

मनोरंजन के क्षेत्र में सुविधायें, कार्यक्रम, सामग्री, नेतृत्व तथा वे सभी वस्तुयें आती हैं जिन के द्वारा व्यक्ति अपने अवकाश का समय बुद्धिमता से तथा सदोपयोग के लिये प्रयोग करता है। मनोरंजन की शिक्षा एक विशेष क्षेत्र है जिस के द्वारा व्यक्ति को उसके मनोरंजन की आवश्यकता का बोध कराना है तथा उसके लिये मनोरंजक कौशल उपलब्द्ध करना है जिससे वह अपना अवकाश का समय जो दिन प्रति दिन अधिक ही होता जा रहा है भलि-भाँति प्रयोग कर सके।

मनोरंजन के सिद्धान्त--(१) मनोरंजन एक स्वतंत्र एवं ऐच्छिक क्रिया है, यह किसी प्रकार बलपूर्वक नहीं कराया जा सकता न व्यक्ति किसी प्रकार की मनोरंजन की क्रिया के करने के लिये बाध्य है।

(२) मनोरंजन में भाग लेने के लिये विभिन्न कौशल का सीखना आवश्यक है। यह कौशल का सीखना शिक्षा के सिद्धान्त पर होना अनिवार्य है।

(३) मनोरंजन अवकाश के समय का सदोपयोग है।

(४) मनोरंजन सम्बन्धी शिक्षा मनुष्य को यह ज्ञान देती है कि उस के अवकाश के समय का उपयोग इस प्रकार हो जो समाज के द्वारा मान्यता प्राप्त है।

(५) मनोरंजन, मनुष्य को पूर्ण एवं संतुलित जीवन व्यतीत करने में सहायता देता है।

(६) मनोरंजन जीवन का एक मार्ग है।

(७) मनोरंजन जीवन की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति कर रचनात्मक आत्म प्रकाशन में सहायक है।

(८) शारीरिक, मानसिक एवं संवेगात्मक जीवन की प्रगति में सहायता करता है।

(९) आधुनिक जीवन के तनाव एवं भार से स्वतंत्रता देता है।

(१०) वैयक्तिक एवं पारिवारिक जीवन के लिये सहायक है।

(११) उत्तम नागरिकता की वृद्धि करता एवं प्रजातांत्रिक जीवन में प्राण डालता है।

मनोरंजन के प्रकार—मनोरंजन के उद्देश्य को देखते हुये जैसे स्वास्थ्य विकास, मानव सम्बन्ध, नागरिकता, आत्म विकास आदि यह कहा जा सकता है कि वास्तविक मनोरंजन का एक ही प्रकार है। आधुनिक जीवन में अनेक मन बहलाव के साधन हैं किन्तु उनसे वास्तविक मनोरंजन सम्भव नहीं। सभ्य जीवन के मुख्य व्यापारिक मनोरंजन में सिनेमा (चलचित्र) अत्यंत प्रबल है। चलचित्र मनोरंजन के सिद्धान्त एवं उद्देश्यों की कसौटी पर खरा नहीं उतर सकता। उचित मनोरंजन की व्यवस्था न होने के कारण इसी का अवलम्ब लेना पड़ जाता है।

नगर एवं ग्राम के मनोरंजन में स्थानीय विभिन्नता तथा शिक्षा के कारण कुछ अन्तर आ जाता है। ग्राम में वहाँ के खेल कूद, लोक नृत्य, अखाड़े, निम्न श्रेणी के सामूहिक खेल, मेला, विभिन्न उत्सव, आदि मनोरंजन की प्रमुख वस्तुएँ हैं।

नगर में क्लब, एसोसियेशन, खेल की संस्थाएं, व्यापारिक मनोरंजन आदि के द्वारा मनोरंजन उपलब्ध है।

शिक्षा संस्थायें, समाज सम्बन्धित मनोरंजन केन्द्र खोल कर इस ओर अत्यन्त लाभ पहुँचा सकती हैं। शिक्षा संस्थायें बालक के प्रारम्भिक जीवन से ही मनोरंजन के लिये इस प्रकार शिक्षित कर सकती हैं कि वह प्रौढ़ जीवन में उन सामग्री का प्रयोग कर उचित मनोरंजन प्राप्त कर सकें। शिक्षा संस्था के प्रत्येक विषय में ऐसी सामग्री है जो मनोरंजन के लिये उचित रीति से प्रयोग हो सकती है।

संस्था, दिल बहलाव के कार्य (Hobbies) में उत्साह दिला कर जीवन को अत्यन्त उपयोगी एवं सफल बना सकती है।

भूगोल में विभिन्न स्थानों के स्टैम्प जमा करना, शारीरिक शिक्षा में

गतियुक्त कौशल, गृह शास्त्र में कपड़ों का डिजाइन तथा विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों तथा देशों में भोजन का ज्ञान, जीव वैज्ञानिक विषय में जानवरों, चिड़ियों तथा पेड़ पौधों का अध्ययन; पत्ते जमा करना, पत्थरों को जमा करना उनकी विभिन्नता जानना आदि ऐसे असंख्य विषय हैं जिनकी ओर बालक की रुचि बढ़ायी जा सकती है।

बाह्य जीवन, कैम्पिंग, पर्यटन आदि मनोरंजन के अत्यन्त उत्तम प्रकार हैं।

१०

ग्राम, नगर तथा औद्योगिक मनोरंजन के पक्ष

ग्राम में मनोरंजन—भारतवर्ष ऐसे देश के लिये जहां २/३ लोग गांवों में रहते हैं वहां गांवों की दशा राष्ट्र निर्माण में बहुत ही महत्वपूर्ण है। जैसे दूसरी चीजों में वैसे ही शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन में भी गांव पीछे रह गये हैं। ग्रामीणों का जीवन दर्शन एक अनोखी चीज है। प्रत्येक वस्तु को दैवी देन के रूप में मान लेते हैं अतएव अपनी गिरी हुई दशा भी भगवान की कृपा ही समझते हैं और उसी में सन्तुष्ट होने की चेष्टा करते हैं। ग्रामीणों के लिये जीवन में मनोरंजन प्रायः शून्य है। उनके लिये मनोरंजन के उपयुक्त साधन नहीं हैं। गांव में लोग प्रायः प्रातः काल से गोधूलि तक परिश्रम करते और अपने निवास स्थान पर पहुंच कर खाने पीने तथा विश्राम करने के सिवा और कुछ नहीं करते हैं। परिश्रम से विश्राम पाने के लिये बहुत से लोग मादक वस्तुओं का व्यवहार करते हैं। ग्रामीणों के लिये मनोरंजन का एक साधन वार्तालाप है जो प्रायः चौपाल में आपस में बैठ कर होता है। साधारण वार्तालाप घरेलू बातों, मौसम, खेत, पशु सम्बन्धी, शादी ब्याह, दूसरे की निन्दा आदि के रूप में होता है। यह शैक्षणिक स्तर से बहुत गिरा हुआ होगा क्योंकि उनके विचार विस्तृत तथा गहरे नहीं होते। साधारणतः जो आयु में सबसे बड़ा होता है उसी की बात सच समझी जाती और मान्यता पाती है।

स्वास्थ्य शिक्षा, शारीरिक शिक्षा तथा मनोरंजन का प्रारम्भिक ज्ञान भी उन्हे नहीं होता। यह अत्याधिक आवश्यक है कि जीवन विकास की ये उचित तथा आवश्यक सुविधायें उनके लिए उपलब्ध की जायें। शैशवकाल से लेकर प्रौढ़ अवस्था तक प्रत्येक वर्ग के लिये उचित मनोरंजन के साधन होना आवश्यक है। स्त्रियों के लिए परिवार तथा परिश्रम छोड़कर जीवन में कुछ है ही नहीं। वर्ष में एक या दो मेले तथा त्योहार इत्यादि जो आते हैं वही उनके आनन्द का अवसर

होता है और इनके लिए बहुत ही उत्सुकता रहती है तथा अपनी रीति से बड़ी बड़ी तैयारियाँ करती हैं। ग्रामीणों के शारीरिक परिश्रम में कमी नहीं होती किन्तु इस कठिन परिश्रम और शरीर विकास के परिश्रम जो शारीरिक शिक्षा द्वारा दिया जाता है उसमें अन्तर है। ग्रामीण अपने कार्य को कर्त्तव्य या काम के रूप में करते हैं इसलिए यह कर्त्तव्य अपने आप में तथा प्रसन्नता प्रदान करने वाला नहीं होता। वह एक बोझ है जिसे उठाना आवश्यक है। परिश्रम से विश्राम के लिए, मन बहलाव के लिए और मानसिक विकास के लिए किसी न किसी प्रकार का उचित मनोरंजन ग्रामीणों के लिए परम आवश्यक है।

ग्रामीणों की दूसरी समस्या खाली समय का सदोपयोग है। इनका काम मौसम के अनुसार चलता है। कभी कभी बहुत अधिक काम होता है, कभी आवश्यकता से अधिक अवसर होता है। इस अवसर का उपयुक्त प्रयोग ये कर नहीं पाते। इन बेचारों को पता भी नहीं कि खाली समय का सदोपयोग कैसे हो।

अशिक्षा इनका सबसे बड़ा अवगुण है। शारीरिक शिक्षा का कर्त्तव्य है कि मनोरंजन के साधन तथा प्रकार उनके लिए उपलब्ध करे। जब तक गाँवों की उन्नति नहीं होती, भारतवर्ष सही उन्नति नहीं कर सकेगा।

नगर का मनोरंजन तथा शिल्पकारी :—

नगर में उद्योग धंधों तथा शिल्पकारी के बढ़ने से लोग उसी ओर आकर्षित होते हैं। गाँवों की अपेक्षा नगर का जीवन कुछ अधिक आकर्षित होता है अतएव प्रत्येक की चेष्टा यही होती है कि नगर में ही निवास करे। सामाजिक कारण होते हुए भी आर्थिक कारण विशेष है। मनुष्यों का यह विचार है कि धनोपार्जन के लिए नगर ही उत्तम है। अतएव योग्य व्यक्ति जिनमें उत्साह तथा फुर्ती है यहाँ आ जाते हैं। यही एक कारण है कि गाँव ऐसे योग्य व्यक्तियों से वंचित हो जाता है और उन्नति नहीं हो पाती। साधारण विचार यह होता है कि गाँव नगर से स्वास्थ्यकर है तो भी गाँवों में शहरों की अपेक्षा अधिक बीमारियाँ होती हैं। इस प्रकार के नगर में जन समूह के बढ़ जाने से कितनी आवश्यकतायें बढ़ जाती हैं और इन आवश्यकताओं के हल करने में शारीरिक शिक्षा का एक बहुत बड़ा हाथ है। इस प्रकार की भीड़ जो नगर में हो जाती है उसके कारण निवास स्थान का अभाव, खेलने के स्थान

की कमी, प्राकृतिक रीति के मनोरंजन की कमी इत्यादि के कारण, शारीरिक शिक्षा का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि ऐसे कौशल तथा मनोरंजन में रुचि बढ़ायें जिससे बड़ी मांस पेशियों का काम बाह्य अवस्था में तेजी तथा शक्ति के साथ हो सके। नगर की ऐसी अवस्था के कारण बहुधा साधन प्राप्त भी नहीं होते क्योंकि बहुत से लोग हैं जिन्हे कौशल आता है तथा मनोरंजन की रुचि भी है किन्तु साधन उपलब्ध नहीं। इसका परिणाम यह होता है कि बालक जन्म से ही निर्बल होते हैं तथा उनमें न कौशल होता न मनोरंजन की रुचि ही रहती है और इस कारण जो खाली समय उनके पास होता है उसका सदोपयोग नहीं कर पाते। यह शिक्षा की समस्या है कि कैसा आविष्कार हो कि युवकों का अनुभव इस प्रकार हो जिससे वे ऐसी आदत, गुण, कौशल, रुचि आदि का विकास करें जिसकी समाज को आवश्यकता है और फिर ऐसे साधन उपलब्ध करें जिसके द्वारा इन गुणों का विकास सम्भव हो सके। जो जीवन को एक प्रगति की दृष्टि से देखते हैं उनके लिए कोई और मार्ग है ही नहीं। यह वह शक्ति है जो हर एक क्षण नयी तथा उत्तम जीवन की रीति का आविष्कार करती तथा वह उन सम्भावनाओं को जो मनुष्य के जीवन तथा वातावरण में व्यापक है अर्जित करती है। मनुष्यों की आवश्यकता, शक्ति, स्वास्थ्यकर रीति तथा खाली समय का सदोपयोग, क्रियावाही, गतिवाही कौशल तथा प्रजातांत्रिक आदर्शों के लिए अत्यधिक है। ऐसी आवश्यकतायें मनुष्य की आन्तरिक प्रकृति प्रतिबिम्बित करती हैं और सामाजिक समस्याओं में जहाँ वह अपने को पाता है इनकी उन्नति और हो जाती है।

शिल्पकारी के कारण अधिकतर काम बैठ के करने का हो गया है। ९० फीसदी लोग बैठ कर व्यवसाय करते हैं जिनके पूर्ण समय कार्य करने के बाद कदाचित एक बून्द पसीना भी न आता हो। यह बैठ कर जीवन व्यतीत करने की हानि तथा खतरा परिवार स्कूल तथा व्यवसाय सभी में पाया जाता है। आधुनिक शिल्पकारी तथा व्यवसाय में विशेषज्ञता पर अधिक ध्यान दिया जाता है। किसी काम के लिए एक या दो विशेषज्ञ होते हैं। इसके उपरान्त मशीन से काम करने के कारण व्यक्तियों की सहायता की आवश्यकता नहीं होती। विशेषज्ञता तथा मशीन के साथ काम करने के कारण व्यक्तियों को पारस्परिक उत्तेजना तथा प्रतिक्रिया का अवसर नहीं मिल पाता। वह मूक यन्त्र के साथ अकेलापन महसूस करने लगता है और कठिन कार्य की जो चतुरता तथा

सरलता से की जाती है उसमें भी व्यक्ति थकान का अनुभव करने लगता है। ऐसी अवस्था में मानसिक तथा शारीरिक विकार उत्पन्न होते हैं। इनके निवारण का एक श्रेष्ठ उपाय उचित मनोरंजन के द्वारा है जहाँ एकत्रित भावनाओं का प्रवाह तथा थकान से विश्राम तथा चिन्ता से प्रसन्नचित अनुभव प्राप्त हो सके। नगर में भी मनोरंजन के सही साधन नहीं हैं। प्राय: नगरों में व्यापारिक मनोरंजन उपलब्ध हैं जहाँ व्यक्ति के विकास तथा शिक्षा पर अधिक ध्यान न देकर आर्थिक लाभ पर विशेष ध्यान दिया जाता है। ऐसे मनोरंजन तथा मन बहलाव के कारण उनकी बड़ी माँस पेशियों में कोई प्रभाव नहीं होता और शारीरिक कार्यों की सफलता प्राप्ति के कारण जो संतोष मिलना चाहिए नहीं मिलता।

शिल्पकारी सम्बन्धी मनोरंजन के अनेक रूप हो सकते हैं। मन बहलाव तथा मनोरंजन को ध्यान रखते हुए यह उपयुक्त है कि इन पर सांस्कृतिक मान्यता प्राप्त हो। जैसे बड़े बड़े शहरों में मनोरंजन के लिए नाइट क्लब होते हैं जहाँ बहुत ही निम्नस्तर के मनोरंजन प्राप्त होते हैं और वास्तव में नैतिक दृष्टि से ऐसे क्लबों के होने से न होना अच्छा है। क्योंकि विशेषत: ऐसे स्थानों में समय की बरबादी, धन की बरबादी तथा जीवन की बरबादी अधिकता से होती है। जहाँ मदिरा पान तथा भोग विलास मनोरंजन के लिए होंगे उससे कुछ समय के लिए कदाचित् मनोरंजन मालूम हो लेकिन वह वास्तविक मनोरंजन जिसमें मानसिक, शारीरिक तथा नैतिक विकास हो, नहीं होगा। शिल्पकारी अवस्था में जहाँ व्यक्तियों को भिन्न भिन्न समय पर काम करना पड़ता है वहाँ उनके लिये उसके समय के अनुसार मनोरंजन का प्रबन्ध होना चाहिए। शारीरिक शिक्षा में शिल्पकारी के बढ़ने से जो समस्यायें आ गयी हैं उनका सही हल करना होगा। जहाँ भी हो जैसे भी हो, मनुष्य की स्वास्थ्य अवस्था सर्वदा आवश्यक होगी तथा शारीरिक स्वास्थ्य के बिना किसी प्रकार की उन्नति नहीं हो सकती। शारीरिक स्वास्थ्य का अर्थ है मानसिक, शारीरिक, आत्मिक स्वास्थ्य और इसकी प्राप्ति में सही मनोरंजन सबसे अधिक सहायक है, चाहे वह गाँव में हो या नगर की शिल्पकारी सम्बन्धी अवस्था में।

मनोरंजन में नेतृत्व—मनोरंजन में नेतृत्व के लिये व्यक्ति को यह विश्वास करना होगा कि मनोरंजन, संसार में एक रचनात्मक शक्ति है, इसके द्वारा आधुनिक जीवन के व्यतीत करने के लिये व्यक्ति को मानसिक एवं

संवेगात्मक उत्तेजना, विश्राम, शारीरिक विकास प्राप्त होता है, इसका प्रमुख उद्देश्य समाज में प्रसन्नता के अवसरों को बढ़ाने तथा अधिकता से उपलब्द्ध करने में है। मनोरंजन का नेतृत्व करने वालों का एक बहुत बड़ा सार्वजनिक उत्तरदायित्व है।

मनोरंजन नेतृत्व के लिये उचित प्रशिक्षण होना अति आवश्यक है। मनोरंजन का क्षेत्र विस्तृत है तथा मानव समाज के प्रत्येक व्यक्ति, स्तर, वर्ग, आयु, लिंग के लिये मनोरंजन उपलब्द्ध करने के लिये उचित मनोविज्ञान, सामाजिक, आर्थिक, प्रजातांत्रिक, व्यवसायिक, आधुनिक समस्याओं आदि का उचित ज्ञान होना आवश्यक है। अनेक प्रकार के कौशल का ज्ञान जो मनोरंजन के नेता के लिये आवश्यक है, उनके सिखाने की प्रवीणता भी उसमें होनी चाहिये।

मनोरंजन नेतृत्व का यह उत्तरदायित्व है कि वे साधन उपलब्द्ध करें। उत्तम कार्यक्रम का चलाना एक प्रमुख आवश्यकता है। मनोरंजन की सुविधाओं के साथ मनोरंजन के लिये शिक्षा भी होनी चाहिये।

कैम्पिग—वाह्य जीवन तथा कैम्पिग शिक्षा के महत्वपूर्ण भाग समझे जाते हैं। प्रजातांत्रिक जीवन में शिक्षा के लिये इससे उत्तम माध्यम प्राप्त करना कठिन है। मानव सम्बन्ध की प्रयोगशाला में जीवन व्यतीत करने की शिक्षा खेलने, कार्य करने तथा दूसरों के साथ काम करने का यह अवसर प्रदान करता है।

प्राकृतिक वातावरण में प्रकृति के विषय में शिक्षा देना, प्राकृतिक रीति से रहना एवं शिक्षा देने का यह एक बहुमूल्य माध्यम है। इसमें करने के द्वारा सीखना होता है। यह कक्षा का विस्तार है जिसमें सामान्य शिक्षा का प्रोग्राम चलता ही रहता है तथा बालकों को सामाजिक, शारीरिक, आत्मिक तथा नैतिक शिक्षा जीवन के अनुभव के द्वारा देने की सम्भावना होती है।

कैम्पिग के सामान्य उद्देश्य, सामाजिक जीवन का चलन सिखाना तथा मानव सम्बन्ध की शिक्षा देना, बालकों को वाह्य जीवन का ज्ञान देना जिससे वे सीख सकें कि उसमें कैसे रहना है, उसके साथ किस प्रकार रहना है तथा दूसरों के लिये उसकी किस प्रकार रक्षा करना है। वास्तविक अनुभव प्राप्त

करना, स्कूल पाठ्यक्रम का उसे एक भाग बनाना, स्वतंत्र प्रसन्नता पूर्ण अनुभव प्राप्त करना तथा नैतिक एवं आत्मिक चैतन्यता में वृद्धि करना है।

ये उद्देश्य उचित अन्त परिणाम या ध्येय हैं तथा सामान्य शिक्षा के सामाजिक मानसिक तथा स्वास्थ्य के ध्येय से सम्बन्धित हैं।

कैम्पिग के प्रकार

एक दिन का कैम्प—यह एक दिन या चौबीस घंटे का कैम्प हो सकता है। ऐसे मौसम में होता है जब अधिक वस्त्रों की आवश्यकता नहीं होती। प्रत्येक अपना भोजन अपने साथ रखते हैं।

कुछ समय का कैम्प—दो, चार, पांच, सात दिन आदि अवधि के कैम्प होते हैं। ये विशेष प्रशिक्षण कैम्प होते हैं जैसे स्काउटिंग, सेन्ट जोन्स एमब्यूलेन्स, एन० सी० सी० आदि।

स्थायी कैम्प—कुछ ऐसे स्थायी कैम्प होते हैं जहां स्थायी कैम्पिग की स्थायी सुविधायें होती हैं। संसार में ऐसे स्थानों की कमी है। इसी प्रकार के स्थायी कैम्प यूथ होस्टल के रूप में खुल रहे हैं। भारतवर्ष में 'कोहनूर कैम्प' सात ताल में जो यू० पी० के नैनीताल जिले में स्थित है, डाक्टर नैश के द्वारा संसार का तीसरा मुख्य स्थायी कैम्प घोषित हुआ था।

सप्ताह के अन्त के कैम्प—सप्ताह के अन्त के कैम्प (Week end Camps) में व्यक्ति शनिवार की शाम को जाते तथा रविवार कैम्प में व्यतीत करते हैं। यह भी एक प्रकार का स्थायी संगठन हो जाता है। प्रत्येक सप्ताह के अन्त के लिये एक नया स्थान या विषय चुन लिया जाता है।

विचार अवसर एवं आवश्यकता के अनुसार भी कैम्प आयोजित किया जाता है।

धार्मिक विचारों, ध्यान एवं अध्ययन के लिये, संकट कालीन अवस्थाओं के प्रशिक्षण के लिए, श्रमदान के लिये, लोक तथा समाज सेवा के लिये, ग्राम उत्थान तथा प्रौढ़ शिक्षा के लिये, ऐथेलेटिक या अन्य विशेष शारीरिक

शिक्षा कार्यक्रम के प्रशिक्षण के लिये, सेना तथा समाज सेवा प्रशिक्षण के लिये, श्रमिकों के लिये, निजी एवं सार्वजनिक कैम्प भी आयोजित होते हैं। जिस प्रकार का भी कैम्प हो, शारीरिक शिक्षा उस कैम्प का एक भाग अवश्य है।

नेतृत्व—कोई व्यक्ति जो शारीरिक शिक्षा में प्रशिक्षित है कैम्प का संगठन एवं संचालन विशेषकर स्कूल कैम्प का कर सकता है। अन्य कैम्प के लिये जिस विचार या आवश्यकता से कैम्प किया जा रहा हो उस विशेष विषय के विशेषज्ञों का होना आवश्यक है।

स्थान—कैम्पिग स्वस्थ प्राकृतिक वातावरण में होना चाहिये। तेज धूप या मौसम की अनिश्चितता से रक्षा का उचित प्रबन्ध होना चाहिये। पीने का पानी सरलता से उपलब्ध हो। कैम्प के स्थान पर बाधायें न हों। समतल जमीन अच्छी होती है। आग लगने की या किसी प्रकार की हानि पहुंचाने वाली वस्तुयें आस पास न हों। यह आवश्यक है कि जहां कैम्प किया जा रहा हो वहां यदि आज्ञा की आवश्यकता है या सूचना देने की आवश्यकता है तो उचित आज्ञा प्राप्त करना तथा सूचना देना चाहिये। कैम्प करने वालों को सदैव इस बात पर ध्यान रखना चाहिये कि वातावरण या कैम्प के स्थान का किसी प्रकार अनुचित प्रयोग न करें।

दैनिक कार्य क्रम—प्रातः उठना ५ बजे। प्रार्थना तथा तैयारी ५–६·०० शारीरिक शिक्षा का कार्य क्रम ६·००–६·४५। जलपान ६·४५–७·४५। कैम्प का निरीक्षण ७·४५–८·३०। कक्षा एवं प्रशिक्षण ८·३०–११·००। भोजन ११·००–१·००। अवकाश के समय का कार्य १·००–२·००। मध्याह्न प्रशिक्षण २·००–४·००। जलपान ४·००–४·३०। संध्या के खेल एवं मनोरंजन ४·३०–६·००। भोजन ६·००–८·००। कैम्प फायर, रात्रि प्रशिक्षण क्रियायें आदि ८·००–९·३०। लाइट्स आउट ९·४५।

सामग्री—यदि कैम्प के स्थान पर खाने पीने की सामग्री न मिलती हो तो पूर्ण सामग्री ले जाने की योजना होनी चाहियें। प्रारम्भिक चिकित्सा की पूर्ण व्यवस्था हो। टेन्ट आदि आवश्यकता के अनुसार होने चाहिये। पानी रखने की उचित व्यवस्था हो। छोटे औजार जो बालक प्रयोग कर सकते हैं उपलब्ध चाहियें।

———

शारीरिक शिक्षा की पद्धति

१

पद्धति एवं प्रस्तुतिकरण

आधुनिक संसार में जब तक कार्य वैज्ञानिक रीति से नहीं किया जाता तब तक उसकी सफलता एवं सत्यता पर हम निर्भर नहीं रह सकते। शिक्षा में भी यह सत्य है। शिक्षा का आधार एवं शिक्षित करने की पद्धति वैज्ञानिक ढंग की होनी आवश्यक है।

कितने लोगों का कहना है कि शिक्षित करना एक कला है। कला के द्वारा अनुभव को अर्थ दिया जाता है यह तथ्यों को संयुक्त करता है। यह एकता की ओर ले जाता है। इसके विपरीत विज्ञान में तथ्यों का विभाजन, कारण एवं परिणाम की खोज आदि प्रमुख हैं, किन्तु यदि वास्तव में देखा जाये तो कला में रचनात्मकता, दृष्टिकोण, कार्य का अपने आप होना तकनीक पर ही निर्भर करता है। तकनीक में वैज्ञानिता के आ जाने से विधिवत कार्य अनिवार्य हो जाता है किन्तु यदि देखा जाये तो वास्तविक स्वतंत्रता विधिवता होने में ही है। शिक्षा में विज्ञान एवं कला का यही सम्बन्ध है। इन्ही के सहयोग से शिक्षार्थी के सम्मुख शिक्षा प्रस्तुत करना है।

प्रस्तुत करने की तकनीक—प्रस्तुत करने की रीति या तकनीक एक महत्वपूर्ण विषय है। प्रत्येक कार्य करने का एक उपाय, एक रीति या तकनीक

होती है । जिस प्रकार कार्य सरलता, सफलता तथा अल्प व्यय एवं समय में हों वही प्रकार या तकनीक उचित एवँ उपयुक्त कही जा सकती है । यह स्थिति अवकाश एवं परिणाम पर निर्भर है । कार्य को सही रूप देने का अर्थ है अपना तथा शिक्षा का पूर्ण ज्ञान एवं तैयारी । इस के अन्तर्गत निम्नलिखित आते हैं ।

(i) **व्यक्तिगत तैयारी–वैयक्तिक रूप**—शिक्षक को प्रत्येक कक्षा के लिये सिर से पैर तक तैयार होना चाहिये । इस का अर्थ है स्वच्छ साफ तथा समयानुकूल वस्त्र, बाल एवं शरीर की सफाई, दांतों की सफाई आदि । शिक्षक का वैयक्तिक रूप मनोहर होना आवश्यक है ।

उपयुक्त वस्त्र—कार्य के अनुसार वस्त्र का होना आवश्यक है । एथेलेटिक या खेल में ढीले ढाले कपड़े या वे वस्त्र जो साधारणत: प्रयोग किये जाते हैं अभ्यास या शारीरिक क्रियाओं में उपयुक्त नहीं होंगे ।

उचित आसन या डीलडौल—शिक्षक जो उचित डील डौल धारण करते, सही एवं सीधे चलते, खड़े होते तथा जिनकी आकृति सर्वदा सामने रहती है उनका सम्मान अधिक होता है ।

शारीरिक शिक्षक को इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि जब वह शारीरिक कार्य नहीं करा रहा है तब उस प्रकार के कपड़े उचित रीति से पहिने जो समाज की प्रथा है । अनेक बार इस बात की ओर ध्यान नहीं दिया जाता । वैयक्तिक उचित भावनाओं को विकसित करना आवश्यक है । इसी से व्यवहार निर्देशित होगा । इसी के द्वारा आत्म नियन्त्रण प्राप्त होगा ।

(ii) **तकनीकी तैयारी**—तकनीकी तैयारी में चार मुख्य बातें हैं । सिखाने के विषय का चुनाव एवं उसका संगठन, विषय प्रस्तुत करने के लिये सुविधा एवं साधनों को उपलब्ध करना, इस बात का निर्णय करना कि कौन सी तकनीक, पद्धति या माध्यम विषय प्रस्तुत करने के लिये सर्वोत्तम होगी तथा कार्य योजना के अनुसार कक्षा का संगठन किस प्रकार होगा ।

सर्व प्रथम शिक्षक को विद्यार्थियों तथा स्कूल के सिद्धान्तों का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है । विभाग के उद्देश्यों से पूर्ण परिचित होना चाहिये ।

प्रत्येक स्कूल के खंड के शारीरिक शिक्षा तात्पर्य एवं प्रयोजन से परिचय

एवं उनके लिये शारीरिक शिक्षा का मूल्य, प्रत्येक के लिये पृथक कार्यक्रम तथा इनसे आशा किया हुआ परिणाम का ज्ञान होना आवश्यक है ।

उद्देश्य निकटवर्ती एवं दूरवर्ती होते हैं । उद्देश्य के पूर्ण रूप का ज्ञान होना चाहिये । दोनों सम्बन्धित हैं । तकनीकी शिक्षा का परिणाम विशेष कौशल के सीखने में है । इस कौशल के साथ सम्बन्धित सीखने का ज्ञान होता है जैसे तैरना सीखने से पानी से भय न होना, गहराई का ज्ञान, पानी के बहाव एवं ठहरने का ज्ञान आदि भी सीखते हैं । यह ज्ञान साधारण या जटिल किसी प्रकार का हो सकता हैं । इस प्रकार का ज्ञान सम्मिलित या सम्बन्धित ज्ञान (Associate learning) कहलाता है । तकनीकी एवं सम्मिलित ज्ञान के साथ सह ज्ञान (Concomitant Learning) भी होता है । गतियुक्ति क्रिया के करने के साथ उस क्रिया तथा दूसरे जो क्रिया करते हैं उनके प्रति भावनाओं का प्रवाह होता है । दूसरे अर्जित ज्ञान जिस योग्यता से प्राप्त किये जाते हैं उससे इनका विशेष सम्बन्ध नहीं भी हो सकता है । सर्वोत्तम चेष्टा करना, लिये हुये कार्य को अन्त तक करना, अपने कर्त्तव्यों का पूर्ण पालन, दूसरों के अधिकार की मान्यता एवं उसके प्रति सम्मान, विरोधियों के प्रति उदारता एवं सहकारियों के साथ विश्वस्तता आदि सहज्ञान के उदाहरण हैं ।

किसी भी तकनीक या पद्धत्ति में शिक्षक को बालक के सहज्ञान का पूर्ण परिचय होना चाहिये । इससे उसके विचारों एवं भावनाओं का ज्ञान होगा । उचित सहज्ञान ही से रुचि की उत्पत्ति होती है । किसी विषय की प्रशंसा, विचार एवं आदर्श जो जीवन में स्थित किये जाते हैं इन्हीं के द्वारा होते हैं ।

शिक्षक के लिये विषय का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है । विषय में आत्म-निर्भरता प्राप्त करना आवश्यक है । यदि शिक्षक विषय के सिद्धान्त एवं अभ्यास से पूर्ण परिचित नहीं है तो उसका सफल होना कठिन है । बालकों के आदर्श एवं सम्मान का पात्र होने के लिये विषय ज्ञान अति आवश्यक है ।

शिक्षक को इस बात का निर्णय करना है कि शिक्षा किस प्रकार दी जायेगी । कक्षा का संगठन, समझाने की पद्धति, प्रदर्शन, प्रेरणा, क्रिया के लिये निश्चित समय, अभ्यास की प्रणाली आदि विषय हैं जिनके प्रति कक्षा में पूर्ण निश्चित ज्ञान का होना अति आवश्यक होगा । यह सम्भव है कि वातावरण

एवं स्थिति के कारण किसी कक्षा के आयोजित पाठ्यक्रम में आक्समिक परिवर्तन करना पड़े। इस आक्समिक परिवर्तन के लिये भी शिक्षक को सदैव सतर्क एवं तैयार रहना चाहिये। शिक्षा के लिये सुविधाओं एवं साधनों को कक्षा के पूर्व उपलब्ध करना चाहिये।

शारीरिक शिक्षा के अभ्यास एवं क्रियाओं में इस प्रकार की तकनीक का प्रयोग करना चाहिये जिससे शारीरिक क्रिया शक्ति शाली एवं तीव्र गति से हो, जिससे आन्तरिक अंगों का विकास सम्भव हो। शारीरिक शिक्षा, विकास एवं बढ़ाव में सहायक हो। शिक्षा में तकनीक इस प्रकार हो कि सरल से जटिल की ओर प्रगति हो। क्रिया के प्रति प्रेरणा तथा संतोष प्राप्त हो। दंड का भय भी कभी कभी प्रेरणा उत्पन्न करता है। दंड के प्रयोग में, यह देखना आवश्यक है कि वह क्रिया सम्बन्धित हो, उसके परिणामतयः जो प्रतिक्रिया हो वह सही हो तथा उसे विचार पूर्ण एवं उचित रूप से प्रयोग किया जा रहा हो।

विद्यार्थियों की क्रिया में, कठिनाइयों का उचित विशलेषण करना एवं सुधार का ज्ञान देना जिससे प्रगति सम्भव हो सके। इसके लिये क्रिया का उचित रूप एवं किस प्रकार दोष के लिये क्रिया का विश्लेषण हो यह शिक्षक को भली भांति जानना चाहिये।

अभ्यास किस प्रकार हो उसका उचित ज्ञान होना चाहिये। क्रिया, आयु, लिंग, स्थान, आवश्यकता, रुचि, आदि के अनुसार होनी चाहिये। जैसे ६-११ वर्ष तक सामान्य क्रियायें, १०-१२ तकनीक का आरम्भ, १२-१५ टीम के खेलों की अवधि तथा १६ वर्ष से आगे तीव्रता एवं कौशल होना चाहिये। विषय की तकनीक के जानने के पूर्व उसमें तीव्रता नहीं आ सकती।

सम्बन्धित या सम्मिलित ज्ञान के सिखाने में रुचिकर क्रियाओं का प्रयोग तथा इनमें उन्नति करने के लिये मनोवैज्ञानिक प्रगति की सहायता लेना आवश्यक है। इस प्रकार उन क्रियाओं की शिक्षा दी जा सकेगी एवं उनके प्रति रुचि उत्पन्न होगी जिनका जीवन में मूल्य है तथा पूर्ण जीवन में उनसे सहायया प्राप्त होती है और जीवन पर्यन्त किये जा सकेंगे।

सहज्ञान के सिखाने में शिक्षक को वैयक्तिक विभिन्नता का ज्ञान होना

चाहिये। उत्तम चरित्र के निर्माण की चेष्टा में सदैव लीन होना चाहिये जिससे उचित सामाजिकता की शिक्षा सम्भव हो सके।

विद्यार्थियों एवं अपने शिक्षक साथियों के साथ संतोषजनक सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक है।

(iii) **विषय सामग्री का संगठन**—शिक्षा का वैज्ञानिक रूप लेने से, विषय सामग्री के संगठन में कुछ ऐसे विषय हैं जिन पर सोच विचार करना अनिवार्य है, जैसे स्थिति का विशलेषण, जिन्हें शिक्षा प्राप्त करना है उनकी विशेषताओं का ज्ञान, विषय का ध्येय, उद्देश्य जो प्राप्त करना चाहते हैं, स्थिति, बालकों की विशेषता, ध्येय एवं उद्देश्य से सम्बन्धित कार्यक्रम।

अतएव विषय सामग्री का संगठन एक चुनाव है तथा विषय सामग्री पर केन्द्रित शैक्षणिक अनुभव है जो विषय के अन्दर के किसी भाग से सम्बन्धित है। यह अन्दर का भाग कोई सामान्य विचार, विषय या प्रकरण हो सकते हैं। इसे बालकों को अध्ययन करना है जिसका परिणाम सीखना या शिक्षा होगा, जो विषय सामग्री के द्वारा अनुभव प्राप्त करने के कारण सम्भव होगा।

उच्च श्रेणी के संगठित एवं जटिल शारीरिक शिक्षा में विषय सामग्री का संगठन अनिवार्य हो जाता है। फुटबाल या बासकेटबाल के खेलने में कई एक पाठ योजना के मेल के द्वारा ही ध्येय प्राप्त हो सकेगा। यह पाठ योजना का मेल प्रत्येक शारीरिक क्रिया में सम्भव नहीं है। कई एक क्रियायें ऐसी हैं जिनके पाठ्यक्रम में पारस्परिक कोई सम्बन्ध नही किन्तु असम्बन्धित होते हुए भी पूर्ण क्रिया के सिखाने के लिये आवश्यक होते हैं। उदाहरण के लिये टम्बलिंग या लोक नृत्य हैं। विषय सामग्री का संगठन कठिनाई के क्रम के अनुसार किया जाता है। इसके चुनाव का निर्णय विषय के अन्तर्गत श्रेणी के अनुसार ही होगा।

शिक्षा के लिये, विषय सामग्री का संगठन श्रेष्ठ संस्था पाठ्यक्रम योजना से सम्बन्धित होगा। शिक्षक को उस सम्पूर्ण पाठ्यक्रम के कुछ भाग में बालकों को शिक्षित करना है। उदाहरण के लिये वालीबाल । वालीबाल सिखाने में उन भागों का प्रयोग किया जायेगा जो बालकों के प्राप्त अनुभव, योग्यता, रुचि, परिपक्वता तथा ध्येय से सम्बन्धित हैं। इस चुनाव के करने में

उन्हें प्रत्येक दिन की शिक्षा के लिये संगठित करना होता है। इसके करने में, विषय सामग्री का संगठन हो जाता है। इस समय उद्देश्य के प्राप्त करने के लिये सर्वश्रेष्ठ योजना यही है। इसके पश्चात इसमें परिवर्तन करना आवश्यक हो सकता है।

यह योजना, दैनिक पाठ्य योजना के रूप में लिखी जाती है जिसमें क्रिया, क्रम के अनुसार तथ्य एकत्र किये जाते हैं जो दिन प्रति दिन सिखाना है, का संगठन किस प्रकार होगा, क्रिया किस स्थान पर होगी, बालकों को क्या काम दिया गया है, किस सामग्री की आवश्यकता है, उस दिन के सिखाने का क्या ध्येय एवं उद्देश्य है तथा अन्त में परिणाम आदि का वर्णन रहता है।

(iv) **विषय का प्रस्तुत करना**–शिक्षक का मुख्य कर्तव्य शिक्षा एवं शारीरिक शिक्षा के उद्देश्यों को वास्तविक अभ्यास में परिवर्तित करना है। पद्धति इसी परिवर्तन का मार्ग है। प्रणाली, उद्देश्यों के प्राप्त करने की चेष्टा जो शिक्षक के द्वारा होती है उसका निर्देशन करता है। प्रणाली या पद्धति उन विधियों या उपायों को कहते हैं जिनका उपयोग बच्चों को निश्चित विषय पढ़ाने तथा सिखाने के लिये शिक्षक प्रयोग करता है। प्रणालियां शिक्षकों के अनुभव तथा व्यापक ज्ञान पर निर्भर हैं। शिक्षा की भांति शारीरिक शिक्षा में भी कितनी ही प्रणालियां अपनायी गई हैं। उनमें कौन सी प्रणाली सर्वोत्तम एवं सरल है इसका अनुभव, सिखाने और सीखने वाले पर निर्भर है। पद्धति पर विचार करते हुये उसकी उत्तमता का प्रश्न नहीं किन्तु किस दशा एवं किस प्रकार विभिन्न पद्धतियां प्रयोग की जायें जिनके द्वारा सर्वोच्च परिणाम प्राप्त हो, मुख्य प्रश्न है। विषय को सिखाने की सफलता अपनायी गई प्रणाली है। प्रणालियां विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान तथा वर्त्तमान योग्यता के आधार पर ही प्रयोग में लायी जाती हैं। वातावरण और परिस्थिति में प्रणालियां बदली जा सकती हैं। शिक्षक का कर्तव्य है कि वह शिक्षा का लक्ष्य ध्येय और उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुये पद्धतियां अपनाये। इसी प्रकार शारीरिक शिक्षा में प्रणालियों का चयन होगा। वास्तव में पद्धति का तात्पर्य यह है कि शिक्षक अपने पाठ्य विषय को छात्रों के समक्ष किस रूप में प्रस्तुत करता है जिससे अधिकांश विद्यार्थी सरलता से एवं कम समय में उसको समझ कर उसका अनुसरण कर सकें। विद्वानों का कथन है कि अच्छी प्रणाली अपनाने में कम परिश्रम लगता है और शीघ्र सफलता प्राप्त होती है। प्रणालियों में भिन्न भिन्न

पहलू अपनाये जाते हैं। शारीरिक शिक्षण में निम्नलिखित मुख्य प्रणालियाँ है। १- परिचित करने की विधि (Orientation) २- शब्दों में वर्णन (Verbal explanation) ३- तर्क वितर्क विधि (Discussion method) ४- प्रयोग विधि (Laboratory method) ५- प्रदर्शन (Demonstration) ६- नाटक (Dramatic) ७- व्याख्यान (Lecture) ८- आदेश (Command) ९- ताल बद्ध या क्रमश: (Rhythemical or Serial) १०- अनुकरण विधि (Imitation) ११- मनोइच्छा विधि (At will) १२- निश्चित ड्रिल स्मरण करके ताल से करना (Memorized Rhythemical set drill) १३- किन्ही दो या अधिक का मिश्रण (Combination of any two or more) १४- अभ्यास विधि (Practice) १५- जांच की विधि (Exploration)

१-परिचित करने की विधि—कक्षा को विषय की सूचना देने के लिये, सर्व प्रथम सुविधा एवं साधन का ज्ञान तथा स्थान, सामग्री प्राप्त करने का उपाय आदि का वर्णन देना आवश्यक है जिससे मित्र भाव का वातावरण स्थापित हो तथा उत्तम शिक्षा सम्भव हो सके। इसके द्वारा शिक्षक विद्यार्थियों के साथ विषय के वास्तविक सम्बन्ध का ज्ञान प्राप्त कर लेता है।

उचित वातावरण का स्थापित करना प्रमुख ध्येय होता है। वाणी, चिन्ह, शब्द आदि के द्वारा वह यह प्रगट करता है कि उसके हृदय में बालकों के प्रति शुभ भावनायें हैं तथा वह इस योग्य है कि उनकी सब प्रकार से पूर्ण सहायता कर सकता है।

परिचित करने की विधि में विषय प्रवेश भी है जिसके द्वारा उन आधारित सामग्री का जिस पर विषय निर्भर है प्रस्तुत किया जाता है। श्रव्य तथा दृश्य उपकरण का प्रयोग किया जा सकता है। इस स्थिति में बालकों को सम्पूर्ण क्रिया का पूर्व ज्ञान दिया जाता है जिससे उनके मन में एक किये जाने वाली क्रिया का मानसिक चित्र खिंच जाये।

इसके पश्चात यह निश्चित करना है कि प्रत्येक बालक निश्चित ध्येय से कितनी दूर है। यह उस विशेष विषय तथा उससे सम्बन्धित विषयों के प्रति भी प्राप्त करना आवश्यक है।

यह विधि जिसके द्वारा परिचय कराया जाता है दूसरी विधियों की तुलना में बहुत कम समय लेती है।

२. **शब्दों में वर्णन विधि**–समूह या कक्षा को ध्यान में रखते हुये उन शब्दों में क्रिया का अत्यन्त संक्षिप्त वर्णन करना जो सरलता से समझ में आ जाये। यदि प्रश्नों को आमंत्रित करना है तो वर्णन में ही उसका स्थान हो। यदि क्रिया की गति जटिल हो तो भिन्न भिन्न वर्णन से उन्हे समझाया जा सकता है। वर्णन का आरम्भ उनके वर्तमान ज्ञान के आधार पर होना चाहिये । यह निश्चित होना आवश्यक है कि विद्यार्थी उन शब्दों का सही अर्थ समझ रहे हैं जो शिक्षक बनाना चाहता है। उदाहरण दे कर समझाते हुये मुख्य कार्य का आरम्भ होना चाहिये। वर्णन में प्रगति हो तथा रुचिकर हो। बाधाजनक अवस्था में वर्णन आरम्भ करना उचित नहीं है। वर्णन में उत्साह प्रगट होना चाहिये । शब्दों एवं वाक्यों को बार बार दोहराना नहीं चाहिये। उन विचारों को जो मुख्य हैं उनकी पुनरावृति होना आवश्यक है। जिन व्यावहारिक चिन्हों से लाभ हो उनका प्रयोग हो सकता है। वर्णन जितना संक्षिप्त हो उतना अच्छा है। कभी कभी विश्राम के समय वर्णन उचित होता है। आवाज पर नियन्त्रण आवश्यक है। हास्यात्मक भावना सदा सहायक होती है। श्रव्य तथा दृश्य उपकरण का प्रयोग लाभकर होता है। वर्णन सदैव सरल, विचार पूर्णएवं मिले हुये हों। जो विचार प्रगट किया जा रहा हो उससे भटकना नही चाहिये। विद्यार्थियों के प्रति सम्मान का भाव हो। यह सर्वदा ध्यान में रहे कि बालक क्रिया चाहते हैं, उपदेश नहीं। कठिन शब्दों के लिये श्यामपट प्रयोग में लाना चाहिये।

३. **तर्क वितर्क विधि**- में विषय वार्तालाप और तर्क वितर्क कर के सिखाया जाता है। तर्क की अगुवाई करना एक विशेषता है।

४. **प्रयोग विधि**- विषय के प्रयोग की कसौटी पर परिणाम निकाल लिया जाता है। सीखने वालों को यह समझा दिया जाता है कि कार्य किस प्रकार होगा।

५ **प्रदर्शन**— इस विधि में विषय का नमूना और प्रदर्शन देकर सिखाया जाता है। प्रदर्शन शारीरिक शिक्षक के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इस विधि में ध्यान रखना है कि प्रत्येक व्यायाम तथा प्रतिक्रिया का प्रदर्शन

उसके प्रत्येक पहलुओं और स्थलों को सही रूप में प्रदर्शित करें। उत्तम परिणाम के लिये दर्शकों को यह ज्ञान होना चाहिये कि प्रदर्शन में किन बातों पर ध्यान दें।

प्रदर्शन, विषय प्रस्तुत करने में सर्व प्रथम आता है। परिचय एवं वर्णन के द्वारा विद्यार्थियों के प्रदर्शन को अवलोकन एवं करने के लिये तैयार किया जाता है। प्रदर्शन के समय ही यदि कुछ बताना हो तो वह अत्यन्य संक्षिप्त होना चाहिये। प्रदर्शक की स्थिति ऐसी हो जहां प्रत्येक उसे देख, सुन सके। प्रदर्शन के लिये शिक्षक में पर्याप्त कौशल, लचीलापन तथा समन्वय का होना आवश्यक है। सम्पूर्ण मार्चों का प्रदर्शन या अधिक प्रदर्शन शिक्षक के द्वारा नही दिया जाना चाहिये। अच्छे विद्यार्थियों के द्वारा प्रदर्शन दिलवाया जा सकता है। प्रदर्शन सकारात्मक होना चाहिये। नयी क्रियाओं के प्रदर्शन में सम्पूर्ण क्रिया का प्रदर्शन होना आवश्यक है। प्रदर्शन में कठिनाइयों की ओर ध्यान आर्कषित करना उचित है।

(६) **नाटक**—इस विधि में विषय नाटक के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। जिससे सीखने वाले अपने विषय को अपने आप करके मानसिक अनभूतियों को प्राप्त कर लेते हैं। इसमें मुख्य अव्यव जानवर, पक्षी, सिपाही, जल सैनिक, कुली इत्यादि का स्वयं अनुकरण करते हैं।

(७) **व्याख्यान**—शारीरिक शिक्षा को उच्च-श्रेंणी के लड़को को सिखाने के लिये यह विधि अपनायी जाती है। विषय पर एक व्याख्यान दे दिया जाता है। विषय में सभी स्थलों और पहलुओं की भूमिका शिक्षक स्वयं करता है।

(८) आदेश (Commanding)

इस विधि में विषय को आदेश देकर सिखाया जाता है। आदेश सीखने वालों को बताता है कि उन्हें किस तरह और क्या करना है। आदेश संक्षिप्त होते हुये भी कसरत की पूरी व्याख्या प्रस्तुत करता है। आदेश पर ही सीखने वालों की सावधानी तथा रुचि निर्भर रहती हैं। आदेश की ध्वनि सीखने वालों की संख्या पर निर्भर होनी चाहिये। भाषा और शैली ऐसी होनी चाहिए कि सर्व साधारण समझ सकें।

आदेश दो प्रकार के होते हैं। प्रतिक्रिया आदेश और तालबद्ध आदेश।

(१५) अभ्यास, (Practice)

शारीरिक शिक्षा प्रणालियों के अन्दर निम्नलिखित बातें आती हैं।

(१) **कक्षा प्रबन्ध**—इसके अन्तर्गत कक्षा की बनावट और उचित संगठन आता है जिससे कक्षा देखने में सुन्दर और अच्छी लगें। दर्शकों को उसका अनुशासन अभद्र न लगे—कक्षा प्रबन्ध में सभी छात्रों की उपस्थिति ली जाती है और जिस कार्य को कराया जाता है उसकी भूमिका दी जाती है।

(२) **सीखने में प्रेरणा**—इसके अन्तर्गत बच्चों में ऐसी भावना और उमंगें उत्पन्न की जाती हैं जिससे उनकी रुचि को विकास मिले। उनकी मूल-प्रवृत्तियाँ और संवेग स्वयम् प्रक्रिया की ओर आकर्षित हो जायें। सभी विद्यार्थी अपनी प्रतिभा के अनुसार शैक्षिक गुण सीख सकें।

(३) **प्रक्रिया का चुनाव**—इसके अन्तर्गत वे प्रक्रियायें चुनी जाती हैं जो शिक्षार्थियों की आयु, शारीरिक क्षमता और योग्यता तथा रुचि के अनुकूल हो। वह प्रक्रिया समाज और भाग लेने वालों के आधार पर चुनी जानी चाहिये। प्रक्रियाओं के चुनाव में शिक्षार्थियों का स्तर भी ध्यान में रखना चाहिये।

(४) **माध्यम**—शिक्षार्थियों को सिखाने के लिये माध्यम इस प्रकार से चुनना चाहिये जो सरल और सहज हो। जैसे भाषा, सिनेमा, प्रतियोगिता आदि।

(५) **ध्येय**—शिक्षण विधियों का प्रारम्भ में एक निश्चित ध्येय होना चाहिये। कहीं ऐसा न हो कि शिक्षण विधि की आड़ में ध्येय ही लुप्त हो जाये।

(६) **परिणाम**—सिखाने के उपरान्त शिक्षकों को परिणाम देखना चाहिए और उसके फलस्वरूप प्रणाली में सुधार और परिवर्तन करना चाहिए।

(७) **वातावरण**—स्कूल का संगठन और सिखाने की प्रणाली के साथ शिक्षण विधियों के लिये एक उचित वातावरण पैदा करना चाहिये जिससे बच्चों को यह अवसर मिले कि स्वयं स्कूल आयें और स्कूल के कार्यों में रुचि लें। जब कोई भी प्रणाली वास्तविक रूप से क्रियात्मक जीवन में व्यवहार में आयेगी तभी उनके माप दण्ड का पता चलेगा।

किसी शारीरिक प्रवीणता अथवा कौशल को सिखाने की विधि—

(१) **प्रारम्भिक या पूर्व ज्ञान देना।**

विद्यार्थियों को सर्व प्रथम पूर्व अनुभव देना आवश्यक है जिससे कि अभ्यास की आवश्यकताओं को समझ सकें और उसमें रुचि उत्पन्न करें। यहां पूर्व ज्ञान देने से अर्थ परिचय का है।

(१) विषय को शिष्य तथा शिक्षक के मेल से विश्लेषित करना जिससे उसके आधारभूत पहलुओं और स्थलों में अभ्यास हो सके।

(३) आधार भूत सिद्धान्त मिश्रित रूप से सर्व साधारण रूप में सीखे जाने चाहिएं।

(४) सहायक खेल तथा ड्रिल्स का इन कौशलों और चातुर्य को निकालने के लिये करना चाहिये इसके उपरांत इन्हें खेलों में व्यवहार करना चाहिए।

(५) चातुर्यों और कौशलों की वास्तविक रूप रेखा सम्पूर्ण खेल में प्रस्तुत करना चाहिए और आवश्यकतानुसार पुनरावृत्ति तथा त्रुटि निवारण करना चाहिये।

नवीन कसरतों को सिखाना—

(१) शिक्षक को व्यायाम पूर्ण रूप से जानना चाहिये और उसमें व्यायाम प्रदर्शन व्याख्या तथा आदेश देने की क्षमता होनी चाहिए। उसे व्यायाम की आवश्यकता पड़ने पर सम्पूर्ण प्रदर्शन करने की क्षमता होनी चाहिये।

(२) उसे साहसी और उत्साही होने के साथ व्यायाम की रुचि उत्पन्न करने तथा बुद्धिमत्ता से प्रेरणा देने की योग्यता होनी चाहिए।

(३) उसे प्रत्येक व्यायाम के पूर्व उद्देश्य की व्याख्या करनी चाहिये। शिक्षार्थियों के समक्ष व्यायाम का स्पष्ट मानसिक चित्र प्रस्तुत करना चाहिये। शिक्षार्थियों को सही अवस्था तथा सही मांसपेशियों की गति विधि करना तथा सिखना चाहिये। कसरतों में गलतियों एवं त्रुटियों का निबारण तथा अच्छे कार्यों

की प्रशंसा करना चाहिये, शिक्षार्थियों को व्यायाम में धीरे २ अभ्यस्त होना चाहिए।

(४) शिक्षकों को व्यायाम की पुनरावृत्ति तथा तालबद्ध कार्य उचित समय तक करना चाहिये। कसरतों को सीखने के बाद उन्हें लगातार और ताल-बद्ध करने का अभ्यास करना चाहिए।

नया व्यायाम सिखाने की विधि—

(१) सर्व प्रथम शब्दों में मानसिक चित्र देना। (२) व्यायाम का स्पष्ट प्रदर्शन (३) शब्दों में आदेश देकर कार्यक्रम (४) सही अवस्था और सही गति देने के लिये अभ्यास। यह कार्य नम्बरों के द्वारा होगा (५) अपने समय में अभ्यास का अवसर (६) लगातार और तालबद्ध कार्य करना।

स्वदेशी व्यायाम सिखाने की विधि—

यह अधिक शक्ति पूर्ण अभ्यास तथा खेल है। स्वदेशी होने के कारण विद्यार्थियों को इसमें रुचि है। इन व्यायामों में मानव का पूर्ण शरीर क्रिया करता है। इस प्रकार के व्यायामों को सिखाने के लिये दोनों प्रकार के आदेश तालबद्ध तथा प्रतिक्रिया, व्यवहार में आते हैं। इनके उद्देश्य, शरीर को विभिन्न अवस्थाओं में ढालना, आज्ञा पालन, तालबद्ध कार्यों से मनोरंजन, समाज भावना, संकोच निवारण, साम्प्रदायिकता, जात-पात, छुआ-छूत मिटाना आदि है।

उपाय—पहले व्यायाम की भूमिका प्रस्तुत की जाती है तब उसे विभिन्न स्थलों में तोड़ कर प्रदर्शन प्रस्तुत करते हैं।

(२) व्यायाम की विभिन्न अवस्थाओं को नम्बरों से कराते समय समझाना।

(३) पूरी कक्षा का अभ्यास नम्बर से कराना। उचित सुधार तथा पुनरावृत्ति का ध्यान अवश्य रखना चाहिए।

(४) व्यक्तिगत अभ्यास अपने समय में होना आवश्यक है। इस समय सभी छात्रों को अपनी इच्छानुसार व्यायाम अभ्यास की स्वतंत्रता हैं।

(५) अभ्यास, पूरी कक्षा को ताल से कराना। इस के अभ्यास के बाद कक्षा को अपने आप तालबद्ध काम करते हुये नम्बर गिनना चाहिये।

सहायक तथा छोटे खेल सिखाने की विधि:—

(१) सर्व प्रथम खेल का नाम बताना चाहिये (२) उसके पश्चात् कक्षा की बनावट तथा संगठन (३) खेल की संक्षिप्त व्याख्या सरल भाषा एवं रोचकता के साथ होना चाहिये। (४) खेल का प्रर्दशन सही रूप में होना चाहिये (५) कोई प्रश्न यदि बालक पूछे तो उसके लिये अवसर देना चाहिये। (६) अभ्यास के लिये खेल खिलाना चाहिये।

कथन है Kill the game before it is dead खेल में रुचि समाप्त होने के पूर्व उसे समाप्त कर देना चाहिये और फिर दूसरा खेल आरम्भ करना चाहिये जिस से खेल में या क्रिया में रूचि बनी रहे तथा खेलने की इच्छा हो।

बड़े खेल—

बड़े खेलों को सिखाने के लिए निम्नलिखित विधि अपनायी जायेगी।

(१) खेल की भूमिका और संक्षिप्त इतिहास का बताया जाना। (२) खेल के मैदान की माप तथा साधारण सूचनायें देना। (३) खेल के आधार भूत पहलुओं और तथ्यों का प्रर्दशन तथा उन विश्लेषित तथ्यों का पृथक या मिश्रित रूप में अभ्यास। (४) छात्रों में से कुछ लड़के चुन कर खेल की साधारण रूप रेखा प्रस्तुत करनी चाहिये। (५) खेल में सभी आधार भूत तथ्यों को जोड़ कर अभ्यास तथा खेल की चतुराइयों को समझाना और खेल के नियमों तथा ढंग का विवरण देना।

(६) खेल का कुछ समय के लिये अभ्यास उसके सहायक खेलों द्वारा होना चाहिये।

(७) सम्पूर्ण खेल का उसके वास्तविक रूप में अभ्यास उसके उपरान्त स्थानीय खेल, रक्षात्मक और आक्रमणात्मक खेलों को बताते हुए अभ्यस्त कराना, सम्भावित त्रुटियों का निवारण करना चाहिये।

(८) सारांश:— छात्रों को इकठ्ठा करके सुखद सूचनायें देनी चाहिये। तथा उस दिन के खेल की प्रमुख बातों की ओर ध्यान आकर्षित करना तथा दूसरे दिन के कार्यक्रम का आदेश।

कक्षा ने चाहे जिस प्रकार की क्रिया की हो यह सदैव ध्यान में रखने की आवश्यकता है कि कक्षा के समाप्त होने पर विद्यार्थियों की यह भावना हो कि उन्होंने उस दिन कुछ नयी चीज सीखी है तथा उनका समय व्यर्थ में नष्ट नहीं हुआ। पुरानी क्रियाओं का अभ्यास ही केवल क्यों न हो, यह भावना होना चाहिये की अभ्यास की रीति नयी थी, नया ज्ञान तथा अभ्यास में उन्नति एवं कौशल प्राप्ति में दिन प्रति दिन पर्याप्त गति हो रही है।

गतिवाही कौशल सिखाने में कुछ मुख्य बातें—(१) ध्येय एवं उद्देश्य का ज्ञान आवश्यक है तथा वे विद्यार्थी सम्बन्धित हों। निकटवर्ती एवं दूरवर्ती ध्येय दोनों का ज्ञान विद्यार्थी को होना चाहिये। (२) कौशल का प्रदर्शन सम्पूर्ण होना चाहिये। (३) यदि जीवन का भय न हो जैसे तैरने में तो सम्पूर्ण क्रिया की चेष्टा विद्यार्थियों से कराना चाहिये जिससे कौशल का अभ्यास खेल एवं वास्तिवक स्थिति में हो। (४) बालक अपनी प्रगति देख सकता है तथा वह अपना ध्येय निर्धारित करेगा। (५) शिक्षक नये ध्येय जो क्रिया एवं कौशल में सम्भव है उनके स्थापित करने एवं प्राप्त करने में सहायक होगा। (६) नयी जटिलताओं को सुलझाना एवं समझाना आवश्यक है। (७) ऐसी स्थिति उत्पन्न करना चाहिये जिससे अधिक से अधिक अभ्यास सम्भव हो। (८) प्राप्त कौशल के प्रयोग अवश्य उपलब्ध होना चाहिये। (९) प्रगति के लिये अभ्यास में वैयक्तिक विभिन्नता का ध्यान अवश्य रहे। (१०) अभ्यास सदैव निरिक्षत हो (११) आधार भूत कौशल जितना अधिक हो सके उतना अभ्यास करना एवं सिखाना चाहिये जिससे वह आदत के समान हो जाये। (१२) विरोधी कौशल एक ही समय नहीं सिखाना चाहिये।

अभ्यास विधि (Practice)—कक्षा का अधिक समय अभ्यास में व्यतीत होना चाहिये। अभ्यास में विद्यार्थियों का भाग अधिक एवं शिक्षक का कम से कम हो। कौशल के सिखाने के अतिरिक्त अभ्यास के समय आन्तरिक अंगों की शक्ति विकास, सामाजिक एवं नैतिक विकास की ओर भी ध्यान देना चाहिये। अभ्यास में उन तथ्यों पर बल देना आवश्यक है जो अधिक से अधिक व्यक्तियों के लिये अधिक से अधिक अवस्था में लाभकर हों। विद्यार्थियों की रुचि के अनुसार तथा क्रिया की प्रकृति एवं प्रयोजन का ध्यान रखते हुये कक्षा का समय पुनरावृत्ति, अभ्यास, किसी विशेष तथ्य का अभ्यास, खेल, शिक्षा आदि में विभाजित करना चाहिये। बालकों में क्रिया के प्रति यह भावना उत्पन्न करनी

आवश्यक है कि यह उनके लिये लाभकर है। क्रिया का अर्थमय होना महत्वपूर्ण है। अभ्यास में प्रेरणा की अत्याधिक आवश्यकता है। व्यक्तिगत विभिन्नता के कारण व्यक्तिगत विशेषताओं से परिचित होना तथा उनके अनुकूल कार्य का होना आवश्यक है। किसी छोटी क्रिया के अभ्यास पर आवश्यकता से अधिक समय व्यतीत करना उचित नहीं। प्रगति के लिये सरलता या शरीर के ढीलेपन से कार्य करना आवश्यक है। विद्यार्थियों से एक साथ ही तीव्रता, समन्वय, शक्ति तथा सहने की शक्ति की आशा नहीं करना चाहिये। अभ्यास के द्वारा अधिक थकान का होना उचित नहीं। नयी क्रियाओं के आधार पुरानी क्रियाओं पर होने चाहिये। विद्यार्थियों के लिये आत्म परीक्षा का उपाय होना आवश्यक है। अभ्यास में कठिनाइयों को मालूम करना तथा उनके सुधार का उपाय अवश्य होना चाहिये।

(१५) **जाँच विधि** (Exploration)—विषय प्रस्तुत करने में अन्य सम्बन्धित विषय भी आ जाते हैं जिनका कुछ ज्ञान प्रस्तुत विषय के सीखने में सहायक सिद्ध होता है। जाँच विधि के द्वारा हम उन विषय के क्षेत्रों को विस्तृत करते हैं जिनका कुछ सम्बन्ध मुख्य विषय से हो चुका है। विद्यार्थियों को अवसर प्राप्त होना चाहिये जिससे वे उस कौशल या क्रिया को करने का प्रयत्न करें जिसके विषय में तर्क हो चुका है, या प्रदर्शित हो चुका है या देखा गया है। चेष्टा या व्यक्तिगत यत्न में विलम्ब नहीं होना चाहिये। सीखने के कार्य में अनुभव प्राप्त करना आवश्यक है। इसी के द्वारा उन्हें यह ज्ञात होगा कि उनकी सूझ पूर्ण नहीं है तथा उन्हें प्रगति करना आवश्यक है। इसके द्वारा वे अपनी इच्छा की पूर्ति कर संतोष प्राप्त करते हैं।

जब तक सीखने में प्रगति होती रहती है तब तक जांच लगातार होती रहनी चाहिये। यह अवधि अधिक नहीं होती। जांच के द्वारा शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों को यह ज्ञात होता हैं कि आगे क्या सीखना है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि दैनिक पाठ्य योजना का समायोजन, विद्यार्थियों के प्राप्त ज्ञान, नया ज्ञान, ज्ञान जो सीख रहे हैं तथा और ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता के अनुसार किया जायेगा। जांच, तर्क, प्रदर्शन एवं अवलोकन के पश्चात आती है किन्तु इन तकनीकों की कई बार पुनरावृत्ति सम्भव है। जैसे कभी किसी कार्य के तर्क प्रदर्शन एवं अवलोकन के पश्चात जांच में शिक्षक को

यह अनुभव होता है कि विद्यार्थियों के समक्ष में भूल हुयी है अतः वह अपनी सम्पूर्ण तकनीक की पुनरावृति करता है।

कक्षा प्रबन्ध—स्कूल एक प्रकार का जटिल सामाजिक संगठन है। इसका मुख्य कर्त्तव्य ऐसे वातावरण का उपलब्ध करना है जिसमें शिक्षा सम्भव हो सके। इसके लिये कुछ नियमों का होना आवश्यक है। इसका अर्थ है कि कक्षा के लिये कुछ योजना तथा कुछ प्रबन्ध होना आवश्यक है जिनके द्वारा सीखने में सुविधा हो। कक्षा प्रबन्ध शिक्षा के अतिरिक्त अन्य समस्याओं से सम्बन्धित है। इनका शिक्षा से सीधा सम्बन्ध नही होता किन्तु ये शिक्षा को प्रभावित करते हैं। उत्तम प्रबन्ध से कक्षा का उत्तम प्रवाह होता है, उत्तम कक्षा प्रबन्ध से मान्य सामाजिक संवेगात्मक एवं शैक्षणिक अनुभवों के प्राप्त करने का सुअवसर मिलता है तथा चोट, घटना, तनाव एवं अधिक थकान से बालकों की सुरक्षा होती है।

कक्षा प्रबन्ध से सम्बन्धित विषय हैं शिक्षक का व्यक्तित्व, क्रिया संचालन करने की प्रणाली, वातावरण की स्थूल दशा, सुरक्षा का उपाय, सामग्री का प्रयोग एवं देख भाल, समय की मितव्ययता, विद्यार्थियों का वर्गीकरण, तालिका या, कार्यक्रम का प्रबन्ध, विद्यार्थियों का सामूहिक विभाजन, प्रतियोगिताओं का प्रबन्ध तथा शारीरिक शिक्षा विषय के लिये अंक देना। कक्षा प्रबन्ध का उद्देश्य उन सुविधाओं को उपलब्ध करना है जिनके द्वारा शिक्षा के ध्येय एवं उद्देश्य की पूर्ति हो, शारीरिक शिक्षा कक्षा प्रबन्ध के कुछ निम्नलिखित तकनीक हैं। विद्यार्थियों के व्यक्तिगत आवश्यकताओं को निर्धारित तथा उनकी पूर्ति करना। समान प्रतियोगिता के लिये सामूहिक रीति से भाग लेना। प्राकृतिक प्रेरणा का अधिक प्रयोग। खेल आदि के द्वारा संतोष का अनुभव प्राप्त हो। विद्यार्थियों की सहायता योजना बनाने, प्रबन्ध करने तथा रैफरी आदि करने में लेना चाहिये। क्रिया इस प्रकार की हो जिसके लिये चेष्टा करना आवश्यक हो तथा सफलता की सम्भावना हो। स्वस्थ्य शिक्षक एवं विद्यार्थी सम्बन्ध,

सही प्रणाली के प्रयोग तथा उपयुक्त क्रियाओं के किये जाने के द्वारा उचित मानसिक एवं संवेगात्मक आदत तथा भावनाओं का उत्पादन करना। जो भी समय, स्थान, सुविधा आदि, खेल एवं शारीरक शिक्षा के लिये उपलब्ध हों उनका उचित प्रयोग करना। स्वास्थ्य प्रगति अनआवश्यक खतरों से बचाव

तथा घटना से सुरक्षा का उत्तम प्रबन्ध होना आवश्यक है। सफलता का स्तर निर्धारित होना चाहिये तथा उसकी ओर प्रगति का सम्पूर्ण लेखा, प्रत्येक विद्यार्थी के लिये होना आवश्यक है। सरल उत्तम रिकार्ड का होना आवश्यक है। शारीरिक क्रियाओं के द्वारा मनोरंजन की भावना का विकास होना अति आवश्यक है जिस से यह प्रेरणा आजीवन बनी रहे तथा व्यक्ति क्रियाओं में भाग लेता रहे।

प्रबन्ध शब्द का अर्थ है, The Judicious use of means to accomplish an end. -Webster.

किसी अन्त को प्राप्त करने के लिये साधनों का विचार पूर्ण प्रयोग।

कक्षा प्रबन्ध के लिये अनुशासन का होना आवश्यक है। अनुशासन का अर्थ सुप्रबन्ध, नियन्त्रण, दण्ड, आदि से है। उत्तम शिक्षा के लिये आत्म अनुशासन का होना आवश्यक है। उचित शिक्षा का वातावरण उसी समय हो सकता है जब विद्यार्थी अनुशासन में हों। यह कार्य करने में सहायक होगा। शिक्षक को सतर्क रहना चाहिये तथा उन व्यवहारों को जिन के द्वारा अनुशासन भंग होने की आशंका है अवरोध करना चाहिये। जिन से अनुशासन भंग होने की आशा है उनकी ओर ध्यान रखना आवश्यक है। अतिरिक्त शक्ति के प्रयोग करने से अनुशासन में सहायता प्राप्त होती है। यदि किसी प्रकार की विश्राम रहित स्थिति हो तो उसे दूर करना चाहिये।

उपस्थित लेखा–उपस्थिति लेखा आवश्यक है क्योंकि इससे यह पता चलता है कि कक्षा में कितने बालक आ रहे हैं अथवा नहीं आ रहे हैं। इस जान कारी से शिक्षा देने में कुछ उलट फेर किया जा सकता है। जो बालक कुछ दिन से उपस्थित नहीं हैं उनके विषय में जानकारी हासिल की जा सकती है तथा जहाँ आवश्यकता हो वहीं सहायता दी जा सकती है। जो बालक स्कूल से अनुपस्थित रहते हैं और उन का कुछ विशेष कारण नहीं जान पड़ता उसकी सूचना माता पिता को बिना बिलम्ब देना चाहिए। इससे कितने ही निर्दोष बालक भटकते हुए मार्ग पर जाने से बच जायेंगे।

उपस्थिति लेखा की कई एक रीतियाँ हैं। समय तथा स्थान के अनुसार जो रीति उचित मालूम हो वह प्रयोग में लाना चाहिये। ध्यान रहे कि उपस्थिति

लेखा में अधिक समय न लगे और वह एक सच्ची प्रणाणी हो जिसमें धोखा न हो सके।

साधारणतः अध्यापक लड़कों या लड़कियों के नाम एक एक करके पुकारते हैं और इस रीति से उपस्थिति तथा अनुपस्थित मालूम करते हैं। इस प्रथा में बहुत समय लगता है। दूसरी प्रथा है कि बालकों को विशेष स्थान खड़े रहने या बैठने के लिऐ नियुक्त किया जाता है। जो स्थान खाली हो वह बालक अनुपस्थित है। तीसरी प्रथा है कि बालकों को क्रमशः अंक दे दिये जाते हैं और लेखा उपस्थिति के लिए वे विधिवत अंक उच्चारण करते हैं। जो अंक न बोला जाये वह अनुपस्थित है। अंक लगातार करने के लिए अनुपस्थित अंक शिक्षक बोलते हैं। यह एक उत्तम प्रणाली है जिसमें लेखा शीघ्र हो जाता है और भूल होना संभव नहीं।

अनुपस्थिति तथा देर से आना—बालकों को प्रशिक्षित करना चाहिए कि वे सब काम समय से करें। स्कूल तथा कक्षा में उन्हें सही समय पर उपस्थित होना चाहिए। यदि कोई बालक अधिक अनुपस्थित रहता है या देर से आता है तो बिना सोचे समझे उसे दण्ड नहीं देना चाहिए। हो सकता है कि उसकी अनुपस्थिति तथा देर से आने का कारण वह स्वयं न हो। परिवार, वातावरण, समाज की समस्याओं से कोई बालक स्कूल में अनुपस्थित तथा लेट हो सकता है। यह उत्तम है कि एसे बालकों की अनुपस्थिति तथा देर से आने के कारण का पता चलाया जाये तथा यथा सम्भव दूर करने की चेष्टा की जाये। विशेष अनुपस्थिति तथा देर आने की सूचना माता पिता को अवश्य होनी चाहिए। जो लापरवाही से एसा करते हैं उन्हे दण्ड मिलना चाहिए।

यूनिफार्म तथा निरीक्षण—यह अत्यन्त आवश्यक है कि बालकों को कार्य के अनुसार वस्त्र पहिनाया जाये। यह आर्थिक तथा कार्य की दृष्टि दोनों से लाभकर है। विशेष रूप से शारीरिक शिक्षा क्लास के लिए विशेष वस्त्र की आवश्यकता है जिसके कारण कार्य करने की स्वतन्त्रता हो और पसीने तथा मैले से कपड़े पर जल्दी असर न हो। कार्य के अनुसार वस्त्र धारण करने से एक मनोवैज्ञानिक प्रभाव व्यक्ति पर पड़ता है और वह उसके कारण मानसिक तथा शारीरिक तैयारी मालूम करता है। शारीरिक शिक्षा के विशेष वस्त्र में बनियाइन या कमीज़, हाफ पैन्ट तथा जूता आदि हैं। बड़े लड़के लम्बे पैन्ट

पहन सकते हैं। लड़कियों के लिए वस्त्र भिन्न हैं। प्रत्येक कक्षा में वस्त्र का निरीक्षण होना चाहिए जिससे बालक लापरवाही न करने लगे। निरीक्षण में वस्त्र की सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए। शिक्षक को भी उसी वस्त्र में होना चाहिए जिसमें बालकों को बुलाया जाता है।

कक्षा खोलना (Formation)--एक शिक्षक जो कक्षा का प्रबन्ध तथा संगठन अच्छी रीति से करने के योग्य है उसे कौशल, आधारभूत का अभ्यास तथा सामूहिक प्रतियोगिता के लिए कक्षा के उत्तम खोलने का प्रयोग करना है। प्रायः जो कक्षा का खोलना होता है वे वृत्ताकार, मोड़दार, सीधी लाइन, एक पीछे कतार, आगे पीछे, चार कतारों में, दो कतारों में होती हैं। यह आवश्यक है कि कक्षा में प्रत्येक बालक को गतिवाही कौशल के अभ्यास के लिए उचित अवसर दिया जाये। कक्षा का खोलना इस ध्येय से होना चाहिए कि अधिक से अधिक बालक किसी अभ्यास को सही रीति से अधिकता से थोड़े समय में कर लें। कक्षा खोलने में यह भी ध्यान होना चाहिए कि शिक्षक बालकों के समीप आसानी से आ सकें तथा बालक शिक्षक को अच्छी तरह देख सकें। मुख्य कक्षा खोलना दो प्रकार से हो सकता है।

(१) बालक समूह में एकत्र हों, छोटे छोटे समूहों में भी कार्य हो सकता है। यह अनौपचारिक विधि से कार्य होगा।

(२) साधारणतः बालक एक लाइन में खड़े होते हैं और कार्य के प्रकार के अनुसार सीधी लाइन, दो, तीन या चार लाइनें या वृत्तकार, या अर्धवृत आदि खोलना होता है। आपस की दूरी ६ वर्ग फुट होगी।

बालकों को समूह में विभाजित करना--शिक्षा के ध्येय से एक समान बालकों को एक समूह में रखना शारीरिक शिक्षा विशेषज्ञों से मान्यता प्राप्त है तथा वे इसका प्रचार भी करते हैं। किस आधार पर समूह विभाजित करना है इसमें मतभेद हैं। कितनों का मत है कि चुनाव उनके कार्य में सफलता के अनुसार होना चाहिये। बहुत से शिक्षक बालकों को समानता के अनुसार विभागों में करने के पक्ष में नहीं हैं। यह विचार प्रायः विश्वव्यापी है कि बालकों का वर्गीकरण ध्येय को स्थिर करने के उद्देश्य से तथा सफलता के स्तर के लिये तथा प्रतियोगिता के लिये अत्यन्त ही आवश्यक तथा उचित है। इस कार्य के लिये अनेक प्रणालियां हैं।

कक्षा संगठन एवं नियंत्रण—स्कूल के शारीरिक शिक्षा का संगठन का भार शारीरिक शिक्षक का है जो अन्य व्यक्तियों के साथ वह अपने ऊपर लेता है।

स्कूल के घंटे की अवधि एवं कितने पीरियड होंगे कक्षा की संख्या, पढ़ाने का बोझ, शारीरिक शिक्षा का रूप, शारीरिक शिक्षा से छूट तथा अन्य इसी प्रकार के विषयों से शारीरिक शिक्षक का सीधा सम्बन्ध नहीं है किन्तु अन्य तकनीकी बातें हैं जो शारीरिक शिक्षक के उत्तरदायित्व हैं जैसे कक्षा का संगठन, विद्यार्थी नेतृत्व का प्रयोग, प्रत्येक कक्षा में समय का विभाजन, कक्षा को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाना, सामूहिक कार्य का संचालन, प्रतियोगितायें तथा अनुशासन की विधि।

कक्षा संगठन में साधारण मूल—इस प्रकार से कार्य का होना जिस से पर्याप्त शक्तिशाली एवं तीव्र कार्य न हो सके। शारीरिक शिक्षा अभ्यास का कक्षा शक्तिशाली कार्यों के लिये प्रयोग होना चाहिये जिसमें सम्पूर्ण शरीर के अंग तीव्रगति से कार्य कर सकें।

बालक के कार्यों का सही विश्लेषण कर के गलतियों को मालूम न करना। कोई भी ऐसी कक्षा नहीं होनी चाहिये जहाँ कार्य समाप्त करने से पहले कौशल आदि के प्रति कुछ न कुछ विद्यार्थियों को न बताया जाये। कक्षा से जाने के समय उनकी यह भावना होनी आवश्यक है कि कुछ नया ज्ञान प्राप्त किया है। साधारणतः अनजाने में कक्षा का समय नष्ट कर दिया जाता है, जैसे खेल के मैदान में असंगठित रूप से रहना तथा एक स्थान पर इकट्ठा होने में अधिक समय का लगना। खेल एवं रिले आदि के लिये टीम का चुनाव। शिक्षक का किसी कार्य के प्रति अनआवश्यक व्याख्यान देना। बिना पाठ्य योजना के कक्षा लेना। कभी कभी स्थान न होने के कारण या टीम को बराबर रखने के लिये कुछ बालकों को खेल से वंचित रखना। कार्य में प्रेरणा की कमी तथा बालकों को उत्साहित न करना। कार्य के लिये ऐसा स्थान या वातावरण चुन लेना जो कार्य करने में बाधक हों या कार्य करने में सहायक न हो या उत्साहित न कर सकें।

———

२

पाठ्य योजना

एक शिक्षक को शिल्पकार तथा निर्माणकर्त्ता दोनों ही होना है। एक शिल्पकार सही तथा ठीक आयोजन बनाता है और निर्माण कर्त्ता उस आयोजन के अनुसार कार्य करता हैं। शिक्षा में आयोजन परम आवश्यक है। शिक्षक में यह योग्यता होनी चाहिये कि वह आयोजन करे एवं उसका संचालन करे।

पाठ्य योजना की तैयारी से शिक्षक को अनेक सहायता मिलती है। जैसे, (१) स्पष्ठ परिभाषित ध्येय का निर्धारित करना जो दिये हुये समय में बालकों के द्वारा प्राप्त किया जा सके, (२) अनेक क्रियाओं में से उन क्रियाओं का चुनाव जिनका सम्बन्धित मूल्य अधिक है तथा जो प्रत्येक कक्षा, स्तर या स्कूल के कार्यकाल में सिखाया जा सके। (३) बुद्धिमानी से इस बात का निर्णय करना कि शिक्षा में कौन सी प्रणाली तथा विधि का प्रयोग हो जिससे निर्धारित ध्येय सरलता तथा सुगमता से प्राप्त किये जा सकें।

पाठ्य योजना जो साधारणतया प्रयोग में आते हैं, वे हैं, इकाई आयोजन या यूनिट प्लान (unit plan) जिसमें आयोजन एक से अधिक दिन के लिये होता है। यूनिट प्लान में कई एक दिन का आयोजन आ सकता है या पूरे कार्य काल का कार्य आ सकता है। किसी कक्षा के पूरे वर्ष में पाठ्यक्रम सिखाने के लिये कई एक यूनिट हो सकते हैं। प्रायः एक विषय पर एक यूनिट होगा या किसी विषय में एक से अधिक यूनिट भी हो सकते हैं। वार्षिक आयोजन के अन्तर्गत पाठ्यक्रम के जितने यूनिट होंगे, आ जाते हैं। जैसे किसी कक्षा को फुटबाल सिखाना हो तो उसके आधारभूत तथ्यों का एक यूनिट हो सकता है, स्थानीय खेल तथा चतुरता का दूसरा यूनिट हो सकता, नियम आदि का तीसरा यूनिट हो सकता है। इसी तरह पाठ्यक्रम के प्रत्येक विषय के लिये होगा। ये सम्पूर्ण यूनिट सम्पूर्ण वर्ष के लिये होंगे।

दैनिक पाठ योजना, एक दिन में किसी घंटे में पढ़ाने के लिये जो आदेश आदि होते हैं, होता है। इस योजना में जो कुछ सिखाना हो उसके सही विश्लेषण के विभाग क्रमश: लिये जाते हैं तथा सिखाये जाते हैं। ये विश्लेषण किसी यूनिट के हो सकते हैं।

उदाहरणार्थ यदि नं० १ यूनिट फुटबाल है, तो इस यूनिट में आधारभूत तथ्यों का विश्लेषण होगा, जैसे गेन्द मारना, रोकना, हेड करना, ड्रिबल करना इत्यादि। इन विश्लेषणों में से एक या दो जैसे-जैसे समय की अनुमति हो दैनिक योजना में लिये जायेंगे और उसी पर शिक्षा दी जायेगी।

वार्षिक योजना में यह ध्यान रखने की आवश्यकता है कि समय कितना मिलेगा तथा एक यूनिट का क्या समय होगा। उसी आधार पर यूनिट दैनिक पाठ्य योजना में विभक्त होंगे।

मौसम के अनुसार योजना—भारतवर्ष में तथा दूसरे देशों में भी कुछ ऐसे कार्य होते हैं जो विशेष मौसम में होते हैं। इन कार्यों का उस मौसम के अनुसार योजना कहते हैं। कुछ खेल ऐसे हैं जो खास मौसम ही में अच्छे लगते हैं तथा उसी मौसम में उसे खेलने में रुचि लगती है। जैसे फुटबाल प्राय: वर्षा काल में ही खेला जाता है, शरद काल में इसमें आनन्द नहीं आयेगा। तैरना, ग्रीष्म तथा वर्षा काल ही में भाता है। यही मौसम के अनुसार खेलों का आयोजन कहलाता है। मौसम के अनुसार आयोजन में प्रदर्शन, शारीरिक शिक्षा सप्ताह, पारितोषिक वितरण समारोह, एथेलेटिक्स प्रतियोगिता, द्वन्द प्रतियोगिता, मेला, पर्यटन, कैम्पिग इत्यादि आते हैं। मौसम के अनुसार आयोजना को भी वार्षिक आयोजना के अन्तर्गत लाया जाता है इसमें मौसम के अनुसार कार्य वर्ष के उसी हिस्से में रखते हैं जहां उसका स्थान है।

योजना की मुख्य बातें—योजना में ध्येय का विवरण आवश्यक है। क्रियाओं का वर्णन जो सिखाये जायेंगे तथा प्रणाली और विधि का एक संक्षिप्त विवरण। पाठ योजना शिक्षक के लिये एक लचीला आदेश के रूप में होना चाहिए न कि कोई एक ठोस चीज हो जिसमें परिवर्तन सम्भव नहीं। इसके द्वारा शिक्षक की स्वतंत्रता तथा विश्वास अधिक हो जाता है।

पाठ्य योजना में ध्येय की विशेषता—आधुनिक सामाजिक दर्शन तथा

शिक्षा दर्शन से हम यह प्राप्त कर सकते हैं कि जीवन में मूल्यपूर्ण क्या है ? शारीरिक शिक्षा में ध्येय, जीवन के मूल्य से सम्बन्धित है जो शारीरिक शिक्षा के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

ध्येय के निम्नलिखित गुण होना चाहिये—(१) उन कार्यों से सम्बन्धित हों जो जीवन में उपयोगी हैं। (२) स्पष्ट हों जिससे पाठ्य योजना में आ सके। (३) विद्यार्थियों को बतायें कि उन्हें क्या करना है ? (४) सरल तथा एक समान भाषा में होना चाहिये। (५) विद्यार्थियों के दृष्टिकोण से आधारित होना चाहिये। (६) ऐसा हो जिसका माप किया जा सके।

पाठ योजना से लाभ—(१) विशेष उद्देश्य का होना। (२) नये तथा पुराने पाठ्य में उचित सम्बन्ध। (३) विषय का संगठन तथा चुनाव की स्वतंत्रता तथा एक विशेष विधि। (४) शिक्षक के लिये मुख्य विधि की ओर आदेश। (५) पाठ की उपयुक्त पुनरावृत्ति। (६) शिक्षा के परिणाम की जाँच। (७) शिक्षक को सम्बन्धित प्रश्नों का तथा उदाहरण के लिये प्रेरित करता है। (८) सेवा की निश्चयता। (९) व्यक्तिगत विभिन्नता का ध्यान रखते हुये उनके लिये कार्य देना। (१०) सामग्री तथा साधन का सही समय पर उपलब्ध करना। (११) शिक्षक अपने कार्य के लिये निश्चित हो जाता है तथा उसे अधिक स्वतन्त्रता मिल जाती है।

दैनिक पाठ्य योजना के तथ्य—पाठ योजना एक, अनेक व्यायाम, खेल, कौशल इत्यादि का सावधानी से चुनाव है जो आयु तथा रुचि के अनुसार बढ़ते बढ़ते सिखाया जाता है। कार्य स्वयं रुचिकर तथा प्रेरक होना चाहिये। योजना में प्रत्येक कार्य कठिन नहीं होना चाहिये। ये बालकों की आवश्यकता के अनुसार होना चाहिये। इनके द्वारा प्रसन्नता तथा कार्य करने से संतोष मिलना चाहिये, जिससे जीवन का बोझ तथा खिचाव जो बालकों के सम्मुख आते हैं उनमें कमी हो जाये।

इनके द्वारा ध्यान एकाग्रचित्त करना, रुचि बनी रहना तथा शासन की रक्षा सम्भव हो तथा प्रसन्नता और मन बहलाव की भावना की आशा शिक्षक करते हैं।

शारीरिक शिक्षा के पाठ्य योजना में निम्नलिखित आते हैं।(१)प्रारम्भिक

क्रियायें या गर्म करने की कसरत।(२)औपचारिक क्रियायें(३) विशेष क्रियायें। (४) मनोरंजन क्रियायें। (५) जमा होना तथा विसर्जन। इस प्रकार के पाठ्य योजना में कार्य के द्वारा प्रसन्नता, विधि तथा मन बहलाव, औपचारिक कार्यों में तथा शासन के साथ सम्मिलित किया जाता है साथ ही साथ प्रत्येक पाठ में नवीन तथा रुचिकर बातें सीखने को मिलती हैं।

(१) **अनौपचारिक सामूहिक कार्य**—इसमें प्रायः पूर्व ज्ञान की बड़ी माँस पेशियों की क्रियायें तेजी के साथ लगातार प्रायः ३ से ५ मिनट तक की जाती हैं। इन क्रियाओं में अनौपचारिक भावना वर्त्तमान रहती है। पूरे समय का एक बटा दो भाग इसके प्रयोग में लेना चाहिये। इसमें निम्न क्रियायें हो सकती हैं। प्राकृतिक क्रियायें—दौड़ना, कूदना फेंकना आदि। मार्चिग (Marching) भिन्न-भिन्न प्रकार के। मिली हुई क्रियायें—दौड़ना, कूदना, चलते हुये समूह बनाना, छोटे खेल (Stunts)—भागकर जोड़ा बनाना, छूना, अनुकरण खेल पशु-पक्षियों का गति का अनुकरण।

प्रारंभिक क्रियायें या गर्म गरने की कसरत—रिले, वस्तु को छूकर भागना, सामने लकीर तक दौड़कर पीछे जाना। ताल की क्रियायें–लोक नृत्य, जिमनास्टिक नृत्य, शिक्षक का अनुकरण—जिस प्रकार शिक्षक कार्य करे उसका अनुकरण। निम्नश्रेणी के खेल—सामूहिक खेल, बड़े खेलों के विश्लेषित खेल,

(२) **औपचारिक क्रिया**—व्यायाम, शारीरिक विकास तथा स्वास्थ्य के लिये। इनके द्वारा शरीर लचीला तथा नियन्त्रित रहता है। यह कार्य आदेश के अनुसार होता हैं तथा इसमें शीघ्रता, सही, तथा एक साथ कार्य करने पर ध्यान दिया जाता है। इसमें बड़ी माँस पेशियों पर विशेष ध्यान दिया जाता है। समय ५-१० मिनट तक।

(३) **विशेष क्रियायें**—आपरेट्स पर या आपरेट्स के साथ व्यायाम, मार्चिग, जिमनास्टिक, पिरामिड, बड़े खेलों के आधार भूत तथ्य, ट्रैक तथा फील्ड एथेलेटिक्स, द्वन्द, ताल बद्ध व्यायाम, क्षमता अभियान।

(४) **मनोरंजक क्रियायें**—यह योजना का सबसे सुन्दर भाग है। इसकी कोई भी क्रिया हो सकती हैं। पूर्ण समय का आधा भाग इसके लिये प्रयोग करना चाहिये।

(५) **जमा होना तथा विसर्जन**—प्रत्येक पाठ के लिये विधिवत एकत्रित होना तथा विसर्जन आवश्यक है। जिस प्रकार की भी क्रिया हो रही हो अन्त में विद्यार्थियों का एक स्थान पर एकत्रित होना तथा विधिवत विसर्जन आवश्यक होगा। इसके लिये किसी प्रकार से विसर्जित किया जा सकता है।

पाठ्य योजना का ढांचा—

पाठ्य योजना के लिये कोई लिखने का विशेष ढांचा नहीं होता। शिक्षा का पाठ्य योजना लिखित या मस्तिष्क में इस प्रकार होना चाहिये जिससे शिक्षक को पढ़ने में सहायता प्राप्त हो। लिखित पाठ्य योजना के लाभ है कि कक्षा के पढ़ाने की तैयारी में शिक्षक को सम्पूर्ण यूनिट का ध्यान करना पड़ता है, जो आयोजित पाठ है उसमें भूल नहीं होती तथा प्रणाली में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता, शिक्षक को निश्चयात्मकता एवं आत्म विश्वास प्राप्त होता है, यदि मुख्य पाठ योजना से अलग भी जाना हो तो शिक्षक बिल्कुल नहीं भटक जाता तथा प्रत्येक योजना बनाने के समय उस में संशोधन एवं प्रगति सम्भव है।

शारीरिक शिक्षा पाठ्य योजना का एक ढांचा

शारीरिक शिक्षा पाठ्य योजना

शिक्षक ....

स्कूल........ कक्षा ......लिंग...... दिनाँक .... पाठ्य नम्बर ....

युनिट नम्बर ....

ध्येय ....

उद्देश्य... ... .

प्रयोग की सामग्री ....

समय	विवरण	आलोचना

व्यायाम का वर्गीकरण—व्यायाम का वर्गीकरण उन अंगों के आधार पर होता है जिसमें अंगों का व्यायाम उनके द्वारा होता है।

जैसे हाथ, कमर, पैर, पेट, बगल इत्यादि। इस प्राकर का वर्गीकरण व्यायाम का साधारण वर्गीकरण है।

व्यायाम का विशेष वर्गीकरण आयु के आधार पर होगा। आयु की विशेष रुचि, शरीर रचना तथा शरीर क्रिया आवश्यकताओं के अनुसार प्रत्येक वर्ग के लिये व्यायाम का वर्गीकरण किया जायेगा।

क्रियाओं के विशेष रूप के अनुसार भी व्यायाम का वर्गीकरण होता है। जैसे एथेलेटिक्स में स्टार्ट या आरम्भ के लिये विशेष व्यायाम होंगे। हैमर के लिये विशेष व्यायाम होंगे। हर्डल के लिये विशेष व्यायाम होगा।

बास्केट वाल में जो गतियाँ होती हैं उन्ही के आधार पर विशेष व्यायाम निर्माण किया जायेगा।

प्रगति (Progression)--अल्प कठिन से अधिक कठिन, सरल से जटिल अवस्था के पहुंचने को प्रगति कहते हैं। प्रगति प्रत्येक विषय में होती है।

(१) प्रत्येक व्यायाम में प्रगति

पर्याप्त अभ्यास के पश्चात् प्रत्येक विद्यार्थी को व्यायाम में प्रगति दिखानी चाहिये। प्रत्येक व्यायाम में कुछ न कुछ क्रम तथा भाग होते हैं जिन पर ध्यान देना चाहिये। जैसे जैसे अभ्यास होता जाये प्रतिक्रिया सही तथा शीघ्रता से होनी चाहिये। व्यायाम जितना अधिक सीख लिया जाये उतना ही फुर्ती तथा शक्ति से होना चाहिये। घंटे का अधिक समय नये व्यायाम के सीखने में प्रयोग नहीं करना चाहिये। जो सीख लिये गये हैं उनमें क्षमता प्राप्त करने की चेष्टा होनी चाहिये। जैसे ही क्षमता प्राप्त हो, नया व्यायाम सीखना चाहिये।

(२) एक पाठ से दूसरे पाठ में प्रगति

एक पाठ से दूसरे पाठ में बहुत अन्तर नहीं होना चाहिये। एक पाठ से उसके बाद के पाठ में बहुत परिवर्तन नहीं होना चाहिये। जो आसान अभ्यास एक पाठ में हो उसके बाद के पाठ में उसी प्रकार की एक नयी क्रिया देना चाहिये जिससे बालकों की रुचि बनी रहे। पिछली क्रियाओं पर ही नयी क्रियायें आधारित होना चाहिये। इसी क्रम से पाठ सरल से जटिल होता चला जायगा। प्रत्येक पाठ में कुछ न कुछ नयी वस्तु होनी चाहिये या क्रिया के रूप में उन्नति होना चाहिये, एक ही क्रिया को सुचारु रूप तथा सुगमता से करने को प्रगति कह सकते हैं। जो कुछ सीख लिया गया है उसकी पुनरावृत्ति समय पर होनी चाहिये।—जटिल

क्रियाओं के सीखने के पहले सरल क्रियाओं में क्षमता होनी चाहिये। पहले एक एक क्रिया सीखना चाहिये तब उन्हें सम्मिलित अवस्था में आसानी से सीखा जा सकता है।

शारीरिक शिक्षा में ताल की महत्वता (Importance of Rhythm in Physical Education Activities)

संसार की सभी वस्तुयें किसी न किसी ताल से कार्य करती हैं। विश्व में चाँद, सूर्य, तारे, मौसम एक ताल से कार्य करते हैं। प्रत्येक चीज में एक न एक ताल है। जो ताल विरुद्ध काम होगा वह सही नही होगा। इसी नियम की सत्यता को लेते हुये शारीरिक शिक्षा में ताल की बड़ी महत्वता है। बालक तालबद्ध क्रिया को प्रसन्नता से करते हैं तथा उन्हें शारीरिक शिक्षा तथा साधारण शिक्षा देने का यही एक विशेष माध्यम है। बालक तालबद्ध क्रिया में रुचि लेते है तथा सरलता से सीख लेते हैं।

व्यायाम से शरीर को उस समय तक लाभ नहीं हो सकता जब तक वह ताल से न किया जाये। शरीर में शारीरिक क्रिया लाभ उस समय तक नहीं हो सकता जब तक कि मांस पेशियों में तनाव तथा ढीलापन किसी दिये ताल क्रम से न किया जाये। जब मांस पेशियों पर तनाव तथा ढीलापन किसी ताल क्रम से न किया जाये। जब मांस पेशियों पर तनाव तथा ढीलापन किसी ताल क्रम से कुछ समय तक किया जाता है तभी उपयुक्त लाभ होता है। प्रत्येक क्रिया की अपनी ताल होती है। साधारणतः नियम यह है कि ताल अधिक तेज या अधिक कम न हो। मध्य ताल साधारणतः व्यवहार में आता है। यह आवश्यक है कि अन्त परिणाम के लिये पाठ के प्रत्येक व्यायाम ताल से हो, केवल संतुलन के व्यायाम को छोड़ कर। प्रत्येक व्यक्ति का संतुलन भिन्न-भिन्न होता है इसलिये एक साथ ताल से नहीं किया जाता। सामूहिक संतुलन के कार्य के लिए समय इतना दिया जाता है कि अपने समय में करते हुये भी सभी एक साथ कर लेते हैं। आदेश खींच कर लम्बे रूप में दिया जाता है।

भारतीय शारीरिक शिक्षा प्रणाली में प्रायः सभी कार्य उत्तम ताल में किये जाते हैं।

शारीरिक शिक्षा पाठ में कार्य ताल से उसी समय कराया जाता है जब

विद्यार्थी कार्य को भलि भांति सीख लेते हैं। इस समय विशेष ध्यान कार्य के ताल पर दिया जाता हैं न कि सुधार पर।

ताल में एक साथ कार्य करने का अर्थ सहयोग है जो एक श्रेष्ठ प्रजातांत्रिक गुण हैं और अच्छे नागरिकता के लिए तथा समाज विकास के लिये अत्यन्त आवश्यक हैं। शारीरिक शिक्षा की तालबद्ध क्रिया के सामूहिक रूप में यह गुण भलि भांति सिखाया जा सकता है।

उत्तम पाठ्य योजना की कसौटी—पाठ्य योजना में निश्चित शिक्षा के ध्येय एवं उद्देश्य का होना। क्रिया में परस्पर सम्बन्ध जिससे वह लगातार चलता हुंआ हो तथा ज्ञान से अज्ञात की ओर हो। शिक्षा में प्रेरणा का उपाय हो। संगठन की प्रणाली हो। दृढ़ एवं उपयोगी पद्धति का प्रयोग हो। व्यक्तिगत विभिन्नता का स्थान हो तथा उसके प्रति चेष्टा हो। आधारभूत कौशल के अभ्यास, पुनरावृति तथा ड्रिल का उचित उपाय हो जिनके द्वारा सदैव धारण की सम्भावना हो। परिणाम की मांप का उचित उपाय हो।

उत्तम पाठ्य योजना में उपरोक्त का पाया जाना आवश्यक है।

३

वर्गी करण

शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम प्रत्येक विद्यार्थी के लिये एक सा होना असम्भव है। व्यक्तियों की वैयक्तिक विभिन्नता के कारण रूचि, शक्ति, प्रवृत्ति आदि में भिन्नता होनी नैसर्गिक है। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि शारीरिक शिक्षा क्रिया क्रम के लिये भी रूचि, आवश्यकता एवं योग्यता का विस्तार देखा जाये। किसी समूह में यह सर्वदा ज्ञात होगा कि किसी भी कार्य के लिये सम्पूर्ण समूह तीन विभागों में बटा हुआ प्रतीत होगा। कुछ व्यक्ति सबसे उपर होंगे जो श्रेष्ठ श्रेणी में आ सकते है। कुछ एक दम नीचे जो निम्न श्रेणी में होंगे। अधिकांश बीच में होंगे जो मध्यम श्रेणी में होंगे। इन वर्गों के बीच में भी यही तीन वर्ग निकल सकते हैं।

बढ़ाव एवं विकास में भी व्यक्ति अपनी रीति से बढ़ते हैं। एक ही आयु के बालकों में अनेक विभिन्नता प्रदर्शित होंगी। अतः शारीरिक शिक्षा के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि व्यक्ति की वैयक्तिक भिन्नता का ध्यान रखते हुये प्रत्येक की आवश्यकता के अनुसार उसे प्रगति करने का अवसर एवं कार्य दिया जाये। साधारणतः बालकों को उनके एक समान लिंग, लम्बान, शक्ति, तीव्रता कौशल, वजन, आयु आदि के आधार हर समान व्यक्तियों का समूह (Homogeneous grouping) कर दिया जाता है। समान व्यक्तियों का समूह सरलता से लिंग, आयु, लम्बाई तथा वजन के आधार पर किया जा सकता है। इस के लिये Mc Cloy's Classification Index एक अच्छी प्रणाली है। यह लड़कों के लिये अत्यन्त ही उत्तम सिद्ध हुआ है। इस प्रणाली में शक्ति, तीव्रता तथा कौशल का आधार नहीं लिया जाता है। Mc Cloy's Classification Index विशेषतयः एथेलेटिक शक्ति के वर्गीकरण के लिये उपयोगी समझा गया है। उनका कहना है कि इन तीन दिये हुये तथ्यों से सम्पूर्ण एथेलेटिक शक्ति का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। वे सात अन्य

शारीरिक क्रिया, मानसिक एवं चरित्र के तथ्यों का वर्णन करते हैं जो उच्चतम एवं निपुण एथेलेटिक योग्यता के जानने के लिये आवश्यक हैं। आयु, लम्बाई एवं वजन तीन आधारभूत तथ्य बताये गये हैं।

इन के तीन वर्गीकरण बताये गये हैं।

(१) २० आयु + ६ लम्बाई + वजन

यह प्रत्येक आयु के लिये प्रयोग हो सकता है। जहां आयु १७ वर्ष से अधिक हो वहां आयु १७ वर्ष मान ली जायेगी।

(२) ६ आयु + वजन

यह कालेज के लिये उपयुक्त है जहां सब विद्यार्थी १७ वर्ष से ऊपर होंगे।

(३) १० आयु + वजन

यह प्रारम्भिक स्कूल के लिये उपयुक्त है जहां प्रत्येक बालक १५ वर्ष की आयु से नीचे हैं।

Mc Cloy के Athletic Quoteint के द्वारा बालक के समूह में उसका वास्तविक एथेलेटिक योग्यता का स्थान प्रतिशत के अनुसार पता चलता है, उनका कहना है कि किसी चार आइटम में जिस में एक दौड़, एक ऊंची कूद, एक लम्बी कूद तथा एक फेंकना हो इनके द्वारा उसकी ट्रैक एवं फील्ड की योग्यता भली भांति जानी जा सकती है।

वर्गीकरण का एक अन्य प्रकार Mc Cloy के द्वारा बताया गया है। यह है General Motor Capacity Test के द्वारा जो सारजेन्ट जम्प, १० सेकंड बैठक तथा Iowa Brace test तथा classification Index के संयुक्ति से बना है। लड़कियों के लिये Classification Index छोड़ दिया गया है। इसके द्वारा मांस पेशियों के कार्य की तीव्रता, लचीलापन, तथा सम्पूर्ण गति युक्त शिक्षा योग्यता की सम्भावना का ज्ञान होता है। इसके परिणामतयः General Motor Capacity Score प्राप्त होता है जिस की तुलना बुद्धि मांप में मानसिक आयु से की जा सकती है। यह Motor Quotient में भी परिवर्तित किये जा सकते हैं।

इस–$\frac{100 \times \text{General Motor Capacity Score}}{\text{Norm of classification Index}}$ का सिद्धान्त प्रयोग किया जाये।

इससे एक सरल वर्गीकरण का प्रकार है Physical Efficiency Index, इस में खड़े होकर कूदना, खड़े हो कर (शाट पुट तथा वजन का प्रयोग होता है।

Nelson and Cozen's classification Index के वर्गीकरण प्रणाली में भी आयु, लम्बाई तथा वजन लिया जाता है। यह इस प्रकार है।

Index=२० आयु + ५.५५ लम्बाई+वजन

वर्गीकरण के कुछ सिद्धान्त जिन्हें प्रयोग किया जा सकता है :—

(१) आयु × वजन × लम्बाई (२) वजन÷लम्बाई × आयु (३) आयु × लम्वाई (४) लम्बाई × वजन (५) आयु × वजन (६) वजन÷आयु (७) लम्बाई ÷ आयु (८) वजन÷लम्बाई

उंचाई इंच में, वजन पाउन्ड में तथा आयु महीनों में होनी चाहिये।

Roger's Strenghth Index–यह दस से बारह मिनट का एक टेस्ट है जिससे ऐथेलेटिक योग्यता मालूम की जाती है। इसमें ६ आइटम हैं।

(१) फेंफड़ों की योग्यता घन इन्च में
(२) दाहिने हांथ की मुट्ठी की शक्ति पाउन्ड में
(३) बायें ,, ,, ,,
(४) पीठ पर उठाना ,,
(५) पैरों पर उठना ,,
(६) हाथों की शक्ति निम्नलिखित सिद्धान्त के द्वारा

$$\text{पुल अप} + \text{पुश अप} \times \left[\frac{\text{वजन}}{१०} + (\text{उचाई} - ६०)\right]$$

पुल अप तथा पुश अप के बीच ५ मिनट का अन्तर हो।

यह मान लिया गया है कि शारीरिक शिक्षा में योग्यता के अनुसार सब दशाओं में वर्गीकरण करना सम्भव नहीं है। वर्गीकरण के आधार के विषय में भी शारीरिक शिक्षकों में मतभेद है। शक्ति, लम्वाई, वजन, आयु, शारीरिक योग्यता, गतियुक्त योग्यता, किसी कार्य में सफलता आदि कुछ आधार वर्गीकरण के बताये जाते हैं। अनेक विशेषज्ञ हैं जो योग्यता के आधार पर वर्गीकरण के

सिद्धान्त को उचित नहीं समझते क्योंकि इन में जीवन स्थितियों का प्रतिनिधित्व नहीं होता।

चतुर शिक्षक अपने कक्षा का वर्गीकरण सुविधा के लिये कर ही लेता है। तैरने में प्रारम्भिक, साधारण तथा अच्छों का वर्गीकरण होता है। मल्लयुद्ध के लिये वजन का वर्गीकरण होता है। बड़े खेलों में योग्यता एवं वजन के अनुसार वर्गीकरण होता है।

यह सर्व मान्य है कि प्रतियोगिता से चेष्टा की प्रेरणा होती है। शारीरिक शिक्षा में प्रतियोगिता भली भाँति हो सकती है। प्रतियोगिता से लाभ प्राप्त करने के लिये उसे नियणत्रित करना आवश्यक है नहीं तो यह सम्भव है कि असामाजिक व्यवहार उत्पन्न हो।

शारीरिक शिक्षा अपने ध्येय की सत्यता के अनुसार उच्च आदर्श, भावनाओं एवं व्यवहार के ऊपर बल देता है। यह सदैव आवश्यक है कि बालकों को इन गुणों के ग्रहण करने के लिये उत्साहित किया जाये। स्पोटर्स मैन शिप की भावना प्रत्ये बालक को अर्जित करना आवश्यक है। चरित्र के नियम कागज पर लिखे हुये नहीं किन्तु जीवन के अभ्यास में होना चाहिये।

इन भावनाओं के कारण खेल में उत्तेजना एवं उत्साह में कमी नहीं होगी। इसके द्वारा ऐथेलेटिक्स आदि में व्यक्ति के शिथिल, धीमा, अरूचि, अग्रसर न होने वाला तथा निःसाहस होने का कोई भय नहीं है। इस बात पर बल देने की आवश्यकता है कि जब टीम अपनी पूर्ण चेष्टा करती है तो दूसरी विरोधी टीम को उत्तम खेल की प्रेरणा देती है। कोई भी व्यक्ति या टीम अपनी उच्चत्तम प्रश्रिम तथा योग्यता किसी अधमरे टीम के साथ खेलने में कभी भी प्रयोग नहीं करेगा। व्यक्ति के प्रतियोगिता योग्यता में भी विभिन्नता है। आधुनिक सामाजिक एवं शैक्षणिक विचारों को देखते हुये जीवन में शारीरिक क्रियाओं में प्रतियोगिता की विशेष आवश्यकता है जिस के द्वारा स्पोटर्स मैनशिप सिखाया जा सके।

४

प्रतियोगितायें

प्रतियोगिता एक प्रकार का वार्षिक कार्य का लेखा है। इसके द्वारा विद्यार्थियों को अपने चातुर्य तथा कौशल प्रदर्शन करने का अवसर मिलता है, यह एक परिणाम के माप के सदृश्य है जो अभ्यास के लिये प्रेरक होता है तथा किसी कार्य की प्रगति में सहायक होता है। कार्यक्रम में उत्साह तथा रुचि उत्पन्न करता है।

टूरनामेन्ट के लिये आवश्यक विचार—सभी टूरनामेन्ट में अच्छी तथा बुरी बातें हैं। किन्तु वे अपने-अपने स्थान में लाभकर हैं। टूरनामेन्ट के नियोजन में निम्नलिखित पर ध्यान देना आवश्यक है। कार्य का प्रकार, समय जो दिया जा सकता है, खिलाड़ियों की रुचि, सुविधायें तथा साधन, कौन सा वर्ग हिस्सा ले रहा है (बड़े, बीच के या छोटे या खुला हुआ) कितनी टीम खेलेंगी, कितनी मात्रा है तथा उनका स्तर। कितने तथा कहाँ से ओफिशियल मिल सकते हैं या कौन रेफरी का कार्य करेगा, कितना व्यय होगा, मौसम, प्रतियोगिता का तात्पर्य क्या है, संगठन आदि के ध्यान से व्यक्ति जो कार्य में सहायता करेंगे, ओफिशियल्स कार्यक्रम सूचना, आरम्भ तथा अन्त समारोह की तैयारी तथा निमन्त्रण आदि प्रोटेस्ट, पारितोषिक, अतिथि सत्कार आदि विषयों पर विचार।

प्रतियोगिता के प्रकार

नाक आउट टूरनामेंट—साधारणत: चिट्ठे डालकर टीमों को आपस में खिलाया जाता है। जो हार जाते हैं वे फिर नहीं खेलते। जो विजेयता हैं वे खेलते जाते हैं। बहुत कम समय में खेल समाप्त हो जाता है और सर्व श्रेष्ठ विजयता का पता चल जाता है। टीम की संख्या यदि दो है या दो का गुणा है जैसे ४, ८, १६, ३२, ६४ तो आसानी से जोड़े बनाये जा सकते हैं।

जैसे ८ टीम के लिये—

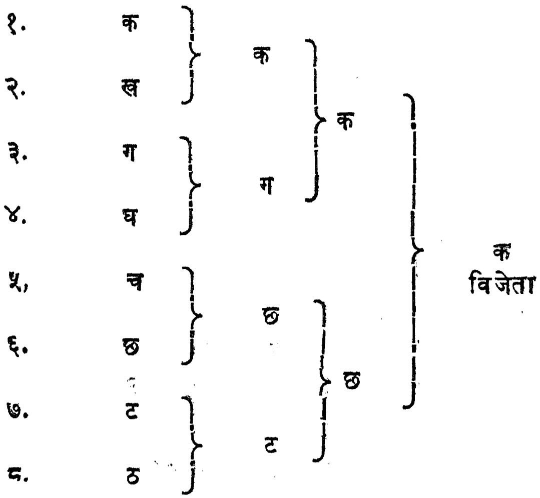

यदि टीम दो या दो का गुणा नहीं है तो बराबर जोड़ करने के लिये पहले खेल में Bye दिया जाता है। बाई निकालने की विधि है कि टीम को २ के उस नम्बर के अगले गुणा से घटा लें। जो उत्तर होगा उतने ही बाई दिये जायेंगे। जैसे यदि १० टीम हैं तो इससे अगला २ का गुणा १६ है १६-१० = ६ अतएव ६ टीम को बाई दिये जायेंगे।

बाई यदि बराबर हैं तो पहिले खेल में आधे ऊपर तथा आधे नीचे होने चाहिये। यदि बराबर नहीं हैं तो थोड़े ऊपर तथा अधिक नीचे होना चाहिये।

१. बाई क
क
२. बाई ख
क
३. बाई ग
ग
४. घ
ख
५. च
६. छ
तँ विजेता
छ
७. ज
झँ
८. बाई झ
तँ
९. बाई ट
त
१०. बाई त

सीडिंग (Seeding) दूर के अच्छे टीम जो प्रतियोगिता में हैं उन्हें पृथक रखने की विधि है जिससे पहले ही खेल में वे आपस में न खेल लें, इससे जनता की रुचि प्रतियोगिता में कम हो जायेगी। जो टीम सीड किये जाते हैं उन्हें ऊपर तथा नीचे के हिस्से में रखा जाताहै जिससे वे खेल के अन्त के हिस्से में आपस में मिलें।

कौन्सोलेशन टूरनामेन्ट (Consolation Tournament) इसमें प्रत्येक टीम को दो बार खेलने का अवसर मिलता है। कभी कभी पहले अवसर में किसी कारण से अच्छी टीम हार सकती है। उसे अपनी शक्ति दिखाने का एक और अवसर मिलता है।

जैसे—

क
ख क
ग ख क
ग घ घ
ग
ग क
च
छ चे
छ छ ज
ज
झ ज
झ

ख, ग, छ, झ जो हारे हुये हैं उन्हें फिर से खेलने का अवसर मिलता है। इस खेल का विजेता ग है, जो पहले ही खेल में हार चुका था।

डबल ऐलिमिनेशन (Double Elimination)

क
क
ख
क
च ख
च ख
छ छ
क रेगुलर का विजेता ख
ज झ
ज झ
झ फ ख कान्सीलेशन का विजेता
ज
प च
प य
फ थ

इस उपाय में हारने वालों को खेलते रहने का अवसर मिलता है। जैसे

ख,छ,झ,फ जो पहले राउन्ड में हार गये फिर से खेलते हैं और च, प जो दूसरे राउन्ड में हार गये फिर खेलने का अवसर पाते हैं।

क
क
ख क
ग
ग
घ क
ङ
ङ
च ङ
छ
छ
ज
हारने वाले क
ख
ख
घ ख
छ
च
ख
च
ज च ख
ग ङ

इसमें जीतने वाले एक ओर, और हारने वाले दूसरी ओर खेलते हैं। जैसे ख, घ, च, ज हारने वाले नीचे खेलते हैं। उनके दूसरे राउन्ड में ऊपर के हारने वाले और नीचे के जीतने वाले साथ खेलते हैं। इस प्रकार जीतने वालों के विजेता तथा हारने वालों के विजेता फिर फाइनल में एक बार और खेलते हैं।

लीग या राउन्ड रोबिन पहला उपाय:—इसमें प्रत्येक टीम हर एक के साथ खेलती है। इसमें विजेता टोटल पाइन्टस से मालूम किया जाता है। खेल कितने होंगे उसका नियम है एन $\frac{(\text{एम-१})}{२}$ एन=टीम का नम्बर

यदि एन = ७ $\frac{७(७-१)}{२} = \frac{७ \times ६}{२}$ = २१ खेल

	क	ख	ग	घ	ङ	च	छ
क		मार्च १	२	३	४	५	६
ख			७	८	९	१०	११
ग				१२	१३	१४	१५
घ					१६	१७	१८
ङ						१९	२०
च							२१
छ							

सिंगल लीग में चर्तुभुज का एक हिस्सा होगा, डबल लीग में दोनों हिस्सा।

जीतने में २ प्वाइन्ट
बराबर १ ,,
हार ० ,,

राऊन्ड रोबिन या लीग प्रणाली डालने का दूसरा उपाय—यदि टीम बराबर हो तो नम्बर एक से आरम्भ करें जो स्थित रहेगा तथा बाकी नम्बर बायें से दायें चलेंगे जब तक आरम्भ की अवस्था को पहुंचे। जैसे ८ टीम के लिये।

राऊन्ड	(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)	(७)
	१—२	१—८	१—७	१—६	१—५	१—४	१—३
	८—३	७—२	६—८	५—७	४—६	३—५	२—४
	७—४	६—३	५—२	४—८	३—७	२—६	८—५
	६—५	५—४	४—३	३—२	२—८	८—७	७—३

यदि टीम बराबर न हों तो सब नम्बर बायें से दायें चलते हैं और ऊपर के नम्बर को बाई (bye) मिलता है जैसे ७ टीम के लिये

राऊन्ड	(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)	(७)
	७	६	५	४	३	२	१
	६—१	५—७	४—६	३—५	२—४	१—३	७—२
	५—२	४—१	३—७	२—६	१—५	७—४	६—३
	४—३	३—२	२—१	१—७	७—६	६—५	५—४

सीढ़ी या लाडेर टूरनामेन्ट

क	ख	ग	घ	च	छ	ज	झ	ट	ठ

ये व्यक्तिगत खेल के लिये उत्तम है। स्थान देने के लिए चिट्ठा निकालें या इलीमिनशेन टूरनामेन्ट जिसमें हारने वालों का जोड़ा करते चलें। इसके बाद यह अपने आप चलता है।

खिलाड़ी या टीम अपने ठीक ऊपर वाले से बाज़ी लेता है। यदि जिसे बाजी दी गयी हो, अपने ठीक ऊपर वाले से न खेल रहा हो तो उसे दो दिन के अन्दर खेलना होगा। यदि वह नहीं खेलेगा तो उसे नीचे आकर स्थान बदलना होगा। जैसे, यदि झ, ज से बाजी लेता है और ज, छ से नहीं मिल रहा है तो उसे झ के साथ खेलना होगा। यदि 'ज' नहीं खेलता है तो उसे 'झ' के स्थान पर आना होगा और 'झ' ऊपर जायेगा। यदि वे खेलते हैं और 'झ' जीत जाता है तो वह ऊपर जायेगा और ज नीचे आयेगा। ज फिर झ के साथ नहीं खेल सकता जब तक झ और छ न खेलें। नियम यह है कि जब दो में खेल होता है तो वे फिर आपस में नहीं खेल सकते जब तक एक दूसरे से अपने नये स्थान में न खेल लें।

स्पोर्ट्स मीट—मीट सम्बन्धित व्यक्तियों की एक कार्य कारण कमेटी बनायी जायेगी जिसका संगठन साधारण संगठन की तरह होगा तथा यही कमेटी सम्पूर्ण कार्य का भार लेगी। इस कमेटी में अनेक उप कमेटी बनायी जायेगी जो भिन्न भिन्न स्पोर्ट्स के उत्तरदायित्व को अपने हाथ में लेंगी तथा उसके करने के लिये तथा उस की सब प्रकार की आज्ञाओं के लिये उन्हें इस बड़ी कमेटी के जिसके वे भाग हैं स्वीकृति लेनी आवश्यक है। सम्पूर्ण विवरण के लिये संगठन का अध्याय देखें।

संगठन चित्र

निर्देशक
|
कार्यकारणी कमीटी
|
गेम्स एवं स्पोर्ट्‌स संगठन कमीटी
|
—पुरस्कार
—सुविधायें
—कार्यक्रम
—साधन, सामान आदि
—प्रचार एवं प्रसार
—ठहरने एवं विश्राम का स्थान
—यातायात
—अर्थ, टकट आदि
—नियंत्रण
—अधिकारी एवं कार्यकर्ता

वास्तविक स्पोर्ट्‌स मीट के अधिकारी एवं उनका कर्त्तव्य—सर्व प्रथम स्पोर्ट्‌स मीट के लिये उचित सामग्री एवं सामान का प्रबन्ध करना आवश्यक है जो बहुत पहले तैयार हो जाना आवश्यक है। इसके लिये एक चेक लिस्ट रखना उत्तम होता है जिसमें सामान आ जाने पर पाने का चिन्ह लगा देना चाहिये। छोटे सामान जो सन्दूक में बन्द किये जा सकते हैं उन्हे ताले में बन्द करना चाहिये क्योंकि सम्भव है कि कोई उन्हे वहां से ले ले तथा जो उसका प्रबन्ध करता है उन्हे मालूम न हो तथा वास्तविक मीट के समय अनावश्यक उलझन उत्पन्न हो। बड़े सामान तथा अन्य सामान जो सन्दूक में नहीं आ सकते हैं उन्हें ऐसे स्थान में रखना उचित है जहां वे सुरक्षित रहें तथा समय पड़ने पर सरलता

से प्राप्त हो सके। स्पोर्ट्स मीट जहां हो रहा हो यदि वहीं उन्हे जमा किया जाये तो और उत्तम होगा।

सामग्री की लिस्ट—स्टोप वाच-३, ऊन, पिस्तौल एवं कारतूस। स्कोर बोर्ड, स्कोर शीट विभिन्न आइटम्स के लिये, पेन्सिल, कागज, पुरस्कार के लिये टेबुल, फीता, शौट लड़के-लड़कियों के लिये, डिसकस, हैमर, जावलिन, समकोण, ज़मीन खोदने एवं बराबर करने के लिये हथियार, अपराइट, बटान, हरडल, पोल्स, घटी, पेग, मार्कर, नम्बर, सेफ्टीपिन, फिनिश पोस्ट, रूलबुक, समरी शीट, सीटी, झंडी लाल, हरी, लाऊड स्पीकर, लेन लेने के लिये नम्बर, चूना, कीलें, छोटे झंडे ट्रैक के लिये, टेक आफ बोर्ड, टो बोर्ड, क्रोस बार्स, बालू एवं बारूदा, स्टेप लार्डस, जजेस स्टैन्ड, विक्ट्री स्टैन्ड, स्टैन्ड ऐट फिनिश, रस्सी लम्बी, बटान, फर्स्ट ऐड किट, एनाउन्सर, रेकार्डर, पत्रकार के लिये टेबुल, कुर्सी, टाइपराइटर, कागज इत्यादि, सर्टिफिकेट एवं अन्य पुरस्कार, ओफिशियल्स बैज, साइन पोस्ट विभिन्न आइटम तथा अन्य स्थानों के लिये, जैसे, ऐथलीट्स, ओफिशियल्स, निमंत्रित व्यक्ति, मुख्य अतिथि, मोटर, गाड़ी आदि के पार्क करने के स्थान, टी स्टाल, टिकट, पूछ-ताछ, छपा हुआ प्रोग्राम।

मीट के अधिकारी—मैनेजिंग कमेटी प्रबन्धक, मैनेजर तथा तकनीकी मैनेजर, सेक्रेटरी अपील समीति, रेफरी ट्रैक तथा फील्ड, स्टार्टर—कम से कम दो, क्लर्क आफ दी कोर्स एवं सहायक, अनाउन्सर तथा सहायक स्कोरर तथा सहायक जजेस आफ दी फिनिश—कम से कम पांच, चीफ फील्ड जज, फील्ड जजेस—कम से कम चार प्रत्येक इवेन्ट के लिये, टाइमर्स—कम से कम तीन लाप स्कोरर्स— चार, सरवेयर, इन्सपेकटर्स– कम से कम चार प्रत्येक कोने पर, मार्शल तथा सहायक, डाक्टर, पत्रकार।

मीट का आरम्भ तथा अन्त—(१) मुख्य अतिथि का स्वागत, ऐथलीट्स का मार्च पास्ट, खेल के आरम्भ करने की सूचना मुख्य अतिथि द्वारा, एथलीट्स के द्वारा प्रतिज्ञा लेना, अपने अपने स्थानों में जाना (२) वास्तविक खेल एवं प्रतियोगिता छपे कार्यक्रम के अनुसार (३) प्रतियोगिता का अन्त-मुख्य अतिथि का आगमन एवं स्वागत, एथलीट्स का मार्च पास्ट, मुख्य अतिथि के द्वारा विशेष पारितोषिक का वितरण (सर्टिफिकेट आदि खेल एवं प्रतियोगिता के समय आइटम

मीट के अधिकारियों का चित्र

- मीट प्रबन्धक
  - सहायक प्र०
    - तकनीकी
      - रेफरी, ट्रैक, वल्कं आफ दि कोर्स, स्टार्टर, मार-शल, ट्रैक जज ट्रैक अम्पायर टाइम कीपर्स, लैप स्कोर्स
      - रेफरी, कूदना, जजेस, रेकार्डर्स
      - रेफरी, फेकना, जजेस रेकार्डर्स
  - स० प्र०
    - संगठन
      - एनाउंस करना, सेरीमनी (ceremony) पत्र व्यवहार, पत्रकार
      - ज़मीन, सामग्री सामान तथा साधन
      - रेकार्डिंग तक-नीकी अधिकारी स्कोर बोर्ड, पोस्टस्, उनके चलाने वाले
  - सहायक प्र०,
    मीट के पश्चात् का उत्तरदायित्व, परिणाम की जांच, आर्थिक लेखा सही करना, रिपोर्ट तैयार करना, सामान का उचित स्थान पर पहुंचाना आदि देखना, धन्यवाद के पत्र लिखना, जो अन्य कार्य मीट सम्बन्धी शेष हों।

समाप्त होने पर विजयी विक्ट्री स्टैन्ड पर खड़े होते हैं तब उन्हें दिया जाता है) भाषण, मीट का अन्त घोषित करना, राष्ट्रीय गान के बाद समाप्ति।

एक उत्तम स्तर के स्पोर्ट्स मीट का प्रोग्राम—प्रथम दिन १.३२ मध्याह्न प्रतियोगियों का एकत्रित होना २.०० उद्घाटन सामारोह २.३० १०० मीटर (डिकाथलेन) शाट पुट हाई जम्प २.४५ १०० मीटर रेस (हीट्स), ३.०० ब्रौड जम्प (डिकाथलेन), ५००० मीटर रेस (फाइनल) ३.२० ४०० मीटर रेस (हीट्स,) ३.४० शाट पुट डिकाथलेन,) ११० मीटर हर्डल्स (हीट) यदि हर्डलस् उठाने या रखने की समस्या हो तो इसे सब से पहले किया जा सकता है। ब्रौडजम्प (फाइनल) २०० मीटर रेस (हीट) ४.१० हाई जम्प (डिकाथलेन) ४.२० ४०० मीटर लो हर्डल्स् (हीट) ४.३५ ४×१०० रीले रेस (हीट) ४.५० ८०० मीटर रेस (हीट) ५.०० ४०० मीटर रेस (डीकाथलेन,)।

दूसरे दिन—८.३० प्रात: १०००० मीटर रेस (फाइनल) ९.१५ ११० मीटर हाई हर्डल्स (डिकाथलेन,) जावलिन थ्रो (फाइनल) ९.४५ डिस्कस थ्रो (डिकाथलेन) पोल वाल्ट (डिकाथलेन) २.०० मध्याह्न २०० मीटर रेस (फाइनल) हाई जम्प (फाइनल) २.१० ४०० मीटर लो हर्डल्स (फाइनल) डीसकस थ्रो (फाइनल) २.१५ १५०० मीटर रेस (फाइनल) २.३० जावलिन थ्रो (डिकाथलेन) २.४५ हौप स्टेप एण्ड जम्प (फाइनल) ३ ०० ४×४०० मीटर रीले (हीट) ३.१५ १५०० मीटर रेस (डीकाथलेन)।

तीसरे दिन—६.०० प्रात: माराथन रेस ८.३० २०० मीटर रेस फाइनल हैमर थ्रो (फाइनल) ८.४५ ४०० मीटर लो हर्डल्स (फाइनल,) ९.०० ८०० मीटर रेस (फाइनल) २ ०० मध्याह्न ११० मीटर हाई हर्डल्स (फाइनल) पोल वाल्ट (फाइनल) २ ३५ ४०० मीटर रेस (फाइनल) २ ५० १०० मीटर रेस (फाइनल) ३.०० ३००० मीटर स्टीपल चेज (फाइनल) ३ ३० ४×१०० मीटर रीले रेस (फाइनल) ३.४० ४×४०० मीटर रीले रेस (फाइनल) ३.५० समाप्ति समारोह।

तैरने की प्रतियोगिता स्वीमिंग मीट का संचालन एथेलेटिक मीट से

सरल होता है क्योंकि प्राय: एक बार एक ही आइटम किया जा सकता है। इसमें जजिंग भी आसानी से हो जाती है। Fancy diving में कुछ कठिनता अवश्य होती है अत: उसके लिये तीन निपुण जजों का होना अति आवश्यक है।

कम्पीटीशन के आइटम—३०० मीटर Medly Relay तीन प्रतियोगी पूरी दूरी को तीन हिस्सों में तय करते है। यह Back stroke, Breast stroke तथा Free style में होगा।

१०० मी० Free style, २०० मी. Free style, ४०० मी. Free style, ५०० मी० Free style, ८०० मी० Free style, १०० मी० Back stroke पीठ पर, २०० मी. Back stroke, १०० मी. Butterfly २०० मी० Butterfly, २००×४ Relay, १००×४ Relay

ओफीशियल्स मैनेजर—१, स्टार्टर २, रेफरी १, सेक्रेटरी १, फिनिश जज ८, जजेस आफ स्ट्रोक, टाइमर्स ३, घूमते हुये देखने के लिये इन्सपेक्टर्स ४, क्लर्क आफ दी कोर्स २, अनाउन्सर १, स्कोरर २, स्टीवर्डस ४।

गोता लगाना—(Diving) यह दो हिस्सों में विभाजित है स्प्रिन्ग बोर्ड तथा फिक्सड, प्रत्येक प्रतियोगी को कुछ अनिवार्य डाइव करना पड़ता है तथा कुछ ऐच्छिक डाइव कर सकते हैं। डाइव निम्नलिखित पांच समूहों में से चुने जा सकते है।

1.	Forward dive	Body facing water
2-	Backward dive	Body facing spring board
3.	Backward dive	Body facing water
4	Forward dive	Body facing spring board
5.	Twist dives	

कुश्ती प्रतियोगिता—

ओफीशियल्स,

रेफरी — १

जजेस — ३
टाइमर — १
रेकोर्डर्स — २
स्टीवर्ड — ६
मानेजर — १
डाक्टर — १

वजन का वर्गीकरण—

Fly weight	up to	114 1/2	lbs.
Bantam	,,	125 1/2	,,
Feather	,,	136 1/2	,,
Light	,,	147 1/2	,,
Welter	,	160 1/2	,,
Middle	,,	174	,,
Light-heavy	.,	191	,,
Heavy	,,	191	,, above

जिमनास्टिक प्रतियोगिता—

जिमनास्टिक प्रतियोगिता किसी स्पोर्ट्स या स्वीमिंग मीट के समान संगठित एवं संचालित किया जा सकता है।

प्रत्येक आपरेट्स पर कार्यों का मूल्यांकन करने के लिये फैन्सी डाइविंग की प्रणाली प्रयोग में लायी जा सकती है। ऐच्छिक क्रियाओं का मूल्यांकन डाइव के मूल्यांकन के समान उसकी कठिनाई एवं सतर्कता तथा करने की चतुराई के आधार पर अंक दिये जा सकते हैं। कितने ही अंक प्रणाली इसके लिये संगठित किये हुये हैं जिनका प्रयोग किया जा सकता है। कितने लोगों का विचार है कि अनुभवी जज सम्पूर्ण कार्य को देखकर उसे अंक प्रदान कर सकते हैं।

—

५

जनता से सम्बन्ध

समय एवं स्थान के अनुसार शैक्षणिक चेष्टाओं में परिवर्तन होता रहता है। समाज इन संस्थाओं का निर्माण इस लिए करता है कि उसके ध्येय, विचार एवं आदर्श की शिक्षा बालकों को दी जाये एवं ऊँचे बिचारों का प्रसार सर्वत्र एवं सदैव होता रहे। समाज के परिवर्तन, संस्था में प्रदर्शित होना आवश्यक है। संस्था में जो कुछ हो रहा हो उसे समाज देखना चाहता है तथा जानना चाहता है। संस्था का यह उत्तरदायित्व है कि समय-समय पर वह समाज के सम्मुख अपने कार्यों का प्रदर्शन करे।

उत्तम संगठित प्रदर्शन, प्रचार एवं प्रसार का महत्वपूर्ण मूल्य है। अनेक माध्यम प्रचार एवं प्रसार के जो उपलब्ध हैं उनका प्रयोग करना उचित है। जनता एवं समाज के सहयोग के लिये यह अति आवश्यक है। समाज, स्कूल के बालकों को देखवर स्कूल की शिक्षा एवं आदर्श का अनुमान करता है। यह सम्भव है कि बालक संस्था का उचित प्रतिनिधित्व न कर सकें अत: यह उचित है कि समाज संस्था के विषय उचित ज्ञान पर्याप्त माध्यम से प्राप्त करे।

जनता से सम्बन्ध नियत करने के लिये अपने कार्यों का प्रसार करना अनिवार्य है। इसी के द्वारा सर्वसाधारण का ध्यान संस्था की ओर आकर्षित होगा। यह एक प्रकार की सूचना होगी जिसके द्वारा स्थान, व्यक्ति, उद्देश्य या संस्था के लाभ के लिये भिन्न-भिन्न कार्य करना होगा। यह क्रिया, शब्द या लिखित रूप में हो सकता है। संस्था के प्रसार एवं प्रचार तथा अन्य शब्दों में जनता सम्बन्ध का मुख्य तात्पर्य, संस्था के विषय में सूचना देने का, स्कूल के प्रति भ्रम हटाने का, नये विचारों के प्रसार करने के लिये, आर्थिक सहायता के लिये, स्कूल

की संख्या बढ़ाने के लिए, कार्यकारिणी एवं कार्यकर्ताओं को अनुचित आलोचना से सुरक्षित करने के लिये किया जा सकता है।

शारीरिक शिक्षा के जनता सम्बन्ध नियत करने के मुख्य उद्देश्य, आधुनिक शारीरिक शिक्षा के दर्शन की शिक्षा देने का, शारीरिक शिक्षा की बढ़ती हुई घोर आवश्यकता व्यक्ति तथा समाज के लिये, शारीरिक शिक्षा किस प्रकार शिक्षा के ध्येय की पूर्ति करता है आदि से परिचित करने के हो सकते हैं।

प्रचार एवं प्रसार के द्वारा, विद्यार्थियों की प्रगति एवं सफलता, शिक्षा की प्रणाली, बालकों का स्वास्थ्य तथा दक्षता, क्रियाओं का कार्यक्रम, शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता, शारीरिक शिक्षा का उद्देश्य, इन्ट्राम्युरल प्रोग्राम, शारीरिक शिक्षा के अध्यापक, शारीरिक शिक्षा की सुविधायें, शारीरिक शिक्षा में बालकों की उपस्थिति, रुचि एवं व्यवहार तथा शारीरिक शिक्षा की आर्थिक दशा का ज्ञान दिया जाता है। प्रचार एवं प्रसार भिन्न-भिन्न माध्यम के द्वारा निरन्तर होते रहना चाहिये। समाज एवं जनता की उत्तम शिक्षा सही सूचना के द्वारा निरन्तर होते रहना चाहिये।

स्कूल में प्रचार एवं प्रसार के दो मुख्य माध्यम, बालक एवं प्रेस हैं। इसका उचित प्रयोग करना आवश्यक है। प्रचार एवं प्रसार के साथ ही कुछ अन्य माध्यम हैं जिनका भी प्रयोग किया जा सकता है। जैसे—

शारीरिक शिक्षकों का दूसरे स्कूलों, समाज सुधार एवं नागरिकता के कार्य में हाथ बटाने के द्वारा तथा अन्य शासकीय संस्थाओं को सहयोग देने आदि के द्वारा। रुचिकर शारीरिक शिक्षा प्रदर्शनी के द्वारा। यह प्रदर्शनी मां बाप तथा शिक्षकों के एसोशियेशन के लिये, शैक्षणिक समूहों के लिये, सर्वसाधारण जनता के लिये आयोजित की जा सकती है। यह एक अत्यन्त ही उत्तम माध्यम है। अतः इसे उत्तम रीति से करना चाहिये। यह प्रदर्शन किसी विशेष अवसर पर आयोजित किया जा सकता है। प्रदर्शनी का ध्येय तमाशा नहीं किन्तु शैक्षणिक होना अत्यन्त आवश्यक है।

इसी के साथ ही शारीरिक शिक्षा के विभिन्न कार्य दिखाये जा सकते हैं। यह प्रदर्शनी का एक भाग हो सकता है या किसी अन्य विशेष अवसर का एक

भाग हो सकता है जैसे 'स्कूल डे' के समय । शारीरिक शिक्षा के कार्यों के दिखाने का पूर्ण कार्य-क्रम आयोजित किया जा सकता है । कहीं कहीं पर शारीरिक शिक्षा सप्ताह मनाया जाता है वह समय कार्य दिखाने का उत्तम अवसर होगा । युवक समारोह, प्रादेशिक रैली, स्पोर्ट्स प्रतियोगिता आदि शारीरिक शिक्षा के प्रसार एवं प्रचार के उत्तम माध्यम हैं ।

स्कूल मैगज़ीन या जो भी पत्रिका निकलती हो उसके द्वारा जनता सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है । इसके द्वारा विद्यार्थियों एवं सर्वसाधारण की शिक्षा हो सकती है । इस में वार्षिक रिपोर्ट भी दी जा सकती है । आवश्य-कताओं को पूर्ण करने की मांग भी की जा सकती है । इन्हें साइड पूलपिट के समान स्पोर्ट्स आदि प्रमुख स्थानों पर लगाकर जनता को शिक्षित किया जा सकता है । एवं उनकी रुचि इस ओर उत्पन्न की जा सकती है । भारत सरकार के द्वारा चलाया हुआ शारीरिक क्षमता अभियान प्रचार का एक उत्तम माध्यम है ।

चलचित्र के द्वारा भी उत्तम प्रचार एवं प्रसार हो सकता है । विभिन्न देशों के शारीरिक शिक्षा कार्य दिखाये जा सकते हैं । श्रव्य एवं दृश्य उपकरण शिक्षा का एक उत्तम माध्यम है । सुन्दर चित्र, शिक्षापूर्ण व्याख्या, अर्थ पूर्ण वाक्य श्रव्य एवं दृष्य उपकरण में प्रयोग किये जाते हैं । रेडियो तथा टेलीविजन भी प्रचार का उत्तम माध्यम हैं । यू० पी० में किसी समय प्रातः पांच मिनट व्यायाम रेडियो के द्वारा प्रसारित किया जाता था । लोगों को शारीरिक शिक्षा में रुचि होने लगी थी । कुछ लोग जो कभी व्यायाम नहीं करते थे इस ओर ध्यान देने लगे थे ।

शारीरिक शिक्षक का स्वयं का जीवन तथा शारीरिक शिक्षा के प्रति सम्मान एवं चेष्टा जनता से सम्बन्ध स्थापित करने में अत्यन्त सहायक सिद्ध हो सकता है ।

६

शिक्षा के उपकरण

सीखने में जितनी अधिक इन्द्रियों का प्रयोग हो उतनी वह शीघ्रता से होती है तथा स्मृति अच्छी होती है। शिक्षा के उपकरण का विशेष तात्पर्य यही है कि सीखना सरलता से हो। इन उपकरणों के द्वारा सिखाने में सहायता मिलती है। इससे बालकों के सीखने के गुण एवं परिमाण दोनों में प्रगति होती है। उनके सीखने में अच्छी तरह सीखना, अधिक सीखना एवं अधिक ज्ञान पूर्वक सीखना होता है।

श्रव्य एवं दृश्य-उपकरण

शारीरिक शिक्षा में श्रव्य एवं दृश्य के अनेकों प्रकार हैं जो प्रयोग में आते हैं तथा जिनसे अधिक लाभ होता है। जैसे मूक चित्र, चलचित्र, चार्ट, चित्र, नमूना, प्रदर्शनी की वस्तु, टेप रेकॉर्डिंग आदि। दिन प्रति दिन इन उपकरणों का अधिक प्रयोग होता जा रहा है।

शरीरिक शिक्षा के विभिन्न प्रकार के पोस्टर्स (Posters) सरकार के द्वारा बनाये गये हैं जो मुफ्त में मिल जाते हैं या यदि कीमत हो भी तो बहुत कम होती है। इन पोस्टर्स में चित्र होते है जिन का प्रभाव अच्छा पड़ता है। इन्ही से सम्बन्धित चार्ट इत्यादि होते हैं जो विभिन्न विषयों पर बने हुये हो सकते हैं जैसे व्यायाम, आसन, ऐथेलेटिक्स, फुटबौल आदि। विशेषत: यह अच्छे कार्य करने वालों के कार्य करते हुये चित्र होते हैं या बनाये हुये चित्र होते है। वह उस विशेष गुण रीति तथा उपाय को प्रदर्शित करते है जिन के द्वारा सर्वोच्च सफलता प्राप्त की जा चुकी है तथा सर्व साधारण उस प्रकार का प्रदर्शन

भली भांति न कर सकें। अतः इन से बालकों के सम्भावित सफलता एवं करने की रीति का मानसिक चित्र अत्यन्त उत्तम प्रकार से दिया जाता है।

यही कार्य चलचित्र के द्वारा भी बताया जाता है जो क्रिया को वास्तविक एवं प्राकृतिक रूप में व्यक्ति के सम्मुख प्रस्तुत कर देती है। इस से एक और विशेष लाभ है कि विभिन्न देशों के बालको एवं अन्य व्यक्तियों के कार्यों को देख कर उत्साह प्राप्त किया जाता है। इनका प्रभाव शिक्षा में महत्वपूर्ण हैं। ये चलचित्र सरकार के सूचना विभाग से या विदेशों के दूतावास से मुफ्त में प्राप्त हो सकता है।

Slide Fims सरलता से स्कूलों में प्राप्त किये जा सकते हैं। शिक्षा का यह उपकरण अत्यन्त लाभकर हैं। शिक्षा के प्रत्येक विषय पर Slide Films प्राप्त किये जा सकते है तथा उसके माध्यम से सिखाने में सरलता होती है। इसके द्वारा सिखाने में प्रमुख लाभ यह है कि इच्छानुसार इसे प्रयोग किया जा सकता है तथा प्रत्येक Slide पर यदि आवश्यकता हो तो विचार आदि किये जा सकते हैं तथा अवलोकन का उचित अवसर प्राप्त होता है।

नमूनों (Models) से भी शिक्षा में विशेष सहायता मिलती है। Anatomy तथा Physiology के नमूनों से आन्तरिक अंगों की क्रियाओं का कार्य भलीभांति दिखाया जा सकता है। आसन के नमूनों से आसन का सही स्थान एवं रीति का पता चलता है। शिक्षा का यह भी एक उत्तम उपकरण हैं। यदि सही नमूना प्राप्त हो तो इसकी उपयोगिता चित्र से अधिक होगी।

सिखाने में शिक्षक को जहा तक सम्भव हो श्याम पट प्रयोग करना चाहिये। सुनने के अतिरिक्त बालक सीखने के विषय को देख कर भी समझ सकते हैं। खेल में विशेष खेल सम्बन्धी स्थान Positional Play के सिखाने में तथा खेल की चतुराई के उदाहरण श्याम पट पर खींच कर बताये जा सकते हैं इससे बालकों के समझने में सहायता होगी। कठिन विषय भी सरलता से समझाया जा सकता है।

शिक्षा के उपकरणों के प्रयोग में भी योग्यता होनी चाहिये । ये उपकरण माध्यम के रूप में प्रयोग किये जायें। उनका सरल प्रदर्शन तथा सीखने के विषय पर केन्द्रित करना अति आवश्यक है। जैसे नमूनों के प्रदर्शन में उसे बहुत जटिल एवं मिश्रित नहीं होना चाहिये। उसे केवल एक विषय पर केन्द्रित होना चाहिये। चलचित्र के दिखाने में एक विशेष तात्पर्य्य होना चाहिये। किसी उद्देश्य के प्राप्त करने का माध्यम होना चाहिये।

उत्तम शिक्षक बालकों को उचित श्रव्य तथा दृश्य उपकरण के जमा करने के लिये प्रोत्साहित कर सकते है। इसके द्वारा बालक उन्हें प्राप्त करने के लिये सावधान एवं सतर्क रहेगा। उसकी रुचि में वृद्धि होगी अतः शिक्षा प्राप्त करने में सरलता मालूम होगी।

प्रेरणा एवं प्रोत्साहन

प्रेरणा इच्छा के समान सीखने वाले को एक प्रोत्साहन देता है जिससे अनुभव में एक प्रकार की शक्ति आ जाती है। प्रत्येक व्यक्ति की प्रेरणा में विभिन्नता होगी तथा ध्येय जो वे अर्जित करना चाहते हों, असंख्य होंगे। क्योंकि यह वैयक्तिक है अतएव बाहर से उन पर प्रभाव विशेष नहीं दिया जा सकता। ये उत्तेजित करने वाली आन्तरिक शक्ति हैं। कार्य के लिये प्रेरित होने के कारण उस कार्य के लिये व्यक्ति शक्ति प्राप्त करता है। प्रारम्भिक सीखने की अवस्था में व्यक्ति को प्रोत्साहन की आवश्यकता होती है क्योंकि वह भूल एवं चेष्टा की प्रणाली से सीखता है। वाह्य प्रेरणा जिन्हें शिक्षा के उपकरण कहते हैं जैसे, चार्ट, चित्र, प्रदर्शन आदि वे भी आन्तरिक प्रेरणा में सहायक होते हैं। जैसे जैसे ध्येय समीप आता जाता है वैसे वैसे प्रेरणा बलिष्ठ होती जाती है। अतः यह ज्ञात होता है कि सफलता कुछ मात्रा में प्रेरक सिद्ध होती है। अंक, पुरस्कार, पारितोषिक, स्कूल के तमगे, सार्टिफिकेट, सम्मान पट (Honour Poard) पर नाम लिखा जाना आदि प्रेरणा में सहायक होते हैं तथा इन्हें प्रयाप्त मात्रा में प्रयोग भी किया जाता हैं किन्तु ये वाह्य प्रेरणा बहुत ही शीघ्र आकर्षण रहित हो जाते हैं तथा व्यक्ति के लिये उनका वह अर्थ नहीं रह जाता जो आरम्भ में होता है।

शारीरिक शिक्षा में भाग लैने की प्रेरणा जन्मजात प्रतीत होती है तथा कुछ अर्जित मालूम होते हैं। गति में भाग लेने से आन्तरिक संतोष होता है। प्रेरणा के कारण व्यक्ति अपनी क्रिया में चुनाव करता है तथा किसी एक कार्य को दूसरे की तुलना में महत्व देता है। कुछ स्थितियों में चुनाव क्रिया के गुण के कारण होता है। कभी क्रिया के सामाजिक सम्बन्ध, विजय प्राप्त करने में अवसर के कारण या इसी प्रकार के कारणों से चुने जाते हैं। आवश्यकता के ज्ञान से अधिक प्रेरणा सम्भव है। क्रिया के प्रति भावनाओं के कारण प्रेरणा उपस्थित या अनुपस्थित हो सकती है। Kilpatric कहते हैं—

The teacher should stimulate strong motives in the student the "whole hearted purposeful activity, self - directing and self-propelling."

प्रोत्साहन Incentive व्यक्ति के बाहर होता है जो किसी व्यक्ति, वस्तु या अवस्था से प्राप्त होता है। जब व्यक्ति कुछ क्रिया के प्रकार किसी विशेष दिशा की ओर आदेशित करता है तो वह प्रेरणा हो जाती है। प्रोत्साहन वातावरण की दशायें होती हैं जिन्हें इस प्रकार व्यवस्थित किया जाता है कि उन प्रतिक्रियाओं का जिनका विद्यार्थियों से आशा की जाती है सम्भव हों। इस उत्तेजना पूर्ण वातावरण का शिक्षक एक मुख्य भाग होता है। उसका विशेष कार्य विद्यार्थियों के प्रोत्साहन करने वाली शक्ति को इस प्रकार केन्द्रित एवं विधिवत करने का है जिससे सीखने के अनुभव में संतोष एवं प्रसन्नता पूर्ण क्रिया सम्भव हो। इस प्रकार के नियन्त्रण से बाह्य नियन्त्रण एवं अवरोध की विशेष आवश्यकता नहीं होती।

प्रत्येक व्यक्ति में आन्तरिक अंगों तथा मांसपेशियों का तनाव एवं असंतुलन होता है। इस तनाव को असंतोष, प्रेरणा, आवश्यकता तथा प्रेरक शक्ति आदि का नाम दिया जाता है। व्यक्ति उस समय तक प्रेरणा रहित समझा जाता है जब तक इन तनावों में ढीलापन एवं संतोष न प्राप्त हो। इसी तनाव पूर्ण क्षेत्र में किसी प्रकार के कार्य करने की चेष्टा करना ही प्रेरणा का सूचक है।

विद्यार्थियों के सम्बन्ध में प्रेरणा एव प्रोत्साहन का अर्थ है कि, शिक्षक प्रोत्साहन के द्वारा उपस्थित प्रेरणा को उत्तेजित करना चाहता है।

मनुष्य की शक्ति या बल का सर्व प्रमुख स्रोत भोजन है। भोजन शरीर के द्वारा विभिन्न तथ्यों एवं शक्ति में परिवर्तित किया जाता है; स्नायु, रक्त-संचालक तथा ऐन्डोक्रिन प्रणालियों के द्वारा यह शक्ति सम्पूर्ण शरीर में विभाजित होती है तथा शरीर की क्रियाओं का सम्बन्धित संतुलन या द्रव्य संतुलन सही रखा जाता है। भोजन की कमी इस संतुलन में दोष उत्पन्न कर सकती है, तनाव तथा क्रिया उत्पन्न कर सकती है। भूख सामान्य रीति से क्रिया प्रवाहित करती है तथा आन्तरिक अंगों में तनाव उत्पन्न करती है। जब इस भूख की शक्ति की उत्तेजना होती है तो शक्ति का प्रवाह अधिक होता है तथा सीखना शीघ्रता से होता है।

प्यास, थकान, ताप की अधिकता एवं न्यून्ता; तन्तुओं को चोट आदि तनाव या आगे बढ़ाने वाली शक्ति का प्रवाह करता है। शरीर के होरमोन Hormone जो ग्रंथियों से निकलते हैं उनके द्वारा द्रव्य परिवर्तन, असंतुलन एव आगे बढ़ने की शक्ति का प्रवाह होता है। लैंगिक ग्रंथियों से निकले हुये हारमोन, सामान्य क्रिया स्तर को ऊँचा करती है। आधिक थाईरोड़ रसके प्रवाह से अधिक कार्य, चिड़चिड़ापन तथा स्नायु दोष उत्पन्न होते हैं। थायरोड़ की कमी से क्रिया में शिथिलता होती है। जीवन की प्रणालियाँ निरन्तर शक्ति उत्पन्न करती रहती हैं जिन के द्वारा क्रिया सम्भव होती है। क्रिया के परिणामतः और अधिक शक्ति उत्पन्न होती है। स्वस्थ्य व्यक्ति क्रियाशील, जिज्ञासु, खोजने एवं ढूढ़ने वाला तथा रचनात्मक व्यवहार का होता है। आवश्यकता से अधिक उत्तेजना के कारण कार्य छोड़ने की प्रतिक्रिया होती है जैसे अधिक ठंड़ा, गर्म, दर्द, रोशनी आदि। आवश्यकता से अधिक उत्तेजना के कारण आन्तरिक अंगों में परिवर्तन एवं असंतुलन होता है। यह संवेग के समान होता है।

अत: प्रेरणा के दो सिरे देखने में आते हैं। एक प्रेरणा का सिरा है जिस में असंतोष,'विश्राम का ना होना, तनाव, पीड़ा, मानसिक एवं शारीरिक असंतुलन तथा अस्वस्थता उपस्थित रहती है। व्यक्ति इस के निवारण के लिये प्रतिक्रिया की चेष्टा करता है। असफलता, सामाजिक अमान्यता, प्राप्त न करना, अनादर तथा तन्तुओं की चोट आदि उन उत्तेजनाओं का उदाहरण है, जिनके द्वारा छोड़ने के व्यवहार का प्रदर्शन होता है।

दूसरा प्रेरणा का सिरा वह है जिस में संतोष एवं सुखात्मक संवेग उत्पन्न होते हैं। व्यक्ति ऐसे अनुभव को अधिक अवसर तक रखना चाहता है तथा उसमें वृद्धि करना चाहता है। सफलता, शारीरिक विश्राम, सामाजिक मान्यता, प्रशंसा, दूसरों को बढ़ावा देना, नृत्य आदि उन उत्तेजनाओं के उदाहरण हैं जिनके द्वारा व्यक्ति अधिक खोज तथा अधिक उत्तेजना प्राप्त करना चाहता है।

इस दूसरे सिरे या प्रकार में भी छोड़ने के प्रकार की तरह ही तनाव, आगे ले चलने की शक्ति तथा असंतुलन उपस्थित रहता है। यदि व्यक्ति संतोष पूर्ण है तो उसे उत्तेजनाओं के कारण क्रिया करने की आवश्यकता नहीं होगी। लिंग की क्रियायें इस प्रकार में से एक है। शक्ति, सफलता, प्रशंसा, सामाजिक मान्यता, कला, संगीत एवं साहित्य के सौन्दर्य की अधिक खोज हो सकती हैं जब ये व्यक्तिगत प्राप्त अनुभव प्रतीत होते हैं।

बालक आरम्भ ही से प्रशंसा एवं सामाजिक मान्यता प्राप्त करना चाहता है। अधिक असफलता से भी प्रेरणा में बाधा हो सकती है। जो हारता है या पुरुस्कार, सार्टिफिकेट, तमगा आदि प्राप्त नहीं कर सकता उसकी असफलता अधिक बढ़ जा सकती है। विद्यार्थी जो निरन्तर किसी पुरुस्कार आदि के प्राप्त करने की चेष्टा करते रहते हैं तथा उन्हें सफलता प्राप्त नहीं होती है उनके व्यक्तित्व के समायोजन में दोष उत्पन्न होने की सम्भावना है। ऐसी अवस्थायें शिक्षित होने के मार्ग में बाधा हैं। इसका परिणाम हतोत्साह तथा चेष्टा या प्रयत्न न करने की भावना होती है। विद्यार्थी विशेषतः शिक्षक या परीक्षा को अपनी असफलता का कारण बतलाते हैं जिससे अपनी निर्बलता का अनुभव न करें। वे यह कहना आरम्भ करते हैं कि वे स्वस्थ नही थे, उनसे कार्य अधिक कराया गया था या इस प्रकार का सीखना उनके किसी प्रयोजन का नहीं था। कितने यह भी कहते हैं कि उनको सीखने की कोई जल्दी नहीं है।

विद्यार्थी जिन्हें प्रशंसा तथा मान्यता प्राप्त नहीं होती व अपने अव्यवहारों की प्रसिद्धि से दूसरों को अपनी ओर आकृष्ट करना चाहते हैं। अधिक अस-

फलता एवं असंतोष के कारण आलोचना एवं असफलता के प्रति व्यक्ति अधिक सचेत (Sensitive) हो जाता है । साधारण असफलता का भी महत्वपूर्ण परिणाम होता है ।

शिक्षक का मुख्य कर्तव्य विद्यार्थियों के व्यवहार को आदेशित एवं नियन्त्रित करने का है । इसके लिये शिक्षक को कौन से उपाय उपयोग करना चाहिये? किसी प्रोत्साहन के न होने से कुछ न कुछ प्रोत्साहन का होना उचित है। प्रोत्साहन के क्षेत्र में प्रयोग से इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया है कि प्रशंसा, संतोष, पुरुस्कार, पारितोषिक, सिखाने की तकनीक में डांट, आलोचना, तथा भूल या दोष के लिये असंतोष प्रकट करने से कहीं उत्तम है । प्रत्येक विद्यार्थी के साथ इसका प्रभाव एवं प्रयोग भिन्न होगा । पारितोषिक एवं पुरुस्कार, प्रोत्साहन तथा प्रशंसा कम कौशल प्राप्त विद्यार्थी के शिक्षा के लिये अच्छे कौशल प्राप्त विद्यार्थी से अधिक उत्तम प्रतीत होता है । भूल के लिये आलोचना न करना, सफलता के स्तर पर शिक्षक का असंतोष प्रकट करना अच्छे कौशल प्राप्त विद्यार्थियों के लिये अधिक उत्तम होता है । दोनों प्रकार के प्रोत्साहन का मिश्रण उपयुक्त है । कौशल पूर्ण के लिये असंतोष तथा कम कौशल प्राप्त के लिये प्रशंसा ही उचित उपाय है । अतः इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि जितने भी प्रोत्साहन शिक्षक शिक्षा के लिये प्रयोग करे वह उत्तम है । सम्पूर्ण शिक्षा स्थिति को ध्यान में रखना आवश्यक है ।

प्रोत्साहन एवं प्रेरणा के कुछ उपाय ये हो सकते हैं :—विद्यार्थियों के स्वतंत्रता पर बल देना, शिक्षक का उनकी सफलता पर संतोष आ असंतोष प्रकट करना, संवेगात्मक अपील (Appeal) उत्साह पूर्ण एवं प्रेरक प्रदर्शन, व्यक्तिगत प्रगति की रिपोर्ट, आँकड़ें, स्वयं परीक्षा के नाप आदि, उत्तम सुविधायें एव साधन, समाज एवं जनता के द्वारा मान्यता जो प्रेस, रेडियो, सभा, बुलेटिन बोर्ड, भोज आदि के द्वारा दिया जा सकता है, प्रतियोगिता, समन्वय खेल, टुर्नामेन्ट, खेल दिवस, इन्ट्राम्युरल, प्रदर्शनी आदि में भाग लेने के लिये प्रभावित करना तथा पुरुस्कार, पारितोषिक, पत्र, सार्टिफिकेट, मेडल सम्मान पट पर नाम अंकित करना आदि ।

७

ट्रैक बनाना

ट्रैक बनाने के समय निम्नलिखित पर ध्यान देना अति आवश्यक है।

(१) दर्शकों की आवश्यकतायें तथा सुगमता।

(२) भाग लेने वालों की आवश्यकतायें एवं सुगमता

(३) **जमीन की प्रकृति** :—स्थान समतल होना आवश्यक हैं। इधर उधर छोटे-छोटे गड्ढे न हों। ज़मीन पथरीली नहीं होनी चाहिये। आस पास या ज़मीन दल दल न हो। जहां तक सम्भव हो ज़मीन मुलायम होनी चाहिये। यदि प्रतियोगिता के अवसर पर वर्षा हुयी तो कहीं पानी के जमाव की सम्भावना न हो। यदि ज़मीन कुछ ऊँची होगी तो पानी का बहाव अच्छा होगा तथा जमीन के सूखने में देर नहीं लगेगी।

(४) हवा के बहाव का भी ध्यान रखना चाहिये। हवा से लाभ एवं बाधा दोनों हो सकता है। कई एक इवेन्ट में हवा के प्रभाव से प्रतियोगिता के मांप में अन्तर आ सकता है या टाइमिंग में अन्तर हो सकता है।

(५) **सूर्य की किरणें** :—ट्रैक का लेआउट इस प्रकार होना चाहिये कि प्रतियोगिता के समय सूर्य की किरणें सीधे आंख में न लगें। दर्शकों के लिये भी ऐसा ही होना चाहिए।

(६) **एथेलेटिक के दूसरे साधन** :—ट्रैक के अन्दर विभिन्न आइटम का स्थान, इस प्रकार होना चाहिये कि दर्शकों के देखने में सुविधा हो, एक ही साथ कई एक आइटम हो सकें तथा किसी प्रकार किसी को चोट लगने या

घटना की सम्भावना न हो । जैसे जेवलिन का फेंकना, हैमर का फेंकना आदि । जहां घटना की सम्भावना हो वह स्थान सुरक्षित करना चाहिये ।

(७) ट्रैक मीट में आने वाले व्यक्तियों के विभिन्न प्रकार के यातायात के रखने का उचित प्रबन्ध होना चाहिये । यह ट्रैक से कुछ दूरी पर होना चाहिये जिस से धूल न उड़ सके । शोर गुल से भी बचत हो ।

(८) ट्रैक के समीप ही शौचालय तथा जलपान, आदि की सुविधा भी होनी चाहिये । यदि मैदान की लम्बाई चौड़ाई अच्छी हो तो यह अन्दर भी स्थित किया जा सकता है ।

उपरोक्त के लिये पर्याप्त स्थान स्थित करने के पश्चात वास्तविक ट्रैक के लिये कितने क्षेत्र की आवश्यकता है वह दिये हुये नियम से बताया जा सकता है ।

ट्रैक निर्माण—एथेलेटिक ट्रैक में दो समानान्तर सीधी दौड़ होती हैं तथा दो गोलाई होती हैं । एक बार ट्रैक के चारो ओर जाने में दो सीधी दूरी तथा दो गोलाई की दूरी तय करनी पड़ेगी । मान्य स्तर के ट्रैक की दूरी ४०० मीटर (४४० गज) रखी गई हैं । अर्थात् एक बार के दो सीधे दौड़ तथा दो गोलाई के दौड़ में ४०० मीटर की दूरी तय की जायेगी । साधारण स्कूलों के लिए या छोटी प्रतियोगिता के लिये इस से कम दूरी के भी ट्रैक बन सकते हैं । कम दूरी के ट्रैक में कई एक असुविधायें प्रतीत होती हैं जिन में विशेष तीक्ष्ण गोलाई होती है जिस पर दौड़ने में कठिनाई होती है ।

गोलाई से सीध में दौड़ना सरल होता है तथा सीधे में गोलाई से तेज़ दौड़ा जा सकता है । ट्रैक बनाने के समय इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि ट्रैक के लिये जितनी अधिक ... मिल सके लेना चाहिये तथा साथ ही इस बात पर विशेष ध्यान रखना चाहिये कि गोलाई अधिक तीक्ष्ण (Sharp bend) न हो । दौड़ने की ट्रैक की वास्तविक लम्बाई सीधी दौड़ तथा २ × गोलाई के अर्ध व्यास का योग तथा २ × लेन्स (lanes) की चौड़ाई के योगके बराबर होगा । भूमि क्षेत्र की चौड़ाई, गोलाई, के व्यास तथा २ × लेन्स (lanes) के चौड़ाई के योग के बराबर होगा ।

४०० मीटर ट्रैक

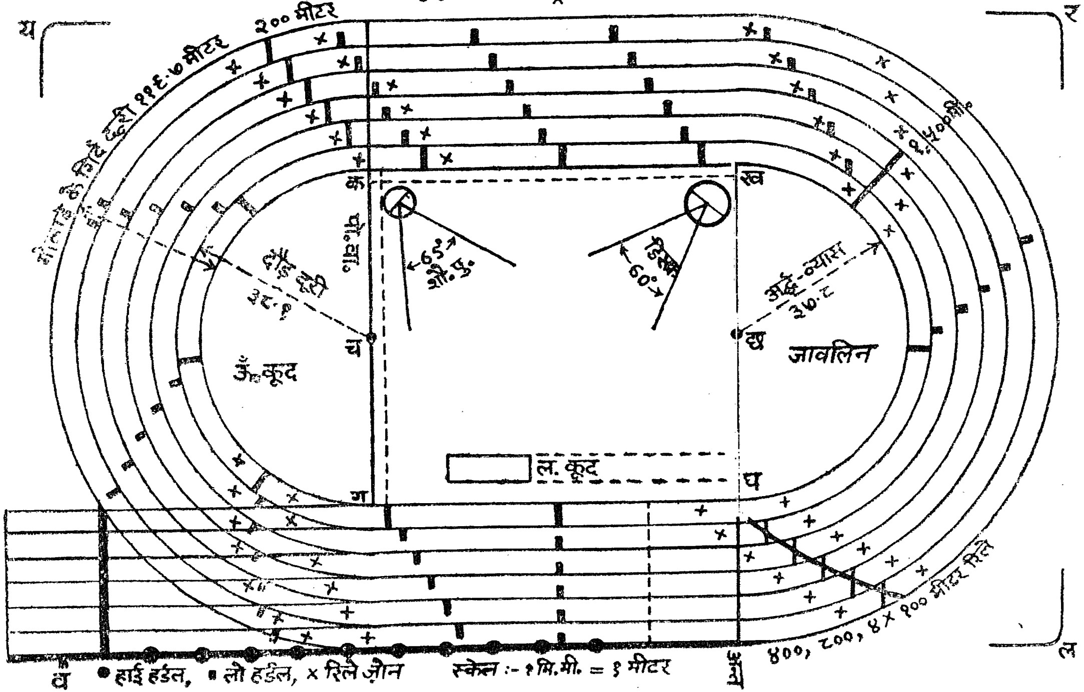
२०० मीटर
मोलाई के लिए दूरी ११६·७ मीटर
१,५०० मी०
य
र
ल
व
क
ख
ग
घ
च
छ
पो०वा०
दौड़ दूरी
३८·१
ऊँ०कूद
६५°
गो०फें०
डिस्कस
६०°
अर्द्ध-व्यास
३७·८
जावलिन
ल. कूद
अन्त
४००, ८००, ४ X १०० मीटर रिले
● हाई हर्डल, ▪ लो हर्डल, x रिले ज़ोन
स्केल :- १ मि.मी. = १ मीटर

प्रत्येक लेन की चौड़ाई ४ फुट रखी जाती है। यदि यह सम्भव न हो तो चौड़ाई ३ फुट से कम न होनी चाहिये।

सूर्य की रोशनी का ध्यान रखते हुये ट्रैक उत्तर दक्षिण दिशा में बनाना उत्तम होता है। ऐथेलेटिक्स की प्रत्येक दौड़ में, फील्ड, दौड़ने वाले के बायीं ओर रहता है, अर्थात् ट्रैक में दौड़, घड़ी के चाल के विपरीत (anti clock wise) होता है।

चित्र में—

लम्बाई क ख = ट्रैक की सीधी दौड़ + २ × गोलाई का अर्ध व्यास + २ × जितने लेन हों उनकी चौड़ाई।

चौड़ाई क ग = २ गोलाई का अर्ध व्यास + २ × जितने लेन हों उनकी चौड़ाई।

ट्रैक के लिये उपलब्ध लम्बाई तथा चौड़ाई निश्चित कर लेने के पश्चात् ट्रैक की लम्बाई अर्थात् सीधी दौड़ निश्चित करना है तथा उसके बाद गोलार्द्ध का अर्द्ध व्यास निश्चित करना होगा।

मान लिया कि ४०० मीटर ट्रैक के लिये सीधी दौड़ ८० मीटर है तो दोनों की सीधाई का योग १६० मीटर होगा। ४०० मीटर—१६० मीटर = २४० मीटर दोनों गोलाई की दूरी होगी। अतः एक गोलार्द्ध की दूरी १२० मीटर होगी। १२० मीटर गोलाई के लम्बान का अर्द्ध व्यास निश्चित करना है जिसके लिये निम्नलिखित सिद्धान्त प्रयोग किया जाता है।

यह मान लिया गया है कि वृत्त की परिधि (circumference) = २ π × अर्द्ध व्यास (Radius)। हमारी परिधि २४० मीटर है।

$$(\pi = \frac{२२}{७})$$

$$\therefore २४० \text{ मीटर} = २ \times \frac{२२}{७} \times \text{अर्द्ध वृत्त}$$

$$\therefore \text{अर्द्ध वृत्त} = \frac{७ \times २४०}{२ \times २२} \text{ मीटर।}$$

$$= ३८\frac{२}{११} \text{ मीटर}$$

$$\therefore \text{अर्द्ध वृत्त} = ३८\frac{२}{११} \text{ मीटर}$$

(१ मीटर = १·०९३२ गज़)

यह अर्द्ध वृत्त गोलाई के दौड़ने की दूरी का अर्द्ध वृत्त है। वास्तविक नाप ट्रैक बनाने में एक फुट अन्दर की ओर चिन्ह डाला जाता है। इसे Curb Radius या रोक का व्यास कहते हैं। ट्रैक के सम्पूर्ण चिन्ह, रोक के व्यास Curb Radius के अनुसार होता है। ट्रैक के चारो ओर के चिन्ह अर्थात् दो सीधा तथा दो गोलाई के लगाने के पश्चात् उसके बाहर के ६ नाली (Lane) प्रत्येक एक दूसरे से ४ फुट की दूरी पर डाली जायेंगी।

४०० मीटर के ट्रैक में रोक का व्यास (Curb Radius) ९५'—१२५' तक हो सकता है।

स्टैगर (Stagger)—नियम के अनुसार ४०० मीटर की दौड़ तक प्रत्येक एथेलिट को अपनी नाली या लेन (Lane) में दौड़ना पड़ता है जिसकी चौड़ाई ४' फुट होती है। यदि दौड़ सब के लिये एक ही सीध में हो तो सबों को एक ही दूरी तय करनी होगी। किन्तु यह स्पष्ट है कि जो एथलिट अन्दर की लकीर के समीप दौड़ता है उसे बाहर की नाली में दौड़ने वाले एथलिट से कम दूरी तय करनी पड़ती है। अत: प्रत्येक एथलिट की दौड़ने की दूरी को समान करने के लिये स्टैगर (Stagger) प्रयोग किया जाता है। स्टैगर में बाहर की नाली में आरम्भ करने के लिये स्टार्टिंग लाइन ट्रैक में क्रम से आगे बढ़ा दी जाती है। नाली की क्रमिक संख्या अन्दर से दी जाती है जो एक से ६ तक होती है।

प्रयोग तथा अनुभव से यह सिद्ध किया गया है कि एक प्रथम नाली में

दौड़ने वाला एथलिट एक काल्पनिक लकीर पर दौड़ता है जो कर्बलाइन से Curb line) १२" की दूरी पर स्थित है, तथा उसके बाद में नाली में दौड़ने वाले अन्दर से बाईं ओर ८" की दूरी पर दौड़ते हैं।

उदाहरण के लिये किसी दौड़ में एक गोलाई है जिस में अ, ब, स, दौड़ते हैं जो क्रमशः १, २, ३, नाली में हैं। अ, कर्व लाइन या मोड़ से १२" की दूरी पर है, ब ८" की दूरी पर तथा स अपने मोड़ से ८" की दूरी पर। यदि नाली ४' चौड़ी है तो अ तथा ब के बीच की दूरी ३'·८" होगी। (पहले नाली की बाकी ३' तथा दूसरी नाली की ८") तथा ब तथा स की बीच की दूरी ४' होगी।

अब देखना है कि 'अ' से 'ब' की दौड़ने की दूरी तथा 'ब' से 'स' की दौड़ने की दूरी में कितना अन्तर है।

मान लिया कि अर्द्ध व्यास १, अर्द्ध व्यास २, अर्द्ध व्यास ३ क्रमशः गोलाई के दौड़ने का व्यास है तथा प १, प २, तथा प ३ क्रमशः उनकी अर्ध-परिधि हैं।

∴ प १=π अब १, प२=π अ ब२, प३=अ ब३

अ ब २—अ ब १=३'·८"

$$= \frac{११'}{३}$$

अ से ब की अर्ध परिधि का अन्तर

प२—प१=π (अ ब २ — अ ब १) है।

$$= \frac{२२}{७} \times \frac{११}{३} = \frac{२४२}{२१}$$

$$= ११'.६\frac{२''}{७}$$

'ब' से 'स' का अर्ध परिधि का अन्तर :

अ, ब ३ — अ, ब २ = ४′ है (अ, ब ३ अपनी लाइन से ८″ दूर है , ब २, अ, व ३ के वायीं लाइन से ३′·४″ दूर है ∴ दोनों की बीच की दूरी ·४″ + ८″ = ४′)

प३ — प२ = π (अ, ब ३ — अ, ब २)

$$= \frac{२२}{७} \times ४ = \frac{८८}{७} = १२.' ६\frac{६''}{७}$$

इस दौड़ में जो मान लिया गया है उस में एक ही गोलाई का मोड़ है। इसमें 'अ' 'ब' तथा 'स' के खड़े होने का स्थान इस प्रकार होगा।

'अ' आरम्भ करने के लाइन (Scratch) पर, 'ब' 'अ' से ११'.६ $\frac{२''}{७}$ आगे तथा 'स', 'ब' से १२.' ६ $\frac{६''}{७}$ आगे। इसके बाद के अन्य लेन में दौड़ने वाले अर्थात् ४, ५ तथा ६ एक दूसरे से १२'. ६ $\frac{६''}{७}$ की दूरी पर आरम्भ करने के लिये खड़े होंगे।

अतः किसी लेन के स्टैगर के निकालने के लिये निश्चित सिद्धान्त है (π× उस लेन के दौड़ने वाले की दूरी, उसके बायीं ओर दौड़ने वाले की दू से) दो गोलाई तय करने के लिये उपरोक्त परिणाम २ से गुणा कर दिया जायेगा। अर्थात् ११'. ६ $\frac{२''}{७}$ तथा १२'. ६ $\frac{६''}{७}$ दो गुणा कर दिये जायेंगे।

साधारण अभ्यास यह है कि स्टैगर निकालनें के लिये नाली की चौड़ायी जितनी बनाये जाने की होती है, जो ४' है नहीं प्रयोग की जाती है। नाली की लाईन की चौड़ाई २″ चुने की होती हैं। एथलिट के दाहिने ओर के लाईन की चौड़ाई उसकी नाली की चौड़ाई में मिली हुयी रहती है। स्टैगर मोड़ के कर्ब रेडियस (Curb radius) या ट्रैक के नाप के अनुसार नहीं निकाला जाता है। यह केवल ट्रैक की नाली की चौड़ाई पर आधारित किया जाता हैं।

आरम्भ में निकाले हुये स्टैगर की दूरी नालियों के परस्पर के सम्पूर्ण अन्तर से प्राप्त हुआ है, उदाहरण के लिये नाली २ तथा ३ के बीच पूर्ण स्टैगर की दूरी २५'.१ $\frac{१''}{२}$ है। तीसरी नाली के स्टैगर के चिन्ह लगाते समय २५'. १ $\frac{१''}{२}$ दूसरी नाली के स्टैगर चिह्न से नहीं लगाना चाहिये किन्तु दूसरी तथा तीसरी नाली के स्टैगर का योग करना चाहिये जो (२३.' $\frac{१''}{२}$ + २५'. १ $\frac{१''}{२}$ =४८'. २") है यह ४८.' २" दूरी प्रारम्भिक आरम्भ करने की लाईन (Scratch line) से नापना चाहिये ! यह तीसरी नाली का स्टैगर का चिन्ह होगा। इसके बाद के प्रत्येक नाली में चिन्ह इसी प्रकार लगाया जायेगा।

चिन्ह लगाने के लिये प्रारम्भिक आरम्भ करने की लाईन पर पहली नाली में फीता अन्दर के लाईन से १२" की दूरी पर तथा अन्य नालियों में ८" की दूरी पर नापने के लिये रक्खा जायेगा।

गोलाई में स्टैगर के चिन्ह चाप केरूप में होगा।

ट्रैक में चिन्ह डालने का उपाय

सर्व प्रथम चतुर्भुज य, र, ल, व का काल्पनिक निर्माण कर लेना चाहिये यह निश्चित करने के लिये ट्रैक एवं उसकी नालियां सरलता से बनायी जा सकती हैं तथा उसके चारो ओर पर्याप्त स्थान अन्य प्रयोग के लिये छूटे हुये रहेंगे।

इसके पश्चात लम्बाई 'क' 'ख' निश्चित कर एक सीधी दौड़ डालनी चाहिये तथा उस सीधी दौड़ के दोनों सिरों के आधार 'क' 'ख' पर व्यास निकाल कर 'क' 'ग' तथा 'ख' 'घ' खींचना चाहिये। 'ग' 'घ' को मिला दें। इस प्रकार चतुर्भुज 'क' 'ख' 'घ' 'ग' तैयार होगा। 'क' 'ख' तथा 'ग' 'घ' दोनों सीधे होंगे तथा 'क' 'ग' तथा 'ख' 'घ' अर्ध वृत के व्यास होंगे। 'क' 'ग' तथा

'ख' 'घ' के मध्य केन्द्र 'च' 'छ' का चिन्ह लगाना चाहिए। 'च' एवं 'छ' को केन्द्र मान कर अर्ध व्यास 'च' 'क' तथा 'छ' 'ख' की दूरी से अर्द्ध वृत खीचना चाहिये जो दूसरी ओर 'ग' एवं 'घ' से मिलती हैं।

इस प्रकार ट्रैक की दो सीधी तथा दो गोलाई निर्मित होगी।

नालियों के निर्माण के लिये 'च' तथा 'छ' को केन्द्र मान कर 'च' 'क' तथा 'छ' 'ख' को सीधी लकीर में खींचे। यदि ६ नालियाँ निर्माण करनी है तथा कर्व रेडियस Curb radius १००' है तो प्रथम से लेकर छठी नाली के लिये ४ फुट की दूरी पर १००', १०४', १०८', ११२', ११६', १२०', तथा १२४' चिन्ह लगाये जायेंगे। यही दोनों ओर होगा। इन्हीं चिन्हों को आगे बढ़ाते आयें तथा उन्हीं चिन्हों के आधार पर दोनों ओर 'च' तथा 'छ' के केन्द्र से १०४', १०८', ११२', १२०', १२४' अर्ध व्यास से अर्ध वृत खींचे जायेंगे। इस प्रकार दोनों ओर की सीधी नाली तथा दोनों गोलार्द्ध की नालियों का निर्माण किया जाएगा। फेंकने वाले आइटम के चिन्ह दोनों गोलार्द्धों के मध्य में डाला जा सकता है तथा कूदने वाले आइटम मुख्य दर्शकों के समीप की सीधी लाइन से हट कर अन्दर की ओर किये जा सकते हैं।

४०० मीटर का ट्रैक बनाना—

१ मीटर = ३.२८१ फुट

१०० ,, = ३२८' फुट १ $\frac{१}{५}$ इंच

११० ,, = ३६०' फुट १० $\frac{९}{१०}$ इंच

४०० ,, = १३१२' फुट ४ $\frac{४}{५}$ इंच

यदि ४०० मीटर के ट्रैक का ८०.३ मीटर या २६३.४६५ फुट (२६३' फुट ५ $\frac{३}{५}$ इंच) सीधा रखा जाये तब दौड़ाने की दूरी गोलार्द्ध में

११९.७ मीटर या ३९२.७३५ फुट (३९२' फुट८ $\frac{४}{५}$ इंच) होगा।

अतः ट्रैक के नाप इस प्रकार होंगे।

२६३ फुट ५ $\frac{३}{५}$ इंच या २६३.४६५ फुट या ८०.३ मीटर एक सीधा

२६३ फुट ५ $\frac{३}{५}$ इंच या २६३.४६५ फुट या ८०.३ मीटर दूसरी सीध

३९२ फुट ८ $\frac{४}{५}$ इंच या ३९२ ७३५ फुट या ११९,७ मीटर एक गोलार्द्ध

३९२ फुट ८ $\frac{४}{५}$ इंच या ३९२·७३५ फुट या ११९.७ मीटर दूसरा गोलार्द्ध

१,३१२ फुट ४ $\frac{४}{५}$ इंच या १,३१२,४०० फुट या ४००.० मीटर सम्पूर्ण ट्रैक

एक गोलार्द्ध के दौड़ने की दूरी ११९·७ मीटर है अतः इस का अर्ध व्यास ३८·१ मीटर या १२५ फुट होगा। यह १२५ फुट दौड़ने की दूरी है। किन्तु दौड़ने की दूरी ट्रैक में एक फुट कम कर दी जाती है इस लिये कर्ब रेडियस Curb Radius या वास्तविक जमीन पर चिन्ह लगाने की यह दूरी होगी। दौड़ने की दूरी ३८·१ मीटर या १२५ फुट था अतः वास्तविक जमीन पर चिन्ह या Curb Radius १ फुट कम कर के या ३७·८ मीटर या १२४ फुट पर लगायी जायेगी।

ट्रैक में दौड़ने के लिये ६ नालियां ४ फुट या १·२२ मीटर की दूरी पर होगी।

नालियों में दौड़ने के कारण सबों की दूरी एक करने के लिये स्टैगर आरम्भ (Staggar Start) दिया जाता है।

पहली नाली में दौड़ने वाला आरम्भ की लाईन Scratch से दौड़ता

है, दूसरे नाली में दौड़ने वाला २३ फुट १/२ इंच आरम्भ से आगे रहता है। तीसरा तथा उसके बाद वाले २५ फुट १ १/२ इंच दूसरी नाली से आगे तथा इसी प्रकार ४, ५, ६ आगे रहते ।

२०० मीटर दौड़ के लिये आरम्भ दूसरी ओर आधे ट्रैक पर होगा तथा स्टैगर ४०० मीटर का आधा होगा। दौड़ वहीं समाप्त होगी जहाँ ४०० मीटर की दौड़ होती है।

विभिन्न दूरी के ट्रैक का नाप

मील	सम्पूर्ण लम्बाई	एक सीध की बाई	दौड़ की दूरी	कर्व रेडियस
१	५२८०'.०"	१३२०'.०"	४२०'.१६९	४१९'.२"
१/२	२६४०'.०"	६६०'.०"	२१०'.०८४	२०९'.१"
१/४	१३२०.'०"	३३०'.०"	१०५'.०७२	१०४'. १/२"
१/६	८८०'.०"	२२०'.०"	७०'.०२८	६९'. ५/१६
१/८	६६०'.०"	१६५'.०"	५२'.५२१	५१'. ६ १/४
१/१६	३३०'.०"	८२'.६"	२६.२६०	२५'. ३ १/८

ट्रैक के कुछ विशेष तथ्य

(१) ४ × ४०० मीटर रीले के लिये आरम्भ में ४०० का पूर्ण स्टैगर दिया जायेगा। उस के बाद दूसरी तथा उस के बाद के बटान बदलना प्रथम नाली ही में होगा। जैसे जो आयेंगे उनकी टीम के सदस्य बटान बदलेंगे। जितना भी बदलना होगा वह आरम्भ के लाइन से ११ गज पहले तथा ११ गज बाद अर्थात् २२ गज के ज़ोन में होगा। यदि दौड़ने वाले साथ

(iv) जिस ऊँचाई पर सफलता हो उस पर एक और अवसर दिया जायेगा। यदि दोनों इसके सफल होते है तो ऊँची कूद में ३/४" या पोल वाल्ट के लिये ३" ऊँचाई ऊपर की जायेगी तथा एक अवसर और दिया जायेगा। यदि वे असफल होते हैं, तो फिर उतनी ही नीची दोनों में कर के एक अवमर और दिया जायेगा।

उदाहरण के लिये हाई जम्प का रेकार्ड :—

चिन्ह : — पास, चेष्टा नहीं की
✓ सफलता
× असफलता

ऊँचाई

नं०	नाम	५', १",	५', २",	५', ३",	५', ४",	५', ५"	स्थान
२	मोहन	✓	—	✓	✓	×××	प्रथम
४	श्याम	—	—	—	×✓	×××	द्वितीय
६	राम	—	—	✓	×××		तीसरा
८	शंकर	✓	✓	×××			चौथा

(५) **स्टैगर नियम**

$$[w\,(N-1)-4''] \times 2\pi = \text{Staggar Distance for given Lane.}$$

W = लेन की चौड़ाई, N = लेन का नम्बर, $\pi = \frac{२२}{७}$

(६) (i) **ट्रैक का नाप तथा एक चौड़ाई से लम्बाई निकालना**

$\frac{T-d\,\pi}{2} = L$ T = ट्रैक का नाप, d = चौड़ाई, L = ट्रैक की लम्बाई

(ii) ट्रैक का नाप तथा लम्बाई से चौड़ाई निकालना

$\frac{T-2L}{\pi} = d$ T = ट्रैक नाप, L = लम्बाई, d = चौड़ाई

(७) ४०० मीटर तक सम्पूर्ण दौड़ अपनी लेन में दौड़ना पड़ता है किन्तु ८०० मीटर की दौड़ में दौड़ का प्रथम अर्ध वृत्त लेन में दौड़ना पड़ता है। प्रतियोगियों को अन्दर की लेन पर शीघ्र पहुंचने की सुविधा के लिये इन्वोल्यूट (Involute) की चाप बना दी जाती है। दौड़ने वाले लेन पर फीता उस स्थान तक फैलाया जाता है जहाँ प्रतियोगियों को अन्दर की लेन पर आने की सम्भावना होती है। इस लम्बाई को अर्धव्यास मान कर आर पार एक चाप खींची जाती है। यह चाप (Starting Line) का कार्य करती।

८

शारीरिक शिक्षा क्रियाओं सिखाना

शारीरिक शिक्षा की क्रियाओं के सिखाने के लिये किसी प्रकार की पग पग की पद्धति देना असम्भव है। क्रिया के पूर्ण कौशल की जटिलता, सीखने वाले की प्रवृति एवं इच्छा, सुविधा एवं साधन के द्वारा ही यह निश्चित किया जा सकता है कि किस प्रकार उत्तम शिक्षा कम समय, सरलता एवं अल्प व्यय में दी जा सकती है। सरल एवं निम्न संगठन की क्रियायें तीन चार क्रम में सीखायी जा सकती हैं। उदाहरण के लिये क्रिया के प्रति प्रेरणा, उसकी उपयोगिता बताते हुये, थोड़ी शाब्दिक एवं कुछ प्रदर्शन तथा अभ्यास के द्वारा साधारण क्रियाओं का सिखाना सम्भव है।

जटिल क्रियायें अधिक समय लेंगी एवं उनके सिखाने का क्रम एवं पग साधारण क्रिया से भिन्न होगा। जटिल क्रिया के सीखने की सम्पूर्ण अवधि में प्रेरणा वर्त्तमान रहनी चाहिये। मान लीजिए तैरना में (Crawl) सीखाना हैं। आरम्भ करने वाले के लिये यह क्रिया सरल नहीं है क्योंकि यह जटिल है तथा किसी एक या दो लेक्चर या अभ्यास से इसे नहीं सीखा जा सकता है। सम्पूर्ण क्रिया को संक्षेप में समझा कर उस के उचित अंगों में विश्लेषण कर उन्हें पृथक सिखा कर फिर एक साथ पूर्ण क्रिया में पुनः मिश्रित कर अभ्यास करने से ही क्रिया का ज्ञान प्राप्त हो सकता है। विश्लेषित अंगों की क्रिया क्रम से तथा कम कठिन से अधिक कठिन तथा ज्ञात से अज्ञात के द्वारा सिखाना आवश्यक होगा। प्रत्येक पग की प्रेरणा एवं अभ्यास भलीभाँति करना आवश्यक होगा। क्रम की संख्या तथा समय सीखने वाले की इच्छा तथा क्रिया की जटिलता पर निर्भर होगा।

निम्नलिखित, कुछ शारीरिक शिक्षा क्रिया के सिखाने के सिद्धान्त हैं जो किसी एक विशेष क्रिया के लिये नहीं किन्तु सिखाने के सम्पूर्ण ढांचे को ध्यान में रख कर दिया जा रहा है। प्रत्येक सिखाने में इनकी सहायता आश्वयक होगी।

(१) विद्यार्थियों का दृष्टि कोण जानना।

(२) सरलता एवं सुयोग रीति से आज्ञाकारिता प्राप्त करना।

(३) अपने विषय में निपुण होना तथा दैनिक सिखाने की पाठ्य योजना में तैयार होना।

(४) बोलने तथा सिखाने के पूर्व बिल्कुल शान्त वातावरण की आशा करना तथा अर्जित करना।

(५) विद्यार्थी नेतृत्व की सहायता लेना।

(६) सम्पूर्ण विद्यार्थीगण में नेतृत्व की भावना उत्पन्न करना।

(७) आत्मसुशासन तथा कक्षा उत्तरदायित्व की भावना जागृत करना।

(८) सही अथवा क्या करना चाहिये पर बल देना न कि गलत एवं क्या नहीं करना चाहिये पर।

(९) कक्षा के समय पूर्ण क्रिया का सीधे या परोक्ष रूप से निरिक्षण करते रहना।

(१०) वाणी सदैव चित्त प्रसन्न करने वाली हो।

(११) कक्षा का एक साथ, एक स्थान पर जमा होना तथा उसी प्रकार विर्सजन उचित है।

(१२) विद्यार्थियों के प्रति सहानुभूति एवं शुभ कामना का होना। किसी का मजाक न उड़ाया जाये।

(१३) विस्लि (Whistle) का अधिक प्रयोग न हो। जहां अवाज से कार्य हो सकता है वहाँ विसिल प्रयोग न हो।

(१४) बालकों पर विश्वास रखना।

(१५) किसी भी बालक को किसी भी गलत कार्य के कारण छूट या गलत कार्य से लाभ उठाने का अवसर कभी नहीं देना।

(१६) विद्यार्थियों से तर्क की भावना नहीं होना चाहिये।

(१७) बालकों को सदैव उत्साहित करना।

(१८) आदेश आदि देते समय यह ध्यान रखना कि बालक समझ रहे हैं या नहीं ?

(१९) विद्यार्थियों के आपस में तथा शिक्षक की ओर मित्र भाव रखना।

(२०) अपने तथा विद्यार्थियों के बीच उचित सामाजिक दूरी निश्चित रखना।

(२१) कभी भी 'डिक्टेटर' की भावना न हो।

(२२) प्रसन्नता एवं हँसमुख स्वभाव का रखना अति आवश्यक है।

(२३) उचित अनुशासन रखना। दंड, दोष के अनुसार शिक्षा के भाव से दिया जाना चाहिये।

(२४) बालकों की रुचि, विशेषताओं, योग्यता तथा आवश्यकताओं के अनुसार कार्य देना तथा उन्हें अन्य दिशाओं में विस्तृत एवं विकसित करना।

(२५) दूसरों के अधिकार को मान्यता देना।

(२६) शिक्षा सेवा है इस भावना से कार्य करना।

किसी शारीरिक प्रवीणता अथवा कौशल के सिखाने की विधि :

जिमनास्टिक की शिक्षा

जिमनास्टिक शब्द में कालेस्थेनिक्स, आपरेट्स पर कार्य, टम्बलिंग स्टन्टस् तथा जिमनास्टिक मार्चिंग आते हैं। कालेस्थेनिक्स में स्वतंत्र व्यायाम, इण्डीयन क्लब के व्यायाम, वान्ड ड्रिल (wand drill) तथा डम्बबेल आते हैं। इनका वर्णन पृथक किया जायेगा। जिमनास्टिक के चार मुख्य प्रकार हैं, जर्मन, डेनिश, स्वीडीश तथा ऐक्सप्रेसिव (Expressive)।

स्वीडिश तथा डेनिश जिमनास्टिक प्रणाली :

दैनिक पाठ्य योजना

प्रारम्भिक व्यायाम (१) कक्षा खोलना (Order Movements)

(२) गर्म करने का व्यायाम—पैरों का व्यायाम (Leg Exercise)।

मुख्य व्यायाम (३) कंधे का व्यायाम (Shoulder Stretching back ward and forward)।

(४) रीढ़ की हड्डी का व्यायाम (आगे पीछे दोनों) (Spinal Exercise)।

(५) हाथों के बल भार उठाने का व्यायाम (Heaveing)।

(६) कमर का व्यायाम (Trunk)।

(७) शरीर के बगल का व्यायाम (Lateral)।

(८) संतुलन का व्यायाम (Balance)।

(९) पेट का व्यायाम (Abdominal)

(१०) शरीर के पीछे के व्यायाम (Dorsal)

(११) ऐजिलिटी या लचीलेपन का (Agility) व्यायाम (Gymnastic)।

खड़े होने का व्यायाम (१२) पैरों का व्यायाम (Simple leg)।

(१३) हाथ का व्यायाम (Arm)।

(१४) श्वास का व्यायाम (Breathing)।

नोट :—डेनिश प्रणाली में विशेष ध्यान सुधारक एवं चिकित्सालय व्यायाम पर दिया जाता है। व्यायाम के द्वारा गति योग्यता, शक्ति एवं लचीलापन प्राप्त करने की चेष्टा की जाती है।

जर्मन जिमनास्टिक प्रणाली

(१) मार्चिंग (Marching)

(२) स्वतंत्र व्यायाम खड़े हो कर (Free hand exercise)

(३) आपरेटस् पर कार्य (Apparatus)

(४) मनोरंजन की क्रिया (Recreative actings & stunts etc.)

ऐक्सप्रेसिव जिमिनास्टिक

यह एक प्रकार की तालबद्ध जिमनास्टिक है जो महिलाओं में सर्वप्रिय है। नृत्य के लिये यह प्रयोग किया जाता है। इस के व्यायाम निम्नलिखित हैं।

(१) ढीलेपन का व्यायाम।

(२) खिचाव का व्यायाम।

(३) प्रगति व्यायाम।

(४) नृत्य गति।

जिमनास्टिक व्यायाम आयु, लिंग, शक्ति, योग्यता तथा प्रशिक्षण स्थिति के अनुसार देना चाहिये।

कक्षा का संगठन इस प्रकार होना आवश्यक है कि प्रत्येक बालक स्वतंत्रता से कार्य कर सके। साधारणतया जिमनास्टिक के लिये समूह में एक पंक्ति में आपरेटस के सामने खड़ा कर के कार्य कराया जाता है। आपरेटस् के चारों ओर एक एक खाली चतुर्भुज (Hollow Square) भी संगठित कर कार्य कराया जा सकता है। कार्य सम्पूर्ण कक्षा का एक साथ या छोटे समूह में कराया जा सकता है। एक साथ करने में औपचारिक रूप में आदेश के साथ कार्य होगा। समूह में कार्य एक ही साथ एक प्रकार का कार्य या भिन्न प्रकार का कार्य अनौपचारिक रूप से किया जा सकता है। समूह एक क्रिया से दूसरी क्रिया में बदलता जाता है।

वर्गीकरण या समूह में विभाजित करने के लिये यह आवश्यक है कि एक स्तर के कौशल के बालक एक साथ हों। विद्यार्थी नेतृत्व का इस अवस्था में प्रोत्साहन होना चाहिये। जिमनास्टिक में सुरक्षा की उचित व्यवस्था होनी आवश्यक है।

तालबद्ध क्रियाओं की शिक्षा

इस में स्वदेशी क्रियायें, व्यायाम की क्रियायें तथा विशेष रीति से नृत्य क्रियायें आती है। यह तीन खंडों में सिखाया जाता है। (१) आधार भूत तालबद्ध क्रियायें जो ताल के ज्ञान के लिये सिखाया जाता है, (२) रचनात्मक तालबद्ध क्रियायें जो भाव प्रकट करती हैं तथा (३) औपचारिक तालबद्ध क्रियायें जिन में विशेष क्रियाओं का अभ्यास होता है।

आधार भूत ताल बद्ध क्रियायें निम्न श्रेणियों में सिखायी जाती है। ये औपचारिक क्रियायें नहीं होती। इसमें प्राकृतिक क्रियायें जैसे चलना, स्टेपिंग (Stepping), दौड़ना, हौपिंग (Hopping), कूदना, उछलना (hopping) तथा दुलकी आदि (gallop) होती हैं। ढकेलना, खींचना, उठाना आदि ताल से सिखाना चाहिये।

रचनात्मक ताल माध्यमिक स्तर पर तथा औपचारिक ताल उच्च

माध्यमिक स्तर पर सिखाना चाहिये। शिक्षक के द्वारा दिये गये प्रदर्शन का अनुकरण एवं उसी का अभ्यास इस स्तर पर होता है। क्रिया एक साथ करने पर बल दिया जाता है। इन क्रियाओं में गाने के खेल, लोक नृत्य, ऐथेलेटिक नृत्य, क्लोग तथा टैप (Tap) नृत्य आदि आते हैं। इनके सिखाने की प्रणाली निम्नलिखित है।

(१) मानसिक चित्र खींचना तथा कुछ इतिहास।

(२) संगीत के प्रति प्रेम उत्पन्न करना तथा सुनना।

(३) संगीत के साथ ताल देना।

(४) संगीत के भाग को समझाना।

(५) पहले क्रिया वताना।

(६) संगीत के साथ उस का अनुमान एवं अनुभव।

(७) क्रिया का अनौपचारिक रूप से अभ्यास किया जायें।

(८) लाईन एवं समूह में वही कार्य सिखाना।

(९) पुरानी क्रियाओं की पुनरावृति तथा नये से उनको सम्बन्धित करना।

(१०) कठिन गति का विषलेषण कर के सिखाना।

ऐथेलेटिक क्रियाओं की शिक्षा

ऐथेलेटिक शब्द से उच्च श्रेणी के संगठित खेल, द्वन्द स्पोर्टस जैसे बौक्सिग तथा कुश्ती एवं वैयक्तिक क्रियायें जो ट्रैक एवं फील्ड स्पोर्ट्स की हैं का बोध होता है। टीम स्पोर्ट्स में बेसवौल, सौफ्ट बौल, वास्केट बौल, वौलीबौल, हौकी, फुटबौल, साकर, स्पीड बौल आदि आते हैं। सम्पूर्ण इन्ट्राम्युरल एवं वाह्य स्कूलों की आपस में प्रतियोगितायें स्पोर्ट्स के नाम से ही पुकारी जाती है।

ऐथेलेटिक्स की क्रियायें बालकों को आयु के अनुसार देना उचित है।

ऐथेलेटिक्स कौशल का विकास उसी प्रकार होता है तथा वही प्रणालियाँ प्रयोग की जाती हैं जो जिमनास्टिक या अन्य गतिवाही कौशल के सिखाने में प्रयोग होती हैं। शिक्षा के ये पग इस प्रकार हैं।

(१) तैयारी का विकास (२) उदाहरण स्थापित करना एवं प्रदर्शित करना (३) अभ्यास (४) आलोचना (५) और अभ्यास (६) कौशल का वास्तविक स्थिति में प्रयोग।

'कालेसथेनिक्स' की शिक्षा

ये शारीरिक व्यायाम हैं जो शरीर के सुन्दर विकास के लिये आयोजित है इन के चार मुख्य उद्देश्य हैं। शारीरिक स्वास्थ्य, अच्छी प्रकार की शारीरिक क्रियाओं की दशा, शारीरिक लचीलापन तथा शारीरिक नियन्त्रण का विकास एवं उन्हें सजग रखना।

व्यायाम प्रणाली का सिद्धान्त बड़ी मांस पेशियों का शक्तिशाली एवं तीव्र गगि से व्यायाम करना, उनकी पुनारावृति, प्राकृतिक ताल से तथा उनके पूर्ण सीमा तक कार्य करना है। इनसे प्राप्त लाभ हैं शारीरिक, उत्तम शारीरिक क्रिया, मनोवैज्ञानिक, शैक्षणिक, सामाजिक, आर्थिक, सौन्दर्य, सर्तकता, निश्चयता, तीव्रता एवं अवरोध। इन परिणामों को प्राप्त करने के लिये निम्न प्रणाली का प्रयोग आवश्यक है।

आधार भूत मांस पेशियों के समूह का व्यायाम प्रति दिन करना; प्रतिक्रिया आदेश के द्वारा कार्य करना; निश्चयात्मकता, सूक्ष्मता तथा सही कार्य पर बल देना; प्रत्येक व्यायाम के लिये पृथक प्रारम्भिक अवस्था लेना तथा गति की तीव्रता के लिये जितनी शीघ्रता से बिना फार्म के बिगड़े हुये व्यायाम किया जा सके करना चाहिये।

कालेसथेनिक्स् की विशेष अवस्थायें हैं सावधान, विश्राम, तथा आराम से। प्रत्येक अंग के व्यायाम की अपनी प्रारम्भिक अवस्था होती है।

आदेश के द्वारा, नम्बरों के द्वारा तथा ताल से कार्य कराना महत्वपूर्ण है। ये प्रत्येक व्यायाम के सिखाने में प्रयोग किये जा सकते हैं। साधारणतया

आदेश नये व्यायाम से परिचित करनेके लिये, नम्बरों से व्यायाम के उनके आसन के प्रभाव के लिये तथा ताल से स्वास्थ्य के परिणाम प्राप्त करने के लिये किये जाते हैं। अपने समय में कार्य कठिनता को दूर करने के लिये किया जा सकता है।

व्यायाम का क्रम इस प्रकार होगा। अनुशासन एवं गर्म करना जिसमें हलके पैर या हाथ के व्यायाम दिये जाते हैं; कठिन व्यायाम तथा ठंढे होने का व्यायाम।

•जब तक व्यायाम में निपुणता न आ जाये आगे नही बढ़ाना चाहिये। रुचि के लिये कुछ परिवर्तन किये जा सकते हैं किन्तु ध्यान रहे कि परिणाम में दोनों व्यायाम एक से हों चाहे रूप में भिन्न दिखायी दें।

स्कूल का दैनिक कालेसथेनिक्स का कार्य क्रम आयु, शक्ति एवं कौशल की प्राप्ति एवं प्रवीणता के अनुसार दिया जायेगा जो निम्नलिखित प्रकार का हो सकता है

[१] हाथ का व्यायाम।

[२] कमर मोड़ने तथा घुमाने का व्यायाम।

[३] पैरों का व्यायाम।

[४] गला एवं सीने का व्यायाम।

[५] भार उठाने का व्यायाम।

[६] पेट का व्यायाम।

[७] विशेष व्यायाम।

वर्त्तमान एन० एफ० सी० के व्यायाम के टेबुल कुछ ईसी आधार पर बनाये गये हैं जो सम्पूर्ण भारतवर्ष के स्कूलों में प्रचलित हैं। व्यायामों के कुछ संशोधन एवं परिवर्तन से यह कार्य क्रम लाभ कर सिद्ध होगा।

कालेसथेनिक्स कक्षा लेना

कालेसथेनिक्स की कक्षा लेने में उन्हीं बातों पर ध्यान देना आवश्यक है जो अन्य विषयों में पायी जाती है। इस की कक्षा लेने में निम्न बातों पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है ।

[१] कक्षा का अनुशासन [२] कक्षा खोलना एवं बन्द करना [३] व्यायाम का प्रवेश [४] व्यायाम करते रहना [५] व्यायाम का थमना [६] व्यायाम करने वालों का प्रशिक्षण एवं कोचिंग ।

यह ध्यान रखना आवश्यक है कि मुख्य ध्येय व्यायाम करने का है। अतएव अन्य बातों में समय नष्ट करना उचित नहीं।

(१) **कक्षा का अनुशासन** :—इसे कक्षा नियन्त्रण, अनुशासन, सुप्रबन्ध आदि समझा जाता है किन्तु इनके द्वारा केवल वाह्य नियन्त्रण सम्भव है। बास्तविक नियन्त्रण आन्तरिक होता है तथा यही उचित एवं स्थायी है। आन्तरिक अनुशासन (Morale) ही वास्तविक अनुशासन है। यह एक दिन में प्राप्त नहीं होता। इसके लिये निरन्तर लगा रहना होता है। यह एक मानसिक प्रवृति हो जाती है। शिक्षक का व्यक्तित्व, उसकी मानव प्रवृति का ज्ञान, उसकी शिक्षा देने के योग्य वातावरण स्थापित करना, अवस्था के अनुसार समायोजना, विभिन्न प्रवृत्तियों की ओर रुचि उत्पन्न करने की योग्यता, संगठन एवं संचालन की योग्यता, कार्य के अनुसार सिद्धान्तों का उचित प्रयोग, कक्षा के भाव को मालूम करना, प्रकृति, लिंग, आयु, मौसम, ताप तथा इसी प्रकार के अन्य ज्ञान के द्वारा ही वह उचित नेतृत्व करने में सफल होगा।

रुचि, प्रेरणा, शिक्षक की भावनाओं, शिक्षक की तैयारी, सराहना, अनुचित कार्य के प्रति अरुचि प्रकट करना, उचित स्तर से अधिक सरल न होना, शिक्षक का उत्तरदायित्व, शिक्षक का वैयक्तिक व्यवहार, प्रथम दिन तथा प्रारम्भिक दिनों का प्रभाव, कक्षा में पाठ्य योजना की उचित प्रगति एवं विस्तार, नियन्त्रण प्राप्त करना, वर्णन एवं व्याख्या सरल रूप से देना, अवश्यकता से अधिक शब्दों का प्रयोग न करना वरन संक्षिप्त होना, एक समय में एक कार्य करना, सम्पूर्ण कक्षा को एक प्रकार की क्रिया में व्यस्त रखना, उत्तम

प्रकार की क्रिया एवं कौशल प्राप्ति पर बल देना, अपनी भूल स्वीकार करना विद्यार्थियों के अभद्र व्यवहार को रोकना, एक प्रकार के वस्त्र, व्यक्तिगत सफाई, कार्य करने के स्थान की स्वच्छता, बाहर खुले में कार्य करने आदि के द्वारा आन्तरिक अनुसाशन के प्राप्त करने में सहयोग प्राप्त किया जा सकता है।

(२) **कक्षा खोलना एवं बन्द करना** :—कक्षा के विद्यार्थियों को घंटे के आरम्भ में एक लाइन में खड़े हो कर उपस्थिति देनी चाहिये।

व्यायाम के लिये दो विद्यार्थियों के बीच की दूरी ६ वर्ग फुट चारों ओर होना आवश्यक है, इसे ध्यान में रखते हुये कक्षा खोलनी चाहिये। इसके कितने ही प्रकार हैं। कक्षा में निश्चित दिये चिन्ह पर खड़ा होना, दो, तीन, तथा चार लाइनों में कक्षा खोलना, लाइन में गिनती करने के बाद चार बायें या चार दाहिने करना आदि प्रथा प्रयोग में आ सकती हैं। प्रथा के चुनाव में हैं उसी प्रथा को अपनाना चाहिये जो सरल हो एवं कम समय ले।

(३) **व्यायाम का प्रवेश** :—व्यायाम के प्रवेश के लिये दो प्रणालियां उपयुक्त हैं। [१] व्याख्या [२] प्रदर्शन। वास्तविक सिखाने में इन सामान्य पद्धतियों के अनेक संशोधन एवं मिश्रण आदि प्रयोग किये जाते हैं।

[१]व्याख्या चार प्रकार से प्रयोग में आता है।

[i] अनुकरण [ii] आदेश [iii] पूर्ण आदेश [iv] नाम करण

आवाज कक्षा के संख्या के अनुकूल हो। साफ तथा शुद्ध उच्चारण होना आवश्यक है। आदेश गति के अनुसार होना चाहिये।

(२) प्रदर्शन के द्वारा शिक्षक कौशल एवं कार्य का पूर्ण सही चित्रण करता एवं दिखाता है।

प्रदर्शन के समय सम्भावित दोषों की ओर भी ध्यान आकर्षित किया जाता है।

(४) **व्यायाम करते रहना**–इसके करने के दो प्रकार हैं। (१) प्रति-क्रिया आदेश के द्वारा तथा (२) लगातार ताल से करने के द्वारा।

(१) प्रतिक्रिया आदेश

[i] शब्दों के द्वारा [ii] नम्बर के द्वारा।

(२) लगातार ताल से

(५) **व्यायाम का थमना**–[i] प्रतिक्रिया आदेश में 'थम'। इस प्रथा में आदेश के समाप्त होने से क्रिया स्वयं ही थम जाती है।

[ii] लगातार के कार्य को थमने के लिये थम कहना आवश्यक है। व्यायाम को प्राकृतिक रीति से थमना आवश्यक है। थम कहने के पूर्व कक्षा को सावधान करना उचित है अतएव अन्तिम क्रिया से पहले 'कक्षा' कहने से विद्यार्थी सतर्क हो जायेंगे। यदि ४ की गिनती में व्यायाम है तो तीन पर कक्षा तथा चार पर थम कहा जा सकता है।

(६) **व्यायाम करने वालों को प्रशिक्षित करना**—शिक्षक का मुख्य कर्त्तव्य यह देखने का है कि व्यायाम सही रीति से किया जा रहा है। यह सहयोगी शिक्षा के रूप में दिये जा सकते हैं जो व्यक्तिगत एवं सामान्य रूप धारण कर सकता है। व्यक्तिगत, व्यक्ति की ओर आदेशित होगा तथा सामान्य सम्पूर्ण कक्षा की ओर आदेशित होगा।

(१) सामान्य आदेश या कोचिंग सम्पूर्ण कक्षा के लिये होगा जो क्रिया के उत्तम करने के हेतु बताया जा सकता है। ये छोटे तथा सीधे लगने वाले होने चाहिये। इस में मुख्य बातों पर ध्यान देना आवश्यक है जो तीन प्रकार से सम्बोधित किये जा सकते हैं।

[i] **चेतावनी**—सम्भावित दोष के प्रति चेतावनी देना लाभदायक होता है। यह आदेश के साथ ही बताया जा सकता है। जहां बल देना हो उसके लिये यह प्रयोग हो सकता है। उदाहरण के लिये दाहिने पैर को दायी ओर [घुटना सीधे] खोलो। एक, दो, पैर सीधे।

[ii] **सुधार**—व्यायाम में गलतियों के सुधार के लिये यह प्रयोग किया जाता है। यह प्रायः उस समय प्रयोग में आता है जब कक्षा में कार्य लगातार

रूप से हो रहा हो। सुधार गति, अवस्था तथा आसन के प्रति होगा। यह तीक्षणता से आदेश के द्वारा किया जा सकता है, चिन्हों के द्वारा, गलती की ओर दिखाने के द्वारा या शब्दों के द्वारा किया जा सकता है। 'और तेजी' 'और सामने' 'पूरा मोड़ो' आदि से बताया जा सकता है। यदि दो-तीन बार कहने तथा संकेत के द्वारा उचित प्रभाव न हो तो क्लास रोककर फिर बताना उचित है।

[iii] **उत्तेजना**—उत्तेज   र्ण शब्द प्रयोग कर के यह किया जा सकता है।

एक साथ—लगे रहो, दृढ़ता से आदि।

(२) **व्यक्तिगत आदेश**—[i] शब्दों के द्वारा—विद्यार्थी का नाम लेकर या उसकी ओर देखकर गलती की ओर ध्यान आकर्षित करना।

[ii] चिन्ह के द्वारा।
[iii] गलती छू कर बताना।
[iv] उपरोक्त के मिश्रण के द्वारा।

———

कोचिंग एवं ओफीशियेटिंग

१

ओफीशियेटिंग के सिद्धान्त

कोच के व्यक्तिगत गुण Personal Qualities of a Coach—

(१) चरित्र [Character] :—

एक कोच को सर्वश्रेष्ट नैतिक तथा आत्मिक चरित्र का व्यक्ति होना चाहिये । उसे ईमानदार तथा कठिन परिश्रम करने वाला व्यक्ति होना चाहिये । उसे अपने कर्त्तव्य तथा समय से प्रेम होना चाहिये । उसे रसिक प्रवृत्ति का तथा संवेगात्मक व्यक्ति नहीं होना चाहिये । चरित्र ही एक ऐसी वस्तु है जो दूसरों को प्रभावित कर सकती है । चरित्र विकास क्रिया, खेल तथा दैनिक जीवन के सामाजिक सम्बन्धों से विकसित होता है । अतः यह आवश्यक है कि कोच एक ऊँचे आदर्श एवं चरित्र का व्यक्ति हो । उसे अपना स्पोर्ट, शक्ति का माध्यम तथा उच्च विचारो के प्रदर्शन का माध्यम बनाना चाहिये । सम्मान पूर्ण व्यवहार, इमान्दारी से खेल तथा वैज्ञानिक ध्येय के प्रति शिष्यों का उत्तरदायित्व पर बल देना चाहिये । ऐथलेटिक्स में विजय प्राप्त करना केवल मुख्य उद्देश्य नहीं होना चाहिये क्योंकि यह सम्पूर्ण जीवन नहीं हैं ।

(२) नेतृत्व [Leadership] :—

उसमें नेतृत्व के प्रत्येक गुण होना चाहिए। उसे अपने शिष्यों के बीच तथा जो उसके पीछे चलते हैं उनके लिए नायक होना चाहिए। उसे इस प्रकार नेतृत्व करना चाहिए जिससे दूसरे उसके द्वारा प्रभावित हों तथा ऐच्छिक रीति से वे उसको अपना नायक चुन लें।

(३) उत्साह [Enthusiasm] :—

उसे एक उत्साही पुरुष होना चाहिए। उसे अपने शिष्यों तथा दूसरे जो उसके पीछे चलते हैं उत्साह तथा शक्ति देनी चाहिये। अपने काम के लिए उनके हृदय में लगन तथा रुचि उत्पन्न करनी चाहिए।

(४) विशेष तकनीकी ज्ञान Knowledge Technical knowledge:—

कोच में नये से नये वर्तमान तकनीकी ज्ञान अपने विषय में अवश्य होना चाहिए। नियम तथा व्यवस्था उसकी उंगलियों पर होना चाहिए। खेल तथा स्पोर्ट्स की बारीक से बारीक विशेष विद्या से पूर्ण परिचित होना चाहिए।

आधुनिक शिक्षा में शिक्षक का क्या स्थान है एवं अपने ज्ञान का स्थानान्तर किस प्रकार कर सकता है तथा अपने को इस कर्त्तव्य के लिए किस प्रकार तैयार कर सकता है, महत्व पूर्ण विषय हैं। शिक्षक का मुख्य कर्त्तव्य है शिक्षा प्रदान करना। शिक्षा देने में पद्धतियों का प्रयोग किया जायेगा। शिक्षक उस समय तक अपनी पद्धति नहीं चुन सकता या उसका समायोजन कर सकता जब तक उस नीव के क्षेत्रों से वह भली भाँति परिचित न हो जिन पर पद्धति निर्धारित हैं। शिक्षक पद्धति सही नहीं चुन सकता जब तक उसे यह ज्ञान न हो कि वह जो कर रहा है, क्यों कर रहा है।

शिक्षक को अपने विषय, अपने वैयक्तिक गुणों को, अपने अनुभव उस समय तक की व्यवसायिक प्रशिक्षण एवं तैयारी के विषय आदि पर विचार करना है, विशेष कर उस अवस्था में जब शिक्षकों का कर्तव्य एवं उत्तरदायित्व, उनके शिक्षक होने, व्यवसायिक सदस्यता, योग्य नागरिक एवं समाज की सदस्यता के दृष्टिकोण से अवलोकन की जाती है। शिक्षक को इस बात से भली भांति

परिचित होना आवश्यक है, कि उस के व्यवसाय में भी अन्य व्यवसाय की तरह उस के प्रति दावा है, पुरस्कार एवं भय है।

शैक्षणिक व्यक्तित्व या शिक्षक का होना आधुनिक समय में कुछ दिनों पहले के अर्थ से बिल्कुल भिन्न है। आज की शिक्षा का अर्थ है सम्पूर्ण विकास आज के शिक्षक एवं कोच वे व्यक्ति नहीं हैं जिनकी रक्षा में विद्यार्थियों को कुछ समय के लिये छोड़ दिया जाता है। वह शिक्षा सामग्री का कोई स्टोर नहीं समझा जाता है जहां से सामग्री एक मस्तिष्क से दूसरे मस्तिष्क में उंडेल दी जाती है।

आधुनिक शिक्षक एवं कोच को यदि अपना उत्तरदायित्व सही रूप में सम्पन्न करना है तो उन क्षेत्रों में प्रवीणता दिखलानी पड़ती है जिन से वह सम्बन्धित है। आज की आवश्यकता बुद्धिमान, दृढ़ तथा शिक्षा क्षेत्र में अपने को अर्पित किये हुये नेतृत्व की है जिन के दृष्टिकोण विस्तृत हैं, जो सम्पूर्ण मनुष्य का उसके अपने समाज में सही एवं दृढ़ ज्ञान रखते हों तथा जो दूसरों के साथ स्कूलों में भारतीय बालक एवं बालिकाओं के विकास के हेतु कार्य कर सकते हों। आज की मांग ऐसे शिक्षक एवं कोच की है जो संतुलित हैं, स्वस्थ्य हैं, सामाजिक व्यक्ति है, जिनकी व्यवसायिक एवं विशेष क्षेत्र में कार्य करने के लिये उचित एवं उच्च विस्तृत सामान्य शिक्षा का आधार है। शिक्षक एवं कोच में परिपक्वता का होना आवश्यक है जिससे व उत्तरदायित्व ग्रहण कर सकें, आत्म निर्देशन कर सके, विस्तृत व्यवसायिक एवं सामाजिक रूचि रखते हो तथा दूसरों की स्वतंत्रता एवं विकास के लिये चिन्तित हों।

यह दावा कि शारीरिक शिक्षा, बालक एवं बालिकाओं के शिक्षित करने का एक माध्यम है उसी समय सत्य हो सकता है जब शारीरिक शिक्षक वास्तविक अर्थ में शिक्षक हों। इसके अतिरिक्त जो शारीरिक शिक्षक या कोच बनना चाहते हैं उन्हे और भी विशेष आवश्यकताओं की पूर्ति करनी है जैसे कि प्रत्येक अन्य क्षेत्र में विशेष योग्यता की आवश्यकता होती है। इन योग्यताओं के प्राप्त व्यक्तियों को सफलता की निश्चित रूप से सम्भावना रहती है। शारीरिक कौशल एवं स्नायु मांस पेशियों के नियन्त्रण की अत्यन्त ही श्रेष्ठ

स्तर पर आवश्यकता है, ये शारीरिक शिक्षा एवं कोचिंग के यन्त्र हैं जिन्हें अन्य आवश्यक योग्यताओं के साथ अवश्य बढ़ाना है ।

कोच या शिक्षक को अपने व्यवसाय के आरम्भ ही से यह समझना चाहिये कि वह भी एक प्रशिक्षित विद्यार्थी है जिसे अधिक ज्ञान की आवश्यकता है। सफल शिक्षक एवं कोच वही हो सकते हैं जो यह विचार करें कि "इस समय मैं समुद्र के तट पर के पत्थर चुन रहा हूं, अभी तो सम्पूर्ण समुद्र बाकी है।" इस भावना से कार्य करते हुये जितना भी वह अध्ययन करें जिससे मनुष्यों एवं जीवन के प्रति विचार विस्तृत हों उतनी ही कार्य में सफलता प्राप्त होगी। आधुनिक पुस्तक, लेख, विचार आदि से अपने ज्ञान को सदैव सजग रखना उचित एवं आवश्यक है। कार्य आरम्भ करने के पश्चात समय समय पर अपने ज्ञान एवं अनुभव में रिक्त स्थान मालूम देते हैं, उन्हें पर्याप्त रीति एवं सामग्री से परिपूर्ण करना चाहिये।

(५) **सिखाने की योग्यता** [Teaching ability] :—

यह सर्व प्रथम तथा अत्याधिक महत्वपूर्ण गुण किसी कोच का हैं। कोच को सिखाने की योग्यता होनी चाहिए। उसे अच्छी तरह से दूसरों के सामने विषय विस्तार तथा अपने भावों को प्रकट करने की योग्यता होनी चाहिए जिससे प्रथम बार ही सबके समझ में आ जाए या सरलता से समझ में आ जाये।

(६) **निरीक्षण तथा विश्लेषण की योग्यता** [Ability **to** observe and analyse] :—

कोच में ऐसे गुण होना चाहिए जिसके द्वारा वह अपने शिष्यों की कठिनाइयां तथा निर्बलताओं को भली भांति देख सके तथा अपने शिक्षा के अनुसार उनका सही विश्लेषण करे। **कोच** करने में यह आवश्यक है कि वह त्रुटियों का निरीक्षण करे तथा उसका निवारण करे।

(७) **सर्वश्रेष्ठ मानसिक तथा शारीरिक अवस्था लाने की योग्यता** [Ability to bring a top condition mentally and physically]:-

कोच में यह योग्यता होनी चाहिए कि वह अपने शिष्यों को मानसिक

तथा शारीरिक रीति से सर्वश्रेष्ठ अवस्था में ले आए । यह उनकी अपनी योग्यता पर निर्धारित होगा । यदि कोई विद्यार्थी मानसिक रीति से ठीक नहीं है तो वह अच्छा खिलाड़ी या स्पोर्ट्समैन नहीं हो सकता है । अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में विजय प्रायः मानसिक तैयारी के कारण होती है । प्रत्येक प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाले के लिए मानसिक फुर्तीलापन की परम आवश्यकता है ।

(८) सर्वदा एक सिद्धान्त का होना [Consistency] :—

किसी व्यक्ति पर निर्भर होना एक महत्वपूर्ण विषय है । यदि शिष्यों को कोच के ऊपर विश्वास है तो उसका प्रशिक्षण प्रभावशाली होगा । जिस पर विश्वास नहीं होता उसके बातों का प्रभाव नहीं पड़ता । कोच के लिये यह एक महत्वपूर्ण बात है कि जो उस पर निर्भर करते हैं उनका किसी प्रकार किसी विषय में विश्वासघात न हो ।

कोच को अपनी बातों, विचार, एवं व्यवहार तथा निर्णय आदि में सर्वदा एक सिद्धान्त का होना आवश्यक है इससे जो उस के नीचे हैं उन्हें उसकी प्रकृति का पूर्ण ज्ञान होना तथा यह भी समझा जा सकेगा कि किसी दी हुयी अवस्था में कोच के क्या निर्णय सम्भव हैं । समान मत का होना चरित्र का एक बड़ा गुण है । चरित्रवान व्यक्ति ही में चाल की समानता सदैव एवं सर्वत्र प्रकट होगी । ये परिस्थितियों में परिवर्तित नहीं होंगे । उनका आदर्श सदैव समान रहता । उनका व्यवहार उनके आदर्शों से प्रत्येक अवस्था में आदेशित होगा जिनमें प्रत्येक दशा में समानता होगी । यदि उन्हें कठिनाई होगी तो प्रसन्नता पूर्वक सह लेंगे, यदि उन्हें अटल होना है तो वे नम्रता पूर्वक अटल होंगे । किन्तु अपने सिद्धान्त से हट नहीं सकते ।

(९) विश्वास एवं साहस [Confidence and Courage] :—

विश्वास से साहस एवं साहस से विश्वास प्राप्त होता हैं । मनुष्य के लिये विश्वास आवश्यक है । अपने ऊपर विश्वास, अन्य व्यक्तियों, वस्तुओं आदि पर विश्वास रखना अनिवार्य सा प्रतीत होता है । यदि अपने ऊपर तथा अपने ज्ञान एवं गुणों पर विश्वास है तो साहस पूर्ण पग आगे उठेंगे । कोच को अपने ऊपर पूर्ण विश्वास होना चाहिये जो उचित शिक्षा, प्रशिक्षण एवं अनुभव के

आधार पर स्थित हो। इतना ही आवश्यक है कि वह उन पर विश्वास रखे जिन के साथ एवं जिनके लिये कार्य कर रहा है। जब तक कलाकार को अपनी सामग्री पर विश्वास नहीं होगा वह कार्य नहीं कर सकता। काम करने वालों को भी कार्य निर्देशक, कोच या शिक्षक पर पूर्ण विश्वास होना चाहिये तभी वे यह समझ सकेंगे कि वह जो कुछ करता है उनके भले के लिये करता है। कार्य करने की योग्यता में विश्वास रखने से, कौशल के कार्यशीलता में, शरीर में तनाव के स्थान पर ढीलापन रहता है तथा स्नायु मांसपेशियों में कड़ापन आ जाता हैं क्रिया के करने में जो कठिनता होती है वह दूर हो जाती है।

व्यक्ति उसी समय उत्तम रीति से सीख सकते हैं जब किसी कार्य को वह विश्वास के साथ आरम्भ करें। भय एवं शंका के साथ कार्य आरम्भ करने में निर्बलता आ जाती है। भय, संकोच, दुविधा आदि सीखने वाले को सीखने में बाधक होती है। अनेक कौशलों में सफलता प्राप्त करने के लिये व्यक्ति को साहस से आरम्भ करना अति आवश्यक हो जाता है। खेल में आक्रमण करने में, आपरेट्स पर काम करने में, खेल में विरोधी को रोकने एवं उस से छीनने में साहस एवं अपने ऊपर विश्वास की आवश्यकता होती है। यह विश्वास सीखने वालों के लिये उसी समय सम्भव है जब उनके कोच एवं शिक्षक को अपने ऊपर विश्वास हो, तभी वह दूसरों में विश्वास उत्पन्न कर सकता है। विश्वास एवं साहसभी एक संक्रामक रोग के समान है जो बिना जाने हुये, यदि वह वहां है, एक दूसरे को लगता जाता है।

आफीशियेटिंग के उद्देश्य—(The purpose of Officiating)—

[१] खेल ऐसा हो जिस में खेलने वाले आज्ञा तथा नियम का पालन ऐसा करें जिस से यह मालूम हो कि कोई रेफरी है ही नहीं।

[२] आरम्भ ही से खेल पर पूर्ण नियन्त्रण हो।

[३] खिलाड़ियों का 'रापोर्ट' (Rapport) होना। [रापोर्ट एक फ्रान्सीसी शब्द है जिसका अर्थ है एक प्रकार का सम्मान, सहयोग, आपसी समझ]।

[४] दर्शकों के साथ अच्छा व्यवहार।

गुण—[qualifications] [१] जो दण्ड दिये जायें वे तत्कालिक तथा सही हों ।

]२] विश्वास तथा निश्चयात्मकता—यह अपने व्यवहार, ध्वनि, संकेत तथा विसिल के द्वारा दिखलाना ।

[३] शान्तभाव—मैत्री भाव तथा मनुष्यत्व लिये हुए होना चाहिए । जल्दबाजी नहीं बल्कि धैर्य होना चाहिये ।

[४] बराबर एक सा होना चाहिये—जो था वह होगा और वही है का आदर्श । दंड देने में समय पर तथा सही होना चाहिये । सम्पूर्ण खेल में दोनों के लिये यही मापदण्ड होना चाहिये ।

[५] निर्णय—यह अनुभव से आता है ।

[६] सहयोग—दूसरे लोगों, कार्यकर्त्ताओं, खेल पंच तथा रेफरियों के साथ सहयोग हो ।

[७] खेल के नियमों तथा व्यवस्था का पूर्ण ज्ञान हो ।

[८] कर्त्तव्य का ज्ञान तथा कार्य के क्रियाओं का पूर्ण ज्ञान हो । जैसे कप्तानों को बुलाना, टास के लिये मुद्रा, स्कोरशीट देखना, टाइम आउट देखना, जब दूसरे सहायक खेल पंच हों, टाइम देखना इत्यादि ।

[९] सही दर्शन हो तथा अच्छे शारीरिक स्वास्थ्य की अवस्था हो ।

साधारण सिद्धान्त—[General Principle] [१] नियम उनको दण्ड देने के लिये है जो अनियमित रूप से किसी दूसरे पर कोई कार्य करके लाभ उठाये । इनका अनुवाद शाब्दिक तथा मशीन की तरह नहीं होना चाहिये ।

[२] अच्छे खेल का उत्तरदायित्व कोच के ऊपर है ।

[३] खेल पंचों को खेल के समीप होना चाहिये ।

[४] खेल पंचों को पूर्ण दृश्य के आधार पर देखना तथा कार्य करना न कि केवल परिणाम पर ।

आधार पर स्थित हो। इतना ही आवश्यक है कि वह उन पर विश्वास रखे जिन के साथ एवं जिनके लिये कार्य कर रहा है। जब तक कलाकार को अपनी सामग्री पर विश्वास नहीं होगा वह कार्य नहीं कर सकता। काम करने वालों को भी कार्य निर्देशक, कोच या शिक्षक पर पूर्ण विश्वास होना चाहिये तभी वे यह समझा सकेंगे कि वह जो कुछ करता है उनके भले के लिये करता है। कार्य करने की योग्यता में विश्वास रखने से, कौशल के कार्यशीलता में, शरीर में तनाव के स्थान पर ढीलापन रहता है तथा स्नायु मांसपेशियों में कड़ापन आ जाता हैं क्रिया के करने में जो कठिनता होती है वह दूर हो जाती है।

व्यक्ति उसी समय उत्तम रीति से सीख सकते हैं जब किसी कार्य को वह विश्वास के साथ आरम्भ करें। भय एवं शंका के साथ कार्य आरम्भ करने में निर्बलता आ जाती है। भय, संकोच, दुविधा आदि सीखने वाले को सीखने में बाधक होती है। अनेक कौशलों में सफलता प्राप्त करने के लिये व्यक्ति को साहस से आरम्भ करना अति आवश्यक हो जाता है। खेल में आक्रमण करने में, आपरेट्स पर काम करने में, खेल में विरोधी को रोकने एवं उस से छीनने में साहस एवं अपने ऊपर विश्वास की आवश्यकता होती है। यह विश्वास सीखने वालों के लिये उसी समय सम्भव है जब उनके कोच एवं शिक्षक को अपने ऊपर विश्वास हो, तभी वह दूसरों में विश्वास उत्पन्न कर सकता है। विश्वास एवं साहसभी एक संक्रामक रोग के समान है जो बिना जाने हुये, यदि वह वहां है, एक दूसरे को लगता जाता है।

आफीशियेटिंग के उद्देश्य—(The purpose of Officiating)—

[१] खेल ऐसा हो जिस में खेलने वाले आज्ञा तथा नियम का पालन ऐसा करें जिस से यह मालूम हो कि कोई रेफरी है ही नहीं।

[२] आरम्भ ही से खेल पर पूर्ण नियन्त्रण हो।

[३] खिलाड़ियों का 'रापोर्ट' (Rapport) होना। [रापोर्ट एक फ्रान्सीसी शब्द है जिसका अर्थ है एक प्रकार का सम्मान, सहयोग, आपसी समझ]।

[४] दर्शकों के साथ अच्छा व्यवहार।

गुण—[qualifications] [१] जो दण्ड दिये जायें वे तत्कालिक तथा सही हों।

]२] विश्वास तथा निश्चयात्मकता–यह अपने व्यवहार, ध्वनि, संकेत तथा विसिल के द्वारा दिखलाना।

[३] शान्तभाव—मैत्री भाव तथा मनुष्यत्व लिये हुए होना चाहिए। जल्दबाजी नहीं बल्कि धैर्य होना चाहिये।

[४] बराबर एक सा होना चाहिये—जो था वह होगा और वही है का आदर्श। दंड देने में समय पर तथा सही होना चाहिये। सम्पूर्ण खेल में दोनों के लिये यही मापदण्ड होना चाहिये।

[५] निर्णय–यह अनुभव से आता है।

[६] सहयोग–दूसरे लोगों, कार्यकर्त्ताओं, खेल पंच तथा रेफरियों के साथ सहयोग हो।

[७] खेल के नियमों तथा व्यवस्था का पूर्ण ज्ञान हो।

[८] कर्त्तव्य का ज्ञान तथा कार्य के क्रियाओं का पूर्ण ज्ञान हो। जैसे कप्तानों को बुलाना, टास के लिये मुद्रा, स्कोरशीट देखना, टाइम आउट देखना, जब दूसरे सहायक खेल पंच हों, टाइम देखना इत्यादि।

[९] सही दर्शन हो तथा अच्छे शारीरिक स्वास्थ्य की अवस्था हो।

साधारण सिद्धान्त—[General Principle] [१] नियम उनको दण्ड देने के लिये है जो अनियमित रूप से किसी दूसरे पर कोई कार्य करके लाभ उठाये। इनका अनुवाद शाब्दिक तथा मशीन की तरह नहीं होना चाहिये।

[२] अच्छे खेल का उत्तरदायित्व कोच के ऊपर है।

[३] खेल पंचों को खेल के समीप होना चाहिये।

[४] खेल पंचों को पूर्ण दृश्य के आधार पर देखना तथा कार्य करना न कि केवल परिणाम पर।

[५] नियम का निर्णय कार्य के पूर्ण समाप्ति पर देना चाहिये न कि पहले से सोचने पर।

[६] जो वह खेलने वालों में देखे उस पर निर्णय करना चाहिये।

[७] जहां गलती हो वहां मान लेना चाहिये और जहां सम्भव हो वहाँ सुधार लेना चाहिए।

दूसरे कोच, खिलाड़ियों तथा दर्शकों के साथ सम्बन्ध–[Relation with coaches, player and spectators.

[१] मैत्री-भाव हो किन्तु अलग रहना चाहिये।

[२] किसी प्रकार के पक्षपात के चिन्ह न दिखलायें।

[३] अपने आप को नियन्त्रण में रखना तथा शान्त रहना।

[४] जो कुछ भी आलोचना हो उस पर ध्यान न देना।

[५] अपने निर्णय के नियम को कभी आड़ न देना। यदि किसी प्रकार से गलती हो तो स्वीकार कर लेना चाहिये। गलत निर्णय को कभी आड़ न देना चाहिये।

[६] नियम के, निर्णय नियम के लिये, नियमावली का प्रयोग करना चाहिए।

[७] यदि किसी प्रकार की सूचना देना हो या किसी विशेष नियम या व्यवहार के प्रति खेलने वालों का ध्यान आकर्षित करना हो तो खेल के प्रारम्भ में ही कर देना चाहिये। यदि खेलने वालों पर प्रभावपूर्ण शब्द प्रयोग किये जायें तो उचित सफलता प्राप्त होगी। यह आवश्यक है कि जो कुछ कहा जाय उन का प्रतिपालन अवश्य हो। केवल धमकी देने या डराने के लिये कुछ नहीं कहना चाहिये। प्रत्येक शब्द तात्पर्य पूर्ण हों।

साधारण कर्त्तव्य– [Routine duties] [१] जो व्यवस्थापक है इनको आने की सूचना देना तथा आ जाने पर अपनी उपस्थिति बताना।

(१) जो व्यवस्थापक हैं उनको आने की सूचना देना तथा आ जाने पर अपनी उपस्थिति बताना।

[२] जितने साधन तथा सामग्री हों उनका निरीक्षण।
[३] दूसरे खेल पंचों से मिलना तथा कर्त्तव्यों के विषय में बातचीत।
[४] सब लाइन तथा निशान का निरीक्षण। स्कोर बुक आदि देखना।
[५] कप्तानों से मिलना तथा टॉस करना।
[६] खेल खिलाना तथा संकेतों तथा सही खेल स्थितियों का प्रयोग।
[७] सामग्री जैसे बौल आदि का लेना, फिर लौटाना।
[८] आधे समय के स्कोर का निरीक्षण करना।
[९] पूर्ण अन्तिम स्कोर का निरीक्षण तथा हस्ताक्षर करना।
[१०] यदि कोई रिपोर्ट की आवश्यकता हो तो उसे लिखना।

नियमित समय की आधीनता–[Punctuality] भारतवर्ष में जहां 'इंडियन टाइम' (Indian Time) एक मुहाविरा है जिसका अर्थ सदैव लेट आने से है वहां नियत समय की आधीनता का प्रतिपालन करना अति आवश्यक है। प्रायः हम यह भूल जाते हैं कि यदि एक मुख्य व्यक्ति कुछ देर से आता है तो अनेक व्यक्ति जो उसकी प्रतीक्षा करते हैं उनका उतना समय नष्ट होता है। यह समय का नष्ट होना व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय दोनों है। उदाहरण के लिये मान लीजिये एक कोच, रेफरी या मुख्य अतिथि आधा घन्टा देर से आते हैं और एक हज़ार व्यक्ति जो खेल देखने के लिये प्रतीक्षा कर रहें हैं या भाषण सुनने की प्रतीक्षा कर रहे हैं तो १००० व्यक्तियों का ५०० व्यक्तिगत घंटे तथा ५०० राष्ट्रीय घंटे की हानि हुई। इसी प्रकार करोड़ों मानव घण्टे भारतवर्ष में किसी एक व्यक्ति की प्रतीक्षा में नष्ट किये जा रहे हैं।

उत्तम कोच, शिक्षक एवं रेफरी का कर्त्तव्य हैं कि वे अपने उत्तरदायित्व को समझते हुये तथा अन्य व्यक्तियों के सम्मान में अपने नियत समय की आधीनता का प्रतिपालन करें।

ओफीशियेटिंग के स्तर को ऊँचा रखना

उत्तम रीति से ओफीशियेटिंग करने के लिये खेल एवं स्पोर्टस जिस की

ओफीशियेटिंग करना है उस के तकनीक एवं नियम आदि से भलीभांति परिचित होना चाहिये। इन की अनुपस्थिति में अच्छा ओफीशियेटिंग करना सम्भव नहीं। इसके पूर्ण ज्ञान से ही तत्कालिक निर्णय जिस में भूल या दोष होने की सम्भावना न हो, सम्भव हो सकेगा।

नियम की स्मृति, उसका उचित अनुवाद तथा उसके प्रयोग का अभ्यास, एक अच्छे ओफीशियल के लिये अनिवार्य हैं। यह सदैव स्मरण रखने योग्य है कि नियम अध्ययन एवं प्रयोग करने ही से याद रखे जा सकते हैं। स्थिति एवं अवस्था तथा वातावरण को समझना भी नियम के पालन या पालन कराने या निर्णय देने में सहायक हैं। नियम की आत्मा को समझना अच्छे ओफीशियल के लिये अति आवश्यक है। नियम के प्रति किसी प्रकार की दुविधा में ओफीशियल के निर्णय करने में दोष अवश्य होगा।

क्लब्स एवं ऐसोशियेशन का यह कर्त्तव्य है कि अच्छे ओफीशियल्स के प्रशिक्षण के लिये क्लिनिक (Clinic) इत्यादि हों जहां खेल के नियम एवं तकनीक के विशेष बातों पर विचार किये जा सकें, दुविधा दूर की जा सकें तथा सही कार्य का प्रदर्शन कर सकें। क्लीनिक आदि में भाग लेने से प्रशिक्षण पाने वाले व्यक्ति के लिये उस विषय में उचित अभ्यास का अवसर प्राप्त होगा।

जो सीखने वाले है यदि उन्हें किसी उत्तम ओफीशियल के साथ कार्य करने का अवसर प्राप्त होता रहे तो उनकी प्रगति शीघ्रता से होगी क्योंकि अपने सीखने की अवधि (Apprehticeship Period) में उन्हें उनके दोष तथा कमी आदि का ज्ञान होता रहेगा। यह भी उचित है कि वे परीक्षा दें तथा प्रगति के अनुसार उनकी योग्यता निर्धारित की जाये। जैसे ए० ए० एफ० आई की परीक्षा है।

कोचिंग के सिद्धान्त

शिक्षा देना कोचिंग एवं प्रशिक्षित करना

शिक्षा देने, कोचिंग एवं प्रशिक्षित करने में बहुत अन्तर है। इन सम्बन्धित व्यक्तित्व में अर्थात जो इन कार्यों को करते हैं उनके वैयक्तिक गुणों

एवं आधार भूत अध्ययन में किसी प्रकार का अन्तर नहीं किन्तु उनके विशेष गुणों, कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व में विशेषता की विभिन्नता है।

शिक्षक का विशेष कर्त्तव्य शिक्षा देने का है। वह किसी विषय की आधार भूत तथ्यों को सिखा कर विद्यार्थी को विषय का सम्पूर्ण ज्ञान देता है। प्रशिक्षण एवं अभ्यास के द्वारा विद्यार्थी उसमें प्रवीणता प्राप्त करता है। अभ्यास के समय शिक्षक की सहायता एवं आदेश से उसे प्रगति में लाभ होता है। विद्यार्थी को विषय में आरम्भ से अन्त तक का ज्ञान देना शिक्षक का कार्य है।

शिक्षक विद्यार्थी के विषय ज्ञान से सम्बन्धित होते हुये भी विद्यार्थी के जीवन विकास से अधिक सम्बन्ध रखता है। उसके लिये व्यक्ति प्रमुख है विषय नहीं। विषय की शिक्षा वह व्यक्ति के विकास के हेतु देता है। विषय सीखाने में वह शैक्षणिक सामग्री बालक के मस्तिष्क में नहीं भरता किन्तु उन्हें जीवन से सम्बन्धित करता है जिससे उन में जीवन उपयोगिता हो तथा वे जीवन के लिये प्रयोग किये जा सकें। शिक्षक के लिये चरित्र एवं चरित्र विकास सर्व श्रेष्ठ है तथा प्रत्येक शिक्षा, प्रशिक्षण एवं अभ्यास उसी ओर आदेशित रहते है।

कोच का मुख्य कर्त्तव्य कोचिंग करने का है। कोच शिक्षक हैं, किन्तु शिक्षक, कोच नहीं। कोच का कार्य वहां आरम्भ होता है जहां शिक्षक अन्त करता है। शिक्षक के पास जब व्यक्ति शिक्षा के लिये आते हैं तो उस समय उनका विषय ज्ञान प्राय: शून्य के बराबर होता है। शिक्षक उन्हें प्रारम्भिक ज्ञान से आरम्भ कर जटिल ज्ञान तक पहुंचाता है। किन्तु जब व्यक्ति कोच के पास आता है तो वह पूर्ण प्रशिक्षित होता है जिसे विषय ज्ञान में पूर्ण दक्षता है तथा वह अपने कार्य में निपुण एवं प्रवीण होता। इस प्रकार के व्यक्ति जब कोच के पास आते हैं तो वे विषय सीखने नहीं किन्तु अपनी श्रेष्ठ एवं उच्च प्रकार की निपुणता में इस प्रकार के आदेश एवं सहायता की आशा करते हैं जिसके द्वारा वे उस विषय में मानव सम्भव श्रेष्ठतम सफलता प्राप्त करने में सफल हों। अत: कोच व्यक्ति के प्रशिक्षण, निपुणता, प्रणाली आदि का अध्ययन कर इस बात की खोज करते हैं कि कौन सी ऐसी वस्तु, प्रणाली, व्यवहार तथा

कार्य है जो उस के सर्वश्रेष्ठ सफलता में बाधक हो रहे हैं। डाक्टर की तरह वह शरीर के सूक्ष्म दोषों का पता चलाना चाहता है। साधारण आंखों के सामने वैसे ऐथेलिट या खेलने वाले के कार्य दोष रहित एवं पूर्ण प्रतीत होते हैं किन्तु कोच उस पूर्णता में उस विशेष छोटी अपूर्णता का पता चलाना चाहता है जिसके न होने से चित्र में विशेष परिवर्तन आ जाये। वह छोटी चीज अपने स्थान में छोटी अवश्य है किन्तु उस सम्बन्ध में उस छोटी चीज़ का परिणाम महत्वपूर्ण होता है।

उदाहरण के लिये संसार के एक बड़ी दूरी के दौड़ने वाले (Distance Runner) के लिये कहा जाता है कि उसका फौर्म, तकनीक सब कुछ जो उस दौड़ से सम्बन्धित थे सही थे तथा श्रेष्ठ रीति से सम्पन्न किये जा रहे थे किन्तु वह अपना दौड़ने का समय कम नहीं कर सक रहा था। उसके कोच ने उस के दौड़ का अध्ययन किया तथा यह दोष पाया कि दौड़ने में ऐथलिट के पैर मार्ग या ट्रैक के सही सिधाई से एक इंच के कुछ अंश मात्र दाहिने बायें अधिक पड़ते थे। इस दोष का निवारण किया गया और उसके दौड़ने के समय में विशेष अन्तर हुआ।

कोच का कार्य उच्च कोटि के विशेषज्ञ का कार्य होता है। किसी क्रिया में केवल उसे यही बताना होता है कि हाथों की क्रिया किस प्रकार हो, ऊँची कूद में गर्दन का झटका कैसे हो, पोलवाल्ट में पुशअप तथा पुलअप का कौन सा विशेष समय उस व्यक्ति के लिये उचित होगा। शिक्षक के सम्मुख वैयक्तिक विभिन्नता का प्रश्न अवश्य रहता है किन्तु कोच के सम्मुख वैयक्तिक प्राकृतिक विभिन्नता के अतिरिक्त विषय विशेषता एवं प्रशिक्षण की विभिन्नता रहती है तथा प्रत्येक व्यक्ति की दशा, अवस्था, परिस्थिति आदि के अनुसार उसे कार्यों में परिवर्तन कर श्रेष्ठ सफलता के लिये आदेश देना होता है। प्रत्येक व्यक्ति की रीति तथा प्रत्येक व्यक्ति के आदेश में भिन्नता होगी।

प्रशिक्षित करने वाले व्यक्ति (Trainer या Instructor) जो प्रशिक्षण (Training) देते हैं वे शिक्षक एवं कोच के मध्यस्थ हैं। वे न पूर्ण रूप से शिक्षक हैं न वे पूर्णरूप से कोच है। उनका मुख्य कर्त्तव्य शारीरिक तैयारी तथा आधार भूत तथ्यों को सीखाना तथा उनका अभ्यास कराकर शरीर

को अभ्यस्त एवं दक्ष (Conditioning) करना है जिससे विषय में निपुणता एवं प्रवीणता सरलता से तथा कम समय में प्राप्त हो सके।

प्रशिक्षण (Training) में एक प्रकार की शारीरिक क्षमता (Physical Fitness) प्राप्त होती है। शिक्षा (Education) में सम्पूर्ण व्यक्ति का विकास होता है। कोचिंग (Coaching) में व्यक्ति की क्रिया के विश्लेषण के द्वारा सुक्ष्मता पर ध्यान दिया जाता है।।

प्रशिक्षण (Training) से हृदय की माँसपेशियों के सामान्य स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है। रक्त प्रवाह, रक्त संचालन, पल्स रेट, आर्टरी का रक्त चाप, श्वास क्रिया तथा मांस पेशियों की प्रणाली पर महत्व पूर्ण प्रभाव पड़ता है। व्यक्ति यदि दैनिक व्यायाम करे जो उसकी आवश्यकता से सम्बन्धित हैं तथा उसके द्वारा एक प्रकार की शारीरिक क्षमता अवस्था प्राप्त करता है तो वह एक प्रशिक्षित व्यक्ति कहा जा सकता है।

The individual who participates regularly in exercise adapted to his needs and thereby attains a state of Physical fitness may be called a trained individual. The individual who allows his muscles to get soft and flabby and is in a poor Physical condition may be referred to as an "untrained" individual'.

प्रयोग के द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया है कि सर्वश्रेष्ठ दक्षत्ता "fitness" सहने की शक्ति की दक्षत्ता है, जिसका वास्तविक अर्थ है कि बिना थके हुये कार्य किया जा सके। इसकी कुंजी आक्सीजन (Oxygen) है क्योंकि यही शक्ति है। अदभुत बात यह है कि आक्सीजन को छोड़ प्रायः और दूसरी वस्तुयें शरीर में जमा की जा सकती हैं। इसलिये सर्वोत्तम व्यायाम वही है जो अधिक से अधिक आक्सीजन प्रयोग करें। उसे Aerobic कहते हैं। इसके द्वारा फेफड़े दक्ष होंगे, हृदय बलिष्ठ होगा तथा मांसपेशियों की शक्ति बढ़ेगी। इसके लिये दौड़ना, चलना, एक स्थान पर दौड़ना, साइकल चलाना या तैरना सर्वोत्तम व्यायाम है। इनको उस अवधि तक करना आवश्यक है जब तक शरीर में प्रशिक्षण परिवर्तन के परिणाम उत्पन्न होने लगें। यह प्रायः पांच मिनट के साधारण उपरोक्त कार्य के करने के पश्चात प्राप्त होता है या हृदय की धड़कन जब १५० प्रति मिनट हो जाये।

प्रदर्शन एवं कौशल तथा टीम के खेल का विश्लेषण

प्रदर्शन का अर्थ एक सही चित्र चित्रण करना है। यह एक नमूना है जो फोटो के सफाई के अनुसार होना चाहिए।

प्रदर्शन का विशेष उद्देश्य निर्धारित करना आवश्यक है। Determine the specific purpose of the demonstration.

(१) (i) एक नयी क्रिया के चित्र या उदाहरण या नमूना के लिए।

(ii) किसी कौशल का नमूना प्रदर्शन करना जिसके कारण कठिनाई हो रही हो।

(iii) किसी कौशल की उपयोगिता दूसरे स्थिति में दिखाने के लिए।

(iv) प्रेरणा देने के लिए।

(२) सही नमूना प्रस्तुत करना Set the right model.

(३) जो समूह में चतुर हैं उन्हें चेष्टा करने का अवसर प्रदान करना चाहिए। अनुमति उन्हीं को मिलनी चाहिए जिन्हें विषय का कुछ ज्ञान हो तथा सम्भव हो कि वे उस कार्य को प्रदर्शित रूप में कर सकें।

(४) जहां शिक्षक से कौशल प्रदर्शन में कुछ अच्छे शिष्य हों उन्हें उपयोग करना चाहिए।

(५) प्रदर्शन विद्यार्थियों के योग्यता के स्तर पर होना चाहिए।

(६) प्रदर्शन के पश्चात ही अभ्यास का आरम्भ होना चाहिए क्योंकि ऐसा न करने से भूल जाने तथा कुछ छूट जाने की संभावना हो सकती है।

(७) आवश्यकता से अधिक समय प्रदर्शन के लिए नहीं लेना चाहिए। आवश्यकतानुसार प्रदर्शन करने के पश्चात अभ्यास करना चाहिए। प्रदर्शन के लिए उतना समय आवश्यक है जिसमें छोटी से छोटी चीज भी भलीभांति दिखा दी जाए तथा समझा दी जाए। उसके बाद अभ्यास में लग जाना चाहिए।

(८) बड़ी गलतियों को दिखाना चाहिए उसके पश्चात उसकी सही अवस्था बतानी चाहिए।

(९) साधारण खेल की गति से प्रदर्शन दिखलाना चाहिए जब कि कौशल बहुत अधिक गतिशील नहीं है या देखने या समझने में बहुत जटिल नहीं है। किन्तु त्रुटियों तथा गलतियों के निवारण या सुधार में वहुत मन्द गति का प्रयोग करनी चाहिए।

(१०) शिष्यों को यह बताना कि किसी विशेष चीज़ के करने की क्या आवश्यकता है बहुत महत्वपूर्ण है।

(११) प्रदर्शन करने में छोटे शब्द तथा संकेत का प्रयोग करना चहिए न कि बड़े बड़े व्याख्यानों का।

(१२) विद्यार्थियों को प्रदर्शन के लिए तैयार करना चाहिए। उन्हें बताना चाहिए कि क्या प्रदर्शन किया जायेगा तथा उसकी उपयोगिता क्या होगी।

(१३) इस बात का निश्चय होना आवश्यक है कि सब भली भांति देख सकते हैं।

(१४) कभी कभी जब कक्षा प्रदर्शन देख रही हो तो उनसे अनुकरण के लिए कहना चाहिए।

(१५) विश्लेषण का उत्तम पूर्णत्व प्रयोग में लाना चाहिए। जितने विश्लेषण के टुकड़ों का अभ्यास हो वह पूर्ण से सम्बन्धित होना चाहिए।

(१६) विषय सम्बन्धी प्रश्नों के लिये अनुमति देनी चाहिए।

(१७) प्रदर्शन के लिए अति उत्तम नहीं किन्तु साधारण साधन होने चाहिये। प्रदर्शन साधारण साधन के द्वारा होना चाहिए।

(१८) प्रदर्शन का मूल्यांकन करना चाहिये।

कौशल एवं टीम के खेल का विश्लेषण (Analysis of skills and team play)

विश्लेषण कोचिंग का आधार है।

(१) कोच को प्रत्येक स्पोर्टस का विश्लेषण कर लेना है, जिससे प्रत्येक कौशल के आधारित सिद्धान्त मालूम हो जायें चाहे वह व्यक्तिगत हो या टीम के।

(२) अनुभव से साधारण गलतियों, समस्याओं तथा हल का अध्ययन उसे हो जाता है।

(३) जो गलत गति हो उसको संकेत करना आवश्यक है।

(४) उसे इस बात का निर्णय करना है कि वह क्यों गलत है।

(५) सही या सुधार करने के पहिले कोच को निश्चय हो जाना चाहिये।

(६) उसे आत्मविश्लेषण के लिये उत्साहित करना चाहिये किन्तु कार्य करने के ठीक समय पर नहीं।

(७) कोच की योग्यता यह होनी चाहिये कि वह कार्य कर्त्ताओं में प्रकृति का विश्लेषण कर सके जिससे सिखाने की सही प्रणाली वह व्यवहार में ला सके।

(८) कौशल में विश्लेषण के अतिरिक्त उसे उस क्रम का भी विश्लेषण करना है जिस क्रम के अनुसार कौशल सिखाया जायेगा अर्थात किस कौशल पर अधिक ध्यान देना है या किस कौशल को कितना समय दिया जायेगा।

(९) व्यक्तिगत कठिनाइयों का विश्लेषण तथा आधारभूत तत्वों को व्यक्ति के अनुकूल करना उसकी योग्यता का एक विशेष गुण है तथा यह अत्यन्त आवश्यक है।

खिलाड़ियों का चुनाव (Selection of players)

(१) प्रत्येक को चेष्टा करने के लिये उत्साहित करना चाहिये।

(२) अन्तिम चुनाव को जितना स्थगित कर सकें करना चाहिए।

(३) जितने अधिक लोग हो सकें टीम में रखे जायें।

(४) खेल के गुणों को देखते हुए तथा कौशल के लिये भी चुनाव होना चाहिये।

(५) सम्पूर्ण योग्यता के आधार पर यह चुनाव होना चाहिये तथा स्थान का ध्यान रखते हुए भी चुनाव होना चाहिए।

(६) अपने खेल की प्रणाली का ध्यान तथा उसकी आवश्यकताओं का ध्यान रखना चाहिए किन्तु यदि सामग्री परिवर्तन की आवश्यकता दिखलाती है तो अपनी प्रणाली में परिवर्तन करना आवश्यक है।

(७) किसी प्रकार का पक्षपात या पक्षपात करने के लिये प्रभाव का असर कभी नहीं होने देना चाहिए।

(८) अपना चुनाव का अन्त नहीं कर देना चाहिये। विद्यार्थियों को अवसर देना चाहिए कि वे आगे बढ़ सकें।

खिलाड़ियों को स्थान देना (Placement of Players)

(१) टीम की भलाई के लिये उनको स्थान देना।
(२) व्यक्तिगत इच्छा जहां तक हो सके ध्यान में रखना।
(३) खेल में खेलों के अनुसार स्थान देना है।
(४) इस अवस्था के अनुभव तथा प्रदर्शन।
(५) सब स्थान खुला रखें, कप्तान का भी।

खिलाड़ियों की देख भाल तथा पर्याप्त तैयारी की दशा (Care nd conditioning)

(१) केवल खेल खेलने से पर्याप्त तैयारी की दशा नहीं हो सकती।

(२) प्रत्येक अभ्यास का समय तैयारी की दशा के लिए भी होना चाहिये।

(३) मौसम के आरम्भ का अभ्यास विशेषतः तैयारी की दशा के लिये प्रयोग करना चाहिए।

अभ्यास शीघ्र आरम्भ करना चाहिए और मौसम के आरम्भ ही से कौशल के सीखने के अतिरिक्त तैयारी की दशा के लिये और दूसरी चीजों में

भाग लेना आवश्यक है, जैसे, वजन का प्रशिक्षण, दौड़ना, कूदना, जिमनास्टिक, सांस, शक्ति तथा मांस पेशियों के लिए जिससे व्यक्ति आइटम के लिये ठीक हो जायें। जब मौसम न भी हो तब भी ये अधिक काम करना आवश्यक है इसे रोकना नहीं चाहिए।

(४) स्पोर्ट का अध्ययन करना तथा उन गुणों पर अधिक ध्यान देना जिनकी आवश्यकता है।

(५) तैयारी की दशा को अधिक महत्व देना चाहिये। यहां तक कि इसका महत्व खेल तथा स्पोर्ट्स के समान होना चाहिये।

(६) शक्ति के विशेष मूल्य का ध्यान रखना चाहिये तथा वजन प्रशिक्षण को ध्यान में रखना चाहिये। शक्ति प्रत्येक कार्य के लिये आवश्यक है। अब यह प्रमाणित है कि बगैर वजन प्रशिक्षण के कोई व्यक्ति अपनी ऊँची श्रेणी नहीं प्राप्त कर सकता है।

(७) आवश्यकता से अधिक काम न कराया जाये।

(८) तैयारी की दशा का प्रशिक्षण क्रमशः उन्नति से होना चाहिये।

(९) अनेकों प्रकार के कार्य का प्रयोग करना चाहिए।

(१०) प्रशिक्षण में कुछ दिन ऐसे होना चाहिये जिस दिन हल्का कार्य हो और विश्राम मिले।

(११) पूरे साल तैयारी की दशा का प्रशिक्षण होना चाहिये।

(१२) प्रतियोगिता के पहले दिन तथा बाद में हल्का काम तथा विश्राम देना चाहिये।

(१३) कठिन परिश्रम के पहले सर्वदा शरीर गर्म कर लेना चाहिये।

गर्म करना या तैयार होना

यह सर्वत्र देखने में आता है कि किसी कार्य के पूर्ण रूप से कार्यशील

होने के लिये तैयारी या गर्म करने की आवश्यकता होती है। सर्वोच्च परिणाम प्राप्त करने के लिये उस ओर क्रमशः बढ़ते हैं। मोटर के तेज़ चलाने के लिये गति क्रमिक रूप से बढ़ायी जाती है, डारविन का कहना था कि जन्तु प्रत्येक किसी बड़ी चेष्टा के लिये कितनी ही प्रकार की गति करता है जिसके द्वारा उस कार्य के करने में सहायता प्राप्त होती है। मनुष्य जब सुबह सो कर उठता है तो अपने अंगों को खींचता है। यदि किसी के साथ वह क्रोध के वातावरण में पड़ जाता है तो अपने हाथ एवं पैर से अनेक गति करता है जिसकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं होती। ऐसा प्रतीत होता है कि इस भाव प्रदर्शन का कुछ प्रयोजन अवश्य है। घुड़ दौड़ के घोड़े बाज़ी के पहले मीठा पोइया (Mild gallop) करने जाते हैं। खेलने वाले, ऐथेलेटिक्स में भाग लेने वाले आदि व्यक्ति अपने कार्य के कुछ गति करते हैं। इन्हीं सब कार्यों का तात्पर्य कार्य के पूर्व शरीर के गर्म करना या तैयारी की अवस्था है।

मनुष्य अपनी दूसरी चेष्टा को सदैव प्रथम से उत्तम पाता है। शरीर क्रिया विशेषज्ञों ने प्रयोग से यह निष्कर्ष निकाला है कि प्रथम मांसपेशियों का खींचाव उस के क्रम में उतना शक्तिशाली एवं पूर्ण नहीं होता जो तत्कालिक उस के पश्चात होते हैं। यह एक निश्चित विषय है कि शारीरिक परिश्रम एवं प्रशिक्षण के पहले शरीर गर्म कर लिया जाता है तथा करना अनिवार्य है। यह गर्म करने की अवस्था हल्के व्यायामों के द्वारा की जा सकती है। इस के लिये स्वतंत्र हाथ या पैरों के व्यायाम उपयुक्त होते हैं। साधारण तेज गति के कारण रक्त संचालन बढ़ जाता है तथा अंगों तक पहुंचता रहता है तथा मांसपेशियों के उचित कार्य के लिये शक्ति प्रदान करता है। इन सामान्य व्यायामों के साथ ही ऐथलिट या खेलने वाले के लिये अपनी विशेष क्रिया के आधार भूत तथ्यों में प्रयोग में आने वाले विशेष अंगों या गति के द्वारा शरीर कार्य के लिये गर्म या तैयार किया जा सकता है।

दौड़ने वाले अपने को मध्यम गति से दौड़ कर ही गरम करते है या स्थान पर खड़े हो कर दौड़ते है। हर्डल करने वाला व्यक्ति कुछ दौड़ता है तथा विशेष पैरों या कमर की कसरत से अपने को गर्म करता है। ऊँची कूद के लिये पैरों के फैलाने तथा कुछ दौड़ने से गर्म किया जाता है। बासकेट बौल खेल के

लिये शूटिंग, ड्रिबलिंग, पासिंग आदि से शरीर गर्म किया जाता है। फुटबौल के खेलने वाले अपने शूटिंग तथा पासिंग से अपने को गर्म करते हैं।

यह निश्चित है कि कोई भी कार्य हो उसमें शरीर की उच्चत्तम तैयारी की आवश्यकता होती है जिस में शक्ति, तीव्रता तथा समन्वय जो शरीर के उच्चत्तम तैयारी के गुण हैं अपनी श्रेष्ठता तथा आवश्यकता के अनुसार प्रदर्शित करें। गर्म करने में इन के ध्यान से कार्य आरम्भ करना चाहिये।

स्थिर एवं गति पूर्ण व्यायाम

व्यायाम दो प्रकार के होते हैं। स्थिर एवं गति पूर्ण।

(१) **स्थिर व्यायाम** Static or Isometric Exercises :—वे होते हैं जिन में कार्य करते समय मांसपेशियों की गति नहीं होती। कार्य होता रहता है तथा मांसपेशियों की शक्ति का प्रयोग होता रहता है किन्तु मांसपेशी एक अवस्था में रहते हैं। वेट लिफ्टिंग में इस प्रकार की मांसपेशियों का कार्य होता हैं। पुश अप की अवस्था या पुल अप की अवस्था में मांसपेशियों की यही अवस्था रहती है। इस प्रकार के व्यायाम में मांसपेशियों के व्यायाम की अवस्था स्थिर की जाती है। यह प्रकृतिक नियम है कि वस्तु उस अवस्था को ग्रहण करती है जिन में उन्हें स्थित किया जाता है। मांसपेशियां इस प्रकार अपने कार्य करने की अवस्था ग्रहण करती हैं। इस कारण तथा शरीर के विभिन्न स्थितियों के प्रशिक्षण के कारण कुछ मांसपेशियों को शक्ति शाली बनाना आवश्यक होता है तथा कुछ को खींचना आवश्यक होता है। इस प्रकार के व्यायाम के लिये स्थिर व्यायाम अति उत्तम सिद्ध होते हैं।

(२) **गतियुक्त व्यायाम** Isotonic Exercises :—दूसरे प्रकार के व्यायाम होते हैं जिन में व्यायाम के समय मांसपेशियों में गति होती हैं अर्थात मांस पेशी परस्पर तनाव या ढ़ीलापन रखती हैं। स्थिर प्रकार के व्यायाम को छोड़ कर और अन्य व्यायामों में यह सत्य है। जिस व्यायाम के कारण मांस पेशियों में गति होती है उसे गति युक्त Isotonic Exercises or kinetic कहते हैं। इस प्रकार के व्यायाम में गति पर बल दिया जाता है तथा क्रिया ताल से करना आवश्यक हो जाता है जिससे उचित शरीर क्रिया प्रभाव उत्पन्न हो

सके । अधिक विकसित मांसपेशियों के समूह को इन व्यायामों के द्वारा खींचना आवश्यक होता है तथा जो मांशपेशी विकसित नहीं हुई हैं उनको इन्हीं के द्वारा विकसित भी किया जाता है।

फार्टलेक या स्पीड प्ले

फार्टलेक एक तीव्र गति का खेल है जो दौड़ने वालों के लिए विशेष तथा किसी भी ऐथलिट की तैयारी के प्रशिक्षण के लिये बहुमूल्य सिद्ध हुआ है। इसका आविष्कार स्वीडेन में Gosta Holmer के द्वारा जो स्वीडेन के ओलम्पिक कोच थे हुआ था। स्वीडेन के लम्बी दौड़ के प्रतियोगियों को इस से अधिक लाभ अर्जित करने के कारण इस खेल की प्रथा की ख्याति बढ़ गयी तथा स्वतंत्र प्रयोग में आने लगा। इस खेल की प्रणाली के द्वारा तीव्रता एवं सहने की शक्ति प्राप्त होती है।

फार्टलेक खेल की दौड़ यदि क्रौस कन्ट्री (Cross Country) हो जहां ज़मीन मुलायम हो तो उत्तम है। जहां यह सुविधा प्राप्त न हो, वहां खेल के मैदान के चारों ओर दौड़ने का स्थान बना लेना चाहिए। प्रशिक्षण प्रत्येक दिन एक से दो घन्टे की अवधि का होना चाहिये जिसमें निम्नलिखित क्रमिक तालिका का अनुसरण करना चाहिये।

(१) साधारण सरल दौड़ ५-१० मिनट तक विशेष कर गर्म करने के लिए।

(२) स्थिर तीव्रगति दौड़ एक से दो किलोमीटर।

(३) तीव्रगति से चलना ५ मिनट।

(४) आसानी से दौड़ना जिस के बीच बीच में ५५-६५ गज़ का विंड स्प्रिंट्स (Wind-Sprints) होगा जब तक कुछ थकान का अनुभव न हो।

(५) सरलता से दौड़ना तथा बीच बीच में तीन चार तेज़ कदम लेना चाहिये (ये कदम उस प्रकार के होने चाहिए जब ऐथलिट दौड़ में किसी प्रतियोगी से आगे बढ़ने की चेष्टा करता है जो उससे आगे निकलने का प्रयत्न

कर रहा हो। शरीर का झुकाव शीघ्रता से आगे की ओर होता है तथा तीन चार आकस्मिक तेज़ कदम उठाये जाते हैं)।

(६) चढ़ाई पर १६५-२२० गज़ पूर्ण तीव्रता से।

(७) नं० ६ के पश्चात १ मिनट तक तेज़ी से चलना।

यही अभ्यास प्रशिक्षण घन्टे के अन्त तक होते रहना चाहिये। ध्यान रहे कि अभ्यास के पश्चात थकावट का अनुभव न हो किन्तु शक्ति एवं उत्तेजना का अनुभव हो।

इसका सही प्रयोग व्यक्ति के ऊपर, उसके समय, शक्ति तथा मौसम के पक्ष पर निर्भर है।

मौसम के मध्य (mid Season) प्रशिक्षण में कुछ अन्तर होगा।

फार्टलेक का एक और अनुवाद एवं विकास S. A. Tomlin के द्वारा दिया गया है।

दौड़ने वाले, सप्ताह में दो बार फार्टलेक का, प्रारम्भिक प्रशिक्षण के समय अभ्यास करते हैं तथा प्रतियोगिता के अभ्यास पर सप्ताह में एक बार।

इस में तीव्रता, ट्रैक पर दौड़ में २२० गज़ के आकस्मिक तेज़ी के दौड़ से लायी जाती है जो सप्ताह में दो या तीन बार किया जायेगा। दौड़ने वाले इस प्रकार की आकस्मिक तेज़ी क्रम से लगातार करता है जिस की तीव्रता उस साधारण दौड़ की तीव्रता से अधिक होती है।

उदाहरण के लिये ४ मीटर २४ सेकेंड में एक मील दौड़ने वाला २२० गज़ प्रायः ३३ सेकेंड में दौड़ेगा। उसकी तीव्रता का प्रशिक्षण २२० गज़ २८/२९ सेकेंड में होगा। वह २२० गज़ दौड़ता है, फिर आरम्भ करने के स्थान पर चल कर लौटता है और फिर उसी प्रकार दौड़ता है। यह उस समय तक चलता रहता है जब तक उसे कुछ थकान का अनुभव न हो। प्रशिक्षण ३० मिनट के साधारण सरल दौड़ के पश्चात समाप्त हो जाता है।

अन्य दिनों के प्रशिक्षण में १ से २ घंटे तक सरल दौड़ एवं सरल चलना

होता है। व्यक्तिगत इच्छा के अनुसार व्यायाम में सरलता या कठिनता लायी जाती है तथा थकान होने के पूर्व समाप्त कर दिया जाता है।

Gosta Holmer प्रशिक्षण की तालिका इस प्रकार देते हैं जिस से यह चार प्रगति पूर्ण क्रियाओं की अवधि में विभाजित है। महीने स्वीडेन के मौसम के अनुसार हैं जो हमारे मौसम से कुछ पीछे होते हैं।

(१) **तैयारी की अवधि** (Conditioning Period) जनवरी से अप्रील के मध्य तक। इसमें चलना, सरल दौड़ एवं अन्दर जिमनास्टिक व्यायाम होगा।

(२) **मौसम के पूर्व** (Pre Season) अप्रैल के मध्य से मई के मध्य तक दौड़ने का कार्य तथा फार्टलेक जिसमें कुछ तीव्रता का प्रशिक्षण हो।

(३) **प्रतियोगिता के पूर्व प्रारम्भिक अवधि** (Early Competition Season : मई के मध्य से जुलाई के आरम्भ तक। प्रशिक्षण जैसे ऊपर दिया जा चुका है तथा सप्ताह में एकबार प्रतियोगिता।

(४) **प्रतियोगिता का मौसम** (Competition Season) : जुलाई के आरम्भ से सितम्बर तक दौड़ के प्रतियोगिता के अनुसार प्रशिक्षण।

फार्टलेक की उपयोगिता :

(१) यह कार्य करने की एक प्राकृतिक प्रणाली है। कुछ 'वार्म अप' करने के पश्चात दौड़ उस प्रकार होती है जैसे आन्तरिक इच्छा हो थोड़ी देर की जौगिंग के या चलने के पश्चात इतनी शक्ति पुनः प्राप्त होती है जिससे तीव्रता का कार्य सम्भव हो सके। यदि समूह के व्यक्ति एक ही योग्यता के हैं तो वह अपने को थकाते नहीं है क्योंकि किसी प्रकार की वाह्य दबाव उन पर नहीं होता तथा वे वही करते है जो करना चाहते है।

(२) यह दौड़ने वालों में आत्म निर्भरता एवं उपाय आयोजित करने का गुण विकसित करता है। कोच की अनुपस्थिति में ऐथलिट को स्वयं अपना कार्य स्थापित करना पड़ता है।

(३) इसके द्वारा विभिन्न प्रतियोगिता की दूरियों का अभ्यास सम्भव होता है।

(४) इसके प्रोत्साहक इसे मानसिक एवं शारीरिक गुणों से पूर्ण पाते हैं।

(५) दैनिक प्रशिक्षण तालिका समय के अनुमान से स्थापित की जाती है प्रशिक्षण में दूरी की चेतन्यता नहीं रहती न थकान ही का अनुभव होता है।

(६) प्रशिक्षण मन भावना होता है तथा प्रतियोगिता के लिये उपयुक्त तैयारी हो जाती है।

(७) प्रशिक्षण प्राकृतिक प्रकार एवं प्राकृतिक वातावरण में होता है।

फार्टलेक के दोष :

(१) अभ्यास का विशेष निरीक्षण नहीं होता।

(२) दौड़ की चलाकियां एवं चतुरता सीखने का अवसर इस में प्राप्त नहीं होता। कदम के कार्य का सही प्रशिक्षण नहीं हो पाता।

(३) यह तीव्रता के अन्तिम सीमा पर बल नहीं देता तथा विकास का प्रशिक्षण मन्दगति से होता है।

(४) व्यक्तिगत दौड़ने वाले के प्रति विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है।

(५) समय की प्रतिदिन अधिक आवश्यकता होती है।

(६) प्राकृतिक वातावरण सर्वत्र उपलब्ध नहीं होता।

वजन प्रशिक्षण (वेट ट्रेनिंग)

ऐथेलेटिक्स की योग्यता प्राप्त करने के लिये वजन प्रशिक्षण एक मान्यता प्राप्त पद्धति है। वजन प्रशिक्षण के प्रति अनेक मिथ्या धारणायें रही हैं किन्तु वे अज्ञानता के कारण थी। कितनों का विचार था कि इस प्रशिक्षण के कारण विभिन्न शारीरिक दोष जैसे हृदय का रोग, हार्निया, मोटापन, कई अंगों का ढीलापन आदि हो जाता है किन्तु ये सत्य नहीं हैं।

आधुनिक कोचिंग प्रशिक्षण में इस बात का बहुतायत से एवं बहुमूल्य प्रयोग किया जा रहा है। इसका प्रयोग एक प्रकार से सहायक व्यायाम (assistance Exercise) की तरह किया जाता है। इस क्रिया में प्रगति सरल से जानी जाती है। कार्य जो दिया जाता है उसका उचित नियन्त्रण सम्भव है। रोक तथा पुनरावृति का समायोजन इस प्रकार किया जा सकता है कि विभिन्न प्रकार के शारीरिक तथ्यों जैसे शक्ति या सहन शक्ति का उत्पादन सम्भव हो। इस के साधन सुलभ हैं, अधिक स्थान की आवश्यकता नहीं होती तथा मौसम से किसी प्रकार की बाधा नही होती। चाहे व्यक्ति तेज़ दौड़ने वाला 'स्प्रिंटर' हो जो कम समय में तेज दौड़कर अधिक दूरी तय करना चाहता हो, हैमर फेंकने वाला हो जो अधिक दूरी अर्जित करना चाहता हो, या फुटबौल का सेन्टर फारवर्ड हो जो अधिक गोल करना चाहता है, प्रत्येक के लिये वजन प्रशिक्षण लाभकर सिद्ध होता है इसके अतिरिक्त प्रशिक्षण सम्पूर्ण नहीं समझा जाता।

वर्तमान समय में संसार में अनेक उच्चकोटि के एथेलिट एवं खेलने वाले हैं। उनके स्टाइल तथा कार्यों के अध्ययन से यह पता चलता है कि उनके तकनीक में बहुत कम अन्तर होता है। प्रश्न यह उठता है कि कौन सी वस्तु है जो किसी एथलिट को दूसरे से लघु मात्रा ही में उत्तम कर देतीं है। निष्कर्ष यही होगा, कि अधिकांश के कारण, उच्च शारीरिक दशा है। उच्चत्तम शक्ति, तीव्रता एवं स्तम्भन शक्ति सर्वोच्च स्थान प्राप्त करने के लिये अधिक सहायक होतीं हैं तथा यह नि:संकोच कहा जा सकता है कि जितना ही प्रतियोगिता का स्तर ऊँचा होगा उतनी ही अधिक क्षमता की आवश्यकता होगी।

वजन प्रशिक्षण में व्यायाम की कठिनता अधिक वजन के रोक के द्वारा या अधिक पुनरावृति के द्वारा की जाती है। इनके द्वारा अधिक वजन देना (Over load) जो बलिष्ठ एवं अधिक बड़ी मांस पेशियों के निर्माण के लिए आवश्यक है सम्भव होती है। इस प्रकार व्यायाम करने की अन्य पद्धतियां हैं। जैसे मांसपेशियों को भिन्न स्थान में स्थित कर देना जिससे वे मशीन के प्रकार का कार्य करने में कम निपुण हों किन्तु कार्य अधिक करना पड़े। उपरोक्त दोनों पद्धतियों को मिश्रित कर अति उत्तम परिणाम प्राप्त किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त एक अन्य उत्तम प्रथा भी है। इसके समझने के लिये बल (Strength) तथा शक्ति (Power) के अन्तर को समझना अति आवश्यक है। बल, शरीर की अधिक शक्ति प्रवाहित करने की योग्यता है। यह एक जटिल गुण है जिस में इच्छा शक्ति, मांस पेशियों के पौष्टिक दशा तथा अनेक तन्तु जो प्रभावित होते हैं, सम्मिलित हैं।

शक्ति बल की वह योग्यता है जिसके प्रवाह के द्वारा तीव्र आकस्मिक शारीरिक गति पूर्ण चेष्टा के साथ गतिवान की जा सकती है। इस में बल (Strength) तथा तीव्र गति (Velocity) मिश्रित होती हैं तथा ऊच कोटि की शक्ति के लिये इन दोनों का पर्याप्त मात्रा में उपस्थित होना आवश्यक है। उदाहरण के लिये साधारण घुटना मोड़ने के व्यायाम में बल प्राप्त करने की अच्छी गति होती है किन्तु यदि यही व्यायाम सामने कूद के घुटना मोड़ने के रूप में किया जाय तो शक्ति प्राप्त होगी। गति दोनों समान हैं किन्तु पिछले व्यायाम में बल एवं तीव्रता मिश्रित होकर ऐसी शक्ति को प्रवाह करती है जिसकी एथलिट को प्रयोजन हैं।

वजन प्रशिक्षण में इसी बल एवं तीव्रता का प्रयोग होता है। प्राय: प्रशिक्षण में तीव्रता पर ध्यान नहीं दिया जाता। कार्य की पुनरावृति में अधिक वजन का योग करने के अतिरिक्त उस कार्य को कम समय में करने की चेष्टा करना अति आवश्यक है, जिससे तीव्रता का प्रशिक्षण हो। कार्य के बीच के वास्तविक स्थिति में आने की अवधि (Recovery Period) का भी समय ले कर, उसे कम करने की चेष्टा करनी चाहिये। प्रत्येक व्यक्ति के लिये एक समय का ध्येय होना चाहिये तथा व्यायाम का वजन या पुनरावृति ध्येय के अन्तर्गत लाने की चेष्टा करना चाहिये।

वजन प्रशिक्षण का एक और प्रकार है। गर्म करने के व्यायाम के पश्चात एक समय मान लिजिये १५ मिनट तीव्रता के प्रशिक्षण के लिये पृथक कर देना चाहिये। इस अवधि में तीव्रता पर ध्यान दे कर कार्य करना चाहिये तथा इस अवधि में जितना अधिक कार्य किया जा सके करना चाहिये। इस प्रकार का कार्य कम से कम सप्ताह में दो बार अन्य अभ्यास के साथ करना आवश्यक है। शक्ति प्राप्त करने के लिये बल एवं तीव्रता से कार्य करना आवश्यक है। वजन प्रशिक्षण के द्वारा यह बहुत सम्भव है।

स्पोर्ट्स के कार्य में सहयोग देने वाले व्यायाम

(i) **आधा झुलाव** (Half Swing) :—पैरों में फासला लेकर खड़े होना तथा पैरों के बीच में डम्बल सीधे रखना । पीठ को सीधा रखते हुये घुटनों को मोड़ना तथा डम्बल उठाना । सीधे खड़े होते हुये हाथ सीधे रहेंगे तथा कंधे के सीध में शरीर के सामने वजन उठाया जायेगा । आंख मुट्ठी के बीच पर हो क्योंकि इस स्थान पर हाथों को बदल कर वजन नीचे करना है । बिना वजन जमीन पर रखे हुये उसी प्रकार डम्बल सामने लाना तथा हाथों को बदलना है । ताल लगातार बना रहे ।

इस व्यायाम की प्रगति में डम्बल को कंधे के सीध में न ले जाकर सिर के ऊपर ले जाये । हाथों को बदलने की आवश्यकता नहीं, पैरों की गति पैरों को आगे पीछे रखना जैसे Clean and Jerk में किया जाता है ।

(ii) **प्रेस एण्ड स्क्वाट** (Press and Squat) :—बारबेल सीने के सामने रखकर घुटना मोड़ना । पैरों को सीधा करना तथा बारबेल उसी समय सिर के ऊपर ले जाना । फिर हाथों को मोड़ कर बारबेल सीने पर लाना तथा घुटना मोड़ना ।

अनेक स्पोर्टस में शक्तिशाली पैरों को आगे ले जाने की गति की आवश्यकता होती है । आगे कूद कर घुटना मोड़ना (Jumping Squat) इसके लिये अत्यन्त ही उत्तम है । इसकी दूसरी रीति बारबेल गर्दन के पीछे रख कर करना है । इस की पुनरावृति में बारबेल ऊपर सीधे करके कूदना है ।

(iii) **सरकिट ट्रेनिंग** (Circuit Training) :—पैरों में दूरी रख कर लटकते हुये हाथों में हलके डम्बल के साथ बेन्च पर कूदना । व्यायाम करने वाला पैरों में दूरी रख कर एक नीची बेंच पर खड़ा होता है । वह ऊपर कूदता है तथा दोनों पैरों से फिर बेंच पर आता है, तथा तत्काल ही पैरों को खोल कर जमीन पर आता है । इस प्रकार का पैरों में दूरी रखते हुये कूदना तीव्र गति से किया जाता है ।

(iv) **पैरों मे दूरी रखते हुये कूद कर उकड़ू होना** [Stride jump to Crouch] :—पैरों को खोलकर खड़ा होना । कूद कर पैरों को मिलाना तथा

घुटनों को मोड़ कर उकड़ू होना। इस उकड़ू अवस्था से सीधे हवा में कूदना तथा पैरों को खोलते हुये प्रारम्भिक अवस्था में आना। इस व्यायाम में बारबेल गर्दन के पीछे भी प्रयोग किया जा सकता है तथा बेंच या नीची कुर्सी पर ऊपर नीचे कूदना (Step Test) हो सकता है। व्यायाम के करने में दो बातों पर ध्यान देना चाहिये। बेंच या कुर्सी पर खड़े होने के समय पैर बिलकुल सीधे हों तथा बीच की अवस्था में कदम बदला जाये जिस से पिछला पैर आगे हो जाये।

ऊपर कदम लेना (Step up) में एक पैर बेन्च पर रख कर तथा शरीर आगे झुकाने से तेजी लायी जा सकती है। पिछले पैर से धक्का दिया जा सकता है तथा ऊँचे किये गये पैर से कड़ा ठेलना होना चाहिये जिससे बेंच पर सीधी अवस्था हो। दोनों पैरों को बराबर प्रयोग करना चाहिये। पेट का व्यायाम भी होना आवश्यक है।

(v) **लेट कर बैठना** (Sit up or curls) लेटना—घुटनों को मोड़ते हुये बैठना पीठ मुड़ी हुयी गोल हो फिर लेटना तथा पैरों को भी सीधा करना। सिर के पीछे एक डिस्क (Disc) रखा जा सकता तथा पैरों में वजन भी डाला जा सकता है।

इसकी दूसरी प्रकार—शरीर मोड़ कर बैठना तथा दाहिने कोहनी से बायां मुड़ा हुआ घुटना छूना तथा इसके विपरीत करना।

(vi) **एक हाथ से नाव खेने की हरकत करना** :—इसके साथ शरीर मोड़ने की क्रिया करना। शरीर आगे मोड़ा जाता है जिससे जमीन के समानान्तर हो तथा एक हाथ में डम्बल जोर से पकड़ा हुआ हो। वजन शरीर की ओर हाथों को मोड़ते हुए लाया जाता है तथा शरीर कमर से मोड़ा जाता है जिस से सिर तथा कंधे बगल में मुड़ जाते हैं यद्यपि शरीर की आगे झुकी हुयी अवस्था होती है।

(vii) **एक हाथ से वजन ठाना तथा ऊपर ले जाना** [Single hand heave press or heave jerk] :—दाहिने हाथ में वजन पकड़ कर खड़ा होना, घुटना थोड़ा मोड़कर दाहिनी ओर थोड़ा झुकना, तेजी से पैरों को

तथा कमर को सीधा करना तथा वजन को सिर के ऊपर जितनी तेजी से हो सके ले जाना, पैर तथा कमर की तेजी महत्वपूर्ण है। सम्पूर्ण क्रिया तेजी से आकस्मिक रूप में होना चाहिए।

(viii) **सिंगल हैंड स्नाच** (Single hand snatch) :—बारबेल पैरों के सामने होते है। पैरों को बार के नीचे लाना ? बार को बीच में पकड़ कर ऊपर ऊँचा जितना ऊँचा तथा तेजी हो सके खींचना। शरीर सीधा करते हुये बार सब से ऊँची अवस्था में पहुंच जाता है। वजन ऊंचे पर पहुंचते ही शरीर उस के बिलकुल नीचे होना चाहिये।

Webster की क्रिया तालिका वजन प्रशिक्षण के लिये उपयुक्त है निम्नलिखित हैं।

Schedule

Basic Schedule suitable for all sportsmen commencing weight Training.

High Pull up (10)
Curl (10)
Press behind neck (10)
Rowing Motion (10)
Press on bench (10)
Straight Arm Pullover (10)
Stiff leg Dead lift (12)
Abdominal raise (15—20)

General Purpose schedule for the busy athlete.

Cleans (10—12)
Heave press (3×10)
Jumping Squat (10+8+5) (Increase weight for each set and ternate each set with bent arm pullover)
Bent Arm Pullover (3×10)
Sit up and Twist (3×15)

Runners (Long distance & Hurdlers excluding)

All Press (3×10)
Bent Fwd curls (3×10)
Fast Squats (2×15)
All Pull over to thighs (2×10)
Leg raise (15)

Snatch (8)
Press (3×10)
All Curls (3×10)
Jumping Squat (12+10+5)
Swing bell Pull over (3×10)
Sit up and Knee raise (12—15)

Jumpers

One hand swing (12)
Hyper extension (2 x .2)
Squat (3 x 5)
Lat. Rs. Ly. (3 x 10)
Jack Knife (x 10)

Two hand swing (10)
Good morning Ex. (3 x 10)
Fast half Squat (10+10+5)
Flying Ex. (3 x 10)
Bench sit ups (2 x 15)

Throwers

Half swing (10)
One hand Jerk (w'out spilt) each arm (3 x 5)
Rowing Motion (3 x 10)
Jumping Squat (10+5+5
Flying Ex. (3 x 10)
Side Bends (15 x 2)
Sit up and Twist (10 x 2)

Squat Clean (10—12)
Heave press (5+3+2+1)
High Pull up (3 x 8)
Fast half Squats (3 x 10)
Straight Arm Pullover (3 x 10)
Single Arm Rowings (2 x 8)
Incline sit ups (12 x 15)

Long distance Runners

Press and Squat (15)
High Pull ups (3 x 25)
Step ups (3 x 20)
Heel Raises (2 x 30)
Abdominal Raise (30)

Squat clean (15—20)
Shrugs (2 x 20)
Lateral Rs (3 x 20—30)
Stride Jump to crouch (3 x 20)
Doubey Hell Raise (3 x 30)
Jack Knife (2 x 20—30)

Swimmers

Press and Squats (10—15)
Upright Rowing (2 x 12)
Jumping Squat (10+10+5)
Flying Ex (3 x 10)
Good morning (3 x 10)
Jack knife (3 x 10)

One Hand swing (10 each arm)
Rowing Motion (3 x 10)
Fast Front Squat (12+8+6)
Bent Arm Pullover (3 x 10)
Hyper extensions (3 x 12—15)
Incline sit ups (3 x 12)

Boxers

High Pull ups (10)	Bench Press (3×8)
Incline Press (3×10)	Clean (3×8)
Upright Rowing (3×10)	2 Hands swing (10)
Squat (2×10)	Front Squat (3×10)
Bent Arm Pullover (2×10)	Flying Ex. (3×10)
Front Bridge (12—15)	Wrestler's Bridge (5×20)
Abdominal Rs (20)	Leg raise (2×15)

Note—2×10 means 2 sets of 10 repititions. 12+10+5 means a set of 12 repetitions followed by 10 then a final set of 5 repititions.

मध्याह्न एवं संध्या प्रशिक्षण अभ्यास के लिये उत्तम समय समझे जाते हैं। सप्ताह में तीन अभ्यास दो-दो घंटों का आवश्यक है। कार्य अच्छे गर्म करने के व्यायाम के पश्चात् होना चाहिये। वजन प्रशिक्षण, प्रशिक्षण तालिका का एक भाग होना चाहिये।

कार्य में संस्थित होना अति आवश्यक है। शीतकाल कार्य के लिये उत्तम मौसम है। प्रारम्भिक अवस्था में सामान्य कार्यक्रम होना चाहिये। जो व्यायाम व्यक्ति के कार्य से सम्बन्धित नहीं है उन्हें छोड़ देना चाहिये। अधिक थकान एवं कम थकान दोनों प्रकार के कार्य होना आवश्यक हैं। इसका निरन्तर अभ्यास आवश्यक है।

खेल एवं स्पोर्ट्स की उन्नति, प्रोत्साहित एवं प्रचलित रखना

कोचिंग के सिद्धान्त में यह आवश्यक है कि खेल एवं स्पोर्ट्स को इस प्रकार जीवित रखा जाये जिससे व्यक्ति की अपने आप रुचि उस ओर हो तथा उसके ओर आकर्षित हो कर उस में भाग लेने तथा लेते रहने की प्रबल इच्छा हो। जिस प्रकार दूसरे व्यवसाय में लोग अपनी वस्तु को आकर्षिक बनाते हैं उसी प्रकार शारीरिक शिक्षा की कोचिंग में भी खेल एवं स्पोर्ट्स को आकर्षिक एवं रुचिकर बनाना अनिवार्य है। खेल की प्रवृति व्यक्ति में जन्म जात है। वह स्वयं उस ओर खिचता है। यदि इस खिचाव में प्राण डाल दिया जाये तथा उन खेल

एवं स्पोर्ट्स की क्रियाओं के द्वारा व्यक्ति संतोष प्राप्त करे तो वह इस ओर निश्चिय ही लीन हो जायेगा। खेल एवं स्पोर्ट्स को आकर्षिक एवं प्रचलित रखने के कुछ उपाय इस प्रकार हो सकते हैं।

प्रचार एवं प्रसार

प्रचार एवं प्रसार एक माध्यम है जिसके द्वारा शारीरिक शिक्षा का कार्य, कोचिंग की विशेषता एवं लाभ, खेलने के प्रति रुचि आदि विद्यार्थियों एवं सर्व साधारण के सम्मुख प्रस्तुत किया जा सकता है।

खेल के असाधारण क्रियायें, रुचिकर क्रियायें, लाभप्रद त्रियायें जो जीवन सम्बन्धी है उन्हें स्कूल की पत्रिकाओं तथा दैनिक पत्रिकाओं में अवश्य देना चाहिए। प्रत्येक अच्छी पत्रिका में खेल एवं स्पोर्ट्स के लिए पर्याप्त स्थान रहता है तथा समाचार के आइटम सरलता से ले लिये जाते हैं। किसी विशेष प्रकार की वैयक्तिक कृति, या टीम की कृति, वार्षिक स्कोर, स्कूलों की प्रतियोगिता, विभिन्न कोचिंग स्कीम, उत्तम खेल एवं स्पोर्ट्स के प्रदर्शन, अच्छी टीम का प्रदर्शन, खेल एवं ओलम्पिक खेलों तथा विभिन्न देशों के शारीरिक शिक्षा कार्य क्रम सब रुचिकर विषय हैं तथा पत्रों में दिये जा सकते हैं।

शारीरिक शिक्षा के हैंडबुक दिये जा सकते हैं। हैंड़बुक में स्टाफ के नाम, विद्यार्थी मैनेजर विधान, खेल एवं स्पोर्ट्स के लिस्ट, प्रतियोगिता के युनिट, पुरस्कार एवं पारितोषिक, स्पोर्ट्स के विशेष नियम, प्रवेश के नियम, प्रोटेस्ट आदि के नियम तथा सम्पूर्ण वर्ष का कार्य क्रम एवं पिछले वर्ष की रिपोर्ट आदि दी जाती हैं।

विजेताओं के चित्र छपवाना, रुचि के बढ़ाने का एक उत्तम उपाय है।

निश्चित यात्राओं, खेल के टूर आदि से अत्यन्त अधिक प्रोत्साहन मिलता है। उत्तम खेल का प्रदर्शन तथा बाहर से आनेवाले टीमों के खेल का प्रदर्शन का महत्वपूर्ण प्रभाव जनता पर होता है। क्रिकेट के मैच देख कर बालक गली कूचों में क्रिकेट खेलते हैं।

यदि कुछ ही शारीरिक शिक्षा के व्यक्ति अपनी रुचि का प्रदर्शन अपने

प्रत्येक दिन के व्यायाम, खेल आदि से करें तो लोगों पर इसका बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ता है।

प्रसार एवं प्रचार के अन्य माध्यम जैसे रेडियो, टेलीवीज़न, चलचित्र, विभिन्न श्रवण एवं दृष्टि उपकरण आदि प्रयोग में लाये जा सकते हैं।

पुरस्कार एवं प्रदान

प्रोत्साहन, प्रेरणा तथा प्रगति के लिये किसी न किसी रूप में पुरस्कार एवं प्रदान का स्थान आवश्यक है। अनेक व्यक्ति हैं जो इसका विरोध करते हैं। उनका दृष्टि कोण भी गलत नहीं है। यदि खेल एवं स्पोर्ट्स का अपना मूल्य नहीं है तथा वह किसी प्रकार के पुरस्कार के आशा में किया जाता है अर्थात पुरस्कार खेल की उन्नति का माध्यम नहीं अन्त है, तो ऐसे दृष्टि कोण से हानि होने की ही सम्भावना है, लाभ नहीं हो सकता। जहां तक पारितोषिक का प्रयोजन किसी की योग्यता निर्धारित करने का है वहां तक पारितोषिक का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा। ध्यान रखना चाहिये कि पारितोषिक का मूल्य धन में विशेष न हो। उसका मूल्य उसके पाने के सम्मान तथा अपने स्थिति के कारण हो। अंग्रेजी के शब्द (Award) तथा (Reward) महत्व पूर्ण है। किसी वस्तु का प्रदान करना (Award) किसी योग्यता या सफलता के प्राप्त करने का प्रतीक है। यह स्वस्थ्यकर खेलों तथा मनोरंजन में भाग लेने के लिये लोभ देना नहीं है। यह प्रोत्साहक एवं प्रेरणार्थक है। खेल में भाग लेने का मनोरंजन एवं प्रसन्नता, स्वयं ही में प्रेरक का कार्य करता है, पारितोषिक (Reward) में आर्थिक मूल्य का अर्थ है। इस में किसी तात्विक वस्तु के प्राप्त करने का विचार है। यह यदि किसी रिबन (Ribbon), चिन्ह (Emblem), सर्टिफिकेट, साधारण मेडल, पिन, मोनोग्राम, शील्ड, लेटर मोनोग्राम, चित्र, घूमने वाले शील्ड या कप आदि का रूप लेता है तो प्रदान का स्वरूप धारण कर लेता है जो उचित है तथा उसे प्रोत्साहित करना आवश्यक है।

प्रत्येक व्यक्ति की अभिलाषा दूसरों के द्वारा मान्यता प्राप्त करने की होती है। यह मान्यता वैयक्तिक, सामूहिक तथा सामाजिक हो सकती है। यह शाब्दिक प्रशंसा या सार्वजनिक सम्मान का रूप ले सकती है। दूसरों की मान्यता के द्वारा व्यक्तिगत संतोष प्राप्त होता है।

प्रदान एवं पारितोषिक का मूल्य और भी अधिक होता है यदि वह समय से दिये जायें । जब सफलता प्राप्त करने की प्रसन्नता एवं उल्लास रहता है उस समय उसका मूल्य अधिक प्रतीत होता है ।

जब व्यक्ति को समूह के अतिरिक्त व्यक्तिगत सफलता प्राप्त होती है तो उसे अवश्य मान्यता प्रदान करनी चाहिये ।

प्रदान एवं पारितोषिक वितरण खेल एवं स्पोर्ट्स की उन्नति प्रचलित रखने में प्रेरक अवश्य है किन्तु यह ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है कि बहुत सरलता से ये प्राप्त न हो सके । इसको प्राप्त करने के लिये चेष्टा, परिश्रम, ध्यान तथा समय व्यतीत हो जिससे प्राप्त वस्तु का कुछ मूल्य हो । सरलता से प्राप्त वस्तु का मान नहीं होता तथा यदि वह साधारण हो जाये तो उसे के प्रेरक मूल्य का अन्त हो जाता है ।

प्रशिक्षण कैम्प

कैम्पिग, वाह्य खेल में शिक्षा एवं प्रशिक्षण है तथा इसकी महत्ता दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है । प्रशिक्षण कैम्प प्राकृतिक विषयों को प्रकृति के मध्य शिक्षित करने का एक माध्यम है । ऐसी अवस्था में कोच एवं शिक्षक वातावरण के प्रभाव की टक्कर अपने ज्ञान से लेते हैं । वाह्य जीवन में प्रशिक्षण का रूप अनौपचारिक होता है, सीधे प्रयोग शाला के जीवित अनुभवों की प्राप्ति होती है ।

प्रशिक्षण कैम्प में प्रजातांत्रिक जीवन, वाह्य वातावरण को समझना, आत्म निर्भरता का प्रशिक्षण, स्वस्थ्यकर जीवन, सामाजिक जीवन, मानव सम्बन्ध की घनिष्टता, वास्तविक कार्य का अनुभव, स्वतंत्र प्रसन्नचित्त अनुभव तथा नैतिक एवं आत्मिक चैतन्यता को प्राप्त करने का अवकाश बहुतायत से प्राप्त होता है । संसार में कदाचित ही कोई ऐसा साधारण व्यक्ति हो जो ऐसे वातावरण एवं प्रशिक्षण का आलिंगन न करे ।

कैम्पिग से सामाजिक, मानसिक तथा स्वास्थ्य के ध्येय उपलब्ध होते हैं । यह सब को प्रिय है । ऐसे वातावरण में भिन्न भिन्न प्रशिक्षण भी आयोजित

किये जाते हैं जिनमें प्रमुख विभिन्न कोचिंग कैम्प भी हैं। खेल एवं स्पोर्ट्स के कोचिंग कैम्प अत्यन्त ही लोकप्रिय हैं। इन प्रशिक्षण कैम्प में जो जिले, प्रान्तीय, तथा राष्ट्रीय स्तर पर होता है विभिन्न स्थानों से व्यक्ति प्रशिक्षित होने के लिये आते हैं। शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम एवं कोचिंग तथा खेल एवं स्पोर्ट्स में रुचि दिलाने के लिये यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण माध्यम सिद्ध हुआ है। भारतवर्ष में भी अनेक प्रशिक्षण कैम्प होते रहते हैं। केन्द्रीय एवं प्रान्तीय सरकार का भी इस ओर उतम सहयोग रहा है। संसार का तीसरा स्थायी प्रशिक्षण कैम्प नैनीताल जिले के सात ताल में कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन लखनऊ का "कोहेनूर कैम्प" स्थित है। खेल एवं स्पोर्ट्स के प्रोत्साहन तथा स्वीमिंग लाइफ सेविंग, हाइकिंग, स्काउटिंग आदि के प्रगति के लिये यहां महत्वपूर्ण कार्य हुये हैं। भारत की राष्ट्रीय टीम के अन्तर्राष्ट्रीय ओलम्पिक में भाग लेने के पूर्व कुछ एथलिट यहीं प्रशिक्षित हुये थे। उस समय डाक्टर ए० डब्लू० हार्वेड जो ए० एन० आई० एस० पटियाला के उप निर्देशक रह चुके थे तथा वर्त्तमान कालेज आफ फिजिकल एज्युकेशन के प्रधानाचार्य हैं प्रशिक्षण के प्रबन्धकर्त्ता थे।

साधन

खेल एवं स्पोर्ट्स के प्रोत्साहित एवं प्रचिलित रखने के लिये उचित साधन एवं सुविधायें अति आवश्यक हैं। यदि खेल एवं स्पोर्ट्स के माध्यम ही उपलब्ध न हों तो उनका किया जाना ही असम्भव होगा। कार्य करने के लिये उचित सामग्री एवं यन्त्र की आवश्यकता होती है। खेल का यन्त्र एवं सामग्री खेल के साधन हैं। फुटबौल बिना फुटबौल के नहीं हो सकता। समय के रेकार्ड के लिये स्टाप वाच की आवश्यकता होगी।

जितनी अच्छी सुविधायें एवं साधन होंगे उतना ही कार्य करने में मन लगेगा। अच्छे ट्रैक में दौड़ने वाले को प्रसन्नता होगी, अभ्यास एवं परिश्रम में रुचि होगी। कोचिंग में आधुनिक पद्धतियों को अपनाने के लिये आधुनिक साधनों की भी आवश्यकता होती है। कोचिंग के लिये वैज्ञानिक यन्त्रों का अविष्कार हुआ है जिससे प्रशिक्षण पाने वालों को अपनी उन्नति करने में सहायता मिलती है। ऐसे उपयोगी सुविधा एवं साधन

के द्वारा खेल एवं स्पोर्ट्‌स की उन्नति अवश्य होगी तथा व्यक्तियों की रुचि के कारण वह प्रचलित रहेगा।

सुविधा एवं साधन के उपयुक्त एवं अधिक रहने से सीखने में सरलता एवं सहयोग होता है। सुविधा एवं साधन विद्यार्थी के वैयक्तिक अनुभव के गुण को उन्नतिशील कर सकते हैं इस लिये वे अच्छी शिक्षा के माध्यम भी सम्भव हो सकते।

सुविधा एवं साधन के अपने गुणों एवं उपयोगिता के कारण ही जिस कार्य के करने में सहायक है उस कार्य को प्रोत्साहित एवं प्रचलित करने में भी स्थान रखते हैं।

समय तालिका

समय तालिका एक प्रमुख योजना (Master Plan) है जो इस प्रकार विधिवत किया जाता है जिससे पूर्ण एवं तत्कालिक सूचना उन्हें जो किसी प्रोग्राम से सम्बन्धित हैं प्राप्त होता है। उसमें, जिस यूनिट की शिक्षा दी जा रही है शिक्षक एवं विद्यार्थियों का कार्य तथा समय जो क्रिया के लिये निर्धारित है दिया जाता है। सुविधा तथा जो सामग्री प्राप्त होनी है वह भी उसी में दी जा सकती है।

समय तालिका के निर्माण में किस कार्य के करने की चेष्टा हो रही है उस का एक चित्र खिंच जाता है। उस का रूप बनाने वाले के ध्येय तथा दिशा का ज्ञान देता हैं।

यह प्रत्यक्ष है कि उत्तम समय तालिका उत्तम कार्यं के होने की सम्भावना की प्रतीक है। अतः खेल एवं स्पोर्ट्‌स के कार्य-क्रम की तालिका के द्वारा खेल के प्रति उच्च भावना का विकास भी सम्भव है। खेल में भाग लेने का प्रोत्साहन मिलता है। उत्तम समय सारिणी के द्वारा खेल प्रचलित रखने के लिये बनाने वाला कोच, शिक्षक या निर्देशक वाध्य हो जाता है। यह एक उत्तरदायित्व को कार्यशील करने का माध्यम है जो दूसरों के लिये किया जाता है तथा उसका सम्मान भी किया जाता एवं करना उचित भी है। अच्छी समय सारिणी के

द्वारा खेल एवं स्पोर्ट्स में रुचि एवं उसे प्रचलित रखने की एक रीति यह भी है कि समय सारिणी का प्रचार एव प्रसार किया जाये। पत्रिकाओं, नोटिस बोर्ड, सार्वजनिक स्थानों पर पोस्टर्स, बुलेटिन बोर्ड के द्वारा। उसके अवलोकन से व्यक्तियों में उसमें भाग लेने या उसे देखने या उसके विषय में जानने की इच्छा होगी। इस प्रकार रुचि बढ़ायी जा सकती है एवं उसे प्रचलित रखा जा सकता है।

परम्परा

संसार की अच्छी बुरी चीज हम परम्परा से प्राप्त करते हैं। इसमें वातावरण, वंशानुक्रम तथा सामाजिक वंशानुक्रम बहुतायत से सहायक होते हैं। यह प्रत्येक पीढ़ी का उत्तरदायित्व है कि वह अपने आने वाली पीढ़ी के लिये उत्तम तथा उच्च कोटि का सामाजिक वातावरण छोड़े। कई एक ऐसी संस्थाएँ एवं परिवार हैं जिनकी उत्तम परम्परा का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिये कुछ संस्थायें हैं जो खेल एवं स्पोर्ट्स के खेल का उत्तम प्रदर्शन करती हैं तथा सदैव यही उनकी चेष्टा रहती है कि वे अपना प्रदर्शन एवं कार्य का स्तर ऊँचा ही करते जायें। ऐसी संस्था के खेल एवं स्पोर्ट्स के देखने के लिये जनता उत्सुक एवं इच्छुक होती है। ऐसी संस्थाओं से सम्बन्धित होने में व्यक्ति अपना सम्मान समझता है। अतएव उत्तम परम्परा खेल एवं स्पोर्ट्स की ओर रुचि बढ़ाने में सहायक होती है। संस्था के लोग इस प्रयत्न में अवश्य रहेंगे कि खेल में रुचि हो तथा वह अच्छी तरह प्रचलित रहे साथ ही उससे सम्बन्धित लोग तथा सर्व साधारण जनता अपने प्रोत्साहन एवं भावनाओं से उसे प्रचलित रखने में सहयोग देगी। खेल में अरुचि दिखायी पड़ने से या अप्रयत्न से जनता के द्वारा आलोचना होने की सम्भावना है। इस प्रकार भाग लेने वाले तथा दर्शक दोनों सतर्क रहते हैं। इस लिए यह उचित है कि परम्परा के कारण जो प्रभाव एवं सम्मान खेल एवं स्पोर्ट्स की रुचि एवं प्रोत्साहन तथा प्रचलित रखने में प्राप्त हैं उनका पर्याप्त प्रयोग किया जाये।

२

कोचिंग में मनोवैज्ञानिक प्रवेश

मानसिक सतर्कता, मनोवैज्ञानिक क्षण, आवश्यकता से अधिक निर्भरता, जीतने की इच्छा, स्पोर्ट्समैनशिप, टीम का खेल, मानसिक वातावरण आदि ऐसे शब्दों के प्रयोग से यह विदित होता है कि साधारण व्यक्ति भी इस बात पर विश्वास करता है कि कोचिग में मनोविज्ञान का प्रवेश अत्यधिक है।

खेल एवं स्पोर्ट्स में जो उचित रूप से संगठित हैं उनमें शरीर मशीन के समान प्रयोग नहीं होता जिस में हाथ पैर लगे हों तथा जिनकी मांसपेशियां अस्थिपंजर पर बिछी हुयी हों किन्तु उन में समझने की योग्यता, स्मरण रखने की शक्ति, निर्णय करना, आशा करना, आयोजन करना, क्रिया सम्पन्न करना, दूसरों की बुद्धि से अपनी बुद्धि अधिक प्रयोग करना, दूसरों से अधिक लगे रहना तथा दूसरों से अधिक देर तक बने रहना आदि होता है।

कोचिंग का प्रमुख विषय है, दोष क्या है तथा उसका निवारण कैसे होगा।

मनोविज्ञान के द्वारा कोचिग में उन मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रयोग किया जाता हैं जिन के द्वारा व्यक्ति शीघ्रता तथा निपुणता से सीखता है। मनोविज्ञान से यह निश्चित होता है। कि क्रिया में समन्वय उस दशा में प्राप्त होता है जब अभ्यास के द्वारा सही मार्ग एवं सम्बन्ध स्नायु प्रणाली में स्थापित हो जाते हैं जिससे स्नायुविक उत्तेजनायें निश्चत रूप से इन्हीं मार्गों से चलकर पर्याप्त मांसपेशियों को उत्तेजित करते हैं। इस प्रकार स्नायु प्रणाली का अभ्यास के द्वारा ऐसा प्रशिक्षण हो जाता है कि वह समय तथा स्नायुविक उत्तेजनाओं के प्रसार पर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त कर लेता है।

व्यवहार के मानने वाले मनोवैज्ञानिक कहते है कि सीखना दशा को विधिवत करने (Conditioning) की अवस्था है। व्यक्ति किसी प्रकार का व्यवहार करना सीखता है क्योंकि वह इन व्यवहार के परिणामों को किसी विशेष प्रकार की उत्तेजना के साथ सम्बन्धित करता है।

Gestalt के सिद्धान्त के द्वारा यह कहा जाता है कि किसी क्रिया के करने में सम्पूर्ण मनुष्य भाग लेता है जो किसी ध्येय को प्राप्ते करना चाहता है। इस ध्येय को वह सब से छोटे रास्ते या कम परिश्रम के द्वारा प्राप्त करना चाहता है। कार्य में उन्नति अभ्यास के द्वारा नहीं किन्तु अवस्था को प्रगति करती हुयी अभ्यान्तरिक दृष्टि से समझने के कारण होती हैं। यह अभ्यान्तरिक दृष्टि पूर्ण अवस्था या दशा को पूर्ण रीति से समझना या उत्तेजना के प्रकार (Stimulus Pattern) के समझने को कहते हैं। सम्पूर्ण को उसके विभिन्न अंगों में संस्कारित करने के कारण समन्वय प्राप्त होता है अर्थात सीखना सम्पूर्ण को उसके विभिन्न भागों के अन्तर में देखने को कहते हैं। निपुणता अभ्यास पर नहीं किन्तु अभ्यान्तरिक दृष्टि की मात्रा पर निर्भर रहता है। एथेलेटिक कौशल में प्रवीण समन्वय स्नायु संस्थान के स्वचालक दशा के कारण नहीं किन्तु विभिन्न अंगों के सम्बधित स्थिति की चित्रित विचार की अवस्था (Conceptual Configuration) के द्वारा होता है। यह वह अवस्था होती है जिस को प्राप्त करने का ध्येय एथेलिट ने किया था।

कोचिंग में मनोविज्ञान का विशेष प्रवेश इस सिद्धान्त में है कि सब प्रकार के अभ्यास एवं क्रिया प्रयोजन पूर्ण हों। इसके द्वारा सीखने वालों को अवस्था के सम्पूर्ण दशाओं का उचित ज्ञान हो जाना चाहिये। अभ्यान्तरिक दृष्टि के अतिरिक्त के अभ्यास से कोई लाभ नहीं। केवल पुनरावृत्ति से सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। सीखने में सीखने के नियमों का प्रयोग करना आवश्यक है।

अवस्थाओं के प्रति प्रतिक्रिया करने से व्यक्ति सीखता है। कोच को ऐसी अवस्था उपलब्ध करनी है जिस के प्रति सीखने वाले की प्रतिक्रिया हो।

मनोविज्ञान की सर्व प्रमुख सहायता कोचिंग में इस बात की है कि कौन सी विशेष सीखने की वस्तु तथा अवस्था सीखने वाले के लिए उचित है तथा उस के लिये दशा विधिवत करनी चाहिये। सीखने में स्थानान्तर, दशा के समान होने

में सम्भव है। कोचिंग में व्यक्तिगत विभिन्नता जो मनोविज्ञान का एक प्रमुख विषय है अत्याधिक उपयोगी है। एक अच्छी चीज प्रत्येक व्यक्ति के लिए उसी मात्रा में अच्छी सिद्ध नहीं होगी।

कोचिंग की विशेषतया उन लोगों को आवश्यकता होती है जो प्रत्येक प्रकार से निपुण एवं प्रशिक्षित समझे जाते हैं। व्यक्तिगत विभिन्नता के सिद्धान्त पर कार्य करते हुये कोच को इस बात की खोज करना है कि इस व्यक्ति को इस अवस्था में इस विषय पर इस विशेष बात का प्रयोजन है जिस से वह श्रेष्ठ सफलता प्राप्त कर सके। प्रत्येक अवस्था तथा प्रत्येक दशा में निर्णय भिन्न होगा। इस अवस्था के निर्णय में मनोविज्ञान से वहुत सहायता प्राप्त होती है।

व्यक्ति एवं टीम के विकास में कोचिंग सम्बन्धी मनोविज्ञान महत्वपूर्ण हैं। खेल एवं स्पोर्ट्स में कितनी ही बार सफलता एवं हार इस बात पर निर्भर करती है कि खेलने वाली सम्पूर्ण टीम या व्यक्ति कितनी अच्छी तरह से देख सकता है तथा सम्पूर्ण खेल के मैदान का चित्र अपने सामने रख सकता है। यह मनोविज्ञान के दृष्टि। प्रत्यक्षीकरण से सम्बन्धित है। खेलने वाला व्यक्ति या स्पोर्ट्स के किसी आइटम में व्यक्ति कितनी वातों को ध्यान में रखे यह ध्यान सम्बन्धी मनोविज्ञान है। इनके साथ वह अन्य व्यक्तियों की इच्छा, निर्णय आदि जिनके विरुद्ध वह खेल रहा है तथा जिन के साथ वह प्रतियोगिता में भाग ले रहा है जानना चाहता है यह भी मनोविज्ञान का विषय है।

वास्तव में देखा जाये तो अच्छे प्रकार के खेल में हार या जीत विशेषकर कौशल की चतुरता में नहीं किन्तु इन्हीं मनोवैज्ञानिक प्रश्नों के सही उत्तर से होता है। प्रत्येक खेल में चतुराई एवं कौशल है किन्तु उनके साथ उनसे सम्बन्धित परिस्थिति एवं वातावरण से सम्बन्धित अनेक विचार भी रहते हैं जिनका अपने एवं दूसरों की क्रिया पर भी बहुत प्रभाव पड़ता है।

विभिन्न प्रकार के प्रत्यक्षीकरण जैसे श्रवण, दृष्टि, दूरी आदि टीम एवं व्यक्ति के कोचिंग में प्रगति करने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। इस मनोवैज्ञानिक निपुणता की अनुपस्थिति में व्यक्ति सर्वोच्च प्राप्ति नहीं कर सकता। टीम एवं व्यक्ति के लिये मनुष्य की चेष्टा से ऊपर Super human चेष्टा तथा असम्भव को सम्भव करने की चेष्टा का प्रयोग करना पड़ता है। यह

शारीरिक नहीं किन्तु मानसिक स्थिति होती है जिसमें शक्ति, कौशल एवं सहने की शक्ति संयुक्त रहती है। यह मनुष्य की चेष्टा से ऊपर चेष्टा (Super human effort), एक प्रकार का मानसिक निश्चय करना या दृढ़ता है जिससे मनुष्य आशा की हुयी सीमा से पार जाता है।

खेल एवं स्पोर्ट्स में सीखने की समस्या के अतिरिक्त व्यक्ति एवं टीम को आदत, स्मृति, दृष्टि प्रत्यक्षीकरण, श्रवण प्रत्यक्षीकरण, मांसपेशियों का प्रत्यक्षीकरण, विचार, सवेग, निश्चयता, ध्यान केन्द्रित, चुनाव करना, कल्पना आदि मनोवैज्ञानिक समस्याओं का उचित हल करना पड़ता है।

अच्छा खेलने वाला अपने विरोधी के खेल से अपने को आगे रखता है तथा उसके आने वाले आक्रमण, कौशल एवं चतुराई के लिये वह अपने को पहले ही तैयार रखता है।

व्यक्ति या टीम के कोचिंग में कोच को इन मनोवैज्ञानिक तथ्यों को उचित विकास के लिये प्रयोग करना आवश्यक होता है। अनेक खिलाड़ियों में से कुछ को चुन लेना, सही व्यक्ति को सही स्थान के लिये चुनना, सीज़न के खेलो की तैयारी या किसे विशेष खेल एवं स्पोर्ट्स मीट की तैयारी करना, किस प्रकार उचित तथा शक्तिशाली आक्रमण करना, अपनी मानसिक एवं शारीरिक शक्ति को ऊँचे स्तर पर रखना, कठिनाई एवं अवस्था अनुकूल न होने पर भी मानसिक दृढ़ता स्थिर रखना, तथा उन आदर्शों एवं परम्परा का निर्माण करना जिससे व्यक्ति जान सकें कि किस प्रकार मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य सम्भव होगा, भीड़ या समूह के स्वभाव को समझना तथा इसी प्रकार के अन्य समस्याओं के हल का प्रशिक्षण करना होगा।

अच्छी तरह से देखना एवं सुनना

आंखो से देखते हुये भी व्यक्ति यदि प्रशिक्षित नहीं है तो सम्पूर्ण नहीं देख सकता। व्यक्ति को इस प्रकार प्रशिक्षित होना चाहिये कि एक बार देखने में सम्पूर्ण अच्छी रीति से देख ले। कभी कभी कनखियों से देखना मुहावरा प्रयोग किया जाता है, अर्थ यह है कि सीधी दृष्टि के साथ आस-पास की वस्तुओं का भी ध्यान रखा जा रहा है। खेल एवं स्पोर्ट्स में यह अति आवश्यक है। जहां

एक क्षण में काम समाप्त होने वाला है वहां सीधी दृष्टि से सदैव कार्य नहीं चलता। जैसे, फुटबाल के थ्रो में इस प्रकार का देखना प्रयोग किया जाता है। सौफ्ट बाल में बेस लेने वाले को इसी प्रकार देखते हैं। बासकेट बाल के ड्रिवलिंग और पास करने में भी यह प्रयोग में आता है। ऐथलेटिक के स्टार्ट में ९५ प्रतिशत सफलता गन के आवाज़ को सही रीति से सुनने और आरम्भ करने में है। गन की आवाज के साथ अपने स्थान को छोड़ना कठिन परिश्रम एवं प्रशिक्षण के पश्चात आता है। इसके लिये पर्याप्त अभ्यास की आवश्यकता है। आंखों के कोण से देखना तथा कानों को ठीक सुनने के लिये प्रशिक्षत करना एक छोटी चीज हो सकती है किन्तु इसी के द्वारा उत्तम एवं साधारण ऐथलिट में अन्तर हो जाता है। बाल पिच करने के लिये हाथों का कौशल, बास्केट बाल में मांस पेशियों का समन्वय, बौक्सिंग में शक्ति तथा सब को एक उत्तम हृदय, फेफड़ों, तथा शक्ति शाली मांसपेशियों की आवश्यकता होती है किन्तु इन सब के होते हुये भी ऐथलेटिक निपुणता मनोवैज्ञानिक स्त्रोत से ही प्राप्त होती है।

सम्पूर्ण दृष्टि के लिये यूनिफार्म या जरसी का रंग महत्व पूर्ण है। गाढ़ा नीला, पीला, काला तथा सफेद सर्वोत्तम है। चमकीला लाल तथा हरा अच्छे हैं किन्तु दूरी से भूरे दिखायी दे सकते हैं।

इन प्रशिक्षण के एक विशेष बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि अधिकतर कोच विषय की तकनीक तथा चतुराई पर बल देते हैं तथा मानव तथ्य को प्रशिक्षण में जितना महत्व देना चाहिये नहीं देते। ऐथलेटिक्स में आधर भूत तथ्यों के महत्व से मनोविज्ञान का महत्व कम नहीं है।

दूरी एवं गति की तीव्रता का निर्णय

दूरी एवं तीव्रता का ज्ञान ऐथीलट के लिए अति आवश्यक है। ऐथलीट में यह योग्यता अवश्य होनी चाहिये कि वह अपने से दूसरों की दूरी एवं तीव्रता बिना हिचकिचाहट के अनुमान लगा ले। यह अनुभव से प्राप्त होता है। यह एक अर्जित गुण है। साधारणत: व्यक्ति की दूरी का अनुमान करने की योग्यता तथा आखों से गति की तीव्रता का मांप करने की योग्यता बहुत अच्छी नहीं होती। दो व्यक्ति जो विभिन्न दूरी पर विभिन्न तीव्रता से दौड़ रहे है उन में

कौन अन्त में प्रथम होगा, अनुमान करना कठिन है। किन्तु वास्तव में यही गुण ऐथलीट को अर्जित करना है जिससे वह दूसरे के सम्बन्ध में अपने को समायोजित कर सके। खेल में इस गुण के द्वारा अपने को उस स्थान पर रखा जाता है तथा पहुंचने की चेष्टा की जाती है जहां पर गेंद रोकने या खेलने की सम्भावना हो। ये अवस्थायें इतनी शीघ्रता से आती एवं चली जाती हैं कि एक धीमी गति वाला व्यक्ति इसे समझ भी नहीं पाता।

कुछ ऐसे भी व्यक्ति हो सकते हैं जो बिना किसी वर्तमान सम्भावना के भविष्य की सम्भावना का अनुमान कर लेते हैं। उनके आक्रमण से ऐसा प्रतीत होता है कि वे कठिनाई में फँस जायेंगे किन्तु जैसे ही वे वहां पहुंचते है सब कुछ वैसा ही होता है जैसा अनुमान किया गया था। इन गुणों को प्राप्त करना तथा उसके लिए प्रशिक्षण अच्छी कोचिंग में आवश्यक है। अनेक कोच ऐसे हैं जो एथीलट की निपुणता प्राप्त करने पर भी अभ्यास पर अधिक बल देते हैं क्योंकि उन्हें यह मालूम है कि उन्नति होती रहती है। वास्तव में इन शारीरिक कौशल में मानसिक योग्यता की वृद्धि होती रहती है। जब शारीरिक कौशल में सम्पूर्ण निपुणता प्रतीत होती है तब भी मानसिक प्रगति सम्भव होती है।

छठवीं इन्द्रीय का प्रयोग

जीवन में पाँच प्रत्यक्ष इन्द्रियां हैं जिनसे ज्ञान प्राप्त होता है। किन्तु कभी कभी छठी इन्द्रीय के विषय में बताया जाता है जिससे व्यक्ति को एक प्रकार का ज्ञान होता है जो इन्द्रीय सम्बन्धित नहीं हैं। जैसे अपने शरीर का ज्ञान उसकी अच्छाई, बुराई, आरोग्यता या बीमारी आदि। शरीर की शक्ति का ज्ञान आदि भी हम अच्छी तरह समझ सकते हैं। कठिनाई में भी किसी प्रकार यह निश्चित होना कि सफलता अवश्य प्राप्त होगी आदि, ज्ञान कहा जाता हैं कि छठी इन्द्रीय के द्वारा प्राप्त हुआ।

शारीरिक अवस्था तथा शारीरिक गति की तीव्रता भी इसी ज्ञान के द्वारा मालूम की जा सकती है। जैसे किसी अंधे को लीजिये वह अपनी मांसपेशियों के स्पर्श से दृष्टि प्रत्यक्षीकरण का कार्य लेता है। अपनी लाठी के सहारे चलते चलते वह एकदम मुड़ने के लिये रुक जाता है या सीढ़ी चढ़ता है या सामने से आने वाली वस्तु से बचने के लिए एक ओर चला जाता। अंधा अपनी मांसपेशियों को

दृष्टि प्रत्यक्षीकरण के स्थान पर प्रयोग करता है। वह उसी पर निर्भर करता है कदाचित उसने यह सीख लिया है कि उसके शरीर की इतनी शक्ति, उसे इतनी दूर ले जा सकती है।

बजाने वाले अँधेरे या उजाले में एक समान बजा सकते हैं। इस प्रकार के ज्ञान को मांसपेशियों का प्रत्यक्षीकरण (Somatic या Muscular) Perception) कहते हैं। जीवन में अनेक उदाहरण इस प्रकार के ज्ञान के हैं। चम्मच से खाते समय हम हांथ से मुंह की दूरी का निश्चय नहीं करते किन्तु मांसपेशियां अपने आप अपना समायोजन कर लेती हैं। यह मांसपेशियों की प्रणाली (Somatic Process) के द्वारा होती है।

इसी प्रकार अनेक व्यक्ति है जिन्हें समय का ज्ञान सही होता है। कार्य करते समय, किसी वस्तु या विषय में व्यस्त होते हुये भी उन्हें समय का सही ज्ञान होता है। उन्हें प्राय घड़ी की आवश्यकता नहीं होती। ट्रैक के लिये समय तथा चाल के समझने के लिये इस 'समय' के ज्ञान को विकसित करना अति आवश्यक है। इस ज्ञान से ऐथलीट अपने समय तथा दूसरों के समय तथा चाल का ज्ञान प्राप्त कर सकता है। कितने ही ऐसे खेलने वाले है जिन्हें सही मालूम हो जाता है कि ७ मिनट खेल के बाकी हैं, २० सेकेंड में खेल समाप्त होगा। इस ज्ञान के द्वारा वे आश्चर्यजनक कार्य कर लेते हैं, हो सकता है अन्तिम क्षण का आक्रमण विजय प्रदान करें।

कोचिंग में समय निर्णय का अभ्यास आवश्यक है।

माँस पेशियों के प्रत्यक्षीकरण से शरीर की अवस्था का ज्ञान रहता है। ऐथलीट या खेलने वाले जानते हैं कि शरीर उत्तम कार्य की अवस्था में है या ठीक नहीं है। मनोविज्ञान से पता चलता है कि शरीर विभिन्न तैयारी के स्तर 'Tonic Levels' पर कार्य करता है। यह कहा जा सकता है कि यह शरीर की वह तैयारी है जिस में मांस पेशियां किस तेजी से सिकुड़ती हैं। यह सरलता एवं शीघ्रता से हो सकता है जिससे समन्वयपूर्ण गति सम्भव होती है। कोच का यह परम कर्तव्य है कि व्यक्ति या टीम के सदस्यों के विभिन्न शारीरिक दशाओं के मेल को वह भली भांति समझ सके।

मांस पेशियों के प्रत्यक्षीकरण से हम अपने को अधिक अनावश्यक थकान

से बचा सकते हैं। कभी-कभी हम अपने शरीर का नाश अपने आप करते हैं। इस ज्ञान के द्वारा हम शरीर का सही उपयोग करेंगे।

शरीर की तैयारी तथा संवेगात्मक तैयारी में अन्तर है तथा इसकी ओर ध्यान देना आवश्यक है। यह सम्भव है कि निर्बल अवस्था में संवेगात्मक भाव के कारण व्यक्ति अपने में कुछ समय के लिये शक्ति का अनुभव करे किन्तु इस शक्ति पर वह निर्भर नहीं कर सकता।

यह अत्यन्त आवश्यक है कि गतिवाही कौशल केवल दृष्टि प्रत्यक्षीकरण के द्वारा ही नहीं किन्तु मांस पेशियों के प्रत्यक्षीकरण के द्वारा ही सीखा जाये। अनेक बार यह कहा जाता है कि गेंद पर दृष्टि रखो। वास्तव में सही यह है कि गेंद देखते हुये मांस पेशियों के उचित समन्वय से उसे देखो क्योंकि गेंद मारना या फेंकना आंखों से नहीं मांस पेशियों से होता है। यह सदैव ध्यान में रखना चाहिये कि सीखना दो प्रकार के प्रगतिपूर्ण ज्ञान का परिणाम होता है। दृष्टि सम्बन्धी Visual तथा मांस पेशियों के सम्बन्ध का Somatic दृष्टि से हम दूरी, परिमाण या डौल तथा गति की तीव्रता सीखते है। मांस पेशियों के प्रत्यक्षीकरण से शरीर की अवस्था, सम्बन्धित या तुलनात्मक तेजी या तनाव तथा मांस पेशियों के सम्भव खिचाव का ज्ञान होता है।

कौशल के विकास में एक ऐसा समय आता है जब जो कार्य हम करते हैं ऐसा प्रतीत होता है कि वह शरीर का एक फैलाव या विस्तार है। हम अपने आपको उस कार्य में इस प्रकार बढ़ा देते हैं तथा उस गति का अनुभव इस प्रकार होता है जैसे अपने शरीर की गति होती है। दूसरे भी उस कार्य को देख कर कहते हैं कि अमुक व्यक्ति कितनी प्राकृतिक रूप से बिना किसी कष्ट या परिश्रम के खेलता है या दौड़ता है।

व्यक्ति अपने कौशल की सीमा (Physiological limit) उस समय प्राप्त करता है जब उसकी क्रियाओं में इस प्रकार की भावना हो।

सीखना, स्मृति एवं कौशल

कोचिंग का मुख्य सिद्धान्त एवं प्रयोजन यह है कि किसी टीम या व्यक्ति

का इस प्रकार अभ्यास एवं प्रशिक्षण हो कि वह प्रवृतिक रूप से खेल एवं स्पोर्ट्स में अपनी गति सही एवं सही समय पर जो परिस्थिति के अनुकूल हो, प्रयोग करे। प्रशिक्षण इस प्रकार होना चाहिये कि प्रत्येक व्यक्ति अपने भिन्न भिन्न उत्तरदायित्वों को सही सही एवं अचेतन रूप से सम्पन्न करें।

अच्छे खेलने वाले दूसरे की क्रियाओं, गति, चातुर्य एवं कौशल की स्मृति रखते हैं। इस प्रकार के स्मरण से उनके विरुद्ध अपने चातुर्य एवं कौशल के प्रयोग में वे सफल होते हैं। उदाहरण के लिए किसी के खेल से यह पता चलता है कि अमुक रीति से पास मिलने पर वह खिलाड़ी अमुक स्थान से गोल कर सकता है तो उसका विरोध इस स्मृति के आधार पर किया जायेगा।

कौन किस प्रकार, किस स्थिति में कैसा कार्य आदि करता है इस प्रकार की स्मृति रखना अच्छे खेल के लिये आवश्यक है। स्मृति में भूत की बातों को हम पहचानते हैं। सीखने में हमारी चेष्टा वर्त्तमान अवस्था में होती है तथा कौशल में इस वर्त्तमान अवस्था या प्रणाली का अन्त हो जाता है। स्मृति पुनरावृति पर निर्भर नहीं रहती किन्तु कौशल के लिये पुनरावृति आवश्यक है।

आदत शब्द कौशल से अधिक व्यापक है। प्रत्येक आदत कौशल पूर्ण नहीं होती किन्तु कौशल के प्रत्येक प्रकार, आदत होते हैं।

अत: स्मृति के द्वारा हम भूत को वर्त्तमान का एक भाग करते हैं, जिस से इस वर्त्तमान क्षण में जो कार्य हो रहा है उस को उसी प्रकार कर सकें जैसा कि कुछ दिनों पहले किया गया था। उस के द्वारा वर्त्तमान स्थिति में सहायता ली जाती है। इस लिये स्मृति या किसी क्रिया को शारीरिक नियन्त्रण के अन्तर्गत करना या स्नायु प्रणाली के अन्तर्गत करने में भिन्नता है। यदि वर्त्तमान में हम किसी कार्य में सहायता प्राप्त करते हैं क्योंकि हमने उसके लिये शारीरिक तैयारी की है या प्रशिक्षित हुए हैं तथा यह बहुत कुछ मशीन की तरह कार्य करता है तो हम अपनी स्मृति की सहायता नहीं लेते किन्तु स्नायु मण्डल की कुछ योग्यताओं की सहायता लेते हैं। स्मृति तथा कौशल में भी अन्तर है। कौशल या आदत जो हम अर्जित करते हैं वे एक प्रकार की लकीरों में स्थित हैं। इसमें विभिन्नता की सम्भावना नहीं। स्मृति के द्वारा थोड़ी बहुत छान बीन होती है

क्योंकि जब हम किसी क्रिया की स्मृति करें तो उसे उसी प्रकार उस स्थिति में प्रयोग करें या न करें स्थिति के ऊपर निर्भर करता है। कौशल तथा आदत में हम उसी प्रकार के कार्य की पुनरावृति करते हैं।

कौशल को अर्जित करने के द्वारा हम अपनी प्राकृतिक प्रवृत्तियों तथा कार्यों में प्रगति लाते हैं। जन्म के समय मानव बालक सब प्राणियों से अधिक असहाय होता है। कौशल अभ्यास एवं आदत से ही वह अपनी गति एवं क्रिया में उन्नति करता है।

सीखने में, शरीर के लिये निपुण प्रकार की क्रियाओं को अर्जित किया जाता है। आरम्भ में हमारा शरीर उस प्रकार कार्य नहीं करता जैसा हम चाहते हैं। अतः हम अपने शरीर को एक प्रशिक्षण कार्य क्रम के अन्तर्गत इस आशा से लाते हैं कि कुछ समय के पश्चात हम उस कौशल को प्राप्त कर सकेंगे जिसकी हमें अभिलाषा थी। यही प्रशिक्षण प्रोग्राम तथा सम्बन्धित क्रियायें कोच के दृष्टि कोण से महत्व पूर्ण है। निपुण कार्य एवं गति तथा शक्ति के बचाव के लिये हम कौशल प्राप्त करना चाहते है।

उचित आदत अर्जित करने से सीखने में सहायता होती है। किसी परिणाम के प्राप्त करने की गतियों को इसके द्वारा सरल किया जा सकता है तथा इसके द्वारा थकान दूर की जा सकती है। आदत के कारण कार्य के प्रति विशेष ध्यान देने की आवश्यकता नहीं होती। इस प्रकार क्रिया करने वाले को स्वतन्त्रता रहती है कि वह आने वाली समस्याओं का जिसकी आशा नहीं की जाती थी, अच्छी रीति से हल कर सकें।

आदत से हानि भी सम्भव है। यह जीवन में स्थायी हो जाती हैं तथा भूत से सम्बन्धित रहती है। वह हमें एक प्रकार के ऐसे लीक में ले चलता है जहाँ से निकलना कठिन हो जाता है। यदि सही आदत स्थापित की जाए तो व्यक्ति का किसी समस्या या स्थिति में प्रथम विचार प्रायः सही रहता है। कितनी बार सुनने में आया है कि पहले मैंने यह करने का निश्चय किया था किन्तु फिर जब सोचा तथा किया तो बाद में यही मालूम हुआ कि जो विचार पहले आया था वही करना चाहिये था।

व्यक्ति अपनी दूसरी प्रकृति जो लम्बे अभ्यास के द्वारा बना लेता है उसे 'अचेतन मन' कहते हैं। इसी अचेतन मन को आदत या कौशल कह सकते हैं। यह सत्य है कि स्नायु मण्डल प्रौढ़ क्रिया के विशेष व्यवहार का अधिकांश अपने आप ही देख रेख कर लेता है तथा यदि हमारी आदत एवं कौशल सही हैं तो समस्या के समय स्नायु मण्डल प्रायः सही कार्य करेगा।

स्नायु मण्डल को अनुकूल करना

सीखना या कौशल अर्जित करने के नियम एवं सिद्धान्त हैं।

सीखने के नियम, तैयारी, अभ्यास तथा संतोष के द्वारा ही उत्तम सीखना सम्भव है। सीखने की उन्नति में सीखने के पठार की ओर तथा उसके कारण एवं निवारण के प्रति उचित ध्यान देना आवश्यक है। सीखने में व्यक्तिगत विभिन्नता एक मुख्य विषय है। अच्छे सीखने वाले तथा कम सीखने वाले के बीच का अन्तर दो से पाँच गुणा होता है। सीखने के समय में भी अन्तर होता है। प्रत्येक के सीखने की अवस्था, समय, योग्यता आदि के सही खोज तथा परिणाम में ही अच्छे कोच की योग्यता है। सीखने में शारीरिक क्रिया की सीमा (Physiological limit) तथा अभ्यास की सीमा (Practical limit) में अन्तर है। शारीरिक सीमा के बाहर व्यक्ति का निकलना असम्भव है किन्तु कितने व्यक्ति परिश्रम तथा अभ्यास न कर के अभ्यास की सीमा प्राप्त कर लेते हैं। वे अभ्यास का मूल्य नहीं चुकाना चाहते अतः सर्वोच्च न प्राप्त करके साधारण अभ्यास से संतोष कर लेते हैं। अभ्यास की सीमा का अर्थ है कि अधिक व्यक्ति उस समय अभ्यास समाप्त कर देते हैं जब अधिक उन्नति नहीं दिखायी देती है। अधिकांश व्यक्ति अपनी शारीरिक क्रिया की सीमा तक पहुंच भी नहीं पाते हैं।

अभ्यास के उचित समय पर ध्यान देना अति आवश्यक है। किसी एक कौशल का अभ्यास २० या ३० मिनट से अधिक बिना विश्राम के हानिकारक होगा। एक क्रिया से दूसरी क्रिया में परिवर्तन करते रहने से तथा इनके बीच थोड़ा विश्राम दे देने से अभ्यास उत्तम होगा।

इस प्रकार के अभ्यास से समय की बचत होती है। सीखने में समय

लगता है इसलिये अभ्यास के घंटे, थोड़ी थोड़ी अवधि के, अधिक समय तक विस्तृत होने चाहिए। दिन में एक अभ्यास के घंटे से अधिक लाभ नहीं होता। आरम्भ में दिन में दो अभ्यास के घंटे चलाये जा सकते हैं। अधार भूत तथ्यों के सही सीख लेने पर दूसरे तीसरे दिन यदि उनका अभ्यास हो तो कोई हानि नहीं।

सीखने में कौशल जितना सरल होगा उतना ही शीघ्रता से सीखा जा सकता है। इसलिये सीखने की क्रिया के विभिन्न अंगों को सीखने में सरलता होगी तथा सीखना उत्तम होगा। इसे आंशिक विधि कहते हैं। इस प्रकार सीखने के बाद क्रिया के अंगों को मिश्रण कर सम्पूर्ण क्रिया करना आवश्यक है।

मांसपेशियों की क्रियाओं में पूर्ण विधि के प्रयोग से समय की बचत होती है। किन्तु कितने व्यक्ति हैं जो इस विधि से सीख नहीं पाते। पूर्ण विधि में कठिनाई सम्पूर्ण क्रिया पर ध्यान रखने में होती है, विशेष कर जब सीखने की प्रारम्भिक अवस्था होती है।

सीखने के समय की भावनाओं के कारण सीखने की गति में अन्तर होता है। संतोष पूर्ण भावनाओं के कारण सीखने में उन्नति होती है। यह कोच का मुख्य कर्त्तव्य है कि सीखते समय उचित भावनायें उपस्थित हों। इस में कैप्टेन का भी सहयोग होना चाहिये। यदि सब सीखने वाले प्रारम्भ में ही कुछ उन्नति कर सकें तो इस प्रकार की भावनाओं को उत्पन्न करने में सहायता होती है।

"Pleasantness has important positive relations to general well-being, and specially to digestion and nutrition, also to cardiac activity and to neural activity. Unpleasantness produces in general the opposite effects. Pleasantness heightens and facilitates all positive, healthful, life-giving functions of the body. Unpleasantness is negative. It retards, inhibits, constricts. Pleasantness makes for more of life. It is therefore clear that pleasantness is necessary condition of learning, and that unpleasantness retards learning"

शरीर के आन्तरिक अंगों की अवस्था तथा संवेग में घनिष्ठ सम्बन्ध है

तथा इनका प्रभाव महत्वपूर्ण है।

जब किसी विषय की पुनरावृति सरलता से हो जाती है तो उसे अच्छे सीखने की संज्ञा दी जाती है। किन्तु यह सत्य है कि यदि इसकी पुनरावृति न होती रहे तो अधिकांश सीखी हुयी वस्तु भुला दी जाती है। किसी वस्तु का पुनः सीखना कम समय लेता है। पुनः सीखना अधिक सीखने (Over learning) में परिवर्तित होता है। अधिक सीखने के द्वारा न केवल उसे हम अपने स्नायु मण्डल में डाल देते हैं किन्तु उसे हम इस प्रकार स्थायी कर देते हैं जिससे वह फिर नष्ट न हो। इस प्रकार कौशल को हम अपने अचेतन मन की अवस्था के स्तर पर ले जाते हैं।

सीखने में स्थानान्तर कहां तक सम्भव है यह आधारभूत तथ्यों पर निर्भर है। खेल के आधारभूत तथ्यों का खेल से वास्तविक सम्बन्ध किस प्रकार का है ? खेल के खेलने में एक गुण की आवश्यकता है जो आधारभूत तथ्यों के सीखने के गुण से कहीं अधिक है। आधारभूत तथ्यों के सीखाने में जहां तक सम्भव हो, पूर्ण क्रिया के समान की अवस्था होनी चाहिये। कुछ आधारभूत तथ्यों को साधारण अवस्था में सीखना आवश्यक होता है किन्तु जहां तक खेल की अवस्था इन अभ्यास में उपस्थित हो उतना ही अच्छा होगा। सामान्य प्रकार के तथ्यों के सीखने का स्थानान्तर सम्भव है। खेल के सामान्य भावों तथा आक्रमण की प्रणाली का स्थानान्तर सम्भव है। वास्तविक विशेष कौशल का स्थानान्तर नहीं होता किन्तु उसके प्रति सामान्य आक्रमण की प्रणाली, पद्धति, तथा सिद्धान्तों का स्थानान्तर सम्भव है। सही कार्य करने का आदर्श, पूर्णतया करने का गुण, इमान्दारी, सहने की शक्ति तथा प्रत्येक अवस्था में उत्तम कार्य करने का स्थानान्तर होता है।

अर्जित आदतों तथा सामान्य अनुभवों का स्थानान्तर होता है।

ध्यान

मनुष्य का मानसिक जीवन, किसी क्षण एक निरन्तर परिवर्तन के आगे बढ़ते हुये अनुभव का समूह है। इसी सम्बन्ध में मनोविज्ञान में चैतन्यता की धारा का वर्णन किया जाता है। जागृत जीवन की अवस्थाओं में प्रत्यक्षीकरण,

भावों, कल्पना आदि के कारण मानसिक क्रियाओं का निरन्तर प्रवाह होता रहता है। इन्हीं की विशेषताओं का अध्ययन, ध्यान में किया जाता है।

खेल की अवस्थाओं में विशेष समय पर विशेष कार्य की ओर ध्यान आकर्षित एवं केन्द्रीत होता है तथा अन्य बातें ध्यान के बाहर हो जाती हैं। हम कुछ सीमित बातों के ऊपर ध्यान देते हैं तथा उसी ओर लीन हो जाते हैं। इसी प्रकार एक वस्तु से दूसरे तथा तीसरे आदि की ओर ध्यान आकर्षित होता रहता है। किसी दिये हुये क्षण में हम कुछ ही बातों की ओर आकर्षित होते हैं तथा ध्यान देते हैं। ध्यान की परिभाषा में यह कहा जा सकता है कि यह वह गुण है जिस के द्वारा अनुभव अनेक वस्तुओं में से कुछ चुन लिया जाता है तथा उस क्षण का वह कार्य हो जाता है।

ध्यान देने के कारण हम उन्हीं बातों को करते हैं जो आवश्यक है। इसके द्वारा समय की बचत होती है। इसके द्वारा हम विचारों पर नियन्त्रण करते हैं।

इस ध्यान की अवस्था से हम यह देखते हैं कि जब हम कुछ विषयों की ओर ध्यान देते हैं उस समय दूसरे विषय हैं जो ध्यान की परिधि में है जिन पर सीधा ध्यान नहीं दिया जा रहा है। यह अनुभव के बाहर स्थित रहते हैं। अनुभव इन्हीं सीधे ध्यान की वस्तु तथा ध्यान की परिधि के वस्तुओं के परिवर्तित सम्बन्धों को कहते हैं। चुनाव के कारण ध्यान की वस्तु सम्मुख आती है।

खेल तथा ऐथेलेटिक्स में ध्यान की परिधि में की गई वस्तुओं की ओर भी ध्यान देना आवश्यक होता है। कितनी ही बार धोखा देने के लिये ध्यान के सम्मुख कुछ कार्य किये जाते हैं जिससे विरोधियों का ध्यान उस ओर आकर्षित हो किन्तु वास्तविक खेल उस स्थान से दूर रहता है। दो खेलने वाले बासकेट बाल में रिंग की ओर गेन्द लेने के लिये जाते या कूदते हुये दिखायी दे सकते हैं वास्तविक स्कोरर कहीं चुप चाप खड़ा है और उसी को पास मिलने वाला है। इस उदाहरण को देखते हुये यह कहा जा सकता है कि एथेलेटिक या खेल की प्रतियोगिता वास्तव में शारीरिक नहीं मानसिक संघर्ष है जिसमें ध्यान एक वस्तु से दूसरी वस्तु की ओर निरन्तर केन्द्रित होता रहता है तथा महत्वपूर्ण काय करता है।

ध्यान की परिधि की वस्तुओं का व्यक्ति से यद्यपि सीधा ध्यान नहीं रहता तथापि उन विषयों का व्यक्ति को ज्ञान रहता है तथा वे उसके व्यवहार को प्रभावित करती रहती हैं। सीधे ध्यान की वस्तु दृष्टि के सम्मुख साफ होती है तथा परिधि की वस्तु धुंधली रहती हैं। साफ वस्तु के कारण विशेष प्रकार का समन्वययुक्त मांसपेशियों की गति होती है।

ध्यान पर नियन्त्रण किस प्रकार किया जा सकता है ? किसी वस्तु की ओर ध्यान देने के तीन कारण होते हैं। कोई ज़ोर की आवाज़, वस्तु की तेज़ गति तथा बार बार सम्मुख आने वाली वस्तु की ओर हम ध्यान देते हैं। किसी प्रकार की कोई वस्तु नयी तो हो हम उस ओर ध्यान देंगे। इस प्रकार का ध्यान अनैच्छिक ध्यान (Involuntary attention) है जिसे प्रारम्भिक ध्यान Primary attention कहते हैं।

दो अनुभवों के बीच संघर्ष के बाद किसी एक अनुभव के प्रति ध्यान देना ऐच्छिक ध्यान (Voluntary attention) कहते हैं। इस प्रकार के ध्यान में हम वस्तु का चुनाव करते हैं तथा चुनने के बाद उसके प्रति ध्यान देते हैं। साधारणतया हमारा यह विचार है कि हम जिस ओर चाहे ध्यान लगा सकते हैं किन्तु वास्तव में यह उस प्रकार नहीं। ऐच्छिक ध्यान अधिक सम्भव नहीं। हम ध्यान करते समय उन वस्तुओं से बाधा प्राप्त करते हैं जिन वस्तुओं में हमें अधिक रुचि है। यदि हमें ऐच्छिक ध्यान की शक्ति प्राप्त है तब भी इसे हम अत्यन्त कठिनाई से प्रयोग कर पाते हैं।

जो कार्य या वस्तु हमारी आदत से है या स्मृति में है उस ओर हमारा ध्यान सरलता से जाता है। हम उन्हीं कार्यों में रुचि लेते हैं जो हमारी आदत या स्मृति से सम्बन्ध रखते हैं। अतः ध्यान के नियन्त्रण के लिये यह आवश्यक है कि कोई वस्तु जिसकी आवाज तेज है विचित्र है, बार-बार आती है या वर्तमान मानसिक स्थिति के अनुकूल हैं उसके प्रति ध्यान शीघ्रता से जायेगा। जो वस्तु व्यक्ति के आदत से सम्बन्धित है उस ओर ध्यान सरलता से जाता है।

३

संघर्ष के कौशल का मनोविज्ञान

जैसे युद्ध में चतुरता दिखायी जाती है उसी प्रकार खेल एवं स्पोर्ट्स में चतुरता दिखाना आवश्यक होता है। यदि विरोधियों का ध्यान ऐसे कार्य की ओर आकर्षित कर लिया जाये जो वास्तविक योजना से कुछ सम्बन्ध नहीं रखता तो यह संघर्ष के कौशल की योग्यता है। विरोधियों के ध्यान को इस प्रकार केन्द्रित करना आधा विजय प्राप्त करना है। जितनी ही खेल की चालाकी, योजना, रीति आदि हैं वे विरोधियों को धोखा देने के लिये होती हैं।

अनुभव से यह ज्ञात होता है कि पांच या छः क्रियायें जो एक साथ हो रही हैं उनके प्रति व्यक्ति ध्यान दे सकता है। जब तक व्यक्ति के क्षेत्र में विषय रहते हैं तब तक एक प्रकार का साहस, धीरता एवं उत्साह रहता है किन्तु जब वस्तुयें ध्यान के क्षेत्र से बाहर होने लगती हैं तब व्यक्ति घबड़ा जाता है। इस प्रकार की खेल में दशा, थकान के कारण या साहस की कमी के कारण उपस्थित होती है। व्यक्ति के ध्यान के क्षेत्र में अधिक वस्तुओं का स्थान होने लगता है जो वह नियन्त्रित नहीं कर सकता इस कारण अनेक गलतियां करता तथा पूर्ण ध्यान, जैसे पहले दे रहा था, नहीं दे पाता। वह खेल में पराजित होता है। यह पराजय खेल के संघर्ष के कौशल के कारण नहीं किन्तु अपनी मानसिक स्थिति के सीमित होने के कारण प्राप्त करता है। उसे अपनी सहायता की अज्ञानता है।

प्रत्येक व्यक्ति को शारीरिक कठिनाईयों के अतिरिक्त मनौवैज्ञानिक मानसिक क्षेत्र के विस्तार के अयोग्यता के कारण भी कठिनाई होती है। वह सब वस्तुएँ जो एक साथ होती हैं अपने मस्तिष्क में नहीं ले सकता हैं।

इस प्रकार की समस्या को दूर करने के लिये ध्यान के क्षेत्र को विस्तृत करना आवश्यक है जो, सर्व प्रथम आदत के द्वारा, दूसरे स्मृति से प्राप्त किया जा सकता है।

इस प्रकार का कौशल अनुभवी तथा अनुभवहीन खिलाड़ी में अन्तर लाता है

खेलों में 'टाइम आऊट' तथा कुछ विश्राम के द्वारा मानसिक थकान को दूर किया जा सकता है तथा मानसिक संतुलन प्राप्त किया जा सकता है।

खेल में अवैधानिक रूप से स्थानों में परिवर्तन के द्वारा विरोधियों को घबड़ाहट में डाला जा सकता है। इसमें सम्पूर्ण टीम का एक साथ होना आवश्यक है। मनोवैज्ञानिक रीति से जितने अधिक व्यक्ति एक साथ गति करेंगे उतना ही खेल में चालाकी अच्छी होगी।

एक ही दिशा से सबों का तेजी से आक्रमण भी एक अच्छी चतुराई है।

प्रत्येक खेलने वाले को अपने कार्य की ओर पूर्ण ध्यान देना चाहिए। यदि वह अन्य बातों की ओर ध्यान देता है तथा बाहर के चिढ़ाने वालों आदि को सुनता है तो उसका ध्यान अपने वास्तविक कार्य की ओर से हट जायेगा।

ध्यान केन्द्रित करने की अवधि अत्यन्त ही कम होती है। यह लहरों के समान होती है। मानसिक कार्यों में एक ऐसा क्षण होता है जब ध्यान सर्वोच्च होता है। उसी के सहारे सफलता प्राप्त करना सम्भव होता है। जैसे लोहे पर पानी चढ़ाने के लिये एक विशेष समय होता है उसी प्रकार आरम्भ करने का या क्रिया करने का विशेष समय होता है।

ध्यान की अवधि कम करने के तीन प्रमुख करण हैं। थकान, केन्द्रीय स्नायु मण्डल में कार्य की सुविधा एवं विरोध का आपस में प्रभाव तथा शरीर के बाहर की वस्तुओं के द्वारा सदा ध्यान का आकर्षित होना।

ध्यान की चंचलता के कारण यह आवश्यक है कि खिलाड़ी एवं एथलीट प्रत्येक दूसरे क्षण को संतुलित रखें। जिसे यह कला प्राप्त हो वह कभी धोखा

नहीं खा सकता । इसके द्वारा तैयारी के बाद पुन. तैयारी की कला तथा ध्यान के प्रति ध्यान अर्जित करने का गुण प्राप्त होता है। ऐसे व्यक्ति दूसरों की क्रियाओं से धोखा नहीं खा सकते, उनका संतुलन खराब नहीं होता । ऐसे व्यक्ति अपनी कल्पना में अपने विरोधी की वर्तमान मानसिक क्रिया के एक पग आगे की तैयारी करते हैं।

प्रतियोगिता में भाग लेने की तैयारी तथा प्रतियोगिता के वास्तविक आरम्भ के बीच की अवधि एक भार सी प्रतीत होतीं है। अनेक खेलने वाले इस अवधि में अपनी निर्बलताओं आदि के विषय में अधिक सोचते हैं।

कभी-कभी व्यक्ति निश्चयात्मकता, पूर्ण ध्यान, सम्पूर्ण तैयारी, भय रहित होने आदि के साथ भाग लेने आता है किन्तु देर होने के कारण उस में शिथिलता आने लगती है तथा वह उस प्रथम तैयारी की अवस्था को स्थिर नहीं कर पाता है।

कोच का कर्त्तव्य है कि इन अवस्थाओं के लिये उचित प्रशिक्षण दें। प्रतियोगिता के दिन हलका अभ्यास, प्रतियोगिता के आरम्भ के पूर्व रुचि कर बातों की ओर ध्यान आदि कुछ प्रशिक्षण के अच्छे उपाय हैं।

थकान के समय ध्यान एकाग्रचित करना, रुचि न होने पर ध्यान लगाना, उस समय सतर्क रहना जब सतह पर कुछ दिखायी नहीं देता, इन अवस्थाओं में व्यक्ति का वास्तविक गुण प्रदर्शित होता है।

खेल में सैकड़ों ऐसी छोटी चीजें होती हैं जिनके प्रति ध्यान नहीं दिया जाता किन्तु उनके प्रति ध्यान रखने से सफलता में अत्यन्त सहायता प्राप्त होती है। शरीर की गति, चेहरे की रेखाओं, हाथों पैरों या आँखों के समन्वय आदि से दूसरे व्यक्ति के पहली गति या विचार का अनुभव प्राप्त हो सकता है। ध्यान पूर्वक देखने से ऐसी लाभदायक छोटी वस्तुओं को देखा जा सकता है। यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि विचार किसी न किसी गति में प्रवाहित होता है।

इस प्रकार की अनैच्छिक गतियों से जिससे दूसरे के विचारों को समझा जायें उसे दूर करने की रीति है, अभ्यास, जिससे किसी कार्य में इतने लीन न हो जायें

जिससे वे अनैच्छिक क्रियायें जो शरीर में होती हैं, दूसरे देख सकें। अपने टीम में धोखे के भाव को प्रस्तुत रखने आदि से भी यह सम्भव होता है।

कोचिंग इस प्रकार हो कि खेलने वाले विचित्र कार्यों के करने में योग्यता नहीं, किन्तु उत्तम प्रशिक्षित कौशल में जिसके द्वारा विरोधियों के मानसिक क्रियाओं के ऊपर नियन्त्रण सम्भव हो, प्रदर्शित कर सकें।

खेल में यह आवश्यक हो जाता है कि कभी कभी किसी एक विशेष वस्तु की ओर ध्यान एकाग्रचित किया जाये। कभी यह आवश्यक होता है कि ध्यान विस्तृत हो, किन्तु अधिकांशतः मध्यस्थ अवस्था उत्तम प्रतीत होती है।

कहा जा चुका है कि खेलने वाले का ध्यान उसके खेल के प्रति होना चाहिये। इस प्रकार का ध्यान, ज्ञान पूर्वक होना आवश्वक है। यह सम्भव है कि व्यक्ति अंधे की तरह अपनी बात में एक कोण से ही लगा रहे। ज्ञान पूर्वक ध्यान देने वाला व्यक्ति आवश्यकता एवं परिस्थिति के अनुसार विभिन्न क्रियाओं तथा वस्तुओं की ओर ध्यान एकाग्रचित हो कर देता रहेगा।

प्रतिक्रिया के समय (Reaction Time) का प्रशिक्षण बहुत ही आवश्यक है। यदि एथलीट गन के साथ अपने निशान को नहीं छोड़ता, समय लेने वाले सही समय से घड़ी नहीं दबाते, गेन्द आगे बढ़ते ही यदि आक्रमण नहीं होता, क्रिया की उत्तेजना तथा क्रिया में सदैव कुछ देर कर दी जाती हो तो इस अवधि को, जो उत्तेजना तथा प्रतिक्रिया के बीच आती है, प्रतिक्रिया का समय या (Reaction time) कहते हैं।

यह क्षणिक होता है, किन्तु प्रतियोगिता में अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। एक सेकन्ड के दसवें भाग के अंश में प्रतियोगिता में हार या जीत होती है। प्रत्येक खेल एवं ऐथेलेटिक क्रियाओं में प्रतिक्रिया का समय महत्वपूर्ण होता है।

प्रतिक्रिया के समय का कारण स्नायु मण्डल के कार्य, शिथिलता तथा स्नायुविक उत्तेजना को एक स्थान से दूसरे स्थान में जाने के समय के कारण होता है। जितना जटिल कार्य होगा उतना ही प्रतिक्रिया का समय अधिक होगा। नये कार्य में प्रतिक्रिया समय अधिक होता है किन्तु अभ्यास से वह कम हो जाता है। प्रतिक्रिया के समय के सम्बन्ध में एथलीट दो प्रकार के होते हैं। इन्द्रीय प्रधान

(Sensory minded) तथा 'गति प्रधान' (Motor minded)। 'इन्द्रीय प्रधान' अपनी तैयारी अपने विचार से करते हैं। वह अपने आप में कहता है जैसे ही 'गन' होगा मुझे स्टार्ट करना है, जैसे गेंद आगे बढ़ेगा, आक्रमण करना है आदि। 'गति प्रधान' व्यक्ति सोचता है कि गन होते ही मुझे निशान से आगे कूदना है, वह अपने शरीर के आसन पर विचार करता है, अपनी मांसपेशियों के ऊपर निर्भर रहता है तथा गति पर विचार करता है। इन दोनों के बीच थोड़ा अन्तर है किन्तु गति प्रधान की प्रतिक्रिया का समय कम है।

प्रतिक्रिया के समय में परिवर्तन, प्रतिक्रिया के प्रकार के कारण उत्तेजना की अधिकता या कमी के कारण, पूर्व ज्ञान के कारण, दो वस्तुओं के समानता में चुनाव के कारण, थकान के कारण तथा औषधि प्रभाव के कारण सम्भव हो सकता है।

प्रतिक्रिया का समय, उत्तेजना तथा किसी वस्तु के अच्छी तरह समझने के बीच के समय में भी होता है। यह ध्यान की शिथिलता के कारण होता है। अर्थात किसी वस्तु के प्रति पूर्ण ध्यान, तत्वविक प्रदर्शन के कुछ देर बाद होता है। इसीलिये स्टार्ट के लिये ऑन योर मार्क्स 'गेट सेट' कहा जाता है।

क्रिया में अपने आप को पूर्ण तैयार करना चाहिये। क्रिया करते समय अपने ऊपर विश्वास तथा निश्चय से कार्य सम्पन्न करना चाहिये। अनेक असफलताएँ इस कारण से होती हैं कि करने वाले अपनी योग्यता तथा दृढ़ता पर संदेह करते हैं। कार्य करते हुये उनका विचार यह होता है कि यदि मैं कार्य न कर पाया तो ?

ध्यान की शिथिलता उत्तेजना की प्रकृति तथा उस समय के मानसिक प्रकार पर निर्भर करता है। थकान के कारण ध्यान की शिथिलता होती है।

अच्छे खिलाड़ी के प्रयोजन

१. योग्यता (Ability) :—

अच्छे खिलाड़ी की योग्यता में सर्व प्रथम मानसिक योग्यता आवश्यक है। ऐथलिट के जीवन में अनुभव बहुतायत से पाये जाते हैं। यह स्मृति के

रूप में पाये जाते हैं जो उसके सम्मुख समय पर आते हैं । कोच विख्यात खिलाड़ियों के विषय में वर्णन करते रहते हैं । समस्या एवं स्थान का वर्णन करते हैं । इस प्रकार स्मृति का एक बड़ा समूह खिलाड़ी के मस्तिष्क में रहता हैं जो वह समय पड़ने पर प्रयोग कर सकता है । स्मृति के कारण स्वयं विषय पर विचार करने की आवश्यकता नहीं होती । अवस्था के अनुसार स्मृति का प्रयोग किया जा सकता है । जितनी ही अधिक स्मृति होगी उतनी ही अधिक अनुभव प्राप्त होगा ।

कौशल तथा आदत के अर्जित करने के द्वारा क्रिया के सम्पन्न करने में सरलता होगी । यह विचार का स्थान लेकर कार्य सम्पादन में सहायक होगी ।

कल्पना के उचित प्रयोग से खेलने वाला अपने को विरोधी के स्थान में रख कर उसकी मानसिक प्रतिक्रिया का अनुभव कर सकता है । इस प्रकार वह विरोधी की चतुरता को समझ सकता है । इस योग्यता के द्वारा वह भविष्य को भली भांति देख सकता है ।

खेल के प्रकार की मानसिक प्रवृत्ति का होना योग्यता के लिये आवश्यक है, तभी व्यक्ति खेल को प्रवृतिक रीति से खेलता है । ऐसा प्रतीत होता है कि खेल में उसकी गति पूर्णतया प्राकृतिक रूप से हो रही है । क्रिया में रुचि के कारण उसके प्रति मानसिक प्रवृत्ति सम्भव है ।

खेल में विचार करना अति आवश्यक है किन्तु यह विचार उस प्रकार नहीं होता जैसे किसी दार्शनिक का । खेल एवं स्पोर्ट्‌स में तत्कालिक विचार का होना आवश्यक है । एक क्षण में या क्षण के अंश में ही चित्र परिवर्तन सम्भव है । अतः विचार विजली की कड़क की तरह होना चाहिये जो एक क्षण में ही ध्वनि एवं प्रकाश कर देती है । इस प्रकार का विचार प्रवृत्तिक स्तर पर ही सम्भव है जो कौशल एवं आदत तथा स्मृति से प्राप्त हो सकता है । एथेलेटिक्स एवं खेल में विचार किसी निर्माण के प्रकार का होता है जहाँ निर्माण के पूर्व सब बात तय हो जाती है तथा सामग्री एकत्रित रहती है । जब निर्माण का आरम्भ होता है तो इमारत शीघ्रता से बनती चली जाती है । ऐथेलेटिक्स एवं खेल में विचार इसी प्रकार होता है । खेल एवं एथेलेटिक्स में शीघ्र निर्णय की आवश्यकता होती है । अनेक प्रकार की अवस्थायें एवं समस्यायें उपस्थित होती

हैं जिन में उसी क्षण निर्णय करना अनिवार्य हो जाता है। यह उस समय तक सम्भव नहीं जब तक व्यक्ति पूर्ण संगठित एवं खेल आदि के विषय का पूर्ण ज्ञान एवं परिचय न रखता हो। कोच का यह उत्तरदायित्व है कि व्यक्ति का इस प्रकार प्रशिक्षण हो जिस से वह आवश्यकता की पूर्ति कर सके।

२. दक्षता : (Fitness)

अच्छे खिलाड़ी की योग्यता में शारीरिक क्षमता का होना आवश्यक है। शारीरिक क्षमता के विस्तृत अर्थ में केवल स्वस्थ्य शक्तिशाली शरीर ही नहीं वरन मानसिक, संवेगात्मक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक स्वस्थता भी सम्मिलित है।

"Fitness in a man or woman is that quality, inherent and acquired, which renders the man or woman qualified to serve to the limit of his or her physical strength; to render the maximum of his or her mental capabilities and capacities, and on a high moral plane, and which recognises, fully, his or her obligations to the family, the neighbour, the community, the state, and the nation."

Presidents Conference on fitnes
Annapolis, 1956.

Morison B. Folsom "There is a Third dimension to fitness, and that is the capacity to function in every way at one's own best-physically, mentally, and spiritually. I wonder if we are not moving toward a concept of well being that involves not only physical prowess but also the whole of man's capacity of expression."

क्षमता का अर्थ, व्यक्ति के पूर्ण एवं संतुलित जीवन से है। क्षमता पूर्ण व्यक्ति का दृष्टि कोण जीवन की ओर से स्वस्थ एवं प्रसन्नचित होगा। उसकी आधार भूत आवश्यकताओं की, जैसे, शारीरिक स्वस्थता, प्रेम, स्नेह, सुरक्षा तथा आत्म सम्मान की पूर्ति होती है। वह अन्य व्यक्तियों को पसन्द करता है तथा उनके साथ प्रसन्नता पूर्वक रहता है। आयु के बढ़ने के साथ वह परहित की

भावना रखते हुये समाज की उचित सेवा करता है। नैतिक एवं धार्मिक होते हुये चरित्र का ऊँचा स्तर स्थापित करता है।

'क्षमता' का अर्थ व्यक्ति की क्रियाशीलता की योग्यता से भी समझा जा सकता है जिसमें उच्च प्रकार का आंतरिक अंगों का स्वास्थ्य, पर्याप्त समन्वय, शक्ति, संवेगात्मक स्थिरता, सामाजिक चेतना, ज्ञान पूर्ण; जीवन के उत्तम भावनाओं, कौशल तथा मूल्यों से पूर्ण, नैतिक एवं आध्यात्मिक गुणों का समावेश हो।

शारीरिक क्षमता पूर्ण क्षमता का एक अंग है। इसमें, शरीर एवं आन्तरिक अंगों का चिकित्सा के आधार पर क्षमता पूर्ण होना, कठिन कार्य तथा परिश्रम करने की क्रियाशील क्षमता तथा गतिवाही कौशल क्षमता जिसका अर्थ शक्ति एवं समन्वय से है, आते हैं।

शारीरिक क्षमता व्यक्ति के व्यवसाय एवं कार्य से सम्बन्धित है। यदि व्यक्ति अपना कार्य सही रूप से कर लेता है तथा उसके पास आवश्यकता से अधिक कार्य करने की शक्ति है जो संकट कालीन अवस्था में प्रयोजन हो सकता है तो वह शारीरिक क्षमता प्राप्त व्यक्ति कहा जा सकता है। प्रत्येक विषय एवं स्थिति के अनुसार क्षमता का स्तर नियत होता है। शारीरिक क्षमता व्यक्ति के शारीरिक संस्कार के ऊपर निर्भर होती है। शारीरिक क्षमता मानसिक, संवेगात्मक, तथा सामाजिक तथ्यों से प्रभावित होती है क्योंकि व्यक्ति, शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक का मेल है।

(३) रूचि : (Interest)

रुचि वह क्रियायें हैं जिन्हें व्यक्ति के लिये बहुमूल्य समझा जाता है क्योंकि उनके द्वारा आकांक्षा, अभिलाषा या प्रयोजन की तृप्ति होती है। व्यक्ति को इनके द्वारा संतोष प्राप्त होता है। रूचि शब्द का अर्थ किसी के सम्बन्ध में यह प्रदर्शित करता है कि उस वस्तु या क्रिया के प्रति एक संतोष एवं ज्ञान पूर्ण सम्बन्धित भाव स्थापित है। रुचि का अर्थ इसमें विकास से भी सम्बन्ध रखता है।

रुचि के कारण व्यक्ति को कार्य में प्रोत्साहन प्राप्त होता है। रुचि आगे बढ़ाने वाली शक्ति होती है, जो आन्तरिक होती है तथा उसके द्वारा प्रेरणा होती

है। इस प्रेरणा के द्वारा जो शक्ति प्राप्त होती है उसका ज्ञानपूर्ण सम्बन्ध विभिन्न व्यवहार के प्रकार से होता है जो व्यक्ति की ओर या उससे दूर, स्थितियों तथा वस्तु की ओर आदेशित होता है। रुचि, शिक्षा के द्वारा संशोधित होती है। जब प्रेरणा का पूर्ण ज्ञान व्यक्ति को होता है तथा अन्तिम परिणाम का अनुमान होता है तब वह प्रयोजन का रूप ले लेता है। प्रयोजन, विचार में दृढ़ता से स्थापित हो सकता है चाहे उसकी पूर्ति के साधन स्पष्ट हों या न हों। साधारण रुचि का अर्थ व्यक्ति की प्रेरणा या प्रयोजन से ही होता है।

कार्य में प्रेरणा लाने से उसके करने की शक्ति बढ़ जाती है। व्यक्ति के भावों में एक प्रकार की वृद्धि होती है। इसके द्वारा अन्तरिक बढ़ने की शक्ति का विकास होगा तथा क्रिया की ओर आदेश होगा।

एथलीट को तथा खेलने वालों को अपनी क्रिया में रुचि रखने तथा बढ़ाने से वह उसकी एक निजी वस्तु हो जाती है जिसकी उसे आवश्यकता प्रतीत होतीं है तथा अन्त में प्रवृत्तिक रूप धारण कर लेती है। व्यक्ति एवं क्रिया एक हो जाते हैं। व्यक्ति के प्रत्येक रक्त बूँद में तथा प्रति श्वांस में क्रिया ही होती है। सोते या जागते क्रिया की धुन उसे लगी रहती है। ऐसी भावना का जागृत करना उचित है।

(४) **गौरव** (Pride)

किसी प्राणी, वस्तु या विषय में गौरव रखने से व्यक्ति उसके प्रति सम्मान प्रदर्शित करता है तथा उसके बढ़ाव एवं विकास की चेष्टा करता है। एथलीट तथा खेलने वाले के लिये अपने कार्य में गौरव होना आवश्यक है। इस के द्वारा वह यह प्रदर्शित करता है, कि क्रिया, सम्मान पूर्वक, लाभदायक एवं व्यक्ति विकास के योग्य है तथा समाज से मान्यता प्राप्त है।

जिस चीज में व्यक्ति को गौरव होता है वह उसमें लीन रहता है तथा अपने को उसके योग्य बनाने की चेष्टा करता है। गौरव के योग्य बनने के लिये गतिवाही कौशल तथा विषय का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है। इसके द्वारा व्यक्ति अपने वास्तविक स्तर को समझता है तथा यह भी जान जाता है कि उसे क्या प्राप्त करना है तथा ध्येय से कितनी दूरी पर है। जिनको यह ज्ञान नहीं वे किसी वस्तु, प्राणी या विषय के प्रति उचित गौरव नहीं कर सकते।

दोषपूर्ण ज्ञान के कारण झूठा गौरव या अभिमान प्रदर्शित किया जाता है। यह व्यक्ति के लिये अत्यन्त हानिकारक सिद्ध होगा। इससे सफलता कभी सम्भव नहीं। झूठे अभिमान के द्वारा व्यक्ति अपनी वास्तविक स्थिति समझ नहीं पाता तथा आवश्यकता से अधिक अपनी बड़ाई करता है तथा अपनी शक्ति से अधिक कार्य करने की तथा प्रदर्शन की चाह रखता है।

(५) **संकल्प** (Determination) :—कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिये दृढ़ संकल्प की आवश्यकता होती है। संकल्प के कारण इच्छा शक्ति का प्रयोग होता है तथा व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण प्रभाव उस कार्य में पूर्णत: प्राप्त करने की ओर आदेशित होता है। संकल्प के कारण कार्य में बाधा, दोष आदि व्यक्ति को सफलता के मार्ग से विचलित नहीं कर सकते। व्यक्ति का ध्यान एवं ध्येय सफलता प्राप्त करने तथा अन्त तक पहुंचने का रहेगा। दृढ़ सकल्प से प्रेरणा मिलती है। कठिन से कठिन कार्य में व्यक्ति हताश नहीं होता और लगा रहता है। संसार के महत्वपूर्ण कार्य दृढ़ संकल्प के कारण ही सम्भव हो सके हैं। जितना कार्य कठिन हो उतना ही दृढ संकल्प आवश्यक होता है।

दृढ़ संकल्प के कारण उन कार्यों को जिनमें विशेष रुचि न हो व्यक्ति उसी प्रकार करने की चेष्टा करते हैं जैसे उन कार्यो को जिनमें रुचि हो। दृढ़ संकल्प व्यक्ति के चरित्र से सम्बन्ध रखता है। जो व्यक्ति चरित्रवान नहीं हैं उनका संकल्प दृढ़ नहीं हो सकता। यह एक आन्तरिक शक्ति है जो व्यक्तित्व के संगठन के कारण प्राप्त होती है। संसार के जितने महान पुरुष हुये हैं उनका यह एक परम गुण रहा है। वास्तविकता यह है कि दृढ़ संकल्प के अतिरिक्त व्यक्ति सर्वोच्च योग्यता प्राप्त कर ही नहीं सकता। जीवन मार्ग आसान नहीं है। अनेक रुकावटें मार्ग में प्रस्तुत होती हैं। किसी उत्तम वस्तु के प्राप्त करने के लिये अग्रसर होना तथा लगे रहना अनिवार्य है। यह उस समय तक सम्भव नहीं होगा जब तक निश्चयता एवं दृढ़ संकल्प के साथ आगे नहीं बढ़ा जाएगा।

एथलेटिक्स एवं खेल में दृढ़ता की अत्यन्त आवश्यकता है। ऐथेलेटिक्स का एक मुख्य सिद्धान्त अन्त तक लगे रहना तथा किये हुये कार्य को समाप्त होने तक उसके पीछे लगे रहना (Follow through) है। दृढ़ संकल्प यही गुण सिखाता है। जब व्यक्ति थक जाता है और आगे बढ़ने की इच्छा नहीं होती,

अपने साथी से थोड़ा पिछे हो आदि अवस्थाओं में दृढ़ संकल्प के कारण ही वह आगे बढ़ता है तथा विजय प्राप्त कर सकता है।

थकान की भावना सभी अवस्था में वास्तविक थकान नहीं होती। प्रशिक्षण में इसी बात पर ध्यान दिलाया जाता है कि इस थकान की भावना पर जो सत्य शारीरिक परिस्थिति प्रस्तुत नहीं करता उसके प्रति ध्यान न जाये। यह एक दृढ़ संकल्प के द्वारा ही सम्भव होता है।

दृढ़ संकल्प में नियन्त्रण की आवश्यकता है। वास्तव में दृढ़ संकल्प नियन्त्रण ही है। यह गुण एक दिन में नहीं आता। व्यक्ति को इस गुण में अपने को प्रशिक्षित करना पड़ता है। धीरे धीरे यह बहुमूल्य गुण अर्जित किया जा सकता है।

कोचिंग में वैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रयोग

टेकन या उत्तोलक (Levers) :—उत्तोलक या टेकन बनावट का एक उपाय है जिसके द्वारा कोई वस्तु या वजन सरलता, शीघ्रता तथा संतुलित रीति से उठाया या खिसकाया जा सकता है जो उसके अतिरिक्त सम्भव नहीं (Lever has been defind as a rigid rod revolving about a fixed point) शरीर की सम्पूर्ण अस्थि टेकन का कार्य करती हैं जो मांसपेशियों के सिकुड़ने से कार्य करती हैं।

टेकन के आवश्यक भाग निम्नलिखित हैं :—

(१) स्थित स्थान जिस पर टेकन घूमता है। इसे टेक या सहारा या आलम्ब (Fulcrum or Axis) कहते हैं। यह टेकन पर किसी स्थान पर स्थित हो सकता है। मानव शरीर में टेक का प्रतिनिधित्व संधियों के द्वारा होता है।

(२) वजन या भार जो उठाना है, जिस वस्तु को उठाना है उसके गुरुत्व शक्ति के केन्द्र (Centre of gravity) में प्रयोग होता है। यह टेकन पर किसी स्थान पर केवल टेक तथा उस स्थान पर जहाँ शक्ति प्रयोग किया जाता है इनके अतिरिक्त कहीं भी स्थित हो सकता है। इस स्थान से टेक की दूरी को टेकन का 'वजन बांह' (Weight arm of lever) कहा जाता

है। यहां ध्यान देना आवश्यक है कि किसी चालक के द्वारा जो रोक दिया जाता है वह एक प्रकार का भार होता है अर्थात वह शक्ति होती है जिस पर प्रभुत्व प्राप्त करना पड़ता है अतएव यह कहना सही है कि यह उत्तोलक का बाधक बांह है।

(३) शक्ति जो भार को उठाने के लिये प्रयोग की जाती है या बाधा पर प्रभुत्व प्राप्त करने के लिये प्रयोग की जाती है। यह किसी स्थान पर केवल आलम्ब तथा जहां भार है उसको छोड़ कहीं भी प्रयोग की जा सकती है। मानव शरीर में शक्ति मांसपेशियों के प्रवेश के स्थान पर होती है।

आलम्ब तथा शक्ति के प्रयोग के बीच के स्थान को उत्तोलक का शक्ति बांह (Power Arm or Force Arm) कहा जाता है। मानव शरीर में भार वह अग है जो उठाया जाता है। कभी कभी और अधिक भार का योग हो जाता है जैसे हांथ में उठाई हुयी वस्तु।

आलम्ब, भार एवं शक्ति के (Fulcrum, Weight & Power) के ध्यान से उत्तोलक तीन प्रणालियों में विभाजित है। इसके साथ ही उत्तोलक का नियम भी जानना आवश्यक है।

उत्तोलक नियम (The Law of Levers) :—उत्तोलक नियम यह है कि शक्ति उसी समय भार का सही संतुलन करेगी जब उसके बांह के द्वारा की शक्ति उत्पादन बांह के भार के उत्पादन के द्वारा सही संतुलन करें।

The Law of Lever states that 'the power will exactly balance the weight when the product of the power by its arm will exactly balance the product of the weight by its arm.

प्रयोग में इस नियम की उपयोगिता यह है कि हमें यह ज्ञात होता है कि जितना उत्तोलक का भारबांह लम्बा होगा उतनी ही अधिक शक्ति भार के उठाने के लिये प्रयोग करना पड़ेगा। जितना भारबांह छोटा होगा उतनी ही कम शक्ति प्रयोग होगी तथा इसके विपरीत जितनी ही शक्ति बांह लम्बी होगी उतनी ही कम शक्ति भार के संतुलन करने के लिये आवश्यक होगी तथा जितनी ही शक्ति बांह छोटी होगी उतनी ही अधिक शक्ति का प्रयोग होगा।

उत्तोलक जिसके द्वारा बनावट की अधिक उपयोगिता होती है उसमें शक्ति बांह भारबांह से लम्बी होती है। यदि दो बच्चे जिनका भार २५ सेर तथा ३० सेर हो, सी-सौ के दोनों सिरे पर बैठें तथा उनकी दूरी बीच से बिलकुल बराबर हो तो अधिक भार का बालक अपनी ओर बल्ली को नीची कर लेगा तथा कम भार का बालक ऊपर हो जायेगा। किन्तु यदि अधिक भार का बालक अन्दर की ओर खिसक जाये तो बालक संतुलित रहेंगे।

यही मांसपेशियों के साथ होता है। यदि हम एक मांसपेशी या मांसपेशियों के समूह से उपयोगिता पूर्वक कार्य करना चाहते हैं तो हम शक्ति बांह को छोटा या बड़ा नहीं कर सकते (संधि से मांसपेशी के प्रवेश की दूरी) हमें भारबांह में कमी या अधिक करने की आवश्यकता होगी। जितना ही गुरुत्व का केन्द्र आलम्ब के समीप होगा उतना ही कम कार्य मांसपेशियों को करना होगा। आलम्ब से सम्बन्धित गुरुत्व का केन्द्र दो उपायों से परिवर्तित किया जा सकता है। उदाहरण के लिये डेलटोयड (Deltoid) के द्वारा कंधे को खींचने में हम (१) कोहनी को मोड़ कर अंग को छोटा कर सकते है अर्थात हाथ को मुड़ी हुई अवस्था में रख सकते हैं तथा इस प्रकार केन्द्र को कंधे के समीप ला सकते हैं। इस प्रकार गति हाथ फैलाने की तुलना में सरल होगी या (२) यदि हम गति कठिन करना चाहें तो बाधा की दूरी संधि से अधिक से अधिक करते जायें अर्थात ऊपरी बांह, कोहनी या कलाई पर।

उत्तोलक प्रणाली

(१) प्रथम प्रणाली 'संतुलन उत्तोलक', इसमें आलम्ब शक्ति एवं भार के बीच में स्थित होता है। यह आवश्यक नहीं है कि यह बिलकुल बीच में हो किन्तु यह प्रायः सम दूरी पर होते हैं इसमें शक्ति एवं भार एक ही दिशा में कार्य करते हैं तथा उत्तोलक की बांह विभिन्न दिशाओं में गतिप्रद है।

इस प्रकार के उत्तोलक कैंची, सीसौ, पम्प का हैंडल आदि में पाये जाते हैं।

मानव शरीर में ट्राइसेप्स (Triceps) के द्वारा कोहनी का खिचाव, सिर का खिचाव, कोमप्लेक्सस (Complexus) के द्वारा आदि उदाहरण हैं।

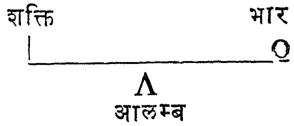

(२) द्वितीय प्रणाली 'शक्ति उत्तोलक' है इस में भार, आलम्ब तथा शक्ति के प्रयोग के स्थान के बीच में स्थित होता है। शक्ति एवं भार विपरीत दिशा में कार्य करते हैं।

इसमें भार के संतुलन के लिये शक्ति, सदा भार से कम होती है क्योंकि भारबांह से शक्तिबांह को लम्बा रहना है। अतएव उत्तोलक बहुतायत से बनावट की उपयोगिता देती है तथा इसके द्वारा शक्ति प्रयोग में भारी कमी हो जाती है जब कोई भारी भार उठाना हो। इस प्रकार के उत्तोलक शरीर में कम हैं क्योंकि अधिक शक्ति से अधिक गति की शीघ्रता एवं संतुलन की आवश्यकता होती है।

इसका उदाहरण मनुष्य के गाड़ी ढकेलने में दिखायी देता है। इसमें आलम्ब पहियों का धुरा है, भार गाड़ी के भार के गुरुत्व आकर्षण केन्द्र के द्वारा कार्य करती है तथा शक्ति व्यक्ति के हाथों के द्वारा मुट्ठियों पर दी जाती है। भार जिस स्थान पर कार्य करता है उससे आलम्ब से अधिक दूरी पर शक्ति के प्रयोग से भार उठाने के लिये कम शक्ति की आवश्यकता होती है।

उंगुलियों पर खड़ा होना शरीर में इस उत्तोलक का एक उदाहरण है।

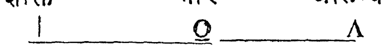

(३) **तृतीय प्रणाली** :—'तीव्रता उत्तोलक' इसमें शक्ति, आलम्ब तथा भार के स्थान के बीच लगाया जाता है। शक्ति एवं भार विपरीत दिशा में कार्य करते हैं तथा उत्तोलक के बांह एक ही दिशा में कार्य करते हैं। इस उत्तोलक में संतुलन के लिये शक्ति भार से सदैव अधिक रहेगा क्योंकि भार बांह सदैव शक्ति बांह से लम्बा रहेगा।

बनावट के उदाहरण में दरवाजा बन्द करने के लिये स्प्रिंग, मनुष्य का

दिवाल से सीढ़ी हटाना तथा छीप तथा डोरी से मछली मारना आदि हैं। इसमें आलम्ब छीप का अन्त है जो लड़के के शरीर पर अवलम्बित है। शक्ति, उठाने वाले हाथ से दिया जाता है तथा भार मछली है जो छीप के दूसरे सिरे से लटकी है। हाथों का फैलाना, घटना आदि शरीर में इसके प्रकार हैं।

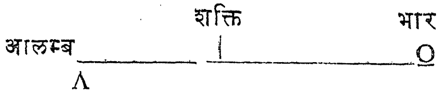

इस प्रकार के उत्तोलक को 'तीव्रता उत्तोलक' (Speed lever) कहते हैं। इसको समझाने के लिये शक्ति के बचाव का नियम (The Law of coservation of energy) जानना आवश्यक है। इस सिद्धान्त से यह पता चलता है कि विश्व में सम्पूर्ण शक्ति (Energy) का प्रकार वह है जो किसी सीमित प्रणाली में जो न अपने मे बाहर किसी प्रकार शक्ति प्रवाहित करती है न किसी वाह्य स्रोत शक्ति ग्रहण करती है तथा वह मात्रा में अपरिवर्तित है।

वास्तव में शक्ति अपने रूप को परिवर्तित कर देती है किन्तु उसका नाश नहीं होता। उदाहरण के लिये, कोयले में सूर्य की क्रियाओं के कारण शक्ति जमा रहती हैं। जब तक कोयला अपनी इकाई में होता है तब तक उसमें शक्ति आन्तरिक रूप में स्थित रहती है। यदि कोयला चूल्हे में डाला जाये तो उसकी शक्ति क्रिया शील (Kinetic) बनती है। वह कार्य के रूप में निकलती है, तथा उसके द्वारा अनेक अन्य कार्य सम्भव होते हैं। शक्ति का रूपान्तर होतां रहता है।

उत्तोलक प्रणाली में यह पता चलता है कि जो शक्ति में व्यय होता है वह दूरी में प्राप्त होता है तथा इसके विपरीत भी सम्भव है। इसीलिये तीसरी प्रणाली के उत्तोलक, गति की तीव्रता सम्भब करते हैं। इस प्रकार के उत्तोलक में, मांसपेशी संधि के समीप प्रवेश करते हैं तथा इस उत्तोलन के कारण शरीर को पूर्ण शक्ति, तीव्रता तथा गति का विस्तार जो आवश्यक है प्राप्त होता है तथा सस्कार का कसापन (Compactness of structure) भी प्राप्त होता है, जिसमें मांसपेशी अस्थी के बहुत समीप होते हैं, जो और लम्बे मांसपेशी बाँह (Longer muscle arms) में सम्भव नहीं।

शक्ति के खींचने का कोण

उत्तोलक बांह से सम्बन्धित प्रभाव के अतिरिक्त मांसपेशियों की क्रिया उत्तोलक पर खींचने की दिशा के कारण संशोधित हो जाती है। खींचने का कोण जो सब से अधिक उपयोगी है वह ५०° का कोण है क्योंकि इसका कोई भाग नाश नहीं होता तथा सब उत्तोलक को इच्छित दिशा में गतियुक्त करते हैं। किन्तु यदि शक्ति छोटे कोण से खींचती है मान लीजिये ३०° से तो वह दो भागों में विभक्त हो जाती है जिसमें से केवल एक, अस्थी में इच्छित दिशा में लाने के लिए प्रयोग होता है। इस विषय पर ध्यान रखना आवश्यक है कि मांसपेशियों के खींचने का कोण अंग के गति में साथ कम या अधिक होता है। यदि वह सम क़ोण से अधिक खींचता है तो कुछ शक्ति अस्थी को संधि में दबाने के अतिरिक्त चलायमान अस्थी को संधि से बाहर खींचने लग जाता है।

उदाहरण के लिये ह्यूमरस (Humerus) स्थिर अस्थी है तथा रेडियस एवं अलना (Radius and ulna) चलायमान हैं। यदि मांसपेशी इनमें से किसी एक को समकोण से खींचता है जैसे (Biceps) करता है तो कोई शक्ति नाश नहीं होगी तथा सम्पूर्ण मांसपेशियों की शक्ति बांह के गति में प्रयोग होगा। किन्तु यदि इस एक अस्थि पर खिचाव छोटे कोण से होगा जैसे (Supinator longus) के द्वारा तब अधिक शक्ति (Head of the Radius) के खींचने में नाश होगी तथा थोड़ी शक्ति बांह की गति में प्रयोग होगी

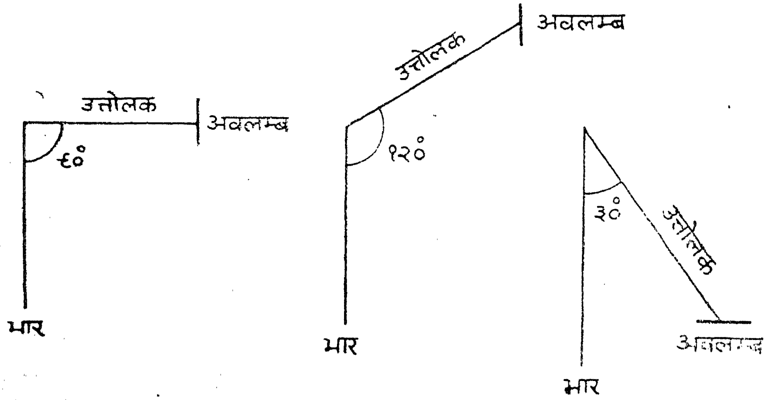

एक भारी लट्ठे को उठाने के लिये शक्ति को समकोण से प्रयोग करना होगा जिससे गुरुत्व आकर्षण का समकोण खिचाव का काट हो तथा उसके सिरों को पकड़ना होगा जिससे लम्बे से लम्बा शक्ति बांह जो सम्भव है दिया जा सके।

निर्बल मांसपेशियों को सहायता देने के लिये जहां तक सम्भव हो समकोण से खींचने का अभ्यास आरम्भ करना है।

गति [मोशन आर मूवमेन्ट]

चाल एक गति की क्रिया हैं। (Motion is an act of movement) जब एक चलती हुयी वस्तु अपना स्थान बदलती है तथा अन्य स्थान ग्रहण करती है तो उसे स्थान परिवर्तन (Displacement) कहते हैं। इसमें परिवर्तन की गहराई तथा दिशा का ज्ञान होता है। जिस तीव्रता (Velocity) से स्थान परिवर्तन होता है उसे स्थान परिवर्तन का परिमाण (The Rate of its displaeement) कहते हैं। तीव्रता या वेग की गहराई (Magnitude of velocity) को तीव्रता या वेग (Speed) कहते हैं The Magnitude of the Velocity is called Speed जिससे पता चलता है कि किस परिमाण में स्थान परिवर्तन हुआ है।

गति के अंग मांसपेशियां तथा संधि हैं। स्वस्थ्य मांसपेशियां एवं संधि अपनी पूर्ण योग्यता से कार्य कर सकती हैं। वे अपने अधिक से अधिक फैलने के स्थान से अपने अधिक से अधिक सिकुड़न के स्थान तक जिसे पूर्ण योग्यता या मार्ग (Full range or Path) कहते हैं कार्य कर सकते हैं। मांसपेशियां अपने मध्य स्थान से पूर्ण सिकुड़न तक कार्य कर सकती हैं इसे आन्तरिक दूरी (Inner range) कहते हैं। मांसपेशियां अपने फैलने के स्थान से मध्य स्थान तक कार्य कर सकती हैं जिसे बाह्य दूरी (Outer range) कहते हैं।

स्वस्थ्य मांसपेशियां जो अपना साधारण दैनिक कार्य करती है वे मध्य (Middle range) में कार्य करती हैं। इसका अर्थ यह है कि वह अपना पूर्ण फैलाव एवं सिकुड़न नहीं करतीं किन्तु वे सदैव पूर्ण आन्तरिक या बाह्य मार्गों में कार्य के लिये तैयार एवं योग्य रहती हैं।

संधि मांसपेशियों के खिचाव से किसी विशेष दिशा में कार्य करती हैं।

ये इस प्रकार स्थित हैं कि जब उनका खिचाव होता है तो अंगों की गति उनकी दिशा में होती है। इसे सम्भव करने के लिये विपरीत दिशा में जो मांसपेशियां होती हैं उन्हें ढीला होना पड़ता है।

मांसपेशियों के तीन विशेष गुण होते हैं। फैलाव (Extensibility) फैलने की योग्यता (Elasticity) तथा सिकुड़न (Contractility) गति दो प्रकार की होती हैं एक जिन पर क्रिया होती है स्वयं क्रिया नहीं करती (Passive) तथा दूसरी जो क्रिया करती है (Active)।

गति जो क्रिया नहीं करती किन्तु उन पर क्रिया की जाती है

यह उस प्रकार कि गति होती है जिसमें कार्य करने वाला बिल्कुल ढीला होता है तथा उस पर कार्य दूसरे के द्वारा किया जाता है। यह दो प्रकार का हो सकता है ढीला (Relaxed) तथा प्रभावित (Forced)।

कार्य करने वाली गति

यह सर्वोत्तम गति है क्योंकि यह नैसर्गिक है। इसके द्वारा स्वतंत्र गति, ताल बद्ध गति, लचीलेपन की गति आदि ऐच्छिक गति सम्भव होती हैं।

निर्बल मांसपेशियों के लिये सहायक गति भी दी जाती है जो हाथों के द्वारा, आपरेटस् के द्वारा, गर्म जल के द्वारा तथा स्वयं की सहायता से सम्भव होता है।

विरोध की गति भी दी जाती है जब निर्बल मांसपेशियों को सबल करने की आवश्यकता होती हैं।

कोचिंग के कुछ साधारण मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त

(१) समतुलन—यह फिजिक्स से प्राप्त होता है (Physics)।

(२) जितना बड़ा आधार होगा उतना ही वह स्थिर होगा।

(३) आधार के किनारे जितना सेन्टर आफ ग्रेवटी (Center of gravity) के समीप हों उतना अस्थिरता होगी।

(४) वस्तु या शरीर जितना ही भारी हो उतना ही आधार स्थिर होगा ।

(५) जितना सेन्टर आफ ग्रेवटी नीची हो उतना ही स्थिर समतुलन होगा ।

(६) किनारा समतुलन के लिए आधार के अन्दर गिरना चाहिये ।

(७) शरीर का सेन्टर आफ ग्रेवटी (जो उसका समतुलन स्थान हैं) वह पुट्ठों की ऊँचाई पर है । यह अवस्था सीधे खड़े होने पर होगी ।

(८) शरीर का सेन्टर आफ ग्रेवटी प्रायः ५ इन्च तक इधर उधर हो जाती है जैसे की शरीर के अंग घूमने के योग्य हों ।

इनका प्रयोग :—

(१) शीघ्रता से आरम्भ करने के लिए सेन्टर आफ ग्रेवटी को उतना ऊँचा और आधार के किनारे लाना चाहिये जितना सम्भव हो (जितने ऊँचे पुट्ठे होंगे उतना ही तेजी से आरम्भ होगा) अधिक से अधिक स्थिर होना चाहिये ।

(२) शीघ्रता से रुकने के लिये सेन्टर आफ ग्रेवटी को नीचा कर देना चाहिये और आधार को फैला देना चाहिये ।

(३) स्थिरता के लिये आधार को फैलाना तथा नीचा होना चाहिये ।

(४) जितने कार्य हैं जिन में सहारा लेना पड़ता है उनमें सेन्टर आफ ग्रेवटी को सहारा के ऊपर लाना चाहिये ।

(५) जब हवा में हों तो सेन्टर आफ ग्रेवटी ऊँची या नीची की जा सकती है । शरीर के अंग उसके मार्ग में पुनः विधिवत किये जा सकते हैं ।

———

एथेलेटिक्स

१

स्प्रिंटिंग

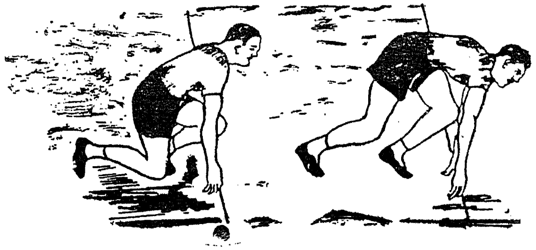

स्टार्टिंग

स्प्रिंटिंग में केवल १०० तथा २०० मीटर की दौड़ आती हैं। इसकी कई एक रीति ४०० मीटर से मिलती है इसलिये इन तीनों का वर्णन एक साथ ही किया जाता है।

आधुनिक रीति में स्टार्टिंग के लिये स्टार्टिंग ब्लॉक्स (Starting Blocks) प्रयोग किये जाते हैं। ब्लॉक्स की दूरी किसी निश्चित रूप से नहीं बतायी जा सकती। यह व्यक्तिगत सरलता एवं अभ्यास पर निर्भर होगा।

इतना अवश्य निश्चित है कि पिछला ब्लॉक्स इस प्रकार स्थित किया जायेगा कि पिछले पैर की जांघ 'ऑन योर मार्क्स' (On your marks) अवस्था में जमीन से समकोण बनाये तथा 'सेट' (Set) अवस्था में निचले पैर से १२०° का कोण बनाये। इस अवस्था में स्टार्टिंग लाइन (Starting line) से ब्लाक्स ३०" के आस पास की दूरी पर स्थित होती है।

जहां यह सम्भव नहीं वहां गढ़े से स्टार्ट लिया जाता है। ६" का गढ़ा इस प्रकार खोदना चाहिये कि उसका आधार लम्ब हो, पिछले पैर का घुटना दूसरे पैर की गोलाई के विपरीत हो।

आन योर मार्क्स (On your Marks) :—पर गढ़े या ब्लाक्स के सहारे अपना स्थान लेना चाहिये जिससे पिछले पैर की जांघ सीधी ऊपर नीचे हो, हाथ कंधे के नीचे हों, उंगलियां स्टार्टिंग लाइन पर अंगूठे तथा अन्य चार उंगलियों से अंग्रेजी 'वी' V बनाया जायेगा जिससे संतुलन प्राप्त हो। भार आगे घुटने पर हो, हाथों पर नहीं। दृष्टि प्राय: १०' के लगभग आगे होगी। इसी के साथ एक दूसरी प्रणाली है जिसमें भार आगे की ओर होता है तथा कंधे प्राय: एक आध इन्च लाइन से आगे बढ़ जाते हैं। दोनों रीति में केवल भार का अन्तर है।

'गेट सेट' (Get Set) में कंधों को प्राय: ६" आगे करते हुए शरीर उठाना चाहिये जिससे पिछले पैर का घुटना जमीन से ६" ऊपर हो जाये, कूल्हे कंधे से ऊपर हों, इस प्रकार पिछला पैर शक्तिशाली स्थिति में होगा। पिछले पैर पर कोई भार नहीं होगा। दोनों पैरों से ब्लाक्स या गढ़े के विपरीत पूर्ण दबाव होगा तथा यह इस प्रकार हो कि यदि हाथों का सहारा थोड़ा भी कम हो, तो व्यक्ति मुंह के बल आगे गिर जाये। भार विशेष हाथों पर होगा कुछ सामने वाले पैर पर भी होगा। दृष्टि प्राय: १०-२०' आगे की ओर होगी। इस अवस्था में एक गहरा साँस लिया जायेगा तथा शरीर की अवस्था दो सेकेण्ड तक रोक कर रखनी चाहिये तथा दोनों पैरों से ब्लाक को पूरी ताकत से धक्का देना चाहिये जिससे 'गन' (Gun) के चलते ही व्यक्ति बाहर तेजी से निकल सके। इसका अभ्यास करना आवश्यक है कि गन के बाद धक्का न दिया जाये किन्तु धक्का तथा गन एक साथ हों। इस अवस्था में बिलकुल स्थिर रहना आवश्यक

है तथा ध्यान, अधिक से अधिक वेग के साथ छूटने तथा आगे बढ़ने के ऊपर हो, गन पर नहीं ।

'गो' या 'गन' (Go or Gun) पर कई एक शारीरिक क्रिया तत्कालीन होंगी । दोनों पैरों से एक ही साथ शक्तिशाली धक्का दिया जायेगा । बायां हाथ आगे एक तेज़ गति से झूलेगा, दायें हाथ में कोई विशेष चेष्टा नहीं होगी । हाथ आगे कंधों से आगे तथा पीछे कूल्हों की सतह से पीछे नहीं जायेंगे । जैसे ही पैरों की शक्ति गड्ढे के विरुद्ध समाप्त हो जाये दाहिना पैर ट्रैक के ऊपर एक दबाव की गति (Jabbing motion) से डाला जायेगा । दाहिने पैर का सम्पर्क ज़मीन से स्टार्टिंग लाइन के ८" आगे होगा । कुछ कोच इससे भी लम्बी सम्पर्क के ऊपर बल देते हैं । शरीर की गुरुत्व आकर्षण शक्ति एक सीधी लाइन में ट्रैक के १०-२० गज़ आगे होगा । पैरों की गति जितनी शीघ्रता से हो करना चाहिये तथा पूरा स्ट्राइड लेना चाहिये । पहले पांच स्ट्राइड अधिक से अधिक शीघ्रता से पूरी शक्ति के साथ लाने में प्रयोग करना चाहिये । दूसरे स्ट्राइड पर दाहिने हाथ का अच्छे झुकाव के साथ आगे ड्राइव होगा । शरीर का झुकाव आगे होगा, पैरों से ट्रैक पर जैब किया जायेगा तथा तेज़ ड्राइव होगी । स्ट्राइड औसत दर्जे की होगी । यही अवस्था पहले १५ गज तक रखनी चाहिये । हाथों की कोहनी में थोड़ा मोड़ होगा । हाथों का झुलाना तेज़ी से तथा शक्ति के साथ होगा । प्रत्येक स्ट्राइड पहले से अधिक लम्बा होगा । ऊँची घुटने की क्रिया, अधिकता से बाऊन्स (Bounce) तथा पैरों एवं एड़ी से स्प्रिंग बहुत ही लाभदायक सिद्ध होंगे । श्वांस साधारण रीति से ली जायेगी । सम्पूर्ण स्प्रिंट क्रिया में ढ़ीलापन एवं शरीर का आगे झुकाव, हाथों की क्रिया, स्ट्राइड की लम्बाई तथा पैर एवं एड़ी से बाऊन्स पर ध्यान देना आवश्यक है ।

बिल्डअप :

इस दौड़ तथा दूसरी दौड़ में पैरों की गति में अन्तर होगा । तेज़ जाब से ऊँचा घुटना और जांघ ऊँची तेज आगे की गति में परिवर्तित होंगे ।

मुख्य परिश्रम पैरों के नीचे लाने में नहीं किन्तु शीघ्रता से घुटनो को प्रत्येक स्ट्राइड में उठाने में होगा । हाथों की गति झटके से बदल कर कुछ लम्बे झुलाव में होगा । हाथों की गति अत्याधिक तीव्र होती रहेगी ।

बिल्डअप दौड़ तथा आरम्भ के ड्राइव दौड़ में अन्तर यह है कि पैरों की गति अधिक पुश और पुल का मेल है न कि केवल पुश की चेष्टा करना। रेस के किसी दूसरे पक्ष से बिल्डअप में घुटने आगे के झुलाव में अधिक ऊँचे आते हैं। पहले दस गज में ड्राइव होता है और दूसरे तीस गज में बिल्डअप होगा। दूसरे स्ट्राइड से स्ट्राइड की दूरी क्रमश: बढ़ती जाती है तथा ३५ गज तक सब से लम्बी स्ट्राइड हो जाती है।

११० मीटर स्प्रिंट :

पहले ४० गज़ एक स्टाइल से दौड़ते हैं। यहां तक अधिक से अधिक तेज़ी लाई जाती है और फिर उसी को निम्न रीतियों से रखा जाता है।

दौड़ने वाला अधिक से अधिक तेजी ४० गज़ निशान पर लाता है। फिर यह तेज़ी, पैरों की गति बदलने से स्थिर की जाती है। यह ऊँचे घुटने के उठाने के स्थान पर घुटने की नीचे आगे ड्राइड फैलाव में कुछ लम्बे पैर के पहुंच से की जाती है। यह कहा जा सकता है कि साधारण स्प्रिंट्स से ग्लाइड के फार्म में बदल जाता है। यह परिवर्तन कंधों को आगे ले जाने में; और हाथों को और ढीली और कुछ नीची स्थिति की गति के करने में होता है। बहुत से दौड़ने वालों को यह समझने में कठिनाई होगी कि तेज़ी-ऐसी ढिलाई की अवस्था में कैसे बनी रहेगी? बिल्डअप से बहुत कम परिश्रम इस अवस्था में करना पड़ेगा। दौड़ का यह पक्ष किसी दौड़ने वाले को कठिनता से आता है क्योंकि इसमें शरीर पर पूर्ण मानसिक नियन्त्रण रहता है।

समाप्ति :

अत्याधिक दौड़ने वाले अपनी तेजी इस ढीले रूप में ४० या ५० गज़ तक बनाये रख सकते हैं। इस समय शरीर बहुत सीधा होगा और ८० गज़ तक कुछ तेजी में कमी होगी। इस रुझान को रोकने के लिए और यह निश्चय होने के लिए कि पूरी शक्ति रेस में लग रही है एक रूप जो बहुत कुछ बिल्डअप की तरह है बाकी २० गज़ में प्रयोग किया जा सकता है।

ढीलेपन से बदल के फिर बिल्डअप की स्थिति में—कंधे फिर आगे की ओर किये जाते हैं, हाथ उठाये जाते हैं घुटने की क्रिया उठाई जाती है तथा

पूरी शक्ति अधिक से अधिक तेजी लाने के लिए लगाई जाती है। शरीर की स्थिति में परिवर्तन क्रमशः लाया जाता है किन्तु शक्ति एक आकस्मिक भड़क के साथ छोड़ी जाती है। यह कठिन चेष्टा टेप (Tape) तक रखी जाती है किन्तु शर्त यह है कि दौड़ने वाला अपना फार्म और ताल न छोड़े। किसी भी दौड़ने वाले को अपने फार्म का नियंत्रण हटने नहीं देना चाहिए जिससे उसकी माँसपेशियां बँध जायें या "टाई अप" हो जायें। दौड़ के अन्तिम स्ट्राइड में टेप के छूने के लिए अन्तिम चेष्टा की जाती है। यह कन्धों को आगे फैंकने के द्वारा किया जाता है। फिनिश करने की दूसरी रीति फिनिश लाइन से पांच गज आगे तक का प्रयत्न रखना होता है।

२०० गज की दौड़ :

२२० मीटर की दौड़ में पहिला ४० स्ट्राइड ११० मी० की तरह दौड़ी जाती है। ढीलेपन की अवस्था ४० वें गज़ पर आना चाहिए। दौड़ने वाले को ८० गज़ के निशान तक बिना फार्म के बदले हुये अधिक शक्ति प्रयोग करना चाहिए। यहां चेतावनी दी जाती है कि तेजी कम न हो जो कि एक ढीलेपन की अवस्था में प्राकृतिक है यदि दौड़ने वाला ध्यान न रखे। यह ढीलेपन की अवस्था १७५ गज तक रखी जाती है। इसके लिए कठिन परिश्रम और अभ्यास की आवश्यकता है। क्योंकि इतनी दूरी तक ढीलेपन की अवस्था में तेज़ गति सम्भालना आसान नहीं है। १७५ वें गज़ पर नयी शक्ति के भड़काव का प्रयोग होना चाहिए। जैसे की ११० मी० में २० गज़ पर होता है बहुत से दौड़ने वालों के शरीरिक रीति से इस शक्ति को अब तक रखना कठिन होगा। यह सम्भव हो सकता है कि यह शक्ति की भड़क प्राय: २५ गज तक रखी जा सके इसलिए जहां तक संभव हो ढीले हों किन्तु अच्छा फार्म अन्तिम २० गज तक बनाये रखना चाहिए। यह समझना अत्यन्त कठिन है कि दौड़ने वाला दौड़ में अन्तिम पक्ष में अपने को ढीला करते हुए भी अपनी तेज़ी में कमी नहीं आने दे सकता है।

प्रतियोगिता के लिए आदेश :

दौड़ के पहले गर्म करना—यह दौड़ शक्ति का नियन्त्रित भड़काव है इस में उचित माँसपेशियां उचित समय में प्रयोग होती हैं अतएव गर्म करने के द्वारा

शरीर की तैयार और शक्ति केन्द्रित की जाती है । यह जौगिंग, विंड स्प्रिंट, व्यायाम और प्रारम्भिक आरम्भ (Preliminary Starting) के द्वारा किया जा सकता है ।

दौड़ में संवेगात्मक उत्तेजना एवं उनका नियन्त्रण महत्वपूर्ण है ।

उत्तेजना आवश्यक है तथा प्रकृति भी इसमें सहायता करती है किन्तु यदि उत्तेजना का सही नियन्त्रण न किया जाये तो दौड़ने वाला अपनी श्रेष्ट सफलता के लिए व्यर्थ परिश्रम करेगा । कितनों के लिए यह सरल होगा तथा कितनों के लिए यह कठिन भी होगा । प्रत्येक के लिए एक निश्चित कार्यक्रम गर्म करने का होना चाहिए क्योंकि इसके द्वारा शारीरिक एवं मानसिक तैयारी होती है तथा प्रतियोगिता के लिये उत्तम दशायें उपस्थित होती है जिससे सर्वश्रेष्ट चेष्टा प्राप्त की जा सके । दौड़ के पहले मालिश, स्टार्टर तथा उसकी प्रणाली को जानना, तथा स्टार्टिंग ब्लॉक्स रखना आदि अत्यन्त सहायक होंगे ।

समय से उपस्थित होना, पसीने के कपड़े अन्त तक पहने रहना, ढीले रहना इत्यादि मानसिक सावधानी, अत्यन्त आवश्यक है ।

आरम्भ की अवस्थायें सरलता तथा सुगमता से लेना । 'गो' के आदेश पर 'गन' के छूटते ही जितनी शीघ्रता से निकल सकें निकलना ।

कोचिंग कार्य-क्रम :

(१) ६ सप्ताह तक प्रारम्भिक मौसम की शरीर की तैयारी, व्यायाम आदि करना चाहिए ।

(२) आधार भूत तथ्यों का अभ्यास, इसके प्रत्येक छोटे-छोटे तत्वों का अभ्यास, अच्छे स्टार्ट का सीखना और उसको दोहराना चाहिए ।

(३) प्रतियोगिता के समय में अधिक कार्य न किया जाये सप्ताह में दो दिन बिलकुल हल्का काम किया जाये तथा एक दिन विश्राम रखा जाये ।

(४) तेज क्रिया करने के लिए शरीर को गर्म करने की आवश्यकता है । गर्म करने में कार्य से अधिक शक्ति का प्रयोग करना ।

(५) अभ्यास के समय, पूर्ण शक्ति से तेज़ कार्य, थकान आ जाने से पहले करना चाहिए। सहने की शक्ति के काम बाद में आनें चाहिए। थकान से मांसपेशियों को हानि हो सकती है।

(६) प्रशिक्षण की समस्या शारीरिक होने के साथ मानसिक भी है। जिस दौड़ने वाले को अपने ऊपर विश्वास नहीं होता है वह स्टार्ट करने के समय गड़बड़ा जाता है। अपने ऊपर विश्वास रखना सिखाया जा सकता है तथा इसकी ट्रेनिंग भी दी जा सकती है। आवश्यकता से अधिक विश्वास होने से भी हानि की सम्भावना होती है।

साप्ताहिक कार्य क्रम :

सोमवार — जौगिंग तथा विंड स्प्रिंट
मंगलवार — स्टार्टिंग-कुछ तेज़ा स्टार्ट
बुधवार — स्प्रिंट-फिनिश
वृहस्पतिवार— कुछ स्टार्ट, जैगिंग
शुक्रवार — ३/४ तीव्रता फिनिश के साथ

अनुभवी दौड़ने वालों के लिए १/४ मील की दौड़ भी एक डैश (Dash) होती है तथा २०० गज की दौड़ की तरह दौड़ा जा सकता है। अधिकतर दौड़ने वालों के लिए वही स्टार्ट, बिल्डअप (जो पहिले दिये जा चुके हैं) प्रयोग करना चाहिए। ४० गज की निशान पर ढीली अवस्था में परिवर्तन होना चाहिए। हाथ की क्रिया कुछ नीची होनी चाहिए। स्ट्राईड लम्बे तथा सरलता से लेने चाहिए, पैर की एड़ी तथा पैर की गोलाई ट्रैक पर गिरने के समय सतह पर होनी चाहिए। पैरों, हाथों तथा कंधों की पेशियों में कोई खिचाव नहीं होना चाहिए।

४४० गज की दौड़ का अन्त :

३०० गज के निशान पर दौड़ने वाले को सबसे आगे वाले व्यक्ति के २ स्ट्राइड पीछे स्थान लेना चाहिए यदि रेस के पहले हिस्से में गति तेज़ रही हो। इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए ३०० गज की दूरी पर बहुत परिश्रम करना पड़ेगा। यदि इस परिश्रम की आवश्यकता हो, तो परिश्रम के बाद ढीला

हो जाना चाहिए। ४०० गज के निशान पर जैसे २२० में १७५ गज पर किया गया था वैसे ही करना होगा। ऐसी दौड़ २० गज तक होगी। यह ढीली अवस्था में होना चाहिए। यह दौड़ इतनी छोटी तथा तेज़ होती है कि दौड़ने वाले को अपने ध्येय की पूर्ति का एक ही अवसर मिलता है। बुद्धिमत्ता इसी निर्णय में है कि इस अवसर का प्रयोग कब और कैसे किया जाये। जब अवसर तथा स्थान निश्चित कर लिया जाये तो पूर्ण, आकस्मिक शक्ति से उसकी पूर्ति की चेष्टा की जाये। सीधे दौड़ में पहले तीसरे हिस्से में ही दूसरों से आगे बढ़ने की चेष्टा करनी चाहिए।

प्रशिक्षण संगठन :

प्रतियोगिता के तीन सप्ताह पूर्व भाग लेने वालों को श्रेष्ठ अवस्था में होना चाहिए। मानसिक, संवेगात्मक तैयारी के लिए दौड़ की कौशलता, कदम की गति तथा तेज़ी के कार्य और पर्याप्त विश्राम होना चाहिए।

(१) यह एक तेज़ दौड़ है तथा इस कार्य में अत्याधिक सहन शक्ति की आवश्यकता है। अभ्यास में इन दोनों बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

(२) हफ़ते में पाँच दिन का प्रशिक्षण उचित है।

(३) स्टार्टिंग का अभ्यास २० गज तक तथा स्प्रिंटिंग का ६० गज तक, प्रत्येक दिन के अभ्यास के कार्य क्रम में होना चाहिये।

(४) उत्तम सहने का कार्य १-४ मील दौड़ने वालों के लिए ३३० बार बार दौड़ने के द्वारा होता है। जैसे तीन बार २२० सबसे अच्छे टाइम के १ सेकेन्ड के अन्दर और बीच में ५ मिनट से कम विश्राम एक सहने के कार्य का उत्तम प्रबन्ध है।

(५) स्प्रिंट कार्य से तेज़ी के लिए अधिक कार्य करना चाहिए किन्तु यह इतना नहीं होना चाहिए कि फार्म से खराबी आ जाये या अधिक खिचाव हो।

(६) सही पग (Stride) का ज्ञान १/४ मील में दौड़ने वालों के लिए महत्व पूर्ण है।

(७) समय देखने के लिए पूरे दौड़ को अभ्यास के समय नहीं दौड़ना चाहिए। केवल टीम के चुनाव के लिए दौड़ा जा सकता है।

(८) सम्पूर्ण शरीर का व्यायाम आवश्यक है। पेट और पीठ के व्यायाम विशेष रूप से आवश्यक हैं। ४४० गज के दौड़ने वालों के लिए एड़ी तथा पैर की मांसपेशियों का बढ़ाना अत्यन्त आवश्यक हैं।

(९) सबसे उत्तम एक व्यायाम ४४० गज दौड़ने वालों के लिए, वह रिले हैं जो समाप्त नहीं होती है। इस रिले में तेज़ी, सहना, बटान का अभ्यास सामूहिक प्रतियोगिता तथा पग निर्णय सभी सम्मिलित हैं। रिले टीम में प्रत्येक व्यक्ति को तीन बार २२० या अधिक दौड़ना पड़ता है। यह साधारण रिले की तरह आरम्भ होता है किन्तु प्रत्येक टीम का अन्तिम व्यक्ति बटान पहले व्यक्ति को पास करता है तथा यही एक या कई बार दोहराया जाता है।

साप्ताहिक कार्य क्रम :

सोमवार — स्टार्ट एवं स्प्रिट, सामूहिक कार्य
मंगलवार — समय लेना जिससे पेसिंग का ज्ञान हो
बुधवार — सहने की शक्ति का प्रशिक्षण
वृहस्पतिवार— स्टार्ट-सामूहिक विंड स्प्रिट
शुक्रवार — विश्राम
शनिबार — प्रतियोगिता

आधे मील की दौड़ :

आधे मील की दौड़ के सिद्धान्त वैसे ही हैं जैसे ४४० गज़ में केवल थोड़ अन्तर है। पहिले ३०० गज ४४० गज की तरह दौड़ा जायेगा केवल गति कुछ धीमी होगी। ढीली अवस्था पहले लैप के अन्त तक रखना चाहिए और दूसरे के १५० गज़ तक। इस समय दौड़ने वाले को जो 'लीड' कर रहा हो उसके १० गज़ समीप आना चाहिए। दूसरे लैप के बीच में १५० गज़ ढीली अवस्था में दोड़ने का आयोजन होना चाहिए जिससे शक्ति अन्तिम परिश्रम के लिए बचा ली जाय।

अन्तिम ३०० गज दौड़ने की दो रीतियाँ हैं।

(१) आकस्मिक श्रेष्ट शक्ति का प्रयोग और अन्त लाइन से २०० गज़ पहले 'लीड' करना।

(२) लीडर के पीछे ऐसा स्थान रखना जहां से वह आसानी से पिछले कर्व (Curve) के पास आगे बढ़ सकता है और अन्त के लिए पूरी शक्ति आरम्भ से ही लगा सकता है और टेप के पास ड्राईविंग स्प्रिंट कर सकता है।

इस रेस की गति को निर्धारित करना दौड़ने वाले की योग्यता और कोच के विचार पर निर्भर है।

प्रशिक्षण :

सामूहिक दौड़ ३५ मिनट, आसान जौगिंग ५ मिनट, ऊपरी धड़ का व्यायाम १० मिनट, तेज़ गति का काम ३० मिनट, चलना और जौगिंग, तेज़ गति का काम, आराम से चलना, तेज गति का काम ५ मिनट, आराम से सामूहिक जौगिंग तथा चलना, २०० या ४०० मील धीरे धीरे दोहराना, २०० या ४०० को तेज़ गति से दोहराना, पेस वर्क ४४०-६६०, चलती रहने वाली रिले, टाइम ट्रायल।

साप्ताहिक कार्य क्रम :

सोमवार—२०० या ४०० दोहराना, मंगलवार पेस वर्क ६६० गज या ट्रायल ६६०, बुधवार तेजगति काम दोहराना २२०, वृहस्पतिवार दो या तीन ४४०, शुक्रवार विश्राम शनिवार—प्रतियोगिता।

लम्बी दौड़ :

(१) एड़ी और पैर के नीचे की गोलाई ज़मीन पर एक ही साथ आयेंगे।

(२) सामने की गति में घुटना आगे रहता है।

(३) पैर का निचला हिस्सा आगे ढीला होकर झूलता है।

(४) सीना चौड़ा रहता है।

(५) हाथ ऊपर और सीने से अलग रहते है।

(६) कंधे उतने ही हिलते हैं जितने से संतुलन हो। लम्बी दौड़ में गति समान होना चाहिये।

समय लेना तथा स्टार्ट करना :

समय लेना तथा स्टार्ट करना कठिन कार्य है तथा इसकी उत्तम प्रशिक्षण अति आवश्यक है।

समय लेना :

सही समय लेना उत्तम प्रतिक्रिया के अनुकूलता पर निर्भर है। स्टोप वाच के आरम्भ करने तथा गन छूटने की आवज या उसकी लपक देखने में कुछ समय बीत जाता है। यही अवस्था फिनिश लाइन पर टेप छूने की अवस्था में होना उचित है। टाइम लेने वाले सदैव यही सोचते हैं कि दौड़ने वाले जैसे ही टेप छूयें उसी समय घड़ी रोकना चाहिये। वे भूल जाते हैं कि घड़ी के आरम्भ करने में वे उतनी तेज़ नहीं थे।

प्रयोग से यह पता चलाया गया है कि स्टोप वाच का लिया हुआ समय मशीन के द्वारा लिये हुये समय से कम होता है। उनके समय का अन्तर प्राय: ·०९२ सेकेंड है। अन्तर टेप सम्बन्धित है जहां समाप्ति की आशा आरम्भ से अधिक तेज़ होती है।

अतएव यह आवश्यक है कि समय लेने वाले फिनिश पोस्ट से अलग दूर न हों क्योंकि इस अवस्था में वह अत्यन्त ही शीघ्र घड़ी रोक देंगे। यह अनिवार्य है कि समय लेनें वाले फिनिश पोस्ट के बिलकुल सीध में देखें। इस रीति से वे फिनिश के लिए भी उसी प्रकार से तैयार रहेंगे जैसे वे स्टार्ट के लिये रहते हैं। दौड़ने वालों को टेप से १५ गज की दूरी पर देख कर उन्हें सीधे टेप की सीध में देखना आवश्यक है। इस प्रकार समय, सही होगा।

समय लेने से पहले जितनी घड़ियां हो उन्हें मिला लेना चाहिये।

स्टार्टिंग :

उत्तम स्टार्ट देने के लिए उत्तम प्रशिक्षण की आवश्यकता है। सही स्टार्ट के लिए उचित सही शीघ्रता महत्व पूर्ण है।

स्टार्टर का केवल यह देखने का कर्त्तव्य नहीं है कि कोई अपनी लाइन से 'गन' से आगे न निकले किन्तु यह कि प्रत्येक प्रतियोगी अपने ब्लौक से. एक साथ निकलें। दौड़ने वालों को उनके कार्य में सहयोग देना स्टार्टर का कार्य है। दौड़ आरम्भ होने के पूर्व अपने नियम आदि से ऐथलिट को भली-भांति परिचित करा देना स्टार्टर का कर्त्तव्य है।

अपने प्रारम्भिक शिक्षा से वह एथलिट को शान्तिपूर्ण तथा निश्चयता के वातावरण में ला सकता है।

सम्पूर्ण प्रारम्भिक क्रिया, आवश्यकताओं एवं शिक्षा के समाप्त होने पर एथलिट्स को पसीने के कपड़े उतारने की आज्ञा देना चाहिये।

स्टार्टर का खड़े होने का स्थान ऐसा हो जहां से वह सब एथलिट्स को भलीभांति देख सके तथा टाइमर्स उसे देख सकें। प्रायः प्रत्येक स्टार्टर ट्रैक के दायें या बायें, स्टार्टिंग लाईन से १५ गज़ आगे खड़े होते हैं। कुछ लाईन पर तथा लाइन के पीछे भी खड़े होते हैं।

जिस हाथ में 'गन' होता है उसे सीधे ऊपर उठाया जाता है। एक रंगीन आस्तीन के प्रयोग से टाइम लेने वाले उसे आच्छी तरह से देख सकेंगे। स्टार्टर की दृटि किसी एथेलिट पर नहीं किन्तु लाइन से ६ इन्च आगे बीच में केन्द्रित होना चाहिये। उसकी दृष्टि सम्पूर्ण पर विस्तृत रूप में होना चाहिये किसी एक निशान पर नहीं। इस प्रकार वह प्रत्येक गति के लिए सतर्क रहेगा।

हम तैयार हैं कहने के पश्चात 'ओन योर मार्क्स, का आदेश देना चाहिये। पर्याप्त समय एथलिट को देना चाहिये जिससे वे तैयार हो जायें। यदि किसी एक या दो को किसी प्रकार की तैयार होने में कठिनाई हो रही हो तो सबों को फिर आराम से खड़ा कर देना चाहिये।

जब सब ठीक मालूम हो तो 'गेट सेट' कहना चाहिये। उसे पूर्ण दो सेकेंड रुकना है। 'गेट सेट' तथा 'गो' के बीच में दो सेकेंड का समय नियम के अनुसार होना चाहिये।

यदि 'गन' के पूर्व कोई किसी प्रकार की गति करता है या असंतुलित हो जाता है तो स्टार्टर को चाहिये कि वह शीघ्र ही सबों को खड़ा कर दे तथा पुनः आरम्भ करे।

हाई हर्डल

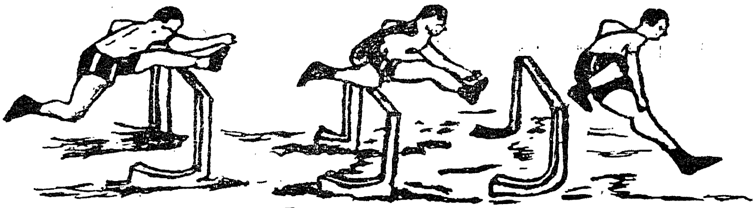

हर्डल दौड़ Sprint है, कूद Jump नहीं। हर्डल करने में पांच सिद्धान्तों को ध्यान में रखना है। बिलकुल सीधे दौड़ने की क्रिया, जिसमें कुल्हों या कंधे में कोई मोड़ न दिया जाय, धड़ का सामने झुकाव, सामने वाले पैर को सीधा ऊपर उठाना जिसमें घुटना कुछ मुड़ सकता है; पिछले पैर का रोक कर क्रिया करना जिसमें कूल्हे के पास लचीलापन हो तथा क्रिया सामने की ओर हो तथा यह निश्चय कर लेना की गति शक्ति जमीन पर सम्पर्क से ही आ सकती है अतएव जितनी शीघ्रता से जमीन पर आ सकें आ जायें।

हर्डल में दौड़ने में तीव्रता जमीन के सम्पर्क से ही आता है अतः जमीन पर आते हुये संतुलन रखना आवश्यक हो जाता है तथा हवा में कम से कम समय व्यतीत करना पड़ता है।

प्रवेश तथा टेक आफ :

टेक आफ से लेकर लैन्डिग तक पैर की क्रिया निरन्तर रहती है। जैसे दौड़ने में होता है वैसे ही हर्डल तक आने तथा उसके ऊपर, क्रिया निरन्तर एवं शीघ्रता से की जाती है। जैसे दौड़ने वाला हर्डल के समीप आता है उसके शरीर

में जितना हो सके झुकाव आगे होगा या स्प्रिंट से अधिक झुकाव होगा। पहले हर्डल के लिए टेक आफ बांये पैर से होगा और जो गति उसके बाद होती है ऐसी होगी कि जैसे दौड़ने वाला एक ऊँचा लम्बा कदम अपने दाहिने पैर से ले रहा हो। टेक आफ के पहले बांया हाथ आगे ड्राइब होगा और इतनी ज़ोर से होगा कि उसका धक्का बांये कंधे में मालूम हो। उसी समय शरीर का झुकाव आगे होगा ज़ैसे की दौड़ने वाला अपने कंधे और सिर को आगे की ओर अपने प्राकृतिक स्थान से बहुत आगे धक्का दे रहा हो। दाहिना पैर आगे और ऊपर किक किया जायेगा जिससे वह हर्डल के ठीक ऊपर से पार कर ले। बायां हाथ तथा दायां पैर हर्डल की ऊँचाई ३' ६" पर हर्डल के समीप आते हुए होंगे। बायाँ पैर ज़मीन के ऊपर तेज गति से खींचा जायेगा और बायां घुटना पुट्ठों की ऊँचाई पर पहुंचेगा। इस अवस्था में जांघ बिलकुल समानान्तर होगा और सीधे बांई ओर लक्षित होगा। दाहिना हाथ साधारण झुकाव में होगा और शरीर के पीछे होगा जब कि बांया हाथ सामने की ओर फैला होगा।

इस समय जैसे साधारण स्प्रिंट में होती है उससे सिर कुछ अधिक ऊँचा रहेगा।

शरीर का सामने झुकाव तथा पिछले पैर का देर से चपटा किये हुये रूप में तथा अंगूठा ऊपर की ओर किये हुये लाने के प्रयत्न से घुटने, एड़ी तथा पैर का हर्डल के ऊपर जाने की क्रिया अच्छी तरह होगी। शरीर जब हर्डल के ऊपर हो तो पिछला घुटना हर्डल से बहुत पीछे होगा। ज़मीन छोड़ने के समय पिछला पैर उस समय तक हवा में पीछे रहेगा जब तक सामने वाला पैर नीचे आने की अवस्था में न हो जाये तब दोनो पैर एक साथ कार्य करेंगे। यदि पिछला पैर शीघ्रता से आता है तो कैंची (Scissors) की क्रिया नहीं हो पाती है। हर्डल में यह बहुत ही महत्वपूर्ण है।

हर्डल तथा लैंडिंग :

प्रथम हर्डल पर जाने के लिए कुछ विशेष बातों पर ध्यान रखना आवश्यक है। हर्डल का आरम्भ बिलकुल स्प्रिंट की तरह होता है। हर्डल को देखने के लिए सिर ऊँचा करना, थोड़े ही स्ट्राइड में शरीर सीधा करना तथा स्ट्राइड का समायोजन प्रमुख आवश्यकतायें हैं। जो पैर पहले हर्डल पर जाता

है वही पीछे ब्लौक में रहता है। कुछ हर्डल करने वाले पहले हर्डल तक ८ स्ट्राइड लेते हैं। कुछ प्रथम हर्डल तक आने में एक स्ट्राइड कम लेते हैं उन्हें स्टार्ट में पहले जाने वाला पैर आगे रख कर स्टार्ट लेना होगा। यदि स्ट्राइड छोटा करना हो तो यह पहले दो तीन स्ट्राइड में हो जाना चाहिए। आरम्भ करने के स्थान में समायोजन करने के द्वारा भी स्ट्राइड की कठिनता हल की जा सकती है। जो भी कठिनता हो बहुत समीप से टेक औफ नहीं लेना चाहिए। फौर्म एवं संतुलन पर ध्यान देते हुये तीव्रता पर ध्यान देना है। इस हेतु प्रथम हर्डल तक हाथों की क्रिया पर अधिक बल देना आवश्यक नहीं क्योंकि संतुलन एवं ढीलापन स्प्रिंटिंग की तरह होता है।

अभी तक जो क्रिया थी वह शरीर को हर्डल की ऊँचाई तक उठाने और लाने के लिए की गई थी। इसमें बाधा पार करने के लिए पैरों से पूर्ण लाभ उठाया जाता है जिससे धड़ जितना कम हो सके उतना कम उठाया जाये। जैसे ही बायां हाथ और दाहिना पैर हर्डल पार करते हैं, वे ज़ोर से नीचे लाये जायेंगे। इसका उद्देश्य है, कि जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी हर्डलर दाहिना पैर ज़मीन पर लाये। जैसे ही बायां हाथ नीचे लाया जाता है वह बायीं ओर खींचा जायेगा जिससे कोहनी में उतनी मोड़ रहे जितनी बांये घुटने के पास होने में छू जाने की सम्भावना न हो। हर्डल के ऊपर से बायें घुटने को झटके के साथ अपने स्थान पर लाते हैं जिससे वह शरीर के बिलकुल बायीं ओर पुट्ठों की ऊँचाई तक होता है। इसके बाद घुटना जैसे ही हर्डल के पार आगे जाता है नीचे की ओर लाया जाता है, किन्तु पैर का वेग घुटने के नीचे होने के साथ बहुत अधिक होगा। दाहिना हाथ बायें पैर के साथ आगे बढ़ता है। दाहिने पैर को हर्डल से चार फुट के अन्दर ज़मीन पर आना चाहिये।

हर्डल के बीच :

हर्डल्स के बीच में तीन स्ट्राइड लिये जाते हैं अर्थात ज़मी चार बार छुयी जाती है। तीव्रता के साथ स्ट्राइड की लम्बाई बढ़ जाती है। निपुणता प्राप्त करने पर प्रथम दो स्ट्राइड कुछ लम्बे तथा अन्तिम कुछ छोटा किया जाता है।

पूरे हर्डल्स के पार करने में हाथ तथा पैर के आदेशित वेग (Directed

motion]को एक क्षण भी रोकना नहीं चाहिए, जब हर्डलर दाहिने पैर के गोलाई पर लैंड करता है तब भी ऐसा ही होगा। शरीर का झुकाव बहुत आगे होगा और दूसरे स्ट्राईड में बायां पैर होगा। हर्डल के बीच, तीन स्ट्राइड लिए जायेंगे और दौड़ने वाले की यह चेष्टा होगी कि जितनी शीघ्रता से यह दूरी तै की जा सकती है, करे। बाकी नौ हार्डल पर फौर्म वैसे ही होंगे जैसे कि पहले हर्डल पर।

अन्त :

अन्तिम हर्डल पार करने के पश्चात सब क्रियायें स्प्रिट के समान होती हैं। अन्त के १५ गज बहुत तेज़ी से दौड़ा जाता है। दौड़ने वाले को हाथ और पैरों को तेज़ वेग से ड्राईव करने पर ध्यान देना चाहिए। यह फौर्म बिल्ड अप की तरह होगा। टेप के पास भी अन्त १०० गज की दौड़ की तरह होगा।

मुख्य बातें :

जब तक मांसपेशियां, दौड़ने, किक करने तथा फैलाने के द्वारा ढीले न हो जायें तब तक हर्डल नहीं करना चाहिए।

बायां पैर का टेक आफ पैर के गोले से होना चाहिए न कि पूरे पैर से। अधिकांश हर्डलर बायें हाथ और दायें पैर के नीचे की गति को बहुत देर में आरम्भ करते हैं। इन की गति तेज़ होनी चाहिये।

पैर के फैलाव, शरीर के लोच तथा दाहिने पैर को तेज़ी से नीचे लाने के लिए विशेष व्यायाम की आवश्यकता होगी। जिस क्षण दायां पैर ठीक हर्डल के ऊपर रहता है, हर्डलर को दाहिने पैर को सही अवस्था में लाने के लिए उस पैर के अंगुठे को नीचे करते हुए, बाध्य करना चाहिए जिस से पैर के तथा टांग के मांसपेशियों में तनाव हो।

तकनीक का अभ्यास इस क्रम से होना चाहिए। बायां हाथ, दाहिना पैर, बायां पैर, शरीर का झुकाव, दायां पैर तेज़ी से नीचे, शरीर की स्थिति, दाहिना हाथ।

सही फार्म में शरीर दायें बायें नहीं मुड़ेगा। दाहिने हाथ की गति कठिनता से आती है।

नये हर्डलर रेस में प्रत्येक हर्डल तक जाने का एक मानसिक परिश्रम करने लगते हैं जैसे कि प्रत्येक 'बाधा' ही दौड़ का उद्देश्य हो।

मानसिक रीति से हर्डल से दूर दौड़ने का ध्यान करना चाहिए। ध्यान रहे कि रेस, टेप के पास अंत होगा।

उपरोक्त उनके लिये है जो दाहिना पैर हर्डल पर पहले लाते हैं।

अभ्यास :

प्रारम्भिक शरीर गर्म करना।

जौगिंग जिससे दूसरे अभ्यास के लिए गर्म हो जायें।

सरल विंड स्प्रिंट, क्रमशः आधी शक्ति से गति तेज करना। १५–२० मिनट तक साधारण शारीरिक व्यायाम।

वौर्म अप, विंड स्प्रिंट।

६—८ सरल स्टार्ट।

तीन प्रैकटिस हर्डल १२ गज़ की दूरी पर, बीच में पांच कदम लेना।

कुछ ३ हर्डल ९ गज की दूरी और ३ कदम पसन्द करते हैं। स्प्रिंटिंग प्रैकटिस।

लो हर्डल

आधारित सिद्धान्त दोनों हर्डल के एक से हैं। लो हर्डल में दौड़ने वाला स्प्रिंटर होना चाहिये जो २०० गज़ स्प्रिंट दौड़ सके। वह हर्डल से स्प्रिंट दो सेकेण्ड पहिले समाप्त कर देगा। आरम्भ की प्रत्येक स्थिति एवं क्रिया स्प्रिंट की तरह होगा।

यहां आदेश उनके लिए है जो पहले हर्डल पार करने के लिए दाहिना पैर पहले प्रयोग करते हैं। टेक आँफ पूरे दौड़ के स्ट्राइड में बायें पैर के गोले से होगा। बायां हाथ और दाहिना पैर जितनी तेजी से हर्डलर कर सकता है आगे

ड्राइव किये जायेंगे किन्तु यह हर्डल की ऊचाई २' ६" तक होगी। बायां पैर आगे झटका जायेगा और घुटना ऊपर उठाया जायेगा किन्तु उतना ही ऊँचा होगा जिससे हर्डलर पार हो जाय। शरीर का झुकाव वैसे ही होगा जैसे स्प्रिंट में। बांये पैर के पहले उठाने में एक लाभ यह है कि कर्व के झुकाव में आसानी होती तथा वह अपने लेन के अन्दर की ओर अधिक रह सकता है।

हर्डल तथा लैंडिंग :

हर्डल के ऊपर की गति हाई हर्डल की तरह होगी किन्तु गति कुछ वेग से होगी क्योंकि ऊँचाई जिसके लिये पैरों को उठाना है, कम है। दाहिना पैर तेजी से ट्रैक पर आवेगा और जमीन पर हर्डल के ३ फुट के अन्दर होगा। बायां पैर हर्डल के ऊपर और आगे इतनी तेजी से लाया जा सकता है जिससे शरीर का झुकाव सही रखा जा सके और दौड़ने वाला ऐसा अनुमान करेगा जैसे की वह इस स्थान पर वेग तेज कर रहा है। प्रथम हर्डल के लिए प्रायः दस स्ट्राइड लिये जाते हैं।

हर्डल्स के बीच :

बीस गज हर्डल्स के बीच की दूरी ७ कदम में पूरी करनी चाहिए। इसके लिए अभ्यास की अत्यन्त आवश्यकता है। सही स्प्रिंट के अभ्यास से तीव्रता बढ़ेगी तथा स्ट्राइड की लम्बाई भी बढ़ेगी। इसके साथ घुटना ऊंचा उठाने की क्रिया, बाऊन्स, तथा पैरों तथा घुटनों की शीघ्रता से क्रिया का अभ्यास होना चाहिये।

अभ्यास :

प्रारम्भिक कार्य-जोगिंग और सरल विंड स्प्रिंट के बाद १०-१५ मिनट का साधारण शरीरिक व्यायाम।

स्प्रिंटिंग का अभ्यास हर्डल के पहले, कुछ तेज़ विंड स्प्रिंट के बाद। ६-१५ बार स्टार्ट और छोटे स्प्रिंट करना है। प्रतियोगिता की अवस्थाओं का ध्यान रखते हुए अभ्यास करना है। दो हर्डल में तेजी के लिए स्प्रिंट तथा कौशल के लिये हर्डल पर काम किया जाये। हर्डल्स के लिये सहने की शक्ति का उत्तम उपाय है, बार

बार तेज़ी से कार्य करना। इसके लिये २२० गज़ के आगे या कम दौड़ना चाहिये। कभी कभी ३०० गज़ या ३५० गज़ दौड़ना भी लाभदायक होता है। सबमें उत्तम अभ्यास, मील की दौड़ के चुनाव में आने की चेष्टा करना है। यह मनोरंजन तथा शक्ति एकत्रित करने का उत्तम उपाय है।

रिले रेस

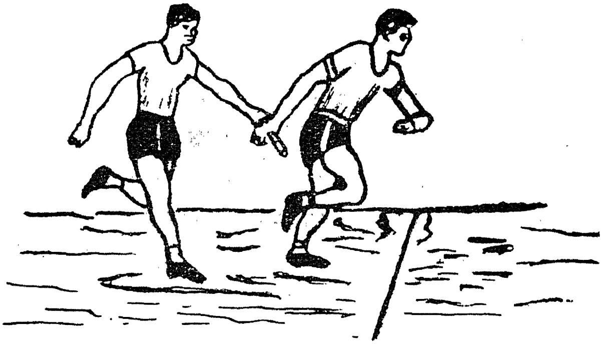

रिले रेस साधारण स्प्रिंट रेस की तरह है केवल उसके प्रथम लैप का आरम्भ तथा अंत भिन्न है जहां बटान पास करने की कला का सीखना आवश्यक है। बटान पास करने की दो तथा लेने की अनेक विधियां हैं। बटान ब्लाइन्ड पास (Blind Pass) तथा देख कर (Sight) पास किया जा सकता है। पहले वाला बटान लेने के समय पीछे नहीं देखता है। दूसरा देख कर पास लेना, यही प्रणाली उत्तम मान ली गयी है।

आरम्भ करने के समय बटान बीच की दो उंगलियों तथा अंगूठे से हथेली के साथ पकड़ा जाता है।

स्प्रिंट रिले :

स्प्रिंट रिले में बटान के उत्तम लेन देन का उत्तरदायित्व देने वाले और लेने वाले दोनों पर निर्भर करता है। इसलिए दोनों को पर्याप्त अभ्यास की आवश्यकता ~।

लेने वाले का रिले के २२ गज़ के क्षेत्र के पीछे शरीर एक चौथाई दाहिने घूमी हुयी और सिर एक चौथाई घूमा हुआ होना चाहिए जिससे कि वह अपने

साथी को आते हुए देख सके। लेने वाला अपना दाहिना हाथ देने वाले की ओर बढ़ाता है। जब देने वाला करीब सात कदम लेने वाले से रह जाता है तो लेने वाला बांई ओर मुड़ जाता है तथा दौड़ना आरम्भ करता है। दाहिना हाथ पीछे फैला नीचे की ओर तना रहेगा, कोण ४५ अंश, उंगलियां मिली होंगी अंगूठा फैला होगा तथा इसके बीच का जो स्थान होगा वह नीचे की ओर होगा। जैसे लेने वाला तेज़ा होता जाता है हाथ सख्त रहता है। बटान के दाहिने हाथ से सम्पर्क के समय हाथ दृढ़ता से उसे पकड़ लेता है और झटके से शरीर के सामने लाता है जहां बायाँ हाथ दाहिने हाथ के नीचे पकड़ लेता है। दाहिने से बायें में स्थानान्तर उसी समय शरीर के सामने होता है।

देने वाला बटान अपने बांयें हाथ में साधारण झुकाव के साथ झुलते हुये लेने वाले के दो कदम तक लाता है। तब बांया हाथ बढ़ाया जाता है और बटान बनाये हुए स्थान के नीचे जो लेने वाले के दाहिने हाथ से बनाया गया है, रखा जाता है। बटान उस स्थान में ऊपर की ओर हाथ के विरुद्ध देने वाले के बांई कलाई की गति से ज़ोर से उठाया जाता है। लेने वाला बटान पकड़ कर झटका देता है जैसे बताया जा चुका है।

उत्तम 'पास' उस समय होता है जब देने वाला अपने उच्चतम शीघ्रता से दौड़ता है, लेने वाला भी उसी शीघ्रता पर लेने के समय होता है। 'पास' २२ गज क्षेत्र के अंदर हो जाना चाहिए।

मुख्य बातें :

देने वाले को बटान देते समय गति धीमी नहीं करनी चाहिए। उसे अपनी पूरी तेज़ी रखनी चाहिए। बटान देना, देने वाले की जिम्मेवरी है। लेने वाले को उचित समय पर दौड़ना आरम्भ करना चाहिये और चेष्टा करना चाहिये कि अत्याधिक वेग से लेन-देन हो। जब तक बटान मिल न जाय लेने वाला दाहिना हाथ पीछे फैलाये रहे। लेने के बाद उत्तरदायित्व पाने वाले का है। झटका देने से पहले बटान अच्छी तरह पकड़ना आवश्यक है। एथलिट के भिन्न भिन्न खड़े होने के स्थान के चुनाव में बटान ले जाने की दूरी, सीधे तथा घुमाव पर दौड़ने की योग्यता, अच्छा स्टार्ट करने वाला, स्वतंत्रता तथा निर्भयता से प्रतियोगिता में भाग लेना आदि पर ध्यान देना आवश्यक है। जिसे सब से

अधिक अनुभव हो उसे सबसे पहले दौड़ना चाहिये। दूसरा उत्तम दौड़ने वाला दूसरा स्थान लेगा। इसी प्रकार तीसरा एवं चौथा। कुछ कोच बिल्कुल इसके विपरीत करते है। एक मील के रिले में जिसमें प्रथम भाग स्टैगर से आरम्भ होता है उसमें एथेलिट के स्थान देने के लिये ट्रैक का नाप, भाग लेने वाले टीमों की संख्या, विरोधियों के खड़े होने के स्थान, के प्रति व्यक्तिगत भावना, कौन से लेन में जाना है, प्रशिक्षण की रीति एवं अभ्यास, एथलिट के आत्मनिर्भरता एवं विश्वास के अधार पर विचार किया जायेगा।

दूर की दौड़

दूर की दौड़ मैं सहन शक्ति सर्व प्रमुख है तथा इस का उचित बटवारा जितनी निपुणता प्रशिक्षण, पूर्णतः एवं शीघ्रता से किया जाये उतना ही उत्तम होगा

आधार भूत

दौड़ने का उत्तम अभ्यास होना चाहिये जिसमें दूरी, तीव्रता एवं बढ़ाव क्रम से प्रगति करें। दौड़ने में सफलता उत्तम एवं अधिक दौड़ने से ही प्राप्त किया जा सकता है। दौड़ने शब्द में सब प्रकार के दौड़ से अर्थ है। ५० से ४४० गज़ की दूरी अनेक बार तीव्रता से दौड़ना जिनके बीच बीच में जॉगिंग, तेज़ चलना आदि हो, दूरी के दौड़ का सबसे उत्तम अभ्यास है। शरीर के उत्तम विकास के लिये सामान्य व्यायाम का कार्य क्रम प्रत्येक दिन होना चाहिये।

दौड़ने में समान कदम से दौड़ना अत्यन्त आवश्यक है। इसका अभ्यास उचित रीति से होना चाहिये। दौड़ने में ढीलापन एवं ताल जो गति से सम्बन्धित है प्राप्त करने की चेष्टा करना चहिये क्योंकि इन के अनुपस्थिति में उत्तम दौड़ सम्भव नहीं। प्रतियोगिता दौढ़ में दो बातों पर ध्यान देना तथा उनका अभ्यास करना आवश्यक है। प्रथम, जो आगे चल रहे हैं उनके साथ रहना तथा द्वितीय जिस अवस्था में हो स्प्रिंट करने की योग्यता बनी रहे। दूरी की दौड़ में थकान का प्रश्न महत्वपूर्ण है। अधिकांश इस थकान का प्रशिक्षण के प्रश्चात अनुमान नहीं होता तथा इस प्रकार का मानसिक प्रवृत्ति अर्जित करना चाहिये कि अपने कार्य के ऊपर विशेष ध्यान न दिया जाये। थकान की भावना वास्तविक थकान नहीं

होती यह अधिकांश मानसिक होता है । आत्म विश्वास एवं आत्म निर्भरता के कारण ऐसी दशा प्रस्तुत की जा सकती है जिससे अपने प्रतिदिन के अभ्यास के कारण व्यक्ति अपने को प्रतियोगिता की विभिन्न आवश्यकताओं के अनुसार प्रशिक्षित कर सकता है । यह अपनी योग्यता के जानने के ऊपर है ।

दूरी की दौड़ की प्रत्येक व्यक्ति की अपनी रीति है । जिस प्रकार वह सरलता से दूरी तै कर सकता है वही उसकी पद्धति होगी । साधारणतः सम्पूर्ण क्रिया, शरीर का झुकाव, हाथों का झुलाव, पैरों को रखना, पिछले पैर को उठाना तथा स्ट्राइड की लम्बाई पर प्रशिक्षण में विशेष ध्यान देना उचित है ।

सामान्य रूप से सम्पूर्ण क्रिया निपुण, सुगम एवं ढीलेपन से होनी चाहिये । हाथ पैर ताल से एवं सुगमता से झूलें । उन में अप्राकृतिक आगे ले जाने की क्रिया नहीं करना चाहिये । सब क्रिया एक सीध में सीधी होना आवश्यक है । पैर, कंधे, कूल्हे सब सीधी क्रिया करेंगे तथा हाथों को कुछ शरीर के सामने आना होगा जिससे संतुलित एवं सामने गति हो । आवश्यकता से अधिक बड़े स्ट्राइड में हानि होगी ।

तीव्रता के बढ़ने के साथ शरीर का झुकाव भी अधिक होगा । जहां तक हो शरीर सीधा होना चाहिये ।

हाथों की गति ढीली एवं ताल से होनी चाहिये जिनका झूलना कंधों से होगा । संतुलन एवं ताल का होना आवश्यक है । हाथों को बगल में गिरने देना चाहिये । उंगलियां कुछ बन्द हों । निशाने की उंगली तथा अंगूठा एक साथ हों । हाथों को कूल्हे की सतह पर उठाना चाहिये । हाथों की क्रिया स्वयं होनी चाहिये ।

पैरों का रखना व्यक्ति के ऊपर, उसकी तीव्रता एवं दूरी पर निर्भर करता है । ८८० गज़, आधा मील तथा दो मील के लिये लैंडिंग तलवे की गोलाई पर होना चाहिये । ८८० गज में गोलाई से एड़ी पर होगा । तलवे की गोलाई का ज़मीन से पहले सम्पर्क होगा तब एड़ी से । कदम लेने के समय शरीर का भार आगे जाता है, एड़ी उठती है तथा पिछले पैर की उंगलियों से पुश (Push) किया जाता है ।

पिछले पैर की क्रिया प्राकृतिक रूप से ढीलेपन के साथ पीछे से आगे लाने की होती है।

स्ट्राइड छोटे, सरलता से किये जाने वाले होना चाहिये।

अभ्यास के लिये अमेरिकन पद्धति जिसमें कोच की निरीक्षता में ट्रैक पर अभ्यास करना आवश्यक होता है तथा फार्टलेक या तीव्रता का खेल या इंगलिश पद्धति जिसमें स्वयं आदेशित प्रशिक्षण पर बल दिया जाता है, प्रयोग किया जा सकता है।

प्रतियोगिता कौशल में निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

(१) अपनी योग्यता का ज्ञान।

(२) सम्पूर्ण योजना, दौड़ की दूरी, ट्रैक के मांप, प्रतियोगियों की संख्या एवं उनकी योग्यता तथा सर्वोत्तम दौड़ने वाले की योग्यता के आधार पर निर्धारित करना चाहिये।

(३) एक मुख्य योजना के साथ कई एक उप योजनायें होना आवश्यक हैं।

(४) योजना निर्माण करने के पश्चात आत्म विश्वास एवं आत्मनिर्भरता होना आवश्यक है।

(५) जिसकी स्प्रिंट उत्तम होगी उसकी सफलता सम्भव है।

(६) आगे निकलना एवं अपना स्थान उसी अवस्था में स्थित रखना सर्वोत्तम कौशल है।

(७) दौड़ के तीसरे पक्ष में तीव्रता नियत किया जाना चाहिए। सदैव समान तीव्रता में अधिक सफलता की सम्भावना होती है। कभी कभी यह सम्भव नहीं होता।

(८) विरोधी को हताश करने के लिये कभी कभी तीव्रता बढ़ाई जा सकती है।

(९) सब के आगे आकर यह निश्चित होना चाहिये कि यहीं आने की अभिलाषा थी तथा यहीं रहना है ।

(१०) दौड़ में अपने विषय में नहीं किन्तु दूसरों के विषय में सोचना चाहिए ।

(११) इधर उधर देखना उचित नहीं ।

(१२) मानसिक सतर्कता अभ्यास से ही प्राप्त होता है ।

(१३) आगे जाने वाले के कितने पीछे रहना है यह अपने अभ्यास पर निर्भर है ।

(१४) अन्तिम प्रयत्न की उचित व्यवस्था रहनी चाहिये ।

(१५) विरोधी के बगल से निकल कर आगे जाने में हिचकिचाहट नहीं होना चाहिये । जहां तक सम्भव हो सीध पर आगे जाने की चेष्टा करना चाहिये ।

(१६) सफलता के लिये दूसरा स्थान जो लेन की आधी दूरी पर हो, कर्ब से १८" की दूरी पर तथा आगे जाने वाले के दाहिने कंधे के समीप होना चाहिए । इस अवस्था में सब प्रकार की आवश्यकताओं का सामना किया जा सकता है । अपनी अवस्था पाकर उसे ढीलेपन तथा ताल के साथ सुरक्षित रखना चाहिये ।

साप्ताहिक समय सारिणी में सोमवार, दूरी से अधिक दौड़; मंगलवार, दूरी कम; बुधवार, तीव्रता का कार्य; बृहस्पतिवार,'पेस' (Pace) का कार्य; शुक्रवार, विश्राम; शनिवार, दौड़ । इनके साथ प्रत्येक दिन जौगिंग, प्रारम्भिक कार्य, वर्क आउट (Work out) फार्टलेक आदि का होना आवश्यक है ।

अभ्यास के कुछ कार्य निम्नलिखित हैं—(१) फार्टलेक या तीव्रता का खेल जिसमें विभिन्न दूरी के दौड़ अनेक बार किये जायें जिन के बीच में विश्राम के साथ की जाने वाली क्रियायें हों जैसे जौगिंग आदि ।

(२) कुछ व्यक्ति ट्रैक में आसानी से दौड़ें जिसमें अन्तिम व्यक्ति आगे जाये। तीव्रता कहीं नहीं बढ़ाई जायेगी।

(३) २२० या ४४० नियत तीव्रता से दौड़ना। इसी को दो दो या तीन तीन का प्रतियोगिता के रूप में करना।

(४) 'पेस वर्क' (Pace work) में पूरी दूरी की आधी दूरी दौड़ की वास्तविक तीव्रता से कम तथा आधी वास्तविक तीव्रता से।

(५) 'टाइम ट्रायल' (Time Trial) दूरी का ३/४ पूर्णता से समय देखने के लिये दौड़ना। अन्य प्रकार के टाइम ट्रायल भी प्रयोग किये जायें।

(६) प्रतियोगिता रिले जिसमें दो दो व्यक्ति निश्चित दूरी पूर्णता से दौड़ते हैं।

(७) स्प्रिंट का कार्य ३०-१५० गज़ तक।

गोला फेंकना (शॉट पुट)

शॉट पुट फेंकने की प्रारम्भिक क्रियाओं का विशेष मूल्य शारीरिक से अधिक मानसिक होता है। यह ध्यान एकाग्रचित करने एवं शक्ति उत्पादन के लिये प्रयोग किया जाता है। इसके कारण संतुलन प्राप्त होता है जिससे शरीर में ढीलापन आ जाता है। अतएव उचित मानसिक प्रवृत्ति के लिये ये कार्य सरल एवं जितने कम समय में हो सके करना चाहिये

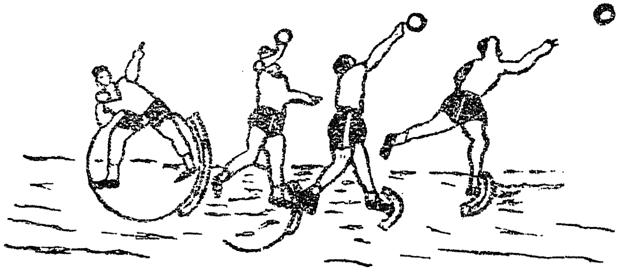

आरम्भ की अवस्था आदि

अंगूठा और छोटी उंगली शाट को हाथ में संतुलित रखती हैं और शाट का वजन हाथ के ऊपरी हिस्से पर रहता है। दाहिनी कोहनी कंधे से झुकी हुई और ठीक उसके नीचे होगी। इसके बाद की गति इस प्रकार होगी, बांयें पैर को आगे रिंग में झुलाया जायेगा, इसके साथ बांया कंधा और हाथ भी पैर के ताल के साथ लाया जाता है तथा दाहिने पैर से आगे हौप करना चाहिये। हौप में दाहिना पैर जितना ज़मीन से मिला रह सकता है रखना चाहिए। हौप के अंत में दाहिना पैर ज़मीन पर बायीं के कुछ आगे आयेगा। दाहिनी एड़ी कुछ वजन सम्भालेगी जब कि बायीं एड़ी ज़मीन के ऊपर होगी। दाहिना हाथ कंधे से कोहनी तक सीधी होनी चाहिए तथा कमर दाहिनी तरफ मुड़ी होगी जिससे जहां तक हो सके बायीं ओर की मांसपेशियां फैलें और दाहिने ओर की मांस पेशियां सिकुड़ें। इस अवस्था में दाहिना कंधा बायें से अवश्य नीचा रहेगा और बांया हाथ संतुलन लाने के लिए उठा हुआ होगा। दाहिने घुटने में बायें से अधिक मोड़ होगी। पैर ऐसे गिरेंगे जिससे एक लकीर दाहिने पैर के गोले से खिची हुई और बायें पैर के गोले को पार करती हुई उधर जायेगी जिधर शाट फेंका जायेगा। सिर जितना सीधा रह सके रखा जायेगा। जैसे ही शरीर का वजन पैर पर आता है, शाट प्रायः एक इन्च नीचे और गर्दन से दूर किया जायेगा। यह कोहनी को नीची करने से होगा।

अच्छे फॉर्म के लिये गति शक्ति आवश्यक होती है जो संतुलन के साथ आगे झुकाव में कूल्हे एवं धड़ के भारी बोझ को टो बोर्ड की ओर ले जाने से, दाहिने घुटने, एड़ी एवं पैर के उस समय धक्का देने से जिस समय कूल्हे का भार केन्द्र में आ गया हो; बायें पैर को बायीं ओर कुछ झुलाव देने से जो सीधे किक करने के द्वारा होगा, प्राप्त हो सकता है। कंधे गोला फेंकने के दिशा के सीध में होंगे। फेंकने के वृत्त के पार जाने के लिये ग्लाइड या हॉप किया जाता है। इस का तात्पर्य है कि शरीर का भार दाहिने पैर पर रहते हुये वृत्त में आगे बढ़े, दाहिने पैर के ऊपर एवं आगे के धक्के तथा बायें पैर के द्वारा आगे फेकने से यह होता है।

बायें पैर की स्थिति एवं कार्य से तीन लाभ होते हैं। संतुलन प्राप्त करना, वृत्त के बीच में उचित स्थान प्राप्त करना तथा एक प्रकार की रोकने की क्रिया

जिसके द्वारा शरीर की आगे जाने की गति शक्ति जो कूल्हें के नीचे से प्राप्त होती है आकस्मिक रीति से रुक जाती है तथा ऊपर के धड़ की गति शक्ति को तीव्रता प्राप्त करने में सहायता मिलती है तथा बायें घुटने एवं एड़ी के ऊपर सीधे करने से निचले शरीर के ड्राइव से गोले में अन्तिम प्रवाहित शक्ति का सहारा ा प्त होता है जिससे उसके फेंके जाने की उंचाई में और वेग आ जाये। अन्तिम समय में पैरों की स्थिति इस प्रकार होगी। दाहिना पैर वृत्त के मध्य रेखा से समकोण बनायेगा तथा बायां पैर दाहिने पैर की एड़ी से कुछ बायीं ओर, वृत के मध्य रेखा से एक फुट पीछे होगा। सम्पूर्ण शरीर की गति होगी पहले ऊपर तब बाहर। पहले दाहिना पैर तथा कूल्हा सीधे होते हैं तब गोला फेंकने के लिए आगे जाते हैं।

रीवर्स

ऊपर की पोजीशन 'रीवर्स' (Reverse) का आरम्भ है जिसमें एथलीट की शक्ति, तेज़ी तथा शाट की ऊँचाई में परिवर्तन हो जाता है। रीवर्स का आरम्भ शाट को कान के पास से ऊपर उठाने तथा उसी समय शरीर की अवस्था दाहिने मुड़ने से सीधे होने में बदल देने से होता है। इस परिवर्तन के साथ सम्मिलित किन्तु कुछ क्षण बाद आरम्भ होने वाला एक 'पुश अप' दाहिने पैर से कुछ आगे बढ़नेमें होता है। बायां पैर रिवर्स के लिए एक पिवट का काम करता है और ज़मीन से मिला रहता है, जब तक हाथ से शाट छूट न जाय जो एक पोछे झुलाव के साथ छूटता है। शाट सिर के ऊपर पूरा किया जाता है। कमर एक सीधी अवस्था से होते हुए बायें झुलाव पर होता है जब दाहिना पैर अपनी पूरी शक्ति शाट को दे देता है तो वह ज़मीन छोड़ देता है और उस स्थान तक हौप करता है जहाँ बायां पैर था। रिवर्स में शरीर १८० अंश के कोण से घूमते हुए बिल्कुल विपरीत घूम जाता है। जैसे ही शौट हाथ से छूटने पर होता है दाहिनी कलाई पीछे मोड़ी जाती है। कलाई फिर तेज़ी से अपनी वास्तविक अवस्था पर लाई जाती है और कलाई की शक्ति भी शाट जैसे हाथ छोड़ने लगता है उसमें मिला दी जाती है।

शाट हाथ को जमीन से ४५ अंश कोण पर छोड़ता है। दाहिना हाथ शाट के दिशा में बढ़ाया जाना चाहिए और आंखों से उसके मार्ग को देखते रहना चाहिए। शरीर का संतुलन दाहिने पैर पर बांया पैर और हाथ पीछे फैलाने की

सहायता से तथा दाहिना हाथ धड़ के साथ उसी दिशा में झुके हुए होने की सहायता से होगा। गतियाँ, जिनका वर्णन ऊपर किया गया है एक समय में होती हैं तथा इनकी भिन्न भिन्न अवस्थायें जो होती हैं वे क्षणिक होती हैं।

शौट पुट के आरम्भ से रिवर्स के अन्त तक गति सुगम होनी चाहिए। हौप का उद्देश्य तेजी लाने में है यदि यह प्राप्त न हो तो उद्देश्य पूरा नहीं हो रहा है।

अनुभवी एथलिटों ने यह पाया है कि वे फौर्म का आरम्भ मांस पेशियों में पर्याप्त ढिलाई से करते हैं और सेट पोजिशन में शरीर के पूरे मांस पेशियों में तनाव उत्पन्न कर देते हैं। रिवर्स उस शक्ति का भड़काव है जो पैरों, कमर, हाथों, कंधों तथा कलाई में हौप के तेजी के साथ शौट में दिया जाता है।

साधारण गलतियाँ : संतुलन न होना—संतुलन आँखों से होता है, संतुलन में पीठ सीधी और चपटे पैर पर खड़े होना, शौट पुट फेंकने के पहले या फेंकने के समय प्रारम्भिक क्रिया करना जो उसके जाने की दिशा में न हो, वृत्त के पिछले हिस्से में अच्छी रीति से नीचे न होना और ग्लाईड करने के समय नीची न रखना। सिर तथा कंधों की सम्बन्धित अवस्था को ग्लाईड के बीच या उसके बाद बदल देना। वृत्त में चलने के समय पुट्ठों के साथ शाट तथा कंधों को बहुत पीछे न रखना। ग्लाईड के समाप्त होते ही शरीर के ऊपर और बाहर के गति प्रवाह को चलने न देना, ग्लाईड के समय दाहिने पुट्ठे को सामने घूमने देना। पुट्ठों को पहिले ऊपर तब सामने ड्राइव न करना। फेंकने की क्रिया में अधिक शक्ति के लिए बायां पैर तथा हाथ के झुकाव पर अधिक जोर देना। शौट को पूर्ण रूप से ऊँचा न फेंकना। सम्पूर्ण शरीर को फेंकने की दिशा में न बढ़ाना।

अभ्यास

दो मुख्य बातें आवश्यक हैं, कठिन परिश्रम तथा सही अभ्यास। अभ्यास का समय सात पक्ष (Phases) में संगठित होना चाहिए।

(१) गर्म करना। १०-१५ मिनट शौट पुट से सम्बन्धित व्यायाम।

(२) स्थित अवस्था से शौट फेंकना १५ मिनट तक।

(३) फौर्म तथा अनुभव के लिए वृत्त के पार आसानी से शौट फेंकना १० मिनट तक।

(४) सही तकनीक ध्यान में रखते हुए उत्तम दूरी के समीप फेंकना १०-२० मिनट तक।

(५) वृत्त के पार लगातार अभ्यास, गति, प्रवाह और दूरी पर अधिक ज़ोर न देते हुये अच्छे फौर्म की छोटी छोटी बातों पर ध्यान देना।

(६) अन्तिम कार्य समय जिसमें एथेलिट ध्यान पूर्वक अपनी गति (Speed) शक्ति तथा संतुलन बनाना चाहता है।

(७) किसी दूसरे इवेन्ट का करना जिससे मानसिक विश्राम हो तथा सम्पूर्ण प्रगति, संतुलन तथा गति में उन्नति हो।

'डिसकस थ्रो'

डिसकस फेकने पर वह घड़ी की चाल की तरह घूमता है तथा हाथों से छूटने के समय निशाने की उंगली सबसे अन्त में उसे छोड़ती है। हवा में डिसकस प्राय: ज़मीन के समानान्तर रहता है। डिसकस के ऊचे एवं दूर फेकने में, डिसकस के सामने के हिस्से का थोड़ा ऊपर की ओर घुमाव, डिसकस छोड़ने के कोण तथा दाहिने पैर, कूल्हे तथा पीठ के मांसपेशियों का ऊपर शक्ति प्रवाहित करने के द्वारा, सहायता प्राप्त होती है।

डिसकस के प्रारम्भिक घुमाव में उसे शरीर से पृथक तथा सदैव हथेली के नीचे रखना चाहिये। उसे फेकने के कोण के स्थिति में आगे पीछे झुलाव देना चाहिये। दृष्टि आकाश के समानान्तर हो, पैरों में कंधे की दूरी का अन्तर हो तथा सिर का सिरा प्राय: एक फुट नीचे की ओर झुका हुआ हो। फेंकने के समय जब डिसकस शरीर के पीछे ही रहता है उसी समय दाहिने पैर के ऊपर खींचने पर बल देना चाहिये। डिसकस के प्रारम्भिक गति के समय दाहिना पैर जमीन पर

चपटा रहेगा तथा एक तिहाई शक्ति एड़ी पर रहेगी। यहां से शरीर का भार ऊपर की ओर पैर की गोलाई तथा उंगलियों पर डाला जायेगा। उसी प्रकार जब बायां पैर दाहिने पैर के खींचने का प्रतिरोध करता है तब वह ज़मीन पर चपटा होगा, एड़ी पर भार कम होगा। फेंकने के समय शरीर का भार बायें पैर की उंगलियों पर होता है तथा फेंकने की दिशा में सम्पूर्ण लगे रहने तथा देखने की क्रिया होगी।

डिसकस में बल शरीर के घुमाव से प्राप्त शक्ति के द्वारा होता है। शरीर को आगे ले जाने से भी शक्ति प्राप्त होती है। अधिकतर शक्ति शरीर के घुमाव के द्वारा ही प्राप्त होती है। शरीर का घुमाव दाहिने पैर से जो ज़मीन पर मज़बूती से रखा जाता है आरम्भ होती है। दाहिना घुटना तथा कूल्हा पहले ऊपर तब बाहर फेंकने की दिशा में धक्का देते हैं। इस सम्पूर्ण अवस्था में बायें हाथ की स्थिति सही होनी चाहिये। इससे दाहिने हाथ को सहायता एवं संतुलन प्राप्त होता है।

सेट पोजीशन :—पैर ज़मीन पर मज़बूती से रखे जाते हैं। दाहिने पैर में अच्छा मोड़ होता है और बायें में कम। पुट्ठे पैर के बीच में होते हैं। शरीर दाहिनी ओर मुड़ा हुआ होता है और कमर की मांसपेशियां तन जाती हैं। बांया हाथ कंधे की ऊँचाई पर रखा जाता है। दाहिना हाथ बिल्कुल पीछे जहां तक जा सकता है, रहता है। यह अवस्था उलट कर फेरने (Reverse) का आरम्भ है। इस समय सम्पूर्ण मांसपेशियों में तनाव होगा।

घूमना :—फेंकने वाला वृत्त के पीछे उसकी ओर मुंह करके खड़ा होता है और पैर फेंकने की दिशा में लकीर के समकोण पर होते हैं। हाथ को संतुलन के लिये झुलाने के बाद बांया पैर १ १/२' से २' तक वृत्त के केन्द्र की ओर बढ़ाया जाता है और उसी समय बांया कन्धा और हाथ शरीर का घुमाव आरम्भ करते हैं। शरीर बायें पैर पर अर्द्ध वृत्त घूमता है। तब दाहिना पैर ज़मीन पर रखा जाता है और वज़न उसी पैर पर डाला जाता है। घूमना दाहिने पैर पर चलता है और एक और अर्धवृत्त घूम जाता है। तब बांया पैर ज़मीन पर रखा जाता है। ध्यान रहे कि प्रत्येक पैर के घूमने के निशान एक लकीर पर होंगे और डिसकस वृत्त के व्यास पर होगा।

उलटी ओर फेरना—(Reverse) उलटी ओर फेरने का आरम्भ डिसकस के खींचने के साथ ही साथ दाहिने कंधे को आगे धक्का देने से होता है। इसके ही बाद कमर की मांसपेशियों का मोड़ बायीं ओर, दाहिने पैर को सीधा करने और बांयें पैर को पीछे धक्का देने से होता है। डिसकस का खिचाव चलता रहता है। जब ये गतियां संतुलित होती हैं तब शरीर एक अर्धवृत्त के द्वारा बायीं और ऐसी तेज़ी से घूमती है कि पैर ज़मीन छोड़ देंगे और दाहिना पैर उस स्थान पर आयेगा जहां बांया पैर या दाहिना हाथ उस समय डिसकस पकड़े रहेगा और वह उसी लकीर पर होगा जिस पर शरीर वृत्त के पार जाते समय था। छोड़ने के अन्तिम ४ फुट पहले हाथ में तेज़ी होनी चाहिए। अन्तिम छोड़ना तर्जनी के ऊपर से होना चाहिए। डिसकस छोड़ने के समय हाथ में शीघ्रता के साथ एक खिचाव बाईं ओर होगा। यहाँ अधिकतर कलाई की गति होगी। यह झटका वहाँ तक जाने देना उचित है जहाँ दाहिनी कोहनी में काफी मोड़ हो। रिवर्स अथवा उलटी ओर फेरने के बाद संतुलन वैसे ही किया जायेगा जिस प्रकार की शाट पुट में।

मुख्य बातें

डिसकस उस समय अच्छी तरह पकड़ा जायेगा जब पहली तीन उँगलियों के मोड़ पर अच्छी पकड़ होगी। डिसकस उँगलियों के तनाव को ढीला किए बिना छोड़ा जायेगा। अच्छे डिसकस फेंकने वालों की तर्जनी अंगुली पर एक गांठ हो जाती है।

यह अत्यन्त आवश्यक है कि शरीर के घुमाव में पूर्ण नियन्त्रण रहे यदि ऐसा नहीं होगा तो घुमाव उलटी ओर फेरने में व्यर्थ होगा। सही सेट पोज़ीशन की बहुत आवश्यकता है। एक केन्द्र से फैलने वाली शक्ति का संतुलन पैरों, कमर, हाथ और कलाई के साथ डिसकस की ऊँचाई और वेग में सहायक होती है।

पांच वर्ष के कठिन परिश्रम के बाद ही यह कला उत्तम रीति से आयेगी।

साधारण गलतियां

उच्च कोटि की गति घुमाव में प्राप्त करने और अधिक से अधिक शक्ति

एकत्र करने की चेष्टा एवं संघर्ष से ही अधिकतर डिसकस की गलतियाँ होती हैं। इसके पहले कि डिसकस के अन्य तथ्यों का ज्ञान हो, गति प्रवाह को एक समस्या बन जाने देने से रोकना। आँखों को उस सतह के नीचे आने देना जिस सतह में डिसकस फेंका जा रहा हो।

शरीर के ऊपरी भाग को घुमाने के आरम्भ में बहुत अधिक आगे और गोलाई में जाने देना। ऊपर हॉप करने के स्थान पर गोलाई में हॉप करना, बांये पैर को आड़ और शक्ति की इकाई की तरह फेंकने में समय न लगाना। घूमने के अंत में अन्तिम फेंक के लिए हिचकना। दाहिने पुट्ठे को बहुत शीघ्र आगे घूमने देना तथा बांयें पैर के अँगूठे पर पीछा नहीं किया जाना। उड़ान में डिसकस को टेढ़ा मेढ़ा होने देना या दाहिनी ओर सरकने देना।

अभ्यास :—(१) आरम्भ के घंटों में सरल दौड़। गर्म करने का व्यायाम। खड़े होकर फेंकना। डिसकस को पुट्ठों से पृथक रखना और फेंकने के अरम्भ ही में ऊँचाई ले लेना। फेंकने के आरम्भ में नीचा आसन, जिससे पैर और पुट्ठों की शक्तिमें वृद्धि हो। (२) वृत के अन्दर से फेंकना। पूरी क्रिया पर ध्यान देना। अच्छी दूरी तक फेंकने की चेष्टा करना। (३) वृत्त के अन्दर से फॉर्म के लिये फेंकना, आधार भूत तथ्यों पर ध्यान देना। (४) खड़े हो कर फेंकना। (५) अन्य इवेन्ट्स करना।

जैवलिन थ्रो

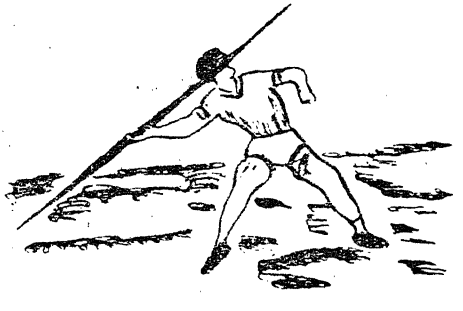

जैवलिन फेंकने की तैयारी

अन्य एथलेटिक कार्यों के समान जैवलिन भी एक सम्पूर्ण क्रिया की तरह सीखना चाहिये। इसके उत्तम विश्लेषित खंड सम्भव है तथा उनका अभ्यास

भी पृथक ही होना उचित है तथापि इस में श्रेष्ठ निपुणता प्राप्त करने के लिये क्रिया सम्पूर्ण रूप में अभ्यास करना चाहिये।

जैवलिन के पकड़ने में हाथ, उंगलियों तथा कलाई में ढीलापन होना आवश्यक है। जैवलिन सीधी तथा समानान्तर उड़ान में नियन्त्रित होना चाहिये तथा पकड़ इतनी अच्छी हो कि एकत्रित शक्ति का प्रयोग सम्भव हो सके। जैवलिन पकड़ने की दो रीतियां हैं। एक उंगली से पकड़ना या दो उंगलियों से पकड़ना। दोनों रीतियों में वह हथेली में तिरछी निशाने वाली उंगली के सहारे, हाथ के पीछे तक रखी जाती है।

सर्व प्रथम जैवलिन का नियन्त्रण सीखने के लिये खड़े होकर फेंकना चाहिये। फेंकने में नोक नीचे तथा किसी निकट के निशाने पर फेंकना चाहिये। कोहनी तथा जैवलिन को ऊंचा लाना चाहिये। चौथी एवं पांचवी उंगली को काफी ढीला रखना चाहिये। इसी प्रकार दूरी बढ़ाना चाहिये। फेंकने की दूरी बढ़ाने के लिये दाहिने हाथ की कोहनी पीछे प्रायः सीधी हो जाती है। ऊँचाई, जैवलिन के पिछले भाग को उठाने के द्वारा प्राप्त होती है।

खड़े होने की अवस्था में दाहिना पैर फेंकने की दिशा के साथ समकोण बनाता है, दाहिना कूल्हा अन्दर की ओर तथा शरीर का भार पीछे तथा नीचे होता है। बांया पैर बायीं ओर फैलाया जाता है तथा फेंकने की सीध में होता है जिस से दाहिने पैर के आगे ले जाने की शक्ति को नियन्त्रित कर सके। इस अभ्यास के अन्तिम पग में थोड़े छोटे कदम लेना चाहिये जो अधिक वेग के साथ न हों जिनके साथ साथ शरीर क्रमशः दाहिनी ओर घुमाया जाता है तथा दाहिने पैर पर आता है। अच्छे संतुलन के साथ एक छोटा 'हौप' लिया जाना है जिसमें शरीर एवं हाथ और दाहिने ओर फेंकने की अवस्था में घूम जाते हैं। फेंकना पूरे फैले हुये हाथ के द्वारा आरम्भ होता है। जैवलिन ऊपर किन्तु लघुकोण से दाहिने कंधे एवं कान पर खींचा जाता है और दाहिने पैर पर उलट कर फिरने (Reverse) तक आगे बढ़ता रहता है

जैवलिन को दो प्रकार से फेंका जा सकता है। 'फ्रन्ट क्रास' (Front Cross) तथा 'हौप' (Hop) के द्वारा। फेंकने के लिये कितनी दौड़ की आवश्यकता होगी वह प्रत्येक व्यक्ति पर निर्भर करता है। वेग प्राप्त करने के

लिये प्रायः ३० फुट से अधिक दौड़ की आवश्यकता नहीं होती किन्तु वास्तविक फेंकने की तैयारी के लिए इसकी दुगनी दूरी की आवश्यकता होगी। दूरी का निर्णय करना आवश्यक है जिससे दूसरी चेक मार्क पर सही वेग से पहुंच जाये। दूसरा चेक मार्क प्रायः ११ कदम या ५० से ७० फुट पहले चेक मार्क से होना चाहिये। यह निशान बायें पैर से छूना चाहिये। 'फिनिश क्रास स्टेप' में फेंकने के पहले पांच कदम की आवश्यकता होगी यदि 'अमेरिकन हौप' करना है तो दाहिने पैर पर हौप के लिये एक कदम और लेना है। फिनिश प्रणाली में यह दूरी 'फाउल लाइन' से २५ से ३५ फुट के अन्दर होगी जिसमें कुल दौड़ ७५ से १०५ फुट की होगी, अमेरिकन हौप में यह दूरी ५ फुट से बढ़ जायेगी।

शरीर का वेग अन्तिम समय तक नियन्त्रित रखना चाहिये क्योंकि जैवलिन फेंकने की शक्ति केवल वेग या भड़क शक्ति (Explosive power) में ही नहीं होती किन्तु उस समय की कमी करने में जिस में शरीर का वेग रोक कर जैवलिन में स्थानान्तर कर दिया जाता है।

जैवलिन फेंकने में अधिकतम वेग (Velocity) प्राप्त करने के लिये शरीर की गति प्राप्त करने की शक्ति (Momentun) तथा शरीर शक्ति (Force) का समन्वय होना आवश्यक है।

पैरों तथा शरीर के निचले धड़ की, आगे गति प्राप्त करने की शक्ति (Momentum) को जितनी शीघ्रता से तथा जितने कम स्थान में रोका जा सके उतना अच्छा होगा। यह बायें पैर के द्वारा सम्भव होता है। बांया पैर पूरा फैला हुआ बिलकुल आगे होगा।

जैवलिन में मौलिक शक्ति फेंकने की क्रिया के द्वारा ही प्राप्त होती है। यह शक्ति शरीर के सीधे होने से, भार दाहिने पैर के पीछे, दाहिना हाथ पीछे फैला हुआ होने से आरम्भ होती है। इसमें दाहिना कूल्हा तथा पैर सीधे किये जाते हैं, दाहिना पैर तथा ऐड़ी के ऊपर धक्का लगाया जाता है, पेट, पीठ तथा कंधे की मांसपेशियों के सामने आकस्मिक शक्ति के द्वारा खिचाव तब एक ढीलेपन किन्तु शक्तिशाली वेग के साथ दाहिने हांथ, कलाई एवं उंगलियों का झटका दिया जाता है।

जैवलिन की दिशा, दौड़ने तथा फेंकने की क्रिया की दिशा में होगा। जैवलिन ४५ अंश के कोण से फेंका जायेगा।

अमेरिकन एवं फिनिश प्रणाली में दूसरा चेक मार्क बायें पैर से छुआ जाता है। हॉप की तैयारी के लिये तथा अन्तिम फेंकने की अवस्था में बायां पैर कुछ दाहिने घुमाया जाता है, इससे दाहिना कूल्हा, दाहिना कंधा एवं जैवलिन सुगमता एवं क्रमिक रीति से पीछे आता है। यह फेंकने के पहले ६ पगों का पहला पग है। तीसरे तथा चौथे पग में दाहिना पैर तब बांया पैर अधिक बायीं ओर घुमायीं जाती हैं तथा जैवलिन की स्थिति पूर्ण पीछे होती है। यह तालवद्ध क्रिया चौथे पग पर पूर्ण होती है, दाहिना पैर दौड़ने की दिशा में ६० डिग्री कोण पर होता है तथा जैवलिन बिलकुल पीछे होता है। पांचवे पग में दाहिने पैर पर एक हॉप होता है जो पहले चार पगों का वेग एवं शक्ति प्राप्त करता है। दाहिना पैर दौड़ने तथा फेंकने की दिशा से समकोण होता है, शरीर सीधा किन्तु पीछे पूरी रीति से झुका हुआ होगा जिससे अधिकतम शक्ति प्राप्त हो सके। छठवें पग में दौड़ने की लाइन के कुछ इंचों के अन्दर बायां पैर रखा जायेगा जहां वह निचले धड़ के वेग को रोक कर शक्ति ऊपर के धड़, हाथ, कलाई तथा उंगलियों में प्रवाहित कर सके। 'हॉप' में ऊपर गति नहीं होती है। हॉप लम्बा तथा नीचे होगा जिसमें दोनों पैर एक साथ जमीन पर से उठते हैं।

'फिनिश फ्रन्टक्रौस' प्रणाली में वास्तव में वही कार्य होता है जो हॉप में होता है। इसमें फेंकने वाला फेंकने की अवस्था के प्रथम चारों पगों में केवल दाहिना हिस्सा तथा कंधा पीछे की ओर गिराता है तब फेंकता है। देखने वालों को पता चलता है कि दाहिना पैर बाये के सामने लाया गया है।

मुख्य अन्तर चौथे तथा पांचवे पग पर होता है। फिनिश प्रणाली में दाहिने पैर का ६० डिग्री कोण प्राप्त करने पर, बायां पैर खूब आगे फैले हुये अवस्था में झुलाया जाता है तब जैवलिन फेंका जाता है।

अभ्यास :

इसमें एक लम्बे अवसर के प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। टम्बलिंग (Tumbling) जिमनास्टिक इत्यादि से लाभ होगा किन्तु जैवलिन सम्बन्धित

मांसपेशियों के विकास की आवश्यकता होती है। पुल अप, पुश अप, रस्सी, पैरेलर तथा होरीजेन्टल बार, मुट्ठी का व्यायाम, स्प्रिन्ट करना तथा फुटबाल फेंकना सीधे हाथ से, आदि लाभदायक होगा।

वास्तविक जैवलिन फेंकना, प्रतियोगिता के मौसम से ६ सप्ताह पहले फेंकना चाहिए। जैवलिन दूर फेंकने के लिए और शरीर, के गति-प्रवाह (Body Momentum) के साथ फेंकने के लिये समय लगेगा तथा क्रमशः उन्नति होगी। एक महीना सब फेंकना फार्म के लिए होगा, दौड़ में धीमी गति-प्रवाह होगी।

मौसम के समय :

उत्तम परिणाम जैवलिन में उसी समय होता है जब मांसपेशियाँ ढीली तथा विश्राम लिए होती हैं। प्रतियोगिता के पहले जैवलिन का कोई काम नहीं होना चाहिए। यदि मौसम के पहले का कार्य सुचारु रूप से किया गया है और यदि फेंकने की योग्यता में क्रमशः प्रगति हुई है, तो ऐसे एथेलिट सप्ताह के पहिले तीन दिन में काफी काम कर लेंगे। श्रेष्ठ पूर्णता विशेष ध्यान, विशेषता एकाग्रचित्तता से आती है।

(१) **गर्म करना**—जौगिग और क्रम से बढ़ाया हुआ वींड स्प्रिट्स। १० मिनट गर्म करने में फैलाने वाले व्यायाम और उन व्यायामों को जो जैवलिन के क्रिया में सहायक हैं, व्यतीत करना चाहिए।

(२) **प्रारम्भिक थ्रो फॉर्म के लिए**:—फेंकना, गर्म करने के लिए, ध्यान से होना चाहिए। विशेष निर्बलताओं तथा नई चीजों के सीखने के ऊपर भी ध्यान देना चाहिए।

(३) **प्रतियोगिता के प्रवाह से, फॉर्म के लिये फेंकना** :—प्रतियोगिता की अवस्था तथा चेष्टा के अनुसार कार्य, दौड़ के पूरे प्रवाह का प्रयोग और पूर्ण क्रिया का प्रयोग। इससे दूरी के लिए कार्य नहीं हो रहा है। यद्यपि दूर फेंकने की चेष्टा नहीं की जा रही है तो भी दूरी अच्छी होगी। ध्यान इस बात पर होगा कि थ्रो, कैसा हो रहा है ना कि कितनी दूर हो रहा है। कितना थ्रो होगा यह व्यक्ति की शारीरिक दशा, थकान, मौसम आदि पर निर्भर होगा।

फॉर्म तथा दशा के लिए फेंकना :—फॉर्म की कुछ बारीक चीजें, पूरी दौड़ के साथ अभ्यास नहीं की जा सकतीं हैं। थकान की दशा में पूर्ण प्रवाह से कार्य करना हानिकारक होता है। सही फॉर्म से फेंकना लाभदायक सिद्ध होता है।

(५) **दूसरे कार्य या व्यायाम करना :**—स्प्रिन्ट, हाई जम्प तथा खड़े होकर लम्बी कूद से लाभ होगा और रुचि बढ़ेगी। पूरे अभ्यास के लिए १-१/२ घंटे का समय आवश्यक है।

हैमर थ्रो

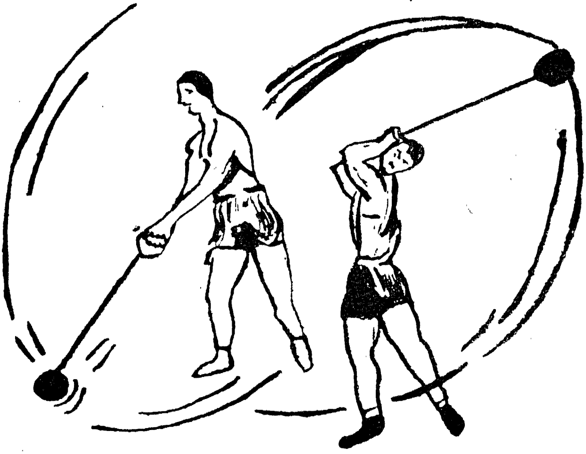

हैमर का 'स्टान्स' तथा ऊपर ले जाना

हैमर ७ फुट व्यास के वृत्त से फेंका जाता है। और एथलीट अपना शरीर घुमाता है जिससे हैमर को गति दी जा सके। जितनी तेजी से शरीर घुमाया जायेगा, हैमर उतनी ही दूर जायेगा।

पकड़ने की रीति (Grip):—बायें हाथ की उंगलियों के दूसरे जोड़ों से हैण्डल पकड़ा जाता है तथा दाहिना हाथ बायें के ऊपर रहता है।

स्थिति (Stance) वृत्त के निचले हिस्से पर खड़े होकर और फेंकने की दिशा की ओर पीठ करके दोनों पैर मजबूती से जमीन पर रखकर, पैरों के मध्य १२"-

२१" का अन्तर रखा जाता है। घुटने कुछ मुड़े रखे जाते हैं तथा अंगूठे कुछ बाहर की ओर रहते हैं। हैमर, फेंकने वाले के दाहिने ओर स्थित रहता है। यहां से एक सुगम संतुलित झुलाव की तैयारी की जाती है।

झुलाव (Swing) : हैमर थ्रो, कई एक झुलाव (Swing) देने के साथ आरम्भ किया जाता है और इनके ढीले झुलाव (Swing) दे सकने में निपुणता पान ही सीखने वालों की विशेषता है।

जैसे प्रत्येक झूल (Swing) दिया जाता है हैमर के नीचे आने के साथ (जो दाहिने पैर के बाहर जमीन से ६" से १२" तक ऊपर होता है) हाथ आगे बढ़ाये जाते हैं। हाथों में ढीलापन (Relaxation) होने के साथ, हाथ सीधे रहना चाहिए। यह अवस्था उस समय होगी जब हैमर, फेंकने वाले की दाहिनी ओर होगा तथा हाथ मुड़ जायेंगे जब हैमर बायीं ओर होगा। जब वास्तविक घूमना आरम्भ होता है तो हाथ कभी नहीं मुड़ते हैं। हैमर, एथलीट के बायीं ओर से ऊपर जाता है तथा दाहिनी ओर से नीचे आता है।

झुलाने (Swing) का सब ऊपरी स्थान सिर, बायें कंधे के ऊपर तथा पीछे हवा में है। हैमर के ऊपर जाते समय हाथ सिर के ऊपर से नहीं चेहरे के सामने से जाते हैं। संतुलन के लिए कमर शरीर के साथ सीधी रहेगी। शरीर का भार कुछ आगे बायें पैर पर होगा। एथलिट उस समय हैमर छोड़ने के पहिले तीन में से पहले घुमाव (Turn) के लिए तैयार होता है जब हैमर अन्तिम झूले (Swing) के झुलाने को आरम्भ करता है और नीचे आने की गति में दायें से बायें चलता है।

'पिवट' (Pivot): घूमना, हैमर के तेज करने से और बायें पैर पर घूमने से होता है। इस में दो रीतियां प्रयोग में लायी जाती हैं। अधिकतर एड़ी-अंगूठा, (Heel-Toe) रीति घूमना, प्रयोग मे आता है। दूसरा 'अंगूठे' (Toe) पर घूमना है, एड़ी-अंगूठा (Heel-Toe) घूमने में एथलीट को एक से दूसरे घुमाव (Turn) में अवस्था ठीक रखने में सहायता मिलती है क्योंकि वह अपने बायें पैर से जमीन से सम्पर्क सदैव बनाये रहता है।

पहला घुमाव :—पहला घुमाव धीरे से आरम्भ होना चाहिये और

क्रमशः बढ़ते रहना चाहिये। जब हैमर दाहिने पैर के अंगूठे के दाहिनी ओर नीचे पहुंचता है और हांथ सीधे रहते हैं, तो एथलिट अपनी १८० अंश कोण का घुमाव (Turn) अपने बायें पैर की एड़ी के बाहर से आरम्भ करता है। पूरे घुमाव के समय सिर और आंखें हैमर की ओर होती हैं। इस अवस्था में हैमर, फेंकने वाले के आगे होता है। घुमाव पूरा होने के पहले एथलिट का शरीर, हैमर के आगे होना चाहिये।

जब तक सम्भव हो दाहिना पैर भूमि पर होना चाहिये और जैसे पैर ऊपर उठना आरम्भ करे, उसे ऊपर गोलाई से और नीचे जितनी तेज़ी से हो सके उठना चाहिये, जिससे शरीर को हैमर के आगे कर दे। दाहिने पैर का अगूंठा पहले घूमना चाहिए फिर एड़ी घूमना चाहिये। जब 'पिवट' (Pivot) समाप्त होता है, दाहिना पैर कदम आगे पूरा कर लेता है और एथलिट २' वृत्त के पार चल चुकता है। वह उसी सम्बन्धित अवस्था में होता है जैसे वह घूमने के प्रारम्भ मेंहोता है। घूमने की किसी अवस्था में बांया पैर पृथ्वी से सम्पर्क नहीं हटाता है। वह अब दूसरी बार घूमने को तैयार होता है।

दूसरा घुमाव :—दूसरा घुमाव हैमर के दो बार घूमने से तेज़ी पर होगा तथा अन्तिम घुमाव में और तेज़ी पकड़ेगा। इस घुमाव में कमर सीधी होगी, हैमर में समान झुलाव होगा, एक छोटा और जल्दी दाहिने पैर से कदम लेना होगा तथा हैमर से आगे जाने की क्रिया सम्पन्न होगी। हाथ ढीले होने चाहिए जिससे गति प्रवाह हैमर में शरीर से जितना दूर हो, रख सके।

तीसरे घुमाव के समाप्त होने के बाद, वज़न विशेष रूप से बायें पैर पर होना चाहिए किन्तु हैमर दाहिने पैर के दाहिनी ओर होगा। शरीर का वज़न हैमर के प्रभाव के विरुद्ध कार्य करेगा। बायें पैर पर वज़न डालना उस समय आरम्भ होगा जब तीसरे घुमाव का ३/४ हिस्सा समाप्त हो जायेगा। यह वज़न का बदलाव केन्द्रीय लकीर से बायीं ओर दाहिने पैर ज़मीन छूने से पहले झुकने से होगा। तीसरा घुमाव समाप्त होते ही वज़न मुड़े हुये बायें पैर पर होना चाहिए और दांया पैर शरीर को हैमर फेंकने के स्थान में लाने के लिए, घुमाने में प्रयोग होगा।

थ्रो (Throw) :—तीसरे घुमाव के अन्त में सरलता से हैमर छोड़ने

में एक अच्छा थ्रो (Throw) होगा। अनुभव के साथ पैरों, धड़, सीना तथा हाथों को प्रबल उठाने की गति के द्वारा हैमर के ऊपर अधिक प्रभाव डाला जा सकता है। हैमर जमीन से ४५ अंश के कोण से बायें कंधे के ऊपर से छोड़ा जाता है। हैमर की गति से, एथलिट फेंकने की दिशा में घूम जाता है।

उलट कर फेरना (Reverse)

कुछ एथलिट थ्रो के बाद दाहिने पैर पर संतुलन के लिए जाना आवश्यक नहीं समझते हैं। किन्तु यह समाप्त करने की रीति उत्तम है। जो भी हो बायें पैर पर जब शरीर फेंकने की दिशा में घूमता है, पिवट (Pivot) होना चाहिए।

अभ्यास :—

शारीरिक कार्यक्रम। दो सप्ताह वृत्त से फेंकना। पूरे साल का अभ्यास-मौसम के समय निम्नलिखित कार्यक्रम अपनाना एथलिट के लिए उपयोगी होगा।

सोमवार :—४४० की दौड़ और २० मिनट की शारीरिक तैयारी का व्यायाम, हैमर झुलाना, १५ मिनट बिना फेंके हैमर घुमाना। २० मिनट फौर्म के लिए, स्प्रिन्ट, और जाँग।

मंगलवार :—जौग ४४०, २० मिनट शारीरिक तैयारी का व्यायाम, एक घंटा पूर्ण हैमर का कार्य, तीन चार अच्छे थ्रो, स्प्रिन्ट, जाँग।

बुद्धवार :—जौग ४४०, २० मिनट व्यायाम, मंगलवार का कार्य, एक घन्टा हैमर फेंकना, हर्डल पर दौड़ना, जाँग।

वृहस्पतिवार :—जौग ४४०, २० मिनट व्यायाम फौर्म के लिए हैमर फेंकना, जौग।

शुक्रवार :—विश्राम।

'पोल वाल्ट'

पोलवाल्ट में भी अनेक क्रियायें साथ होती हैं। ये आवश्यक तथ्य एक

ही गति की क्रिया हैं। यह दौड़ने के पहले पग से आरम्भ होता है तथा सुगमता से लगातार परिवर्तन, झुलाव, 'पुल', 'पुश' तथा नीचे आने में होता है। इनमें से प्रत्येक का सही करना उसके पूर्व की क्रिया के सही करने पर निर्भर करता है। किसी एक क्रिया के विशेष अभ्यास करते समय सम्पूर्ण का ध्यान होना चाहिये।

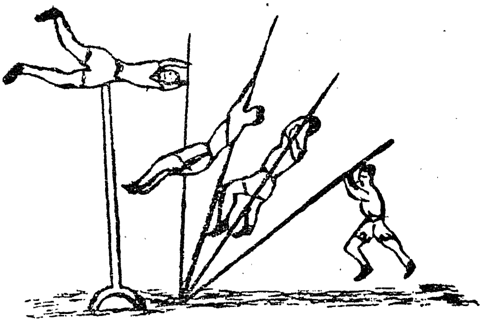

पोल वाल्ट में टेक आफ से बार के ऊपर तक की क्रिया

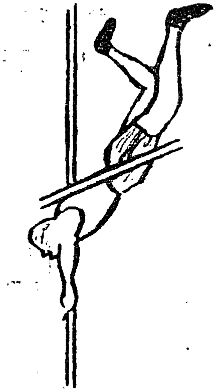

पोल पर पुश अप

इस कथन में कि पोलवाल्ट एथेलेटिक्स के इवेन्ट्स (Events) में सबों से कठिन है कोई मतभेद नहीं। इसका सीखना एवं अभ्यास बहुत ही परिश्रम से होता है। इसमें शारीरिक शक्ति के गुणों का विचित्र मेल है। दौड़ने तथा टेक आफ (Take Off) में पोल वाल्टर को स्प्रिंटर की तरह तीव्रगति से दौड़ना पड़ता है तथा उस गति को जिमनास्ट के बल, संतुलन एवं लचीलेपन से हवा में मिलाना पड़ता है।

पोल पकड़ना तथा दौड़ की दूरी :

शरीर सीधे सामने, हाथ कुछ मुड़े हुये तथा मुट्ठी पकड़ना ढीलेपन से होगा। बाँया बांह जमीन के प्रायः समानान्तर होगा। दोनों हाथों में पकड़ की दूरी का अन्तर २-१/२ से ३-१/२ फुट तक हो सकता है। ऊपर वाले हाथ के अंगूठे तथा निशाने वाली उंगली के बीच पोल मजबूती से पकड़ा जायेगा। हाथों को साथ लाने के समय मुट्ठी की पकड़ मजबूती से होगी।

दौड़ने के समय जितनी ही बड़े कोण से पोल उठाया जायेगा उतने ही उसका भार दृढ़ तथा हलका मालूम होगा। साथ ही साथ यह भी सत्य है कि जितना पोल ऊँचा होगा दौड़ने का कोण उतना ही सीधा होगा तथा दौड़ का वेग कम होगा।

पोल किस स्थान पर मुट्ठी से पकड़ा जायेगा यह निश्चित करने के लिये वाल्टिंग बॉक्स में पोल सीधा खड़ा कर जो ऊँचाई कूदना हो उसी स्थान पर ऊपर के हाथ से पकड़ा जायेगा।

दौड़ की दूरी प्रत्येक एथलीट की योग्यता के अनुसार होगा। यह १०० से १३५ फुट के बीच होना चाहिये। दौड़ के लिये सही चेक मार्क निकालना आवश्यक है। इसके निकालने की कई एक प्रणालियां है। इनमें से एक सरल प्रणाली बाक्स से ११० फुट का एक निशान बना कर, वहां से दोनों पैरों पर खड़े हो कर टेक आफ फुट से दौड़ आरम्भ कर 'टेक आफ' पैर का निशान ४० फुट पर लगाना चाहिये। इस पर अभ्यास की पश्चात ४० फुट निशान के आस पास दौड़ की सुगमता एवं तीव्रता को देखते हुये सही टेक आफ पैर का निशान निश्चित कर लेना चाहिये। यह व्यक्ति का दूसरा 'चेक मार्क' होगा।

टेक आफ तथा झुलाव—दौड़ एवं पोल की अवस्था परिवर्तन करने में दृष्टि वाल्टिंग बॉक्स पर होगी। पिछले तीन स्ट्राइड में पोल टेक आफ के स्थान में लाया जाता है। यहां वेग में कमी नहीं होनी चाहिये। पोल का स्थान परिवर्तन उतनी शीघ्रता से होना चाहिये जिससे पोल सरलता एवं समन्वय के साथ बॉक्स में रखा जा सके तथा शरीर का भार हिलते हुये पोल पर बिना झटका एवं समवेग कम किये हुये स्थानान्तर किया जा सके। स्थानान्तर दाहिने हाथ के द्वारा पोल का एक सरल 'पुल' तथा आगे ढकेलने से होता है। बांया हाथ दाहिने के समीप होता है। हाथ का ऊपर जाना नीचे की ओर से होना चाहिये। हाथ मुड़े हुये होंगे। पोल पर शरीर का वजन आते ही, दाहिना हाथ सीधा होगा। जिससे झुलाव में सहायता हो।

'टेक आफ' का वास्तविक स्थान दौड़ की सीध में तथा हाथों का स्थान इस अवस्था के सम्बन्ध से होगा। दाहिने हाथ के ऊपरी हिस्से पर से एक साहुल [Plumb] गिराने से जहां जमीन पर गिरे वही स्थान टेक आफ का है। पैर बीच की लकीर से बायीं ओर रखा जायेगा।

सब वाल्ट करने वाले ज़मीन से उछलते (Spring) हैं। यह कितना करना है अनुभव से ही समझा जा सकता है। जो कुछ भी किया जाये वह पोल पर भार सुगमता से स्थानान्तर करने में तथा झुलाव के आरम्भ करने के समवेग में सहयोग दे।

झुलाव का प्रयोजन शरीर के समवेग को जो दौड़ एवं टेक आफ से प्राप्त हुआ है, स्थाई रखने में है। एथलीट को सीधे आगे देखना चाहिये तथा सीने को पोल के पीछे रखना चाहिये। झुलाव में हाथ फैले हुये रहेंगे। सिर पीछे गिराया जायेगा, पीठ मुड़ी हुई होगी, कूल्हे एवं घुटने के पास पैर मुड़े हुये होंगे। हाथ फैले हुये होंगे तथा कंधों से झुलने की क्रिया होगी। इस प्रकार शरीर का भार तथा पैरों को, हाथों की तथा 'बार' की ओर लाया जाता है। यहीं 'पुल अप' है। झुलाव, शरीर छोटा करना तथा 'पुल अप' सुगमता से किये हुये क्रियाओं का एकत्व है। जब कूल्हे कंधे की सीध में आ जायें तब पुल अप करना चाहिए। दाहिना पैर हवा में ऊपर होता है। कंधा पोल की एक ओर होता है, कूल्हे तथा पैर दूसरी ओर। शरीर एक प्रकार से पोल से लिपटा हुआ होता है। इस समय पोल ७५ डिग्री कोण से होता है। हाथ पोल के समानान्तर होते हैं। 'पुल अप' दोनों हाथों से होता है। 'पुल अप' शीघ्रता से होना चाहिये। इसके द्वारा शरीर का एक सुगम घुमाव होता है, दाहिना पैर पूरा ऊपर होता है। 'पुल' तथा घुमाव के पूर्ण होने पर सिर पीछे 'रनवे' की दिशा में होता है। इस अवस्था में दाहिना पैर 'बार' से चार फुट ऊपर होता है। घुमाव में शीघ्रता नहीं करनी चाहिये। घुमाव के लिये पैरों का सीज़र एकशन (Scissor Action) किया जाता है जो चोटी पर सीधी अवस्था में होता है। इस समय 'पुश आफ' किया जाता है जिससे और अधिक ऊँचाई प्राप्त हो। पोल दाहिने कंधे तथा गर्दन के समीप सीधी अवस्था में होता है। मुड़े हाथ, खुले हुये होते हैं, दाहिना मुड़ा घुटना, दाहिने पैर को सिर के ऊपर ले जाता है तथा शरीर का सम्पूर्ण भार हाथों पर होता है। यही 'पुश अप' की अवस्था होती है। यह प्रायः हाथों पर खड़े होने की अवस्था सी मालूम होती है किन्तु इसे इस दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। यहां यह ध्यान देने का विषय है कि 'पुल अप' एवं 'पुश अप' एक दूसरे के बाद नहीं होते किन्तु दोनों एक क्रिया की मिली हुयी गति हैं।

जैक नाइफ (Jack Knief) और गिरना (Landing) :–अभी

तक की क्रियाओं से पोल सीधा रहता है। शरीर के ऊंचाई पर पहुंचने के बाद पैरों को पहले नीचे आने दिया जाता है जिससे कूल्हे के पास मुड़ जाता है और कूदने वाले की वही स्थिति होती है जैसे पानी में डाइव करने के लिए जैक नाईफ अवस्था में होती है। पैरों के नीचे चलने के बाद और हाथों के हैंड स्टैंड में पूरे काम करने के बाद हाथों में तेज़ी के साथ पोल से कूद कर झटका देना चाहिए और पीछे झटकना चाहिए।

इससे कोहनी के 'बार' से लड़ने की सम्भावना नहीं होती है तथा शरीर को सीधे होने में सहायता होती है। बहुत से पोल वौल्ट करने वाले निम्नलिखित स्थानों पर बहुत शीघ्रता करते हैं।

(१) टेक आफ के समय स्प्रिंग में।

(२) पुल अप में बहुत जल्दी पुल अप करना।

(३) पैर बहुत शीघ्रता से गिराये जाते हैं इससे पहले कि अधिक से अधिक ऊँचाई ली जाये।

(४) पोल को शीघ्रता से छोड़ देते हैं।

अभ्यास :—अभ्यास बराबर होना चाहिए। चूंकि हफ़्ते में तीन अभ्यास की सीमा है, इसलिए महीनों और वर्षों के परिश्रम से ही यह आ सकता है। सीखने की अवस्था में पहली चीज़ पहले आना चाहिए। कोई पुल अप सही नहीं कर सकता है जब तक उसके झुलाव के गति-प्रवाह में सुगमता और पूरी लम्बान न हो। ऐसा झुलाव संतुलित और समयानुसार टेक आफ़ में है।

इस बात पर बार-बार ज़ोर देने योग्य है कि पोल वाल्ट एक एकतापूर्ण कार्य है। पहिले पग से लेकर जमीन पर गिरने तक यह एकता पूर्ण कार्य है। एक कार्यक्रम दूसरे में चलता जाता है और ऐसा मालूम होता है कि यह एक छोटे छोटे टुकड़े का बना हुआ, सम्पूर्ण कार्य है। इसके लिए जिमनास्टिक, रस्सी पर चढ़ना और विशेष व्यायाम महत्वपूर्ण है। तो भी यह जानना आवश्यक है कि ये कार्य वौल्ट का स्थान नहीं ले सकते। वौल्ट करना आवश्यक है जो भी अवसर मिले सम्पूर्ण गति के ताल, समय और संतुलन के साथ वाल्ट करना

उचित है। अभ्यास में नीची ऊँचाई और अधिक ऊँचाई से फौर्म के लिए अभ्यास करना आवश्यक है, नीची और अधिक ऊँचाई पर वॉल्ट करने में अंतर है।

(१) **गर्म करना** :—सरल विंड स्प्रिंट, फैलने का व्यायाम, कुछ स्पर्ट ६० गज के नीचे।

(२) **पोल वॉल्ट**—दो तीन गर्म करने के व्यायाम के बाद किसी ऊँचाई पर वौल्ट करना। पूरी वॉल्टिंग के तेजी पर पूरी दौड़ लेना। वौल्ट के समय जिस समस्या का हल करना है उसका ध्यान ठीक रहे। उसी पर बुद्धिमानी से ध्यान देना है। अभ्यास में केवल एक या दो बातों पर ही ध्यान दिया जा सकता है। अभ्यास बिना किसी समस्या के ध्यान में रख कर करने से व्यर्थ होता है। इस बुद्धिमानी से अभ्यास करने में दो लाभ हैं। इससे अच्छे फौर्म की एक मौखिक समझ आ जाती है। इसके द्वारा एथलीट के मांसपेशियों को भी समझने में सहायता मिलती है।

टेक आफ के सही स्थान पर ध्यान देना चाहिये।

(३) **वॉल्ट के बाद का कार्य** :—स्प्रिंट और हर्डल करना, जिमनास्टिक और टम्बलिंग का कार्य करना।

प्रत्येक अभ्यास के दिन का अन्त, सहने की शक्ति के कार्यों से अंत होना चाहिए, यह ४४० गज के नीचे दौड़ा जा सकता है।

ऊँची कूद (हाई जम्प)

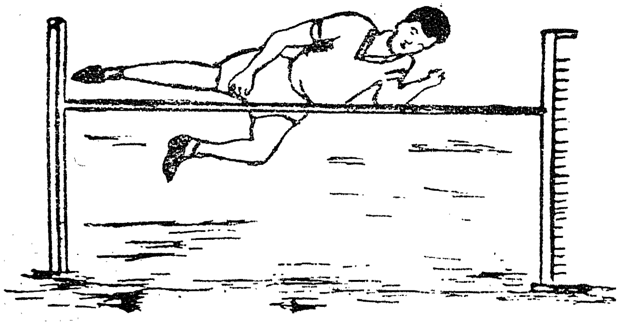

यह एक क्रिया है जिसमें दौड़ना कूदना एवं 'बार' के ऊपर ले जाना होता है। हाई जम्प के करने में दो मुख्य बातों पर ध्यान देना आवश्यक है। ऊपर कूदना एवं 'बार' के ऊपर जाने की सरलता।

हाईजम्प में काफी बिभिन्नता पायी जाती है तथा प्रत्येक व्यक्ति अपनी रीति से हाई जम्प करता है किन्तु कुछ आवश्यक बातें हैं जिन्हें प्रत्येक को ध्यान में रखना लाभ कर होता है। विभिन्नता प्रणाली, दौड़, उसकी दूरी, तीव्रता, दिशा तथा शरीर की स्थिति आदि में प्रदर्शित होता है।

यह निश्चित करने के लिए कि कौन सी प्रणाली का प्रयोग किया जाये अनेक तथ्य पर ध्यान देना आवश्यक है जैसे, व्यक्ति ज़मीन से कैसे ऊपर उठता है, कितना कोण होता है, पैरों के आगे बढ़ने की शक्ति (Drive) कितनी दी जाये, हाथ एवं कंधों की अवस्था क्या होगी, दौड़ कितनी एवं किस वेग से होगी, टेक आफ कैसा होगा, किस तीव्रता से होगा, प्रारम्भिक अवस्था में शरीर बार के पास सीधे या उससे आगे की अवस्था में होगा आदि।

साधारणतयः हाई जम्प की तीन प्रणालियाँ प्रमुख मानी जाती हैं, इस्ट्रन (Eastern) वेस्ट्रन (Western), तथा स्ट्राडल (Straddle).

टेक आफ : टेक आफ दौड़ के अन्तिम दो या तीन कदम से आरम्भ होता है तथा इसमें शरीर की सम्पूर्ण क्रियायें जो ऊपर उछलने में सहायक हैं आती हैं। टेक आफ में कुछ विशेष बातों की ओर ध्यान देना आवश्यक है जैसे, टेक आफ की निपुणता उस समवेग में है जिसके द्वारा शरीर ज़मीन से ऊपर सीधे उठाया जाता है, अन्तिम तीन कदम का सुगम, शीघ्र तथा कुछ लम्बे होते जाना, होना चाहिये जिससे 'टेक आफ' का पैर शरीर के भार से आगे होगा तथा ऊपर की उछाल सम्भव होगी, शरीर का गुरुत्व आकर्षण केन्द्र नीचे कर दिया जाता है जो टेक आफ फुट के पीछे होता है, एड़ी तेजी एवं शक्ति से ज़मीन पर डाली जाती है।

अन्तिम दो कदम में शरीर नीचा किया जाता है जो पीछे झुका हुआ होता है। यदि उछाल सही है तो दाहिना घुटना कुछ मुड़ा हुआ होगा। इन सब अवस्थाओं में शरीर प्रायः सीधा रहना है, आँखें ऊपर की ओर होंगी यद्यपि

'बार' आँखों की उचाई से नीची होगी क्योंकि सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक कूदना इस प्रकार समझ कर करना चाहिये कि 'बार' व्यक्ति के सिर से ऊँचा है।

आगे जाने वाला पैर सीधी ऊपर जितना कम घुटना मुड़ा हुआ हो फेंकना चाहिए। इस सीधी कूद को मुड़े हुये कंधों के ऊपर फेंकने से सहायता मिलना चाहिये। इस अवस्था को हाथों से भी सहायता मिलना चाहिये। सर्व प्रथम ऊपर सीधे कूदने की चेष्टा करना चाहिये।

'वेस्टर्न रोल' प्रणाली :—इस प्रणाली से 'बार' पर ऊपर जाना उस ओर से होता है जो बगल बार की ओर होता है। बांया पैर से कूदने वाला बायीं ओर से कूदेगा। टेक आफ बायें पैर से लिया जायेगा। लैन्डिग भी बायें पैर और हाथ पर होगा। दौड़ कर बार तक आने का कोण ४५ डिग्री का होगा। 'टेक आफ' पैर का जमीन पर रखना तथा आगे आने वाले पैर को शक्ति एवं तेजी में उछालना, दौड़ने की दिशा में की जाती है। इस क्रिया के करने में बायें कंधे के सीधे मोड़ एवं बांह से सहयोग होना चाहिये। टेक आफ में सिर सीधा होगा। आगे जाने वाला पैर इस समय सन्तुलन करता है जो बायें पैर को अपने पास मुड़ी हुयी अवस्था में ऊपर आने में सहायता करता है। इस अवस्था में सिर शीघ्रता से आगे बगल में नीचे बार की ओर गिराया जाता है। इस क्रिया के करने से कूल्हा ऊपर को उठाया जाता है। संक्षिप्त में इस प्रणाली की क्रियायें इस प्रकार हैं।

आगे जाने वाले पैर से ऊपर शक्तिशाली उछाल, झटके के साथ दूसरा पैर पहले के साथ, झटका जिसके द्वारा शरीर सीधा होता है तथा कूल्हें ऊपर उठाये जाते हैं, निचले बांह का नीचे झटका तथा निचले कंधे का ऊपर झटका, मोड़ने वाला पैर का 'किक' जिसके द्वारा शरीर जमीन की ओर मुड़ता है तथा निचले पैर का नीचे झटका जिससे 'लैन्डिग' सम्भव हो।

'स्ट्राइल' प्रणाली :—यह ऊँची कूद की सबसे अच्छी प्रणाली समझी जाती है। इसके सीखने से पहले 'वेस्टर्नरोल' का अभ्यास करने से लाभ होता है किन्तु सबके लिये इसकी विशेष आवश्यकता नहीं।

कूदने वाला बार के पास बांयीं ओर से ४५ अंश के कोण से आता है।

टेक आंफ मार्क करीब २" बार के सामने होगा। दौड़ने वाला बार के पास सरल दौड़ से आता है, टेक आफ मार्क बांये पैर से सही स्ट्राईड में छूता है। बांया पैर जमीन पर ठोस रीति से रखा जायेगा जिसमें पैर का गोला और एड़ी साथ होंगी। दाहिना पैर आगे झूलेगा जैसे एक और कदम लेना है। दाहिना घुटना एक मजबूती से उठाये जाने के साथ जितना ऊपर हो सके उठाया जायेगा। घुटना ठड्डी के सतह तक पहुंचना चाहिए और उसी समय दाहिना पैर जितना ऊपर कूदने वाला कर सके, किक करेगा।

जब दाहिना पैर उठाया जा रहा हो होगा, शरीर का वजन कंधे को उठाने के द्वारा और दोनों हाथ ऊपर फेंकने के द्वारा उठाया जायेगा। बांया टाँग और पैर अपने पूरे उछाल (Spring) से ऊपर की ओर उठाने में सहायता देंगे। इस समय तक की सारी क्रियायें शरीर को एक ऊपर की गति की ओर ले जायेंगी। जितना भी हो सके ऊपर उठना चाहिये। जैसे ही दाहिना पैर अपने सबसे ऊँचे स्थान तक पहुंच जाता है उसे बार के ऊपर जोर से ले जाते हैं और बांया हाथ ऊपर दाहिनी ओर पुश किया जाता है। इस समय शरीर समानान्तर होगा और मुह नीचे की ओर होगा। बायें पैर को उसके प्राकृतिक गति ही में छोड़ देना चाहिये जब तक कि शरीर के करीब मुह नीचे न हो तब उसे (बायें पैर को) बड़े तेज झटके से पीछे किक करना चाहिए। (यह इस समय आकाश की ओर होगा) किक इतना तेज होना चाहिए कि बांया घुटना बायें कूल्हे की सन्धि की ऊँचाई तक पहुंचे। बार से नीचे आने में एक सरल अवस्था ली जायेगी यदि एक हलका धक्का दाहिने पैर को उसी समय जिस समय बायें पैर को ऊपर किक किया जाता है लगाया जाये। दाहिना हाथ उसी समय नीचे आना चाहिए। शरीर या तो मुँह नीचे किए हुए गिरेगा अथवा दाहिनी ओर गिरेगा।

मुख्य बातें :

(१) दाहिने पैर का एक ऊँची गति, झाड़ने की ऐसी गति का किक।

(२) ऊँचा और प्रबल कंधे का उठाना।

(३) सावधानी से बार पर पलटने के आरम्भ में ठीक समय का प्रयोग करना। कितने कूदने वाले बहुत शीघ्रता से पलटने की चेष्टा करते हैं।

(४) सही समय से बांया पैर का एक कड़ा ऊपर का किक ।

जब यह फौर्म पूरा सही रूप से किया जायेगा तब पार करने के क्षण में शरीर व मुँह नीचे होगा और बार धड़ के बीच की लाईन के नीचे होगा ।

ऊँची किक का इतना अभ्यास होना चाहिए कि सर के ऊपर एक फुट तक आसानी से किक किया जा सके । जब तक कूदने वाले ने 'बार' पार न किया हो, सिर कूल्हे से ऊपर रखना चाहिए । यह सिर को बायीं तरफ घुमाने और बायें हाथ को पीछे फेंकने और पैर के ऊपर के किक के पीछा करने के द्वारा किया जा सकता है । सही क्रिया करने से कूदने वाला ऊपर जाते समय दाहिने घुटने की ऊँचाई के बराबर ऊँचा जा सकता है ।

अभ्यास :—हाई जम्प में ऊँची श्रेणी का संतुलन, शीघ्रता और पूर्ण शारीरिक अंगों में लचीलेपन की आवश्यकता है । हाई जम्प करने वाले को एथलेटिक्स की दूसरी आईटम करना चाहिए ।

गर्म करना :—जौगिग, बार बार विंड स्प्रिंट, फैलने वाले व्यायाम । जिन मांसपेशियों से जम्प किया जाता है उस पर ध्यान देना चाहिए ।

(१) कूदने वाले पैर से हवा में सरलता से कूदना साथ ही साथ आगे जाने वाले पैर का झुलाव क्रमशः बढ़ाना ।

(२) खड़े हुए अवस्था से आगे जाने वाले पैर को अधिक से अधिक किक करना और गर्म होने पर सिर के ऊपर किक करना । हर्डलर के लिए हर्डल पर किए जाने वाले व्यायाम उपयुक्त हैं ।

इस बात पर ध्यान रखना आवश्यक है कि ये क्रियायें केवल प्रारम्भिक हैं और गर्म करने के लिए हैं । शक्ति के लिए व्यायाम और मांसपेशियों में विकास के लिए जम्प करने के घंटे के बाद होना चाहिए न कि पहले ।

ऊँची कूद :—बार उतना ऊपर रखना जितनी अधिक बार पार किया जा सके । ऊँचा कूदना किन्तु फौर्म के लिए कूदना । नीची बार पर ही सही कार्य किया जाय तो ऊँचाई की आवश्यकता नहीं । तेजी से दौड़ना, ऊँचा कूदना और सही 'ले आउट' होना चाहिए ।

एक दिन में जितना कूदा जा सकता है वह धीरे धीरे प्रत्येक महीने में बढ़ाया जाना चाहिए। फौर्म के लिए जम्प करना चाहिए किन्तु सहने की शक्ति के लिए भी चेष्टा करना चाहिए।

कूदने के बाद का व्यायाम :—जम्प करने के बाद अभ्यास किए हुए व्यायाम किये जाने चाहिये। इनका उद्देश्य उन मांसपेशियों के मज़बूत करने तथा विकसित करने से है जो ऊँची कूद में प्रयोग होती हैं।

निम्नलिखित में से व्यायाम किये जा सकते हैं।

(१) ऊँची कूद विशेष कर टेक आँफ पैर पर। शरीर जितना नीचे जा सके और जितना ऊपर जा सके करना चाहिए।

(२) स्प्रिंट करना, घुटनों की ऊँचाई की क्रिया तथा पैर और एड़ी की अधिक उछाल पर जोर देना।

(३) हाई हर्डल करना तथा हर्डल सम्बन्धित व्यायाम।

(४) कूल्हे के मोड़ का व्यायाम, खड़े होकर, बैठ कर। अच्छी कूल्हे की कसरत।

(५) **शाट फेंकना :—**अच्छा फौर्म और दूरी की चेष्टा। थोड़ी देर में अनेक बार।

(६) **हाई जम्प सम्बन्धित क्रियायें :—**हाई किक और टेक आँफ पैर के ऊपर कूदना।

लम्बी कूद (ब्रोड जम्प)

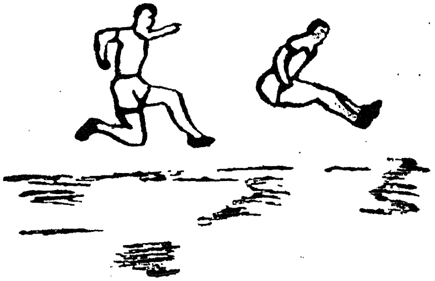

दौड़ एवं मुख्य बातें :—अन्य एथेलेटिक आइटम की तुलना में लम्बी कूद एक सरल क्रिया है। इस में तेज़ी का दौड़ एक ऊँची कूद, पैर के 'किक' से समवेग प्राप्त करना तथा पैरों को बढ़ा कर 'लैंड' करना होता है। दौड़ उपयुक्त लम्बी होती है तथा इतनी तीव्रता होती है जिससे समवेग (Momentum) प्राप्त हो। अन्तिम चार स्ट्राइड में दौड़, कूद में परिवर्तन होता है। यह कूद जितनी ऊँची हो की जाती है। जिस पैर से 'टेक आफ' किया जाता है उसके एक शक्तिशाली 'किक' से ऊपर एवं आगे संवेग बढ़ जाता है। दोनों पैर बैठने की अवस्था में उठा लिये जाते हैं तथा शरीर का संतुलन होता है जिससे कूल्हे 'पिट' से न छू जायें।

टेक आफ तथा चेक मार्क :—टेक आफ के लिये दौड़ १०० से १४० फुट के बीच हो सकता है। दौड़ में तीव्रता आरम्भ ही से होना चाहिये जो सम्पूर्ण दूरी तक रखना चाहिये। दौड़ की समानता के लिये चेक मार्क लगाना आवश्यक होता है। इसमें दूसरा एवं तीसरा चेक मार्क लगाया जाता है। इसके निश्चित करने की प्रणाली इस प्रकार है।

७–९ स्ट्राइड १२—१४ स्ट्राइड

×——————————×——————————×——————————।

अ ३०—४० फुट ब ७०—१०० फुट चिन्ह 'स' बोर्ड से २६ फुट पर नियत किया जाये।

यदि एथलिट बायें पैर से कूदने वाला है तो उसे बायें पैर से 'अ' से आरम्भ ढीले पन एवं पूर्ण तीव्रता से करना चाहिये। दो चार बार करने से जहां प्राय: ३० वें फुट पर ७ वां स्ट्राइड पड़े वहां चिन्ह 'ब' कर लिया जाये। फिर 'ब' से उसी प्रकार दौड़ें जिससे बांया पैर बोर्ड पर पड़े। कुछ अभ्यास के पश्चात यदि बोर्ड पर बांया पैर नहीं आता है तो 'अ' तथा 'ब' की दूरी क्रमश: आगे या पीछे कर दी जाये जिससे बांया पैर बोर्ड से कुछ आगे पड़े। यही दो 'चेक मार्क' होंगे। बोर्ड के पहुंचने के अन्तिम चार स्ट्राइड में कुछ भिन्नता होगी। इसमें पहले दो कुछ लम्बे होंगे तथा तीसरा ६" छोटा एवं चौथा ६"—२" तक छोटा हो सकता है।

वास्तविक कूदने के पश्चात दूरियों की पूर्ण रूप से निश्चियता हो जायेंगी।

इन 'चेक मार्क' से कोई विशेष लाभ नहीं होता। यह अधिकतर आदत के कारण किया जाता है। कार्य करते समय 'चेक मार्क' की ओर ध्यान नहीं दिया जायेगा। तीव्रता उचित रखी जायेगी तथा यदि स्ट्राइड सही है तो 'टेक आफ, सही होगा। कुछ कोच अन्तिम चार स्ट्राइड के प्रथम 'चेक मार्क' प्रोत्साहित करते हैं।

टेक आफ पर आगे के ससंवेग बिना कम किये जितना ऊपर कूदा जा सके करना चाहिये। इस समय शरीर का भार बायीं ओर बायें पैर पर होगा, शरीर कूल्हों पर कुछ बैठता सा होगा, आँखें, ठोड़ी तथा सीना के उठाने से बांया पैर एड़ी से बोर्ड छूने के समय शरीर के भार से कुछ आगे हो जाता है तथा अन्तिम छोटे स्ट्राइड से ऊँचाई प्राप्त करने की चेष्टा होती है। इन क्रियाओं का समायोजन अन्तिस चार स्ट्राइड के नियन्त्रण के द्वारा होती है।

हवा में क्रिया :—हवा में क्रिया ऊँचे जाने की होती है तथा आगे बढ़ने की क्रिया 'हिच किक' (Hitch Kick) के द्वारा बढ़ायी जा सकती है। यह हवा में आगे बढ़ने की त्रियां अन्य प्रणालियों के द्वारा भी बताया जाता है जैसे हवा में तैरना या बैठना तथा घुटना मोड़ के जाना आदि। अनुभव से यह समझ में आता है कि (Hitch Hick) सबसे उतम है। यह कुछ कठिन भी है। (Hitch Kick) में दोनों पैरों की क्रिया होती है। जब आगे जाने वाला पैर सामने से पीछे आता है तब फिर बल पूर्वक आगे तथा ऊपर किया जाता है। टेक आफ पैर के द्वारा एक ही शक्तिशाली 'किक' आगे तथा ऊपर किया जाता है। अन्त में दोनों फैले हुये पैरों पर ज़मीन पर आने की स्थिति प्राप्त की जाती है।

लैंडिंग :—जमीन पर आने की क्रिया (Landing) का सही समय तथा रीति से करने की पहचान है कि पैरों का जमीन से सम्पर्क के समय कूल्हे एड़ी से कुछ ही इन्च ऊपर रहेंगे। इसलिये शरीर एवं कंधों का भारी भार आगे तथा नीचे की ओर होना चाहिए जिससे कूल्हे ऊपर खिच जायें। ठोड़ी शीघ्रता से घुटनों के बीच आ जाती है, घुटने भी ढीली अवस्था में रहते है तथा शीघ्रता से मुड़ जाते हैं। ऐसी अवस्था में एथलिट आगे की ओर गिरता है।

अभ्यास :—लम्बी कूद की प्रारम्भिक आवश्यकतायें हैं, पैरों, पेट और

पीठ की मांसपेशियों पर प्रबल प्रभाव, कदम की समानता, ऊपर कूदना। मांसपेशियों पर प्रथम ध्यान देना आवश्यक है। खेल, जिमनास्टिक, लम्बी कूद से सम्बन्धित क्रियायें तथा साथ ही स्प्रिंट उपयोगी होंगे। पैर और एड़ी का विशेष व्यायाम, स्किपिंग चलते दौड़ते, हर्डल करते या उसके व्यायाम करते हुए जानबूझ कर अधिकता से पैर पर कूदना। तेजी के लिए तेजी से कार्य करना चाहिए। अभ्यास के अन्त में विंड स्प्रिंट्स, (Wind Sprints) कदम की समानता, चेक मार्क के द्वारा करना चाहिए। तेज़ छोटा दौड़ होना चाहिए, जितना ऊपर हो सके उछालना चाहिए जिसमें सिर और सीना ऊपर रहे और सही तरह से गिरना, उत्तम अभ्यास है।

गर्म करना :—सरल व्यायाम तथा विंड स्प्रिंट्स फिर स्प्रिंट्स के साथ काम करना। ६ से ८ स्टार्ट २० गज तक फिर तीन चार स्प्रिंट ३०-६० गज तक।

कूदना :—चेक मार्क पर दौड़ना। फौर्म के लिए कुछ कूदना। तीन चार बार तेजी से कूदना। ध्यान पूर्वक तथा बुद्धिमानी से अभ्यास। टेक आफ से पहले चार स्ट्राईड में अपने को सभालना जिससे अच्छे संतुलन से ऊपर कूदें और सही रीति से गिरना।

लम्बी कूद सम्बन्धित क्रिया में भाग लेना। २२०, ३५० गज लम्बी दौड़ से सदैव समाप्त करना।

'हौप' 'स्टेप' एण्ड 'जम्प'

'हौप' 'स्टेप' एण्ड 'जम्प' एथेलेटिक इवेन्ट्स में एक जटिल इवेंट है। यह एक सम्पूर्ण तीव्र तथा टेक आफ दौड़ से आरम्भ होता है जो लम्बी कूद के समान होता है। हौप के अन्त में ज़मीन पर आना एक पैर पर होता है फिर उसी से टेक आफ लेकर एक कदम (Step) ली जाती है जिसका अन्त दूसरे पैर पर होता है जिसके बाद एक पूर्ण कूद (Jump) ली जाती है जिसका अन्त लम्बी कूद के समान दो पैरों पर होता है। मान लीजिये एक कूदने वाला बायें पैर से 'हौप' करता है फिर दायें पैर पर 'स्टेप' करता तथा दाहिने से ही लम्बा कूदता है।

इस इवेन्ट को सही करने के लिये दौड़ने की दूरी एवं तीव्रता, हॉप की लम्बाई एवं ऊँचाई, स्टेप पर कितनी कूद होती है तथा लम्बी कूद की सम्पूर्ण क्रियाओं के प्रति ध्यान देना आवश्यक हो जाता है। इन तीनों खंडों को सही रूप से करना तथा इनके उचित समन्वय से ही यह क्रिया उत्तम प्रकार से की जा सकती है। यह एक प्रकार का त्रय कूद है जिसमें शरीर का कोण सब क्रियाओं में महत्वपूर्ण पक्ष है जो इस प्रकार किया जाता है जिससे भार कूदने वाले पैर से इतना पीछे हो कि ऊँचाई प्राप्त हो सके। पूर्ण तीव्रता जिसका अभ्यास क्रमशः किया जाता है महत्वपूर्ण स्थान रखता है तथा शरीर के पूर्ण लचीलेपन की अनुपस्थिति में यह करना असम्भव ही होगा।

दौड़ एवं टेक आफ :—प्रारम्भिक दौड़ एवं टेक आफ लम्बी कूद के समान होती है। हॉप के टेक आफ के लिये अधिक मज़बूत पैर का प्रयोग करना चाहिये मान लिया कि यह बायें पैर से किया जा रहा है। लम्बी कूद के समान टेक आफ में एड़ी एवं तलवे की गोलाई पर पैर का घूमना आवश्यक है, दाहिने घुटने के ऊपर आगे बढ़ने की क्रिया शक्तिशाली होना चाहिये। शरीर का कोण लम्बी कूद की तरह ४५ अंश का होगा।

हॉप:—प्रयोग से यह परिणाम प्राप्त हुआ है कि १८'—२०' का हॉप उचित है। हॉप में ज़मीन पर शीघ्रता से आने की चेष्टा नहीं करनी चाहिये। पैर, एड़ी एवम् घुटने के द्वारा लचीलेपन से क्रिया होनी चाहिये तथा लैंडिंग ज़ोर से पैर लगने तथा घुटने के ऊपर की क्रिया के साथ होना चाहिये जिससे अगली कूद के लिये ऊंचाई प्राप्त हो। शरीर आगे की ओर सीधा होगा। हाथों से संतुलन का कार्य होगा, तीव्रता का नहीं। ये शरीर के समीप होंगे।

जैसे ही दाहिना घुटना टेक आफ के बाद अधिक ऊँचाई प्राप्त करता है, घुटने को नीचे गिरने दिया जाता है। बांया हाथ दाहिने घुटने के साथ नीचे झूलता है। हॉप के पिछले भाग में दाहिना घुटना, दाहिना पैर और बांया हाथ प्रबल झुलाव के साथ आगे की ओर बढ़ना आरम्भ करते हैं। टेक आफ के बाद बांया पैर की गति, शरीर के संतुलन के लिए होता है। बायें पैर पर, गोलाई तथा एड़ी के साथ, सीधा शरीर तथा सीधे बायें पैर पर गिरने पर हॉप पूरा होता है।

स्टैप :—'स्टेप' की दूरी जितनी हो वह अच्छा है। इसे प्राय: ११', ६''—१२', ३'' का होना उचित है। स्टेप की तैयारी दाहिने पैर तथा हाथ के आगे झुलाव को पूरा करने से तथा बायें पैर पर गिरने से इस तरह मिलाना कि थोड़ी आगे की गति कम हो, होती है। जैसे ही बांया पैर ज़मीन छोड़ता वह अपनी झुलाव आगे पूरा स्टेप को देता है। इस अवस्था में कंधे बायें पैर से काफी आगे रहेंगे। दूसरे शब्दों में स्टेप के लिए टेक आफ लेते समय शरीर आगे को झुकाव रखता है। स्टेप के अन्त में दाहिना हाथ नीचे पीछे की ओर होगा। बांया हाथ कंधे की ऊँचाई पर और आगे होगा।

कूदना लम्बी कूद के समान

अभ्यास :—घुटना मोड़ना, ऊपर उछलना, दोनों पैरे से बारी बारी खड़े होकर कूदना, हॉप स्टेप तथा खड़े होकर जम्प करना। स्प्रिन्ट आधार होना चाहिये। लो हर्डल की तेज़ी तथा ताल का अभ्यास करना चाहिये। हाई जम्प सीजार प्रणाली। प्रत्येक एथलीट को कार्य क्रम बनाना होगा। कूदने का अधिक अभ्यास।

———

२

उच्च संगठन के खेल

पृष्ठ भूमि

उच्च संगठन के खेलों के कोचिंग का ध्येय है, मानसिक एवं शारीरिक समन्वय, आधारभूत गतियों तथा खेलों के सिद्धान्त की शिक्षा; खेल की शक्ति का विकास जिससे खेलने वाले, दूसरों के साथ सहयोग से खेलें, तथा निम्न सगठन के खेल और 'लीड अप' गेम्स में अभ्यास देना जिससे मुख्य खेल में सहायता प्राप्त हो।

उच्च संगठन के खेलने की योग्यता साधारणतया तीव्रता से और निश्चित होकर दौड़ने में, शीघ्रता से मुड़ने तथा घूमने में, अवस्था अनुकूल दोनों पैरों से या हाथों से मारने, उठाने, फेंकने आदि में; गेंद, रोकने, पास करने, ड्रिल करने, फेंकने, या हेड करने के द्वारा नियन्त्रण तथा अन्य खेलने वालों के साथ सहयोग से खेलने में होता है।

आधार भूत गतियों के अभ्यास के द्वारा उन क्रियाओं की आदत बन जाती है जिससे खेलने में स्वाभाविकता एवं सरलता आ जाती है तथा ये क्रियायें स्वचालक हो जाती हैं। इस के साथ ही खेल मे रुचि एव उत्साह होना अति आवश्यक है। खेल के आधार भूत तथ्य को जानते हुये भी व्यक्ति एक अत्यन्त साधारण खेलने वाला ही रह सकता है। उसके खेल का प्रकार उसके भाव एवं मानसिक योग्यता पर निर्भर करता है। खेल में डरने वाले तथा भयरहित दोनों प्रकार के खेलने वाले होते हैं जिनका उचित प्रशिक्षण होना चाहिये जिससे डरने वाला साहसी हो तथा भयरहित नियन्त्रण में रहें। खेलने में कुछ व्यक्ति

ऐसे होंगे जो आसानी से चेष्टा छोड़ देते हैं। जब तक वे जीतते हैं तब तक वे उत्साह पूर्वक खेलते हैं तथा हारने पर निराशा से तथा कम चेष्टा से खेलते हैं। खेल में सदैव पूर्ण प्रयत्न से खेलने का प्रशिक्षण होना आवश्यक है।

कोच की सफलता उसके स्वाभाविक एवं आन्तरिक गुणों के कारण होती है, किसी पद्धति के अनुसरण करने के कारण नहीं। वैयक्तिक गुणों से अन्य व्यक्ति अधिक प्रभावित होते हैं। कोच की धीरता, प्रसन्न चित्त होना, अच्छे भाव का होना, दूसरों को हंसाने की योग्यता, अच्छा स्वास्थ्य एवं सुडौल शरीर, शक्ति, उत्साह, प्रखर दृष्टि एवं उत्तम ध्वनि आदि दूसरों को आकर्षित करने में सफल तथा दूसरों पर प्रभाव डालने में सहायक होते हैं। ये गुण अर्जित किये जा सकते हैं या उनकी प्रगति की जा सकती है। इनके साथ ही कोच का अपने विषय में तकनीकी ज्ञान से पूर्ण होना एक अनिवार्य स्थिति है। विषय में विस्तृत ज्ञान से वह अपने संरक्षिता में आये हुये खेलने वालों पर अधिक प्रभाव डाल सकता है। कोचिंग स्कीम में निम्नलिखित का होना आवश्यक है।

(१) स्कीम, आयु, खेलने वालों की योग्यता, सुविधा एवं साधन के अनुसार होना चाहिये।

(२) अभ्यास की प्रगति साधारण से जटिल, ज्ञात से अज्ञात का होना चाहिये तथा अभ्यास का उचित समय प्राप्त होना चाहिए जिससे व्यक्तिगत एवं टीम अभ्यास दोनों सम्भव हों।

(३) शिक्षा विधि संक्षिप्त, साफ एवं विषय सम्बन्धित होनी चाहिये।

(४) प्रदर्शन दिया जाना उचित है तथा दृश्य एवं श्रवण उपकरण का प्रयोग किया जा सकता है।

(५) कार्य में विभिन्नता होना आवश्यक है।

(६) प्रशिक्षण में अनुशासन अवश्य होना चाहिये।

(७) प्रतियोगिता आयोजित होना आवश्यक है। कोच को सदैव ध्यान में रखना है कि उपदेश से उदाहरण उत्तम है।

खेल के द्वारा उचित लाभ प्राप्त करने के लिये व्यक्तिगत स्वास्थ्य; जिसमें स्वच्छ वायु तथा सूर्य की रोशनी, व्यायाम एवं विश्राम, पौष्टिक भोजन, स्वच्छता, दातों की रक्षा, मादक वस्तुओं का प्रयोग न करना आता है, उनके प्रति उचित ध्यान देना आवश्यक है। खेल में साधारण चोट इत्यादि जैसे कटना, हड्डी टूटना, मांसपेशियों का मरोड़ एवं चोट, बेहोशी आदि का प्रारम्भिक चिकित्सा का उचित ज्ञान होना आवश्यक है।

फुटबाल

फुटबाल एक जटिल प्रकार का खेल है। यह भारतवर्ष में सर्व प्रिय है। यह एक अत्यन्त ही वैज्ञानिक खेल है जिसकी निपुणता बहुत परिश्रम के बाद आती है। देखने में यह अत्यन्त ही सरल मालूम होता है। अच्छे खिलाड़ियों में भी निष्फल आक्रमण, जिन स्थानों से गेंद ले जाया जा सकता है वे घिर जाते हैं, खाली गोल में गोल नहीं हो पाता, गेन्द फेंकने में प्रतिद्वन्दी के पैरों पर जाता है इत्यादि बातें हुआ करती हैं। अर्थात् जिस तरह खेल होना चाहिए नहीं होता है। खेल के सरल कार्य किक करने में भी अनदेखी समय का सामतुल्य, निर्णय तथा प्रचलित करना होता है, जिसमें अच्छे खिलाड़ी भी पूर्णता से निपुणता का दावा नहीं कर सकते। उदाहरण के रूप में यदि एक उत्तम श्रेणी के भी खिलाड़ी से पेनाल्टी एरिया के बाहर से गोल में गेंद मारने को कहा जाये तो वह कितनी ही बार गलती वगैरा और जब सामने प्रतिद्वन्दी हो, मैदान ठीक न हो, गेंद भारी या हलका हो, सूरज चमक रहा हो तो ऐसी अवस्था में सही कार्य करना बहुत ही कठिन हो जाता है।

वैज्ञानिक प्रशिक्षण से सही निपुणता आ सकती है। अच्छे कोचिंग का तात्पर्य तकनीक को परिश्रम के साथ अपनाने में है। इस में अनुभव के आधार पर कार्य में प्रगति की जाती है तथा सब प्रकार के व्यर्थ अनुमान हटाये जाते हैं। कोचिंग के द्वारा निपुणता में उन्नति की चेष्टा की जाती है।

फुटबौल में प्राकृतिक गति का व्यवहार जिसमें अच्छे प्रकार के मांसपेशियों का संतुलन होता है ये प्रतिद्वन्दी के रुकावट के सम्मुख किये जाते हैं। किसी चीज़ में निपुणता आने के बाद वह स्वचालक हो जाता है। स्वचालक गतियों के होने में भी कभी कभी ऐसा अवसर आ जाता है जब कि खिलाड़ी को एक

क्षण के लिये निर्णय करना ही पड़ता है और इसी क्षण में प्रशिक्षण के गुण दिखाई देते हैं। सीखने की पहली अवस्था में सिद्धान्त तथा अभ्यास में समानता होना चाहिए, अनुभवी खिलाड़ियों के द्वारा सैद्धान्तिक तकनीक आसानी से अपनाये जा सकते हैं।

फुटबौल का प्रशिक्षण तीन हिस्सों में विभाजित किया जा सकता है। (१) शरीर के कार्य के लिये तैयारी (२) खेल के अनेक कौशल का अभ्यास, (३) पूर्ण खेल का अभ्यास।

गेंद मारना :—गेंद मारने के अनेकों प्रकार हैं। यह आवश्यकता अनुसार प्रयोग में आते हैं। अभ्यास ऐसा होना चाहिए कि कठिन स्थिति में भी गेंद आसानी से दोनों में से किसी एक पैर से किक किया जाये।

कोचिंग में किकिंग के अभ्यास के लिये उसे उद्देश्य से सम्बन्धित करना चाहिये जैसे नीची पास करने के लिये किक जिसमें पैर के अन्दर का हिस्सा प्रयोग हो, लो-ड्राइव जिसमें पैर का पंजा प्रयोग होता है। ये दोनों मुख्य किकिंग कौशल में आते हैं। नीची गेंद से पास करने में आसानी होती है तथा गेंद एक स्थान से दूसरे स्थान तक शीघ्रता से जाता है। प्रतिद्वन्दी के ऊपर से गेंद भेजने के लिये या गेंद दूर भेजने के लिये जिससे बीच में रोका न जा सके, गेंद हवा में ऊपर भेजना पड़ता है। पैर के किसी ऊपरी हिस्से से यह किक लगाया जा सकता है। पैर का तलवा उछालते हुये गेंद को किसी समीप के खिलाड़ी के भेजने में प्रयोग होता है, एड़ी से गेंद पीछे की ओर भेजा जाता है। पैर के अन्दर तथा बाहर का हिस्सा पास करने के प्रयोग में आता है और पंजा ड्राइव, ऊपर गेंद मारने, टप्पा खाते हुये गेंद को मारने या आधी वाली (Half volley) के प्रयोग में आता है। बूट के सामने के हिस्से से भी जब गेंद पहुंच के बाहर हो तो उसे आगे भेजने के प्रयोग में लाया जाता है।

धक्के के पास के लिए(Push pass)पैर के अन्दर का हिस्सा अंगूठे की नीचे से एड़ी की हड्डी तक प्रयोग में आता है। अंगूठे को नीचे करने से गेंद को पूरे पंजे से छाप लिया जा सकता है। इस प्रकार एक बड़े दायरे से सम्पर्क होता है और क्योंकि पैर मुड़कर तना ही हुआ है, एक शक्तिशाली किक किया जा सकता है। जब बगल से किक करना होता है तो पैर से मारने का हिस्सा अंगूठे

के ऊपरी हिस्से और पंजे के बगल से होता है। सीधे मारने के लिये पैर का अगला हिस्सा नीचे अन्दर की ओर मुड़ा हुआ होता और कुछ पैर के बाहरी हिस्से से किक होता है। जब गेंद खड़े होने वाले पैर के सामने होता है तब शरीर का झुकाव कुछ पीछे की ओर होता है जिससे मारने वाले पैर से सम्पर्क हो इसलिये गेंद ऊपर उठाया जा सकता है। गेंद नीचे रखने के लिए यह आवश्यक है, कि खड़ा होने वाला पैर, गेंद के समीप हो और यह ध्यान रखना चाहिये कि मारने वाला पैर का घुटना सम्पर्क के समय गेंद के ऊपर रहे। पुट्ठे को मोड़ कर कोंण के रूप का प्रवेश हो तो मारने वाले पैर की तेजी बढ़ सकती है।

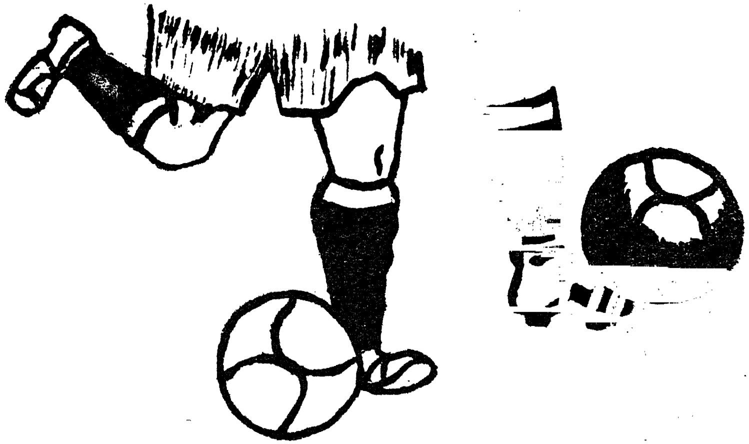

नीची किक :—पंजे से गेंद किक किया जाता है और गेंद जमीन पर मारा जाता है। मारने वाले पैर का घुटना गेंद के ऊपर होगा पुट्ठे, भी मारने वाले पैर के ऊपर रहेंगे। इस लिये खड़े होने वाला पैर गेंद से आधा या एक फुट की दूरी पर रहेगा। यदि खिलाड़ी गेंद के पास गेंद जाने की दिशा के सीध में आता है तो उसे अपने किक के समय का अनुमान करना होगा। गेंद के समीप आते ही शीघ्रता करनी पड़ेगी जिससे खड़ा होने वाला पैर नीचे आ जाये जिसमें एड़ी पहले हो और यह गेंद के बगल में हो। घुटना कुछ मुड़ा हुआ हो,

शरीर गेंद के ऊपर सीधा होगा । कंधे आगे कुछ झुके हुये और सिर नीचे देखते हुये हो । मारने वाला पैर पुट्ठे के पास सीधा और घुटने के पास मुड़ा हुआ हो। जैसे ही मारने वाला पैर गेंद के ऊपर आता है कंधे और हाथ मारने के विपरीत दिशा में मुड़ते हैं । मारने वाला पैर का घुटना गेंद के ऊपर से जाता है और पैर में तनाव, अंगूठा नीचे की ओर होता है, घुटना अपने को शक्ति के साथ फैलाता है और इस प्रकार गेंद दूर मारी जाती है । मारने वाला पैर कार्य के बाद भी आगे ऊपर की ओर झूलता है और शरीर खड़े होने वाले पैर के अंगूठे के ऊपर उठ जाता है । मारने वाले पैर का विपरीत हाथ शरीर के पार उल्टा झूलना पूर्ण करता है । इस सम्पूर्ण गति में सन्तुलन होता है जिससे किक मे ताकत और तेज़ी हो । जब तक किक समाप्त न हो जाये तब तक सिर नीचे होना चाहिए । खिलाड़ी निशाने को मारने के पहले दौड़ते समय देख लेता है । मारते के समय ध्यान गेंद पर होना चाहिए । जब सामने की दौड़ तेज़ी तथा किक शक्तिशाली होती है तो ऐसी अवस्था में खड़े होने वाले पैर पर हॉप (hop) करना आवश्यक हो सकता है । अधिक अभ्यास के बाद अच्छा खिलाड़ी कुछ टेढ़ी दौड़ से गेंद के समीप आता है ।

अभ्यास :—

(१) खिलाड़ी आमने-सामने खड़े होकर गेंद के पास सीधे आयें और नीची किक लगायें । मारने के पहिले गेंद स्थिर हो पहले उस पैर से मारे जो आसानी से चलता हो फिर दूसरा पैर ।

(२) नं० १ की तरह किन्तु दूरी ३० गज़ और तेज़ी से दौड़ कर गेंद के पास आना ।

(३) नं० १ और २ कुछ टेढ़ी प्रवेश से ।

(४) नं० १, २, ३ किन्तु मारने से पहले गेंद को दूसरे पैर से सरका दो और गेंद के चलते हुए में किक देना ।

(५) १, २, ३ की पुनरावृत्ति किन्तु गेंद तेज़ नीची किक के द्वारा साथी के पास मारना । जो भी पैर गेंद सीध में हो उसी से मारना । कार्य सही होना चाहिए किन्तु जितनी शक्ति से मार सकें मारें ।

(६) पेनालटी एरिया से केन्द्रीय वृत्त तक नीची किक करना। ६ व्यक्ति पेनालटी एरिया में हों और १२ केन्द्रीय वृत्त में।

(७) तीन में-अ, ब को गेंद देता है जो घूम कर गेंद के साथ-साथ दौड़ता है और उसी दिशा में स को पास करता है। स फिर ब के पास गेंद भेजता है, ब फिर पहले की तरह गेंद स के पास भेजने के लिए पास करता है यदि गेंद ब के पास बायें पैर की ओर आयी तो वह दाहिनी तरफ मुड़ कर बाएँ पैर से मारता है।

पैर के अन्दर से पास करना :—बहुत सरल और निश्चित पास होता है। पैर ऐसा घुमाया जाता है जिससे गेंद से पूर्ण सम्पर्क हो। दोनों घुटने कुछ कड़े रखे जाते हैं और शरीर का वज़न खड़े होने वाले पैर की एड़ी पर होता है। इसमें खिलाड़ी झुक कर निशान देख लेता है। इस किक में शक्ति अधिक नहीं होती क्योंकि पैर की गति सीमित है किन्तु यदि पैर तेजी और झटके से लगाया जाये तो गेंद काफी दूर जा सकता है।

अभ्यास :—(१) दो खिलाड़ियों में आपस में पास, दूरी १०-१५ गज, पैर के झुलाव पर अधिक ध्यान देना।

(२) तीन में—तीनों एक सीध में खड़े होते हैं अ,ब, को पास करता है जो गेंद फिर वापस भेजता है। अ फिर स को पास करता है और चेष्टा करता है कि ब के पास से गेंद निकल जाये। स फिर ब को पास करता है और फिर पास पाता है और फिर अ को पास करता है यह चेष्टा करते हुए कि गेंद पास से चली जाये। कुछ देर के बाद ब दोनों ओर के पास को रोकने की चेष्टा करेगा।

(३) **दो खिलाड़ी :**—जैसे नं० १ में किन्तु दूरी १२-२२ गज किन्तु खिलाड़ी एक पैर से गेंद का नियंत्रण करते हैं कुछ आगे या बगल में लुढ़का कर फिर साथी को पास करते हैं।

(४) जैसे नं० ३ में किन्तु पहली बार ही में किसी पैर से पास करे।

(५) खिलाड़ी एक दूसरे के सामने १०-१५ गज की दूरी से खड़े होते

हैं अ, ब को पास करता है ब गेंद रोक कर फिर उसी दिशा में ४-५ गज तक गेंद लुढ़काता है वह फिर गेंद के पीछे दौड़ कर एक पैर पर पीछे घूम जाता है और पास वापस देता है।

(६) **तीन में**—खिलाड़ी त्रिकोण के रूप में खड़े हो जाते हैं। गेंद एक से दूसरे को दी जाती है। कोई पैर प्रयोग करें। गेंद पास करने से पहले रोकें।

(७) जैसे नं० ६ में किन्तु प्रथम बार ही में पास करना।

(८) जैसे नं० ६ किन्तु इस में खिलाड़ी घूमने के पहले गेंद अपने पास से जाने देता है फिर घूमता है और प्रथम बार में पास करता है।

(९) दो में—खिलाड़ी आसानी से आगे दौड़ते हैं और एक दूसरे को आगे तिरछा पास करते हैं। पास करने में पैर का बाहरी हिस्सा प्रयोग करें। इस प्रकार का पास प्रतिद्वन्दी को धोखा देने के लिये कभी कभी बहुत ही उत्तम होता है। इसमें पंजे का बाहरी हिस्सा पैर के ज़रा घुमाने से पास करने की दिशा में अच्छी तरह गेंद पर लगेगा। खड़ा होने वाला पैर ज़रा पीछे और गेंद के बगल में रहता है।

हवा में किक :—रखे हुये गेंद को हवा में किक करने के लिये गेंद के केन्द्र में खूब नीचे सम्पर्क करना आवश्यक है। अंगूठा गेंद के नीचे जाता है। पंजे से सम्पर्क के बाद गेंद ऊपर उठाते हैं। पुट्ठे जो पैर के झुकाव के लिये टेक का काम करते हैं गेंद अच्छी तरह उठाने के लिए उसके पीछे होना चाहिये। खड़े होने वाला पैर कुछ बगल में और गेंद के पीछे होना चाहिए। कमर पीछे झुकना चाहिये जिससे गेंद तक पहुंचे। यदि प्रवेश बगल से हो तो मारने वाला पैर गोलाई में झुकता है जिससे गेंद के नीचे उछालने की क्रिया हो। इस अवस्था में खड़े होने वाला पैर एक या डेढ़ फुट गेंद के बगल में होगा। वजन खड़े होने वाले पैर पर होता है जो घुटने पर मुड़ा होता है। हवा में किक हुये गेंद पर नियन्त्रण करना सीखना होगा।

अभ्यास :—(१) गेंद ऊपर हवा में मारना कि साथी के पैर के पास टप्पा खाये जो ४०-४५ गज़ पर है। पहले दूरी कम हो फिर हल्के हल्के बढ़ाया जाये।

[i] पंजे से सीधे मारना जब गेंद स्थित हो।

[ii] बगल से पंजे के अन्दर के हिस्से से।

[iii] बगल से प्रवेश जब गेंद खिलाड़ी की ओर लुढ़क रही हो।

[iv] बगल से प्रवेश जब गेंद जो आगे या बगल में लुढ़क रही हो।

(२) ऊपर के गेन्द में नियन्त्रण।

[i] किसी दी हुई उंचाई या क्रास बार के ऊपर गेंद उछाल कर साथी को देना।

[ii] बीच में खड़े हुए साथी के ऊपर से उछाल कर दूसरे को देना।

[iii] गेंद ऊपर उछालना कि एक दी हुई लकीर पर गिरे।

[iv] गेंद ऊपर उछालना कि दिये हुए वृत्त के अन्दर गिरे।

[v] गोल कीपर गेंद उछाल कर किसी फारवर्ड को देता है।

[vi] दो इन साईड फौरबर्ड और दो वींग में खिलाड़ी W बनालें। आउटसाइड राइट जमीन पर गेंद इनसाइड राइट को पास करता है। वह घूमकर हवा में किक कर के आउटसाइड लेफ्ट को देता है, वह गेंद रोककर इनसाइड लेफ्ट को जमीन पर पास देता है। इनसाइड लेफ्ट गेंद हवा में आउटसाइड राइट को देता है।

(७) आउटसाइड लेफ्ट, लेफ्ट हाफ को पास करता है। वह प्रथम बार इनसाइड लेफ्ट को पास करता, वह फिर लेफ्ट-हाफ को देता है जिससे गेंद हवा में आउटसाइड राइट को जा सके। फिर यही काम दाहिने तरफ होता है।

(८) इनसाइड राइट कोने के झण्डे के पास जाता है। आउटसाइड राइट अपनी सीध में दौड़ता है, गेंद लेता है और वहां से किसी एक फारवर्ड को पास करता है। वींग के खिलाड़ी में कौशल की परीक्षा के लिये इनसाइड राइट पुकारता है कि गेंद किसको दिया जाये, इनसाइड लेफ्ट, सेन्टर फारवर्ड, आउट

साइड लेफ्ट या उसी को। ऐसा ही अभ्यास पास करने तथा गेंद हवा में किक करने का खिलाड़ियों को गोल की ओर जाते हुए करना चाहिये।

चिप शाट (Chip Shot) :—जैसे लकड़ी की चैली निकाली जाती है उस तरह की हरकत के द्वारा गेंद मारना। पैर बाहर की ओर घुमाया जाता है जिससे पैर के अन्दर के हिस्से से गेंद के नीचे उछाला जा सके। जितना नीचे हो सके गेंद के नीचे मारना चाहिये। गेंद ऊपरी तिरछी ढलान से उठना चाहिए क्योंकि इसका प्रयोग आते हुये गेंद को प्रतिद्वन्दी के सिर के ऊपर मारने का है। गेंद पर एक तेज़ पीछे के घुमाव के कारण उसकी गति टप्पा खाने पर आगे नहीं होती ऐसे पास हाफ बैक के द्वारा फारवर्ड को होते हैं जब ज़मीन पर गेंद रुक जाने का भय होता है। इस में ऊँचाई का ध्यान रखना है क्योंकि अधिक ऊँचा होने पर प्रतिद्वन्दी घूमकर गेंद के पीछे आ सकता है।

अभ्यास :—तीन में— ब ज़मीन पर गेंद मार कर अ को देता और उसी की ओर प्रतिद्वन्दी के रूप में दौड़ता है। अ चिप शाट से गेंद उसके ऊपर उछलता है और स को देता है। ब, अ से स्थानान्तर करता है और अ, स की ओर दौड़ता है। स, अ के सिर के ऊपर गेंद चीप करता है और ब को देता है। यह अभ्यास लगातार चलता रहता है और दोनों पैर प्रयोग किये जाते हैं।

वौली

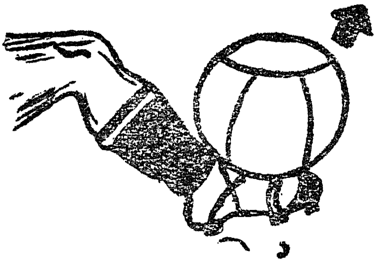

वौली तथा हाफ वौली :—वौली उस समय प्रयोग होती है जब गेंद ज़मीन से ऊपर रहती है। यह ऊँची गेंद निकालने के लिये तथा नीची ड्राइव के लिए प्रयोग होता है। गेंद की ऊँचाई पर वौली की प्रकार होगी। सिर के ऊपर भी वौली होती है।

कभी कभी बगल के प्रवेश से भी वौली लगाई जाती है। क्रिया दोनों समान ही होती है केवल इसमें पैर शरीर के सामने दूसरी ओर झूलता है। मारने के समय खड़े हुए पैर पर शरीर घुमता है।

लो वौली कठिन अभ्यास है। सम्पर्क के समय मारने वाले पैर का घुटना गेंद के ऊपर होगा यदि गेंद समानान्तर भेजना हैं।

बगल में हटकर मारने वाले पैर को बगल में उठाने से ऊँची गेंद से सम्पर्क किया जा सकता है।

हाफ वौली उस समय लगायी जाती है अब गेंद टप्पा खाने वाला होता है। टप्पा तथा पैर के पंजे का सम्पर्क समकालीन होना चाहिए।

अभ्यास :—प्रारम्भिक अवस्था में गेंद हाथ से टप्पा खिलाया जाता है।

(१) दो में—हाथ से टप्पा खिला कर साथी को गेंद देना साथी यह पकड़ कर फिर साथी को देता है। दूरी क्रमशः बढ़ते रहना चाहिये।

(२) गेंद हवा में फेंक कर फिर साथी के पास वौली करना।

(३) दो में—निश्चित होने तथा दूरी के लिए गेंद वौली से किसी वृत्त में गिराना चाहिये।

(४) दो में—पहली बार किक करके वौली भेजता। पाने वाले गेंद को वापस करने के लिए टप्पा खाने दे सकता है उसके बाद गेंद टप्पा खाने से पहले वापस भेजना है।

(५) तीन में—अ, ब को गेंद देता हैं। ब, स की ओर वौली किक करता है। अ, स के पास जाता है जो उसे गेंद फेंक कर देता है जिससे वह ब के पास बौली कर सके। अभ्यास दोनों पैरों से स्थान तथा दिशा बदल कर किया जा सकता है।

(६) दो में—एक साथी ऊँची वौली करता है दूसरा साथी लो ड्राइव वौली करता है। स्थान बदलते रहने से दोनों में अभ्यास मिलेगा।

सम्बन्धित अभ्यास—(१) गोलकीपर सेन्टर फारवर्ड को बौली देता है।

वह राइट इन को ज़मीन पर पास देता है। वह फिर गेंद वौली से गोल में गिराता है।

(२) सेन्टर हाफ, गेंद हवा में बैक को देता है यह वौली से दाहिने या बायें विंग मैन को देता है।

(३) गेंद फारवर्ड के पास फेंका जाता है जो दाहिने या बायें वौली से विंग में गेंद फेंकते हैं।

(४) गेंद विंग मैन के पास फेंका जाता है, जो, गेंद वौली या हाफ वौली से बीच में मारते हैं। निश्चित स्थान पर गेंद गिराने की व्यवस्था होनी चाहिये।

एड़ी के पीछे:—समय रहने पर कोई खिलाड़ी घूम कर पीछे पास करेगा किन्तु शीघ्र खेल करने के लिये या प्रतिद्वन्दी को धोखा देने के लिये एड़ी के पीछे का प्रयोग किया जा सकता है। इसके प्रयोग की रीति है कि मारने वाले पैर को गेंद के ऊपर जाने दे, फिर घुटने को झटका दे, पीछे उछालने की क्रिया हो। खड़ा होने वाला पैर गेंद के समीप होगा। यदि खिलाड़ी दौड़ रहा हो तो खड़े होने वाले पैर से एक कदम आगे जाना चाहिए कि जब एड़ी पीछे करे तो गेंद सही स्थान पर होगा।

अभ्यास :—(१) दो में—एड़ी के पीछे से स्थित गेन्द मारना।

(२) दो में—एक साथी गेंद ढकेलता है फिर एड़ी के पीछे से मारता है साथी के पास।

(३) तीन में—अ, ब के पास गेंद फेंकता है जो रोक कर एड़ी के पीछे से स को देता है प्रत्येक खिलाड़ी बारी लेते हैं।

(४) अ, ब को गेंद पास करता है जो दौड़ कर एड़ी के पीछे से अ को देता है। स फिर गेंद ब को देता है जो दौड़कर एड़ी के पीछे से अ को देता है। खिलाड़ी अपना स्थान बदलते रहते हैं।

गेंद की दिशा बदलने की किक :—किसी खिलाड़ी के पास जब गेंद तेजी से आ रहा हो तो केवल पैर के छूने से उसे अपने मार्ग से हटा सकते हैं।

जाब (The Jab) :–जाब के फुर्तीलेपन से होने के कारण आकर्षक दिखायी देता है। जब कोई खिलाड़ी तेजी से जा रहा हो तो बिना रुके हुये गेंद में शीघ्र घुसेड़ने की क्रिया से मारने के द्वारा जाब किक होता है। इसमें साधारण लो ड्राइव किक कि प्रारम्भिक क्रियायें होती हैं किन्तु सम्पर्क के साथ ही पैर के आगे जाने की गति रोक ली जाती है। जाब का प्रभाव पैर से गेंद मारने के साथ ही पीछे खींच लेने में होता है। जब खिलाड़ी किसी प्रतिद्वन्दी के सम्मुख होता है तो यह किक प्रयोग होता है।

गोल में शूट करना :—इसमें शक्ति और निश्चित होने की आवश्यकता होती है। कोई किक प्रयोग में आ सकता है किन्तु लो ड्राइव, सब से उत्तम है। अभ्यास के लिये गेंद ४ फुट से नीचे मारना चाहिए। निशाना दोनों गोल पोस्ट से कुछ अन्दर होना चाहिये क्योंकि यह स्थान गोलकीपर से दूर रहता है। दूर से गेंद गोल में मारते समय दूर के पोस्ट के समीप निशाना करना चाहिये क्योंकि साधारणत: गोलकीपर समीप के पोस्ट के पास आ कर गेंद की बाट जोहता है। जमीन से सटे हुये तीव्रगति का गेंद भी उत्तम होता है।

अभ्यास :–निश्चित होने के लिये किक करना। निशाने पर शूट करना। दो डंडे प्राय: तीन फीट ऊँचा और चार फीट की दूरी पर उन पर क्रौस बार हो।

(१) दो खिलाड़ी आमने सामने १५-२० गज की दूरी पर हों। पहिला खिलाड़ी गेंद क्रौस बार के नीचे से मारता है उसके सामने वाला खिलाड़ी रोक कर अपने साथी को देता है जो कि गेंद क्रौस बार के नीचे मारता है।

(२) जैसे नं० १ में किन्तु गेंद बिना रोके हुए वापस करना।

(३) गोल में शूट करना। गोल के नाप का अन्दाज करना, कोण तथा ऊँचाई का अन्दाज करना।

(४) दो समूह में खिलाड़ी विभाजित हो जायें, कुछ गोल के पीछे कुछ पेनाल्टी एरिया के बाहर। गोल में गेंद मारना बारी बारी दोनों पैरों से।

(५) जैसे नं० ४ में किन्तु गेंद लुढ़का कर गोल में मारें।

(६) जैसे नं० ४ में किन्तु गेंद उछाल कर बौली या हाफ बौली गोल में मारें।

(७) जैसे नं० ४ में किन्तु पीठ गोल की ओर, सिर के ऊपर गेंद फेंक कर घूमना तब वौली या हाफ वौली गोल में मारना। दोनों पैरों से बारी-बारी।

(८) तीन समूहों में अ–और ब गेंद शूट करें। ब, ग गेंद दें, स, फ गोल के पीछे गेंद रोकें। ब, अ के सामने गेंद देता है जो दौड़ कर मारता हैं। ग, द को उसी तरह गेंद देता है।

(९) जैसे नं० ८ में किन्तु ब वाले अ वालों को विभिन्न स्थान से गेंद दें जब अ वाले अभ्यास कर चुकें तो वे फ वालों के स्थान पर जाते हैं जो ब वालों के स्थान लेते हैं ओर ब वाले शूटिंग का अभ्यास करते हैं। प्रत्येक गति क्रमश: विधिवत किया जाता है, सम्पूर्ण ब वाले सीधी लकीर पर रहते हैं, अपनी बारी से पास देते हैं और हट जाते हैं, अ वाले अपनी बारी से गेंद लेते और शूट करते हैं।

सम्बन्धित अभ्यास :—(१) जोड़े में—आपस में पास देना तथा गोल की ओर आना। जैसे वे गोल के समीप आते हैं वैसे तेज होते जाते हैं और एक गोल में गेंद मारता है।

(२) जैसे नं० १ में किन्तु जैसे वे पेनालटी ऐरिया के पास पहुंचे एक खिलाड़ी उन्हें बाधा दे। वे आपस में एक दूसरे को पास कर सकते हैं। आगे बढ़ने के लिये औफ साइड पोजिशन का ध्यान रहे।

(३) विंग, इनसाइड फारवर्ड और हाफ बैक आपस में पास करें, गोल तक आने में सभी को गोल में गेंद मारने का अवसर मिले।

(४) खिलाड़ियों को तीन समूह में बांट देना, गेंद रोकने वाले, देने वाले तथा आक्रमण करने वाले। रोकने वाले गेंद देने वालों को पास करें, जो आक्रमण करने वालों को पास करें और वे गोल में शूट करें। अवस्था बदलती रहे।

(५) हाफ, फारवर्ड को गेंद दें और वे गोल में शूट करें।

किकिंग अभ्यास के लिये छोटे श्रेणी के खेल :—(१) खेल के मैदान के एक हिस्से में दो वृत्त, बाहरी तथा भीतरी वृत्त। बाहरी वृत्त में दो बैक, दो विंग मैन तथा सेन्टर फारवर्ड, अन्दर के वृत्त में तीन हाफ और इनसाइड फारवर्ड, गोल-कीपर दोनों वृत्त को एक एक गेंद देता है। खिलाड़ी एक दूसरे को क्रमशः गेंद पास करते हैं और अन्तिम खिलाड़ी गोलकीपर को गेंद देता है। दोनों वृत्तों में प्रतियोगिता होगी।

(२) चार खेलने वाले केन्द्रीय वृत्त में हों और चार गेंद वौली से अपने साथियों को बाहर दें। साथी वौली के द्वारा गेंद वृत्त में वापस भेजते हैं। वृत्त के समीप के लोग हेड या किक कर सकते हैं। वृत्त के चारों खिलाड़ी, गेंद वृत्त के अन्दर टप्पा खाने से बचाते हैं। यह वौली किक या हेड के द्वारा होती है।

(३) कुछ खिलाड़ी वृत्त में होते हैं। जो बाहर होते हैं वे पैर के बगल से पास करके अन्दर वालों को घुटना के नीचे मारते हैं। तीन चार गेंद प्रयोग किया जा सकता है। जिन्हें छू जाता है वे बाहर आ जाते हैं और जो छूता है वह अन्दर चला जाता है।

(४) पेनालटी ऐरिया में दो टीम आपस में आमने सामने खड़ी हों। प्रत्येक टीम के पास चार गेंद हो। दो और गेंद निशान लगे हुए दोनों टीम के मध्य हों। आरम्भ होने पर खिलाड़ी अपने गेंद से निशान वाले गेंद, प्रतिद्वन्दी के लकीर के पीछे मारना चाहते हैं।

(५) पेनालटी ऐरिया में निशान हो, दो टीम गेंद से निशान मारने में प्रतियोगिता करें।

(६) गोल तथा गोल ऐरिया को तीन खिलाड़ी छः खिलाड़ियों के विरुद्ध रक्षा करते हैं। तीन खिलाड़ी गोल के पीछे गेंद रोकने के लिये रहते हैं। तीन गेंद प्रयोग होते हैं। आक्रमण करने वाले लिखाड़ी गेंद, गोल में या गोल ऐरिया में उछालते हैं। बचाने वाले गेंद को ज़मीन पर टप्पा खाने से हेड या वौली के द्वारा बचाते हैं। यदि ऐरिया मे गेंद गिर जाए तो एक प्वाइन्ट मिलता है यदि गोल हो तो दो।

(७) एक पैर पर हौप दूसरे को ऊपर उछालना।

(८) सामने रखे हुये निशाने को गेंद से मार कर गिराना।

(९) किसी दिवाल पर निशान कर के उसे मारना।

(१०) गोल के ऊपर गेंद मार कर, किसी वृत्त में टप्पा खिलाना। फिर उस वृत्त से गोल के अन्दर से पास करना।

(११) दो खेलने वाले तिरछे खड़े हों। एक दूसरे को गेंद पास कर तेज़ी से दौड़ कर तिरछे गेंद पास लेने के लिए स्थान ग्रहण करें।

गेंद पकड़ना (Trapping) :—ट्रापिंग या गेंद पकड़ने का अर्थ केवल रोकना ही नहीं किन्तु गेंद पर नियन्त्रण से अर्थ रखता है नियन्त्रण में गेंद एक दम रोक लिया जायेगा या जहाँ चाहते हैं वहां भेजा जायेगा। झटकते हुये गेंद का नियन्त्रण, टप्पा खाते हुये गेंद को काबू में करना, उसे ज़मीन पर लाना आदि गेंद पकड़ने में आते हैं। ट्रापिंग से गेंद बिलकुल रोक लिया जाता है या रोकते हुये चलाया जाता हैं।

साधारण नियम इसके लिये यह है कि सम्पर्क के समय जो शरीर का अंग गेंद रोकता है उसे कुछ पीछे हटना चाहिये।

रोकना

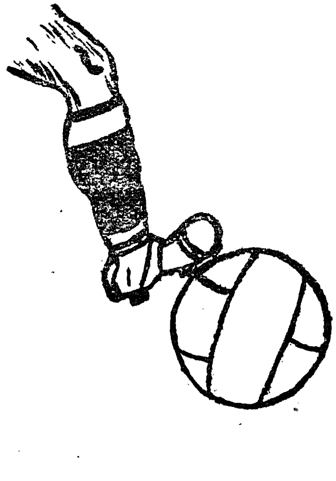

पैर के तलवे से गेंद रोकना या पकड़ना :—गेंद की दिशा में खिलाड़ी अपना पैर कुछ ऊपर उठाता है। अंगूठा ऊपर रहता हैं, एड़ी ज़मीन से ३", ४" ऊपर रहती है, घुटना मुड़ा रहता है और शरीर लचीला तथा आगे झुकाव लिये रहता है। गेंद तलवे तथा ज़मीन के बीच के पकड़ में आता है। यदि गेंद तेज़ी से आ रहा हो तो सम्पर्क पर पैर कुछ पीछे लाया जाता है। गेंद रुकने पर पैर से जरा छूने पर गेंद आगे लुढ़केगा।

चलते हुये गेंद को पैर के बगल से रोकना :—जैसे गेंद समीप आता है पैर शीघ्र सम्पर्क करता है। जैसे सम्पर्क समाप्त हो, वैसे पैर कुछ पीछे खींच लिया जाये जिससे गेंद की चाल रुक जाये।

टप्पा खाते हुए गेंद को रोकना:—गेंद की गति का निर्णय कर उस स्थान पर होना जहाँ टप्पा होगा। इसका समय नियत करना सरल नहीं। टप्पा खाते हुये गेंद के समीप आना, खड़ा होने वाला पैर का अंगूठा कुछ बगल में और गेंद के पीछे होगा। रोकने वाला पैर घुटना मुड़े हुए ऊपर उठेगा और अंगूठा ऊपर की ओर होगा। टप्पा के समय ही पैर का सम्पर्क गेंद से होगा और घुटना कुछ सीधा होगा। शरीर में कुछ झुकाव होगा इससे गेंद आगे बढ़ेगा। जैसे गेंद आगे बढ़ेगा संतुलन आगे बढ़ेगा। खेलने वाला पैर जमीन पर आयेगा और पहला कदम उठायेगा। इसका अभ्यास प्रत्येक कोण से गेंद के टप्पा खिलाने के द्वारा होगा। गेंद की तीव्रता भी बढ़ती जायेगी। यदि गेंद के टप्पा का स्थान सही न मिले तो टप्पा के साथ उसे उठे पैर से ढकेल देने में नियन्त्रण में आ जायेगा। इसके लिए खड़े होने वाले पैर पर उछल कर सरकने की आवश्यकता हो सकती है।

कभी कभी ज़मीन पर गिरने से पहले गेंद पकड़ना पड़ता है। ऐसी अवस्था में दौड़ कर खेलने वाले पैर को बढ़ाकर अंगूठे को पीछे जहाँ तक हो सके मोड़ लें जिससे गेंद का सम्पर्क तलवे से हो। पीछे झुकने से सहायता मिलेगी और खेलने वाले घुटने को सीधी करें। सम्पर्क के साथ अंगूठा नीचे किया जा सकता है गेंद को नीचे करने के लिये। यदि गेंद पैर के बगल से पकड़ी जाये जैसे बायें पैर के बगल से रोकना दायें ओर जाने से पहिले। पैर कुछ पीछे दाहिनी ओर रखा जायेगा जहां गेंद गिरेगा। दाहिनी ओर कुछ झुकाव भी होगा

जैसे बायाँ पैर कुछ बगल और आगे उठेगा। जैसे ही गेंद ज़मीन पर गिरे पैर गेंद के बगल में आयेगा और खींचा जायेगा और दाहिनी ओर मुड़ना होगा। यदि गेंद बिल्कुल रोकना हो तो पैर के बगल को अधिक गेंद पर रखने से हो सकता है।

यदि उसी ओर जाना हो जिस ओर गेंद जा रहा हो और गेंद पैर के अन्दर पकड़ना है तो खड़े होने वाले पैर पर मुड़ना होगा और उस दिशा में शरीर का झुकाव होगा जिस दिशा से गेंद आ रहा हो। जैसे ही गेंद जमीन पर गिरे दायां पैर उठा और मुड़ा हुआ आहिस्ते से गेंद के बाहरी हिस्से पर आता है। घूमना समाप्त होता है और दांया पैर बगल में झुलाया जाता है और गेंद उसके साथ आ जाता है।

यदि गेंद पैर के बाहर के हिस्से से पकड़ना हो और बगल से चलना हो तो पहले की तरह कार्य होगा। खड़ा होने वाला पैर गेंद गिरने के स्थान से दूर होगा जिससे खेलने वाले पैर से समेटने का कार्य हो सके। यदि पकड़ बांयें पैर से हो बायीं तरफ जाने के लिए तो दांया पैर कुछ पीछे और कुछ गेंद की बायीं ओर होगा। शरीर बायीं ओर झुकेगा और बांया पैर दाहिने के आगे क्रौस किया जायेगा, घुटना कुछ मुड़ा हुआ होगा। बांया पैर आसानी से दाहिने के सामने से खींचा जायेगा और अपने कदम में चलता जायेगा। शरीर कुछ झुका हुआ होगा। यदि पैर से पकड़ सही नहीं होगी तब भी टांगों से गेंद जमीन पर आ जायेगा। पकड़ने तथा रोकने में नियन्त्रण से खिलाड़ी अपने आप इन तकनीक में परिवर्तन कर लेंगे। इसके नियन्त्रण से एक पैर पर गेंद के साथ घूमना हो सकता है। पैर के अन्दर के हिस्से से पकड़ने से गेंद पीछे खींचा जा सकता है। पैर के अन्दर से पकड़ दिखाते हुए धोखा देकर खेलने वाला पैर जल्दी गेंद के पीछे लाया जा सकता है, और पैर के बाहरी हिस्से से दूसरी ओर ले जाया जा सकता है। यही धोखा उस समय दिया जा सकता है जब गेंद पैर के बाहरी हिस्से से रोक कर पीछे चले। खेलने वाले पैर के झुकाव के साथ शरीर न मोड़ते हुए अन्दर की ओर घूम जाते हैं।

ऊँचे गेंद को जमीन पर खींचना —गेंद खिलाड़ी के पास से तेज़ी से जा रहा होगा, वह पैर को बगल में बढ़ाकर नीचे ला सकता है। गेंद को पैर के अन्दर के हिस्से में बैठाकर नीचे लाया जाता है। अनुभवी खिलाड़ी पैर का कटोरा बना

कर गेंद नीचे लाते हैं।

प्राय: गेंद पैर से पकड़ में नहीं आता और शरीर का प्रयोग करना पड़ता है।

छाती का निचला हिस्सा टप्पा खाये गेंद को पकड़ने में प्रयोग होता है। वहां से पैर पर खेलने के लिये सामने लाया जा सकता है। खिलाड़ी गेंद की ओर बढ़ता है। पसलियों के नीचे सम्पर्क के समय शरीर धनुषाकार करके पेट की पेशियों को खींचकर और कंधे को आगे झुकाकर गेंद लेता है। कभी कभी गेंद के गिरने के समय पीछे हटना कठिन होता है तो वह छाती के ऊपरी हिस्से से गेंद का नियन्त्रण करता है। गेंद ठुड्डी के नीचे लिया जाता है और छाती नीचे पीछे खींची जाती है जिससे गेंद न उछले। यदि उछलने की आवश्यकता हो तो कुछ पीछे उछलकर गेंद पकड़े और ऐसा समय निर्धारित करे कि गेंद छाती पर नीचे आते समय लगे।

जाँघ से गेंद पकड़ना—बुरी तरह टप्पा खाने वाले गेंद जांघ से ढकेल कर ऊपर किये जाते और दूसरे पैर से वौली किक किये जाते हैं। कभी इस प्रकार दूसरे के ऊपर से गेंद उछाले भी जा सकते हैं।

अभ्यास–[१] साथी के साथ पकड़ सीखना। पैर के अन्दर के हिस्से से लुढ़काये हुये गेंद को मारना।

[२] तलवे से रोकना।

[३] साथी गेंद ऊपर फेंकता है, दोनों पैरों के सामने की हड्डी गेंद पर लाना।

[४] फेंके हुये गेंद को तलवे से रोकना, आगे बढ़ना।

[५] दिवाल पर गेंद मारकर रोकना।

[६] साथी गेंद फेंकता है, दौड़कर गेंद को पैर पर लेना जैसे वह टप्पा खाता है।

[७] ऊँची गेंद को तलवे पर रोकना।

[८] गेंद को पैर के किसी ओर से रोकना जिससे बगल में जा सके।

[९] बौल रोक कर घूमना जिससे गेंद पीछे ले जायें, पहले पैर के अन्दर के हिस्से से तब बाहर के हिस्से से।

[१०] टप्पे से वापस आने वाले गेंद को सीने से रोकना। तब एक ऊँची गेंद को सीने के ऊपरी हिस्से पर लेना।

[११] साथी गेंद फेंकता हैं और बतलाता है कि किस पैर से रोकना है और किस दिशा में जाना है।

सम्बन्धित अभ्यास–[१]गेंद फेंकने के बाद फेंकने वाला उसे लेने के लिए दौड़ता है। पाने वाला गेंद पकड़ता है और दायीं या बायीं ओर जाता है जिससे आने वाले खिलाड़ी से न मिल सके।

[२] तीन में – एक खिलाड़ी गेंद भिन्न-भिन्न दिशाओं में फेंकता है कि दूसरा खिलाड़ी रोके। तीसरा खिलाड़ी पहले आक्रमण दिखाता है फिर सही आक्रमण करता है।

[३] एक खिलाड़ी गेंद फेंकता है। गेंद साथी के पैर के पास जाता है। तीसरा खिलाड़ी उस पर आक्रमण करता है। पाने वाला गेंद रोकता है और प्रथम बार में अपने साथी को पास करता है।

[४] एक खिलाड़ी दूसरे को पास करता है तीसरा खिलाड़ी आक्रमण करता है। पाने वाला गेंद पर नियन्त्रण करता है और तलवे से पीछे खींचता है और उसी समय घूम जाता है बौल आक्रमणकर्त्ता से छिपाने के लिये। गेंद छिपाते हुये वह दायें बायें जाने का धोखा देता है फिर पीछे घूम के गेंद जिससे मिला था उसे वापस देता है।

गेंद के साथ दौड़ना तथा छकाना—ड्रिबलिंग

गेंद के साथ दौड़ना और ड्रिबलिंग में अन्तर है। दौड़ने का प्रशिक्षण देना आवश्यक है। प्रत्येक अभ्यास के घंटे में दौड़ने का व्यायाम होना आवश्यक है।

(१) गेंद आगे मार कर उस के पीछे दौड़ना और वहां से किसी दिये हुये लकीर तक लाना।

(२) गेंद मार कर कुछ रुक कर दौड़ना और नं० १ की तरह।

(३) एक साथी, गेंद अपने साथी के आधी दूरी पर मारता है। दोनों गेंद लेने के लिए दौड़ते हैं और ड्रिबल करके गेंद लाते हैं।

(४) खिलाड़ी साथ खड़े होते हैं, एक दौड़ता है और दूसरा उसके सिरे के ऊपर से गेंद मारता है जो उसे दौड़ कर लाना पड़ता

(५) गेंद के साथ दौड़ना–गेंद एक गज की दूरी पर रखना।

(६) गोलाई में एक पैर से गेंद लेकर दौड़ना।

(७) जैसे नं० ६, किन्तु भिन्न भिन्न गति से।

(८) दौड़ते हुए सिगनल पर परिस्थिति से मुड़ जाना।

(९) दौड़ते हुये गेंद का नियन्त्रण पैर के दोनों बगल से करना, दोनों पैरों का प्रयोग करना।

(१०) वस्तुओं के अन्दर बाहर से होकर गेंद ले जाना।

(११) गेंद के साथ दौड़ते हुए शरीर के झुकाव से धोखा देना।

(१२) दो टीम विपरीत दिशा में दौड़ती हैं, एक टीम के प्रत्येक खिलाड़ी के पास एक गेंद होता है जो दूसरे टीम के मिलने के समय उन्हें दे दिया जाता है। खेल ऐसा ही चलता रहता है।

(१३) खड़े होकर दौड़ना–दौड़ने का कोण ७५ डिग्री हो।

(१४) अपने स्थान पर दौड़ना।

(१५) एक वृत्त में दौड़ना; सीटी पर, अपने आगे के व्यक्ति को छूना, जितने लोगों के दाहिने से होकर आगे जा सकें जाना।

(१६) किसी चिन्ह तक टीम की रिले करना।

(१७) दो टीमों में खेल। एक टीम किला बचाता है दूसरा आक्रमण

करता है। आक्रमण करने वाले यदि छू जाते हैं तो वे अन्दर बन्दी हो जाते है। यदि बिना छुये अन्दर जाते हैं तो एक बन्दी स्वतंत्र हो जाता है।

(१८) भिन्न भिन्न छूने के खेल-वृत्त में, सीधी लाइन को पार करना जहां छूने वाले हैं। जंजीर में छूना।

(१९) **छूना, बचना**—दो आमने सामने कतारों में एक गज की दूरी अचानक सिटी पर छूना या बचना जिसका आदेश पहले दिया जा चुका होगा। 'क्रो'–'क्रेन' खेल—एक कतार 'क्रो' दूसरा 'क्रेन' जिसका नाम लिया जाये वे दौड़े दूसरे उनको छुये—छुये हुये व्यक्ति छूने वालों की टीम में से बाहर हो जायेंगे।

(२०) **'डौज बौल'**–वृत्त में एक टीम दूसरा बाहर। बाहर वाले अन्दर वालों को गेंद से घुटना के नीचे मारे। जिन्हें लग जाये वे बाहर होगें।

(२१) दो कतारों में दूरी १० गज, डौज एवं ड्रिबल करना, यही काम बारी बारी से।

(२२) **'मांस फुटबौल'** गेंद सेन्टर में–दोनों टीम अपने गोल लाइन पर खड़े हों। सीटी पर दौड़ कर गेंद ले और अपने विरोधी गोल लाइन के पार किक करने के द्वारा गोल करें। आरम्भ सेन्टर में होगा।

ड्रिबलिंग :—छकाना या धोखे का आक्रमण ड्रिबलिंग का तत्व है। खिलाड़ी जिसके पास गेंद होता है अपने प्रतिद्विन्दी को दिखावट में कुछ करता, और वास्तविक रूप से कुछ और करके धोखा देता है। चाल में परिवर्तन एक धोखा देने का तरीका है।

एक अच्छा बचाने वाला अपने को शीघ्र ही सम्भाल लेगा। ड्रिबलर को धोखा अच्छे समय से देना सीखना होगा और ऐसा करे जिससे कार्य वास्तविक मालूम हो।

ड्रिबलर को अपने ऊपर पूर्ण विश्वास होना चाहिये। उसका काम इतनी तीव्रता से होता है कि प्राय: वह स्वचालक हो जाता है।

आक्रमण के समय एक पर एक का समीप निरीक्षण तोड़ देना चाहिये। एक अच्छा ड्रिबलर यह कर सकता है।

जितनी भी अच्छी तरह से एक खिलाड़ी ड्रिबल करे उसमें यह योग्यता होनी चाहिए कि सही पास कर सके और अपने को स्वतन्त्र करके पास लेने के लिए अच्छा स्थान ले। अच्छा ड्रिबलर सदैव प्रतिद्वन्दी को अनुमान की अवस्था में रखता है और वह पता नहीं चला पाता कि ड्रिबल होगा या पास।

ड्रिबलर में तेज़ी तथा गेंद के साथ दौड़ने में तेज़ प्रतिक्रिया, तेज़ी तथा गेंद को सरलता और सुगमता से लेने की योग्यता, झुकना तथा इच्छानुसार मुड़ने की योग्यता, होनी चाहिये। उसे प्रतिद्वन्दी की प्रतिक्रिया का अनुभव होना चाहिये, थोड़े स्थान में काम करने की योग्यता तथा कठिन आक्रमण का सामना करने का विश्वास होना चाहिये।

ड्रिबलिंग सिखाने का तरीका केवल प्रतिद्वन्दियों के साथ ड्रिबल करने से आता है। बनावटी रीति से सीखने से पूर्णताः प्राप्त नहीं हो सकती। साथियों के साथ अभ्यास करने के समय शीघ्र परिवर्तन होना चाहिए जिससे भिन्न भिन्न अनुभव प्राप्त हो सके। सीखने के समय गति धीरे धीरे करनी चाहिये और जब पूरी रीति से आ जाये तो शीघ्रता से किया जा सकता है। ड्रिबल करने में गेंद किक नहीं किया जाता किन्तु धक्का दिया जाता है। अपने से एक गज़ से आगे गेंद नहीं जाने देना चाहिये। जहा तक सम्भव हो सीधा ड्रिबल करना चाहिये।

शरीर को गेंद और प्रतिद्विन्दी के बीच में रखना।

(१) **गेंद के साथ दौड़ना** :—जैसे प्रतिद्वन्दी पीछे से बायीं ओर आक्रमण करने आता है वैसे दायें पैर के बाहरी हिस्से से गेंद का नियन्त्रण किया जाये फिर इस का उलटा।

(२) प्रतिद्वन्दी के सामने आना तब दायीं या बायीं ओर जाना। गेंद पैर के बाहरी हिस्से पर रहे।

(३) प्रतिद्वन्दी की ओर पीठ करने के लिये मुड़ना तथा घूमना, जो आक्रमण के लिये वास्तविक चेष्टा करता है।

(४) कोई भी प्रणाली धोखा देने के लिये की जाये फिर प्रतिद्वन्दी के

पास से लौट आया जाये। आते समय गेंद और प्रतिद्वन्दी के बीच में शरीर होगा।

(५) **ड्रिबलिंग रिले :**—दूरी पर चिन्ह तक ड्रिबल कर गेंद ले जाना फिर वापस लाना। आमने सामने दो टीम खड़ी हों एक एक कर गेंद ड्रिबल कर दूसरी टीम को पास करना फिर वही काम उनके द्वारा।

गति में परिवर्तन करना :—(१) साधारण गति से प्रतिद्वन्दी के पास आना फिर कुछ मार्ग बदल कर तेज गति से जाना।

(२) नं० १ के समान किन्तु उलटी दिशा में जाने के पहले एक शरीर का झोंका देना।

(३) प्रतिद्वन्दी ड्रिबलर के साथ दौड़ते हैं। वे गति तेज़ तथा धीमी करते हैं।

(४) जैसे नं० ३ में किन्तु ड्रिबलर पैर से गेंद रोकने का धोखा देता है, और जिधर जाता है उसी ओर गेंद घसीट लेता है।

झुकना :—यदि गेंद प्रतिद्वन्दी तक ले जाया जाये और फिर झुकने की क्रिया की जाये तो झुकना बहुत थोड़ा होगा। किन्तु प्रतिद्वन्दी के पास पहुंचने से पहले की जाये तो यह मालूम होगा कि वास्तविक रूप में उस दिशा की ओर जाना है। जैसे ही प्रतिद्वन्दी असंतुलित होता है, ड्रिबलर निकल जाता है। पूरी गति तेज़ी से होना चाहिये जिससे आक्रमणकर्ता को लौटने का समय न मिले।

(१) ड्रिबलर प्रतिद्वन्दी तक तेज़ी से पहुँचता है, वह धोखे का झुकाव करता हैं। आक्रमणकर्त्ता झुकाव की ओर बढ़ता है।

(२) जैसे नं० १ में किन्तु दो बार झुकाव करता है पहले बायें तब दायें और फिर बायें चला जाता हैं।

(३) जैसे नं० १, २ आक्रमण सही मिलता है। यदि वह आक्रमण-कर्ता को हरा देता है तो जीत जाता है।

गेंद पर धोखे का खेल :—पैर की कितनी ही क्रियायें हैं जिसे खिलाड़ी दिखाता है, खेल एक दिशा में और फिर दूसरी दिशा में जाता है।

(१) खिलाड़ी गेन्द मारने की क्रिया करता है और अन्तिम क्षण में किक रोक कर उसी पैर से गेंद किसी दूसरी दिशा में खींच लेता या ढकेल देता है ।

(२) खिलाड़ी पैर के अन्दर के हिस्से से गेंद बगल में खींचने की क्रिया दिखाता है किन्तु वह पैर केवल गेंद के ऊपर ले जाता है और दूसरी दिशा में पैर के बाहरी हिस्से से खींच लेता है ।

(३) खिलाड़ी दिखलाता है कि गेंद जोर से मारेगा किन्तु अन्तिम क्षण में खड़े होने वाले पैर पर घूम जाता है और खेलने वाले पैर के अन्दर के हिस्से से खड़े होने वाले पैर के पीछे ले जाता है ।

(४) खिलाड़ी एक पैर के अन्दर के हिस्से से गेन्द मारता है और दूसरे पैर के अन्दर के हिस्से से रोक लेता है और दूसरी दिशा में चल देता है । गेंद पर पहला खेल अच्छे शरीर के धोखे के साथ होगा ।

(५) जैसे नं० ४ में किन्तु पहली गति और अच्छा धोखा होगा । गेंद दूसरे पैर के अन्दर के हिस्से से रोकने के बाद वह इसी पैर के बाहरी हिस्से से धोखे की पहली दिशा की ओर गेंद ढकेल देता है ।

(६) खिलाड़ी गेन्द के साथ दौड़ता है और ऐसा दिखाता है कि पैर के बाहरी हिस्सा से ढकेल देगा किन्तु वह पैर ऊपर से केवल ले जाता है और दूसरे पैर के अन्दर के हिस्से से गेंद आगे खींच लेता है । पहले कुछ गति में शिथिलता होती है और तब तेज़ी जैसे खेल पैर के अन्दर के हिस्से से किया जाता है ।

खेल की अवस्था में अभ्यास :—(१) पाचों फारवर्ड पेनालटी एरिया के बाहर १५-२० गज पर खड़े होते है । प्रत्येक आक्रमणकर्त्ता के समीप एक बचाने वाला है । प्रत्येक आक्रमणकर्त्ता गेंद के साथ बचाने वाले की ओर दौड़ते हैं, पेनालटी एरिया में ड्रिबल करने की चेष्टा करते हैं और गेंद गोल में मारते हैं थोड़ी देर में व्यक्ति परिवर्तन आवश्यक है ।

(२) खिलाड़ी और प्रतिद्वन्दी १०-१५ गज़ की दूरी पर खड़े होते हैं । आक्रमणकर्त्ता को गेंद दी जाती है जिससे बचाने वाला तेज़ी से बचाये आक्रमणकर्त्ता बचाने वाले के आक्रमण को हटा देता है, और उसके पास से ड्रिबल करके गोल में गेंद शूट करता है ।

(३) जैसे नं० २ में किन्तु गेंद विंग में दी जाती है जो अपने ही गोल की ओर मुँह करके खड़ा है। एक फुल बैक उसके पीछे छीनने के लिए आता है। विंग मैन बैक से ड्रिबल करके लाइन के सामानान्तर दौड़ता है या पेनालटी एरिया के अन्दर मुड़ जाता है।

(४) गेंद सेन्टर फारवंड के पास फेंकी जाती है जिससे वह गेंद पकड़ ले और बचाने वाले के पास से ड्रिबल करके उसे देखता रहे।

(५) सेन्टर फारवर्ड को पास मिलता है। गोलकीपर दौड़ कर बौल लेना चाहता है। फारवंड ड्रिबल करता या गेंद उसके सिर के ऊपर उछालता है।

(६) दो आक्रमणकर्त्ता एक बचाने वाले के सामने आते हैं। उसके पास से वे ड्रिबल कर ले जाते हैं।

(७) जैसे नं० ६ में किन्तु थोड़े स्थान में काम किया जायेगा जैसे गोल एरिया।

(८) जैसे न० ७ में किन्तु तीन आक्रमण करने वाले, दो बचाने वालों के विरुद्ध पास पेनालटी एरिया में करते हैं। आक्रमणकर्त्ता आफ साइड से बचें।

(९) तीन चार जोड़े ड्रिबलिंग, शूटिंग, आक्रमण करना, अभ्यास करते हैं। एक जोड़ा गोल में जाते हैं और गेंद खेल से पहले पेनालटी एरिया के बाहर लुढ़का दिया जाता है। दूसरा जोड़ा ड्रिबल करता और गोल में शूट करने की चेष्टा करता (गोल ऐरिया में शूट करना मना) यदि कोई जोड़ा गोल करता तो गोलकीपर से स्थान बदल जाता है। यह फुल बैक के लिये अच्छा अभ्यास है यदि गोलकीपर हाथ से गेंद न छुये।

(१०) पेनालटी एरिया में पाँच-पांच व्यक्तियों का फुटबौल। एक टीम गेंद मारता है उसके बाद आगे पास नहीं हो सकता। खिलाड़ियों को ड्रिबल या पास पीछे करना पड़ता है जिससे पीछे का खिलाड़ी आगे गेंद के साथ आये। गोल उस समय होता है जब खिलाड़ी गेंद के साथ लाइन पार कर जाता है।

गोल के बाद स्थान बदल जाता है। खेल किक से आरम्भ होता है। थ्रो साधारण रीति से होता है।

पास देना (Passing)—एक दूसरे से सहयोग तथा मेल स्थापित करने के लिये उत्तम पास करना और पास लेना आवश्यक है। यह सिर से या पैर से हो सकता है। थोड़ी दूरी या अधिक दूरी तक जमीन पर या हवा में हो सकता है, किन्तु जब तक यह सही नहीं होगा तब तक कोई लाभ नहीं। खिलाड़ियों में मिलकर खेलने के लिए सर्वप्रथम पासिंग पर ध्यान देना होगा। यदि एक ऐसे खिलाड़ी को जो प्रतिद्वन्दी से पृथक है और अच्छे स्थान पर है, तो उसे पास देने से, उसे उस पर नियन्त्रण का समय मिलेगा और उसका उत्तम प्रयोग करेगा।

बुद्धिमानी के साथ सहयोग के लिये सबसे बड़ी कठिनता होती है ध्यान के बट जाने में। खिलाड़ी जो खेलने वाला है उसे पहले ही सम्भावित खेलों पर विचार कर लेना चाहिये। जब वह गेंद लिये हुये है तो उसका पूरा ध्यान गेंद पर होना चाहिये किन्तु उसे यह योग्यता होनी चाहिये कि वह गेंद से फील्ड में और फील्ड से गेंद पर ध्यान शीघ्रता से लगा सके। यह क्षणिक दृष्टि अपने आप में ही एक बड़ी कला है और अभ्यास से ही प्राप्त की जा सकती है।

पास अनेक अभ्यास के खेलों से ही सही हो सकता है।

अभ्यास—दो खिलाड़ियों के बीच आपस में पास। यह अधिक नहीं होना चाहिये। यह उत्तम है कि गेंद किसी और से मिले और पास किसी और को दिया जाये। टेढ़ा पास-दो व्यक्तियों के बीच टेढ़ा पास। पास करने वाले को कुछ आगे देखना चाहिये जिससे वह अपने चलने में खेल सके।

[१] पाने वाला गेंद पर अपने दूर के पैर के अन्दर से नियन्त्रण करता है और दूसरे कदम पर गेंद पास कर देता है।

[२] पाने वाला समीप वाले पैर से गेंद पर नियन्त्रण करता है और फिर घूमकर अपने दूर वाले पैर के अन्दर के स्थान से गेंद साथी के पास समेट कर फेंक देता है।

[३] पाने वाला पास करने के पहले अपने समीप के पैर के बाहरी

हिस्से से गेंद पर नियन्त्रण करता है।

[४] पहली बार में आपस में पास करें, इसमें पैर के अन्दर तथा बाहर के हिस्सों का प्रयोग करें।

[५] आपस में समीप से एक दूसरे को पास करें ३—५ गज की दूरी पर, धीरे-धीरे दूरी बढ़ाकर २५—३० गज़ कर लें और फिर समीप आ जायें।

[६] पाने वाला गेंद पर नियन्त्रण करके उसे आहिस्ता से आगे ढकेलता है और फिर एक 'चिप' पास गेंद को ८—१० फिट उछाल कर साथी को देता है।

[७] पहली बार में आपस में पास-पैर के अन्दर से वौली करना।

[८] हाफ वौली या वौली साथी के पास भेजना जो उसको हेड करता है।

[९] विचार करें कि प्रतिद्वन्दी छीनने की चेष्टा कर रहा है, गेंद मिलने पर पास करने से पहले झुकें, घूमें या मुड़ें।

[१०] खिलाड़ी एक दूसरे के पीछे आगे बढ़ते हैं ब, अ को गेंद वापस देता है अ फिर आगे पास करता है। पहले गति धीरे हो फिर तेज़ होता जाये। ब को अपने आगे बढ़ने की गति अधिक न रोकने के साथ काम करने का अभ्यास करना होगा। अ को काफी तेज़ी से गेंद भेजना होगा जिससे ब के आगे जाये और ब की गति में शिथिलता न आये। इसके पश्चात् खिलाड़ी आगे की गति बढ़ाने की चेष्टा करें। अ लौब, वौली तथा चिप पास का अभ्यास ब को करा सकता है ब एड़ी के पीछे, हेड तथा पैर के बगल से बौली कर सकता है।

[११] अ, ब को गेंद पास करता है और उस के पीछे उसी दिशा में जाता है ब कट कर तिरछा चला जाता है और अ उससे २०—३० गज की दूरी पर उसी सीध में रहता है और ब से गेंद प्राप्त करता है।

[१२] जैसे नं० ११ में पास करना और विपरीत दिशा में पास देना।

[१३] नं० ११ और १२ को बदल बदल कर करें।

[१४] अ, ब को गेंद देता है और उसके पास से आगे दौड़ता है और फिर आगे पास करता है । ब आगे बढ़ता है है और उसी तरह अभ्यास चलता है ।

[१५] अ गेंद के साथ दौड़ता है और मालूम होता है कि ब को पास करेगा किन्तु वह एड़ी के पीछे से या गेंद मुड़कर दे देता है । ब गेंद के साथ अ के पीछे दौड़ता है और कुछ दूरी पर रहता है और वापस गेंद प्राप्त करता है।

ऐसे अभ्यास स्वतंत्रता से प्रत्येक दिशा में घूम-घूम कर करना चाहिये। जिसके पास गेंद हो उसे यह जानना आवश्यक है कि उसका साथी कैसे दौड़ रहा है।

दो से अधिक में पास [१] अ के सामने तिरछे ब, स खड़े होते हैं। अ बारी बारी दोनों को पास देता है और वापस लेता है। अ के सामने दो निशानों का अभ्यास है।

[२] अ एक वृत्त के केन्द्र पर रहता है और ब, स कुछ दूरी लिये हुये वृत्त पर रहते हैं। ब, स, अ के चारों ओर दौड़ते हैं ब, अ को गेंद देता है और स को गेंद देता है फिर स, ब को देता है। पहले गेंद रोक कर पास करना फिर पहली बार में पास करना । अभ्यास हो जाने पर अ भी आगे बढ़ता है।

[३] अ, ब, स त्रिकोण में चलते हैं। अ, ब को और ब, स को पास करता है। पास करने से पहले वे एक दूसरे का स्थान देख लेते हैं।

[४] जैसे नं० ३ में किन्तु स के पास मिलने के समय वह अपना स्थान बदल देता है और पास करने वाला उसके नये स्थान को देख कर पास करता है। पास मिलने के पहले जिसे पास मिलना हो अपना स्थान बदल दे।

[५] जैसे नं० ४ में किन्तु पास पहली बार में।

[६] आपस में एक दूसरे को पास किन्तु जब गेंद ब के पास में आता है तो अ और स दोनों अपना स्थान बदल लें।

[७] जैसे नं० ६ में किन्तु गोल की ओर चलना।

[८] जैसे नं० ६ में किन्तु तेजी के साथ और किसी प्रकार का पास प्रयोग करें।

[९] आमने सामने एक दूसरे को पास तथा आगे पीछे बढ़ना।

[१०] अ, ब की ओर तिरछा पास करता है जो खेलने का धोखा देकर छोड़ देता है जिससे गेंद की ओर जाये।

[११] दो खिलाड़ी आपस में पास करते हैं, तीसरा उनसे छीनने के लिये आता है।

ऐसे ही अनेक प्रकार के पास का अभ्यास कराया जा सकता है। इनमें अच्छा नियन्त्रण, निश्चित होना, उचित स्थान का लेना तथा पास देने वाले को स्थान का सही ज्ञान होना चाहिये। पास देकर पास की आशा से सुरक्षित स्थान लेना चाहिये यह पास की विधि का एक मुख्य नियम है।

गेंद लेने की चेष्टा (Tackling)—आक्रमण भी वास्तविक खेल के द्वारा ही आता है। शारीरिक सम्पर्क तथा आधारित तकनिक साधारण अभ्यास से सीखा जा सकता है किन्तु बचाने या आक्रमण की वास्तविक शक्ति अपने प्रतिद्वन्दी से गेंद लेने में है जो स्वयं बचाना चाहता है। यह स्थिति तो वास्तविक खेल से ही प्राप्त हो सकती है। आक्रमण का वास्तविक खेल की अवस्था में होना आवश्यक हैं। साधारण अभ्यास से आक्रमण तथा बचाव का वास्तविक अभ्यास नहीं हो सकता। छोटे क्षेत्र में पांच पांच का फुटबौल या दबाव प्रशिक्षण जिसमें अधिक फारवर्ड एक बचाने वाले के सामने काम करते हैं, लाभदायक हो सकता है।

तीन प्रकार से गेंद लिया जा सकता है।

कंधे से चार्ज करना, गेन्द पहुंचने के पहले रोक लेना तथा प्रतिद्वन्दी के पास से आक्रमण करके गेंद लेना।

१. **कंधे से चार्ज करना**—चार्ज केवल कंधे से सटे हुये हाथ के द्वारा हो सकता है जो न अधिक जोर से या भयानक हो प्रतिद्वन्दी के उसी स्थान पर चार्ज

होता है जिस स्थान से चार्ज करने की चेष्टा की जाती है। दो खिलाड़ी साथ दौड़ते हों या विपरीत दिशा से आ रहे हों। ऐसी अवस्था में हल्के धक्के से दूसरे को असंतुलित किया जा सकता है। अनुभवी खिलाड़ी इसको समझ जाता है और इस लिये अपने को चार्ज करने वाले की ओर झुका देता है जिससे चार्ज का प्रतिरोध हो। अतएव एक शक्तिपूर्ण क्रिया की आवश्यकता होगी। आक्रमण उस समय होना चाहिये जब प्रतिद्वन्दी का वज़न बाहरी पैर पर हो जिससे वह सम्भल न सके।

२. **गेंद को प्रतिद्वन्दी के पास पहुंचने से पहले रोकना :**—बचाने वाले की शीघ्र प्रतिक्रिया से अनेक गेंद रोके जा सकते हैं। तेज़ बढ़ने की योग्यता, फैलना तथा कूदने की योग्यता से गेंद आसानी से रोका जा सकता है।

अभ्यास—(१) एक खिलाड़ी गेंद मारता है और दो उसे लेने की चेष्टा करते हैं। (२) दो में पास हो तीसरा बीच में रोकने की चेष्टा करता है।

प्रतिद्वन्दी से गेंद लेना :—जब आक्रमण करने वाला आ रहा हो तो बचाने वाला जैसे वह खेलना चाहता है गेंद लेने या उसे रोकने की चेष्टा करता है। यदि वह रोकना चाहे तो उसे शरीर का वज़न पूरी रीति से उस पर डालना है जिससे जिस पैर से रोका जाये या शक्ति से लाया जाये। यदि सम्भव हो तो वह झुक कर प्रतिद्वन्दी से कंधा मिलाता है। खेल पैर के अन्दर के हिस्से से होता है, घुटना बाहर की ओर मुड़ा होता है। वज़न खड़े होने वाले पैर पर रहता है जिससे मारने वाले पैर से दूसरी बार भी खेल हो सके। खिलाड़ी कुछ झुका हुआ होता है जिससे धक्के से असंतुलित न हो जाये। यदि खिलाड़ी पैर बढ़ा कर रोकता है तो वह रोकने के स्थान से पीछे झुकेगा तथा शरीर का वज़न रोकने वाले पैर पर होगा। पहली अवस्था में पैर की रोकने की शक्ति कम होती है और दूसरे में पैर भयानक अवस्था में पड़ जाता है।

जब गेंद पैरों के बीच में रोक लिया जाता है तो दूसरे रोकने वाले पैर में तेज़ क्रिया से गेंद छुड़ाया जा सकता है। एक उठाने की क्रिया से गेंद ऊपर उठ जायेगा या एक घूमने की गति से गेंद खड़े होने के पैर के पीछे खींचा जायेगा। इस घूमने की क्रिया में रोकने वाले को एक पैर पर शीघ्र घूमना है और गेंद तथा आक्रमण करने वाले के बीच में आ जाना है। रोकने की क्रिया पैर

के घुसेड़ने की क्रिया से भी हो सकती है। इसमें तलवे से गेंद का सम्पर्क किया जाये, बगल से धक्का देने की क्रिया इस से उत्तम है।

यदि बगल से रोकना है, तो बचाने वाले को रोकने की क्रिया में शरीर का वज़न देना है। अन्तिम पग में खड़ा होने वाला पैर, गेंद के समीप होना चाहिये और खिलाड़ी को रोकने की दिशा में घूमना और झुकना चाहिए। एक हल्के बाहरी झुकाव से रोकने में सहायता हो सकती है।

पीछे से आकर रोकने में, एक रोकने वाला, एक पैर पर घूम कर खेलने वाले पैर से गेंद पर झुकाव देता है। वह कुछ बाहर की ओर झुकता है जब तक कि अन्तिम पग में अपने खड़े होने वाले पैर को वह गेंद से कुछ आगे न लाये। वह इस पैर पर घूमता है जब कि रोकने वाला पैर गेंद खेलने की चेष्टा करता है। इसमें बगल से पंजा प्रयोग में लाना सरल होगा। शरीर झुका हुआ रहेगा। एड़ी के पीछे से रोकने में साथ साथ दौड़ते हुये अन्दर का पैर उठा कर गेंद पर रखा जायगा और एड़ी से गेंद रोका जायेगा। इसमें पैर पीछे की ओर नहीं झुकता है। गेंद के साथ सम्पर्क कर के पैर रुक जाता है और उसी पैर पर शरीर का वज़न आ जाता है। खिलाड़ी को शीघ्र ही घूम कर गेंद अपने कब्ज़े में रोकने के बाद कर लेना है।

कभी कभी केवल सरकने के द्वारा ही प्रतिद्वन्दी को रोका जा सकता है। खिलाड़ी अपने समीप वाले पैर तथा पुट्ठे पर ज़मीन पर सरकता है। मुड़ा हुआ हाथ इस अवस्था में शरीर का टेक होगा। बाहर का पैर पन्जे से गेंद खेलने की चेष्टा करेगा।

गेंद लेने की चेष्टा में मुख्य बातें। जिसके पास गेंद हो उसके पास आगे बढ़ना जिससे वह गेंद पास करे। गेंद पर सदैव ध्यान रखना। आक्रमण शीघ्र करना तथा अचानक। भार आक्रमण के पीछे हो। यदि गेंद प्राप्त न हो तो फिर सम्भलना, साहस कभी नहीं हारना, कंधे का चार्ज का ध्यान रहे। आक्रमण निश्चित रूप से होना चाहिये। आक्रमण की गति का समय सही होना चाहिये। जब तक गेंद न मिले लगे रहना चाहिये।

अभ्यास–(१) गेंद से एक कदम हट कर खिलाड़ी खड़े हों। दोनों बांया

पैर कुछ पीछे और गेंद के बगल में रखें और इस अवस्था में दाहिने पैर से रोकने की चेष्टा करें। बायें पैर से भी यही अभ्यास।

(२) जैसे नं० १ में दाहिने कंधे के चार्ज से मिला दे जैसे रोक से रोकना होता है।

(३) एक खिलाड़ी गेंद आगे ड्रिबल करता है और दूसरा रोक से रोकने की चेष्टा करता है।

(४) जैसे नं० १ में किन्तु प्रारम्भिक रोक के बाद खिलाड़ी एक दूसरे के पैर के ऊपर गेंद उछालते हैं।

(५) जैसे नं० १ किन्तु प्रारम्भिक रोक के बाद खिलाड़ी पैरों को अन्दर पीछे घुमा कर गेंद को पैरों के बीच में लेते हैं।

(६) पीछे से आकर साथी को रोकना इस के लिए एक एक पैर पर पूरा घूमना, साथ साथ दौड़ना और गेंद के ऊपर समीप का पैर रख कर रोकना और पैर के बाहर के हिस्से से गेंद को साथी के सामने से हुक करना।

(७) एक पैर से बगल और पुट्ठे पर गिरना। खड़े होने वाले पैर का घुटना मुड़ता है जिससे शरीर क्रमशः गिरे। खेलने वाले पैर को एक बड़े वृत्त में जमीन पर झुलाते हैं।

(८) जैसे नं० ७ में किन्तु चलते हुये गेंद पर लुढ़कना।

(९) ५ गज़ की गली में खड़े हुए साथी के पास से ड्रिबल करके चला जाना।

(१०) दो खिलाड़ी ५ गज की गली में एक बचाने वाले के पास आते हैं और आपस में पास और ड्रिबल करते हैं।

(११) दो छड़ियां ५ गज़ की दूरी पर रखी जाती हैं। अ दोनों के बीच में खड़ा होता है और ब, स दोनों के बगल में १० गज पर खड़े होते हैं और आपस में गेंद पास करते हैं और अ उसे रोकता है।

(१३) किसी दिये हुये स्थान से दूसरे स्थान तक गेंद ले जाने में रोकना।

(१४) एक व्यक्ति दो के बीच में। बाहर के लोग पास करें अन्दर वाला रोके जिसका गेंद रुक जाये वह बीच में आये।

(१५) आक्रमण एवं बचाव गोल में।

(१६) किंग आफ दि विंग।

(१७) कौक या डक फाइट।

हेड करना (Heading)—सिर से गेंद मारना कोई प्राकृतिक कार्य नहीं। यदि कोई वस्तु आंखों की ओर आये तो आंखें बन्द होती हैं और हेड करने में गेंद को देखने की आवश्यकता होती है। सिर से हेड करने का सबसे उत्तम स्थान माथा है। सिर के सामने की गति और जब यह धड़ के सामने की गति से मिलाई जाती है तो बहुत ही शक्तिशाली गति बन जाती है।

सामने हेड करना:—जब गेंद सामने आता है तो सिर को ऊपर करके उसे देखना है, गेंद उछल कर ऊपर वापस न जाये इस लिये पीछे झुकना है, इस के लिये धड़ मोड़ना, सिर ऊंचा करना चाहिये। इस अवस्था में गेंद अच्छी तरह दिख सकेगी और फिर कमर की शक्तिपूर्ण गति से सिर सामने झूलेगा। सिर आगे आता है और एक जोर का धक्का देता है। गर्दन की मांसपेशियां खिंच जाती है जिससे धक्के का प्रभाव सह ले। आंखे गेंद की गति को देखती रहती हैं। हाथ जो आगे की ओर रहते हैं जब कमर पीछे झुकती है तो कोहनी पर मुड़ कर पीछे आ जाते हैं जिससे मारने की क्रिया मे सहायता हो।

यदि कूदना सीधे हो तो खिलाड़ी को कमर और सिर की क्रिया से गेंद के सामने ड्राइव दिया जाता है। सिर हिलाने की क्रिया और भी आवश्यक है यदि सही रीति से सम्पर्क के समय ऊपर की गति शक्ति सम्भव न हो सकी हो। कूदने का ठीक समय निर्धारित करने के लिये बहुत अभ्यास की आवश्यकता है।

कुछ दौड़ और एक पैर से टेक आफ से और ऊंचाई प्राप्त की जा सकती

है । ऊपर सीधा उछलने के लिये अन्तिम पग में थोड़ा पीछे झुकना होगा जिससे जैसे खड़ा होने वाला पैर सीधा किया जाये शरीर सीधी अवस्था में हो जाए । एड़ी जमीन पर रखकर आगे पैर के गोले पर पेंग लेने के द्वारा टेक आफ लिया जाता है । गेंद के लिए आगे कूदने में कुछ पहले टेक आफ लेना होता है । यह उत्तम है कि जिस स्थान पर हेड करना है वहां से कुछ पीछे रहें, न कि बिल्कुल उसके नीचे जिससे कम से कम हेड करने के लिये कूदने में एक कदम ले सकें ।

हाथों की प्राकृतिक गति जो आगे होती है उस पर नियन्त्रण रखना आवश्यक है जिससे किसी प्रतिद्वन्दी को हाथों से धक्का न लगे ।

गेंद को शक्ति के साथ नीचे हेड करने में सिर को गेंद के बिल्कुल पीछे से आरम्भ करना होगा । गेंद शरीर के सामने गिरने दिया जाता है जिससे माथा का चपटा हिस्सा नीचे की ओर हो । जिस समय सिर से गेंद मारा जाता है इस में सही समय निर्धारित करना कठिन होता है । यदि जल्दी मारा जाये तो गेंद सिर के ऊपर से फिसल जायेगी । यदि देर होगी तो गेंद नाक पर लगेगी । जब खिलाड़ी को गेंद के लिये कूदना पड़ता है तो गति में शक्ति लाना कठिन हो जाता है क्योंकि शक्ति कमर के झूलने और सिर के छोटे झटके से आती है ।

शक्तिशाली हेड के लिये सिर के बगल से हेड करना उचित नहीं क्योंकि चोट लग जाने की सम्भावना होती है । बगल से हेड करना सरल है क्योंकि गति वही होती है जैसे पहले । इसमें पुट्ठे तथा कमर घुमाई जाती है । पीछे हेड करने के लिये शरीर को मज़बूती तथा तेज़ी से घुमाने से सिर उस स्थान पर होगा जहां से पीछे हेड किया जा सकता है ।

एक गिरती हुई गेंद को पीछे हेड किया जा सकता है । सिर को पीछे मोड़ देने और गेंद को उस पर टप्पा खाने देने से गेंद पीछे जायेगी । सिर से गेंद की दिशा बदली जा सकती है । सिर केवल फिसलने का स्थान होता है । इसमें शक्ति की आवश्यकता नहीं ।

अभ्यास–(१) खिलाड़ी गेंद फेंक कर दो बार ऊपर हेड करने की चेष्टा करता है ।

(२) एक खिलाड़ी ५ गज से गेंद फेंकता है और दूसरा सिर के झटके

से वापस करता है।

(३) १० गज़ की दूरी पर खड़े होते हैं जैसे नं० २ में किन्तु कमर और सिर की गति का प्रयोग करते हैं।

(४) तिकोनी अवस्था में खिलाड़ी खड़े होते है। अ, ब को देता है जो कमर घुमाकर स को हेड करता है स गेंद अ को देता है जो ब को हेड करता है।

(५) साथी १०—१५ गज़ की दूरी पर खड़े होते हैं। साथी के एक ओर गेंद फेंकते हैं जिस से उसे आगे, बगल में या पीछे जाना होता है जिससे हेड करने का सही स्थान मिल जाये। गेंद फेंकने की ऊँचाई बदलती रहती है।

(६) गेंद फेंका जाये जिससे हेड के लिये खड़े होकर कूदा जाये।

(७) गेंद फेंका जाये जिससे आगे दौड़ कर हेड किया जाये।

(८) साथी को वौली किक दी जाये जो आगे आकर हेड करता है।

(९) स्वतन्त्रता से कूदना।

(१०) रबर की गेंद की तरह उछलना।

(११) दौड़ना तथा कूदना।

(१२) लटके हुये गेंद या साथी के द्वारा हथेली पर ऊंची की हुयी गेंद को हेड करना।

(१३) गेंद फेंका जाये, साथी नीचे फेंकने वाले के पैर पर हेड करता है।

हेड करने के खेल—(१) दो टीम ६-८ खिलाड़ियों की। प्रत्येक टीम के पास एक गेंद हेड से जितनी बार पास कर सकते हैं करें। जिसका अधिक हेड होगा उसकी जीत होगी।

(२) हेड से वौली बौल—सर्विस हाथ से—बौल वापस भेजना हेड से।

(३) हेड से राउन्डर्स—गेंद हाथ से पिच करना और हेड से मारना।

(४) हेड से टेनिस—सर्विस वौली किक या नीचे के फेंकने से की जाती है। गेंद हेड से या वौली किक से वापस किया जाता है।

(५) हेड से दीवार टेनिस— सिर से सर्विस करना। बाद में वौली किक या हेड से एक टप्पे पर गेंद दीवार तक भेजते रहना।

(६) हेडिंग रिले।

विभिन्न स्थानों का कार्य

गोलकीपर—गोल बचाने का कौशल अन्य स्थानों से बिल्कुल भिन्न है। महत्व हाथों के प्रयोग पर दिया जाता है। गोलकीपर के लिये लम्बा डौल अच्छा है। गोलकीपर की सही योग्यता कोण की वास्तविकता को समझना है। सही स्थान लेने से गोलकीपर अपने बचाव के क्षेत्र को कम कर सकता है। जो गोलकीपर आगे बढ़ता है उसे कम क्षेत्र देखना पड़ता है। हाथों के प्रयोग से उसे सहायता मिलती है। इस लिये अवस्था अनुकूल हाथों से फेंकना, पकड़ना या किक करना होता है। 'सुरक्षा' उसका मुख्य ध्येय है इस लिये जहां तक सम्भव हो गेंद हाथ से पकड़ा जाये। एक के स्थान में दोनों हाथ प्रयोग में आयें तथा शरीर दोनों हाथों के पीछे होना चाहिये। डाइविंग सब से अन्त में प्रयोग करना चाहिये। गेंद रोकना ही उसका कार्य नहीं। गेंद खुले स्थान में देकर खेल आरम्भ करना भी उसका कार्य है। यह गेंद फेंक के या किक करके किया जा सकता है। फुल बैक के साथ गोलकीपर की पूरी समझ होनी चाहिये। 'जब गोलकीपर हाथ प्रयोग कर सकते हैं तो वे पैर कभी नहीं प्रयोग करते।

नीची गेंद को पकड़ना—गोलकीपर गेंद की सीध में अपने को रखता है। पैर मिले हुये होते हैं। जैसे वह हथेली ऊपर रखते हुये हाथों को गेंद के नीचे रखने के लिये झुकते हैं कोहनी अन्दर की ओर रहती है और जैसे ही हाथों में गेंद आ जाता है वे सीने की ओर लाये जाते हैं जिस से गेंद मज़बूती से पकड़ा जाये। कुछ गोलकीपर बगल में उकडू बैठ जाते हैं। वे घूम कर समीप वाले पैर पर आधा घुटना टेकते हैं। जैसे ही गेंद हाथ में आ जाती है वे गेंद भेजने के लिये खड़े हो जाते हैं।

कमर की ऊंचाई का गेंद पकड़ना—हाथों के पीछे शरीर से गेंद पकड़ना चाहिए। हथेली ऊपर की ओर हो जिससे गेंद सीने के पास पकड़ कर रख लिया जाये। हाथ गेंद को ढके रहते हैं।

सीने की ऊंचाई का गेंद पकड़ना—क्रिया पहले की तरह। कितने गोल कीपर एक हाथ गेंद के ऊपर दूसरा नीचे रखते हैं। कोहनी शरीर के समीप होती है और ऊँगलियां फैली होती हैं। गेंद ठोढ़ी के नीचे पकड़ी जाती है। गोलकीपर कभी कभी ऊंची गेंद के लिये कूदते हैं और गेंद पकड़ते हैं। यही तकनीक बगल से ड्राइव करके गेंद रोकने में भी प्रयोग होती है

सिर के ऊपर गेंद पकड़ना—हाथों को गेन्द के पीछे और उंगलियां छितरी हुई रखते हुये पकड़ना। यदि किक तेज़ है तो गोलकीपर हाथों को पीछे जाने देता है। गेंद की गति का सही अन्दाज होना चाहिये। जैसे गेंद हाथ में आता है कोहनी मुड़ जाती है जिससे गेंद शरीर के सामने नीचे लाया जाये। एक अच्छे गोलकीपर का चिन्ह ऊँचे गेंद को रोकना है। कभी-कभी ऊँची गेंद को लेना संकटमय होता है। ऐसी अवस्था में गेंद क्रास बार के ऊपर कर दिये जाते हैं। हाथ से मार कर गेंद नहीं भेजना चाहिये। कूदकर जैसे हथेली और उंगलियां गेंद से सम्पर्क करती हैं हाथ घुमाकर उसे क्रौसबार के ऊपर कर दिया जाता है। यदि गेंद क्रौसबार से ऊँचा हो तो गोलकीपर को उसे पकड़ना चाहिये। यदि गेंद क्रौसबार के नीचे तेज़ी से आ रहा हो तो दोनों हाथ प्रयोग करना चाहिये। जब अनेक लोग गेंद के लिये कूदते हैं तो वह गेंद घूंसे से मारता है। गेंद को डेड करने के लिये जब गोलकीपर जमीन पर गिरता है तो उसे गेंद अपने शरीर के नीचे खींच लेना चाहिये। हाथों से गेंद पकड़े हुए शरीर को उसके ऊपर लाना चाहिये। वह अपने पैरों पर गेंद शरीर से चिमटाये खड़ा होता है और झुके हुये बाहर निकलता है।

गोलकीपर पेनालटी एरिया में गेंद जहां चाहे वहां रख सकता है किन्तु वह बिना टप्पा खिलाये चार पग से अधिक नहीं ले सकता है। गोलकीपर को प्रतिद्वन्दी को धोखा देना सीखना होगा। हाथ में गेंद पकड़े हुये वह दिखा सकता है जैसे टप्पा खिलाना चाहता हो और इसकी जगह पर झुकते हुये दूसरी ओर निकल जा सकता है। वह ऐसे अनेक काम कर सकता है। गेंद फेंकने के लिये

ऊपर हाथ से गेंद फेंका जा सकता है। जमीन पर गेंद लुढ़काया या ऊपर फेंका जा सकता है।

अभ्यास :—[१] नीचे आती हुयी गेंद को रोकना।

[२] फील्ड में जाकर २० गज से आती गेंद रोकना।

[३] दाहिने बायें आते हुए गेंद को रोकना।

[४] कमर तक आती गेंद रोकना।

[५] सीने तक आती गेंद रोकना।

[६] कूद कर ऊँचे गेंद को हाथों को ऊपर किये रोकना।

[७] कई एक आते हुये गेंद को बचाना।

[८] साथी पेनालटी मार्क पर खड़ा होता है वह एक हाथ से, वौली, हाफ वौली और ड्राइव से गेंद देता है। वह गोल कीपर को उसके पहुंच के बाहर गेंद मारकर छकाना चाहता है।

[९] ऊंची गेंद को रोकना, बार के ऊपर फेंकना, घूँसे मारना। एक गेंद फेंकता है दूसरा गोल कीपर के सामने आक्रमण के लिये आता है।

[१०] साथी ५-१० गज की दूरी पर खड़ा होकर शीघ्रता से गेंद गोल में लुढ़काता है। कई एक गेंद होते हैं। गोलकीपर उन्हें रोक रोक कर फेंकता है।

[११] एक आक्रमणकर्त्ता गेंद गोल तक लाता है। गोलकीपर आगे बढ़कर कोण को छोटा करता फिर उसके पैर पर ड्राइव करता।

[१२] तीन फारवर्ड १८ गज से शूट करते। उन्हें रोकना।

[१३] दो विंग के खिलाड़ी गेंद सेन्टर करते और तीसरा गोल में मारता।

गोलकीपर को स्थान तथा गति का सही अनुमान होना चाहिये। उसे

सदा उस अवस्था के लिये तैयार रहना है जिसकी आशा नहीं, किन्तु वह सम्भव हो सकती है। गोलकीपर गेंद देखते ही तैयार हो जाता है किन्तु वह बचाने के लिये उसी समय जाता है जब गेंद मारी जाती है।

जब गेंद तिरछी आती है तो गोलकीपर गेंद की ओर बढ़ता है कितना और कैसे बढ़ना है अनुभव से मालूम किया जा सकता है।

सम्बन्धित अभ्यास—(१) गोलकीपर दो बैक के साथ गेंद रोकते हैं।

(२) गोलकीपर अपने साथियों को गेंद देता है।

(३) जैसे नं० २ में किन्तु गेंद गोल से मारी जाती है। जैसे फारवर्ड चाहते हैं वैसा गेंद देता है।

(४) दूसरों के साथ कार्नर किक रोकना।

(५) दूसरों के साथ गोल के समीप फ्री किक रोकना।

(६) पेनालटी किक रोकना।

फुल बैक—फुल बैक को बचाव का खेल खेलना होता है। उसके साथ हाफ होते हैं। उनका व्यक्तिगत कार्य विंग के आक्रमण को रोकना है। वह विरोधी विंग के अन्दर की ओर खेलता है। जब गेंद उसकी दिशा में नहीं होता तो नीचे आता है तथा दूसरों की सहायता करता है। उसकी अधिकतर किक 'टच लाइन' की ओर होती है। गेंद बचाने के बाद उसका ध्यान आक्रमण के खेल में सही स्थान प्राप्त करने का है। दोनों फुल बैक में आपस में समझ होना चाहिये तथा दोनों की समझ गोलकीपर के साथ होना चाहिये। जब एक बैक आगे बढ़ता है तो दूसरा उसके स्थान की देख भाल करता है। गेंद हार जाने के बाद शीघ्र ही अपना स्थान पुनः लेना चाहिये। उनका पास सदा फारवर्ड को नहीं होना चाहिये। पैर प्रयोग न कर सकने पर सिर प्रयोग करना चाहिए। दोनों पैर के प्रयोग का अभ्यास होना चाहिये। वौली तथा हाफ वौली किक अधिक प्रयोग में आती है।

सेन्टर हाफ-बचाव एवं आक्रमण दोनों उसका कर्त्तव्य है। वह फारवर्ड

एवं विंग को गेंद देता है। वह सम्पूर्ण खेल का केन्द्र हैं। उसका स्थान महत्वपूर्ण है। उसके द्वारा सम्पूर्ण खेल आदेशित होता है। दोनों हाफ तथा हाफ बैक से उसकी अच्छी समझ होनी चाहिये। हेड करना उसके लिये अनिवार्य है।

विंग हाफ—आक्रमण और बचाव दोनों ही उनका कर्त्तव्य है। यदि बचाव का खेल हो रहा हो तो वह इन साइड फौरवर्ड को देखता है। यदि आक्रमण का खेल हो तो विंग फौरवर्ड को देखता है। वास्तविक खेल में उसे फौरवर्ड या विंग हाफ को भी चार्ज करना पड़ता है। फुल बैक एवं सेन्टर हाफ से अच्छी समझ होनी चाहिये। हाफ को इन साइड फौरवर्ड, विंग फौरवर्ड पर विशेष, तथा सेन्टर फारवर्ड पर ध्यान रखना पड़ता है थ्रो इन में गेंद फेंकने में उसे निपुण होना चाहिए। हाफ 'डिफेन्स' तथा आक्रमण के बीच समन्वय करता है। उसे न बहुत आगे बढ़ना चाहिये न बहुत पीछे जाना चाहिये, हाफ बैक कभी विश्राम एवं ढीलापन की अवस्था खेल में नहीं ले सकते।

सेन्टर फारवर्ड—गोल करना मुख्य कार्य है। वह अपनी अवस्था के कारण विरोधी 'डिफेन्स' की स्थिति में दोष उत्पन्न कर सकता है तथा उन्हें गोल से आगे खींच सकता जिस से उसके साथी आसानी से गोल कर सकें। वह विशेष बचाव का कार्य नहीं कर सकता है। जब उसकी टीम के पास गेंद हो तो वह आक्रमण करता। जब विरोधी के पास गेंद होता है तो बचाव की चेष्टा करता है। इस कारण के होने से दूसरे खेलने वालों के साथ सम्बन्धित अवस्था में आगे पीछे आना जाना होता है। सब फौरवर्ड को साथ रखना उसका कर्त्तव्य है हाफ बैक के साथ पूर्ण सहयोग होना चाहिये। हेडिंग एवं किकिंग दोनों में निपुणता होना आवश्यक है।

इन साइड फारवर्ड—यह सबसे कठिन स्थान है। आक्रमण तथा बचाव का विशेष भार इन पर होता है। विंग फारवर्ड एवं विंग हाफ के साथ अच्छी समझ होनी चाहिये। गोल करने का अवसर प्राप्त होने पर अवश्य प्रयत्न करना चाहिये। अच्छी ड्रिबल आना चाहिये। ये आक्रमण के निर्माणकर्त्ता हैं। इनका खेल के मध्य में या खेल की सीमा पर होना आवश्यक है। कॉर्नर में बचाव एवं आक्रमण दोनों करता है। अपनी दिशा के थ्रो इन में भाग लेता है तथा दूसरे के थ्रो इन के समीप रहता है।

विंग फारवर्ड—उनकी तीव्रता होनी चाहिये। उत्तम गेंद नियन्त्रण एवं ड्रिबल आवश्यक है। उसे टच लाइन से ५ या ६ गज़ अन्दर होना चाहिये। उसके साथी उसे आगे विरोधी गोल के निकट रहने की आशा करते हैं जहां वे उसे पास देंगे। जब दूसरे दिशा का विंग सेन्टर, कर रहा हो तो उसे टच लाइन के समीप नहीं होना चाहिये। इन साइड एवं विंग स्थानान्तर कर लेते हैं।

मिश्रीत खेल—(१) 'केम्पोसिट रिले—भिन्न भिन्न आधारभूत तथ्य के मिश्रण से रिले।

(२) सरकल फुटबौल—दो समकेन्द्र वृत्त के आधी आधी दूरी में एक टीम होगी। अपने क्षेत्र से दूसरे के क्षेत्र के बाहर गेंद मारना है।

(३) लाइन फुटबौल—एक लाइन से गेंद मार, दूसरी लाइन को पार करना।

(४) पिन फुटबौल—दो वृत्त दो दिशाओं में जिन में इण्डियन क्लब खड़े किये जायेंगे। एक टीम दूसरी टीम के वृत्त के क्लब को फुटबौल से मारकर गिरायेगी।

(५) 'मास' फुटबौल—दोनों टीम गोल लाइन पर खड़ी होती है। गेंद सेन्टर में रहता है। सीटी बजने पर दोनों टीम गेंद लेने के लिये दौड़ती हैं। खेल साधारण फुटबौल की तरह होता है। लाइन के पूरी दूरी के ऊपर पार गेंद मारने से गोल होता है। गोल के पश्चात खेल सेन्टर से आरम्भ होगा।

थ्रो इन(Throw in)-यह नियम है कि फेंकने वाला गेंद सिर के ऊपर से फेंकेगा। थ्रो दोनों हाथों से होना चाहिये। एड़ी उठ सकती है किन्तु दोनों पैर ज़मीन पर होनी चाहिये।

यदि थ्रो इन ३५ गज तक हो तो इससे अच्छे खेल की सम्भावना हो सकती हैं। थ्रो इन केवल 'हावस' के लिये नहीं किन्तु सभी के लिये है इसलिए प्रत्येक को इसका अभ्यास करना चाहिए और अच्छी दूरी तक थ्रो करने की चेष्टा करनी चाहिये।

थ्रो के लिये गेंद दोनों हाथो की उँगलियों से पकड़ा जाता है जिससे उनका ज़ोर गेंद के फेंकने के समय पीछे हो।

अधिक लोग पैर फैलाकर खड़ा होना पसन्द करते हैं। घुटना आगे मुड़ा हुआ होता है हाथ सिर के पीछे मुड़ते हैं और एड़ी ज़मीन से कुछ उठी रहती है। शीघ्रता से पैरों को सीधा करना और उसी समय पुट्ठों के ऊपर कमर की शक्ति से पूर्ण सामने की गति होती है। गति का हाथों से शक्तिशाली झुलाव और कलाइयों व उँगलियों के झटके से गेंद फेंकने के समय अन्त होता है। सम्पूर्ण गति सुगमता से सन्तुलित की जाती है। वह धीरे से किन्तु शक्ति से आरम्भ होता है और तब तेज़ी बढ़ती जाती है तथा अन्त में चाबुक की तरह झटका दिया जाता है। लम्बी फेंक के लिये मज़बूत पेट की पेशियों और शक्तिशाली तथा लचीले कंधों की आवश्यकता होती है।

अभ्यास :—(१) पैर में फैसला रखे हुये और पीठ साथी की ओर एक मेडिसिन गेंद पकड़ना। आगे झुकना, ऊपर जाना और सिर के ऊपर से साथी को फेंकना। साथी वही काम करता है।

(२) एक खिलाड़ी बैठ जाता है दूसरा ५ गज़ दूर खड़ा होता है। खड़ा साथी मेडिसिन बौल, बैठे साथी को फेंकता है जो पकड़ता है। वह गेंद के साथ लेट जाता है और फिर वहाँ से उठते हुये गेंद साथी को फेंकता है।

(३) नं० २ की तरह किन्तु दोनों बैठकर फेंकते हैं।

(४) गेंद फेंकना और दूरी नापना।

(५) वौली वाल-दो तीन खिलाड़ियों से जो मेडिसिन बौल नेट या रस्सी के पार फेंकते हैं।

(६) गेंद फेंक कर गोल पोस्ट को मारना।

आक्रमण (Attack)—आक्रमण करना खेल का उद्देश्य है। इसी से गोल किये जायेंगे। साधारण विधि, सीधे पास करना, पहली बार में शूट करना इत्यादि। किन्तु कभी-कभी इन्हीं से काम नहीं चलता। प्रतिद्वन्दी यदि अच्छे स्तर

के हैं तो उनके लिए ऐसी चतुरता दिखानी पड़ेगी जिससे वे धोखा खा जायें और तब गोल किया जाये ।

सबसे मुख्य आक्रमण की विधि उलटा हुआ 'W' बनावट की विधि है इस में सेन्टर हाफ बचाव के लिये खेलता है तथा दो विंग एवं सेन्टर फारवर्ड विरोधी के गोल के समीप होते हैं । इसमें इन साइड फारवर्ड अन्दर की ओर दबकर खेलते हैं । इनका भी कार्य गेंद लेकर आगे विंग फारवर्ड को पास बढ़ाने का है । दूसरी विधि में यह विधि खिलाड़ियों के गुण से बनती है । जैसे सेन्टर फारवर्ड का घुसना, विंग का तेज़ी से आक्रमण और इन साइड फारवर्ड का रचनात्मक षड्यन्त्र । कभी-कभी एक ओर का इन साइड फ़ारवर्ड आगे बढ़ता है और अन्दर खेलता है और फिर इसी के साथ दूसरी ओर का इन साइड फारवर्ड भी पूरी लाइन के साथ आगे या दो सेन्टर फारवर्ड प्रणाली के प्रयोग से कभी कभी अच्छा काम करता है । कभी-कभी चार फारवर्ड आक्रमण जिसके पीछे सेन्टर फारवर्ड रहता है हाफ वैक को आगे खींच लेता है ।

सेन्टर हाफ विशेष कर आक्रमण करता है तथा डिफेन्स को सहायता भी देता है ।

बचाव के संतुलन के लिए फुल बैक आगे नहीं बढ़ते । इस लिए विंग मैन यह देखते हैं कि पीछे हट जाने से उन्हें काम करने का अधिक स्थान मिलता है । इस से भाले की भांति आक्रमण करने का अवसर मिलता है । यह उस समय उत्तम है जहां इन साइड फ़ारवर्ड और सेन्टर फारबर्ड आपस में एक दूसरे से आर पार होते रहते हैं जिस से वे वीच में आक्रमण कर सकें ।

सीढ़ी की भांति आक्रमण, भाले की भांति आक्रमण का एक प्रकार है । एक तरफ विंग फारवर्ड खेलता है और बाकी खिलाड़ीं तिरछी सीढ़ी बना के दूसरे विंग तक जाते हैं । राइट आउट साइड विंग आक्रमण आरम्भ करता है और लेफ्ट आउट साइड विंग आक्रमण रोकने का कार्य करता है ।

खेल में बिल्कुल यही विधि नहीं होगी । यह केवल एक आदेश है । स्थिति के अनुसार परिवर्तन होगा । कभी कभी खिलाड़ी स्थान बदल देते हैं जिससे दूसरी टीम को कठिनाई हो । जैसे बिंग मैन के पास गेंद हो तब सेन्टर

फारवर्ड दौड़ के विंग में आगे हो जाता है पास लेने के लिए और इन साइड सेन्टर का स्थान लेता है। विंग इनसाइड का स्थान ले लेता है। एक विंग मैन अपना स्थान छोड़ के फारवर्ड लाइन के पीछे चलकर दूसरे टीम के बचाव में गड़बड़ी कर सकता है। स्थान का परिवर्तन कुछ देर के लिये रखा जा सकता है।

गहरे रूप में आक्रमण—साधारण टीम आक्रमण के समय पेनालटी एरिया तक जा कर चौड़ी हो जाती है। ऐसी अवस्था में गेंद खो देने का अधिक मौका है। जब आक्रमण गहराई से होता है तब अधिक मौका मिलता है खाली स्थान पाने के लिये और गेंद खेलने के लिये। क्योंकि बचाव समीप आने से शक्तिशाली हो जाते हैं इस लिये आक्रमण करने वालों को चाहिये कि उन्हें पूरे मैदान में फैला दें। फुल बैक विंग का ध्यान रखें जो तेज और भयानक हैं इसलिये उन्हें लाइन के समीप रखना चाहिये जिस से बीच में काफी स्थान इनसाइड फारवर्ड के काम करने के लिये मिले।

जब गहराई में आक्रमण होगा तो पास आगे और पीछे होगा। एक पीछे आते हुए खिलाड़ी को आगे से पीछे गेंद देना गोल के लिये भयानक हो जाता है।

पीछे पास से आने वाले खिलाड़ी को अपनी अवस्था सही करने का अवसर मिल जाता है।

तिरछा फारवर्ड पास आधुनिक खेल है। दो खिलाड़ी एक बचाने वाले को हरा देते हैं।

यह देखा जाता कि जैसे गेंद तिरछा जाता है खिलाड़ी आगे बढ़ते हैं। किन्तु सीधे पास में खिलाड़ी तिरछा चलते हैं। तो यह कहा जा सकता है कि एक सीधा पास दो तिरछे पास के बराबर है और बचाने वाले को बिल्कुल घूम कर गेंद बचाने के लिये जाना होता है। खिलाड़ी के पीछे पास सीधे पास की प्रारम्भिक अवस्था है। बचाने वालों को जब पीछे मुड़कर खेल देखना पड़ता है तब उनके लिये कठिनाई होती है। केवल उनकी गति धीमी नहीं हो जाती किन्तु वे खेल का सही अनुमान नहीं लगा सकते क्योंकि वे सब खिलाड़ियों को नहीं देख सकते। फनेल प्रणाली के बचाने वाले पीछे हटते हैं जिसेमें खेल सामने

रहता है और आक्रमण पर दृष्टि रहती है। एक बचाने वाला तिरछे पास के पहले सफलता की आशा करते हुये पीछे हट सकता है किन्तु यदि खेल किसी बचाने वाले के पीछे हो जाये तो उसे घूमना पड़ेगा और नयी अवस्था का सामना करना पड़ेगा। यह बचाव असंतुलित करने की प्रणाली को 'स्विच प्ले' कहते हैं।

इसका अच्छा उदाहरण है जब खेल एक विंग से दूसरे विंग में किया जाता है। जैसे ही एक विंग में आक्रमण बनता है बचाने वाले उस जत्थे से आक्रमण के लिये अपने घेरा का संतुलन करते हैं। शीघ्रता के साथ दूसरे विंग के खिलाड़ी में इसी तरह का संतुलन बचाव में होता है और अपने स्थान का पर्याप्त पुनः स्थापना करता है।

खेल के मैदान के आर पार या 'स्वीच प्ले' अनेक स्थान से आरम्भ हो सकते हैं। गोलकीपर दोनों वींग को इच्छानुसार गेंद दे सकता है। फुल और हाफ बैक अपने विपरीत विंग को पास दे सकते हैं। यह चाल सीधे गोल पर आक्रमण करने से अच्छा रहता है। जैसे सेन्टर फारवर्ड राइट विंग की ओर बढ़ता है किन्तु अचानक घूम जाता है और आउट साइड लेफ्ट को पास देता है। राइट बैक ने सेन्टर हाफ को घेरा देना आरम्भ कर दिया है जिससे दूसरे विंग पर आक्रमण न हो और आउट साइड लेफ्ट को एक बिल्कुल खाली स्थान में छोड़ दिया है।

अचानक के खेल तथा धोखे से फंसाने की गति—'स्वीच प्ले' के पीछे जो सिद्धान्त है वह एक महत्वपूर्ण सहयोगिक आक्रमण दिखलाता है जब कि वह एक शक्तिशाली, योग्य तथा बुद्धिमत्ता से बचाव का सामना किया जाता है। एक अच्छा बचाने वाला सदैव आगे की बात सोचता है। यदि वह आक्रमण का दूसरा दांव देख सकता है तो उसकी तैयारी करेगा। तेजी तथा ठीक काम किसी रुकावट या बाधा को हटाने में सफलता प्राप्त कर सकता है किन्तु जब एक बचाने वाले को धोखा दिया जाये और उससे गलत अनुमान लगवाया जाय तो वह हार सकता है। धोखे का झुकाव जैसे पास करने में महत्व रखता है वैसे ड्रिबल करने में भी।

खाली स्थानों का प्रयोग—बुद्धिमानी के साथ खेलने में खुले स्थान का

महत्व बहुत है। अच्छा पास दूसरे खिलाड़ियों के अच्छे स्थान लेने से बहुत सरल हो जाता है। यदि खिलाड़ी अच्छे खुले स्थान में है और पास न आये तो उससे हानि नहीं। उसकी गति के कारण वास्तविक आक्रमण से ध्यान हट जाता है। इससे दूसरे साथी के लिए उत्तम खेल का मौका निकल सकता है। खिलाड़ियों को आगे की बात सोचना चाहिये जिससे कि जब भी पास दिया जाये वे सीधे या दूर से उस खिलाड़ी की जो गेंद पा रहा हो सहायता कर सकते हैं।

पहली बार मार कर पास करने में खिलाड़ी को अपने सही स्थान में होना चाहिये जब कि गेंद उसके पास जा रहा हो जो पास करने की चेष्टा कर रहा हो। यदि वह गेंद पास करने में देर करता है तो उसके साथियों को रुक कर दूर खुले स्थानों में जाना पड़ जायेगा। पास करने के बाद रुकना नहीं चाहिये। उसे एक नये स्थान में जाना चाहिये जिससे उसे फिर पास मिल सके। अतएव एक फुल बैक को गोलकीपर को पास देने के बाद एक खाली स्थान में होना चाहिये क्योंकि वह उसी को पास दे सकता है। फारवर्ड को पास देने के बाद हाफ बैक को सम्पर्क रखना चाहिये क्योंकि फिर पास मिल सकता है। इस प्रकार गेंद प्राप्ति की उत्सुकता का अर्थ है अच्छी तैयारी तथा स्थान का ज्ञान। इससे अनेक सम्भावना उत्पन्न होती हैं जिससे आपस में पास हो, क्योंकि प्रत्येक खिलाड़ी का जैसे आक्रमण बढ़ता है अपनी स्थिति में प्रगति लाने की चेष्टा करता है।

जब भी किसी के पास गेंद हो और वह देखता है कि उसके पास अनेक साथी आ रहे हैं जो खुले स्थान में है तो वह अच्छी तरह से पास कर सकेगा। गेंद को क्षेत्रित (Zoning) करना, प्रवेश खेल का अच्छा रूप है। यह स्पष्ट है कि बहुत से खिलाड़ियों को क्षेत्र के बाहर रहना पड़ेगा किन्तु जब तक आक्रमण के प्रत्येक खिलाड़ी की यह उत्सुकता है कि गेंद उसको मिले तब तक अनेक खिलाड़ी होंगे जिन्हें पास दिया जा सकता है। गेंद की स्थिति में खेल क्षेत्रित करना बचाने की चतुरता का स्वाभाविक परिणाम है जिस में गेंद और गोल के बीच में आक्रमण करने वालों की गिनती की श्रेष्टता होगी।

खेल निर्धारित करना—खाली स्थान में पास के लाभ के कारण यह भी कभी नहीं समझना चाहिये कि जो समीप से घिरा हो उसे पास नहीं करना चाहिये।

खेल निर्धारित करने का अर्थ है कि बचाने वालों को अपने स्थान से हटाकर ऐसी अवस्था लाये जो आक्रमण करने वाले चाहते हैं।

आफ साइड का जाल :—आफ साइड जाल को हटाने के तीन मुख्य प्रकार हैं।

[१] जिस के पास गेंद हो वह ड्रिबल करके बचाने वाली लाइन तोड़ दे और अपने ही आप गेंद ले जाये फिर पीछे पास करना उस साथी को जो खाली स्थान में दौड़ने को तैयार हो।

[२] चौकोर पास या पीछे पास करना उस साथी को जो खाली स्थान में दौड़ने को तैयार हो।

[३] गेंद बचाने की लाइन के पीछे खाली स्थान में पास करें जिससे साथी दौड़कर दूसरों के लेने से पहले ले ले। पास में कुछ देरी कर दी जाती है जिससे वह तेजी से आ सके और उससे आफ साइड अवस्था सम्भव होने के पहले की जाती है।

किक आफ—इसमें खेल निर्धारित करने का अवसर मिलता है। जैसे गेंद पीछे पास करना जिससे फारवर्ड अपना सही स्थान ले लें।

थ्रो इन :—प्रत्येक थ्रो इन से एक या कई खेल निर्धारित हो सकते हैं। साधारणत: थ्रो इन को कोई ध्यान में नहीं रखता और यदि उससे गेंद पास दी जाये तो अच्छे खाली स्थान में गेंद पास किया जा सकता है। जैसे ही गेंद फेंकने वाले के सिर के पीछे जाये खेल निर्धारित हो जाये।

कारनर किक—दो फुल बैक दोनों सिरों की तथा गोलकीपर के स्थान की रक्षा करते हैं यदि वह बाहर निकल जाये। इनसाइड और सेन्टर फारवर्ड हाफ बैक से घेरे जाते हैं। आक्रमण करने वालों के लिए शीघ्र कारनर किक लेना लाभदायक है आक्रमण करने वाले सीढ़ी की अवस्था में गोल के पास खड़े हों या पेनालटी एरिया के पास खड़े हों।

बचाव (Defence)—बचाव की दो मुख्य विधि हैं। एक के पास

एक (Man to man) और ज़ोन डिफेन्स (Zone defence) जिस में खिलाड़ी के लिये एक क्षेत्र होता है जिसका बचाना उसका काम है।

एक के पास एक तो बिल्कुल साफ है। प्रत्येक को अपनी जिम्मेदारी का पता रहता है। ऐसे खेल से तीन बैक का खेल निकला है जिसमें सेन्टर हाफ सेन्टर फारवर्ड को रोकता है।

अनुभव से पता चलता है कि एक के पास एक (Man to man) बचाव की विधि अच्छी है क्योंकि इसमें आक्रमण तथा बचाव करने वालों की गिनती प्रायः एक सी रहती है और प्रत्येक पग पर बचाव का उपाय तैयार रहता है और जैसे ही आक्रमण प्रारम्भ होता है बचाव भी आरम्भ होता है। किन्तु जब आक्रमण करने वाला एक बचाव से आगे निकल जाता है तो किसी दूसरे खिलाड़ी को बचाव करना पड़ेगा। इसका अर्थ यह है कि उसे अपना खिलाड़ी छोड़ना पड़ेगा। इसमें बचाव का संतुलन बिगड़ जाने का भय है। इस अवस्था में ज़ोन डिफेन्स काम में आता है। इसकी तैयारी मैन टू मैन डिफेन्स के साथ होती है। गेंद के क्षेत्र में कठिन बचाव का आयोजन होता है और क्षेत्र के बाहर बचाव में कुछ ढिलाई होती है। यदि गेंद किसी दूसरे क्षेत्र में लम्बे पास से भेजा जाये तो उस क्षेत्र के बचाने वाले गेंद के चारों ओर तैयार हो जाते हैं और दूसरे सहायक रक्षा के लिए स्थान ले लेते हैं। गोल के समीप प्रत्येक खिलाड़ी के पास समीप-रक्षा की आवश्यकता होती है क्योंकि गोल में शूट करने के अवसर प्राप्त रहते हैं।

आरम्भ ही से नये खिलाड़ियों को ज़ोन डिफेन्स का प्रशिक्षण देना आवश्यक है। इसमें वह अपने स्थान की महत्ता समझता है और क्रमशः वह यह देखेगा कि उसका ध्यान एक विशेष खिलाड़ी पर है और उस पर ध्यान रखने की आवश्यकता है। इन्हीं दोनों सिद्धान्तों के ऊपर बचाव की चालाकी व्यवस्थित है। मैन टू मैन बचाव तत्कालिक बचाव के लिये उत्तम है। संकटकालीन अवस्था में गेंद के समीप जो खिलाड़ी होता है वह बचाव करता है और दूसरे उसके स्थान की देख रेख करते हैं।

उपयुक्त घेरा :–जब गेंद किसी आक्रमणकर्त्ता के पास हो तो उपयुक्त

घेरे की महत्ता कम नहीं की जा सकती है। दो खिलाड़ी आसानी से पास करके एक बचाव करने वाले के पार जा सकते हैं।

जब बचाव करने वाला खिलाड़ी आक्रमणकर्ता को घेरता है तो उसके साथी की अवस्था ऐसी होनी चाहिए कि वे अपने साथियों को सहायता दें क्योंकि यदि आक्रमणकर्त्ता गेंद लेकर पार निकलना चाहेगा तो वे शीघ्र ही दो बचाव प्रस्तुत कर सकते हैं। इस अवस्था में प्रत्येक बचाने वाला अपनी आसानी से अपने साथी की सहायता के लिये समीप स्थान ले और उसी तरह व्यवस्था होती जाये तो कोई खुला स्थान आक्रमणकर्त्ता को नहीं मिलेगा। चेष्टा यह होनी चाहिये कि आक्रमणकर्त्ता जितनी जल्दी हो पास न कर सके किन्तु गेंद मारने को विवश हो जाये।

बचाव का सामतुल्य करना—बचाव के लिये अपने साथियों के समीप स्थान लेना है जिससे मैन टू मैन डिफेन्स हो जाये और आक्रमणकर्त्ता दो या तीन बचाव प्रभाव डाले। जिन से गेंद छूट जाता है वे पीछे आकर कोई खतरे के स्थान का बचाव करें।

दो बचाव घेरा :—बचाव वालों को सदैव एक और बचाव सहायक की तैयारी की आवश्यकता है। दूसरे व्यक्ति का काम है कि खाली स्थान का बचाव करे जैसे थ्रो इन में। हाफ बैक सामने के विंग मैन का घेरा करता है और फुल बैक स्वतन्त्रता से कार्य करता है। इसी तरह फुल बैक गोलकीपर की सहायता करता है।

पीछे चलकर बचाव :—जब बचाव करने वाला देखता है कि उपयुक्त घेरा नहीं हो सकता तो वह धीरे धीरे पीछे जाता है जिससे उसके साथियों को अवस्था लेने का समय मिल जाये। जैसे एक बैक दो फारवर्ड के सामने है यदि वह एक के पास जाता है तो दूसरे को पास मिलता और शूट करने की स्वतंत्रता होती है इस लिए वह दोनों के बीच में रहकर धीरे-धीरे पीछे जाता है। इस से दूसरे खिलाड़ियों को उसकी सहायता का अवसर मिल सकता है। कितना पीछे जाना चाहिये यह स्थिति पर निर्भर है। यदि शूट करने की दूरी पर है तो फिर बचाने की चेष्टा करनी चाहिये।

समीप सहायता—जितना बचाव समीप होगा उतना ही अच्छा होगा। अधिक फैलाव से बचाव कठिन होता है। छः बचाने वालों को समीप संगठन से खेलना चाहिये।

गोलकीपर के साथ समझ—कभी-कभी ऐसी स्थिति हो जाती है कि अपने ही गोल में मार कर गेंद गोलकीपर को दे जिससे वह उसे सुरक्षित करे। ऐसे पास तेज़ होने चाहिये जिससे आक्रमण करने वाले उस से लाभ न उठा लें। ऊँची गेंद के लिये गोलकीपर से समझौता होना चाहिये कि उसे खेलने का अवसर दिया जाये क्योंकि हाथों के प्रयोग के कारण वह लाभ की अवस्था में होता है। जब गोलकीपर गेंद खेलना चाहता है तो अपने साथियों को आदेशित कर सकता है।

गहरे बचाव :—कितनी बार पीछे जाते-जाते बचाव की एक सीधी लकीर हो जाती है। यदि इस में से आक्रमण पार हो जाये तो फिर कोई उपाय नहीं रहता। इस लिये बचाव सदैव गहरे (Depth) में होना चाहिये।

फनेल डिफेन्स :—जब गेंद प्रतिद्वन्दी के हिस्से में है तो टीम बाहर फनेल की तरह फैल जायेगी और 'मैन टू मैन' स्थान लेंगे। जैसे गेंद उनके भाग में आने लगे उन्हें सिकुड़ कर पेनालटी एरिया को लेते हुये एक अर्ध वृत्त बनाना चाहिये। इस अवस्था में गोल की रक्षा अच्छी रीति से की जा सकती है। यह प्रणाली घुमाई जा सकती है और जहां तेज़ आक्रमण हों वहीं लागू की जा सकती है।

कोचिंग (Coaching) :— (१) खेल के समय कोचिंग महत्वपूर्ण होती है।

(२) स्थानीय प्रशिक्षण के लिये पीठ पर नम्बर लगाना उचित है।

(३) उचित अवस्था पर खेल रोक कर स्थिति का अध्ययन किया जाता है।

(४) नये खेल की अवस्था पहले धीरे-धीरे फिर अपनी गति से।

(५) खेल में आवश्यकता से अधिक रुकावट नहीं होनी चाहिये।

(६) खिलाड़ियों को पहले नये खेलों का आदेश देना और फिर उनके प्रयोग में सहायता देना।

(७) अच्छे खेल की प्रशंसा होनी चाहिये। आलोचना भी आवश्यक है।

(८) यदि कोच अपने को योग्य समझे तो खेल में प्रदर्शन दे सकता है।

(९) विशेष चुने हुये विषयों पर खेल का ध्यान आकर्षित करना। जैसे-नियन्त्रित पास से दूर प्रवेश तैयार करना, लम्बी ज़मीन पर पास, सिर के ऊपर खेल पर ध्यान केन्द्रित करना, शीघ्रता से गेंद प्राप्त करना, दोनों पैरों का प्रयोग, आक्रमण खेलों का प्रभाव देखना, बचाने वालों के द्वारा पीछे जाने का खेल का प्रभाव।

व्यक्तिगत कोचिंग :–कमज़ोर खेलने वाले के पास एक अच्छा खेलने वाला रखना खेल किसी विशेष व्यक्ति पर केन्द्रित करते हुये।

दूसरे टीम से विशेष खिलाड़ी की कमज़ोरियों को ध्यान में रखते हुये खेल का आदेश।

खिलाड़ी के किसी विशेष गुण को प्रोत्साहित करना, दूसरे-दूसरे स्थानों में खेल खिलाना जिससे उस स्थान का अनुभव हो और अपने खेल में अनुभव की सहायता ले।

विशेष खेलों का अभ्यास :–भिन्न-भिन्न आक्रमण तथा बचाव के खेलों का अभ्यास।

कोचिंग सेशन :– (१) शारीरिक तैयारी की व्यवस्था व्यायाम इत्यादि।

(२) हलका जौगिंग, चलना, दौड़ना।

(३) पैरों में तेज़ी, लचीलापन, प्रतिक्रिया में शीघ्रता तथा दृढ़ता का विकास।

(४) कौशल तथा सम्बन्धित अभ्यास ।

(५) तेज़ी तथा शक्ति से पूर्ण खेल ।

(६) दूसरों के साथ प्रतियोगिता, अपने से अच्छी टीम के साथ ।

(७) खेल का विश्लेषण, अपने खिलाड़ियों का, दूसरे अच्छे खिलाड़ियों का ।

(८) चित्र, फिल्म, साहित्य इत्यादि के द्वारा उच्च श्रेणी की क्रिया का प्रदर्शन तथा अनुकरण ।

३

वालीबाल

आधारित सिद्धान्त

(१) **नीची गेंद** :—जब गेंद कमर से नीची आती है तो यह आसानी से उठाई जा सकती है किन्तु इसके उठाने में साधारणतः कठिनाई होती है और उठाने से फाउल होने का अधिकतर भय रहता है। ऐसे गेंद उठाने के लिये दोनों पैर एक साथ या कुछ आगे पीछे होंगे और घुटने मुड़े हुए होंगे। हाथ कोहनी से ढीले रहते हैं और मुड़ते हैं जिससे अंगूठे बाहर की ओर होते हैं, हथेली ऊपर होती है और उंगलियां कुछ मुड़ी हुई होती हैं। जब गेंद का सम्पर्क उंगलियों से होता है तब गेंद खेलने में सम्पूर्ण शरीर का सहयोग होता है। घुटने सीधे होते हैं, कूल्हे उठाने की क्रिया के लिए आगे आते हैं कंधे पीछे जाते हैं और हाथ ऊपर की ओर एक झूलने की गति उछालने या उठाने के लिये करता है। इस अवस्था में गेंद फेंका ही नहीं किन्तु मारा ही जाता है। यह देखना आवश्यक है कि गेंद का सम्पर्क उंगलियों के सिरे से हो कभी कभी हथेली भी गेंद से छू जाती है किन्तु गेंद का उचित नियन्त्रण उंगलियों के ही सम्पर्क से होता है।

कितने ऐसे खेलने वाले हैं जो इस कठिन नीची गेंद को शीघ्रता से नीचे बैठकर ऊँची गेंद की तरह ले लेते हैं। फुर्ती और लचीलेपन से यह सम्भव होता है जो कठिन अभ्यास तथा परिश्रम से ही आ सकता है।

(२) **ऊंची गेंद**:–खेल में अधिकतर गेंद ऊँची आती है। ऐसी गेंद सीने के सामने कंधों की सीध में या सिर के ऊपर खेली जाती हैं। ऐसी गेंद लेने का अच्छा अभ्यास होना चाहिये। अभ्यास में प्रथम प्रश्न गेंद की दूरी का निर्णय

करना सीखना है। इसके लिए यदि गेंद खेलने वाले से, कम दूरी पर गिर रहा हो, तो आगे बढ़ना, पीछे गिर रहा हो तो पीछे हटना या समय न होने पर झुक के ही लेना आवश्यक होगा।

गेंद का सम्पर्क सदैव दस उंगलियों के सिरे तथा भीतर के हिस्से से होगा। हथेली तथा उसके नीचे के उठे हुए हिस्से पर गेंद के लगने से नियन्त्रण ठीक नहीं हो पाता है।

गेन्द लेने के लिये बांया पैर आगे, घुटने कुछ मुडे हुये और शरीर का झुकाव आगे की ओर होता है। कोहनी बगल से ऊपर की ओर कंधों के नीचे उठी रहती है। कलाई तथा हाथ अन्दर की ओर उसी कला से घुमाये जाते हैं जिस क्रम से उँगलियों तथा अंगूठे की लम्बाई और पीछे शरीर के झुकाव का कोण हो। हाथ सीने की ऊंचाई पर रखे जाते हैं और अंगूठे नीचे की ओर होते हैं। उंगलियां ऊपर फैली हुई दूसरे हाथ की दिशा में होती हैं। उंगलियां कुछ मुड़ी हुयी किन्तु मजबूती से गेन्द के सम्पर्क में रखी जाती हैं। इन क्रियाओं से उंगलियों, हथेली और हथेली के नीचे के उठे हुये हिस्से से एक खोखला बन जाता है। गेन्द को इसी खोखले में आना चाहिए जो प्याले के रूप में होता है। गेन्द लेने से पहले यह खोखला क्षेत्र सीधा रहता है।

गेंद उंगलियों पर आते ही उसे प्रायः १० फुट की ऊँचाई पर ऊपर फेंकते हैं जिससे दूसरे साथी की उंगलियों पर वह ऊपर से आकर गिरे। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि जब शरीर पीछे मुड़े या जब कोहनी ऊपर उठायी जाये तो गेंद लेने वाले हिस्से का कोंण सीधे से आगे की ओर गेंद लेने की तैयारी में बदल जाता है। जितना ही पीछे मुड़ना होगा, उतना ही वह सतह समानान्तर अवस्था को पहुंचती जायेगी। सही शरीर का मोड़, कोहनियों की स्थिति, उंगलियों और हाथों का रखना प्रत्येक खिलाड़ी के सुभीते के अनुसार सिखाया जायेगा।

अभ्यास—(१) साथी के गेंद ऊपर फेंकने पर खिलाड़ी उसे ऊपर उछालने की चेष्टा करता है।

(२) जैसे नं० १ में किन्तु खिलाड़ी उछालने के स्थान में गेंद मारता है।

विशेष ध्यान देने की बातें—

(१) हाथों का पूरी रीति से खुलना—इसी से शक्ति मिलती है।

(२) गेंद का नियन्त्रण उंगलियों से होता है।

(३) हाथों में और शरीर की क्रिया से पूरी शक्ति मिलती हैं। यदि कार्य सही नहीं हो रहा है तो निम्नलिखित कारण होंगे।

(१) कोहनी को नीची करना। (२) उंगलियों के साथ गेंद का सम्पर्क न होना। (३) गेंद में शक्ति नही है तो हाथ नहीं खुल रहे हैं।

गेंद ठीक करना या सेट अप करना—

सेट अप पास से मिलता जुलता हैं टीम में सेट अप करने वाले खिलाड़ी होते हैं जो स्पाइक करने वालों के साथ रहते हैं। सेट अप करने वाले को दूसरीं बार का पास मिलता है। यदि पास अच्छा हुआ तो उसे सही सेट अप करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। बहुत बार उसे सही पास नही मिलता और उसे कठिनाई के साथ सेट अप के लिए गेंद बनाना पड़ता है। सेट अप करने के लिए चेस्ट पास सब से उत्तम है क्योंकि उससे गेंद का नियन्त्रण सही होता है।

सेट अप तीन प्रकार से हो सकता है।

(१) ऊँचा सेट अप–ऐसे सेट अप नेट से बहुत समीप १०-१५ फुट की ऊँचाई पर दिये जाते हैं। जो लम्बे स्पाइक करने वाले होते हैं वे ऐसा सेट अप पसन्द करते हैं।

(२) नीचा सेट अप—ऐसे सेट अप, नेट से बहुत अधिक ऊँचे नहीं होते, ये कुछ ही फुट ऊँचे होते हैं। इस प्रकार के सेट अप अधिक प्रयोग में नहीं लाये जाते यद्यपि इससे अच्छे प्रकार के खेल बनते हैं और इन्हें भी प्रयोग में लाना चाहिये।

इन दोनों की तुलना में कहा जा सकता है कि लम्बे सेट अप से वाँली

तेज और शक्तिशाली होती है और नीचे सेट अप से उतनी शक्ति, बॉली में नहीं आती किन्तु छोटे ऊँचाई के स्पाइकर के लिए अच्छी है और यह शीघ्र खेल के लिए अच्छा है क्योंकि इसमें प्रतिद्वन्दियों को सही स्थान लेने का अवसर नहीं मिलती।

(३) यह सेट अप अधिक प्रयोग में नहीं आता हैं। इस सेट अप में गेंद नेट से बहुत पहले सेट किया जाता है इस सेट अप में गेंद पास नहीं किया जाता किन्तु कर्ण रेखा से नीचे अर्धवृत लेते हुए नेट पर भेजा जाता है। इसमें और नीची सेट अप में नेट से सेट करने की दूरी का अन्तर हैं।

सेट अप खिलाड़ी के द्वारा ध्यान देने की बातें—(१) प्रत्येक सेट अप खिलाड़ी को अपने स्पाइक करने वाले खिलाड़ी की इच्छा के अनुसार गेंद सेट अप करना है। (२) पास लेने के लिए चेस्ट पास की अवस्था में गेंद की दिशा में होना। जैसे ही गेंद गिरता है सेट अप करने के लिए शरीर की दिशा स्पाइकर की ओर करके सेट अप करना चाहिये। (३) पास यदि ठीक न हो तो गेंद लेने की चेष्टा में नं० २ करना भी हो सकता है तो स्पाइकर की ओर पीठ करके ही सेट अप करना चाहिये। (४) गेंद जो सीने के नीचे आती हैं उसका सेट अप जमीन पर एक घुटना टेक कर करने की आवश्यकता होती है। इसमें अधिक तेजी की आवश्यकता है। (५) गेंद सेट अप करते समय सही ऊँचाई और नेट से सही दूरी का ध्यान होना चाहिए। गेंद सदैव स्पाइकर के सामने होना चाहिये और गेंद की उछालने की ऊँचाई का स्थान,, स्पाइकर और सेट अप करने वाले के मध्य होना चाहिये।

अभ्यास—(१) खिलाड़ी गोलाई में खड़े हो जायें। बीच से उन्हें गेंद फेंका जाये और उनसे वापस पास लिया जाये। यह दोनों ओर से हो। अभ्यास के साथ ऊँचाई बढ़ा दी जाये।

(२) दो भागों में विभाजित कर प्रतियोगिता करना।

(३) दो खिलाड़ियों में आपस में पास।

(४) जैसे नं० ३ किन्तु नेट से सटे हुए।

(५)जैसे नं० ३ में किन्तु नेट के इधर उधर और गेंद १०-१२ फुट की ऊँचाई से पास करे।

(६) पीछे की लाइन पर खिलाड़ी एक लाइन से खड़े हो जायें। दूसरे कोने से गेंद सर्व किया जाये और तब एक-एक खिलाड़ी सेन्टर में १०-१५ फुट की ऊँचाई से पास करने की चेष्टा करे।

(७) गेंद नेट में मार कर नेट के नीचे से उठाना और कोर्ट के अन्दर भेजना या पार भेजना।

सर्विसः Service :—सर्विस दो प्रकार से की जा सकती हैं। अन्डर हैंड तथा ओवर हैंड। अन्डर सर्विस ओवर हैंड से आसान है।

अन्डर हैंड सर्विस :—बायां पैर आगे करके खड़ा होना, गेंद बायीं हथेली में पकड़ना अँगूठा आगे और उँगलियां दाहिनी ओर होंगी, बायाँ घुटना कुछ मुड़ा होगा और दाहिना घुटना सीधा। दाहिने हाथ को पीछे से झुलाते हुये बायें हाथ को जो गेंद पकड़े हुऐ है पीछे करना चाहिये। फिर दाहिने हाथ की हथेली और उठे हुए हिस्से के अच्छे झुलाव से गेंद मारना होता है। कूल्हे कुछ ऊपर उठते हैं और पीठ कुछ झुक जाती है इससे सर्विस में शक्ति पहुंचती है। मारने के बाद दाहिना हाथ गेंद के पीछे चलता जाता है तथा सामने ऊपर की ओर जाता है। इससे गेंद को ऊँचाई मिलती है।

सर्विस को कठिन करने का उपाय—(१) स्थिति वैसे ही होगी जैसे साधारण सर्विस की किन्तु दाहिना हाथ सामने ड्राइविंग ऐक्शन से सामने आता है, अंगूठा आगे होता है ओर उँगलियाँ नीचे की ओर होती हैं। बायें हाथ में पकड़े हुए गेंद को दाहिने ओर हथेली और उंगलियों के मुड़ते हुए गति से जो हाथ और अंगूठे के घुमाने से संभव होता है, मारना चाहिए। ऐसे गेंद दाहिने से बायी ओर जायेंगे।

(२) प्रारम्भिक हाथ की गति वैसे ही जैसे साधारण अन्डर हेड सर्विस में, किन्तु दाहिना हाथ जैसे सामने आता है वह बाहर दाहिनी ओर घुमाया जाता है और गेंद दाहिनी ओर हथेली से जिसमें छोटी उंगली आगे होती है मारा जाता है। इसमें गेद का मार्ग बायें से दायें रहेगा।

(३) दाहिना हाथ समानान्तर रूप में आता है, हथेली ऊपर की ओर होती है दाहिने हाथ में इस अवस्था से तेजी से 'कट' करने की तरह सम्पर्क होता है। इससे गेंद घूम जाती है और हवा के विरोध से प्रतिद्वन्दी के कोर्ट में 'ड्राप' करती है।

ओवर हैंड सर्विस :—पैर में दूरी लेकर खड़ा होना। दोनों हाथों से दाहिने कूल्हे के सामने गेंद लेकर खड़ा होना। हाथ आराम से ढीले रहते हैं। क्रिया आरम्भ करने के लिए दोनों घुटने मुड़ने और फिर सिर के ऊपर हवा में गेंद फेंका जाता है २'–५' फुट तक जैसे ही गेंद ऊपर जाता है दाहिना हाथ पीछे की ओर ऊपर जाता है और शरीर कुछ दाहिनी ओर मुड़ता है। आंखे गेंद पर सदैव होनी चाहिए। पीठ पीछे मुड़ जाती है और कूल्हा आगे की ओर होता है जैसे ही गेंद नीचे आने लगती है दाहिना हाथ आगे आता है और सिर के ऊपर जाता है। मारते समय हथेली प्याले की तरह गहरी होती है। मारने के समय दाहिना पैर सीधा और कूल्हा आगे झूलता है, शरीर का बायीं ओर मोड़ और दाहिना कंधा आगे जाता है। कलाई में झटका दिया जाता है जैसे एथलेटिक्स में गोला फेंकते हुए।

गेंद पहुंचाने के स्थान :—गेंद सर्वदा पहले पीछे दाहिने और फिर पीछे बायें कोर्ट में पहुंचाने की चेष्टा करनी चाहिए यह सेंटर में कभी नहीं भेजना चाहिए। नेट के समीप ही ड्रॉप करना एक अच्छा खेल है।

आक्रमण:—नेट के एक ओर गेंद का तीसरा खेल आक्रमण या 'स्पाइक' होता है। आक्रमण के लिए पैर में अधिक शक्ति की आवश्यकता होती है जिस से अधिक उछला जा सके। खिलाड़ी को जिस समय वह हवा में उछल रहा हो, प्रतिद्वन्दियों की फील्ड में स्थिति का तथा क्रिया का ज्ञान होना चाहिए।

अभ्यास: पैरों में शक्ति लाने के लिए व्यायाम, दौड़ना, कूदने का व्यायाम पूरे शरीर की तैयारी का व्यायाम, गेंद को मुड़े हाथों से मारना, गेंद के ऊपर मारना।

गेंद को बायें हाथ में रख कर बिना उछाले हुये स्पाइक करने का अभ्यास—दाहिने हाथ में पीछे से आते समय कोहनी सामने रखने का आदेश।

मारना, हथेली के प्याले के रुप में, मुट्ठी से, खुली हथेली से, या हथेली के पीछे उठे हुये हिस्से से।

गेंद को दोनों हाथो से पकड़ कर कूदना कूदने की उँचाई पर गेंद को छोड़ देना और मारना, गेंद हवा में उछालना और खिलाड़ी उछल कर मारता है। गेंद सिर के ऊपर या सामने मारा जाये। नेट के पास गेंद उछालना और खिलाड़ी को मारने का अभ्यास देना।

धीरे धीरे गेंद नेट से कुछ पीछे करना जिससे खिलाड़ी को गेंद मारने के लिये कूदना पड़े।

कूदने के समय हवा में कूदने की तैयारी, लम्बी कूद की तरह खड़ा होना बायां हाथ नेट की ओर, दोनों हाथ पीछे, घुटना मुडा हुआ और कमर पर शरीर कुछ ढीला, वजन पंजों पर होगा। हवा में जाने पर दाहिना हाथ उठेगा, कोहनी कंधे से ऊपर और बगल में होगी, कुछ पीछे खिंची हुयी होगी, हथेली प्याले की तरह गोलाई बनाये हुये नीचे की ओर होगी। मारने के समय शरीर आगे आयेगा और बांयी ओर घूमेगा, कंधे अन्दर और नीचे की ओर खिचेंगे। हाथ की गति नीचे और साथ ही कलाई आगे तथा नीचे गेंद के ऊपरी हिस्से पर झटके से चोट करता है। गेंद मारने के बाद शरीर बायीं ओर नेट के सम्मुख आ जाता है। गेंद मारने की शक्ति में शरीर का मोड़, कंधों का गिरना तथा कलाई का झटका, यह सब आधारित है। स्पाइक के लिये के पूर्ण लाभ के लिये गेंद मारने की दिशा नीचे होनी चाहिये।

आक्रमण सिखाने के लिये मुख्य बात है-गेंद कैसे मारना चाहिये। साथ ही शक्तिशाली स्पाइक के लिये दो बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता है-गेंद का विशेष स्थान पर गिरना तथा शक्ति के साथ गेंद भेजना।

सिखाने की प्रारम्भिक अवस्था में गेंद के नियन्त्रण पर विशेष ध्यान न दे कर गेंद के मारने पर ध्यान देना चाहिये, चाहें वह नेट ही में क्यों न हो। सीखने वालों के ध्यान में इस खेल के समतुल्य का सही ज्ञान होना आवश्यक है अर्थात हवा में उठना, शरीर पर नियन्त्रण, आवश्यक शक्ति का दिशा बदलाव, चलते हुये निशाने को मारना तथा आदेशित करना और फिर ज़मीन पर नियन्त्रण के साथ वापस आना।

बचाव का खेल बचाव के खेल के लिये बचाव के खिलाड़ियों की स्थिति ऐसी चाहिये कि कम से कम समय तथा शक्ति में वे एक से दूसरे बचाव के स्थान पर सरलता से पहुंच सकें।

बचाव के दो सिद्धान्त हैं। (१) आक्रमण या आते हुये गेंद के सामने रहना (२) गेंद पर आखें गड़ी रहे।

खिलाड़ी को आती हुई गेंद को खेलने के लिये बचाव की स्थिति में खड़ा होना चाहिये। मज़बूत आधार से खड़ा होना, पैर आगे पीछे रखते हुये जिस से जिस दिशा में जाना हो सरलता से आ सके, घुटना मुड़ा हुआ, शरीर का झुकाव कुछ आगे हाथ सीने के सामने, कोहनी बगल में उठे हुये, अंगूठे एक दूसरे की ओर और उंगलियों में प्रायः दो इंच की दूरी हल्के कटोरी के रूप में हो।

जैसे ही आक्रमण के लिये गेंद तैयार कर लिया गया हो वैसे ही बचाने वाले को ऐसे स्थान पर होना है जो आक्रमण की सीध में हो और गेंद पर आंखें लगी हुयी हों जिससे गेंद जहां भी भेजी जाये, बचाने वाला वहाँ से अपना सही स्थान ले सके। यदि गेंद ऊपर आ रहा हो तो हाथों को ऊपर उठा के गेंद लेना है। यदि गेंद कूल्हे के नीचे आ रहा हो तो ऊपर के हाथ की स्थिति से उछालने की स्थिति मे बदलना होगा। यदि गेंद पहुंच के बाहर है तो उसके लिये 'लंज' 'ड्राइव करना पड़ेगा।

ब्लौक का प्रयोग-ब्लौक के लिये दोनों पैर उछालना चाहिये। हाथ ऊपर की ओर उठे रहते हैं और शरीर का झुकाव कुछ आगे की ओर होता है। ब्लॉक नेट के कुछ पीछे से करना चाहिये। दो खिलाड़ियों का एक साथ ब्लॉक करना उत्तम होता हैं।

ब्लॉक में विशेष ध्यान ठीक समय से ब्लौक करने में है। इसी कारण गेंद पर सदैव आंख रखने की आवश्यकता होती है।

ब्लॉक से लाभ—स्पाइकर के मस्तिष्क में डर डाल देता है। उनके खेल की चतुराई को उलट पुलट देता है। आक्रमण करने वालों को भी सतर्क रहना पड़ता है।

ब्लौक से हानि—जो टीम अधिक ध्यान ब्लौक पर देती है वे कभी कभी साधारण बचाव की ओर ध्यान नहीं देती। सही ब्लौक न होने से अधिक फाउल होने की सम्भावना है। दो खिलाड़ियों के ब्लौक में व्यस्त रहने से पूरा खेल केवल चार व्यक्तियों पर निर्भर रहता है। यदि ब्लौक में दोनों खिलाड़ियों का सही सहयोग न हो तो ब्लौक व्यर्थ होता है। ब्लौक पर बिल्कुल निर्भर न होकर उसे खेल का केवल एक अंग समझना चाहिये और परिस्थिति के अनुसार इन सबके हल्के साधन उपलब्ध करना चाहिए।

बचाव के प्रकार—सर्विस लेने के लिए खिलाड़ी बीच में प्राय: एक लकीर बनाकर खड़े होते हैं। फौरवर्ड अपने स्थानों में दाहिने पीछे जाते हैं और पीछे के खिलाड़ी अपने स्थान के बायें आगे जाते हैं। खेल का साधारण सिद्धान्त है पीछे वाले गेंद के लिये पीछे जाते हैं और आगे वाले गेंद के लिये आगे जाते हैं। यदि गेंद किसी कोने में जाता है तो सेन्टर बैक उसे कवर करने की चेष्टा करता है।

ब्लौक करने के लिए यदि बायीं ओर से हो तो राइट फौरवर्ड तथा सेन्टर फौरवर्ड काम करते हैं यदि दाहिनी ओर से हो तो उसी प्रकार से प्रबन्ध होगा। यदि सेन्टर में ब्लौक हो तो सेन्टर फौरवर्ड और लेफ्ट फौरवर्ड काम करता है। बायीं ओर से ब्लौक के समय राइट बैक और लेफ्ट फौरवर्ड क्षेत्र में जाता है। सेन्टर बैक लेफ्ट की तरफ चलता है, और राइट बैक सेन्टर में आता है और राइट फौरवर्ड नेट के पांच फुट के समीप तथा बगल में १० फुट की दूरी पर रहता है।

इसी तरह दांयी ओर ब्लौक के समय बांयी ओर सम्बन्धित स्थान लिये जायेंगे।

अर्ध चन्द्र या हाफ मून डिफेन्स:—उस समय प्रयोग किया जाता है जब ब्लौक डिफेन्स पर अधिक ध्यान न दिया जाये। इसका साधारण सिद्धान्त है आक्रमण के केन्द्र को लेकर उसके पीछे एक अर्धवृत्त या पहिये के स्पोक की तरह एक केन्द्र से चारों ओर फैलाया जाना, यह केन्द्र आक्रमण सम्बन्धित है तथा उसी के सम्बन्ध में सम्पूर्ण खेल के मैदान में घूमता है इस खेल का मुख्य व्यक्ति सेन्टर फारवर्ड है उसी के ऊपर इसकी सफलता निर्भर है।

दूसरा मुख्य व्यक्ति सेन्टर बैक है जिसकी स्थिति सेन्टर फारवर्ड से सम्बन्धित है। उसे आगे पीछे तथा अपने बगल के खेल के सहयोग के लिये सदैव तैयार रहना चाहिये। जैसी गेंद की स्थिति हो उसी प्रकार उसे आगे पीछे चलना आवश्यक है।

इन दोनों स्थानों के साथ राइट और लेफ्ट बैक उस अर्ध वृत्त में जो राइट और लेफ्ट फारवर्ड और सेन्टर बैक के द्वारा बनाया जाता है अपना अपना स्थान बना लेते हैं।

इस खेल में ध्यान रखना चाहिये कि खिलाड़ी बहुत आगे न चले जायें और पीछे वाले खिलाड़ी गेंद लेने के लिये बहुत नीचे घुटने पर न हो जायें।

आक्रमण का खेल—एक अच्छा आक्रमण अच्छी सर्विस के द्वारा होता है। जिस सर्विस में तेज़ी और मोड़ हो वह घूमती हुई आये तो उसमें बचाने वालों को कठिनाई होगी।

सेट अप में गेंद नीची उछालना या 'लो सेट अप' 'हाई सेट अप' से अच्छा होता है। खेल में अच्छा भाव रखना बहुत आवश्यक है। इस में शान्ति पूर्वक लड़ने की भावना से बहुत सफलता प्राप्त हो सकती है। प्रत्येक खिलाड़ी को उसका कर्तव्य मालूम रहना चाहिये। गेंद नेट से दूर फेंकने की चेष्टा का अभ्यास होना चाहिये।

प्रत्येक खिलाड़ी को खेल के भिन्न-भिन्न स्थानों के कर्त्तव्यों का पूर्ण ज्ञान और अभ्यास होना चाहिये जिससे जहां भी हों वहां आसानी से खेल सकें। प्रतिद्वन्दी के आक्रमण के अनुसार खेल में परिवर्तन करने का चातुर्य होना आवश्यक है।

प्रत्येक खिलाड़ी को दूसरे की जो उसके क्षेत्र के निकट हैं सहायता के लिये तैयार रहना आवश्यक है। सर्विस का उठाना अत्यन्त आवश्यक है इसी के द्वारा दूसरी टीम को बढ़ने से रोका जा सकता है। जब अपने स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान में जाने की आवश्यकता हो, तो कार्य को पूर्ण होते ही अपने स्थान पर पहुंचना चाहिये।

जितने चातुर्य के खेल हैं उसका ज्ञान सब को अच्छी तरह हो जिस से संकेत पाते ही सब उसके लिए तैयार हो जायें।

प्रत्येक टीम के पास अनेक चातुर्य के खेल होने चाहिये।

अभ्यास–सीज़न के आरम्भ में आधारभूत तथ्यों का अभ्यास जैसे सर्विस, पास, सेट अप, आक्रमण, शरीर की तैयारी का व्यायाम, सप्ताह में तीन दिन ऐक घंटा खेल तथा अभ्यास।

प्रतियोगिता में—उचित अभ्यास तथा विश्राम, खेल से पहले गर्म होना, टीम को दृढ़ता तथा उत्साह के साथ खेल में भेजना। कैप्टन तथा अपने साथियों के साथ सही व्यवहार, जीतने के समय उनको उसी साधारण भाव में रखना तथा हारते समय उत्साहित करना।

———

४

बास्केट बाल

आधारित तथ्य

पकड़ना और पास करना—बास्केट बौल में गेन्द का सही पकड़ना बहुत महत्वपूर्ण हैं। गेंद दोनों हाथों की उंगलियों से पकड़ना चाहिये। पकड़ने या पास करने में हथेली का प्रयोग नहीं होता है। पकड़ने के लिये तैयारी की अवस्था में रहना आवश्यक है। गेंद फेंकने के लिए ढीलेपन से गेंद की दिशा में आगे बढ़ना हाथ फैले हुये, दोनों में से कोई पैर आगे उंगलियां खुली हुई होंगी और गेंद उँगलियों के सिरे से पकड़ा जायेगा, पकड़ने के साथ ही उसे अन्दर की ओर खींचना आवश्यक हैं यदि यह नहीं होता तो गेंद उंगलियों से लगकर उछल सकता है।

गेंद सिर के ऊपर, सीने के सामने बगल में पास किया जा सकता है। यह सीधे नीचे, ऊँचा, या टप्पा खिलाकर किया जा सकता है।

कभी-कभी एक हाथ से भी गेंद पकड़ा जाता है और उसके अभ्यास की भी आवश्यकता है।

पास करना—बास्केट बौल में पास करने में कई एक प्रकार हैं।

सीने के सामने से पास या चेस्ट पास :—यह दोनों हाथों से किया जाता है। यह समीप के पास के लिये लाभदायक है। साधारणत: यह अधिक प्रयोग होता है।

चेस्ट पास करने में गेंद चेस्ट की ऊंचाई पर लाया जाता है, हाथ गेंद के

पीछे होते हैं, उंगलियां गेंद के चारों ओर फैली रहती हैं, कोहनी शरीर के समीप रहती है, शरीर कमर से कुछ झुका हुआ होता है। इस अवस्था से उंगलियों और कलाई के तेज झटके से गेंद आगे ढकेला जाता है। हाथ फैलाते हुए, किसी एक पैर पर आगे कदम लेना आवश्यक है जिसमें दोनों घुटने कुछ मुड़े हुये होंगे। पास करने में हाथ, शरीर तथा पैरों में पूर्ण संतुलन की आवश्यकता है। दोनों हाथों के पीछे ले जाने में पास समाप्त होता है।

दो हाथ से हाथों के नीचे पास—यह उस समय प्रयोग होता है जब कोई बासकेट करने के लिये जा रहा हो। यह सदैव छोटा पास होता है और दौड़ने वाले की तेजी के अनुसार दिया जाता है। पिवट के बाद इसका अच्छा प्रयोग हो सकता है। इस पास के लिये गेंद को पीछे बगल में दोनों हाथों से झुके हुये पकड़ना चाहिए। यहां से, फेंकने जैसा पास करना चाहिए और ऐसा करते समय वज़न पीछे से सामने की ओर लाना चाहिए। पीछे जाने के लिए दोनों हाथों को फैलना है।

एक हाथ से हाथ के नीचे से पास-ऐसा पास भी छोटा पास होता है। यह भी उसी समय प्रयोग होता है जब कोई बास्केट करने जाता है। पास करने के लिये गेंद कूल्हे के समीप पीछे कमर की ऊंचाई पर लाया जाता है। दाहिना हाथ गेंद के बिल्कुल पीछे होता है और बांया हाथ आगे, उंगलियां खुली हुई होती हैं। दायें हाथ को आगे लाने से पास होता है। गेंद उंगलियों के सिरे से जाता है। पीछे जाना, दाहिने हाथ के फैलाव तथा हथेली ऊपर रहने से होता है।

टप्पे से पास (बाउन्स पास)—यह बचाने वाले गार्ड से बच के, पास का तरीका है। यह दोनों हाथ या एक हाथ से किया जा सकता है। दोनों हाथों से पास करने के लिये चेस्ट पास की तरह पकड़ना होगा, शरीर आगे झुका हुआ और घुटने कुछ मुड़े हुए होंगे। पास कमर के पास से आरम्भ होगा। पास में चेस्ट पास की तरह हाथ, कलाई तथा उंगलियों की क्रिया होगी और पाने वाले से ३ फुट आगे जमीन पर टप्पा खा कर उछल के पाने वाले के कमर की ऊँचाई तक जाये।

एक हाथ से बाउन्स पास करने के लिये गेंद बगल में एक हाथ से लाया जाता है और तब टप्पा दिया जाता है।

दो हाथ का बगल से पास—यह पास साइड लाइन के पास किया जाता है, पिवट के बाद। गेंद दोनों हाथों से बगल में कान के पास लाया जाता है। दोनों हाथों से शरीर के सामने एक बहारने की गति सी क्रिया करते हुये और साथ ही बायें पैर से आगे बढ़ते हुये पास दिया जाता है। पीछे जाना दोनों हाथों के फैलाने से होता है।

बेस बौल पास—यह लम्बे पास के लिये प्रयोग होता है। बेस बौल की तरह पास होने के कारण इसका नाम बेस बौल पास पड़ा। बेस बौल पास के लिए पैरों में दूरी हो। आरम्भ में गेंद दोनों हाथों से शरीर की दाहिनी ओर किया जाता है। गेंद फेंकने की अवस्था में कानों के पास लाया जाता है और इस क्रिया में बेस बौल की तरह एक हाथ का प्रयोग होता है। यहां से गेंद एक हाथ से फेंका जाता है साथ ही शरीर का वजन पिछले पैर से अगले पैर पर आ जाता है। पीछे जाना दाहिने हाथ के द्वारा होता है।

सिर के ऊपर से पास या ओवर हेड पास—यह बासकेट के लिये जाते हुये साथी के लिए प्रयोग होता है। ओवर हेड पास के लिये सिर के ऊपर गेंद दोनों हाथों से लायें। उंगलियां खुली हुई होंगी और अंगूठा पीछे होगा। कोहनी कुछ मुड़ी हुई होगी जिससे गेंद सिर के कुछ आगे होगा। कलाई और उंगली के झटके से गेंद पास किया जायेगा। पीछे आना दोनों हाथों से होगा।

हुक पास दाहिने हाथ से हुक पास करने के लिये डिफेन्सिव गार्ड की ओर पीठ करके और मुंह एक ओर करके खड़े होना, बायें पैर से कूद कर गेंद दोनों हाथों से पकड़कर, शरीर के समीप लाना होता है। फिर गेंद को एक हाथ से पकड़ना जिस से यह हाथ और कलाई से मिला रहे। साथ ही हवा में घूम कर गेंद को उंगलियों के ऊपर से झटका देकर डिफेन्सिव गार्ड के ऊपर फेंकना। यह पास बहुत ही प्रभावपूर्ण है किन्तु बहुत अभ्यास की आवश्यकता है।

पीछे पास या बैक पास—दोनों हाथों से गेंद पकड़ना, बांया पैर आगे रहेगा, शरीर आगे झुका हुआ होगा। कलाई के द्वारा हाथ के बगल के पीछे गेंद लाना और शरीर को और आगे झुकाना। गेंद पीछे तेजी से झटका देकर

फेंकना और पीछे जाना। बैक पास एक हाथ से भी हो सकता है। गेंद एक हाथ से पीछे लाना और पीठ के पीछे पर एक झटके से गेंद फेंकना।

पास के लेन देन में मुख्य बातें–

पास लेने में–उंगलियां खुली रहें, आंख गेंद पर, गेंद हाथ में आते ही पीछे खींचना, जहां तक सम्भव हो गेंद लेने के लिये आगे बढ़ना, गेंद शरीर के पास रखना, पास लेने के लिये तैयार रहना, गेंद मजबूती से पकड़ना।

पास करना–सिर ऊपर, आँखें आगे, गेंद पर नियन्त्रण, गेंद को एक हाथ से दूसरे हाथ में घुमाते रहें। कलाई तथा उंगलियों का अच्छा प्रयोग पास में होना चाहिये। पास कम से कम सीने की ऊंचाई पर हो, लेने वाले के सम्बन्ध से पास देना, गेंद लेने वाले के सामने देना, पास तेज होना चाहिये, पास गार्ड से दूर होना चाहिये, पास देने में निश्चयात्मकता होनी चाहिये, प्रतिद्वन्दी के आने के पहले पास, पास समझ के साथ होना चाहिये, साथी के समीप होने पर पास तेज नहीं होना चाहिए, सब तरह के पास सीखना चाहिये। चेष्टा यह करनी चाहिये कि अपना 'पास' विरोधी को कभी न मिले। गेंद छिन जाना अच्छा है किन्तु पास में भूल न हो।

शूटिंग

बास्केट बाल में विजय, शूटिंग के द्वारा ही होती है। दूसरों से अधिक प्वाइन्ट शूट करना खेल का ध्येय है। इसमें अनेक प्रकार के शूटिंग हैं और प्रत्येक खिलाड़ी को इसमें अभ्यास होना अनिवार्य है नहीं तो खेल सही तरह नहीं खेला जा सकता।

(१) **ले अप शाट**–यह खेल में बहुत अधिक प्रयोग होता है और बासकेट के दोनों ओर से किया जा सकता है। यह तेज़ी के साथ किया जा सकता है किन्तु इसके लिये ठीक समय पर कार्य करना, ताल तथा संतुलन की आवश्यकता है। यह दाहिने या बायें दोनों हाथों से किया जा सकता है। दाहिना पैर प्रयोग करने के लिये टेक आफ़ बायें पैर से लेना होगा। बासकेट के पास जितना ऊपर कूदा जा सके, कूदते समय आंखों को उस स्थान पर जहां बासकेट

करना है लगाते हुये ऊपर जाने के समय दाहिने हाथ को गेंद के पीछे रखकर और बायें हाथ को सामने, दाहिने हाथ से गेंद छोड़ना है और छोड़ते समय कलाई तथा उंगलियों की अच्छी सहायता ली जाय। इसके बाद पीछे जाना।

(२) **चेस्ट शाट**—यह बासकेट से प्रायः १५—२० फुट की दूरी से फेंका जाता है। गेंद चेस्ट पास की तरह पकड़ते हुये उंगलियां खुली हों और अंगूठा पीछे हों। गेंद उंगलियों के सिरे से पकड़ा जायेगा। पैर खुले हुये या कुछ आगे पीछे रह सकते हैं। घुटना कुछ मुड़ा हुया और शरीर सामने झुका हुआ होगा। आँखें रिंग पर केन्द्रित होंगी। गेंद फेंकने के पहिले कलाई मुड़ेगी, घुटना सीधे करते हुये स्प्रिंग के झटके की तरह गेंद फेंकी जायेगी जिसके साथ उंगलियों और कलाई का कार्य मिला रहेगा। गेंद हवा में वृत्ताकार रूपमार्ग रिंग में जाने के लिये लेगा।

जितनी दूर से चेस्ट शाट होगा उतना ही घुटना मुड़ा होगा।

(३) **एक हाथ से चेस्ट शाट या वन हैन्ड सेट शाट**— यह खड़े होकर या दौड़ कर लिया जा सकता है। दाहिना पैर और एड़ी ज़मीन पर और आगे वजन के साथ, घुटना कुछ मुड़ा हुआ। बांया हाथ गेंद के नीचे दाहिना गेंद के पीछे होगा। आंख रिम पर केन्द्रित हो। गेंद कलाई के झटके से फेंकी जाये। गेंद का मार्ग हवा में वृत्ताकार रूप का होगा। शाट के समाप्त होने के साथ दाहिनी एड़ी और बायां पैर ज़मीन से ऊपर उठ जायेगा। दौड़कर शाट करने के लिए शाट करते समय वेग कुछ धीमा होगा। दाहिने हाथ से 'वन हैण्ड शाट' करने के लिये टेक आफ सदैव बांयें पैर पर होगा तथा दाहिना पैर ऊपर होगा।

(४) **कूदकर शाट या जम्प शाट**—जम्प शाट के लिये ठीक समय पर काम, उछाल तथा संतुलन होना आवश्यक है। गेंद दोनों हाथों से सीने के सामने पकड़े हुये, उंगलियां फैली हुई हों, घुटना और कोहनी मुड़ी हुई हो, घुटना अधिक से अधिक मुड़ा हुआ हो। आंखें रिंग पर केन्द्रित हों। जैसे ही गेंद सिर पर लाया जाये पंजों पर खड़े होकर जितना ऊपर हो सके उछाला जाये और गेंद को फेंकने के स्थान पर ला कर फेंकना। पीछे जाना और संतुलन के साथ नीचे आना। बहुत दूर से यह शाट यत्न नही करना चाहिये। दौड़कर जम्प शाट की भी यही रीति है।

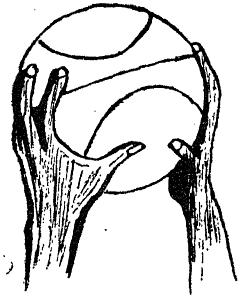

गेंद पकड़ना

वन हैण्ड शाट

ड्रिबलिंग :—यह एक अच्छी कला है किन्तु गलत प्रयोग से खेल में हानि होगी। ड्रिबलिंग से खेल में सहायता होनी चाहिए। यह उसी समय करना चाहिए जब किसी को पास करने का अवसर नहीं और बास्केट तक पहुंचने का अवसर है। जब खिलाड़ी प्रतिद्वन्दियों से बुरी तरह घिरा हो; जब कोई खेल आरम्भ किया जा रहा हो, तभी गेंद अपने पास रखने के लिये, यह किया जाना चाहिये।

एक दो ड्रिबल से अधिक नहीं करना चाहिए जब तक बास्केट तक न पहुंचना हो। ड्रिबल से पास सदैव उत्तम होता है।

ड्रिबल का सिद्धान्त :—किसी हाथ से ड्रिबल किया जा सकता है। हथेली कप या कटोरी की तरह गोल हो, गेंद को उंगलियों से जमीन की ओर ढकेलते हैं। यह एक विशेष ताल के साथ होना चाहिये। गेंद जितना नीचा रह सके रखना चाहिये। धीरे-धीरे आंखें गेंद से हटा लेना चाहिए। शूट करने के पहले टप्पा कुछ ऊँचा करना चाहिये।

पिवट :—पिवट गार्ड के घेरे से निकलने का एक उत्तम उपाय है। इसमें पैरों के काम, संतुलन, तथा समतुल्य की आवश्यकता है। यह खड़े होकर या दौड़ते हुये, एक पैर आगे रखकर खड़े होने में किया जा सकता है। कोई एक पैर

पिवट का काम कर सकता है और शरीर उसी पर चारों ओर घूमता है। पिवट कई एक अवस्थाओं में प्रयोग हो सकता है।

(१) **खड़े होकर पिवट :**–जब दोनों पैर ज़मीन पर हैं, किसी एक पैर पर पिवट हो सकता है, यह गार्ड से संतुलन को भंग करने के लिये प्रयोग होता है।

(२) **उलट के फेर का पिवट (रिवर्स पिवट)**–आगे पैर पर पिवट करके उलट कर घूम जाना, वज़न सामने पैर पर रहता है। दाहिने पैर से चल देना।

(३) **सामने की पिवट (फ्रन्ट पिवट)**–बांये पैर पर पिवट करना दायें पैर से गार्ड से दूर हो जाना।

(४) **हिलते हुये पिवट (रौकिंग पिवट)**–पिछले पैर पर पिवट करते हुये शरीर को आगे पीछे करने की क्रिया करना।

भुलावा देना (फेक एण्ड फेंट्स)–यह वह गतियां होती हैं जो प्रतिद्वन्दी को धोखा देने के लिये की जाती हैं, यह साधारणत: पिवट के साथ प्रयोग होती हैं। धोखा, गेंद, आंख, पैर, सिर तथा कंधों के द्वारा किया जा सकता है। जैसे ड्रिब्लिंग के पहले गेंद से झुकाने की गति, आंखों से देखना एक ओर और पास या पिवट दूसरी ओर करना आदि।

आड़ करना या स्क्रीनिंग :–प्रतिद्वन्दी के मार्ग में आड़ कर देने को स्क्रीनिंग कहते हैं। इसके करने में शारीरिक सम्पर्क नहीं होना चाहिये। स्क्रीनिंग में आक्रमण करने वाले फारवर्ड को उसके गार्ड से स्वतन्त्र करने का उद्देश्य रहता है। अच्छे स्क्रीनिंग में सही समय से कार्य करना तथा सही वेग की आवश्यकता होती है।

स्थायी स्क्रीनिंग में अवस्था स्थित होती है और खिलाड़ी अपनी टीम के लिये खड़े होकर आड़ करता है। खेल में ऐसी अवस्था उत्पन्न होती है जब किसी खेल के आरम्भ करने वाले को आड़ करना पड़ती है। यह भी प्राय: स्थायी स्क्रीनिंग की तरह होता है। आक्रमण करने के चातुर्य में स्क्रीनिंग बहुधा प्रयोग होती है।

आक्रमण प्रणाली

व्यक्तिगत आक्रमण :—व्यक्तिगत आक्रमण का अर्थ है, खिलाड़ी का आकस्मिक आरम्भ तथा थम जाना, इधर उधर घसकना, भुलावा, अनेक प्रकार के घूमने आदि गुण जो अर्जित किये हैं उनका प्रयोग तथा निपुणता प्राप्त करना। उसमें स्कोर करने की योग्यता होनी चाहिये।

किसी टीम का आक्रमण तीन बातों पर निर्भर करता है।

[१] व्यक्तिगत खेलने वालों के आधारित तथ्यों का सही प्रयोग। [२] तेज गति से गेंद का चलना। [३] खेलने वालों की गति।

टीम आक्रमण—भिन्न-भिन्न खेलों का प्रयोग जिस में तेज़ी से निकलना, पिवट, चतुरता से गेन्द चलाना, अच्छी शूटिंग आदि उचित रीति से व्यवहार में आते हैं।

तेज़ी से निकलना —तेज़ी से निकलना जिससे प्रतिद्वन्दी खिलाड़ी का सही अनुमान न लगा सके, शीघ्रता तथा सुगमता से स्कोर करने का तरीका है। इसका उद्देश्य है कि इसके पहले कि प्रतिद्वन्दी समझे कि क्या हो रहा है गेंद सामने के कोर्ट में आ जाये। यह फील्ड में किसी भाग से आरम्भ किया जा सकता है। इसके करने की कोई विशेष रीति नहीं है। तेज़ी इसकी मुख्य चीज़ है।

बचाव प्रणाली—बचाव उतना ही महत्वपूर्ण है जितना आक्रमण। खेल का उद्देश्य है अपने लिये बास्केट स्कोर करना और प्रतिद्वन्दियों को स्कोर करने से रोकना। इस रोकने में बचाव की प्रणाली का प्रयोग होता है। एक अच्छी टीम में बचाव तथा आक्रमण दोनों अच्छे होते हैं।

व्यक्तिगत बचाव—इस प्रकार खड़ा होना चाहिये जिस से चारों ओर आसानी से चल सकें। इसमें सदैव तैयारी की अवस्था रहती है। सब से अच्छी अवस्था है पैरों को आगे पीछे करके खड़ा होना, पैर के गोलों पर वजन रखना, घुटनों को मोड़ना तथा कूल्हे के नीचे करना तथा हाथों को पूरा खोल के रखना जिससे एक हाथ ऊपर और दूसरा बगल में रहे। पैरों को खोल के रखना, आगे

पीछे तथा बगल में चलने के लिये आगे पैर, बगल के पैर या पीछे पैर से आरम्भ करना तथा दूसरे पैर को पीछे ले जाना। पैर एक दूसरे के आरपार कभी नहीं होंगे। अपने प्रतिद्वन्दी की ओर न झुकना न कदम बढ़ाना।

स्थान सदैव प्रतिद्वन्दी और उसकी बास्केट के बीच होना चाहिये। यदि प्रतिद्वन्दी तेज़ी से आ रहा हो तो पीछे हट जाना चाहिए। यदि मध्य गति से आ रहा हो तो मिलना चाहिये। प्रतिद्वन्दी को देख कर कार्य के लिये सही निर्णय करना आवश्यक है। प्रतिद्वन्दी के बहुत समीप नहीं होना चाहिये। सही दूरी पर उसके साथ रहें।

विभिन्न प्रकार के खेल, पिवट, धोखा, तेज़ निकलने आदि चातुर्य के आकस्मिक होने के लिये तैयारी की दशा में रहें और उसकी काट के लिये निर्णय करें। उनकी भूल के द्वारा अपने लाभ के लिये काम करना, अच्छे खिलाड़ी तथा टीम की योग्यता समझी जाती है।

बचाव का विशेष चातुर्य—फ्री थ्रो में या आस पास पिवट करने वाले खिलाड़ी के सामने खेलना है तो यदि वह बास्केट के समीप हो तो उसके सामने से आक्रमण करना चाहिये। चेष्टा यह करनी चाहिये कि उसे पास न मिले। यदि वह लेन के बाहर है तो उसके बगल में होना चाहिये। उसे पास मिलने से रोकना चाहिए। उसके और उसके बास्केट के बीच स्थान लेना चाहिए। यदि कोई उसके पास आ रहा हो तो उसका भी ध्यान रखना चाहिए।

कार्नर में गेंद के साथ खिलाड़ी को आक्रमण दूर से करना चाहिए, जिससे वह ड्रिबल न कर सके और न पास कर सके। अपने समीप से उसे न जाने देना चाहिए। चेष्टा होनी चाहिए कि वह शूट करे।

सेन्टर लाइन और फाउल सर्किल के बीच खिलाड़ी को उसकी तेज़ी, उसके शूट करने की योग्यता के अनुसार, उससे अपनी दूरी रखें।

कोर्ट की साइड्स पर गेंद लिए हुए खिलाड़ी का गार्ड ऐसे स्थान से करना चाहिए जिससे वह कार्नर में जाने को बाध्य हो जाये।

उस खिलाड़ी को जिसके पास गेंद आउट आफ बाउन्डस है उसे उसके

और बास्केट के बीच खेलना चाहिए, उसके पास बौल वापस न जाये इसका ध्यान होना चाहिए। उसके बहुत समीप नहीं होना चाहिये। बाधा तथा आड़ से बचाना चाहिए। ऐसे स्थान में होना चाहिए जिससे जहां से खेल आरम्भ हो वहीं उसका सामना कर सकें।

ले अप शाट के ब्लॉक करने के लिए जो हाथ खिलाड़ी के समीप हो उसका प्रयोग करना चाहिये।

ड्रिबल को तोड़ने के लिये चेष्टा होनी चाहिए जिससे उसी के मार्ग का पता चल जाये और फिर स्थिति लेकर गेंद पर आक्रमण करें। उसे या तो रुकना पड़ेगा या साथ भागना पड़ेगा। भागने के समय उससे एक कदम आगे रहें। उसे कार्नर की ओर जाने को बाध्य करें। यदि ड्रिबल न रोक सकें तो शाट अवश्य ही रोकने की चेष्टा करें। ड्रिबलर से न बहुत आगे न बहुत पीछे जाना चाहिये।

टीम का बचाव—एक आदमी के साथ एक आदमी या मैन टू मैन हो। इस प्रकार के खेल में प्रत्येक खिलाड़ी एक प्रतिद्वन्दी खिलाड़ी को गार्ड करता है और सम्पूर्ण खेल में यह उसका उत्तरदायित्व हो जाता है कि उसे गेंद लेकर आगे बढ़ने और बास्केट करने से रोके।

मैन टू मैन डिफेन्स खेलना बहुत ही कठिन है। इस में प्रबल इच्छा, दृढ़ संकल्प, आरम्भ करना, आत्म विश्वास, कर्त्तव्य में लीन होना आदि की आवश्यकता होती है।

ज़ोन डिफेन्स :—ज़ोन डिफेन्स में प्रत्येक खिलाड़ी को एक नियुक्त ज़ोन को गार्ड करना पड़ता है। इस अर्थ में यह मैन टू मैन डिफेन्स के विपरीत है। इस खेल का सिद्धांत है कि जैसे गेंद सामने कोर्ट में प्रतिद्वन्दी को मिले वैसे पीछे आ जायें और प्रत्येक अपने बचाने का नियुक्त स्थान ले लें। इस अवस्था में गेंद खेलें, न कि, खिलाड़ी। डिफेन्स दो या तीन में हो सकता है जिस में से प्रतिद्वन्दी पार न जाने पायें। प्रत्येक खिलाड़ी की गति गेंद सम्बन्धित है। वह गेंद के स्थान के अनुसार अपने ज़ोन में चलता है।

साधारणतः तीन मुख्य बचाव हैं।

(१) दो पीछे और तीन आगे।

(२) तीन पीछे और दो आगे।

(३) दो पीछे, एक बीच में और दो आगे।

ये तीनों घूमते हुये ज़ोन की तरह भी प्रयोग में आ सकते हैं। इस अवस्था में पूरी डिफेन्स उस छेत्र में होंगी जहां गेंद हो।

किसी एक प्रकार के खेल पर बिल्कुल निर्भर नहीं होना चाहिये। जैसी स्थिति हो उसी के अनुसार खेल का प्रकार भी होना चाहिए।

ज़ोन से बाहर निकलने के अनेक उपाय हैं। एक उत्तम उपाय तेज़ी से घेरा तोड़ने का उपाय है। ज़ोन डिफेन्स में शक्ति बीच में होती है। इसलिए किनारे और दूर पर कमजोरी हो सकती है अत: किनारे से ज़ोन आसानी से तोड़ा जा सकता है।

ज़ोन तोड़ने का एक दूसरा उपाय है कि एक क्षेत्र में दो आक्रमण करने वालों को रख दें। इस से डिफेन्स के गार्ड को उधर जाना होगा और इस से डिफेन्स का संतुलन बिगड़ जायेगा। इस प्रकार के खेल में दो खिलाड़ी डिफेन्स में होने चाहिए क्योंकि यदि गेंद पीछे आये तो वे उसकी रक्षा कर सकें।

अभ्यास :–[१] दो ग्रुप में आमने सामने एक कतार में खड़ा होना। सामने का खिलाड़ी दूसरे सामने के खिलाड़ी को चेस्ट पास देता है और पास देकर पीछे जाता है।

[२] इसी बनावट में भिन्न-भिन्न पास का अभ्यास।

[३] एक वृत्त पर खिलाड़ी खड़े होते हैं और विभिन्न प्रकार के पास आपस में करते हैं। बीच में एक दो खिलाड़ी पास रोकने की चेष्टा करते हैं और यदि सफल होते हैं तो जिनका पास वे रोकते हैं उनसे स्थानान्तर होता है।

[४] तीन खिलाड़ी अ, ब, स त्रिकोण स्वरूप खड़े होते हैं। अ, ब को

पास करके स के स्थान पर पहुंचता है ब, स को पास करके अ के स्थान पर पहुंचता है और इसी प्रकार भिन्न-भिन्न पास चलते रहेंगे।

[५] खिलाड़ी रिंग के सामने खड़े होकर शूट करते हैं और धीरे धीरे दूरी बढ़ाते जाते हैं।

[६] खिलाड़ी रिंग के दोनों ओर खड़े होते हैं। एक ओर से गेंद दूसरी ओर, पहले खिलाड़ी को बास्केट से कुछ पहले फेंका जाता है, जो दौड़ के लेता है, एक स्टेप और टप्पा लगाता है और ले अप शाट करता है। वह अपनी लाइन के पीछे जाता है। उसी लाइन का दूसरा खिलाड़ी गेंद लेकर दूसरी लाइन के पहले खिलाड़ी को उसी तरह फेकता है और वह उसी तरह बास्केट करके अपनी लाइन के पीछे चला जाता है। अभ्यास इसी तरह चलता जाता है।

[७] खिलाड़ी तीन कतार में खड़े हो जाते हैं। कतार अ, ब, स। अ, ब, स साथ दौड़ते हैं। अ, स को पास करता स के सामने बास्केट के पास के लिए दौड़ता है जब अ, ब के सामने से दौड़ता है उसी समय स, ब को पास कर देता है और ब आगे बढ़कर फिर अ को पास करता है बास्केट करने के लिये।

[८] अ, ब, स–अ, स को पास करता है जो आगे बढ़कर लेता है किन्तु उसका गार्ड उसके सामने आता है तो वह पिवट करता है और उसी समय ब उसके बांयें ओर आ जाता है और पास लेता हैं, इतने में अ बास्केट के नीचे आता है और पास पाकर बास्केट करता है।

[९] एक कतार में खिलाड़ी खड़े होते हैं। एक खिलाड़ी दूसरे के चारों ओर पूरी लाइन में घूम घूम कर ड्रिबल करता है और खतम करने पर दूसरे को पास करता है।

[१०] नं० ९ की तरह, किन्तु जब खिलाड़ी दूसरों के पास ड्रिबल करने आता है तो वे रोकना चाहते हैं और वह पिवट करके दिशा बदल कर आगे चलता है।

[११] मिश्रित रिले (Composite relay) ड्रिबलिंग, पासिंग, पिवटिंग।

[१२] विभिन्न प्रकार के खेल 'Team play' स्थापित करना तथा उनका अभ्यास।

प्रत्येक सप्ताह के लिए निश्चित प्रशिक्षण कार्यक्रम होना चाहिए जिसमें प्रत्येक खिलाड़ी को आधारभूत तथ्यों में अभ्यास दिया जाये, आक्रमण तथा बचाव के चातुर्य में अभ्यास, जम्प बौल का खेल, अन्त और बगल की लाइनों का खेल, आधे कोर्ट में खेल आदि किये जायें।

कार्यक्रम में क्रमशः प्रगति होनी चाहिये। प्रत्येक घण्टे में शारीरिक तैयारी का अभ्यास भी व्यायाम, दौड़ आदि के द्वारा होनी चाहिये। सप्ताह के बीच में दूसरी टीम से मैच इत्यादि खेलना आवश्यक होगा।

———

५

हाकी

आधारित सिद्धांत

हिट करना :—स्टिक के नीचे आने की गति, हिट की तेज़ी तथा शक्ति, पैरों के कार्यों का समय तथा कलाई के ज़ोर का समन्वय जो स्टिक से गेंद के सम्पर्क में होता है उसी पर उत्तम हिट निर्भर करता है। गेंद को ज़ोर से मारने के लिये स्टिक को पीछे ऊंचा ले जाने की आवश्यकता नहीं है, एक छोटा पीछे का झुलाव प्राय: उत्तम होता है। स्टिक पीछे बहुत कम उठाना चाहिये यह कलाई की गति से हो सकता है। हाथ और कलाई से स्टिक पीछे उठती है पीछे घूमती नहीं। स्टिक पीछे घुमाने से सीधा उठाना अधिक उत्तम है क्योंकि इसमें कार्य शीघ्रता से होगा। मारने की तेज़ी स्टिक में वेग से मिलती है जिस समय गेंद और स्टिक में सम्पर्क हो अर्थात झुलाव में नीचे वजन को बायें पैर पर डालने के साथ। हिट मार चुकने पर बांया पैर पंजे पर होगा। पैरों की स्थिति गेंद के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण है। यहां गेंद सीधा मार रहे हैं। गेंद खिलाड़ी के आगे रहेगा, दायें से बायें के समीप और खिलाड़ी गेंद के सामने उस दिशा से जिस ओर गेंद जायेगा समकोण से होगा। गेंद पैरों से अच्छी दूरी पर होना चाहिए क्योंकि मारने के समय हाथ पूरे फैले हुये होना चाहिए। आँख गेंद पर स्थित होनी चाहिए, गेंद बायीं ओर मारने में कोई विशेष कठिनाई नहीं होगी।

बुल्ली :—पैरों में फैसला करके खड़ा होना चाहिये बुल्ली करने में यह ध्यान रहे कि तीसरी बार स्टिक इस प्रकार उठाकर शीघ्रता से रखी जाये कि गेंद अपनी ओर खींचकर विपक्षी के बायें ओर बढ़े या पास कर दें।

दाहिनी ओर मारना—दाहिनी ओर मारने में पैर शीघ्रता से बचाना

पड़ता है जिस से मारने के समय बांया पैर गेंद से कुछ आगे उस दिशा की ओर हो जिधर गेंद जायेगा। इस अवस्था में वजन हिट मारने के साथ सामने आता है और समाप्त होने के समय वजन बायें पैर पर होता है।

ढकेलना या झटका देना—जब शरीर का वज़न कंधों तथा कलाई के संतुलन के द्वारा गेंद बिना स्टिक के पीछे झुलाए हुये आगे बढ़ाया जाता है तो वह ढकेलना या झटका देना होता है। ढकेलने के आरम्भ में गेंद प्राय: बायें पैर के अंगूठे के सम्मुख उसके दायीं ओर रहता है। स्टिक गेंद के बिल्कुल पीछे लगाई जाती है और दोनों हाथ बिल्कुल पृथक हो सकते हैं। गेंद के आगे जाने से पहले हाथों को आगे ढकेलते हैं। झटका देने के समय वज़न बायें पैर पर जाता है, दाहिना कंधा गोल घूमता है जिससे सीना उस ओर हो जिधर गेंद जायेगा और कलाई विशेषकर दाहिनी ओर एक आगे झटका देती है। झटके के समाप्त होने पर वजन बायें पैर के बिल्कुल आगे होता है जो जमीन पर बिल्कुल चपटा होता है और दाहिना पैर पंजों पर उठा रहता है। स्टिक पूरी रीति से सामने बढ़ाई जाती है और ज़मीन के समानान्तर होती है। स्टिक का ऊपरी हिस्सा दाहिनी कलाई के मुड़ने से बायीं ओर लाया जाता है। सब खिलाड़ियों को झटका देने की योग्यता होनी चाहिए। हिट की तुलना में इसके निम्नलिखित लाभ हैं।

(१) पीछे स्टिक घुमाने की आवश्यकता नहीं होती है, कार्य शीघ्रता से होता है। खिलाड़ी का गेंद पर नियन्त्रण होता है और यहां से गेंद फेंकने में समय नष्ट नहीं होता।

(२) आकस्मिक झटके से आक्रमण की दिशा में परिवर्तन किया जा सकता है और उसका ज्ञान बचाने वालों को नहीं होगा।

(३) दाहिनी ओर झटका देने में पैर के कार्य का संतुलन करना पड़ता है जैसे दाहिनी ओर मारने में। अतएव यह शीघ्रता से होता है।

पास—वास्तव में प्रत्येक हिट या झटके में पास हो ही जाता है अतएव इसे एक पृथक आधारित कला समझने में कोई विशेष कारण नहीं मालूम पड़ता। यह हो सकता है कि इसके महत्व के कारण इसे एक विशेष स्थान दिया गया है।

(१) सीधा पास—यह उस समय किया जाता है जब खिलाड़ी के पास कोई प्रतिद्वन्दी न हो। ऐसे पास, लेने वाले के पास सीधे जाते हैं। ये तेज़ होना चाहिए। रोकने वाले की योग्यता समझते हुए जितना तेज़ हो सके होना चाहिए।

(२) थ्रू पास—यह बचाने वालों के बीच से पास किया जाता है। साधारणतः यह एक झटके से पास होगा। ये पास खतरनाक होते हैं। इनके व्यर्थ होने की अधिक सम्भावना है किन्तु जब ये सफल होते हैं तो निश्चय बचाने वालों का घेरा टूट जाता है और गोल होने की अधिक सम्भावना हो जाती है।

(३) **स्नाप पास**–यह गेंद रोकने तथा उसी क्षण पास करने की रीति है। इससे गेंद बहुत शीघ्रता से पास होती है और गेंद की दिशा में आकस्मिक परिवर्तन किया जा सकता है।

शूटिंग–शूटिंग, हिटिंग या झटके पर निर्भर है।

[१] शूटिंग करने के समय गेंद पर ध्यान होना चाहिए। [२] रिंग में जैसा भी अवसर प्राप्त हो उससे लाभ उठाने के लिए शूट करना आवश्यक है। [३] शूट करने के लिये शरीर की स्थिति सही होनी चाहिये। [४] शूट करने का कोण यदि कम है तो पास करना चाहिए।

गेंद लेना–गेंद लेने में कई एक क्रियायें हैं। स्टिक से गेंद को बिल्कुल स्थिर करना तथा बिना रोके हुये पास लेकर आगे दे देना।

पहले गेंद नियन्त्रण में करना आवश्यक है। गेंद रोकने के लिये शरीर की स्थिति सही होनी चाहिए अर्थात् गेंद के बिल्कुल बायें जिससे रोकने के समय गेंद दाहिनी ओर हो। स्टिक प्रायः सीधी होगी। स्टिक को मज़बूती से पकड़े हुये होने पर भी स्टिक पर गेंद लगने के समय कलाई को कुछ ढीला होना चाहिए। कभी कभी बिल्कुल समीप से सीधा रोकना स्टिक के पीछे पैर और आंख गेंद पर लगे रहने से सम्भव हो सकता है।

कभी कभी खिलाड़ी हाथ से गेंद रोकते हैं। अच्छी ज़मीन पर इसकी आवश्यकता नहीं होती। यदि स्टिक का सही प्रयोग हो तो इसकी आवश्यकता नहीं होती।

हवा में गेंद रोकना—हवा में गेंद रोकने के लिए उसकी उड़ान की दिशा में पीछे खिलाड़ी को खड़ा होना पड़ता है। इससे सिर गेंद के ऊपर होता है और देखने के लिए अच्छा दृश्य मिलता है।

पास लेना—गेंद बिल्कुल रोकना है या बिना रोके नियन्त्रण में लाना है खेल की स्थिति पर निर्भर है। जितना पास तेज़ होगा उतनी शीघ्र पहुंचेगा। पास कितना तेज़ होगा वह रोकने वाले की योग्यता के ऊपर निर्भर है। इस आधारित कला में प्रत्येक खिलाड़ी को अभ्यास करना है और अपने विशेष स्थान के ध्यान से इस कौशल को प्राप्त करना है। बैक खेलने वाले एक ही समय में रोकना और मारने के अभ्यास कर सकते हैं। इन्हें कम से कम आधी फील्ड की दूरी पर होना चाहिये।

जो हाफ बैक हैं उन्हें थोड़ी दूरी पर एक दूसरे के पास मारना और पास लेना चाहिए इनकी हिट दोनों प्रकार की हों जमीन पर और हवा में।

फौरवर्ड को अभ्यास करना चाहिए उन प्रकार के गेंदों से जो उनके पास आएगा अर्थात् कठिन पास रुक कर लेना। कठिन पास दौड़कर लेना। झटके से पास की दिशा बदलना। जिन कला का अभ्यास करना है वह अनेक हैं। जो कुछ अभ्यास में किया जायेगा उससे लाभ ही होगा।

ड्रिबल करना—प्रत्येक खिलाड़ी को ड्रिबल करने की योग्यता होनी चाहिए। कुछ खिलाड़ियों को दूसरों से अधिक ड्रिबलिंग करना पड़ता है। खेल में किसी न किसी समय एक खिलाड़ी को पार करके गेंद पर नियन्त्रण करके रखना पड़ता है यही ड्रिबलिंग है। यदि इसकी परिभाषा की जाये तो कहा जा सकता है कि ड्रिबलिंग को इस प्रकार नियन्त्रित करना है कि प्रतिद्वन्दी जो गेंद लेना चाहता है न ले पाये।

स्थान—गेंद सामने ड्रिबल करना चाहिए। कभी-कभी खिलाड़ी गेंद अपनी दाहिनी ओर लेकर चलते हैं किन्तु इसमें अधिक सफलता प्राप्त नहीं होती क्योंकि इस अवस्था में स्टिक का काम सुगम नहीं हो सकता और दूसरी चीज़ यह है कि दाहिनी ओर गेंद के देखते रहने में उन्हें पता नहीं चल पाता कि बायी ओर क्या हो रहा है। यदि गेंद आगे सामने है और स्टिक सुगमता से चल रही है तब

शरीर का झुकाव, सिर आगे रहते हुये होगा। शरीर सीधा रखकर अच्छा ड्रिबल करना कठिन है।

अभ्यास—गेंद फील्ड के ऊपर नीचे ले जाना और केवल शरीर को गेंद के सम्बन्ध में ठीक अवस्था में रखना, गेंद आगे छोटे-छोटे थपथपाहट या स्टिक को गेंद के साथ बराबर लगे रहने के द्वारा ले जाया जाता है। आंख सदा गेंद पर रहे।

दिशा बदलना—केवल फील्ड में सीधे ड्रिबल करने से कोई विशेष लाभ नहीं। बहुत कम खिलाड़ी हैं जिन्हें सीधे ड्रिबल करने का अवसर मिलता है। गेंद को कोई नई दिशा में ले जाने में केवल अधिक स्टिक के चातुर्य ही नहीं किन्तु पैरों के चातुर्य की भी आवश्यकता है। वास्तव में पैरों के कार्य के कारण ही इधर उधर जाना सम्भव हो सकता है। अतएव पैरों के कार्य को सदा आगे रहना है।

दाहिनी ओर जाने के लिये भी अच्छे पैरों के कार्य की आवश्यकता है। ड्रिबल करते समय खिलाड़ी को सीधे ड्रिबल करने के लिए अवस्था ग्रहण करनी चाहिए। अर्थात् गेंद सदैव सामने आगे रहे। इसलिए यदि उसे गेंद दाहिनी ओर ड्रिबल करना है तो उसे दूसरे मार्ग पर चलना होगा और अपने शरीर की अवस्था ठीक रखने के लिए पैरों को तेज़ चलाना होगा क्योंकि नये मार्ग पर आने पर ड्रिबल करने की सही अवस्था ले ली जाये।

एक हाथ से ड्रिबल करना—सैद्धांतिक रीति से इसे हतोत्साह करना है। बहुत कम खिलाड़ी हैं जो अकेले आक्रमण करते हैं और उस में एक हाथ से ड्रिबल करना अच्छी रीति से प्रयोग करते हैं। यह स्पष्ट है कि यदि स्टिक एक हाथ से पकड़ी जाये और शरीर के सामने पूरा फैला हो तो वह दो हाथ की पकड़ से अधिक दूर जा सकता है। कभी कभी एक हाथ के ड्रिबल से बहुत लाभ होता है किन्तु यह कभी कभी ही होना चाहिए बराबर नहीं।

ठीक समय से ड्रिबल करना—सब ड्रिबल के कौशल व्यर्थ होंगे यदि यह ठीक समय से न किए जायें। कोई भी जटिल घुमाव फेर नहीं करना चाहता यदि कोई सामने हटाने के लिये नहीं है, किन्तु गोल करने के क्षेत्र में उसे तेज़ी के साथ चलना पड़ता है।

खिलाड़ी अपने बायीं ओर जाकर प्रतिद्वन्दी को हटाना चाहता है। यदि वह जल्दी से हट जाता है तो प्रतिद्वन्दी को सही स्थान पर आ जाने का समय मिल जायेगा इसलिये उसे अपनी गति ठीक समय से करनी होगी और जब वह हटता है तो शीघ्रता के साथ हटना चाहिए। इसी प्रकार यदि दाहिने तरफ हटने की इच्छा हो तो तेजी उस क्षण पर होगी जब ड्रिबल करने वाले को अपने प्रतिद्वन्दी के बगल से घूमना हो।

अभ्यास—फील्ड के ऊपर नीचे ड्रिबल करने के बाद इधर उधर चलने का अभ्यास होना चाहिए। यह एक सीधी काम करने की लकीर पर हो सकता है। लकीर पर आरम्भ करके गेंद बांयी ओर सही पैरों की गति से ले जाना तब गेंद दाहिनी ओर ढकेलने के पहले कुछ दूर लकीर के समानान्तर चले। इस में भी सही गति होना आवश्यक है। ऐसे अभ्यास से अत्यन्त लाभ होगा। ठीक समय से अभ्यास करने के लिए एक झण्डा प्रयोग किया जा सकता है। झण्डा को प्रतिद्वन्दी समझ कर झन्डा तक गेंद लाकर फिर इधर उधर दिशा बदली जा सकता है। इससे नियन्त्रण में सहायता मिलेगी। फिर साथियों के साथ प्रतियोगिता। एक वृत्त में छीनना तथा ड्रिबल एक ही साथ। जिसके पास गेंद हो वह बढ़े और दूसरों को ड्रिबल करके हराये यदि गेंद उससे छिन जाती है तो दूसरा वही काम करेगा। गोलकीपर के साथ अभ्यास करने में गोल में, गेंद मारने से पहले ड्रिबल करना चाहिए तब गेंद गोल में मारे। ऐसे ही अनेक अभ्यास हो सकते हैं। ड्रिबल करते समय यह ध्यान रहे कि पास किया हुए गेंद शीघ्रता से पहुंचता है। इस लिये यदि कोई साथी हो जो घिरा नहीं है तो ड्रिबल करने से उत्तम उसे पास करना है।

गेंद लेने के लिये यत्न करना या छीनना—छीनने में अनेक विधियां हैं जिससे प्रतिद्वन्दी से गेंद ले ली जाये। छीनने में बायें या दायें दोनों ओर से चेष्टा हो सकती है।

दाहिने से गेंद लेने के लिये यत्न—यह सरल हैं। जिसके पास गेंद है वह उसे दाहिनी ओर लेकर चलता है ओर छीनने में दो स्टिक गेंद लेने की चेष्टा करती है। और दोनों में स्टिक उनके दाहिने है। दाहिनी ओर से गेंद लेने के अंत में कोई कठिनाई नहीं है यह केवल ठीक समय पर यत्न और बगल से काम करने पर निर्भर है।

छीनने के यत्न में स्टिक ज़मीन पर होना चाहिये । हवा में स्टिक हिलाने से कोई लाभ नहीं । स्टिक ऊपर रहने से गेंद नीचे से जा सकता है किन्तु यदि स्टिक ज़मीन पर है तो गेंद के पार होने में कठिनता होगी ।

बहुत बार गेंद लेने के यत्न के समय गेंद ड्रिबलर की स्टिक से मिला रहता है । यह स्पष्ट है कि यत्न के समय गेंद दोनों स्टिक के बीच रहेगा । किधर गेंद जायेगा यह स्टिक के दबाव की मज़बूती पर है । जो स्टिक दौड़ते हुए लगाया जाता है वह प्रायः खड़े हुये स्टिक के लगाने से कमज़ोर होगा । यदि खड़े हुए स्टिक के खिलाड़ी की कलाई मज़बूत है और स्थिरता से स्टिक - गेंद स्टिक का सम्पर्क होता है तो अनुमान यह है कि उसी की जीत होगी ।

गेंद के लिये यत्न करने वाले के समय पर काम करने में बहुत महत्व है । यदि यत्न शीघ्र न हुआ तो असफलता हो सकती है क्योंकि प्रतिद्वन्दी को उसका ज्ञान हो जायेगा । सही समय गेंद लेने का वह होगा जब खिलाड़ी गेंद मारने के लिए या पास करने के लिये स्टिक उठाये ।

बायीं ओर गेंद लेने का यत्न करना—यहां खिलाड़ी गेंद दाहिनी ओर रखकर दौड़ रहा है । और गेंद लेने के लिए प्रतिद्वन्दी उसके बायें ओर से आ रहा है । बांयी ओर से यत्न करने वाले को बाधक नहीं होना है । यह एक कठिन यत्न है । यत्न करने वाला बायें हाथ में स्टिक लेकर हाथ बढ़ाता है और स्टिक की पूरी लम्बान से स्टिक का सिरा गेंद के आगे बढ़ाता है और उसे जकड़ने की चेष्टा करता है जब गेंद रखने वाले की स्टिक उसे छूती है । इसलिए एक मज़बूत कलाई की आवश्यकता है । यदि यत्न सफल रहा तो गेंद रखने वाला खिलाड़ी गेंद के पार चला जाएगा और गेंद यत्न करने वाले के पास रहेगा ।

गेंद लेने के यत्न भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं । बायें हाफ के लिए एक प्रकार की समस्या होगी । उसे प्रतिद्वन्दी के दाहिने विंग से भिड़ना होगा और यह अधिकतर बायीं ओर से होगा । दाहिने हाफ के लिए आसानी है क्योंकि वह दाहिनी ओर से काम कर सकता है ।

सेन्टर हाफ के लिये दोनों प्रकार के यत्न की आवश्यकता है क्योंकि उसे किसी भी इन साइड फारवर्ड तथा सेन्टर फारवर्ड से भिड़ना हो सकता है ।

बैक्स को अधिक बायीं ओर के यत्न की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि उन्हें दाहिनी ओर आ जाने के लिए काफी समय मिल जाता है।

अभ्यास—गेंद लेने का यत्न ड्रिबल के साथ किया जा सकता है ध्यान देने की आवश्यकता इस बात पर है कि यत्न लापरवाही से न हो और बायीं ओर का यत्न केवल यत्न के लिए नहीं किन्तु दृढ़पूर्ण यत्न होना चाहिए।

कोचिंग का अभ्यास—हाकी दूसरे खेलों से कुछ भिन्न है। आधारित कला के सीखने के पश्चात इसके सही विकास खेल के द्वारा ही हो सकते हैं। कुछ अभ्यास की आवश्यकता अवश्य है। प्रत्येक खिलाड़ी को अपने स्थान की तकनीक में निपुणता प्राप्त करना चाहिये।

गोलकीपर—वृत्त से सीधी हिट रोकना तथा वापस करना, पैर तथा स्टिक या हाथ से चेष्टा करना। पैर से गेंद के वेग को कम करना फिर वापस करना। हवा में गेंद हाथ से रोकना, एक पैर को ज़मीन पर फैलाकर गेंद रोकना, तीक्ष्ण कोण से आते हुए गेंद रोकना, दोनों पैर से किक करने का अभ्यास, यही आक्रमण के साथ, गोल से निकल कर फारवर्ड के गेंद को रोकना, पेनालटी स्ट्रोक रोकने का अभ्यास। गोल में उसे ऐसे स्थान में खड़ा होना है जहां से वह किसी आकस्मिक घटना के लिए तैयार रहे। उसका उचित स्थान उसके गोल के बीच तथा गोल लाइन के सामने है जहां से वह शॉट के कोण को कम कर सकता है। किस समय आगे बढ़ना है एक मुख्य निर्णय है। कॉरनर के समय दोनों बैक भी गोल में आ जाते हैं।

बैक—हिट करने का अभ्यास। ५० गज की दूरी से रोकना, फिर शीघ्रता से मारना, यही काम आक्रमण के साथ। गेंद का उद्देश्य पूर्ण वापस करना, दोनों ओर से गेंद लेने का प्रयत्न, गोलकीपर के साथ गोल के कर्त्तव्य का साझा। उस का प्रथम कर्त्तव्य खतरे के स्थान से गेंद बाहर करने का है। ये इन साइड फॉरवर्ड को देखते हैं। कॉर्नर में गोल लाइन पर रह सकते हैं। गेंद लुढ़का के फेंकने के समय वृत्त पर रहना चाहिए।

हाफ:—सेन्टर हाफ-सीधी तथा थ्रू पास का अभ्यास। वृत्त में ड्रिबल करके जाना, अच्छा स्थान लेने के लिए ड्रिबल। गेंद मारने का अभ्यास। प्रायः उसे सब कुछ करना होता है और अच्छी तरह से करना होता है।

विंग हाफ :—गेंद रोकना, पास करना, विंग से गेंद लेने का प्रयत्न, दौड़ते हुए साथी से बायीं ओर से गेंद लेना, मुड़ना और गेंद लेना, गेंद लुढ़काना।

फारवर्ड :—बाँया विंग—पास लेना, ड्रिबलिंग, किसी को हराना बॉयी ओर जाकर, गेंद सेन्टर करना, कोरनर मारना। बुल्ली का अभ्यास।

दाहिना विंग :—जैसे ऊपर दिया है, गेंद लेने की रीति भिन्न होगी, ड्रिबलिंग की रीति भी भिन्न होंगी।

सेन्टर फारवर्ड :—दौड़ते हुये गेंद लेना, ड्रिबल करना इसमें पैरों की क्रिया पर ध्यान। यदि ड्रिबल के बाद पैर ठीक स्थान पर न रहे और वह ड्रिबल में फिर न चल सका तो सब व्यर्थ होगा। गोलकीपर को धोखा देने की विधियाँ। गेंद वृत्त में लाना और मारना, शूट करने का अभ्यास, पास करना, खाली स्थान प्राप्त करना। बुल्ली का अभ्यास।

इनसाइड राइट :—गेंद रोकना, ड्रिबल करना, पास करना, शूट करना।

इनसाइड लेफ्ट :—रोकना, वृत्त के अन्दर जाना, शूट, पास, ड्रिबल। बुल्ली का अभ्यास तथा स्थान ज्ञान, भिन्न भिन्न प्रकार के गेंद लुढ़काना। फ्री हिट—खाली स्थान भरने का चातुर्य। कोरनर— प्रत्येक खिलाड़ी का स्थान नियुक्त करना और उनको अपना कर्त्तव्य जानना जो पहले निकलते हैं उनका कर्त्तव्य प्रत्येक आक्रमण के लिए एक बचाव का उपाय जैसे दाहिने विंग से आक्रमण के समय, लेफ्ट बैक को ऐसा स्थान लेना चाहिए कि वह सेन्टर को रोके। इनसाइड राईट को सेन्टर हाफ देखेगा, सेन्टर फारवर्ड को राइट बैक और इनसाइड लेफ्ट को राइट हाफ।

खेल की विद्या :—यह एक टीम का खेल है और प्रत्येक का सहयोग अति महत्वपूर्ण है। अतएव प्रत्येक को अपना तथा दूसरे से सम्बन्धित कर्त्तव्यों का ज्ञान होना चाहिए। खेल विद्या वास्तविक खेल के मैदान, मौसम, खिलाड़ियों के फौर्म और उनके विशेष निर्बलताओं के ऊपर निर्धारित होगा। खेल के सिद्धांत फुटबौल के समान हैं।

कुछ साधारण खेल विद्या नीचे दिये जाते हैं।

आक्रमण में खेल की विद्या :—दो प्रकार के आक्रमण होते हैं—(१) बीच में आक्रमण (२) विंग का आक्रमण, बुद्धिमानी से छोटे तथा लम्बे पास के मिश्रण के द्वारा यह आरम्भ किया जा सकता है। प्रतिद्वन्दी टीम के भिन्न भिन्न खिलाड़ियों के योग्यता अनुसार खेल का आक्रमण नियुक्त होगा। एक आक्रमण की प्रणाली है जिसमें दोनों लम्बे तथा छोटे पास टेढ़ी मेढ़ी प्रकार में कर्ण रेखा पर होती है। फारवर्ड व्यक्तिगत रूप में नही किन्तु एक सम्पूर्ण समूह के रूप में खेलते हैं।

बचाव में खेल विद्या :—सिद्धांत में तीन हाफ बैक और दो बैक, प्रत्येक एक प्रतिद्वन्दी फारवर्ड को मार्क करते हैं। गोलकीपर को मिलाकर ६ बचाने वाले होते हैं।

अभ्यास में विंग के हाफ दोनों विंग को देखते हैं और बैक इनसाइडस को देखते हैं। सेन्टर हाफ सेन्टर फारवर्ड को देखता है तो भी उसे चारों तरफ जाने की स्वतंत्रता है। इस स्वतन्त्रता के कारण एक फुल बैक को कुछ दूरी पर उसके पीछे रहना पड़ता है, जिससे कोई पार न जाये और इस कारण इसे "गहराई का बचाव" बनाया जाता है। ये पांच बचाने वाले एक लकीर में नहीं खेलते। इस खेल में फ़ारवर्डस् को केवल एक व्यक्ति से भिड़ना होगा और फिर सामने गोल होगा।

दूसरा महत्वपूर्ण बचाव की प्रणाली है 'कर्ण रेखा प्रणाली'। यह आफसाइड के नियम को अपने लाभ के लिए प्रयोग करता है। इस प्रणाली का सिद्धांत यह है कि जब भी एक हाफ बैक आक्रमण की सहायता के लिए आगे जाता है तब बाकी दो हाफ बिलकुल बचाव का कार्य करेंगे। यह एक तरह का सेन्टर हाफ पर पिवट या घूमने का केन्द्र हो जायेगा।

प्रत्येक बचाव के खेल में गोलकीपर का प्रयोग महत्वपूर्ण है। कितनी टीम उसे एक तीसरे बैक की तरह खिलाती है जिसमें वह बहुत आगे बाहर निकल जाता है जिससे लम्बे पास रोके। सिद्धांत यह कि वह अपने वृत्त में खेलता है जिससे लम्बे पास रोके। सिद्धांत यह है कि यदि वह अपने वृत्त में खेलता है तो गोलकीपर अपने प्रतिद्वन्दियों को गेंद मारने से रोकता है और यदि गेंद मारा न जाये तो गोल भी नहीं होगा। यह सिद्धांत कुछ हद तक तो

सही है किन्तु यह विचार योग्य है कि गोलकीपर के ऊपर भारी पैंड होते हैं और इससे उसे गति में कठिनाई होती है और इसलिए उसे अपने पूरे वृत्त को सम्भालना कठिन होगा। जब कभी प्रतिद्वन्दी फारवर्ड, गेंद बिलकुल साफ रीति से बीच फील्ड से निकाल लेता है तो इस दशा में गोलकीपर को अपते वृत्त के किनारे आ जाना चाहिए।

बचाव में आफ साइड नियम का प्रयोग :—नियम है कि गोल करने के समय गोल तथा गोल करने वालों के बीच में तीन बचाने वाले खिलाड़ी होंगे। ये तीन खिलाड़ी प्रायः दो बैक और एक गोलकीपर होते हैं। इसमें से यदि एक फुल बैक आगे बढ़ता है तो आक्रमण करने वाले फारवर्डस् को उसके पीछे अपनी गोल की ओर जाना पड़ेगा। यह एक अच्छी रीति है। यदि बैक और हाफ अपने फौरवर्डस् के आक्रमण का सहयोग दें और आगे बढ़ें तो प्रतिद्वन्दी फौरवर्डस् को पीछे जाना ही पड़ेगा नहीं तो वे आफ साइड होंगे।

व्यक्तिगत स्थान आक्रमण:—

१. **दाहिना विंग** :—फील्ड में सबसे आसान स्थान है। दाहिनें विंग के गुण हैं तेज़ी, ताकत तथा दृढ़ संकल्प, दौड़ते हुये गेंद लेना और ड्रिबल करने का कौशल। गेंद लेने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिये क्योंकि प्रत्येक को रोकने की आवश्यकता नहीं। गेंद स्टिक से आगे बढ़ाकर उसके पीछे जाना चाहिए। उसे गेंद आगे ड्रिबल करना चाहिये। यदि वह अन्दर नहीं आता है तो ड्रिबल भी अधिक नहीं करना होगा। जब बाँया हाफ बायें बैक की सहायता के लिए आता है तो दाहिने विंग को सेन्टर की ओर आना चाहिये। इन अवस्थाओं के सिवा उसे अपनी टच् लाइन पर रहना है। उसे यह अवश्य जानना है कि कहाँ और कैसे गेंद सेन्टर करना है। सबसे उत्तम समय २५ गज़ लाइन पार करने पर है, यदि गोल लाइन के पास से सेन्टर करना है, तो गोलकीपर के आगे जो फारवर्डस् आ चुके होंगे, उन्हें पास किया जाये। साइड विंग बैक को आगे खींचता है और उससे पार जाने की चेष्टा करता है।

२. **बांया विंग**—यह एक कठिन स्थान है, क्योंकि राइट हाफ को छीनने में आसानी होती है। बाँया विंग वही करता है जो दांया विंग। गेंद हाफ के

बायीं और फेंककर उसके दाहिने होकर फिर लेना। दूसरा तरीका यह दिखाने का है कि वह हाफ के बायें जा रहा है और फिर जल्दी से गेंद लेना और हाफ के दाहिनी ओर पास करना। स्टिक के ऊपर से गेंद उछाल देना।

बांया विंग तीन प्रकार से गेंद सेन्टर कर सकता है। दाहिना विंग तो सीधे गेंद मार सकता है किन्तु बायें विंग को गेंद अपनी लाइन में या आगे लाना होता है।

(१) 'कवर प्वाइन्ट' शाट, यह कठिन शाट है। यह उस समय किया जाता है जब विंग राइट हाफ से प्रायः एक गज़ दूर रहता है और वहां से गेंद सेन्टर किया जाता है।

(२) यदि वह हाफ बैक से तेज़ नहीं है तो वह अकस्मात रुक जाये और फिर रिवर्स स्टिक से गेंद खींच ले और फिर गेंद सेन्टर कर दे।

(३) झटका देना—यह भी उसी समय किया जाता है जब हाफ साथ दौड़ रहा हो या रिवर्स स्टिक से ज़ोर से गेंद मार कर सेन्टर किया जाये।

बायें विंग को गेंद राइट विंग से जल्दी सेन्टर करना चाहिए। उसे सदा एक लाइन पर होना चाहिये केवल दो अवस्था को छोड़। जब वह थ्रू पास में अन्दर आना चाहता है और गोल करना चाहता है। दूसरा जब राइट विंग सेन्टर करता है।

३. इन साइड लेफ्ट—यह सबसे चतुर खिलाड़ी होता है उसे गेंद दोनों हाफ से मिलता है। उसे गेंद रोक कर आगे बढ़ना चाहिये। इनसाइड लेफ्ट को खेल बनाना पड़ता है। विंग के साथ या राइट इन के साथ, या सेन्टर को पास देकर जो वह बायीं ओर जाकर फिर करता है या सेन्टर से स्थान बदल लेता है। यदि वह स्वयं गोल में जाना चाहता है तो गेंद बायीं ओर लाकर जा सकता है जिससे प्रतिद्वन्दी उसके दाहिनी ओर छूट जाते हैं। उसे बैक से भिड़ना पड़ता है।

४. इनसाइड राइट-किसी अर्थ में यह बायें से भी कठिन स्थान है, यह गेंद लेने और पास देने के कारण कहा जाता है। गेंद मिलने पर इनसाइड राइट को

काफी घूमना पड़ता है। पास, इनसाइड लेफ्ट के समान है। विंग में या सेन्टर फौरवर्ड को, इन साइड या आउट साइड लेफ्ट को। इन साइड राइट आसानी से लेफ्ट बैक को हरा सकता है। इन साइड राइट को गेंद गोल में मारने के अनेक अवसर प्राप्त होंगे और उससे अवश्य लाभ उठाना चाहिये। वृत्त के अन्दर आते ही शूट करें।

५. **सेन्टर फौरवर्ड**—उसके गुण हैं दृढ़ संकल्प, शीघ्रता से गेंद मारना, खेल बनाने की योग्यता। पास को लेकर आगे बढ़ने की योग्यता। शीघ्रता से मारने की योग्यता, दौड़ते हुये मारने की योग्यता विशेष रूप से, चलते हुये गेंद को कुछ क्षणों के लिए रोकना, पीछे उठाना, फिर उपयुक्त दिशा में ज़ोर से मारना। सेन्टर फौरवर्ड, फौरवर्ड लाइन का केन्द्र है, इसलिए उसे दूसरे फौरवर्ड के साथ मिलकर भिन्न-भिन्न खेल बनाना होता है। बीच फील्ड में उसे पास देना और लेना होता है। छोटे तथा लम्बे पास बुद्धिमानी से प्रयोग करने की योग्यता।

उसे इस बात का ध्यान करना है कि बैक कर्ण रेखा या वर्ग के बचाव की प्रणाली से खेल रहे हैं। जब भी विंग ड्रिबल करें सेन्टर फौरवर्ड को गोल के समीप होना चाहिये, विशेष रूप से गोल के मुंह पर।

व्यक्तिगत स्थान बचाव—मज़बूत बचाव की टीम में बड़ी आवश्यकता है। इसके बिना फौरवर्ड को गेंद मिलना कठिन हो जाएगा।

१ **सेन्टर हाफ**—टीम में प्रायः सबसे उत्तम खिलाड़ी होता है। गेंद फौरवर्ड को पास करना तथा टीम के घेरे को मज़बूत करना इसका मुख्य काम है। उसे गेंद बहुत ड्रिबल नहीं करना चाहिए। विपरीत सेन्टर फौरवर्ड को मार्क करना उसका काम है। इन साइड्स के पास जो पास आयेंगे उसे भी छेड़ना है। उसका स्टिक का काम बहुत अच्छा होना चाहिए। उसका उद्देश्य गेंद फौरवर्ड के पास जल्दी पहुंचाने का होना चाहिये। उसकी हिट तेज़ और शक्तिपूर्ण होनी चाहिए। उसके पास काफी सांस होना चाहिए क्योंकि उसे बहुत अधिक परिश्रम करना पड़ता है।

२. **बांया हाफ**—यह भी कठिन स्थान है क्योंकि गेंद उसकी उल्टी ओर

आती है। उसे राइट आउट को गार्ड करना पड़ता है। यह भी कठिन है क्योंकि बायीं ओर से करना पड़ता है। उसे इन साइड लेफ्ट की सहायता करनी पड़ती है अपने इनसाइड राइट को वह अच्छा पास दे सकता है। राइट आउट को गार्ड करने में ऐसी अवस्था ग्रहण करना चाहिए जिस से आता हुआ पास बीच में ही रोक लिया जाये किन्तु उसे समीप से गार्ड भी करना चाहिये। लेफ्ट बैक के साथ उसकी पूरी समझ होनी चाहिये।

३. **दांया हाफ**—यह आसान स्थान है। उसका मुख्य कार्य फौरवर्ड को सहायता देना है। बचाव में, राइट हाफ, लेफ्ट विंग को गार्ड करता है। यहां उसे एक कठिनाई होती है कि जो पास विंग को आते हैं वह उसके बायीं ओर से आता है। उसे इनसाइड लेफ्ट से कभी भी नहीं खींचना चाहिए।

४. **फुल बैक**—इनकी विशेष योग्यतायें छीनने में, तेजी से बाधा डालने में और खतरे के स्थान से गेंद निकालने में होती है। दोनों बैक में अच्छी समझ होनी चाहिए। लेफ्ट बैक लेफ्ट हाफ तथा राइट बैक राइट हाफ के साथ सहयोग देता है। राइट बैक, इनसाइड लेफ्ट को तथा लेफ्ट बैक इनसाइड राइट को गार्ड करता है। इनका हिट कठिन और तेज़ होना चाहिए। रोकना और शीघ्र मारना इनका उद्देश्य है। गेंद छीनने की चेष्टा उसी समय करना चाहिए जब वह निश्चित हो। दोनों ओर से छीनने की योग्यता होनी चाहिए। स्टिक का काम अच्छा होना चाहिये।

५. **गोलकीपर**—यह बहुत बड़ी जिम्मेदारी का स्थान है। साधारणतः गोल के बीच और गोल लाइन के सामने खड़ा होता है। गेंद के सम्बन्ध में वह घूमता है। उस में निर्णय करने की शक्ति अच्छी होनी चाहिए। जैसे गोल में रहना या बाहर निकलने में। गोल के सामने आने वाले पास को रोकना या नहीं। गोलकीपर को पैड या हाथ से गोल रोकना चाहिए, स्टिक से बहुत कम।

गोलकीपर को किक की कला सीखना चाहिए। दोनों पैरों से किक करने की योग्यता होनी चाहिए। कॉर्नर के समय गेंद साफ दिखाई देना चाहिए। कभी-कभी बैक गोल में हो जाते हैं और वह गोल के आगे हो जाता है। पेनालटी स्ट्रोक में भाग लेना पड़ता है। इसके लिए अत्यन्त अभ्यास की आवश्यकता है।

———

१

एनाटमी, फिज़ियालोजी, फिज़ियालोजी आफ एकसरसाइज़ एण्ड हेल्थ एज्युकेशन

एनाटमी, फिज़ियालोजी एण्ड फिज़ियालोजी आफ एकसरसाइज़

मानव शरीर—

जीव का प्रारम्भ—मनुष्य के मानसिक एवं शारीरिक विकास की क्रमिक उत्पत्ति, जीव के साधारण प्रकार से हुई है। इसको भली भाँति समझने के लिए अंगों के क्रमिक विकास (Organic evolution) का ज्ञान होना आवश्यक है। विज्ञान से यह पता चलता है कि सम्पूर्ण जीव, जन्तु तथा पौधे एक दूसरे से सम्बन्धित हैं तथा एक या अनेक समान स्रोत से उत्पन्न हुये हैं। इस विषय में इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया है कि शारीरिक जीवन का आधार जीवोज (Protoplasm) है। यह जीवोज (Protoplasm) एक स्वच्छ लुआबदार (Jelly) चिकनी वस्तु होती है जिसे भोजन ग्रहण करने, बढ़ने, वातावरण की उत्तेजनाओं के सम्पर्क में प्रतिक्रिया करने तथा अपने समान के प्रकार की प्रजनन की शक्ति प्राप्त है। कोई जड़ वस्तु (Inorganic

matter) इस प्रकार की क्रिया नहीं कर सकती। कोई भी मशीन अपने बनने की हालत में प्रयोग नहीं हो सकती न ही अपने समान दूसनी बना सकती है।

जीव की वास्तविक उत्पत्ति कैसे हुई, इसका पता नहीं है किन्तु यह निश्चय है कि यह अपनी प्रारम्भिक दशा में दो दिशाओं में विभाजित हो गया। (१) 'जीवोज' जिनमें हरा रंग करने की वस्तु थी तथा जो जड़ वस्तु से भोजन प्राप्त करते थे। ये आधुनिक बनस्पति हुये। (२) 'जीवोज' जिनमें यह हरा रंग करने की वस्तु अनुपस्थित थी तथा जिसे भोजन के लिए जीवित पदार्थ की आवश्यकता थी ये आधुनिक जीव, जन्तु आदि हुये।

जीव के क्रमिक विकास का प्रमाण भूगर्भ विद्या (Geology) पिंड-गर्भ ज्ञान (Embroyology) शरीर में कणों के संस्कार का प्रमाण (Vestigial structure in the body) जीव के प्रकार का वर्गीकरण, रक्त समूह तथा रेडियो ग्रसित चट्टान (Radio active rocks) के द्वारा प्राप्त होता है।

पिंडगर्भ ज्ञान का प्रमाण (Embroyology)—दूध पिलाने वाले जीवों के गर्भ में, गर्भपिंड (Foetus) के विकास से क्रमिक विकास का प्रमाण मिलता है। गर्भपिंड 'अमीबा' के समान एक कोष से जीवन आरम्भ करता है। कोष का विभाजन शीघ्रता से होता है तथा एक सप्ताह के पश्चात वह समुद्री फूल के समान (Sea-anemone), जिसके अन्दर पाचन क्रिया तथा बाहर त्वचा होती हैं, हो जाता है। १५ दिन के पश्चात् वह एक रेंगने वाले कीड़े की तरह हो जाता है। इस समय वह मटर के दाने के बराबर रहता है। चौथे सप्ताह के पश्चात रीढ़ की हड्डी का पता चलता है तथा चारों अंग के उठे हुए कली के समान चिन्ह मछली के पंख की तरह प्रतीत होते हैं जैसे कोई मछली बन रही हो। इसके बाद फेफड़े दिखायी देते हैं। अंगों में संधि के चिन्ह दिखायी देते हैं तथा एक पूँछ भी होती है। एक प्राचीन प्रकार का दूध पिलाने वाला जीव प्रतीत होता है। आठ सप्ताह के पश्चात गर्भपिंड अखरोट के बराबर होता है। उसकी पूँछ खो जाती है तथा अंग बढ़ते हुए दिखते है जो खुर या पंजे में भी विकसित हो सकते थे किन्तु इस समय मानव अंग बन

रहे हैं। इस समय यह बन्दर या मनुष्य का बच्चा बन सकता था किन्तु आठ महीने के पश्चात वह प्रारम्भिक जीव क्रम समाप्त कर चुका है और अब केवल मनुष्य का बच्चा बन सकता है। इससे यह प्रतीत होता है कि व्यक्ति अपने विकास में अपने पूर्वजों के विकास की पुनरावृत्ति करता है यह सत्य नहीं है कि मानव बच्चा किसी समय बन्दर या मछली आदि होता है। वास्तविकता यह है कि वह इनसे विभिन्न स्तर पर समानता दिखाता है।

मनुष्य क्रमिक विकास में अकेला जीव नहीं है। उसके संवेग, भय आदि उसके रक्त के समान सुदूरभूत से ही निश्चित हुये हैं। अनुमान किया जाता है कि इस क्रमिक विकास में प्राय: ५०,००० वर्ष लगे हैं।

वंशानुक्रम एवं वातावरण—मनुष्य का जीवन दो दृष्टिकोणों से देखा जायेगा, वैयक्तिक तथा सामाजिक। क्रमिक विकास के द्वारा यह वर्तमान स्थति तक पहुँचा है जिसमें वंशानुक्रम का बैयक्तिक गुण तथा वातावरण का सामाजिक गुण दोनों प्रभावित हुये हैं। बालक की जीवन रक्षा का सामाजिक क्रमिक विकास भी प्रत्यक्ष है। निम्न वर्ग के जीव लाखों अंडे देते हैं जिनकी रक्षा का कोई उत्तम प्रबन्ध नहीं दिखायी देता, किन्तु क्रमश: दूध पिलाने वाले जीव के आगमन से बालकों के जीवन का आरम्भ मां के गर्भ से सुरक्षित रीति से हुआ। निम्न वर्ग के जीव कई एक बच्चों को एक साथ जन्म देते किन्तु मानव बालक एक ही जन्म पाता है। कुछ ऐसी स्थिति भी हैं जहाँ दो, तीन, चार तथा पाँच बच्चों ने जन्म लिया है किन्तु यह असाधारण एवं विचित्र घटनाओं में से हैं। एक मानव बालक के जन्म से उसके जीवित रहने तथा विकसित होने की सम्भावना अधिक बढ़ गयी।

बालक का जन्म माता-पिता के सहवास से होता है। जन्म के समय यह एक कोष्ठ जीव होता है जो बढ़ते-बढ़ते बहु संख्यक कोष्ठ हो जाता है। माता पिता के योग से बालक की उत्पत्ति में वंशानुक्रम की परम्परा चलती है तथा उसी समय से वातावरण का प्रभाव उसके जीवन पर आरम्भ होता है। बालक, वंशानुक्रम एवं वातावरण के प्रभाव का फल है जिसमें मानव जीवन की प्रारम्भिक कहानी एवं उससे भी पूर्व के तथा किसी न किसी रूप में वर्तमान पाये जाते हैं। जैसे बालक के जन्म के पूर्व उसके माता पिता एवं पूर्वजों के

वंशानुक्रम का प्रभाव उस पर होता है उसी प्रकार वातावरण भी उसके जन्म से पूर्व अपना प्रभाव उस पर डालता है। वह अपनी वर्तमान स्थिति वंशानुक्रम तथा वातावरण के पारस्परिक प्रभाव एवं क्रमिक विकास के कारण प्राप्त करता है। माता पिता के द्वारा बालक को केवल वंशानुक्रम का जीव एवं उसका प्रयोग ही प्राप्त होता है। उसके वास्तविक प्रयोग की प्रणाली आदि तथा चारित्रिक विकास वातावरण पर निर्भर करता है। आधुनिक जीवन के प्रभाव के कारण बालक को अपनी प्रकृति में समायोजन करना पड़ता है तथा उसे अनेक वस्तुयें जो वह प्रकृति से प्राप्त करता है, दूसरे रूप में पुन: सीखनी पड़ती है जिससे वह दूसरों के साथ समाज में रह सके। वह अपने में प्रकृति का समायोजन वातावरण के साथ करता है तथा प्रत्येक पग पर एक नया प्राणी बनता जाता है। अत: मनुष्य अपने प्रारम्भिक वास्तविक रूप से परिवर्तित होता जाता है। शारीरिक आधार की प्रारम्भिक वास्तविकता वर्तमान रहती है तथा रहेगी किन्तु उसका प्रयोग एवं अर्थ भिन्न होता जाता है। शारीरिक शिक्षा के द्वारा बालकों की आवश्यकताओं को निर्धारित करना है। ये आवश्यकतायें कदाचित ५०,००० वर्ष से वर्तमान है। बालक की जीववैज्ञानिक आवश्यकतायें जैसे उसकी मांसपेशियों का विकास, आन्तरिक अंग तथा स्नायु संस्थान महत्वपूर्ण है तथा आधुनिक स्थिति में उनकी रक्षा एवं विकास आवश्यक है। मनुष्य की वर्त्तमान स्थिति जो उसने क्रमिक विकास के कारण प्राप्त की है तथा जिनमें परिवर्तन होते रहते हैं, वे केवल सामाजिक संस्कृति एवं सामग्री से, आर्थिक सुधार तथा नैतिक विचारों की शिक्षा से ही उपयुक्त अवस्था में नहीं रखा जा सकता। शक्तिशाली तथा तीव्रता से गति, मानव जीवन की सर्वप्रमुख आवश्यकता है जो प्राकृतिक गतियों के उचित प्रयोग से प्राप्त होती है।

क्रमिक विकास के परिवर्तन से मनुष्य को केवल लाभ ही नहीं किन्तु हानि भी हुई है। क्रमिक विकास के परिवर्तनों के कारण मनुष्य की अवस्था से पूर्व की स्थिति जो चौपाए की थी, द्विपद में परिवर्तित हो गई। हाथों की स्वतन्त्रता एवं प्रयोग से मस्तिष्क का विकास हुआ। किन्तु पैरों पर संतुलन के कारण उसे अधिक भार सहन करना पड़ा जिसके कारण शरीर के विभिन्न आसन के दोष उत्पन्न हुए। इन दोषों के अवरोध एवं सुधार के लिए आधारभूत प्राकृतिक गतियों का सहयोग लेना अनिवार्य हो जाता है।

कोष, तन्तु, अंग एवं संस्थान

कोष—शरीर की बनावट में कोष सब से अधिक छोटा इकाई होता है। ये अनुवीक्षण यन्त्र के द्वारा ही देखे जा सकते हैं। जीवन के आरम्भ में केवल एक कोष था किन्तु क्रमश: यह बहुसंख्यक एवं जटिल हो गया। कोष 'जेली' की तरह सजीव पदार्थ जिसे जीवोज (Protoplasm) कहते हैं उसका छोटा कण है। कोष का खोल (Wall) श्लेष्मा की झिल्ली के द्वारा बनता है तथा इसी के अन्दर जीवोज होता है। जीवोज में आक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, कार्बन तथा सल्फर होता है। कोष के अन्दर एक केन्द्र होता है जिसे मींगी (Nucleus) कहते हैं। शरीर के अंग कोष से भरे हुए हैं तथा इन्हीं के द्वारा क्रियायें सम्भव होती हैं।

तन्तु एवं अंग—एक प्रकार के कोष के समूह को तन्तु (Tisues) कहते हैं। इसके विभिन्न प्रकार मांस तन्तु, स्नायु तन्तु तथा अस्थि तन्तु होते हैं। कोषों के मिलने से तन्तु की रचना होती है तथा तन्तु के मिलने से शरीर के अंगों की रचना होती है।

संस्थान—शरीर के प्रत्येक अंग अपना-अपना कार्य करते हैं। मांस पेशियों के द्वारा शारीरिक क्रिया होती है। इन मांसपेशियों का ढांचा तथा आकार देने के लिए अस्थी प्रयोग में आती है। सब अंगों के समन्वय के लिए स्नायु होते हैं। अतः शरीर की वाह्य एवं आन्तरिक क्रिया अंग या अंगों के द्वारा होती है जिन्हें उनके कार्य के अनुसार संस्थान में विभाजित कर दिया जाता है। जैसे अस्थि (Skeletal) संस्थान, मांसपेशियां (Muscular) संस्थान, श्वास (Respiratory) संस्थान, रक्त संचालन (Circulatory) संस्थान, पाचन (Digestive) संस्थान, निष्क्रमण (Excretory) संस्थान, सन्तानोत्पत्ति (Reproductive) संस्थान तथा स्नायु (Nervous) संस्थान।

२

अस्थि संस्थान

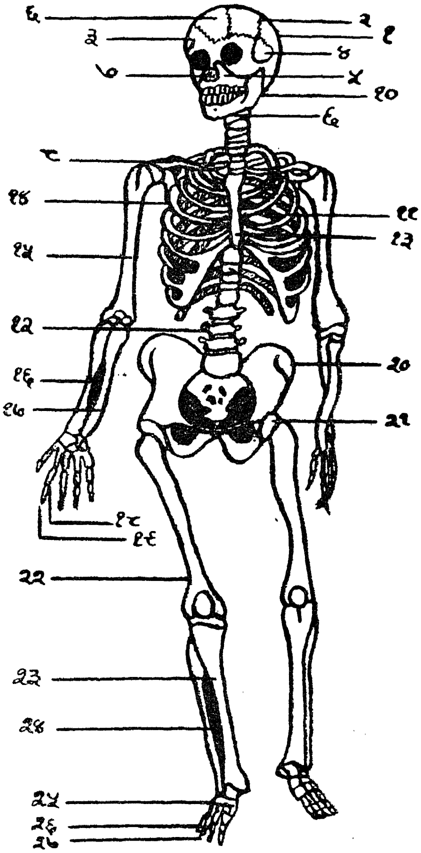

१. पश्चादस्थि Occipital २. पार्श्वकास्थि Parietal ३. जतूकास्थि Spheniod ४. शंखास्थि Temporal ५. ऊपरी जबड़ा Maxillary (Superior) ६. निचला जबड़ा Maxillary (Inferior) ७. नाक की हड्डी Nasal ८. हसली Clavical ९. मस्तिष्क कोष्ट Cranium १०. चेहरा Face ११. पसलियां Ribs १२. रीढ़ Spine १३. वक्षोस्थि Sternum १४. स्कंधास्थि Shoulder Blade १५. प्रगण्डास्थि Humerus १६. प्रकोष्ठास्थि Radius १७. अन्त: प्रकोष्ठास्थि Ulna १८. करभास्थि Metacarpal Bones १९ हस्त अंगुल्यास्थि Phalanges २०. कूल्हास्थि Hip Bones २१. कूल्हा मेखला Hip Girdle

२२. उर्वास्थि Femur २३. जंघास्थि Tibia २४. अनुजंघास्थि Fibula २५. कुर्चवास्थियां Tarsals २६. प्रपादास्थियां Metatarsals २७. प्रपाद अंगुल्यास्थियां Phalanges.

शरीर एक हड्डियों का ढांचा मात्र है। यह ढांचा २०६ हड्डियों से मिल कर बना है। इन अस्थियों के द्वारा शरीर को आकार तथा स्थिरता मिलती है। मांसपेशियों को सहारा तथा विशेष अंगों की रक्षा होती है। अस्थि संस्थान के तीन मुख्य भाग हैं। खोपड़ी, धड़, हाथ तथा पैर।

अस्थि—यह वह वस्तु है जो शरीर को मजबूती से ढांचे के रूप में सहारा देता है। यह एक प्रकार के चूने के नमक से बना हुआ है जिसे Calcium phosphate कहते हैं। यह शरीर की सबसे मजबूत तथा कड़ी वस्तु है। इस का जमाव एक जाल की तरह बिछा है जिसे रग अथवा Fibers कहते हैं। चूने के नमक से हड्डी में कड़ापन आता है तथा रगों के जाल से यह तनावदार हो जाता है। जैसे-जैसे आयु बढ़ती जाती है यह चूने का नमक एकत्रित होता जाता है इसी कारण अधिक आयु में हलकी चोट से भी हड्डी टूट जाती है।

शरीर में दो प्रकार की हड्डियां पाई जाती हैं। एक बहुत ही कड़ी चीज़ जिसे Compact bone कहते हैं। यह हड्डी का ऊपरी हिस्सा होता है तथा कड़ापन देता है। इसमें रक्त संचालन असंख्य छोटे तन्तुओं से जो इस में घुसे हुए हैं, होता है। दूसरी, एक मुलायम तथा गुलगुली वस्तु है जिसे Cancellous bone कहते हैं। इसकी बनावट झंझरी अथवा जाली के समान होती है। इनकी दरारों में गूदा भरा होता है यह गूदा लाल अथवा पीले रंग का होताहै। लम्बी हड्डियों में यह पीला होता है तथा चपटी हड्डियों में लाल होता है। इन में अनेक रक्तकोष, विशेष गूदे के कोष, तथा चर्बी के कोष होते हैं। इन कोषों के द्वारा ही हड्डी टूटने पर जुड़ने का सामान मिलता है तथा रक्तकोष भी बनते हैं। प्रत्येक हड्डी की सतह एक मजबूत झिल्ली से ढकी हुई होती है जिन्हें Periosteum कहते हैं तथा इसमें रक्त कोष अत्याधिक होते हैं। इन्हीं के द्वारा अस्थि में एक संचालन होता है। इसी के कारण टूटी हुई हड्डी के जुड़ने में महत्वपूर्ण सहायता मिलती है।

कुर्री या मुरमुरी हड्डी Cartilage यह हल्का नीला लिए सफेद रंग

की होती है तथा मज़बूत किन्तु लचीली होती है। यह अधिक दबाव सहन कर सकती है किन्तु यह तेज़ छुरी से आसानी से काटी जा सकती है। यह शरीर के बहुत भागों में पाई जाती है। उदाहरणार्थ, नाक, कान, पसली तथा जोड़ों में जहां सख़्ती, ताकत तथा लचीलेपन की आवश्यकता होती है, यह होते हैं।

इनका मुख्य कार्य :- १ थोड़े समय के लिये बच्चों के शरीर में हड्डियों तथा जोड़ों के लिए ढांचे का काम करना। यह क्रमश: अस्थि में बदल जाती है। २ हड्डियों के बीच के जोड़ों में अस्तर का काम देती है। ३ हड्डियों की बनावट के बीच धक्का सहने का सहारा देती है।

रेशा (Ligaments)—यह एक सफेद कड़े रेशे का समूह है जो आपस में मिलकर एक डोरी बना लेते हैं। इसका विशेष कार्य अस्थि पंजर की बनावट को एक साथ रखना तथा खिचाव सहन करना है। इनमें लचीलापन नहीं होता किन्तु अधिक जोर पड़ने से खींचा जा सकता है।

अस्थि के साधारण प्रकार— अस्थियां ५ प्रकार की होती हैं। १—लम्बी भारी हड्डी २—छोटी गठी हुई हड्डी ३—लम्बी पतली हड्डी ४—चौड़ी पतली हड्डी ५—टुकड़ों में हड्डियां।

१—लम्बी भारी हड्डी:—जैसे जांघ की हड्डी (Femuer) यह विशेषकर बोझ सम्भालने तथा प्रत्येक सिरे पर मज़बूत जोड़ों के लिये काफी स्थान रखती है जिस में जोड़ के लिए स्थान बन सके।

२—चौड़ी पतली हड्डी जैसे Scapula or shoulder blades जैसे कन्धे की हड्डी। इसका कार्य माँसपेशियों के जोड़ के लिए चौड़ा स्थान देना है।

३—लम्बी पतली हड्डी पसली (Ribs) इनका कार्य घूमता हुआ ढांचा बनाना है।

४—छोटी गठी हुई हड्डी जैसे कलाई की हड्डी (Wrist bone) इसका कार्य ताकत तथा लचक देना है।

५—टुकड़ों में हड्डियां :—जैसे रीढ़ की हड्डी (Vertibral column)

इनका कार्य आपस में एक दूसरे से सहारा तथा लचीलापन पाना है ।

अस्थि संस्थान:—इसमें खोपड़ी, रीढ़, पसलियां, स्कन्ध मेखला ऊपरी धड़ की हड्डियां, कूल्हा मेखला तथा निचली धड़ की हड्डियां आती हैं ।

खोपड़ी–इसके दो भाग है । १-मस्तिष्क कोष्ठ २-चेहरा । मस्तिष्क कोष्ठ (Cranium) यह आठ मज़बूत चपटी, हल्की हड्डियों से बना है ।

एक ललाटास्थि (Frontal bone)

दो पार्श्वकास्थि (Perietal bone) एक पाश्चादास्थि (Occipital bone) २ शंखास्थि (Temporal bone) एक जतूकास्थि (Spheroid bone) एक बहुछिद्रास्थि (Ethmoid bone)

ये हड्डियाँ अचल कंघीदार संधियों द्वारा जुड़ी हुई होती हैं । बालक के मस्तिष्क में वे धीरे धीरे जुड़ती हैं । इसके नीचे की ओर एक गोल छेद भी होता है। जिसके द्वारा यह सुषुम्ना से मिलती है ।

चेहरा–यह १४ हड्डियों से मिलकर बना है । ये हड्डियां इस प्रकार हैं:- दो ऊपरी जबड़ों की हड्यां (Superior maxillary) एक निचले जबड़े की हड्डी (Inferior maxillary) दो कपोलास्थि (Malar bones) दो तालू की हड्यां (Palate bone).

दो नाक की हड्डियां (Nasal bones) दो स्पंज हड्डियां (Spongy bones) दो अश्रुस्थियां (Lacrymal bones) एक नाक का पर्दा बनाने वाली हड्डी (Vomer)

निचले जबड़े को छोड़कर सब हड्डियां अचल हैं ।

मेरुदण्ड (Vertibral Column) मेरुदण्ड वर्गों में विभाजित है । (१) गर्दन में ७ कशेरुकायें (Cervical vertibra) (२) पीठ में १२ कशेरुकायें जिनमें पसलियां मिली हुई हैं (Dorsal vertibra)

(३) कमर में ५ कशेरुकायें (Lumber vertibra)

(४) त्रिकास्थि में ५ कशेरुकायें (Sacral vertibra) पांचो आपस में जमे हुये हैं जिससे एक हड्डी बनती है।

(५) गुदास्थि में ४ कशेरुकायें (Coccyx) हैं यह चार भी आपस में जमी हुई हैं।

मेरुदण्ड के द्वारा ऊपरी धड़का वजन नीचे के धड़ में दिया जाता है। मेरुदण्ड में दो गोलाइयां हैं जो जन्म के बाद ही विकसित होती हैं एक गर्दन वर्ग दूसरा कमर वर्ग का मेरुदण्ड है। गर्दन वर्ग का मेरुदण्ड उस समय दिखाई देता है जब शिशु सिर उठाना आरम्भ करता है, कमर वर्ग का मेरुदण्ड सीधे खड़े होने के साथ विकसित होता है।

कशेरुकाओं के बीच कोमलास्थि (Cartilage) की गद्दी रहती है जिस के कारण धक्का सहने का कार्य होता है तथा मेरुदण्डों के बीच गति सम्भव होती है। कोमलास्थि के द्वारा मेरुदण्ड का रूप बना रहता है तथा उसकी पूरी लम्बान का एक चौथाई भाग होता है।

गर्दन वर्ग का मेरुदण्ड- (Cervical vertibra) पहले दो गर्दन के मेरुदण्ड को छोड़ शेष कन्धे तथा कमर के वर्ग से छोटे होते हैं। उनसे गति का विस्तार अधिक होता है इसी कारण व्यक्ति पीछे मुड़कर देख सकता है।

कन्धा वर्ग का मेरुदण्ड—इनका जोड़ पसली से है तथा उनके साथ गति भी होती है। इसकी बनावट के कारण इस वर्ग में अधिक पीछे मुड़ पाते हैं।

कमर वर्ग का मेरुदण्ड —यह कंधा वर्ग तथा गर्दन वर्ग से अधिक बड़े तथा मज़बूत होते हैं।

प्रथम कशेरूका शिरोधर-(Atlas) इसके बीच का स्थान दो हिस्सों में मज़बूत रेशों के द्वारा विभाजित हैं। सामने का भाग दूसरी कशेरूका अक्ष (Axis) के द्वारा घिरा है तथा पिछले भाग सुषुम्ना के द्वारा रगें अक्ष की हड्डी के भाग को अपने स्थान में रखती है जिससे वे पीछे फिसल कर सुषुम्ना को चोट न पहुंचायें।

दूसरी कशेरूका अक्ष (Axis)–यह बृत्ताकार मेरुदण्ड है जिसमें धड़ एक वृत्तखण्ड के दो आड़े तथा एक कांटेदार चाल, मांसपेशियों के साथ जुड़ने के लिए तथा चार जोड़दार पहल, एक वृत्तखण्ड के प्रत्येक खम्बे की नीव के नीचे, तथा दूसरा उसके ऊपर स्थित है। इसकी विशेषता एक हड्डी की खूंटी है, जो उसके शरीर से ऊपर उठती है, जिसमें गर्दन के प्रथम मेरुदण्ड के साथ, जिसका नाम शिरोधर है, गतिवाही हो।

त्रिकास्थि (Sacrum) यह पांचो आपस में मिले हुये हैं। इसकी गति ऊपर की ओर पांचवें कमर बर्ग के मेरुदण्ड के साथ होती है तथा बगल में दोनों कूल्हास्थियों के अन्तर की सतह के साथ होती है। इस प्रकार यह कूल्हा मेखला का पिछला भाग बनाती है।

गुदास्थि (Coccyx)—गुदास्थि, त्रिकास्थि के निचले भाग से लगातार चलता है। इसका विशेष कार्य कूल्हे के फर्श की मांसपेशियों के लिए जोड़ का काम देना है।

वक्षस्थल (Thorax)–इस की हड्डियां एक गुम्मज की तरह होती हैं। वे छाती की हड्डियां या वक्षोस्थि कहलाती हैं जिसमें बारह जोड़ी पसली तथा बारह जोड़ी कन्धा मेरुदण्ड है। प्रत्येक पसली मेरुदण्ड से शरीर के पीछे जुड़ी हुई है। सामने ये वक्षोस्थि से मुरमुरी हड्डी से मिली हुई हैं। इस मुरमुरी हड्डी के कारण वक्षस्थल कीदिवारों को लचक मिलती है जिससे साँस लेने की क्रिया की गति सम्भव होतीहै। ऊपर की सात पसलियां सच्ची पसली (True ribs) तथा नीचे की ५ झूठी पसली (False ribs) कही जाती हैं। अन्त की दो पसलियां सामने जुड़ी नहीं हैं। इसलिए तैरती (Floating) हुई पसली कही जाती है। पसली सीने, फेफड़े, दिल, गुर्दे पेट इत्यादि को ढक कर बचाव देती हैं।

शरीर की दो सौ छः हड्डियां दो भागों में विभाजित हैं।

(१) धुरे की हड्डी (Axial bone) जो शरीर के बीच में है।

(२) जुड़ी हुई हड्डियां (Appendicular bone) शरीर का ऊपरी हिस्सा कंधा, हाथ, बाजू, कलाई।

शरीर के ऊपरी धड़ में दो हड्डियां हैं जिसे हसली (Coller bone) की हड्डी तथा दो कंधे (Shoulder blade) कहते हैं। Clavical ६ इन्च की होती है तथा वक्षोस्थि (Sternum) से जुड़ी रहती है। इसका कार्य कंधे और ऊपरी धड़ के भाग को छाती की दीवार से सही दूरी पर रखना है। यह बहुत आसानी से टूटता है।

कंधे की हड्डी (Scapula) एक चपटी तिकोनी हड्डी है जो विश्राम के समय सीने के पीछे के भाग में २ से ७ पसली घेरती है। यह एक आधार है जिस पर ऊपरी अंग घूमते हैं।

बांह (Arm)—प्रगण्डास्थि (Humerus) एक लम्बी हड्डी है। इस में एक सिर, गर्दन, डंडी तथा अन्त का छोर है। निचला भाग Radius तथा Ulna के साथ कोहनी का जोड़ बनाने के लिए घूमता है।

हाथ (Fore Arm)—यह प्रकोष्ठास्थि (Radius) तथा अन्त प्रकोष्ठास्थि (Ulna) से बना है।

प्रकोष्ठस्थि एक लम्बी पतली अस्थि है जिसमें सिर, गर्दन, डंडी तथा निचले भाग का छोर है। सिर एक चौड़े गोल पदार्थ के ऊपरी भाग के रूप का है तथा उसकी ऊपरी सतह में एक छिछला गढ़ढा है जो प्रगण्डास्थि (Humerus) के निचले छोर के बाह्य भाग के साथ घूमता है। इस गोल वस्तु की बगलें प्रकोष्ठास्थि (Ulna) के ऊपरी हिस्से के साथ घूमता है। प्रकोष्ठास्थि की डंडी कुछ गोलाई लिये है। जब हथेली सामने होती है तो यह प्रकोष्ठास्थि के बाहरी हिस्से में होती है तथा जब हथेली पीछे की ओर होती है तो प्रकोष्ठास्थि के ऊपर और आर-पार होती है इसके निचले भाग से कलाई के जोड़ के बनने में सहायता मिलती है और प्रकोष्ठास्थि के निचले हिस्से के साथ घूमती है।

अन्त प्रकोष्ठास्थि में ऊपरी हिस्सा, एक डन्डा और निचला छोर होता है। ऊपरी भाग में एक दांतेदार अर्द्धचन्द्राकार होता है जो प्रगण्डास्थि के आन्तरिक तथा निचले भाग के बाद के हिस्से के साथ घूमता है। ऊपरी हिस्से की नोक एक चोंच के रूप की अस्थि प्रणाली है जिसे Olecranon कहते हैं।

जब हाथ फैलाया जाता है तब यह प्रणाली एक गड्ढे में जो प्रगण्डास्थि के निचले हिस्से के पीछे है बैठ जाता है जिसके कारण कोहनी का जोड़ बंध जाता है तथा इसके आगे का फैलना रुक जाता है।

मणिबन्ध अस्थि (The Carpus)–कलाई आठ मणिबन्ध अस्थियों से बनती है जो दो कतारों में बहुत पास, २ चार २ के अंक में बैठाये हुये हैं। यह एक लचीला किन्तु दृढ़ आधार देता है जिसके ऊपर हाथ तथा बांह की मांसपेशियां अपना जोर डाल सकती हैं।

मणिबन्ध अस्थि के ऊपरी हिस्से की चिकनी गोलाई की सतह प्रकोष्ठास्थि तथा अन्तः प्रकोष्ठास्थि के निचले हिस्से के साथ कलाई का जोड़ बनाने के लिए घूमता है।

मणिबन्ध का निचला सिरा पांच करभास्थियों के ऊपरी सिरे के साथ घूमता है।

करभास्थियां (Metacarpal bones) **तथा अंगुलास्थियां** (Phalanges) :–

पहली करभास्थि अंगूठे के आधार का अस्थि सहायक है। शेष चार हथेली के ढांचे का रूप देती हैं। इन अस्थियों के निचले सिरे अंगुलास्थियों की पहली कतार के ऊपरी सिरे के साथ उंगली के जोड़ बनाने के लिये घूमती हैं।

अंगुलस्थियां उंगलियों तथा अंगूठों की अस्थियां हैं। प्रत्येक उंगली में तीन अंगुलस्थियां होती हैं तथा अंगूठे में दो होती हैं।

निचला धड़–इनमें दो कूल्हास्थियों (Hipbone) त्रिकास्थि (Sacrum) टांग तथा पांव की हड्डी से मिलकर कूल्हा मेखला (Pelvic girdle) बनाती है।

कूल्हा मेखला—ये बेनाम की हड्डियों के बाहरी हिस्से के बीच में एक गहरा छेद है जिसे Acitabulum कहते हैं यह उर्वास्थि के सिर के साथ घूमता है। Acitabulum के ऊपर की चपटी हड्डी (Illium) है। हड्डी

का वृत्तखण्ड जो उसके नीचे सामने है उसे Pubis कहते हैं। निचले पीछे के हिस्से को Ischium कहते हैं। प्रत्येक बेनाम की हड्डी त्रिकास्थि से मज़बूत अस्थिबन्धन (Ligaments) के द्वारा मिला हुआ है जिससे Sacroilliac जोड़ बनते हैं। Pubis में दो हड्डियाँ सामने जुड़कर कुछ गतिवाही जोड़ बनाते हैं। गर्भ की अवस्था में स्त्री के शरीर के बन्धन कुछ ढीले हो जाते हैं जिससे कूल्हा मेखला के द्वार बढ़ सकें। कूल्हा का मुख्य कार्य एक ठोस आधार देना है जिससे वजन ऊपरी धड़ से नीचे की ओर भेजा जा सके। यह पैर में तथा धड़ के निचले हिस्से की शक्तिशाली मांसपेशियों के लिए एक लगाव का आधार देता है।

टांगों की हड्डियाँ–जांघ की हड्डी-उर्वास्थि (Femmur) जानवस्थि (Patella) जंघास्थि (Tebia) अनुजंघास्थि (Fibula) हैं।

उर्वास्थि का एक सिरा गर्दन, डंडा तथा बड़ा निचला छोर होता है। यह शरीर में सबसे लम्बी हड्डी है। सिरा गोलाकार है तथा acitabulm के साथ घूमता है। गर्दन की १ १/२ इन्च लम्बी गोलाई है और बहुत मज़बूत है। यह उर्वास्थि के डंडे के १२५ अंश के कोण पर मिलता है। डंडे में आगे की ओर उभार है।

जानवस्थि—घुटने के जोड़ के सामने है। यह गोलाकार है। इसका कार्य अपने खींचने के समान कार्य के कारण लीवर या टेक को बढ़ाना है जो गड्ढे में फिसलने के द्वारा होता है।

जंघास्थि का ऊपरी तथा निचला छोर एक डंडा होता है। एक तिकोनी जानवस्थि, अस्थिबन्धनों द्वारा जंघास्थि से जुड़ी रहती है।

अनुजंघास्थि एक लम्बी पतली हड्डी है जिसका सिरा तथा निचला छोर है। इसका सिरा जानवस्थि के ऊपरी हिस्से के बाहरी भाग के साथ घूमता है तथा इसका निचला भाग मज़बूत अस्थिबंधन के द्वारा उसी के द्वारा बाहरी भाग के निचले हिस्से से दृढ़ है।

पांव की हड्डियां—पांव के मुख्य भाग की सात हड्डियां जो मिलकर कुर्चवास्थियां (Tarsus) बनाती हैं।

पैर के अगले हिस्से की हड्डी पांच प्रपादास्थियां (Metatarsals) कहलाती हैं।

अँगूठे की हड्डियां प्रपाद अंगुल्यास्थियाँ (Phalanges) कहलाती हैं।

कुर्चवास्थियों की दो सबसे बड़ी हड्डियां एड़ी की हड्डियाँ हैं।

पांच प्रपादास्थियां तथा प्रपाद अंगुल्यास्थियां–प्रपादास्थियां हाथ की हड्डियों के समान हैं किन्तु वे नाप तथा ताकत में बड़ी हैं। अंगुल्यास्थियां साधारणतः हाथ की हड्डी से छोटी तथा मोटी हैं अंगूठे में दो अंगुलियाँ तथा शेष में तीन-तीन होती हैं।

पैर का झुकाव—पैरों पर बहुत जोर पड़ता है विशेषकर कठिन व्यायाम के समय। पैर इस जोर को ताकत तथा लचक के द्वारा सहन कर लेता है। यह वृत्त खंड झुकाव के रूप में बना है जो रगों से संगठित होता है तथा मांसपेशियों से सहारा पाता है।

जोड़ या संधि

जोड़ या संधि (Joints)—मांसपेशियों की हरकत को समझने के लिए हड्डियों की सन्धि, उनकी बनावट तथा प्रकार जानना आवश्यक है। अस्थि संस्थान के दो या उससे अधिक हड्डियों के संगम को संधि (Joints) कहते हैं। इनके कार के अनुसार वे स्वतन्त्र गति, अल्पगति तथा गतिहीन होती है।

संधि का विभाग उनके प्रकृति तथा गति की परिधि पर निर्भर करता है।

१- सन्धि जो गतिहीन है— ये वे सन्धियां हैं जहां हड्डी की सन्धि मुरमुरी अस्थि के द्वारा होती हैं जैसे पहली पसली तथा वक्षोस्थि वर्ग। यह सन्धि मुरमुरी अस्थि के द्वारा या कंघीदार सन्धियों के द्वारा जोड़ती है जैसे खोपड़ी में होती है।

२- अल्प गति सन्धि—इनमें दो अस्थि सतह रेशों से संयुक्त होती हैं जैसे जंघास्थि तथा अनुजंघास्थि के निचले हिस्से की सन्धि या रगों के साथ रेशों के

द्वारा मुरमुरी अस्थि जो अस्थि सतह के बीच में स्थित है। जैसे मेरुदल के धड़ों के बीच की सन्धि।

३- **स्वतन्त्र गति सन्धि**—इसमें दोनों हड्डियों के सिरे मुरमुरी अस्थि से ढकी रहती है तथा एक रेशेदार झिल्ली की पतली थैली से संयुक्त होती है। यह थैली चिकने जाल से जिसे साइनोवियल (Synovial membrane) झिल्ली कहते हैं मढ़ी रहती है। यह झिल्ली संधि को चिकना रखने के लिए एक तरल पदार्थ उत्पन्न करती हैं, इनकी मजबूती रगों से होती है जो बगल के संधि के खाली स्थान से संयुक्त रहती है तथा जिनके अंक शक्ति तथा स्थान, सन्धि के विशेष कार्य पर निर्भर हैं। सन्धि जिसकी गति विस्तृत है, जैसे कि ऊपरी अवयव सन्धि में कूल्हा मेखला सन्धि से कम रगें है, जो उससे अल्प गतिवाही हैं, किन्तु शरीर के वजन सम्भालने के लिए उपयुक्त हैं। स्वतन्त्र गतिवाही संधि के निम्न छः प्रकार हैं।

(१) कब्जेदार संधि (Hinge Joints)—कब्जे की भांति अस्थियों की गति आगे पीछे अर्थात् एक ही सतह पर होती है जैसे कोहनी, घुटना आदि।

(२) फिसलती हुई संधि (Gliding Joints) जैसे मेरुदण्ड के धड़ों के बीच तथा कुर्चवास्थियों के मध्य।

(३) अपने केन्द्र पर घूमने वाले जोड़ (Pivot Joints) एक हड्डी कील का कार्य करती है तथा दूसरी उसके चारों ओर घूमती हैं जैसे प्रकोष्ठास्थि के ऊपरी हिस्से की संधि।

(४) गोली तथा खत्तीदार संधि (Ball and Socket Joint) एक हड्डी का गोल सिरा दूसरी हड्डी के प्याले जैसे सिरे में फंस जाती है इस प्रकार हड्डियां स्वतन्त्रता से चारों ओर घूम सकती हैं। घुमाव चारों ओर गोलाई से होता है। जैसे कूल्हा तथा स्कन्ध सन्धि में होता है।

(५) फिसलने वाली डंडी संधि (Condyloid Joints):—इस सन्धि में धनुषाकार हड्डी उभरी हुई हड्डी के खोखले में फंस जाती है जैसे कलाई की सन्धि। इसमें गति चारों ओर होती है किन्तु बीच के धुरे के चारों ओर गोलाई से नहीं घूमती।

(६) काठी कसी हुई सन्धि [Saddle Joint]—ऐसी सन्धि की सतह धनुषाकार उभरी हुई खाली होती है तथा जो सन्धि सम्भव है वह फिसलने वाली डन्डी संधि के प्रकार की है। जैसे अंगूठे की मणिबन्ध करभास्थि सन्धि।

मेरुदण्ड की सन्धियां—[१] मेरुदण्ड कशेरूकाओं में अल्पगति सन्धियां अपने स्थान पर दो मजबूत रगों के द्वारा जो उसके पूरे लम्बान तक जाती हैं रखा जाता है। इसमें से एक मेरुदण्ड के सामने तथा दूसरा पीछे से जुड़ता है।

[२] स्वतन्त्र फिसलने वाली संधि जो गतिशील सतह के मध्य कशेरूकाओं के वृत्त खण्ड से निकली हुई है उनमें एक फिसलने की गति होती है, जिस की दिशा तथा विस्तार उनकी मेरुदण्ड की स्थिति पर निर्भर है। गर्दन तथा कमर वर्ग के कशेरूकाओं की गति में पीठ वर्ग की कशेरूकाओं से अधिक स्वतन्त्रा है। इसके साथ प्रत्येक पीठ कशेरूकाओं में चार फिसलने वाली संधियां उनसे मिलती हुई पसलियों के लिए हैं।

नुकीला उभार [Spinous Process] तथा पास के कशेरूका के वृत्तखण्ड के बीच का स्थान पीले रंग के अत्यन्त मजबूत रगों से भरा है जो साधारण रगों की तरह नहीं होती है किन्तु अत्यन्त लचीली होती है। यदि यह रग लचीली न हो तो मेरुदण्ड के सामने की गति असम्भव हो जायेगी।

पसलियों की सन्धि [Rib Joints]—प्रत्येक पसली का सिरा तथा गर्दन दो फिसलने वाली स्वतन्त्र गति संधि शरीर के साथ तथा उसी के विपरीत पीठ वर्ग के कशेरूकाओं का तिरछी व्यवस्थित प्रकार के साथ बनाती हैं। प्रत्येक पसली की गति में अपने प्रकार तथा विस्तार होते हैं किन्तु सांस लेने की क्रिया में सबकी गति संयुक्त होती है। सांस लेने में वक्षस्थल [Thorax] का घेरा बढ़ जाता है। सांस छोड़ने में घेरा कम हो जाता है। सांस लेने में पसलियों, पसलियों सम्बन्धी मुरमुरी हड्डियां तथा वक्षोस्थि की संयुक्त गति होती है, वक्षस्थल के सामने तथा बगल की दीवार की गति ऊपर सामने तथा बाहर की ओर होती है। सांस छोड़ने में इसके विपरीत होता है।

स्कंध मेखला की संधि [Joints of the Shoulder Girdle]–

वक्षोस्थि तथा अक्षकास्थि के बीच की संधि स्वतन्त्र सरकने वाली सन्धि है। केवल यहीं स्कंध मेखला धड़ के साथ घूमता है। इस सधि के कारण अक्षकास्थि स्वतन्त्रता से चारों ओर घूमता है। अक्षकास्थि का बाहरी सिरा स्कंधास्थि के साथ स्वतन्त्र गति संधि बनाता है जिसके द्वारा फिसलने की गति होती है। इन दोनों उपरोक्त संधियों पर बहुत जोर पड़ता है इसलिए बहुत मज़बूत रग सहायता करती हैं।

स्कंध सधि [Shoulder Joint] –यह गोल व खत्तीदार सन्धि है जो प्रगण्डास्थि व स्कन्धास्थि के मेल से बनता है। बनावट की दृष्टि से यह एक बलहीन सधि है तथा अपनी शक्ति के लिए जिससे इसको शक्ति मिलती हैं, रगों से अधिक अपने चारों ओर घिरे हुये मांसपेशियों पर निर्भर है। पूरी सन्धि एक थैली में बन्द रहती है तथा कुछ रगों से जो सामने तथा ऊपर हैं अपनी शक्ति पाती हैं। सात मुख्य मांसपेशियां अपना सहारा विशेषकर सन्धि थैली के ऊपरी हिस्से में देती हैं। थैली का निचला भाग अल्प सुरक्षित है अतएव जब कंधे का जोड़ उखड़ जाता है तो निचली कमजोर थैली के हिस्से के कारण होता है।

कोहनी की संधि [The Elbow Joint]– यह कब्जेदार संधि है। प्रगण्डास्थि का निचला भाग, अन्त प्रकोष्ठि का ऊपरी सिरा तथा प्रकोष्ठास्थि के सिर की गति से बनता है। इसकी दो गतियां हैं फैलना तथा सिकुड़ना।

प्रकोष्ठास्थि तथा अन्तः प्रकोष्ठास्थि की सधि [Joints between Radius and Ulna]– प्रकोष्ठास्थि तथा अन्त: प्रकोष्ठास्थि के बीच की ऊपरी तथा निचली गति दोनों अपने केन्द्र पर घूमने वाली सन्धि हैं। ऊपर की सन्धि में प्रकोष्ठास्थि की गर्दन एक रगों के वृत्ताकार के अन्दर घूमती है तथा निचली सधि में प्रकोष्ठास्थि का सिरा अन्त: प्रकोष्ठास्थि के चारों ओर घूमता है।

कलाई की संधि [Wrist Joint] यह फिसलने वाली डंडी की संधि है जो प्रकोष्ठास्थि के निचले भाग, मुरमुरी हड्डी की एक गोलाई जो अन्त: प्रकोष्ठास्थि के निचले हिस्से से मिलती है तथा मणिबन्ध अस्थियों के ऊपरी आकार से बनी हैं। यह संधि के दोनों ओर आगे तथा पीछे रगों से मज़बूत किया हुआ होता है।

कूल्हास्थियों की संधि [The Hip Joint]–यह एक गोली के समान तथा खत्तोदार सन्धि है जो असीटाबलम [Acitabulum] के कटोरे की भांति गड्ढे तथा उर्वास्थि के सिरे से बनता है। यह एक मज़बूत थैली और रगों से घिरी है जिसके ऊपर यह विशेषकर अपनी स्थिरता के लिए निर्भर है। कूल्हास्थि सन्धि के सामने की रगें शरीर में सबसे मज़बूत हैं।

घुटनों की सन्धि [The Knee Joint] घुटने की सन्धि उर्वास्थि और जंघास्थि के ऊपरी हिस्से की दो हड्डियों से बनी है। दो अर्धचन्द्राकार रूप में रगों के टुकड़े जंघास्थि के ऊपरी हिस्से से मिली है। इन रगों का उद्देश्य हड्डियों की सतह तथा जंघास्थि के बीच एक चिकनी तथा सही बैठने वाली गति देने का है।

घुटने की सन्धि में एक ढीली थैली है जो एक मज़बूत रग से दोनों तरफ सहारा पाती है। दो मज़बूत रगें भी जंघास्थि से निकलती हैं तथा उर्वास्थि की हड्डियों के बीच संयुक्त होती हैं तथा ये रगें सन्धि के मध्य के ऊपर आड़ी तरह से इस प्रकार स्थित हैं जिससे ये सन्धि की गति में बाधक नहीं होती हैं तथा उर्वास्थि को जंघस्थि के ऊपर या आगे फिसलने से बचाती हैं। घुटने की सन्धि के सामने का भाग बहुत मज़बूत मांसपेशियों के मिश्रित स्नायु से जो घुटने तक फैलता है सहारा पाता है। घुटने की गोल हड्डी Patella जो इस स्नायु के अन्दर स्थित है दोनों हड्डियों के बीच की नली के साथ चलता है। घुटने की संधि सब से असुरक्षित संधि मालूम पड़ती है क्योंकि बोझा उठाने का टिकाव जो शरीर की दो सबसे बड़ी हड्डियों से दिया जाता है वह बहुत अधिक है। सन्धि सतह आपस में समीप संगठित नहीं है तथा जो गति उससे उत्पन्न होती है वह अधिक है। तो भी यह सन्धि अत्यन्त मजबूत है क्योंकि इसे शक्तिशाली रगों तथा मांसपेशियों से जो इसके चारों ओर हैं सहारा मिलता है।

जब ज्यादा चोट पहुंचती है तभी यह सन्धि भंग होती है। घुटनों में पानी की अवस्था [Synovitis] अत्याधिक साइनोवियल, तरल पदार्थ [Synovial fluid] के छूटने में होता है जो घुटनों की बीमारियों या चोट के कारण होता है। जहां भी साइनोवियल झिल्ली हो वहां यह हो सकता है, अर्थात् किसी भी स्वतन्त्र गति प्रकार की सन्धि में हो सकता है। साधारणतः यह

घुटने में देखा जाता है, घुटने की रगें प्राय: खराब हो जाती हैं। इस अवस्था में वे सन्धि के प्राकृतिक गति में बाधक हो सकती हैं। जब एक पैर का घुटना मुड़ा हुआ मजबूती से ज़मीन पर रहता है तथा ऐसी ही अवस्था में यदि शरीर की प्रचंड गति हो तो मुरमुरी हड्डी को क्षति पहुंच सकती है। मुरमुरी हड्डी की क्षति से घुटना बांधा जा सकता है।

टखने की संधि [The Ankle Joint]–टखने की संधि जंघास्थि के निचले हिस्से तथा अनुजंघास्थि के निचले हिस्से तथा टार्सस [Tarsus] के घूमने वाली सतह से बनता है। यह एक कब्जेदार सधि है तथा इसकी थैली को मज़बूत रगों से दोनों ओर सहायता मिलती है जिसमें छोटी रगें पीछे तथा सामने रहती हैं। बगल की रगें कभी-कभी टखनों के घूम जाने से टूट जाती हैं। अधिकतर यह ठीक रहती है किन्तु हड्डी का एक टुकड़ा अनुजंघास्थि के निचले हिस्से को फाड़ लेती है।

शारीरिक आसन

शारीरिक आसन के दोष मनुष्य के क्रमिक विकास के द्वारा, दो पैरों पर खड़े होने के कारण हुआ। यह अवस्था कठिन है तथा सम्पूर्ण शरीर का भार केवल पैरों पर संतुलित रहता है। शरीर को ऊपर उठाकर रखने में कठिनाई होती है अतएव व्यक्ति विश्राम की अवस्था लेना चाहता है तथा ऐसी अवस्था लेता है जिसमें शरीर अपनी प्राकृतिक रेखाओं तथा मोड़ या सिधाई के अनुसार स्थित नहीं रखा जाता। कुछ ससय तक इसी प्रकार करने से एक मांसपेशियों की आदत बन जाती है और शरीर के स्वाभाविक आकार से ढाँचा या आसन भिन्न हो जाता है।

उचित आसन में शरीर इस प्रकार सधा रहता है कि वह प्रत्येक अवस्था में शरीर के प्राकृतिक आकार एवं आधार जो क्रमिक विकास से प्राप्त है प्रयोग करता है। उचित आसन से शरीर स्वस्थ, सुन्दर, सुडौल तथा स्वाभाविक रहता है। सही सीधा खड़े होने का आसन केवल शारीरिक योजना का ही द्योतक नहीं वरन् दूरदृष्टि, साहस, आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता, उत्तम चरित्र, निर्भयता, निष्कपट भावना आदि का प्रतीक है। अनुचित आसन

के द्वारा शारीरिक एवं चारित्रिक दोष दोनों प्रतीत होते हैं। ऐसे आसन से अस्वस्थता, निराशा, कपट की भावना तथा अन्य चरित्र के दोष बोधित होते हैं।

अनुचित आसन के कारण :—साधारण अवस्थाओं के कारण जिनके द्वारा मांसपेशियों की तथा शारीरिक निर्बलता होती है जैसे शीघ्रता से बढ़ना, आवश्यकता से अधिक कार्य करना, घर तथा पाठशाला में दूषित वायु का सेवन, रोग, साधारण स्वास्थ्य का अभाव, असंतुलित भोजन, सही आसन का उचित ज्ञान न होना, व्यायाम तथा खेल में भाग न लेना— दृष्टि का विकार, मेज एवं कुर्सी का ठीक न होना, किसी विशेष अवस्था में अधिक देर कुछ दिनों तक रहना, ठीक नाप के कपड़े न होना, श्रवण की कठिनाई, किसी चोट आदि कारण से अस्थियों का उचित बढ़ाव न होना, सही न बैठना, एक पैर पर भार देकर चलना एवं खड़ा होना, सोने की गलत चारपाई, एक हाथ के नीचे पुस्तक या सामान आदि दबाकर सदैव रखना, मानसिक थकावट, शारारिक थकावट आदि ।

आसन के दोषों का अवरोध एवं रक्षा :—प्रत्येक शिक्षक को उचित आसन का ज्ञान होना चाहिए जिससे अनुचित आसन के देखते ही वे उसे पहचान कर सही करें। बालक को प्रभावपूर्ण तथा रुचिकररूप में विभिन्न प्रदर्शनों के माध्यम से आसन के दोष एवं गुण बताये जायें तो बालक का ध्यान इस ओर आकर्षित होगा। स्कूल की अवस्थाओं के कारण यदि आसन पर कोई प्रभाव पड़ता हो तो उसे दूर करना चाहिए। क्रमिक विकास के लम्बे इतिहास में मनुष्य के सीधे खड़े होने का आसन अभी हाल ही में प्राप्त हुआ है। सीधे खड़े होने का क्रमिक विकास समाप्त हो गया है या नहीं कहना कठिन हैं। कुछ ऐसे परिणाम दिखाई देते हैं जिससे पता चलता है कि यह अभी समाप्त नहीं हुआ है। इस आसन की एक असुविधा यह है कि शरीर के ऊपरी अवयव शरीर के सामने के हिस्से को सम्भालने के बदले उन्हें ही स्वयं सम्भालना पड़ता है। यह अधिक भार धड़ के ऊपरी हिस्से के द्वारा सम्भाला जाता है। यदि वे मांसपेशियां जो स्कंध मेखला को सहारा देती हैं, निर्बल हो जायें जिससे वे आगे की ओर झूल जायें तथा अपना भार वक्षस्थल की दीवारों पर डाल दें, तो परिणाम स्वरूप श्वास क्रिया में बाधा पहुँचेगी तथा शारीरिक आसन का दोष उत्पन्न होगा।

आसन की मांसपेशियाँ:–आसन की मांसपेशियां शरीर के सामने तथा पीछे होती हैं। यह समझना आवश्यक है कि वे मांसपेशियां जिनके द्वारा सीधा आसन सम्भालता है उनका उद्गम नीचे के भाग में होता है तथा एक पर दूसरी हड्डी का संतुलन करने की चेष्टा करता है। पैर की मांसपेशियाँ पैरों में मेहराब को स्थिर करती हैं जिसके द्वारा एक मज़बूत आधार बन सके। जंघास्थि के सामने तथा पीछे की मांसपेशियां जंघास्थि को पैरों पर स्थिर करती हैं। उर्वास्थि, जंघास्थि के सामने तथा पीछे की मांसपेशियां जंघास्थि को पैरों पर स्थिर करती हैं। उर्वास्थि, जंघास्थि के सामने चतुर्शिरस्का [Quadriceps] तथा पीछे गास्ट्रोनेमियस [Gastronemins] के द्वारा संतुलित होता है। कूल्हा मेखला की स्थिति उदर की मांसपेशियों के द्वारा स्थित की जाती है। मेरुदण्ड, कूल्हा मेखला के स्थिर आधार पर रीढ़ की प्रसरण पेशियां, उदर की दीवारों की मांसपेशियों तथा गर्दन की मांसपेशियों के द्वारा संतुलित होता है।

आसन के दोष-(१) मेरुदण्ड में विशेष मोड़ [Spinal Curvature] का न होना। इस तरह के लोग दो हिस्सों में विभाजित किये जा सकते हैं। अकड़े जोड़ वाले [Stiff Jointed] तथा ढीले जोड़ वाले [Loose Jointed] इनके सुधार के लिए निम्नलिखित व्यायाम के प्रकार हैं।

[i] स्वयं किये जाने वाले व्यायाम [Active Exercise] जो बिना किसी की सहायता के किया जाता है। कक्षा में विद्यार्थी सीखता है तथा अभ्यास करता है।

[ii] सहायता के द्वारा [Assistive] करने वाले व्यायाम जिनमें शिक्षक विद्यार्थी को करने में सहायता देता है।

[iii] बाधा के द्वारा [Resistive] व्यायाम जिनमें मांसपेशियां बाधा के विरोध मे सिकुड़ती हैं जिनके द्वारा व्यायाम होता है।

[iv] जिनमें स्वयं व्यायाम नहीं होता किन्तु कराया जाता है [Passive] इस प्रकार में जिसे व्यायाम करना है वह स्वयं नहीं करता किन्तु उसके लिए व्यायाम कर दिया जाता है। यह क्रिया दूसरे के द्वारा या किसी यन्त्र के द्वारा करायी जाती है। कंधे की कसरत या रीढ़ की हड्डी के

व्यायाम में क्रिया साथियों के द्वारा करायी जाती है।

[अ] गोल कंधे [Round Shoulders, Kyphosis] इसमें रीढ़ की हड्डी बाहर की ओर झुकती है। पीठ कशेरुकाओं में अधिकता से मोड़ हो जाता है, सिर आगे को झुका हुआ होता है, प्यूबिस [Pubis] आगे झुका हुआ, घुटना फैला तथा अंदर घूमा हुआ तथा पैर अधिकता से बाहर की ओर खुले होते हैं। इसके कारण हैं, गलत आसन की आदतें, मांसपेशियों की निर्बलता, तेजी से बढ़ना जिसमें हड्डियाँ पेशियों से अधिक शीघ्रता से बढ़ती हैं जो मांसपेशियों के संतुलन और अच्छे आसन के धारण करने में बाधक होती हैं। रिकेटस् [Rickets] बड़ा सिर, निकला हुआ पेट, दबी हुयी पसलियां, कुबड़ी पीठ तथा रीढ़ का क्षय रोग भी इसके कारण होते हैं। यह लड़कियों में अधिकता से पाया जाता है क्योंकि वे लड़कों की तुलना में अधिक शीघ्रता से बढ़ती हैं। स्कूल के बाहर घर में भी वे लड़कों से अधिक काम करती हैं तथा कैलशियम के अधिक प्रयोग से हड्डी कड़ी नहीं हो पाती।

चिकित्सा-पीठ के ऊपरी हिस्से में पेशियों को छोटा तथा बलिष्ठ करता है। यदि आवश्यकता हो तो सीने की मांसपेशियों को मज़बूत करना चाहिए। सिर की स्थिति, गोल पीठ और कंधे, प्यूबिस का झुकाव और पैरों पर बराबर भार न देने पर ध्यान देना चाहिये।

व्यायाम—व्यायाम लेट कर किया जा सकता है। व्यायाम करते समय बालू का तकिया स्कंध मेखला के नीचे रखना चाहिए। चलते समय सिर ऐसी अवस्था में रखना चाहिये जिससे आंखों से आगे उनकी सतह से कुछ ऊपर देखें। वालबार[Wall bar] पर कंधे की कसरत अत्यन्त लाभदायक होगी। साधारण व्यायाम जैसे [१] पीठ पर लेट कर दाहिने हाथ को पेट पर रख कर उसे दबाकर तथा सीना ऊपर उठाना चाहिए। [२] हाथ बगल में करके पीठ पर लेटना, हाथों को सीने पर लाकर कोहनी को ज़मीन की तरफ दबाना चाहिए जिससे ऊपरी पीठ की पेशियां सिकुड़ें।

[ब] मेरुदण्ड का अधिकता से अन्दर झुकाव [Lordosis] लोरडोसिस' में रीढ़ की हड्डी अत्यंत अन्दर की ओर झुक जाती है। इसके साथ तोंद भी बाहर निकला हुआ होता है तथा सिर आगे की ओर झुका हुआ होता है।

कूल्हा पीछे खींचा हुआ तथा घुटना अधिक खुला हुआ होता है। यह दोष अधिकतर मांसपेशियों की निर्बलता के कारण तथा थकान के कारण होता है। आसन की बुरी आदत, कूल्हे का अपने स्थान से हट जाना, कूल्हे की संधिका रोग तथा रिकेट्स आदि भी इसके कारण हैं।

चिकित्सा—पीठ में निचले हिस्से की मजबूती तथा उदर की पेशियों की मजबूती आवश्यक है। कूल्हे को तथा घुटनों को सही स्थान पर लाना चाहिये लम्बी रीढ़ की मांसपेशियों को लम्बा करना और कूल्हे की मांसपेशियों को भी लम्बा करना चाहिए। जांघ की रगों को छोटा करना चाहिये।

व्यायाम—लेटकर उठ बैठना, घुटने मुड़े हुए हों। लेटकर धड़ के नीचे के हिस्से को एक ओर से दूसरी ओर घुमाना, घुटने मुड़े हुए हों। कूल्हे को पीछे खींचना, घुटने मुड़े हुए हो। पेट के बल लेट कर पीठ के पीछे के खाली स्थान को किसी कड़े फर्श के ऊपर दबाना। गोल कंधे के सम्पूर्ण व्यायाम किये जा सकते हैं। स्टूल पर बैठकर शरीर को आगे झुकाना तथा जमीन छूना, पीठ सीधी रखकर ऊपर उठना, खड़े होकर आगे झुकना फिर वापस आना।

[स] रीढ़ की हड्डी का बगल से अन्दर मुड़ना [Scoliosis]–इसमें रीढ़ की हड्डी बगल से अन्दर की ओर झुकती है। कंधा झुक जाता है तथा कूल्हा एक ओर ऊँचा हो जाता है। हाथ तथा शरीर का कोण एक ओर अधिक होता है। यह दो प्रकार का होता है। आसन के कारण तथा बनावट के कारण पहला प्रकार व्यायाम से सही हो सकता है किन्तु दूसरा प्रकार ठीक करना कठिन है। मांसपेशियों की निर्बलता, सही तथा ठीक मात्रा में भोजन न मिलना, रिकेट्स, रीढ़ की हड्डी का रोग, लकवा आदि कारण से होता है। जहां रीढ़ की हड्डी का रोग होगा वहां किसी प्रकार का व्यायाम करना उचित नहीं।

चिकित्सा—शरीर का साधारण स्वास्थ्य ठीक रखना तथा शरीर के लचीलेपन को संतुलित रखना चाहिये। मांसपेशियों की साधारण मजबूती तथा नई मांसपेशियों की आदत बनाना जिससे शरीर के दोनों हिस्सों में संतुलन प्राप्त हो।

व्यायाम—साधारण रीढ़ की हड्डी का व्यायाम। बीम [Beam] पर

लटकने का व्यायाम । ब्रेस्ट स्ट्रोक से पानी में तैरना लाभदायक होता है । अपने स्थान पर दौड़ना । कमर बगल में झुकाना तथा वापस आना । हाथ मोड़कर खड़े होना, हाथ ऊपर उठाना तथा पंजों पर उठना चाहिए ।

(२) **चपटा पैर**–कभी-कभी पैरों से बड़ी कठिनाई होती है क्योंकि यह पूरे शरीर के भार को अपने ऊपर अधिकांश समय रखता है । इससे पैरों के मेहराब में हानि होती है । इसके दो मुख्य प्रकार हैं । लम्बे गिरने वाला मेहराब जिसमें पूरा तलवा चपटा हो जाता है तथा पैर आड़े तिरछे गिरते हैं । पैर के मेहराब के ठीक न होने के कारण पैर के अन्दर का हिस्सा ज़मीन पर चपटा पड़ता है । दूसरे प्रकार का दोष यह है जिसमें एड़ी बाहर की ओर गिरती है । ऐसे व्यक्ति के अंगूठे चलने के समय बाहर की ओर गिरते हैं । इसके कारण आसन में कड़ापन आ जाता है तथा तलवे में दर्द मालूम होता है । पैरों की पेशियों की निर्बलता, पैरों पर आवश्यकता से अधिक ज़ोर पड़ना, गलत नाप के जूते पहनना, अंगूठों को बाहर निकालते हुये चलने की आदत आदि इसके मुख्य कारण हैं ।

चिकित्सा–जूतों को आवश्यकता के अनुसार सही बनवाना, मालिश तथा पैरों की कसरत लाभदायक होगी ।

व्यायाम—पैरों से एक दूसरे के समानान्तर चलना । पैरों के बगल के हिस्से पर चलना । एड़ी और उंगलियों पर चलना, उँगलियों से ज़मीन पकड़ कर एड़ी पर चलना । ढलान पर चलना । उँगलियों पर घुटना मोड़कर चलना । एक पैर पर संतुलन करना । पैरों से छोटी चीज़ उठाना । खड़े होकर पंजों पर उठना ।

(३) **तोंद** (Visceroptosis) —इसमें पेट की मांसपेशियां ढीली पड़ जाती हैं तथा अधिक चर्बी के जमा हो जाने से पेट आगे की ओर गुब्बारे की तरह निकल आता है ।

बैठकर व्यवसाय, आवश्यकता से अधिक भोजन, शारीरिक अस्वस्थता, चिकनी तथा मीठी चीज़ों का अधिक खाना, व्यायाम एवं परिश्रम न करना इस के मुख्य कारण हैं ।

चिकित्सा—भोजन में चिकनी वस्तु बिलकुल नहीं होनी चाहिये। अधिकांश हरी सब्ज़ी आदि खाना, आवश्यकता से कम खाना। संतुलित भोजन जिस में आवश्यकता अनुसार कैलोरिज़ प्राप्त हों किन्तु श्वेतसार एवं वसा न हो। उचित व्यायाम करना।

व्यायाम—कायफोसिस के सम्पूर्ण व्यायाम किये जा सकते हैं। आसन के साधारण व्यायाम, पेट के व्यायाम। लेट कर उठना। खड़े हो कर पैरों के बीच से हाथ पीछे ले जाना, दौड़ना, पैरों में फासला कर ज़मीन छूना आदि।

सही आसन—(१) सही खड़े होने का आसन सरल एवं परिश्रम रहित होना चाहिये। शरीर की पूरी लम्बाई हो, पिछली रीढ़ की हड्डी का मोड़ सही हो, सीना ऊँचा, पेट की मांसपेशियां अन्दर की ओर, घुटने पीछे तने हुए, तलवे की गोलाई तथा एड़ी पर भार, पैरों के अंगूठों के बीच मुट्ठी के बराबर दूरी हो तथा दोनों पैरों पर समान भार हो। कंधे, घुटने तथा नितम्ब एक ही सीध में दिखाई देते हों।

(२) सही बैठने का आसन ऐसा हो जिसमें पेल्विस तथा पूरी जांघ बैठने के स्थान पर हो। मेरुदण्ड सीधा होना चाहिए। सिर, कधा ऐवं नितम्ब एक सीध में होने चाहियें। कमर कुर्सी से मिली होनी चाहिए।

———

३

मांस संस्थान

मांस पेशियां [Muscles]—शरीर का ४५ प्रतिशत वजन मांसपेशियों का है। मांसपेशियां तीन प्रकार की हैं :—[१] जो अस्थि पंजर की अस्थियों की गति इच्छानुसार करती है उन्हें ऐच्छिक मांसपेशियां कहते हैं।

[२] जो आंतों, मूत्राशय, धमनी तथा दूसरे अंगों की बनावट पर मांसपेशियों का जमाव करती है यह ऐच्छिक नियन्त्रण में नहीं होता है। इन्हें अनैच्छिक अथवा स्वतन्त्र मांसपेशियां कहते हैं।

[३] जो धारीदार होती हैं किन्तु अनैच्छिक होती हैं ऐसी मांसपेशियां केवल हृदय में पाई जाती हैं।

मांसपेशियों की बनावट—ऐच्छिक मांसपेशियां अनेक रगों से बनी हैं। रगें १ १/२" लम्बी होती हैं तथा बाल के बराबर मोटी होती हैं। इसमें आड़ी धारियां होती हैं जो अनैच्छिक मांसपेशियों में नहीं पाई जाती हैं। प्रत्येक रग एक लचीले खोल से ढका है तथा दूसरी रगों से जुड़ा हुआ होता है जिससे लम्बी लड़ी बन जाती है तथा समानान्तर गट्ठों में सजी रहती हैं।

प्रत्येक रेशे में रक्त नालियां एवं स्नायु सूत्र उपस्थित रहते हैं। इसके बनावट में तीन भाग होते हैं। दोनों सिरों पर संकुचनशील कोष (Contractile Cells) के स्थान पर रेशा कोष [Fibre Cells] होते हैं। बीच के भाग को उदर या Belly कहते हैं। रेशा कोष मांसपेशियों को अस्थि से मिलाकर रखते हैं जिसे कंडरा [Tendons] कहते हैं। पेशियों के स्थिर रहने वाले सिरे को उद्गम तथा दूसरे सिरे को गतिशील अस्थि से मिलाता है उसे प्रवेशन कहते हैं।

मांसपेशियों का कंडरा [Muscle Tendon]– प्रत्येक मांसपेशी का सिरा अस्थियों अथवा दूसरी बनावट से संयुक्त है । यह जोड़ मज़बूत सफेद रगों का है जिसे कंडरा कहते हैं अथवा मांसपेशियों की रगों से सीधे जुड़ते हैं । साधारणतः मांसपेशियों का अन्त जो धड़ के समीप है, या तो अपनी मांसपेशियों की रगों से जुड़ा है या छोटे कंडरों से, किन्तु सिरा धड़ से कुछ हट के एक कंडरा से जुड़ा रहता है जो एक बड़ी लम्बाई का होता है । कंडरों के द्वारा छोटे दायरे में ताकतवर मांसपेशियों की शक्ति का प्रभाव होता है । कंडरों के द्वारा मांसपेशियों को दूर से काम करने की शक्ति मिलती है ।

मांसपेशियों का उद्‌गम तथा प्रवेशन [The origin and Insertion of muscles]–ऐच्छिक मांँसपेशियों का मुख्य कार्य शरीर में गति उत्पन्न करना, नियंत्रण करना, तथा अस्थिपंजर पर प्रभाव डालकर शरीर के प्राकृतिक आसन को सम्भालना है । प्रत्येक मांसपेशी साधारणत: जिस मांसपेशी को गति प्रदान करती है वह कंडरा के द्वारा जुड़ती है । जुड़ने के स्थान को 'प्रवेशन' कहते हैं । अपने दूसरे सिरे पर मांसपेशी कंडरा के साथ अथवा बिना कंडरा के दूसरी हड्डी के साथ या दूसरी बनावट के साथ स्थित रहता है, इस जुड़ने के स्थान को 'उदगम' कहते हैं । सब मांसपेशियों का ऐसा सरल उदगम तथा प्रवेशन नहीं होता है क्योंकि उनकी शक्ल, डील तथा स्थिति एक सी नहीं होती है ।

मांसपेशियों की उलटी क्रिया [The reverse action of muscles]—साधारण कार्य, मांसपेशियों का सिकुड़न करना है जिसके द्वारा उदगम तथा प्रवेशन के साथ आपस में एक दूसरे की ओर खिंचते हैं । इस कारण मांसपेशियां उलटा असर भी कर सकती हैं यदि वह हड्डी जो गति प्रदान करती है, स्थित है जैसे दरवाजा खोलने में हाथ की गति से दरवाजा शरीर की ओर खिंच जाता है । किन्तु यदि दरवाजा बन्द है तथा खोलने की चेष्टा की जा रही है तो हाथ तथा बांह स्थित रहते हैं तथा शरीर दरवाजे की ओर खिंच जाता है ।

मांसपेशियों का आलम्ब के द्वारा कार्य [Liver action of muscles]—मांसपेशियां शरीर में इस प्रकार स्थित हैं कि वे थोड़ी जगह में ज्यादा असर पैदा कर सके । यह बचत केवल टेकन तथा घिरनी के द्वारा होती है ।

एक से अधिक जोड़ों पर मांसपेशियों का प्रभाव [Muscles acting

upon more than one joint]—बहुत से उदाहरण ऐसे हैं जहाँ मांसपेशियाँ एक से ज्यादा जोड़ों पर कार्य करती है। मांसपेशियाँ एक ही प्रकार गति कर सकती हैं जैसे दोनों जोड़ पर संकुचन या एक पर संकुचन तथा दूसरे पर प्रसरण। दो विभिन्न प्रकार की गति एक ही साथ या पृथक हो सकती है जैसे लम्बे कंडरे जो उंगलियों का संकुचन करती है अनेक जोड़ों से होकर जाती है और प्रत्येक में वही गति उत्पन्न करती है।

चतुर्शिरिसका मांसपेशी जिसका उद्‌गम कूल्हास्थि के सामने से होता है कूल्हे का संकुचन कर सकती है और घुटने का प्रसरण करती है। दौड़ने या चलने में ये दोनों कार्य करती हैं। जब घुटने का जोड़ स्थिर रहता है तो कूल्हे का संकुचन करती है यदि कूल्हे का जोड़ स्थित हो तो घुटने का प्रसरण करती है।

मांसपेशियों के कार्य के प्रकार [Types of muscular work]:—साधारण कार्य सिकुड़न का है। जिससे उद्‌गम तथा प्रवेशन आपस में भी खिंच जाते हैं ऐसा कार्य बीच का Concentric कहा जाता है।

जब मांसपेशियां देखने में न छोटी होती है न लम्बी होती है तो इसे स्थित Static कहते हैं। जब मांसपेशियां किसी बाधा के कारण खिंची हुई अवस्था में निर्बल हो जाती हैं तो इसे अव्यवस्थित [Eccentric] कहते हैं।

गति का स्रोत मांसपेशियों तथा संधि होती हैं। सम्पूर्ण स्वस्थ मांसपेशियां तथा संधि अपने पूर्ण योग्यता से कार्य कर सकते हैं। साधारणतः दैनिक जीवन में मांसपेशियां अपने पूर्ण खिचाव की योग्यता के अनुसार कार्य नहीं करते क्योंकि इसकी विशेष आवश्यकता नहीं होती। यह केवल व्यायाम से ही सम्भव हो सकता है।

मांसपेशियों के गुण

[i] **खींचे जाने का गुण** [Extensibility]—इसके द्वारा मांसपेशियां खींची जा सकती है। यह किसी बाहर के प्रभाव से सम्भव होता है। जब तक बाहर का प्रभाव नहीं पड़ता ये अपने आप इतनी नहीं खिचतीं।

मोहर लगाने के चपड़े भी एक अवस्था में खिचाव का गुण रखते हैं किन्तु उन में लचीलापन [Elasticity] नहीं होता। किन्तु यह गुण मांसपेशियों में होता है। अस्थि की मांसपेशियां अपने प्रवेश तथा उद्गम के बीच खींचे जाते हैं। युवा अवस्था में यह गुण विशेष होता है। बढ़ती हुयी आयु में मांसपेशियों का टूटना [Rupture] तथा भार [Strain] अधिक होता है।

[ii] **लचीलापन** [Elasticity]—यह केवल जीवित मांसपेशियों में पाया जाता है। यह वह गुण है जिसके कारण मांसपेशियां खिचाव के पश्चात अपनी वास्तविक अवस्था में आ जाती हैं। रोग आदि के कारण इस गुण का नाश हो सकता है।

[iii] **सिकुड़न** [Contractibility—यह एक विशेष शक्ति है जो मांसपेशियों में जमा रहती है। इसी के कारण मांसपेशियों की उत्तेजना पर प्रतिक्रिया होती है। मांसपेशियों का सिकुड़न स्नायुविक उत्तेजना के कारण होता है। उपयुक्त गति के लिए पर्याप्त स्नायुविक उत्तेजना की आवश्यकता होगी। यह प्राय: ५० प्रति सेकेंड होते हैं। सिकुड़न के समय मांसपेशियों में कड़ापन उद्गम एवं प्रवेश के बीच के खिचाव के कारण मालूम होता है। मांसपेशियों का शक्तिशाली खिचाव गति के आरंभ एवं अन्त की तुलना में मध्य में होता है।

मांसपेशियों की दशा [Muscles Tone]—मांशपेशियों की दशा [Tone] का अर्थ है कि मांसपेशियों के कुछ तत्व जिसकी वह बनी हुयी होती है एक ही साथ सिकुड़न होती है तथा इनके बदले में थोड़ी थोड़ी देर पर उतनी ही संख्या में दूसरे तत्व कार्य करते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि कोई दो तत्व का समूह एक साथ ही कार्य के लिए तैयार नहीं होता। यह दशा जीवित मांसपेशियों में सदैव प्रस्तुत रहती है। विश्राम की अवस्था में भी यही दशा होती है। शरीर के विभिन्न आसनों के साथ इसमें परिवर्तन होता है। खड़े होने की अवस्था में यह सर्वोच्च होता है। मांसपेशियों में पौष्टिक सामग्री के द्वारा जो परिवर्तन होते हैं वह उस समय उत्तम होते हैं जब मांसपेशियों की यह दशा ऊँची होती है तथा इनके द्वारा अधिक शक्ति का प्रवाह होता है। जब दशा अच्छी नहीं होती तो यह कम होती है। किसी चीज में रुचि के कारण

दशा में वृद्धि होती है। दशा के परिवर्तन के कारण ऐच्छिक गति में वृद्धि होती है तथा उतनी ही कमी विरोधी समूह में होती है। जैसे सीधे खड़े होने में सब तत्व एक साथ ही शक्ति पूर्ण नहीं होते। कुछ ढीले होते हैं तथा कुछ सिकुड़ते हैं, इस कार्य में संतुलन होता तै एवं थकान नही होती।

मांसपेशियों की सामूहिक क्रिया [Group action of Muscles]– किसी गति के करने के लिए अनेक मांसपेशियों के समूह शक्तिशाली होते हैं। सर्वप्रथम वे मांसपेशियां होती है जो गति करने के लिए छोटी होती हैं, इन्हें Agonist या प्रारंभिक गतिकार कहते हैं। इन्हें सुगमता से कार्य करने देने के लिये उतनी ही Antagonist विरोधी मांसपेशियों की दशा में कमी की आवश्यकता होती है। यह ढीलापन, गति क्रिया का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग है जिसके बिना संतुलित क्रिया का होना असम्भव है। इनके उपरान्त ऐसी मांसपेशियां हैं जिनका कार्य Agonist का उद्गम नियत करने का है जिसे Fixators कहते हैं। ऐसी भी मांसपेशियां हैं जो उन गतियों को रोकती हैं जिनकी आवश्यकता नहीं होती है, उन्हें Synergists कहते हैं। इन्ही मांसपेशियों के समन्वय एवं समायोजन के साथ के कार्य को मांसपेशियों की सामूहिक क्रिया कहते हैं।

व्यायामिक क्रिया [Physiology of Exercise]

यह बताया जा चुका है कि एच्छिक मांसपेशियां बहुत सी पेशियों के गठ्ठर से बना है जिसमें बहुत सी मांसपेशियों की रगे हैं। प्रत्येक नाड़ी तन्तु ऐक छोटी फैली हुई स्थिति में समाप्त होती है जिसे अन्त पात्र [End Plate] कहते हैं। यह नाड़ियों के अन्त होने का स्थान है तथा इसी हिस्से के द्वारा सिकुड़ने की उत्तेजना नाड़ी तन्तुओं को दी जाती है। जब कोई मांसपेशी सिकुड़ती है तो वह और चौड़ी हो जाती और आड़ी तिरछी धारियाँ आपस में समीप हो जाती हैं। जल वह ढीली होती है तो रगें पहले से सकरी हो जाती हैं तथा धारियों के बीच का स्थान भी बढ़ जाता है।

मांसपेशियों के सिकुड़न में रासायनिक परिवर्तन [Chemical changes during muscular contractions.]

अभी तक इस विषय में पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ है। मांसपेशियों में १५ प्रतिशत प्रोटीन तथा कुछ ग्लाइकोजिन [Glycogen] वसा [Fat] तथा फासफोरस [Phosphorus] होता है। जब मांसपेशियां उत्तेजित होती है, जहाँ आक्सीजन नहीं होता है वहाँ ग्लाईकोजिन चला जाता है तथा उसके स्थान में लैकटिक एसिड [Lactic acid] आ जाता है। आक्सीजन की अनुपस्थिति में बराबर उत्तेजित होने से लैकटिक एसिड जमा हो जाता है तथा मांसपेशियां अत्याधिक थक जाती हैं। आक्सीजन की उपस्थित से लैकटिक एसिड जमा नहीं हो पाता है तथा यह हटा दिया जाता है। फिर कुछ पेशियों में यह ग्लाईकोजिन में परिवर्तित हो जाता है। अतएव लैकटिक एसिड को हटाने के लिए जब कुछ देर मांसपेशियों का कार्य हो चुका हो तो आक्सीजन आवश्यक होता है। बहुत कठिन परिश्रम के व्यायाम में जितने प्राप्त आक्सीजन से लैकटिक एसिड हटाया जा सकता है उससे कहीं अधिक लैकटिक एसिड बनता है। इसलिए कुछ रक्त प्रवाह में मिल जाता है जहाँ कि वह मांसपेशियों पर दबाव नहीं डाल सकता है।

आक्सीजन की कमी [Oxygen debt]—तन्तुओं के लिए आक्सीजन की कमी हो जाती है जिसके लिए उपाय करना आवश्यक होता है जिससे लैकटिक एसिड की अधिकता हट जाये। यह मानी हुई चीज़ है कि कठिन व्यायाम के बाद श्वास कुछ मिनट के लिए साधारण स्तर से अधिक लिया जाता है। आक्सीजन जो अधिक मात्रा में लिया जाता है वह लैकटिक एसिड हटाने के लिए होता है जो थोड़ी देर के लिए रक्त में एक विशेष रासायसिक पदार्थ द्वारा कार्य हीन कर दिया जाता है ज़ब तक कि पर्याप्त मात्रा में उसको हटाने के लिए आक्सीजन फेफड़ों के द्वारा न पहुंचाया जाये।

व्यायाम से रक्त संचालन तथा श्वास सम्बन्धी परिवर्तन [Circulatory and respiratory changes during exercise]

व्यायाम के समय आक्साइड की आवश्यकता अत्यन्त बढ़ जाती है। उसी समय मांसपेशियों से कार्बन डाई आक्साइड बनाया जाता है और फेफड़ों के द्वारा बाहर निकाला जाता है। श्वास तथा रक्त संचालन एक साथ काम

करते हुए इन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपने को उनके अनुकूल बना लेते हैं।

दूसरे महत्वपूर्ण परिवर्तन–

रक्त संचालिका—(i) महाप्रचीरा के अधिक फैलाव की गति के कारण तथा साधारण मांसपेशियों के सिकुड़न से जो शिरा को दबाती है, शिरा का रक्त अधिक मात्रा में हृदय में आता है। (ii) हृदय की प्रत्येक गति पर परिमाण तथा निकसारी बढ़ जाती है जिसके कारण अधिक रक्त एक समय के इकाई में संचालन होता है। (iii) फिर से रक्त का बटवारा होता है। अधिक मांसपेशियों को रक्त जाता है और आंतों तथा त्वचा को कम। व्यायाम के समय मांसपेशियों को साधारण से १५ गुना अधिक रक्त मिलता है।

इससे हृदय शक्तिशाली होती हैं तथा अधिक प्रवाह के साथ गति की गिनती कम हो जाती है जिसका यह अर्थ है कि २४ घंटे में ३०,००० हृदय की धड़कन (Beat) में कमी हो जाती है। प्रशिक्षित एवं क्षमता प्राप्त व्यक्तियों की धड़कन ६० प्रति मिनट होती है जो अप्रशिक्षित से कम होती है। हृदय को यदि कम काम दिया जाये तो वह तेज़ी तथा कम निपुणता से कार्य करेगा। पांच मिनट के चुपचाप बैठने के पश्चात् यदि हृदय गति ८० प्रति मिनट या उससे ऊपर है तो उत्तम नहीं है।

२—**श्वास** (Respiratory)—रक्त में अधिक कार्बन डाइआक्साइड हो जाने के कारण श्वास तेज़ तथा गहरी हो जाती है, जिसका एक उत्तेजना-जनक कार्य उन नाड़ियों पर है जो श्वास को नियन्त्रित करती हैं। कार्बन डाइ-आक्साइड के गुण शिथिल करने में प्रयोग किया जाता है। यह शिथिल करनेवाले पदार्थों के साथ दिया जाता है जिससे मरीज़ गहरी सांस लेता है तथा बेहोशी की अवस्था को तेज़ी से पहुंच जाता है।

व्यायाम का मांसपेशियों पर प्रभाव (Effect of Exercise on Muscles)—गतिवाही दशा में मांसपेशियां छोटी एवं मोटी हो जाती हैं। छूने पर वे कड़ी मालूम होती हैं। वहां पर रक्त संचालन अधिक हो जाता है। मांस-पेशियाँ गर्म मालूम होती हैं क्योंकि सिकुड़न के कारण ताप बढ़ जाता है। CO_2

अधिक मात्रा में छोड़ा जाता है तथा अधिक आक्सीजन का प्रयोग होता है। Sarcolactic Acid का उत्पादन होता है तथा क्रिया के अधिक अवधि तक करते रहने से यह वहां जमा भी होता है।

बराबर एवं विधिवत व्यायाम करते रहने से मांसपेशियों में प्रगतिपूर्ण परिवर्तन होता है। उनके तत्व मोटे हो जाते हैं। इस प्रकार एक मांसपेशी जो सही अवस्था में न हो तथा निर्बल होती जा रही हो पुनः अपनी वास्तविक स्थिति एवं आकार में आ सकती है। अधिक रक्त संचालन के कारण मांसपेशियां जीवोज Muscle protoplasm जो पौष्टिक खाद्य सामग्री है वहां अधिक मात्रा में जमा हो जाता है। इस बात पर ध्यान रखने की आवश्यकता है कि मांसपेशियों पर अत्याधिक भार देते रहने से इसका उल्टा प्रभाव पड़ता है। यह भी सत्य है कि बराबर विश्राम से तथा उपयुक्त मात्रा में व्यायाम न करने से मांसपेशियों की शक्ति कम हो जाती है। रोग के कारण निर्बलता आ जाने से मांसपेशियों का कार्य भी सही रूप से नहीं हो सकता है।

जो मांसपेशियां कार्य करती हैं उन्हें रक्त संचालन की आवश्यकता होती है। साधारण व्यक्ति के शरीर में नौ प्वाइन्ट रक्त होता है। यह प्रायः शरीर के वजन का एक बटा तेरहवां मात्र भाग होता है। कार्यवाही मांसपेशियों के कारण रक्त संचालन में कुछ अन्तर हो जा जाता है। कार्यवाही मांसपेशियों को अधिक रक्त पहुँचता है तथा इस कारण दूसरे अंगों में कमी होती है। मांसपेशियों को प्रभावित करने के लिए व्यायाम जैसे दौड़ना, चलना, एक स्थान पर दौड़ना, साइकिल चलाना तथा तैरना आदि हैं। यह उस समय उपयुक्त समझा जाता है जब हृदय गति १५० प्रति मिनट हो जाती है तथा परिणाम पांच मिनट के पश्चात प्राप्त होने लगता है और उस समय तक चलता रहता है जब तक व्यायाम होता रहे। डा० केनेथ कूपर ने अपने प्रयोग से यह निष्कर्ष निकाला है कि क्षमता के लिये प्रति सप्ताह ३० प्वाइन्ट प्राप्त किया जाये। इसके लिये सप्ताह में चार बार अवश्य व्यायाम करना चाहिये। कितना व्यायाम करना चाहिये उसके जानने के लिये १२ मिनट साधारण गति से दौड़ना चाहिये। यदि थक जायें तो चलना चाहिये। १२ मिनट में १ मील तै किया तो यह बहुत कम है, १—१ १/४ मील कम है, १ १/४—१ १/२ मील साधारण, १ १/२—१ ३/४ मील उत्तम तथा

१ १/३ मील या अधिक अति उत्तम है। प्रथम तीन श्रेणियों में आने पर असफल समझना चाहिये तथा उत्तम होने की चेष्टा करनी चाहिये । चौथे एवं पांचवें श्रेणी में आकर जो १० से १६ सप्ताह के अन्दर आया जा सकता है, ३० प्वाइंट प्रोग्राम प्रति सप्ताह का रखना चाहिये । यह १० वर्ष के ऊपर की आयु के लिने कम से कम आवश्यक है ।

धड़, हाथ एवं पैर की क्रिया—

(१) **हाथ का व्यायाम**–हाथ के व्यायाम में वे सम्पूर्ण क्रियायें आती हैं जिनमें हाथ प्रयोग होता है । ये दो प्रकार के होते हैं, आसन के प्रकार एवं लचीलापन देने वाले प्रकार ।

(i) आसन के प्रकार—इसके द्वारा धड़ के ऊपरी भाग का विकास होता है । इस प्रकार के हाथ के व्यायाम से लाभ आसन को प्रभावित करने में होता है ।

(ii) लचीलेपन का प्रकार—इस प्रकार के हाथ के व्यायाम अधिकता से हैं । ये लचीलापन लाने के लिये प्रयोग किये जाते हैं । इसके द्वारा कंधे की संधि, कोहनी की संधि, कलाई की संधि तथा उंगलियों की संधि में ढीलापन आता है । तीव्रता एवं शक्तिशालीरूप से करने में स्वास्थ्य के लाभ प्राप्त होते हैं ।

हाथों के लिए डंड एक उत्तम व्यायाम है । हाथों से लटक कर शरीर ऊपर खींचना हाथों का एक अच्छा व्यायाम है ।

(२) **धड़ का व्यायाम**—वास्तविकरूप से देखा जाये तो केवल एक ही धड़ मोड़ने के व्यायाम से धड़ सम्बन्धित मांसपेशियों को व्यायाम दिया जाता है । इससे पेट एवं वक्षस्थल के लिये उत्तम व्यायाम होता है । धड़ के घुमाने की क्रिया से जीव अंगों पर उत्तम प्रभाव पड़ता है जिससे पाचन, श्वास, निष्क्रमण तथा रक्त संचालन संस्थानों की अच्छी क्रिया होती है । धड़ के घुमाने से मेरुदण्ड भी मरोड़ा जाता है जिससे (Sympathetic Nerves) क्रियाशील होती हैं । यह सर्वप्रमुख एवं महत्वपूर्ण शरीर का भाग है जिसके

व्यायाम से प्रायः सम्पूर्ण शरीर का व्यायाम सम्भव होता है। शरीर का संतुलन इसी के द्वारा प्राप्त होता है।

धड़ के बगल में मोड़ने से बगल की मांसपेशियों का व्यायाम होता है। इसके द्वारा पेट की मांसपेशियों तथा पीठ में मांसपेशियों का उत्तम व्यायाम होता है। बैठकर व्यवसाय करने वालों के लिए यह अत्यन्त लाभ कर है। दैनिक जीवन की गतियों में इसका विशेष प्रयोग नहीं होता। इसके द्वारा शरीर संतुलन का लचीलापन प्राप्त होता है।

३ **पैरों का व्यायाम**—पैरों पर कूदना, दौड़ना तथा उठाने का व्यायाम होता है।ये कूल्हे के लचीलेपन में सहायक है तथा पेट की मांसपेशियों को शक्ति प्रदान करता है। यह गर्म करने के व्यायाम तथा पैरों को शक्तिशाली करने के प्रयोग में आता है। कठिन पैरों के व्यायाम में घुटना मोड़ना, पंजों पर उठना तथा पैरों की विभिन्न गतियां आती हैं। ये शरीर के दूसरे अंगों के साथ व्यायाम में प्रयोग होता है। कठिन पैरों के व्यायाम से सम्पूर्ण शरीर का व्यायाम होता है तथा आन्तरिक अंगों की क्रिया में सहायता प्राप्त होती है। पैरों के व्यामाम से विशेष लाभ पैरों की मांसपेशियों में आकर, बल एवं समन्वय प्राप्त करने का है। इनसे अधिकता से स्वास्थ्य लाभ, लचीलापन, सामान्य मांसपेशियों की शक्ति तथा पैरों में लचीलापन प्राप्त होता है। साधारण व्यक्ति जब शारीरिक क्षमता के विषय में सोचता है तो प्रायः सदैव निचले धड़ की अवस्था को समझता है। जो दौड़ सके या कूद सके या चारो और चल कर अपना कार्य कर ले यदि वह कमज़ोर भी हो तो भी वह क्षमता प्राप्त व्यक्ति समझा जाता है। यह निश्चय है कि जिन व्यक्तियों के पैरों में बल है व उनका स्वास्थ्य अच्छा होता है, श्वास की कठिनाइयों से वे स्वतंत्र रहते हैं तथा पाचन क्रिया अच्छी होती है।

जांघों की मांसपेशियों का समूह मानव शरीर में सबसे बड़ी तथा बलिष्ठ मांसपेशियों में है। पैरों की उत्तम दशा के लिये कठिन व्यायाम होना आवश्यक है। घुटना मोड़ के बैठना एक अत्यन्त ही उत्तम व्यायाम है। खड़े होकर कूदना, 'जैक नाइफ जम्प' जिसमें ऊपर कूदना एवं पैर सीधे रखना तथा हाथों से अंगूठे को छूना भी अच्छा व्यायाम है।

माँसपेशियों के प्रकार (Types of Muscles)—मांसपेशियां दो प्रकार की होती हैं, ऐच्छिक तथा अनैच्छिक, ऐच्छिक मांसपेशियों पर व्यक्ति अपने आप नियन्त्रण करता है तथा अनैच्छिक मांसपेशियां स्वतन्त्रता से कार्य करती हैं।

हृदय की मांसपेशियों में दोनों प्रकार की मांसपेशियों की मात्रा है।

ऐच्छिक मांसपेशियां (Voluntary Muscles)— टांग, भुजा, धड़ तथा चेहरे आदि की मांसपेशियां व्यक्ति की इच्छा के अनुसार कार्य करती हैं।

(i) Flexors–इनके द्वारा मोड़ने की क्रिया तथा हड्डियों को एक साथ लाने में प्रयोग होता है, जैसे हाथ कंधों के पास आते हुये कोहनी का कार्य।

(ii) Extensor—इसके द्वारा अंग सीधा किया जाता है। हड्डियों को पृथक करने के प्रयोग में आता है। जैसे कंधे से हाथ हटाने के समय।

(iii) Adductors—धड़ के धुरे की ओर गति जो हाथ एवं पैर को नीचे उनके स्थान पर ले जाता है आदि।

(iv) Circumductors–संधि की गोलाई की गति। गति को एक स्थान पर सम्बन्धित करना जो कंधे, कूल्हे, धड़ आदि संधि में सम्भव है।

(v) Abductors—धड़ के धुरे से दूर गति का होना। जैसे हाथ समानान्तर फैलाने में होता है, पैरों का बगल में फैलाना आदि।

(vi) Supination—हड्डी को धुरे पर घुमाना जैसे हाथों को घुमाना–रेडियस को अलना पर घुमाना या मोड़ना (Rotation)

(vii) Pronation–जैसे नं० vi में किन्तु उस प्रकार हाथ को नीचे लाना।

अनैच्छिक मांसपेशियां (Involuntary Muscles)–कुछ मांसपेशियां शरीर में हैं जो व्यक्ति की इच्छा के आधीन नहीं होती हैं जैसे हृदय, आमाशय आदि। इनका संचालन स्वतन्त्र स्नायु मंडल से होता है जो जीवन पर्यन्त चलती रहती हैं।

———

४

रक्त परिभ्रमण संस्थान

शरीर के प्रत्येक श्वास एवं गति के साथ जो भोजन एवं दूषित पदार्थों में परिवर्तन होता रहता है वह एक तरल पदार्थ के माध्यम से होता है जिन्हें रक्त (Blood) तथा लसिका (Lymph) कहते हैं।

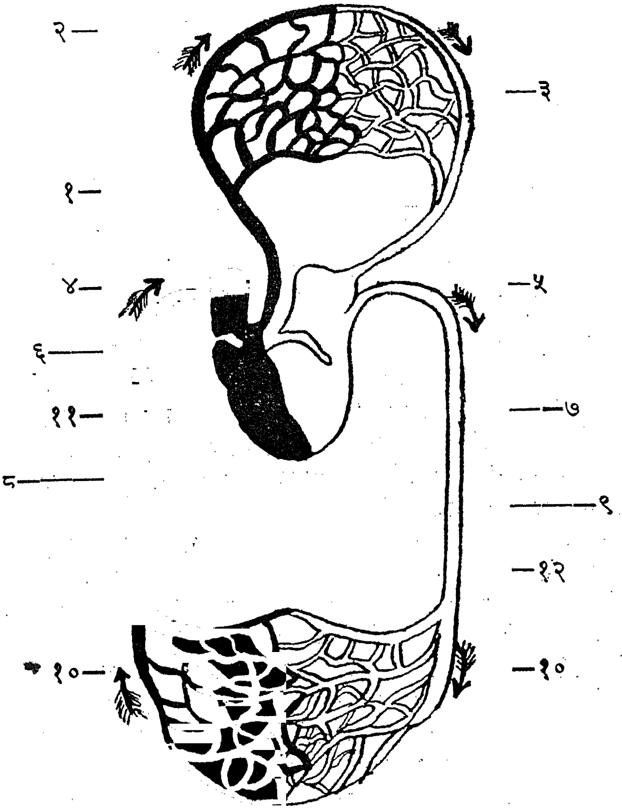

रक्त परिभ्रमण

१. फुसफुसीय धमनी, २. फुसफुसीय केशिकायें, ३. फुसफुसीय शिरायें, ४. दाहिना कोष्ठ आलिन्द, ५. बायां कोष्ठ आलिन्द, ६. दाहिना निलय, ७. बायां निलय, (नं० ४, ५, ६, ७ मिलकर हृदय बनता है) ८. Systemic Veins. ९. Aortic (वृहत्त धमनी) and Systemic Arteries. १०. Systemic Capillaries. ११ से १२. एक तिरछी लकीर पर ८ तथा ११ से मिलता हुआ Hepatic Veins, उसके बाद ऊपर Liver तथा उस के नीचे Hepatic Capillaries, उसके बाद बीच में Portal Vein तथा उस से और नं० १२ से मिलता हुआ Intestinal Capillaries, १२ से तथा Hepatic Capillaries से मिलता हुआ HepaticArtery स्थित है।

रक्त परिभ्रमण (Blood Circulation)—हृदय रक्त वाहिनी धमनी (Artery) केशिकायें (Capillary) तथा रक्त वाहिनियाँ शिरा (Veins) के द्वारा जो एक बन्द पात्र प्रणाली है रक्त पम्प करता है तथा फिर वापस लेता है। हृदय वक्षस्थल (Thorax) में दोनों फेफड़ों के बीच वक्षोस्थि (Sternum) के निचले सिरे के नीचे कुछ बायीं ओर स्थित है। हृदय एक खोखली मांसपेशियों की बनी पम्प है जो चार कोष्ठों में विभाजित है। इस में यह शक्ति है कि अपने आप को इस प्रकार सिकोड़ ले जिससे जितना रक्त उस में है, सम्पूर्ण शरीर में चारों ओर चला जाये। इसके पश्चात् वह ढीला हो जाता है जिससे रक्त फिर वापस लौट आये। यह क्रिया प्रौढ़ों में प्राय: एक मिनट में ७० से ८० बार विश्राम की अवस्था में प्रति सेकेण्ड होती हैं। ऊपरी दो कोष्ठ आलिन्द (Auricles) तथा निचले दो कोष्ठ नियल (Ventricles) कहलाते हैं। ऊपर के दोनों कोष्ठ आलिन्द पहले सिकुड़ते हैं और रक्त नीचे के दोनों कोष्ठ निलय में भेजते हैं।

शरीर के द्वारा प्रयोग किया हुआ रक्त दाहिने आलिन्द में रक्त वापस लाने वाली रक्त वाहिनियां शिरा (Veins) के द्वारा लायी जाती है। जब अलिन्द सिकुड़ते हैं तो रक्त दाहिने निलय में चला जाता है। यहां से यह फेफड़ों में रक्त पहुंचाने वाली क्लोम धमनी (Pulmonary Artery) के द्वारा फेफड़े में जाती है यहां यह हवा से आक्सीजन लेता है तथा कार्बन डाइ-आक्साइड छोड़ता है और बायें अलिन्द में बिल्कुल चटक लाल रंग का होकर वापस आता है और फिर शरीर में चारों ओर जाने के लिये तैयार हो जाता है। यहां से यह बायें निलय में भेजा जाता है जहां यह शरीर की सबसे बड़ी रक्त वाहिनी धमनी (Arta) के द्वारा हृदय छोड़ता है। यह धमनी सिर, हाथ, पैर तथा अन्य अंगों के रक्त वाहिनी धमनियों में विभाजित हो जाता है जिन्हें कोशिकायें (Capillaries) कहते हैं। ये शाखायें जैसे-जैसे हृदय के पास से आगे बढ़ती हैं पतली होती चली जाती हैं और बाल के सदृश्य पतली हो जाती हैं। इन्हीं के द्वारा समस्त शरीर में भोजन एवं आक्सीजन पहुंचता है तथा जितने भी दूषित पदार्थ Co_2 हैं ग्रहण कर लेता है। बायां निलय में मोटे एवं अधिक मांसपेशियों की दीवार होती है क्योंकि सम्पूर्ण शरीर में रक्त भेजने के लिये इसे शक्तिशाली होना आवश्यक हो जाता है।

हृदय से जाने वाला रक्त वापस लौटकर न आ सके, इसके लिए एक कपाटों (Valves) की बनावट है जो त्वचा का लटकता हुआ ढकना सदृश्य है। जैसे ही रक्त आलिन्द से निलय में जाता है, निलय रक्त के कारण उभर आता है तथा वे आपस मे एक दूसरे से मिल जाते हैं और रक्त अलिन्द में वापस जाने से रुक जाता है। पतले मज़बूत 'कोर्ड' (Cords) जो आन्तरिक हृदय की दीवारों से जुड़े रहते हैं कपाटों को स्थित रखते हैं जिससे वे अच्छी तरह लग जायें। इसी प्रकार दूसरे कार्य करने वाले कपाट जिन में 'कोर्ड' नहीं होता वे बायें अलिन्द से फेफड़े में रक्त वापस आने से रोकते हैं।

रक्त वाहिनियां धमनियों में मोटी मांसपेशियों की दीवार होती है जो लचीली होती हैं, इसी के कारण रक्त के प्रवाह में सहायता मिलती है। धमनी के इस लचीलेपन के समाप्त होने के कारण जो उसमें वसा के जमाव के कारण होता है रक्त प्रवाह में कठिनता होती है। अतएव हृदय को आवश्यकता से अधिक कार्य करना पड़ता है जिसके कारण रक्त चाप (Blood pressure) का दोष उत्पन्न हो जाता है। रक्त वाहिनियां धमनी हड्डियों के द्वारा सुरक्षित रहती हैं जिससे उन्हें चोट आदि से बचाया जा सके। बड़ी रक्त वाहिनी धमनियां आगे बढ़ती हुई पतली शाखाओं केशिकाओं (Capillaries) में विभाजित होती जाती हैं जो सम्पूर्ण शरीर में केवल कोमल अस्थियों (Cartilage) को छोड़-कर जाल की तरह फैल जाती हैं। मांसपेशियों तथा अंगों में स्पंज (Sponge) के समान केशिकाओं का जाल है जिसमें धीरे-धीरे रक्त का प्रवाह होता है। क्रमश: केशिकायें आपस में मिल जाती हैं तथा बड़ी होती जाती हैं और शिरायें (Veins) बन जाती हैं। इन में पोली पिलपिली पतली दीवारें (Flaccid Walls) होती हैं जिनके द्वारा दूषित रक्त जिस में कार्बन-डाइ-आक्साइड मिला हुआ होता है तथा काला रंग का हो जाता है, प्रवाहित होता है।

प्रत्येक धमनी के जोड़े के साथ शिराओं के दो जोड़े एक गहरा दूसरा सतह पर होता है। अन्त में शिरायें मिलकर अपना रक्त दाहिने आलिन्द में डालती हैं। मांसपेशियों के सिकुड़न से शिराओं के रक्त के प्रवाह में सहायता मिलती है। जैसे ही प्रयोग किया हुआ रक्त सिकुड़न के द्वारा शिराओं में जाता है वैसे ही आक्सीजन मिश्रित रक्त उसके स्थान में आ जाता है।

रक्त पदार्थ एवं क्रिया (Blood Constituents and function)-

रक्त, एक रंग विहीन नमकीन द्रव रक्तवारि (Plasma) से बना है जिसमें अमीनो ऐसिड्स (Amino Acids) गैस (Gases) धातु (Mineral Salts) यूरिया (Urea) तथा अन्य पदार्थ मिले हुये हैं जिनमें लाल रक्ताणु (Red Corpuscles) तथा श्वेत रक्ताणु तैरते रहते हैं। शरीर में प्राय: १० क्वार्ट रक्त होता है।

लाल रक्ताणु (Red Corpuscles)—ये पृथक-पृथक तो पीले होते हैं किन्तु समूह में लाल दिखाई देते हैं। एक बूंद रक्त में प्राय: ५,०००,००० होते होते हैं। ऐसे बूंद में १०,००० श्वेत रक्ताणु होते हैं। लाल रक्ताणु में एक पदार्थ रक्त रंजन (Haemoglobin) होता है जिस में लोहा तथा प्रोटीन की मिलावट होती है। रक्तरंजन, आक्सीजन से मिलने के लिये जो फेफड़े में हवा से लिया जाता हैं तथा तन्तुओं में दे दिया जाता है, बड़ा ही उत्सुक रहता है। लाल रक्ताणु गोल बीच में धंसे हुये टिकिया की तरह होते हैं जो किसी गोलाई से लपेटे हुए वस्तु की तरह आपस में मिले होते हैं। एक लाल रक्ताणु दिन भर में प्राय: एक मील तक चल लेता है। रक्त की एक बूंद सम्पूर्ण शरीर में १५ से २५ सेकेण्ड के अन्दर दौरा कर लेता है। वास्तविक रूप से देखा जाये तो लाल रक्ताणु जीवित नहीं होते क्योंकि उन में मींगी (Nucleus) नहीं होती इसी लिये वे प्राय: ६ सप्ताह तक जीवित रहते हैं। ये हड्डी के गूदे यकृत (Bone Marrow) में उत्पन्न होते हैं तथा तिल्ली (Spleen) में मर जाते हैं। कलेजी (Liver) इनके वहिष्कृत पदार्थ को पित (Bile) के हरे रंग के लिये तथा मूत्र के पीले रंग के लिये प्रयोग करता है। लाल रक्ताणु का रक्त रंजन कार्बन मोनोक्साइड गैस (Carbon Monoxide) से शीघ्रता से मिलता है। कार्बन मोनोआक्साइड, लाल रक्ताणुओं को आक्सीजन लेने से रोकता है इसे से चक्कर आदि आ जाते हैं।

श्वेत रक्ताणु (White Corpuscles)—प्राय: ६ प्रकार के श्वेत रक्ताणु होते हैं जो रंगहीन, जीवोज या मूल धातु के आकृति विहीन समूह हैं जिनकी मींगी हैं तथा 'अमीबा' की तरह गति करते हैं। ये लाल रक्ताणुओं से बहुत बड़े होते हैं। इनका कार्य रोग कीटाणुओं से शरीर की रक्षा करना है। त्वचा में घाव होते ही अधिकता से श्वेत रक्ताणु उस स्थान पर एकत्रित हो जाते हैं जिससे रोग कीटाणुओं का नाश हो जाये। कुछ श्वेत रक्ताणु कण छोड़ते

हैं जिससे कीटाणु गतिविहीन हो जाता है इसके पश्चात् कुछ निगलने वाले कोष (Phygocytes) उन कीटाणुओं को निगल लेते हैं।

'बैक्टारिया' विष उत्पन्न करता है। यदि ये तेज हुये तो श्वेत रक्ताणु मर जाते हैं। मरे हुये श्वेत रक्ताणु पीव (Pus) बनकर बाहर निकलते हैं। रक्तवारि में (Opsonins) के प्रस्तुत रहने से श्वेत रक्ताणुओं को सहायता मिलती है। इनके द्वारा ये अधिक क्रियाशील होते हैं तथा कीटाणु शक्तिहीन होते हैं। रक्तवारि में Agglutinius के रहने से भी कीटाणु एक साथ बँध जाते हैं जिस से श्वेत रक्ताणुओं को आक्रमण करने में सरलता होती है। शरीर से किसी समय अधिक रक्त न निकल जाये इस लिये शरीर में कहीं कटते ही वहां रक्त जम जाता है। रक्तवारि में एक प्रोटीन होता है Fibrinogen या Fibrin जो वायु के सम्पर्क में जेली के प्रकार का जाल बना देता है जिस में रक्ताणु पकड़ लिए जाते हैं तथा सूखने लगता है। रक्ताणुओं से भी छोटे तालू Platelets होते हैं जो रक्त के जमाव में सहायक होते हैं तथा छूत के प्रभाव से मुक्त Immunity होने में सहायता देते हैं। इनकी संख्या की कमी से शरीर में सूजन आ जाती है।

लसिका वाहनियां (Lymphatic System)–केशिकाओं द्वारा लाया हुआ रक्त तन्तुओं के सम्पर्क में नहीं आता। केशिकाओं की दीवारों में से जो झिरझिरी होती है उसमें लसीका (रक्त रस) [Lymph] जो रंग विहीन पदार्थ है रिसता रहता है। लसीका में कार्बोहाईड्रेट्स प्रोटीन, जल, लवण तथा श्वेत रक्त कण मिले रहते हैं। इसमें लाल रक्त कण नहीं होता क्योंकि यह दीवारों से निकल नहीं पाते। लसीका तन्तु कोणों तक पहुंचकर आक्सीजन पहुँचाता है और उनका पोषण करता है तथा टूटे तन्तुओं और कार्बन डाइआक्साइड को वहां से हटाता है।

छोटी-छोटी लसीका केशिकायें आपस में संयुक्त होकर लसीका वाहनियाँ [Lymphatic Vessels] बनाती हैं। इनके बीच में लसीका ग्रंथियाँ होती हैं लसीका ग्रंथियाँ अनेक होती हैं जो बगल के जोड़, जाघ के जोड़ तथा गर्दन में स्थित हैं। कोषों में आवश्यक कार्य करने के बाद रक्त का एक बड़ा हिस्सा केशिकाओं में लौट आता है तथा लसीका केशिकाओं [Lymphatic

Capillaries] में बहने लगता है। लसीका ग्रंथियाँ रोग के कीटाणुओं को रोकती है तथा रक्त में श्वेत कणों को उत्पन्न करती है। ग्रंथियों से होकर जाने के बाद ये दो बढ़ी लसीका नली के रूप में हो जाती है। इन्हें वक्षास्थलीय लसीका नली लथा दाईं लसीका वाहिनी]Right Lymphatic duct] नाम से पुकारते हैं। इन नलियों में गति मांस पेशियों के कार्य तथा सांस की क्रिया के द्वारा होती है।

रक्त नलियाँ [Blood Vessels]— सम्पूर्ण शरीर में रक्त हृदय से जाता है तथा सम्पूर्ण शरीर से रक्त हृदय में आता है। वह दो वाहनियों से होता है। धमनी [Artery] हृदय से सम्पूर्ण शरीर में रक्त ले जाती है। यह रक्त शुद्ध होता है तथा अच्छे लाल रंग का हो होता है। शिरा[Veins] के द्वारा सम्पूर्ण शरीर का अशुद्ध रक्त हृदय में वापस आता हैं। यह काला लिए लाल रंग का होता हैं। फेफड़ों में रक्त वलोय धमनी [Pulmonary Artery] के द्वारा जाता हैं। बृहत धमनी [Aorta] फेफड़ों के अतिरिक्त सम्पूर्ण शरीर में रक्त ले जाती हैं।

दो शिरायें जो दायें अलिन्द [Right Auricle] में आती है वे फेफड़ों से रक्त वापस लाती हैं। जब धमनी हृदय से निकलती है छोटी-छोटी शाखाओं मे बट जाती है। यहाँ तक की ये बाल की तरह पतली नलियाँ हो जाती हैं जिन्हें केशिकायें [Capillary] कहते हैं। इन्हीं के द्वारा रक्त का विकार ग्रहण किया जाता है तथा भिन्न भिन्न अंगों को आक्सीजन तथा भोजन दिया जाता है। ये केशिकायें पतली धमनियाँ तथा शिराओं को संयुक्त करती हैं इस लिए केशिकाओं का अशुद्ध रक्त शिराओं के द्वारा हृदय में वापस आता है।

केशिकाओं के द्वारा शरीर में भिन्न भिन्न अंगों को भोजन तथा आक्सीजन देने के पश्चात् उनके विकारों को ग्रहण करने के बाद ये मिलकर शिरा बन जाती है। इन शिराओं में कुछ दूरी पर अर्धवृत्ताकार कपाट हैं जिनके द्वारा हृदय की ओर रक्त प्रवाह आसानी से होता है तथा विपरीत दिशा में रक्त प्रवाह को रोकता है। इसी कारण यदि हृदय से रक्त बहना चाहे तो ये कपाट बन्द हो जायेंगे। कपाटों में शिथिलता के कारण रोग हो जाते हैं।

हृदय रक्त संचालन संस्थान का केन्द्रीय अंग है। यह रक्त संचालन के दबाव तथा प्रवाह का नियन्त्रण करता है। यह रक्त वाहनियाँ शिरा से रक्त कम दबाव के साथ पाता है और उसे फेफड़ों की रक्तवाहिनियों में पम्प कर देता है जिससे वहाँ आक्सीजन मिल जाये। फेफड़ों से वापस रक्त फिर हृदय के द्वारा लिया जाता हैं और धमनियों में पम्प कर दिया जाता है जो शरीर के प्रत्येक अंग में लाती हैं।

इस तरह से हृदय दो प्रकार से रक्त संचालन का कार्य करता है। प्रथम फेफड़ों में [Pulmonary Circulation] तथा द्वितीय शरीर के सारे अंगों में [Systemic Circulation]।

इस कारण हृदय दो हिस्सों में बँटा हुआ है जो आपस में एक दूसरे से किसी प्रकार लेन देन नहीं करते हैं। ये हृदय का दाहिना भाग तथा बायां भाग कहा जाता है। दाहिना भाग दूषित रक्त, बड़ी शिराओं से प्राप्त करता है और फेफड़ों में आक्सीजन से मिलने के लिये प्रयत्न करता है। बायां भाग आक्सीजन मिश्रित रक्त प्राप्त करता है जो फेफड़ों से आता है। यह धमनियों में पम्प किया जाता है जिससे तन्तुओं को भोजन प्राप्त हो सके।

हृदय एक खोखला अंग है जिसमें मोटी मांसपेशियों की दीवार है। यह वक्षोस्थि के पीछे तथा शरीर के बीच से तथा बाँयें फेफड़े के बाईं ओर स्थित है। इसे स्थान देने के लिए यह दांतेदार बना है और दाहिने से छोटा है। हृदय के प्रत्येक भाग में दो कमरे हैं, कोष्ठ अलिन्द तथा कोष्ठ निलय।

बड़ी शिराओं से काला रक्त एक साधारण द्वार के द्वारा दाहिने कोष्ट अलिन्द में जाता है और वहाँ से वह एक खुले हुए स्थान से जो एक कपाट के द्वारा नियन्त्रित रहता है, दाहिने कोष्ट निलय में पम्प किया जाता हैं। दाहिना निलय दबाव पर रक्त फुसफुसीय धमनी [Pulmonary Artery] में पम्प करता है जहाँ से वह फेफड़ों से होकर जहाँ उसे आक्सीजन मिल जाता है तथा चटक लाल हो जाता है फेफड़ों के शिरा या फुसफुसीय शिरा में चला जाता है। फुसफुसीय शिरा [Triquspid Valve] बिना कपाट के बांयें कोष्ट अलिन्द में खतम हो जाता है तथा एक खुले स्थान के द्वारा जो एक कपाट [Bicuspid Valve] द्वारा नियन्त्रित रहता है, बायें निलय कोष में रक्त पम्प करता। बायां कोष्ट निलय इस धमनीय रक्त को मुख्य धमनी,

वृहत धमनी में पम्प करता है। रक्त पूर्ण शरीर में संचालित होता है तथा बड़ी शिरा में फिर वापस आता है जो हृदय की दाहिनी ओर है।

हृदय का ताल एक बनावट के द्वारा होता है जो नाड़ी तन्तुओं तथा मांसपेशियों से बना है। इस बनावट के परिणाम स्वरूप हृदय में मांसपेशियों के सिकुड़न का एक दौर आरम्भ होता है तथा प्रति पांच सेकेण्ड में ६ बार होता है। यह सिकुड़न का दौर पहले दोनों कोष्ट आलिन्द को एक साथ प्रभावित करता है जिससे वे सिकुड़ते हैं. दाहिने शिरा का रक्त दाहिने कोष्ट निलय में प्रवाह करता है तथा बायां आक्सीज़न से मिला हुआ रक्त बायें कोष्ट निलय में प्रवाहित करता है, बहुत ही थोड़े समय में, अर्थात् १/८ सेकेण्ड में ये दौर निलय में पहुँचते हैं जो एक साथ ज़ोर से सिकुड़ते हैं तथा दोनों कपाटों को यांत्रिक गति से बन्द कर देते हैं। इस कारण रक्त फुसफुसीय धमनी में बायें कोष्ट निलय से प्रवाहित किया जाता है तथा कोष्ट निलय में वापस लौटने से कपाटों के द्वारा जो इन धमनियों में हैं और अपने आप रक्त के पीछे दबाव के कारण बन्द हो जाते हैं, बचाता है। हृदय के कपाट, गठिया बुखार के द्वारा रोगी हो जा सकते हैं। इसका अर्थ यह होगा कि वे अपनी जगह पर सही नहीं बैठेंगे और रक्त वापस लौट आयेगा। दूसरी बीमारी की स्थिति उनके समीप होने की है जिसके कारण रक्त प्रवाह में रुकावट होगी और हृदय को तकलीफ होगी। कभी कभी एक ही कपाट में समीपता तथा असमर्थता हो जाती है। हृदय की सिकुड़न से रक्त प्रवाहित होता है और इस प्रकार वृहत्त धमनी फैलती है और आवश्यकता से अधिक दबाव दौर के रूप में शरीर के सम्पूर्ण अंगों में बड़ी धमनियों के साथ दी जाती है जो नब्ज के रूप में मालूम किया जा सकता है। प्रकोष्ठास्थि धमनी कलाई पर साधारणतः इस कार्य के लिए व्यवहार में लाया जाता है क्योंकि वहाँ यह त्वचा की सतह के नीचे ही पाया जाता है तथा कलाई शरीर का एक खुला हुआ अंग होता है। नाड़ी की चाल [Pulse] शिरा में नहीं मालूम किया जा सकता क्योंकि दबाब का दौर संचालन के छोटे केशिकाओं में समाप्त होता जाता है। हृदय प्रत्येक धड़कन के पश्चात् विश्राम कर लेता है किन्तु बिस्तर पर ही इसे पूर्ण विश्राम मिलता है। हृदय की मांसपेशियां केवल दैनिक कार्य के भार के लिए उपयुक्त हैं। हृदय की स्वस्थता की पहचान यह है कि वह क्रिया पूर्ण होने के पश्चात् ५ मिनट के

अन्दर स्वाभाविक अवस्था पर आ जाये । विभिन्न अंगों को रक्त उनके प्रयोग एवं उत्तेजना के अनुसार दिया जाता है ।

व्यायाम का रक्त परिभ्रमण पर प्रभाव [Effect of Exercise on Circulatory System]– शारीरिक क्रिया के समय रक्त परिभ्रमण में तीव्रता उत्पन्न हो जाती है तथा कार्य करने वाले मांसपेशियों के रक्त वाहिनियां धमनी, केशिकायें तथा रक्त वाहिनियां शिरा फैल जाती हैं । विश्राम की अवस्था में साधारण कार्य में ३ से ५ गुणा तथा कठिक कार्य में सात से दस गुणा अधिक अन्तर हो जाता है । संधि के ऊपर शिराओं का बारी-बारी से छोटा बड़ा होना होता हैं । मांसपेशियां कार्य करते हुऐ शिराओं में रक्त पर प्रभाव डालती हैं । रक्त का वापस लौटना कपाटों के कारण सम्भव नहीं होता जिससे हृदय की क्रिया में सहायता मिल जाती है ।

कही-कहीं पर शिरायें पेशियों के पतले तन्तुमय आवरण के मेहराब के नीचे से जाती हैं जिनसे मांसपेशियां सम्बन्धित रहती है । मांसपेशियों की क्रिया से पेशियों के पतले तन्तुमय आवरण खिंचते हैं तथा शिराओं पर दबाव पड़ता है जो पेशियों के तन्तुमय आवरण से जोड़ने वाले तन्तु से मिला हुआ होता है वह ढीला हो जाता है, जिससे शिराओं में फैलाव होता है तथा रक्त का प्रवाह अधिक होता है ।

धड़ की गति के कारण शरीर के बड़े खाली स्थानों के तत्व पर तथा बड़ी शिराओं पर प्रभाव पड़ता है । गतिप्रद क्रिया यदि तीव्रता से किये जायें तो श्वास गहरा हो जाता है जिससे रक्त शीघ्रता से विभिन्न अंगों में पहुँचता है तथा अंग पर्याप्त मात्रा में आक्सीजन प्राप्त करते हैं ।

गतिप्रद क्रिया के समय हृदय की गति तेजी एवं मजबूती से होती है । इससे रक्त का बँटवारा तेजी से होता है । यह रक्त की उन सामग्री के द्वारा सम्भव होता है जो मांसपेशियों की क्रिया के समय उत्पन्न होती है, जिनके द्वारा स्नायु केन्द्र जो हृदय की क्रिया का नियन्त्रण करते हैं उत्तेजित होता है । क्रिया के समय हृदय तथा धमनी प्रसार पूर्णता से फैलते हैं तथा सिकुड़ने के समय शक्तिशाली सिकुड़न होती है । प्रत्येक हृदय की धड़कन के साथ अधिक रक्त महाधमनी में आता है तथा प्रति मिनट विश्राम के समय से अधिक सिकुड़न होती है ।

———

५

श्वास संस्थान

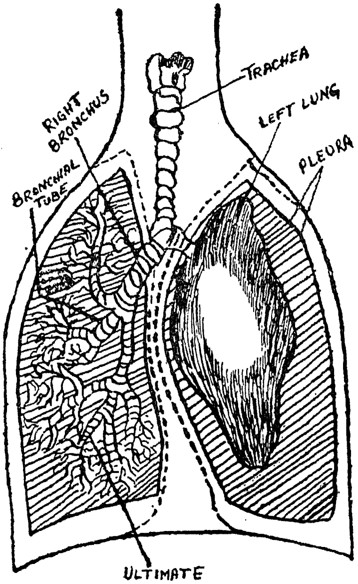

श्वास यन्त्र

श्वास क्रिया के अंग

श्वांस संस्थान में सांस की नली तथा फेफड़े आते हैं। इनका कार्य रक्त के लिए आक्सीज़न देना और कुछ दूषित पदार्थ जो शरीर से निकलते हैं, जिनमें विशेष है कार्बन डाइआक्साइड को हटाना है।

वायु की नली (Air Passage)—वायु की नलियों में नाक का मार्ग (Nasal passage) ग्रसनी (Pharynx) या गले का पिछला हिस्सा, स्वर यन्त्र (Larynx) जिसमें रज्जु (Vocal cord) रहता है। वायु नली (Wind pipe) तथा क्लोमालियों (Bronchial tubes) का छोटा तथा बड़ा भाग आता है।

नाक का मार्ग [Nasal Passage]—यह सांस लेने में महत्व पूर्ण कार्य करता है। नाक का भाग दो भागों में विभाजित है, दाहिना तथा बांया

नाक का मार्ग। यह एक विभाजक के द्वारा सेप्टम [Septum] विभाजित होता है। प्रत्येक नाक के मार्ग की बाहरी दीवार पर तीन हड्डियों के कोर [Flanges] हैं। दोनों ओर दो गुफायें [Cavities] हैं एक गाल की हड्डी में तथा दूसरी माथे की हड्डी में ठीक आंखों के ऊपर है। ये अपनी ओर नाक के सूराख की छोटी खुली हुई जगह से मिली हैं। नाक के सूराख तथा दूसरे खाली स्थान की पूरी सतह झिल्ली से मढ़ी हुई है जो एक साफ तथा कुछ लसलसा तरल पदार्थ [Mucous] छोड़ते हैं। यह पदार्थ ठंडे मौसम में अधिक आताहै। यह नाक की सूराखों को हवा की छलनी के कार्य के रूप में सहायक होता है धूल तथा कीटाणुओं को अपनी चिपचिपी झिल्ली में चिपका लेता है। यह तरल पदार्थ स्वयं कीटाणुओं के नाश करने की योग्यता रखता है। एक भीगी झिल्ली स्वास्थ्य के लिए अतिआवश्यक है। जब यह गर्मी में खुश्क हो जाता है तो काम नहीं कर सकता इस कारण कीटाणु अन्दर जाकर रोग उत्पन्न कर सकते हैं। मामूली सर्दी जुकाम इसी तरह लगता है।

झिल्ली का बड़ा घेरा जो नाक की सुरंग की हड्डियों को ढकता है अधिकतर छोटे रक्त पात्रों से भरा है। रक्त, इन पात्रों में गर्मी देता है जिससे हवा फेफड़ों में जाने से पहले गर्म हो जाये। इस प्रकार हवा गर्म होकर ग्रसनी [Pharynx] से होते हुए स्वरयन्त्र [Larynx] में जाता है तथा वहां से रज्जुओं [Vocal cord] के बीच से होकर वायु नली में जाता है। यह वायु नली दो नलियों में [Bronchial Tubes] विभाजित हो जाती है तथा फेफड़ों में जाती है। फेफड़े के तन्तुओं में यह नली इतनी अधिक विभाजित हो जाती है कि इनकी शाखायें देखना कठिन होता है। ये छोटी शाखायें वायु की थैली [Air Bags] में खुलती हैं। वायु नली की दीवारें और दो बड़ी-बड़ी [Bronchial] नली अधिकतर मुरमुरी हड्डी की बनी है जो एक कड़े पदार्थ का काम देती हैं जिससे दीवार गिर न जाये तथा वायु मार्ग में रुकावट न हो।

फेफड़े [Lungs]–वक्षस्थलीय गुफा का अधिकतर भाग दाहिने तथा बायें फेफड़ों, हृदय तथा रक्त के बड़े पात्रों से भरा है। फेफड़े का पदार्थ कम हलका, छिद्रपूर्ण, सोखने वाली [Spongy] बिनावट का है तथा अत्याधिक

लचीला है। इनमें लाखों वायु की थैलियां हैं जो प्रत्येक अत्यन्त क्षुद्र श्वास प्रणाली से खुलती है तथा उनमें धमनी तथा सिरा होती हैं। वायु की थैली की दीवारें लचीली होती हैं और उन पर एक पतली तह के कोषों का जमाव है। यह पतली तह रक्त केशिकाओं को जो दीवार में होती है, वायु से जो थैली में होती है, पृथक करती है तथा वायु की थैली से आक्सीजन रक्त केशिकाओं में तथा कार्बन डाइआक्साइड विपरीत दिशा में भेजती हैं।

फेफड़े एक चिकनी झिल्ली [Plura] से ढकी हुई रहती हैं जो वक्षस्थल के अन्दर की दीवार को तथा महा प्राचीरा के ऊपरी हिस्से को भी ऐसा मढ़ता है कि वह फेफड़े को पूरी तरह से ढक लेता है। केवल वह हिस्सा छूट जाता है जहाँ से वायु नली की अस्तर तथा क्लोमालिया तथा रक्त पात्र अन्तर आते हैं। यह प्लूरा की थैली वह स्थान है जो प्लूरा के आन्तरिक तथा बाहरी तह के मध्य में है। प्राकृतिक स्वास्थ्य में यह स्थान होता ही नहीं है क्योंकि फेफड़े, सीने की दीवार से सटे रहते हैं किन्तु यदि प्लूरा की बाहरी या भीतरी तह छिद जाती है और इस स्थान में वायु प्रवेश कर जाती है तब वह वास्तविक स्थान बन जाता है क्योंकि फेफड़े अपने लचीले तन्तुओं के कारण सिकुड़ जाते है।

जीव सम्बन्धी शक्ति [Vital Capacity] किसी व्यक्ति की जीव सम्बन्धी शक्ति पूरी सांस लेने के बाद पूरी सांस छोड़ देने के माप से निर्धारित की जा सकती है। साधारण सांस लेने में फेफड़े अपनी शक्ति का १/१० कार्य करती है तथा हवा का वजन जो फेफड़े से बाहर जाती हैं तथा अन्दर आती है प्रत्येक सांस में ३००—५०० सी० सी० होता है। यदि साधारणत: सांस लेने के बाद ज्यादा से ज्यादा सांस लेने की चेष्टा की जाये तो जो और हवा निकाली जायेगी करीब १५०० सी. सी. होगी, इसी प्रकार सांस छोड़ने के बाद यदि ज्यादा से ज्यादा सांस छोड़ने की चेष्टा की जाये तो वह भी १५०० सी०सी० होगी। इन तीनों का योग जो ३.५०० सी सी है जीव सम्बन्धी शक्ति होगी। साधारण स्वास्थ्य में भी यही रहता है। किसी हृदय तथा फेफड़े के रोग में यह कम हो जाता है यह एथलेटिक्स तथा सांस के व्यायाम से बढ़ाया जा सकता हैं। सांस छोड़ने के बाद भी वायु थैली में सांस बच जाता है।

फेफड़े की जीव सम्बन्धी शक्ति का माप उनके शरीर के परिश्रम करने के समय के अधिक आक्सीज़न की मांग की प्रतिक्रिया की योग्यता है। इस शक्ति की अधिकता से अधिक स्वस्थता की भावना नहीं होती किन्तु इसके द्वारा व्यक्ति क्रियाशील रहता है।

स्तर से कम जीव सम्बन्धी शक्ति हृदय तथा फेफड़े के रोगों का चिन्ह है। वायु जो सांस के रूप में ली जाती है वह आक्सीजन २०.९६ ०/०, नाइट्रोजन ७९·०० ०/० तथा कार्बन डाइआक्साइड ०.०४ ०/० मिला हुआ होता है। नाइट्रोजन पानी कर देता है। आक्सीजन की कमी से वही हालत होती है जैसे अधिक मदिरा पान करने से। समझ बूझ में खराबी हो जाती है और उत्तेजना कम हो जाती है और व्यक्ति को इसका पता नहीं चलता है। जो सांस हम छोड़ते हैं उसमें १६ ०/० आक्सीज़न है १४ ०/० कार्बन डाइ-आक्साइड है, छोड़े हुए सांस में भाप काफी होता है जिनसे गर्मी निकल जाती है।

श्वास क्रिया—शुद्ध वायु फेफड़ों तक नाक या मुँह के द्वारा जाती है। मुँह से सांस लेना सही नहीं। यह क्रिया नाक के द्वारा होनी चाहिए जो प्राकृतिक रूप से इसके लिये बना है। नाक के द्वारा सांस लेने पर कीटाणु तथा धूल आदि श्लैष्मिक झिल्ली में रुक जाते हैं तथा Phagocytes के कारण नष्ट हो जाते हैं। नाक से सांस लेने पर वायु गर्म होकर फेफड़ों में पहुँचती है क्योंकि यह रक्त केशिकाओं के सम्पर्क में होकर जाती है।

मुंह से साधारणत: वे ही लोग सांस लेते हैं जिन्हें Adenoid या Tonsils हो जाते हैं। श्वास का मुख्य कार्य शरीर में आक्सीज़न लाने का तथा कार्बन डाइ-आक्साइड निकालने का है। आक्सीजन शरीर में जमा नहीं किया जाता है अत: इसकी आवश्यकता प्रत्येक क्षण बनी रहती है। यदि यह तीन मिनट तक न मिले तो मृत्यु हो जायेगी। फेफड़ों में रक्त तथा वायु का मेल होता है। सांस छोड़ने तथा लेने में श्वास प्रणाली निरन्तर कार्य करती रहती हैं। सांस लेने पर फेफड़े फैलते हैं। फेफड़ों में उपस्थित रक्तवाहिनियां शुद्ध वायु से आक्सीज़न लेती हैं तथा कार्बन डाइआक्साइड छोड़ती हैं। साँस निकलने पर दूषित वायु बाहर निकलती है। स्वस्थ्य व्यक्ति प्रति मिनट १५—१८ बार सांस लेता है। बच्चे सांस शीघ्रता से लेते हैं।

श्वास प्रणाली की बनावट—श्वास संस्थान के अवयव मुँह तथा नाक, स्वर यन्त्र, वायु प्रणाली एवं फेफड़े हैं ।

(i) मुँह तथा नाक—(Mouth and Nose)—वायु प्राकृतिक रीति से नाक से जाती हैं एवं जाना चाहिए । शारीरिक दोष एवं आदत के कारण कुछ व्यक्ति मुँह से भी श्वांस लेते हैं । नाक में वायु जाने के दो द्वार हैं जिनमें की टाणुओं को रोकने के लिये बाल हैं । नाक के मार्ग में श्लैष्मिक झिल्ली (Mucous Membrane) का अस्तर है । इसमें से एक चिपकने वाली तरल पदार्थ जो रोगाणु विनाशक कण होते हैं उत्पादन होता है ।

वायु नाक तथा मुँह से जाकर गले के पीछे श्वांस नली (Glottis) तक पहुँचती है जो कंठ नली या आवाज की संदूक (Larynx or Voice Box) के मुँह पर स्थित है । यहाँ एक उठा हुआ बनावट हैं जिसे कठ विधान (Epiglottis) कहते हैं । यह श्वांस नली का कड़ा ढकना है जो सदैव खुला रहता है किन्तु निगलने के समय भोजन एवं पानी का नियन्त्रण करता है तथा उसे श्वांस नली में फेफड़ों तक जाने से रोकता है । गले में बाहर की ओर एक उठा हुआ बनावट है जिसे कंठ मणि कहते हैं । वायु नली की दीवारें अर्धवृत्ताकार कोमलास्थियों की बनी होती है । सामने का भाग गोल तथा पीछे कुछ चपटा होता है । वायु नली का ऊपरी हिस्सा स्वर यन्त्र कहलाता है । इसमें दो स्वर बेधनी (Vocal Cords) तन्तुओं के दो पर्दों के समान स्थित हैं जो हल्के श्वांस लेने पर ढीले होकर खुला हुआ स्थान बनाते हैं किन्तु आवाज के द्वारा शब्द बोलने पर ये सम्बन्धित मांसपेशियों के द्वारा कड़ा हो जाता है और एक छोटा खुला हुआ स्थान छूटता है । कंठ नली स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में बड़ी होती है तथा अधिक प्रकट हैं ।

कंठ नली से होकर वायु, वायु नाली (Trachea or Windpipe) तक पहुँचती है यहाँ वायुनली दो कड़ी नालियों में विभाजित हो जाती है जिसे (Brouchi) कहते हैं और ये दोनों एक एक फेफड़े में पहुँच जाती हैं । ये नालियाँ छोटी नालियों में विभाजित होती जाती हैं । इनका अन्त फेफड़े में लाखों छोटे वायु कोष्ठों (Air sacs) में होता है जिसे (Alveoli) कहते हैं । (Alveoli) में पारदर्शक पतली दीवार हैं जिनके बीच से असंख्य

केशिकायें पार होती हैं। Bronchi की शाखाओं में विभाजित होने की तुलना एक वृक्ष से की जाती है जिसकी पत्तियां Alveoli हैं तथा सबसे छोटी टहनियाँ Broncholi हैं। इन सब वायु प्रणाली में अनैच्छिक मांसपेशियां हैं जो वायु के आने जाने पर नियन्त्रण करती रहती हैं। Alveoli तथा अन्य वायु यन्त्र बड़े यत्न एवं मितव्यता से एक छोटे स्थान में सजा कर रखे गये हैं। यदि Alveoli को फैलाया जाये तो वह आधे टेनिस कोर्ट में समा जायेगा तथा केशिकायें जो यहां तक रक्त पहुंचाती हैं वे ३.००० मील लम्बाई से फैल जायेंगी। वायु संस्थान की नाली प्रणाली Mucous Membrane के स्तर से ढंकी है जिन पर बालों के समान Cilia स्थित हैं और श्लैष्मिक झिल्ली को ढंके रहती है। Cilia की एक तालब्ध गति होती रहती है जिसकी शक्ति फेफड़ों से नाक तथा मुँह की ओर आदेशित रहती है। कोई भी कण आदि जो नाक के बाल से न रुक कर यहाँ तक चले जाते हैं उन्हें इस गति के द्वारा पुन: नाक या मुँह में वापस कर दिया जाता है तथा फेफड़ों में पहुँचने से रोक लिये जाते हैं। सर्दी या जुखाम में Cilia में रुकावट हो जाती है।

व्यायाम का श्वास स्थान पर प्रभाव (Effect of Exercise on Respiratory System)—वायु नाक के द्वारा फेफड़ों में पहुंचनी चाहिये जहां वह गर्म हो जाती है तथा बाहर के कीटाणुओं तथा धूल इत्यादि से स्वच्छ भी कर दी जाती है। व्यायाम करने से श्वास क्रिया में तीव्रता होती है। सर्व-प्रथम वक्षस्थल (Thorax) मांसपेशियों की क्रिया के कारण बड़ा होता है। यह ऊपर नीचे की दिशा में खिचाव के कारण तथा महाप्राचीरा (Diaphragm) पर उतरने के कारण तथा दाहिने-बायें बगल (Lateral) तथा अन्दर पीछे (antero-posteriorly) की ओर पसलियों के पसलियों के बीच (Intercostal) तथा अन्य मांसपेशियों की क्रिया के कारण उठ जाने के द्वारा, सम्भव होता है। यह सम्पूर्ण क्रिया श्वास लेना (Inspiration) है। वायु, वायुप्रणाली Trachea तथा Bronchi के द्वारा शीघ्रता से फेफड़ों के बाहर तथा अन्दर दबाव (Pressure) के संतुलन के लिए पहुंचता है। श्वास गति का दूसरा भाग श्वास छोड़ना (Expiration) केवल मांसपेशियों के कार्य छोड़ देने के कारण होता है जिस से महाप्राचीरा (Diaphragm)

ढीला हो जाता है और ऊपर चढ़ जाता है। सभी सम्बन्धित पेशियां एवं अंग अपने वास्तविक स्थिति में हो जाते हैं।

ज़बरदस्ती से श्वास छोड़ने पर उदर की मांसपेशियां सिकुड़ती हैं जिस से पेट के भीतरी अंग (Abdominal Viscera) तथा महाप्राचीरा (Diaphragm) ऊपर उठा दिये जाते हैं जिस से वक्षोस्थि (Sternum) तथा निचली पसलियां नीचे की ओर खिच जाती हैं।

गहरी एवं शीघ्रता से श्वास लेने पर मांसपेशियों की क्रिया अधिकता से होगी। इस अवस्था में कार्यशील मांसपेशियों के द्वारा अधिक आक्सीज़न की आवश्यकता होगी। रक्त में कार्बन डाइआक्साइड के जमा होने के कारण सुषुम्ना शीर्ष Medulla में स्थित श्वास केन्द्र की उत्तेजना बढ़ जाती है जिसके द्वारा श्वास क्रिया में तीव्रता हो जाती है। श्वास लेने के समय वक्षस्थल के शून्य दबाव (Negative pressure) में वृद्धि होती है, इस कारण वक्षस्थल की बड़ी रक्त वाहिनी शिराओं में कम दबाव होने के कारण यह शरीर के अन्य अंगों से अपने में रक्त जमा कर लेता है। गहरे श्वास के समय महाप्राचीरा (Diaphragm) में गति शक्तिशाली एवं तीव्रता से होती है, वक्षस्थल की संधियों की अस्थिरता बढ़ जाती है तथा सम्पूर्ण श्वास सम्बन्धी मांसपेशियों का विकास होता है।

———

६

पाचन संस्थान

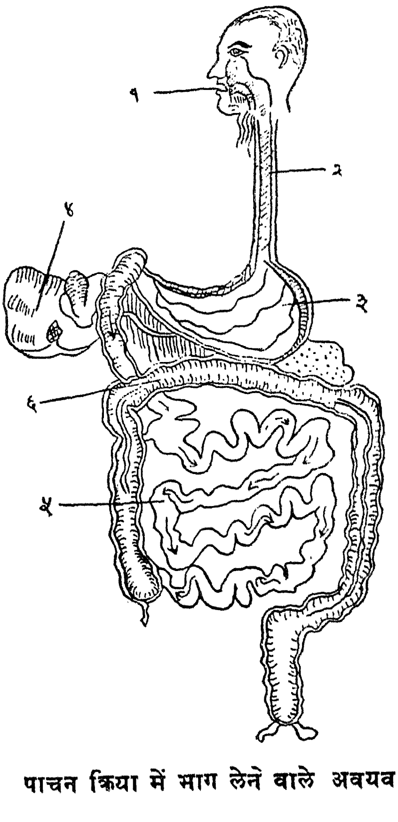

पाचन क्रिया में भाग लेने वाले अवयव

भोजन में जो खाया जाता है पाचन संस्थान के द्वारा इस रूप में बदल जाता है जिससे उसके द्वारा शरीर के विभिन्न अंगों का पोषण हो सके। उस क्रिया को जिस में यह संभव है पाचन क्रिया कहते हैं। इस क्रिया में भाग लेने वाले अवयव समूह को पाचन संस्थान कहते हैं।

शरीर में मुख से गुदा तक भोजन ले जाने वाली पचाने की नाली एक नली के आकार की है जो मुंह से आरम्भ होती है और गुदा में समाप्त होती है। यह श्लैष्मिक झिल्ली से मढ़ी हुई ३६ फुट लम्बी होती है। यह शरीर में भोजन को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने में नियन्त्रण करती है। इस में वह यन्त्र रचना है जिससे पेट में भोजन भरना, पचाना, जमा करना तथा अन्त में बाहर निकलना है।

१-मुखगर्त, २-अन्न नाली, ३-आमाशय, ४-कलेजी, ५-छोटी आंत, ६-बड़ी आंत।

इस संस्थान के मुख्य अवयव मुखगर्त, भोजन प्रणाली, अमाशय तथा आंत है।

मुख गर्त (Mouth Cavity)—जीभ, दाँत और लार सम्बन्धी ग्रंथिथाँ भोजन को अमाशय में पहुँचाने के पहले तैयार कर देती हैं। लार या थूक मुँह में अगल बगल और फर्श पर नाली के द्वारा निकलता है। इसमें पाचन क्रिया का गुण है परन्तु इसका मुख्य कार्य भोजन को चिकना करना है जिससे भोजन चबाने तथा निगलने में कठिनाई न हो। भोजन का विचार, दृश्य तथा सुगन्ध लार का परिचालन कर देती है।

गला (Thc Gullet)—यह एक सकरी मांसपेशियों की नली है जो १०" लम्बी है। यह ग्रसनी को आमाशय से मिलाती है। यह वायु नली तथा हृदय के पीछे महाप्राचीरा से होते हुए अमाशय में पहुँचती है। इसके ऊपरी हिस्से की दीवार एच्छिक मांसपेशियों से और इसका निचला हिस्सा अनैच्छिक मांसपेशियों से बना है। ऐप्पिग्लोटिस (Epiglotis) के द्वारा भोजन फेफड़ों में नहीं जा पाता जो भोजन निगलने के समय अपने आप एक कूट द्वार की तरह स्वर यन्त्र के प्रवेश के ऊपर बन्द हो जाता है।

पक्वाशय या अमाशय (Stomach)—शरीर में मुख से गुदा तक भोजन ले जाने वाली पचाने की नली का सबसे चौड़ा हिस्सा है। यह मांस-पेशियों का बना हुआ अंग उदर के ऊपरी भगा में दाहिनी ओर महाप्राचीरा तथा हृदय के ठीक नीचे स्थित है। यह स्थिति तथा आकार में शरीर के स्थान तथा कितना भोजन पदार्थ इसमें हैं, इसी के अनुसार बदलता रहता है। इसकी दिवार तीन आड़े तिरछे अनैच्छिक मांसपेशियों के तह से बने हुए हैं तथा इस में एक मोटी झिल्ली का अस्तर है जिसमें ग्रन्थियाँ हैं जो उदर संबंधी रसायन पदार्थ (Gastric Juice) छोड़ती है।

अमाशय का सकरा नीचे का हिस्सा (Pylorus) एक वृत्ताकार अनैच्छिक मांसपेशियों से मोटा किया हुआ है जो सिकुड़ने से अमाशय से बाहर का रास्ता रोक सकता है। पाइलोरस साधारणत: बन्द रहता है किन्तु पाचन क्रिया के समय यह समय २ पर खुलता रहता है जिससे भोजन आगे आंतों में जा सके।

आंते (Intestine)—आँतें दो असमान हिस्सों में बंटी हुई है। पहला हिस्सा छोटी आँत तथा दूसरा हिस्सा बड़ी आँत कहलाती है। छोटी आँत २२' लम्बी है और उसका व्यास १" है। उसकी दीवार में दो तह की अनैच्छिक मांसपेशियाँ और तह की झिल्ली का अस्तर है जिसमें अनेक ग्रन्थियाँ हैं जो उदर सम्बन्धी रसायन पदार्थ छोड़ती है। झिल्ली अनेक सतह की परत में है जिससे शोषक [Absorbent] क्षेत्र बढ़ाया जा सके।

छोटी आंत का ऊपरी हिस्सा एक नली में मिली हुयी है जो और दो नलियों की संयुक्ति से बनी हुयी है, एक जिगर से पित्त की नली जो गाल ब्लाडर [Gall bladder] से पित्त छोटी आंत तक पहुँचाती हैं दूसरी एक ग्रन्थि अंग [Pancreas] से जो उदर सम्बन्धी रस छोड़ती है। छोटी आंत के प्रथम १२" Duodenum कहलाता हैं। जिगर [Liver] जो शरीर की सबसे बड़ी ग्रन्थि है २ पाइन्ट पित (Pite) बनांता है। इसके द्वारा वसा के पचाने में सहायता मिलती है। Pancrea के रस Steapein, बसा Fatty Acid एवं Glycerine में परिवर्तित होता हैं Urea एवं Uric Acid को निचौड़ लेता हैं, चीनी को Glucose में परिवर्तित करता है जो Glycogen के रूप में जमा रहता है तथा Haemoglobin को तोड़ता है। Pancreatic Juice में खमीर जो बसा को परिवर्तित करता हैं। श्वेतसार को Glucose में परिवर्तित करता है तथा Proteins एवं Peptones को Amino Acids में परिवर्तित करता है क्योंकि इस अवस्था में उन्हें सरलता से प्रयोग में लाया जा सकता है। Pancreas पाचन क्रिया का कार्य पूरा करता हैं। आँतों की दीवारों से निकली हुयी आंतों के रस से सहायता मिलती है। यें विशेष कर Carbohydrates एवं Peptons पर कार्य करते हैं। एक आन्तरिक रस Secretin आंतों की दीवार से छूटता है वह Pancreatic Juice को उस समय प्रवाहित करता है जब पक्वाशय Stomach से Duodemun में जाने के लिए तैयार रहता है। Pancreas के समीप में Insulin बनता हैं जो सीधे रक्त में मिल जाता है। इसके द्वारा रक्त में चीनी का नियन्त्रण होता है।

छोटी आंत प्राय: २०' लम्बी होती है। वह मांसपेशियों में जाती है जिन में रक्त वाहिनियां अनगिनत हैं तथा वह श्लैष्मिक झिल्ली से मढ़ी होती है।

अन्दर की सतह में झुरियां हैं। यहाँ भोजन बढ़ने की गति धीमी हो जाती है। सतह से उंगली के रूप की बनावट Villi निकले हुए होते हैं यह एक इन्च वर्ग में १०,००० होते हैं। इन प्रत्येक में Lacteal पात्र होता है जो पृथक किये हुए बसा को Lymph System सोख लेता है जो अपनी सामग्री Thoraeic Duet में डाल देती हैं। चीनी तत्व परिवर्तित श्वेतसार एवं प्रोटीन केशिकाओं में मिल जाती है जो इस रक्त को जो रक्त वाहिनियां शिरा की होती हैं किन्तु खाद्य पदार्थ से पूर्ण होती हैं जिगर (Liver) में जाने के लिए यहां मिलती हैं। यहाँ यकृत-शिरा (Portal Vien) पुनः केशिकाओं में विभाजित हो जाती हैं जिससे जिगर चीनी की जो अपने पास जमा रखता है Glycogen में परिवर्तित कर सके। जिगर को जिस वसा की आवश्यकता नहीं होती वह Thoracie Duct में चला जाता है। आंतों में मांसपेशियों से युक्त नाली अर्ध तरल भोजन पदार्थ को निचोड़ती रहती हैं। इस प्रगतिशील क्रिया को Paristaltic Action कहते हैं। छोटी आंत की खींचने वाली सतह फैलाने पर ५० वर्ग गज़ होगी। अतः छोटी आंत का मुख्य कार्य रक्त में तथा लसिका संस्थान में पचाये हुये भोजन को निकालना है। बड़ी आंत का Colon जो ६' लम्बी नाली है वहां तक भोजन पहुँचते ही पाचन क्रिया समाप्त हो जाती है। अब नाली Gullet से पाकाशय में भोजन १० सेकेन्ड लेता है। वहाँ ४ या ५ घंटे रहता है। चार घंटे के बाद बड़ी आँत में जाने लगता है तथा १० से २४ तथा ४८ घन्टे में सरलान्त्र Recturn तक पहुंचता है।

बड़ी आंत करीब ४" लम्बी है और व्यास २" है। यह उदर गुफा के निचले दाहिने हिस्से से निकलती और दाहिने ओर होते हुए ऊपरी हिस्से में दाथीं तरफ नीचे कूल्हे में जाती हैं। यहाँ यह चौड़ी होकर मलद्वार बनाती है, मलद्वार से जो पतली नली निकली है उसे मलद्वार नली [Anal Canal] कहते हैं। बड़ी आंत या 'बृहदान्ति' दीवार की बनावट छोटी आंत या क्षुदन्ति की तरह है किन्तु उस की झिल्ली में केवल बलगम निकालने वाली ग्रन्थियां हैं जो एक चिकनी तरल पदार्थ छोड़ती है। आमाशय तथा आंते उदर की थैली में एक दोहरे तह की झिल्ली के द्वारा जिसे मेसेन्ट्री [Mesentary] कहते हैं सहारा पाते हैं। यह उस झिल्ली का एक हिस्सा हैं जिससे सम्पूर्ण उदर

कीथैली मढ़ी जाती है। मेसेन्ट्री के द्वारा आमाशय तथा आंते बाहरी उदर की दीवार से टिकी रहती है।

पाचन क्रिया (Digestion)—भोजन पचाने की पहली क्रिया मुँह में ही आरम्भ हो जाती हैं जहां लार कुछ क्रिया करता है। भोजन को अच्छी तरह चबाना चाहिये क्योंकि तभी पचानेवाला रस आसानी से उस पर काम कर सकता है तथा पाचन तथा शोषण क्रिया अच्छी तरह से होगी। भोजन अच्छी तरह चबाने के बाद जीभ उसे गोली बनाता है। निवाले निगलने के बाद वह गले से आमाशय में जाता है। आमाशय में पहुंच कर वह एसिड गैस्ट्रिक जूस (Acid Gastric Juice) से मिलाया जाता और तब प्रोटीन का पचना आरम्भ होता है। ये पाचन सम्बन्धी रस जटराग्नि (Gastric Juice) उन कीटाणुओं को जो भोजन को दूषित करते हैं नाश कर देता है।

भोजन के निगलने के आधे घंटे के बाद आमाशय अपनी वस्तु छोटी आंत में छोड़ने लगता है और प्राय: तीन घण्टे में खाली हो जाता है। जब आमाशय की एसिड मिली वस्तुएँ छोटी आंत में जाती है तो वहां अलकलाइन (Alkaline) रस में जो आंतों की ग्रंथियों से निकलता है उसका प्रसार खत्म कर दिया जाता है। दूसरे रस जैसे पित्त तथा पेन्क्रियाटिक रस (Bile and Pancratic Juice) छोटी आंत के ऊपरी हिस्से में जिस समय भोजन पदार्थ वहां से आगे बढ़ता है, डाला जाता है। पित्त में विशेष नमक होता है जो चर्बी पचाने में सहायता करता है। पैनक्रियास से तीन तरह के तरल पदार्थ मिलते हैं जो प्रोटीन, चर्बी तथा कारबोहाईड्रेड के पचाने में काम करती है।

छोटी आँत से बाहर निकलने में भोजन दो घन्टा लेता है। इस समय वे तरल पदार्थ जो घुलने वाले नहीं हैं वे घुलनेवाले बनाये जाते हैं तथा आंतों की दीवार से सोख लिए जाते हैं और रक्त संचालन के द्वारा शरीर में पुष्टि के लिए ले जाये जाते हैं।

जब वस्तुएँ बड़ी आंत में पहुंच जाती है तब पाचन क्रिया का अन्त हो जाता है। बड़ी आंत में पहुंचने तक बचा हुआ भोजन तरल होता है किन्तु उनकी बड़ी आंत से जाने के समय बचा हुआ पानी सोख लिया जाता है। जब बड़ी आंत की वस्तु गूदे में पहुंचती है, वह वहीं रहती है जब तक मल के

रूप में बाहर न हो जाये। आरम्भ से अन्त तक पाचन क्रिया में आठ घण्टे से कम नहीं लगता।

पचाने वाली नली में भोजन की चाल ऐच्छिक रीति से निकलने से आरम्भ होती है। जैसे भोजन गले से नीचे उतरता है वह अनैच्छिक मांसपेशियों के निमन्त्रण के आधीन आता है जो उसके पीछे सिकुड़ते हैं और उसे आगे आमाशय की ओर ले जाने में सहायता करते हैं। इसी रीति से भोजन आमाशय और आंतों से अनैच्छिक मांसपेशियों के आधीन होता है जब तक वह गूदे तक न पहुंचे।

पाचन क्रिया के समय रक्त उन अनेक पात्रों में जो आमाशय और आंतों में रक्त पहुंचाते हैं जमा होता है। यदि वह वहाँ से हटा दिया जाये या कम कर दिया जाये तो पाचन क्रिया ठीक न होगी या बन्द हो जायेगी। जब भोजन के बाद कठिन परिश्रम किया जाये तो रक्त आंतों से एक नाड़ी के द्वारा हटाया जाता है जिससे मांसपेशियों में रक्त का प्रवाह बढ़ जाये। इस कारण पाचन क्रिया में बाधा पड़ती है। कम से कम खाने के एक घण्टे बाद किसी प्रकार का कठिन व्यायाम आदि आरम्भ करना चाहिए। क्रोध या किसी प्रकार की दूसरी उत्तेजना जो भोजन के समय हो, उसका भी हानिकर प्रभाव होता है। कारण एक ही है।

शक्ति की मांग [Energy Requirements]—भोजन की शक्ति का ताप गर्मी की इकाई [Heat Unit] से नापा जाता है जिसे कैलोरीज (Calories) कहते हैं। भोजन में उतनी क्लोरीज होनी चाहिये जितनी शरीर की शक्ति को आवश्यकता है। एक व्यक्ति जो बैठकर मानसिक कार्य करता है उसे ३००० कैलोरीज की २४ घन्टे में आवश्यकता है। स्त्रियों को १० ०/० कम चाहिए। जो ज्यादा परिश्रम का काम करते हैं उन्हें ५००० कैलोरीज २४ घण्टे में चाहिए।

(१) कैलोरीज में उतनी गर्मी है जितनी कि १ मिली मीटर पानी को १ डिग्री सेन्टीग्रेड ताप में ले जाने में लगे।

Enzyme एक प्रकार के खमीर का नाम है जो रक्त में उसके

हानिकारक कीटाणु नाशक द्रव्य वर्ग में है तथा प्रत्येक जीवित वस्तु, प्राणी एवं पौधे में इसका उत्पादन होता है। इसकी थोड़ी मात्रा मे ही शीघ्र रासायनिक परिवर्तन होते हैं। यह अपने आप में कम नहीं होता। साधारण खमीर (Yeast) में 'Enzyme' है। इसके द्वारा चीनी, 'अलकोहल' तथा कार्बन-डइ-आक्साइड में परिवर्तित होता है। Enzymes जीवित नहीं होते, अतएव वे शरीर के बाहर भी निरंतर कार्य कर सकते हैं। प्रत्येक 'Enzyme' की अपनी विशेषता हैं अर्थात् ये किसी विशेष मिश्रण को पृथक कर सकता है जैसे शरीर का Enzyme श्वेतसार या प्रोटीन को पृथक करता है।

पाचन एवं निष्क्रमण संस्थान पर व्यायाम का प्रभाव (Effect of Exercise on Digestive and Excretory System)—क्रियाशील गति विशेष कर धड़ की, आन्तरिक अंगों को बारी से निचोड़ती एवं ढीला करती हैं जिससे उन्हे रक्त अधिक मात्रा में मिलता है, उनके कोष्ठ उत्तेजित होते हैं तथा इसके द्वारा उनके रसायन पदार्थ के उत्पादन में वृद्धि होती है। इसके द्वारा उत्तम एवं पूर्ण पाचन क्रिया सम्भव होती है। शोषण (Absorption) तथा मिल जाना (Assimilation) भी उत्तम होता है तथा शरीर के सम्पूर्ण तन्तुओं को उत्तम पौष्टिक भोजन प्राप्त होता है। क्रियाशील गति से अच्छी भूख मालूम होती है जो शक्ति के प्रयोग के कारण जान पड़ती है तथा भोजन करने के पश्चात मिट जाती है। क्रियाशील गति के पश्चात प्यास भी अधिक मालूम होती है जिसकी तृप्ति के लिए पानी तथा तरल पदार्थ लेना पड़ता है। इससे निष्क्रमण संस्थान की क्रियाओं में सहायता मिलती है। यह ऐच्छिक मांसपेशियों की क्रियाओं के कारण अधिक रक्त के आने से सम्भव होता है। पसीना भी अधिक आता है क्योंकि पसीने की ग्रंथियां क्रियाशील होती हैं।

———

७

निष्क्रमण संस्थान

इस संस्थान का कार्य दूषित तथा व्यर्थ वस्तुओं को शरीर से बाहर निकालना है। इन संस्थान के अंतर्गत त्वचा, गुर्दे, फेफड़े तथा मल द्वार आते हैं। कड़े दूषित पदार्थ मल द्वार से निकलते हैं किन्तु तरल एवं गैस के पदार्थ फेफड़े, त्वचा तथा गुर्दे से निकलते हैं।

कार्बन डाइआक्साइड तथा पानी का फेफड़ों से निकलने का वर्णन हो चुका है। स्वास्थ्य में, शराब को छोड़ कोई और पदार्थ फेफड़ों से बाहर निकाले नहीं जाते।

पाचन क्रिया से बचे हुए भोजन का मल द्वार के बाहर निकालने का भी वर्णन हो चुका है। यकृत (Liver) में थके हुए लाल रक्त कण के रक्त रंजक से बने हुए पित्त का रंग मल में जाता है जिससे उसका विशेष रंग होता है।

गुर्दे [Kidneys]—दो गुर्दे मेरुदण्ड के दोनों ओर उदर की पिछली दीवार पर स्थित हैं। प्रत्येक गुर्दे में तन्तुओं की दो तहें हैं। एक बाहरी तथा दूसरी भीतरी। इसमें एक धमनी तथा एक शिरा और एक नली युरेटर [Ureter] जो कि मूत्र थैली से जुड़ी होती हैं। इसके तन्तु हजारों निष्क्रमण इकाइयों से बनी है और प्रत्येक में एक छोटी धमनी तथा एक छोटी शिरा है जो युरेटर से एक लम्बी नली से जिसमें अनेक फंदे हैं मिली हुयी है। ये बाहर निकालने वाली शाखों में, एक रक्त के गुच्छे का पात्र, जो एक थैली से ढका हुआ है, जिसका अस्तर एक विशेष कोष के द्वारा होता है, जिसमें चुनने की क्रिया होती है, केवल रक्त में कुछ ही पदार्थों को जैसे चीनी तथा नमक, नली वाले हिस्से में छन कर जाने देता है।

रक्त के गुच्छे [Glomeruli] के द्वारा जो तरल पदार्थ छनता है उसमें साधारण नमक, यूरिया तथा युरिक एसिड होता है। इसमें प्रोटीन या चर्बी नहीं होती। नीचे नली में जाते हुए पानी तथा साधारण नमक कुछ मात्रा में शरीर की आवश्यकतानुसार शोशित हो जाते हैं। गर्मी के दिन यदि कठिन परिश्रम किया जाये और पानी न पिया जाये तो एक गहरे रंग का तथा जमा हुआ मूत्र होता है जिसमें नमक कम होता है। पानी तथा नमक का त्वचा के द्वारा पसीना बनकर निकलना आवश्यक है।

किसी ठंडे दिन में यदि जब तरल पदार्थ का खूब सेवन किया जाये तो बहुत मात्रा में घुला हुआ मूत्र होगा। यह वह पानी होगा जिसकी शरीर को आवश्यकता नहीं होती है। मूत्र में ९६ प्रतिशत पानी तथा ४ प्रतिशत ठोस पदार्थ होता है जिनमें यूरिक एसिड, यूरिया तथा प्रोटीन का बचा हुआ भाग है।

त्वचा [Skin] यह शरीर का आवरण है। इसमें दो तहें होती हैं, बाह्य त्वचा [Epi Dermis] तथा मुख्य त्वचा [Dermis]बाह्य त्वचा कोषों की बनी होती हैं। व्यक्ति का रंग त्वचा के नीचे कोष्ठों (Colour Pigments) के द्वारा ही दिखायी देता है। त्वचा का पोषण लसीका द्वारा होता है, त्वचा के ऊपर बाल होते हैं जिनमें सुराख हैं इनकी जड़ों में दो तैल पदार्थ उत्पन्न करने वाली ग्रंथियां होती हैं। Dermis में अनेक केशिकायें होती हैं। पसीने की ग्रन्थियां जो केशिकाओं के चारों ओर रहती हैं उनका पसीना ले लेती हैं।

नमक तथा पानी, पसीने के रूप में त्वचा के द्वारा निकाले जाते हैं। पसीने की ग्रंथियां त्वचा की सतह पर विशेष यन्त्र द्वारा देखी जा सकती हैं। यह छोटे गड्ढों की तरह दिखाई देते हैं और जहाँ बाल नहीं होता है वहां अत्याधिक पाये जाते हैं। जैसे माथा, हथेली आदि में, गर्मी में पसीना शीघ्रता से निकलता है या कठिन परिश्रम के बाद निकलता है, जो बूंद के रूप में त्वचा पर दिखाई देता है। जैसे ही वह भाप बनकर उड़ जाता है त्वचा ठंडी हो जाती है। पसीना निकलने का अर्थ हैं कि त्वचा अधिक मात्रा में कार्बन डाइआक्साइड उत्पन्न कर रही है। पसीना निकलने का सही महत्व शरीर के ताप पर प्रभाव डालने पर है। शरीर तीन प्रकार से गर्मी बाहर करता हैं। प्रथम किरण

होकर निकलना, द्वितीय किसी वस्तु के द्वारा गर्मी निकालना। तृतीय भाप के द्वारा गर्मी निकालना। यदि वातावरण में वायु का तापमान शरीर के तापमान की भांति है तब गर्मी पसीने का रूप धारण करके निकलेगी। त्वचा का मुख्य कार्य अन्दर के तन्तुओं को कीटाणुओं से बचाना, पसीना बाहर निकालना, शरीर के ताप का संतुलन करना एवं स्पर्श अंग का कार्य करना है।

त्वचा एवं ताप संतुलन[The skin & heat balance] दो से तीन पाइन्ट पसीना प्रत्येक दिन निकलता हैं। शरीर में पच्चीस लाख पसीने की ग्रंथियां हैं जो एक वर्ग इन्च में ४०० हैं। कहीं कहीं एक वर्ग इंच में दो से तीन हजार की संख्या में पायी जाती हैं। शरीर का ५/६ ताप, भाप तथा त्वचा के सम्पर्क में हवा लग कर गर्म होने के द्वारा निकलता है। शरीर के पास का वायु शरीर से ढका होता है। शरीर का ताप सदैव ९८·४ अंश फारनहाईट या ३७ डिग्री सेन्टीग्रेड होता है। यदि शरीर क्रिया के द्वारा या वातावरण के द्वारा गर्म होता है तो मासपेशियां ढीली हो जाती हैं तथा वहाँ अधिक रक्त पहुँचता है तथा त्वचा के सम्पर्क में हवा के कारण गर्मी निकल जाती है। यदि वातावरण ठंडा हो तो केशिकायें सिकुड़ जाती हैं तब कम रक्त वहां जाता है। इससे तापमान बना रहता है।

त्वचा ज्ञानेन्द्रियों के सदृश्य [Skin as a Sense Organ]— त्वचा, आंख, आंतों आदि की तरह विशेष अंग नहीं है किन्तु इसमें स्पर्श नाड़ी एवं कण होते हैं। ये ज्ञानवाही नाड़ियां कुछ गर्म तथा कुछ ढंडे का अनुभव करती हैं, इनमें अधिकतर दबाव का अनुभव करने वाली नाड़ियां तथा चोट महसूस करने वाली नाड़ियां होती हैं। त्वचा के बालों के चारों ओर स्नायु तन्तु स्थित हैं जिनमें बालों के स्पर्श से गुदगुदी की जाने सी भावना मालूम होती है। Dermis में ज्ञानवाही नाड़ियों के अतिरिक्त मांसपेशियों एवं संधि की गोलाई में ज्ञानवाही नाड़िया होती हैं जिससे मस्तिष्क में अंग की स्थिति मांसपेशियों के सिकुड़ने की मात्रा का ज्ञान होता है। इस ज्ञान को छूने का ज्ञान [Kinaesthetic Sense] कहते हैं। किसी वस्तु की स्थूलता का ज्ञान इन्हीं के द्वारा होता है। कहीं-कहीं पर छूने का ज्ञान जैसे जीभ, गाल, उँगलियां, ओंठ आदि में दूसरे शरीर के स्थानों से अधिक होता है।

———

८

सन्तानोत्पत्ति संस्थान

सन्तानोत्पत्ति के अन्तर्गत पुरुष तथा स्त्रियों की जनेन्द्रियां आती हैं।

उच्च श्रेणी के दूध पिलाने वाले प्राणियों में जीव उत्पत्ति के लिए नर मादिन के गर्भ मार्ग नली में वीर्य छोड़ता है। गर्भाशय नली में जहाँ तैयार अंडकोष उपस्थित रहते हैं किसी एक वीर्य जीवाणु से मिलकर नये जीव की उत्पत्ति आरम्भ करते हैं। यह मिलना Zygote कहलाता है। यह नया जीव मां के गर्भाशय में पोषित होता है जब तक वह जन्म लेकर बाहर न आ जाये।

स्त्री के जनेन्द्रिय में, एक ३" × २" × १" की नाशपाती के समान मांसपेशियों की एक थैली होती है जिसे गर्भाशय Uterus या Womb कहते है जिसका द्वारा मटर के दाने के बराबर होता है तथा एक चार इन्च मांसपेशियों की नाली Vagina में खुलता है। यह नाली बाहर जनेन्द्रिय के रूप में श्लैष्मिक झिल्ली से मढ़ी हुयी होती है। गर्भाशय के ऊपरी आधार तथा चौड़े हिस्से के दोनों ओर दो पतली गर्भ नली (Fallopian Tube) निकलती हैं जो एक अंडाशय (Ovaries) में जाकर खुलती हैं। अंडाशय दो होती हैं, दाहिनी तथा बांयी। गर्भाशय, मूत्राशय एवं गूदा के बीच तने लचीले बंधनी [Ligaments] से अपने स्थान में स्थित है।

अंडाशय, एक इन्च लम्बी अंडाकार अंग हैं। जन्म के समय प्रत्येक में प्राय: ३२००० अंडकोष [Ova] परिपक्वता [Puberty] तथा रजस्वला [Mensturation] तक शान्त पड़े रहते हैं। यह अवस्था ११-१५ बर्ष के बीच में आती है। रजस्वला के आरम्भ होने पर अंडकोष पक जाते

है तथा महीने में एक बार दोनों अंडाशय से वारी-बारी से बाहर गर्भनली के द्वारा सीलिया के तालबध क्रिया कारण गर्भाशय में आते हैं। दो रजस्वला के बीच २४-३१ दिन का अन्तर हो सकता है। यदि ये यहाँ उत्पादक [Fertilised] नहीं होते तथा गर्भाधान [Conception] नहीं होता तो शरीर के बाहर गर्भ नली के मार्ग से निकल जाते हैं। गर्भस्थापन के पश्चात रजस्वला बन्द हो जाता है। किसी किसी में रोग के कारण कुछ रक्त कभी-कभीदिखायी दे सकता है। वह स्त्री के अंडों की तैयारी की क्रिया रजस्वला की अवधि के बीच में होती है। अतएव यह बताया गया है कि रजस्वला के १३-१५ दिन के बीच में गर्भाधान की पूर्ण सम्भावना होती है। परिवार नियोजन [Family Planning]के दृष्टिकोण में इसके अतिरिक्त सुरक्षित समय[Safe Period] कहा गया है। इस समय समभोग से वंचित रहने से ७५ प्रतिशत संतानोत्पत्ति न होने की सम्भावना हैं। जो भी प्रणालियां या द्रव्य जिनके द्वारा अंडकोष एवं वीर्यजीवाणु का सम्मेल रुक जाये या वीर्यजीवाणु शक्ति हीन कर दिये जायें वे परिवार नियोजन में सहायक सिद्ध होंगे तथा उनके प्रयोग से किसी प्रकार की हानि की सम्भावना नहीं। आधुनिक परिवार नियोजन की प्रणाली स्त्रियों में लूप [Loop] लगाने की हैं जिससे वीर्य जीवाणु तथा अंडकोष में सम्मिलित नहीं हो पाता तथा पुरुषों के लिए नसबन्दी का उपाय है जिसमें वीर्यजीवाणु बाहर नहीं आ सकते हैं, इन दोनों उपायों से किसी प्रकार कामशक्ति या कामेच्छा में बाधा नही होती तथा शरीर में किसी प्रकार का विकार नहीं होता। भारतवर्ष ऐसे देश में जहाँ जनसंख्या की समस्या विकट है वहां इसके प्रति उचित ध्यान देने की आवश्यकता है। स्त्री में रजस्वला ४५ वर्ष या ५० वर्ष तक होती रहती है जिसके पश्चात् वह समाप्त हो जाता है। जिसे [Climacteric] कहते हैं।

पुरुषों में वीर्य जीवाणु दो फोतों या मस्क [Testes] में जो स्त्रियों के अंडाशय के समान है उत्पन्न होते हैं। फोतों के ऊपर एक त्वचा का आवरण चढ़ा हुआ होता है [Scrotum] जो एक प्रकार की थैली सी होती है तथा उन्हें पुरुष लिंग [Penis] के पीछे स्थित रखती है। वीर्य जीवाणु स्त्री के अंडे या अंडकोष के समान अत्यन्त छोटे हैं तथा उनकी एक पतली पूंछ होती है जिसके सहारे से उनमें गति होती हैं। इन फोतों के रस में असंख्य वीर्य जीवाणु होते हैं। ये यहाँ से एक सकरी घुमावदार

नाली के द्वारा शरीर से बाहर लिंग की पेशाब की नली के द्वारा बाहर निकलता हैं। सम्भोग के समय पुरुष लिंग में रक्त प्रवाह के कारण कड़ापन आजाता है जिससे गर्भ नली मे उसे डाल कर निकास क्रिया [Eiaculation] से वीर्य जीवाणु गर्भाशय के पास छोड़े जाते हैं। यहाँ से वे ऊपर जाते हुए गर्भाशय में पहुँचकर गर्भनली में स्त्री के अंडे से मिलकर एक हो जाते हैं तथा एक होकर नये जीवन का आरम्भ करते हैं। इस मेल से जो इकाई प्राप्त होती है वह शीघ्रता से दो, चार, आठ, सोलह आदि कोष्ठों में विभाजित होती हैं तथा गर्भाशय में उतर जाती हैं। यहाँ यह अपने को गर्भाशय की दीवार से चिपका लेती है। यहीं वह माँ से भोजन उसके रक्त के द्वारा प्राप्त करता है तथा नौ महीने तक बढ़ता रहता है। यह एक पानी की थैली में [Water Holding Membrane] ; बढ़ता है जिसे धक्का आदि से नवजात को हानि न हो। गर्भाशय की लचीली मांसपेशियां बढ़ती हैं तथा जब समय पूरा हो जाता है तो सिकुड़ने की क्रिया के द्वारा बालक को बाहर करती हैं। बालक बढ़ने के समय गर्भाशय में उल्टा रहता है जिससे जन्म के समय सिर सबसे पहले बाहर आ जाये।

व्यक्ति के दृष्टिकोण से अंडाशय तथा फोते महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इन्हीं से Hormones का उत्पादन होता हैं। ये नलिका विहीन ग्रन्थियों के रसायनिक पदार्थों से मिललर यौनिक विशेषता एवं ताल, जैसे परिपक्वता के समय बालों का उगना, लड़कों में आवाज़ का परिवर्तन, लड़कियों में उरोज का उभार तथा रजस्वला। पुरुष एवं स्त्रियों का विशेष शारीरिक आकार भी कुछ न कुछ इन्हीं हारमोन्स पर निर्भर रहता है।

———

९

शरीर के विशेष अंग

मनुष्य अपनी इन्द्रियों को उचित रीति से विकसित करने के द्वारा ही सुरक्षित रह सकता है। मनुष्य की इन्द्रियां हैं चक्षु, कर्ण, नासिका, जिह्वा तथा त्वचा। आधुनिक विद्या में Sixth Sense का भी वर्णन किया जाता है जो समय एवं स्थान की परिधि से परे है। वातावरण से सम्पर्क एवं उसके ज्ञान के लिए देखना, सुनना, सूँघना, स्वाद तथा छूना आवश्यक है। प्रथम चार अवस्थाओं में इन्द्रियां सीधे मस्तिष्क से सम्पर्क स्थापित करती हैं किन्तु छूने तथा मांसपेशियों से प्राप्त उत्तेजना सुषुम्ना से होकर मस्तिष्क में जाती है।

सूंघना तथा स्वाद परस्पर सम्बन्धित है। सूंघने की उत्तेजना छोटे कणों के द्वारा होती है जो सूंघे जाने वाली वस्तु से आकर घ्राण नाड़ी [Olfactory Nerves] के स्नायु सिरों पर जो नाक के पीछे ऊपर एक पीले तन्तुओं के क्षेत्र में स्थित होती हैं बैठती है। यह क्षेत्र एक वर्ग इन्च का चौथाई हिस्सा है।

स्वाद की उत्तेजना जीह्वा के स्वाद नाड़ियों के सिरों के द्वारा होती है। मुख्य स्वाद, नमकीन, मीठा खट्टा तथा कड़ुआ होता है अन्य स्वाद इनके मिश्रण से होते हैं। मीठा जिह्वा के सम्मुख तथा कड़ुआ जिह्वा के पीछे मालूम होता है। सर्दी या जुखाम से स्वाद का ठीक पता नहीं चलता।

कान [Ear]—आवाज वायु के कम्पन [Vibrations] के द्वारा सम्भव होती है। यह किसी गति पूर्ण वस्तु या व्यक्ति से कम्पन के आगे जाने के कारण होता हैं। कम्पन एक स्थान से चारों दिशा में उसी प्रकार जाती है जैसे किसी नदी में पत्थर फेंकने पर जहां पत्थर गिरता है उस स्थान से चारों

ओर लहर वृत्ताकार प्रकार से दोनों तट के समीप तक जाती हैं। जाती हुयी इन लहरों की तीव्रता कम होती जाती है दीखने में भी कठिनाई होती हैं। कान आवाज कम्पन को जमा करता तथा उनके प्रभाव को मस्तिष्क तक पहुँचाता है जहां उसे अर्थ दिया जाता है।

कान की बनावट खोपड़ी की हड्डी के अन्दर स्थित है जो तीन हिस्सों में विभाजित है। ये है बाह्य, मध्य एवं अन्तस्थ कोठरियां। बाह्य कर्ण के सवा इन्च परिधि कोमल अस्थियों का एक पर स्वरूप बनावट हैं जिसका अब कोई प्रयोजन प्रतीत नहीं होता।

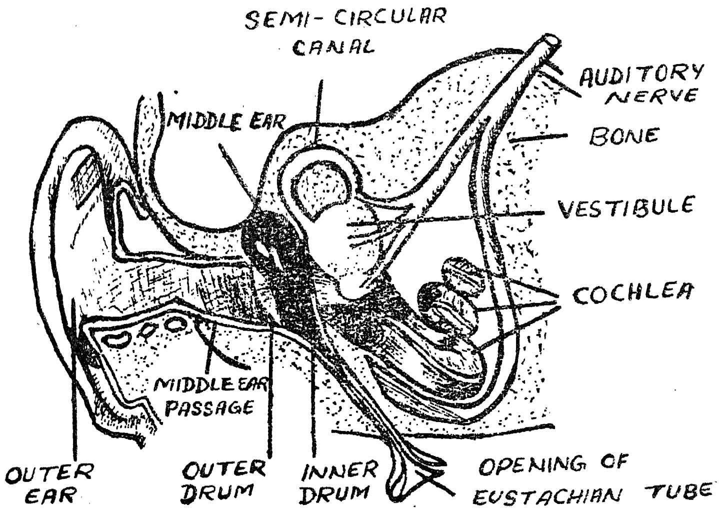

[i] **बाह्य कर्ण** [The Outer Ear] एक पतली हड्डी की नली है जो अन्दर के सिरे पर लचीली झिल्ली से मढ़ी है जिससे सम्पूर्ण नली ढँक जाती है। नाली की दीवार से एक जहरीला मोम निकलता है जिसके कारण कीटाणु कान के अन्दर जाने से रुक जाते हैं। कान की बाह्य बनावट सीप के समान होती है।

[ii] **मध्य कर्ण** [TheMiddle Ear]—मध्य कर्ण कनपटी में

एक छोटा स्थान है जो बराबर नहीं है। बाहरी कान की झिल्ली के अन्दर बीच से 'हैमर बोन' Hammer bone मिला हुआ है जिसका सम्बन्ध आनविल [Anvil] तथा 'स्टिरप' [Stirrup bones] से है। Stirrup Bones एक छोटे अंडाकार खिड़की [Oval Window] पर स्थित है। यही अन्दर की झिल्ली [Drum] है जो अन्तस्थ कर्ण [Inner Ear] से मिलती है। मध्य कर्ण एक कोठरी है किन्तु यह गले में Eustachian Tube के द्वारा नाक के पीछे के हिस्से में खुलती है। यह श्लैष्मिक झिल्ली से मढ़ा हुआ होता है। यदि मध्य कर्ण में वायु जाये तो बाहरी परदे या झिल्ली पर वायु का दबाव परदे के दोनों ओर बराबर रहेगा। नाक में Adenoids के कारण बहरापन हो जाता है क्योंकि वे Eustachian Tube पर दबाव डालते हैं तथा मध्य कर्ण के रिक्त स्थान में वायु को जाने से रोकते हैं।

[iii] अन्तस्थ [The Inner Ear] हड्डी में एक असमान स्थान है जो एक रंगविहीन तरल पदार्थ से भरा हुआ है जिसमें श्रवण नाड़ी [Auditory Nerve] के सिरे निकले रहते हैं। आवाज़ कम्पन से बाह्य कर्ण का परदा या झिल्ली [Drum] हिलते हैं तथा उस कम्पन से तीन छोटी हड्डियों के द्वारा अन्दर के परदे [Drum] भी हिलती हैं। इसके कारण अन्तस्थ कर्ण के तरल पदार्थ में गति होती है जिससे उसमें कम्पन होता है। इस कम्पन या तरल पदार्थ के गति से श्रवण नाड़ियां गतिमान होती है तथा उत्तेजना प्रवाहित करती हैं। अन्तस्थ कर्ण के तीन हिस्से हैं, कर्ण कुटीर [Vestibule] के साथ 'कोकिलिया' [Chochlea] तथा दोनों ओर अर्ध चक्राकार नालियां [Semicircular Canal] कोकिलिया [Chochlea] के द्वारा आवाज में भेद पहचाने जाते हैं। अन्दर का ढांचा एक घसकते हुए शिखर में लिपटे हुए घोंघे के सीप के समान है। यह शिखर तीन कोठरियों में विभाजित है तथा विभाजन की प्रणाली अपनी लम्बाई में लगातार है। विभाजन पर श्रवण नाड़ियों के सिरे निकलते हैं जो ऊपरी सतह पर बाल की तरह कड़े निकास हैं। ऐसा मालूम होता है किसी वजन के उठाने के लिए अन्त्र लचीली झिल्ली पर तथा उनके ऊपर कड़ा ताक [Shelf] लटका हुआ लगाया गया है। जब अन्दर का परदा [Drum] आवाज के तरंगों से हिलता है तो अन्दर के तरल पदार्थ में गति होती है तथा कोकिलिया Chochlea की नाड़ियों के सिरे अपने ऊपर के ताक [Shelf] से टकराते हैं। इनके द्वारा

उत्तेजना होती है जिसका अनुवाद मस्तिष्क के श्रवण केन्द्र में आवाज से होता है।

विभिन्न स्नायु सिरे विभिन्न प्रकार की आवाज से उत्तेजित होते है। मनुष्य आवाज की कुछ ही सीमा तक सुन सकता है। श्लैष्मिक झिल्ली के द्वारा बनाया हुआ त्रिकोण स्थान [Vestibule] तथा अर्धचक्राकार नलिका The Semicircular Canal एक दूसरे से समकोण बनाती हैं। इनका सम्बन्ध शरीर की गति एवं संतुलन से है। यदि शरीर गोल घूमता है तो नाली में कुछ तरल पदार्थ छूट जाता है जिससे जो नाडी स्नायु के सिरे उसमें है उसी घूमने की उत्तेजना को मस्तिष्क में भेजता है तथा उसी प्रकार मस्तिष्क शरीर के आसन के समायोजन का समन्वय करता है। शरीर गोल घुमाने से सिर में चक्कर आने का कारण है कि शरीर के घुमाने से नाली में तरल पदार्थ भी घूमता है तथा जब शरीर रुक भी जाता है तब भी वह घूमता रहता है। जब तक वह रुक नहीं जाता तब तक शरीर का संतुलन नहीं होता। अतः शरीर का संतुलन तथा स्थिति मांसपेशियों में स्नायु सिरों का कार्य लघु मस्तिष्क Crebellum तथा कान पर निर्भर है। नियन्त्रण:—आदत के द्वारा होता है जो अचेतन होता है तथा आवश्यकतानुसार मस्तिष्क के द्वारा चेतन होता है।

आँख

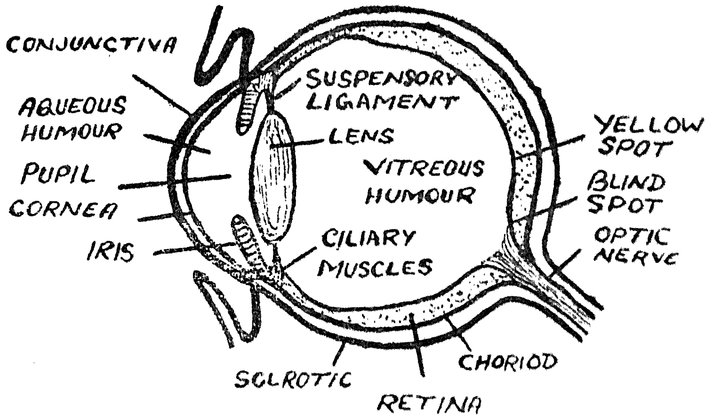

आंख एक प्रकार की बनावट है जो रोशनी के प्रभाव को कक्षु स्नायु के फैले हुए स्नायु सिरों पर जिसे दृष्टि पटल (Retina] कहते हैं उन पर केन्द्रित करने का है। गोलाकर अक्ष गोलक [Spherical Eye Ball] अपनी हड्डी के गढ़ों में सुरक्षित रहता है। आंख के सम्मुख का भाग ऊपरी तथा निचली पपोटे [Eye Lids]से सुरक्षित रहता है। पलक के अन्दर तथा अक्ष गोलक के ऊपर एक पार दर्शक स्नैहिक झिल्ली [Serous Membrane] जिसे श्वेत पटल [Conjunctiva] कहते हैं लगातार मढ़ा रहता है। प्रत्येक आँख के ऊपर बाहर के कोनों में अश्रु ग्रंथी [Tear Gland] स्थित हैं। यदि आंख में चोट लगे या व्यक्ति संवेगात्मक प्रभाव के अन्तर्गत हो तो अश्रु आंख की सतह पर आते हैं तथा अश्रु नली के खोल द्वारा जो अन्दर कोने में स्थित है, बाहर नाक में जाता है। अश्रु से कीटाणुओं का नाश होता है। पपोटों के अन्त सिरे पर पलकें [Eyelashes] होती हैं जो बाहर से आने वाली वस्तुओं से आंख को बचाती है तथा मैवोमियन ग्रंथियों [Meibomian glands] की दरार से जहाँ वसा छिपा हुआ है सम्पूर्ण पपोटों में लगातार रहता है जिससे किसी प्रकार का संघर्ष या चोट दोनों पपोटों के आपस में मिलने पर न हो तथा अश्रु गालों पर बहने से रोके जा सकें।

पपोटे के अन्दर कोने में तीसरे पपोटे का चिन्ह है। अक्ष गोलक का बाहरी श्वेत पटल की झिल्ली जो कि आंख की सफेदी के रूप में दिखायी देती है अत्यन्त ही कड़ी एव मजबूत है विशेषतया पीछे की ओर। इसकी बाहरी सतह पर पीछे तीन मांसपेशियों का जोड़ मिला हुआ है जो आंखों को घुमाते हैं। इनका दूसरा सिरा आंख की हड्डी के गढ़ों में घुसा हुआ होता है। एक प्रतिरोधी मांसपेशी का जोड़ आंखों के घुमाने पर नियन्त्रण करता है जिससे अन्दर तथा बाहर देखा जा सके, दूसरी मांसपेशी का जोड़ ऊपर तथा नीचे की गति का नियन्त्रण करता है तथा तीसरी मांसपेशी का जोड़ आड़े तिरछे स्थित हैं जिसके द्वारा शेष अन्य कार्य होते हैं। ये ६ एक साथ सिकुड़ कर गति में आंख को ठीक रखते हैं।

आंखों के कार्य का उदाहरण कैमरा से दिया जा सकता है। कैमरा आंखों के समान ही बना है। लेन्स [Lens] आँखों को दो हिस्सों में विभाजित करता है। आँखों के सम्मुख का भाग, श्वेत पटल [Scelerotic Coat] पार-

दर्शक हो जाता है तथा और मध्याक्षेत्र [Convex] हो जाता है जिसे कनीनिका [Cornea] कहते हैं। आंखों के सम्मुख की कोठरी एक रंग विहीन पानी की तरह के पदार्थ से भरा हुआ है जिसे आंख का पानी [Aqueous Humour] कहते हैं जो मध्य क्षेत्र कनीनिका को ढांचा देता है तथा जैसे जैसे वह अपने को फिर से नया कर लेता है बाहर निकलता रहता है और लेन्स [Lense] तथा उपतारा [Iris] को पौष्टिक भोजन देता है और दूषित पदार्थों को हटाता रहता है। लेन्स के सम्मुख उपतारा [Iris] हैं। इसी के रोग़न [Pigment] से आँखों का भूरा, नीला या अन्य रंग दिखायी देता है। उपतारा एक प्रकार की अनैच्छिक रीति से सिकुड़ने वाली मांसपेशी है जो अपने ऊपर रोशनी को प्रतिबिम्बित रूप से लेती है तथा आंख के अन्दर जाने वाली रोशनी पर नियन्त्रण करती है। बीच के काले छेद को पुतली [Pupil] कहते हैं। इसके काला दिखने का कारण है कि यह कोठरी के अन्दर के अंधेरे में देखता है। अंधेरे में उपतारा पीछे खिच जाता है तथा पुतली का काला भाग बड़ा दिखता है। रोशनी में उपतारा अधिक दिखता है तथा पुतली छोटी होती है।

उपतारा रोशनी के विस्तृत परिवर्तन के प्रति शीघ्र प्रतिक्रिया नहीं करता। रोशनी से अंधेरे में अक्समात आने पर कुछ देर के बाद अंधेरे में साफ दिखायी देता है। उपतारा के ठीक पीछे वृताकार लेन्स हैं जो अपने स्थान पर तने हुए प्रवर्द्धनों [Suspensory Ligaments] से जो लेन्स को श्वेत पटल से मिलाता है अपने स्थान पर स्थित रहते हैं। आंख के अन्दर की कोठरी अपने गोलाकार रूप में एक रंग विहीन जेली के समान पदार्थ के द्वारा जिसे Vitreous Humour कहते हैं स्थित है। श्वेत पटल के अन्दर आंख का कृष्ण पटल [Choroid Coat] है जो धुंधला काला रोग़न को ढीली प्रकार से स्थित करता है। रोग़न का विटामिन ए [Vitamin A] से सम्बन्ध है। यह रोगन रोशनी में प्रयोग कर लिया जाता है तथा अंधेरे में विशेषकर सोने में फिर से नया कर लिया जाता है। इसीलिये बच्चों को अंधेरे में सोने की आदत डालना चाहिये। कृष्ण पटल के अन्दर चक्षु पटल [Retina] स्थित है। यह दृष्टि नाड़ी के स्नायु सिरों का खाली रूप से फैली हुयी झिल्ली है।

लेन्स, रोशनी के किरणों को जो उसके द्वारा आती हैं मोड़ देती है जिससे वे मिलकर शीघ्र चैतन्य चक्षु पटल पर केन्द्रित होती हैं तथा देखी हुयी वस्तु का एक चित्र बन जाता है।

२०' से अधिक दूरी की वस्तु देखने के लिये दृष्टि केन्द्रित करने में लेन्स के ढाँचे में परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं होती किन्तु इससे कम दूरी के लिये पलक सम्बन्धी मांसपेशियाँ [Ciliary Muscles] सिकुड़ती है जिससे तानने वाले बंधनी लेन्स को अधिक कुबड़ा [Convex] कर दें जिससे रोशनी की किरण दृष्टि पटल पर केन्द्रित हों। इस लेन्स के सूक्ष्म नियन्त्रण को Accomodation कहते हैं।

आँखों में जाने वाली किरणों के मोड़ने का दो बटा तीन हिस्सा कार्य कनीनिका तथा Aquous Humour का होता है। महत्वपूर्ण विषय लेन्स के लचीलेपन में हैं।

दृष्टि पटल [Retina] जो दूध के समान श्वेत धुँधले 'फिल्म' के समान दिखता है वह विभिन्न स्नायु सिरों से जिसे Rods तथा Cones कहते हैं बना हुआ है। Rods काला तथा सफेद के पहचानने के लिए अर्थात् अंधेरे में देखने के लिये है तथा Cones दिन में रंगों को पहचानने के लिए है। रोशनी उन पर सीधे नहीं लगती। Rods एवं Cones एक रसायनिक पदार्थ से घिरे हुये हैं जो रोशनी से शीघ्र उत्तेजित होते हैं। Rods एवं Cones रसायनिक पदार्थ के परिवर्तन से प्रभावित होते हैं।

बन्दरों तथा मनुष्यों में एक विशेष तीक्षण दृष्टि है जो अक्ष गोलक की पिछली दीवार के केन्द्र में स्थित है Yellow Spot कहते हैं। उत्तम दृष्टि के लिये इसी पर सम्पूर्ण रोशनी केन्द्रित होती है।

जहाँ दृष्टि नाडी अन्दर जाती है वहां दृष्टि पटल रोशनी से उत्तेजित नहीं होता। यह छोटा क्षेत्र Blind Spot कहलाता है।

———

१०

स्वास्थ्य विज्ञान एवं स्वास्थ्य शिक्षा

जल

संसार में दो तिहाई जल है। मनुष्य के शरीर में भी दो तिहाई जल है। सर्वत्र जल का अधिक अंश है तथा यह जीवन के लिये अति आवश्यक है। जल हाइड्रोजन तथा आक्सीजन के मेल से बनता है।

जल के दो प्रकार हैं कड़ा [Hard] तथा मुलायम [Soft] कड़े पानी में नमक का अंश अधिक होता है तथा साबुन लगाने से फेन नहीं होता। मुलायम पानी में साबुन का फेन होता है।

जल प्राप्त करने के स्रोत हैं, वर्षा, नदी, नाले, झरने, तालाब, झील कुएँ एवं टियूबवेल।

स्वच्छ जल का सदैव प्रयोग करना अति आवश्यक है क्योंकि जल के द्वारा कीटाणु मनुष्य के शरीर के अन्दर जाकर घातक रोग उत्पन्न कर सकते हैं। स्वास्थ्य एवं आरोग्यता के लिये स्वच्छ जल जैसे अन्य स्वच्छ वस्तुयें प्रयोग होती हैं करना उचित है।

जल को स्वच्छ करने के उपाय हैं, उबालना [Boiling], स्रवन [Distillation], जिसमें पानी को भाप बनाकर ठंडा किया जाता है; अवक्षेपक [Precipitants], रसायनिक क्रिया द्वारा, जैसे फिटकरी, चूना, क्लोरिन तथा परमाग्नेट आफ पोटाश; फिल्टर के द्वारा आदि।

स्कूलों में जल संग्रह एवं वितरण का उचित उपाय होना आवश्यक है।

जल ऐसे स्थान में संग्रह करना चाहिये जहां स्थान साफ हो धूप की रोशनी आती हो तथा शुद्ध वायु हो। स्थान ढका एवं सुरक्षित हो जिससे किसी प्रकार मैल या कीटाणु उसके अन्दर न जा सके।

जल वितरण का सबसे अच्छा उपाय नल के द्वारा है। जहां पानी निकालने की आवश्यकता होती वहाँ निकालने का बर्तन शुद्ध तथा मुठियादार होना चाहिये जिससे हाथ पानी से न छू जाये। पानी संग्रह करने के स्थान में पानी गिर कर जमने न पाये। पानी का बहाव अच्छा होना चाहिये। किसी प्रकार का कपड़ा धोना, हाथ आदि धोना पीने के पानी के संग्रह स्थान के समीप नहीं होना चाहिये। संग्रह स्थान को समय समय पर साफ करना एवं प्रतिदिन स्वच्छ पानी का संग्रह करना आवश्यक है। जहां तक सम्भव हो बालक एक ही बर्तन से पानी न पियें। यदि एक बर्तन से पीना है तो प्रत्येक के पीने के पहले बर्तन पूर्णरूप से साफ करना आवश्यक है। कागज या मिट्टी के कुल्हड़ इस काम के लिये सुविधाजनक हैं।

व्यक्तिगत तथा सामूहिक स्वास्थ्य

वायु, प्रकाश, साफ वायु का आना जाना, सफाई तथा कूड़ा फेंकना,

(Sanitation, air, light, ventilation, cleanliness and disposal of garbage.)

स्वास्थ्य रक्षा, स्वास्थ्य का ठीक रखना तथा रोगों से बचने की विद्या है। स्वास्थ्य रक्षा के नियमों का पालन करना ही सफाई से लाभ उठाना है जिनके द्वारा स्वास्थ्य के नियम पालन किए जाते हैं। यद्यपि स्वास्थ्य के नियम सारे संसार में एक है किन्तु उनके पालन करने की रीति भिन्न-भिन्न होती हैं। ये रीतियाँ साधारणतः देश, समय, जाति प्रथा आदि के ऊपर निर्भर रहती है।

स्वास्थ्य रक्षा में व्यक्तिगत स्वास्थ्य तथा समाज स्वास्थ्य दोनों आते हैं। व्यक्तिगत स्वास्थ्य, स्वस्थ दैनिक चर्य्या जिसमें समय से काम करना, समय से विश्राम, समय से पौष्टिक भोजन खाना, व्यक्तिगत सफाई, स्नान, मलमूत्र त्याग करना, साफ वस्त्र, बाल, नाखून इत्यादि आते हैं। दांत, कान, मुँह तथा

नाक की सफाई इसमें आवश्यक है। खुले में रहना, शुद्ध वायु का सेवन, प्रकाश में रहना, शुद्ध जल का प्रयोग, सही मनोरंजन, शरीर, मन तथा आत्मा की पवित्रता भी शारीरिक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है।

समाज की सफाई- वातावरण की सफाई, सड़क, मोहल्ले, नगर, देश यह प्रत्येक व्यक्ति का उत्तरदायित्व है कि वह इस बात को देखें कि वातावरण किसी प्रकार दूषित न हो। इधर उधर मल-मूत्र त्यागना, थूकना, कूड़ा आदि न फेंकना चाहिए। नाले आदि में पानी न सड़े। हर उपाय से संक्रामक रोग को शीघ्रता के साथ रोकना तथा चिकित्सा करनी चाहिये। सार्वजनिक स्वास्थ्य स्थान, सफाई से उपयोग किये जायें। मेले, त्योहार, समारोह के समय शुद्ध वस्तुओं का प्रयोग हो। वैसी वस्तुयें न बिकनी चाहिये जिनके द्वारा रोग हो जाने का संदेह हो। पानी पीने का जल स्रोत साफ हो तथा किसी प्रकार से गन्दगी न होने पाये क्योंकि यह बीमारी का कारण हो सकता है। लोगों को स्वास्थ्य के विषय में शिक्षित किया जाये।

वायु—मनुष्य के जीवन के लिए आक्सीजन सबसे ज्यादा आवश्यक है। इसकी सहायता से पची हुई खुराक जलकर बदन में गर्मी तथा शक्ति पैदा करती है। हवा में नाइट्रोजन तथा कार्बन डाइ आक्साइड भी होता है। हवा धूल से सबसे ज्यादा अशुद्ध होती है। धूल में असंख्य हानिकारक पदार्थ होते हैं तथा स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं। थूक तथा मलमूत्र के सूखने पर जो कीटाणु हवा में मिल जाते हैं वे अत्यन्त हानिकारक होते हैं।

शहर की हवा को धुंआ और गैस खराब कर देती है जो कि आग जलने से तथा मिलों से आती है। पत्थर के कोयले के धुंए से भी हानि होती है। इन सब में अधिक जहरीली कार्बन मोनो आक्साइड होती है।

हवा का आना जाना (Ventilation)—स्वास्थ्य को बनाये रखने और शरीर के आराम के लिये ऐसी साफ हवा इकट्ठा करना जिसका तापक्रम, तरी और गति स्वास्थ्य के लिए ठीक हो तथा जो गर्म, तर और अशुद्ध हवा को निकाल दे उसको हवा का आना जाना (Ventilation) कहते हैं। वायु मण्डल को बनाने के लिये हवा का आना जाना बनावटी या प्राकृतिक रीति से किया जा सकता ।है निम्नलिखित तीन रीतियों से यह कार्य हो सकता है।

१—हवा के तेज़ चलने से । २—उचित गर्मी रहने से । ३—गन्दगी को हटाने अथवा नाश करने से ।

(१) हवा चलना—तेज हवा के चलने से साफ हवा गन्दी हवा का स्थान लेती है । हवा की चाल सफाई करती है । बिजली के पंखे आदि इसी लिए प्रयोग किये जाते हैं । हवा शरीर को ठंडा करने में सहायक है ।

(२) उचित गर्मी—गर्म हवा ऊपर उठती है तथा उसका स्थान ठंडी हवा ले लेती है । इसी तरह ठंडी हवा खिड़कियों तथा दरवाजों से अन्दर आती है ।

(३) गन्दगी का नाश करना-हवा की गन्दगी दूर करने के लिए आंधी, बरसात, सूर्य का प्रकाश तथा पेड़-पौधे लाभदायक होते हैं । बरसात का पानी हवा की गन्दगी को धो देता है । सूर्य का प्रकाश कीटाणुओं का नाश करता है । पौधे कार्बन डाइ-आक्साइड हवा में से ले लेते हैं तथा उसके बदले आक्सीजन देते हैं ।

हवा के आवागमन की बनावटी रीति, हवा का निकलना (Extraction), **हवा का ढकेलना** (Propultion)—हवा को निकालना-पंखों को चलाकर हवा निकालना, कमरों को गर्म करके हवा निकलना ।

हवा का ढकेलना—जैसे हवा अन्दर आती है उसी प्रकार उसे बाहर निकलने की भी व्यवस्था होती है जैसे बड़े बड़े हाल, थियेटर, असेम्बली हाल आदि में होता है । हवा बाहर निकालने के तीन साधन हैं खिड़की एवं दरवाजे, चिमनी तथा पंखे के द्वारा जो ऊपर दीवार में बाहर खुलकर लगते हैं । Sky light तथा छत के पास खुले स्थानों द्वारा यह क्रिया सम्भव है ।

दूषित वायु का प्रभाव (Effect of Poor Ventilation)-बन्द कमरे में जहां स्वच्छ वायु नहीं पहुंचती वहां वातावरण के दोष के कारण दूषित प्रभाव होगा । ताप का अधिक होना, वायु में अधिक नमी, वायु की गति में कमी तथा रोग पूर्ण कीटाणुओं की उपस्थिति कुछ दूषित प्रभावों में से हैं ।

यदि कमरे का तापमान अधिक गर्म है तो शरीर के ताप में तथा उस में अधिक भिन्नता नहीं होगी जिससे शरीर सम्पर्क में आने वाली वायु को गर्म

कर सके जिससे वे ऊपर उठें तथा ठंडी हवा को वहां आने के लिये स्थान दें। यदि हवा में नमी अधिक है तो पसीना सूखने के द्वारा गर्मी के निकलने में सहायता नहीं हो सकती। वायु की गति के कारण शरीर की गर्मी तथा नमी निकलती है। खुली खिड़की इसके लिये अत्यन्त उत्तम है। इन प्रभावों के कारण मानसिक एवं शारीरिक थकान उत्पन्न होती है। सिर दर्द एवं शिथिलता आती है। रोग लगने की सम्भावना है।

सूर्य प्रकाश—सूर्य से जीवन प्राप्त होता है। इसके द्वारा मानव शरीर में रोग निवारण क्षमता, मांसपेशियों का विकास तथा पाचन क्रिया में वृद्धि होती है। सूर्य के प्रकाश में विटामिन डी अधिक मात्रा में मिलता है। इससे शरीर को बहुत लाभ होता है। इसके ही द्वारा क्षय रोग, सूखे की बीमारी, गठिया, रक्तहीनता आदि रोगों के उपचार में भी अधिक सहायता मिलती है। जिस स्थान पर सूर्य का प्रकाश नहीं पहुंचेगा वहाँ एक प्रकार की तरी रहेगी तथा ऐसी अवस्था में रोगों के कीटाणु बहुत ही बढ़ते हैं। किसी स्थान को शुद्ध तथा स्वस्थकर रखने के लिए पर्याप्त मात्रा में सूर्य के प्रकाश का आना अत्यन्त आवश्यक है। जिस प्रकार जब कोई पौधा अंधेरे में रहता है तो बहुत तेज़ी से बढ़ता है किन्तु बहुत ही निर्बल रहता है; जो सूर्य के प्रकाश में बढ़ता है वह धीरे धीरे बढ़ता है किन्तु ताकतवर होता है, उसी प्रकार सूर्य के प्रकाश में रहने से शरीर स्वस्थ होगा तथा उसके अभाव से रोग उत्पन्न होने की शंका है। घरों में, कक्षा ग्रहों में, दफ्तरों आदि में सूर्य की रोशनी के आने का प्रबन्ध होना आवश्यक है।

सफाई या गन्दगी का निवारण (Cleanliness or disposal of garbage)-काम में न आनेवाली चीजें, मल मूत्र, कूड़ा-करकट इकट्ठा करने और दूर करने को सफाई कहते हैं। इनके निम्नलिखित उपाय हैं।

[१] मैला किसी बर्तन में एकत्रित करना चाहिये जो साफ भी हो जाये तथा वहां से मैला आसानी से फेंका जा सके। बर्तन ढक्कनदार होना चाहिए। [२] कूड़े का स्थान खुली जगह में आबादी से दूर होना चाहिए। [३] मल-मूत्र आदि ज़मीन में गढ़ा खोदकर डालना चाहिये जिससे बदबू न आये तथा मक्खियां वहां न पहुंच सकें। [४] जहां पीने का पानी हो उसके समीप यह स्थान नहीं होना चाहिये। [५] स्कूल के क्षेत्र तथा अनुचित स्थानों में मल-मूत्र

नहीं त्यागना चाहिये यह बीमारी का कारण होता है। शौचालय ऐसा हो जहाँ से मल-मूत्र किसी बर्तन या आधुनिक प्रणाली के अनुसार सेपटिक टैंक या सीवर में सीधे जाते हों।[६]जब कभी बहुत लोगों के लिए कुछ दिनों के लिये शौचालय बनाना हो तो गहरी नालीदार(Deep Tunnel Latrine)बनाना चाहिए। यह कम से कम ६ फीट गहरी तथा दो फीट चौड़ी होनी चाहिये। यदि १२ फीट लम्बी हो तो १०० व्यक्तियों के लिये उपयुक्त है। इसमें किसी प्रकार की कीटाणु नाशक औषधि न डालना चाहिए। केवल मल मिट्टी से ढक दें।

मल-मूत्र दूर करने के उपाय [१] सूखे ढंग :–१—जलाना, दबाना।

[२] गीले ढंग —१–कीटाणु नाशक औषधियां, २- तल छट, ३—ज़मीन की सिंचाई।

लीद के दूर करने के उपाय—१—जलाना, २–दबाना, ३—फैलाकर सुखा देना।

गोबर खाद के लिए जमीन में गाड़ देना चाहिए। कूड़ा-करकट बाल्टी (Dust Bins) में जमा करना चाहिए।

कूड़ा करकट दूर करने के उपाय—१–जलाना, २–गड्ढे में भरना, ३—ठेकेदार के हाथ बेंचना।

गन्दा पानी—पानी की चिकनाहट किसी बक्से की तरह बर्तन जिस में ठन्डा पानी भरा हुआ हो उसके द्वारा रोक लेना चाहिये। केवल पानी को गहरे गड्ढे के अन्दर जो बन्द नाली के द्वारा जाता हो, जाने देना चाहिए। जहां पानी गन्दी नालियों से होकर जाता है वहाँ कोई कठिनाई नहीं होगी, केवल नालियां साफ होती रहना चाहिए जिससे पानी न जमा हो।

मुर्दा जानवर–गाड़ देना चाहिए अथवा जला देना चाहिये।

पारिवारिक कुशलता

यौन शिक्षा–यह आवश्यक है कि प्रत्येक शिक्षक को लैंगिक क्रिया का उचित ज्ञान हो। इस से बालक के लैंगिक वृद्धि तथा ज्ञान के विषय में

शिक्षक पूर्ण जानकारी रक्खेगा। इस विषय में आधुनिक विचार है कि बालक को यौन शिक्षा देना आवश्यक है। यदि यह नहीं किया जाता है तो वह यौन सूचनायें ऐसे स्रोत से प्राप्त करता है जो उचित नहीं तथा उसके पूर्ण विकास में वे बाधक सिद्ध होते हैं। इस विषय में मतभेद है कि यह शिक्षा किस समय, कैसे, क्या तथा किसके द्वारा दी जाये। कितनों का विचार है कि जैसे-जैसे बालक प्रश्न करता जाता है उतना उसे अच्छी रीति से बता दिया जाये। उसके प्रश्नों के प्रति असंवेगात्मक रूप का होना तथा सरल स्वभाव रखना आवश्यक है।

पांचवें वर्ष में साधारणतय: बालक यह प्रश्न करता है कि बच्चा कहाँ से आता है? वहीं से आरम्भ करना उचित है तथा उसे यह मालूम कराना चाहिए कि बच्चा मां के पेट के अन्दर उत्पन्न होता है। प्राकृतिक वनस्पति विद्या तथा जानवरों के जीवन के द्वारा यौन शिक्षा दने में सहायता मिलती है। इसके द्वारा संतानोत्पत्ति का विषय सिखाया जा सकता है। इस शिक्षा के लिए उचित साहित्य भी हैं जो पढ़ने के लिए दिए जा सकते हैं। विपरीत लिंग में आयु के कारण रुचि होना स्वाभाविक है। इस प्रवृत्ति का उचित उपयोग एवं नियन्त्रण होना आवश्यक है।

किशोरावस्था में बालक को उसके परिपक्वता के समय परिवर्तन का पूर्ण ज्ञान एवं सूचनायें होना उचित है तथा उसका स्वस्थ्य के साथ का सम्बन्ध जानना आवश्यक है। किशोर बालक को वीर्य आना आदि अच्छी रीति से मालूम होना चाहिये। बालिकाओं में मासिक रजस्वला का ज्ञान होना चाहिए। उरोज का उभार आदि होना प्राकृतिक है यह उन्हें जानना चाहिए। बालिकाओं को यह जानना आवश्यक है कि रजस्वला में व्यायाम, खेल, स्नान आदि हानिकारक नहीं होता।

परिवार नियोजन—परिवार की कुशलता, समाज की वृद्धि तथा राष्ट्र की उन्नति जनसंख्या नियन्त्रण पर निर्भर है। भारतवर्ष की आधुनिक स्थिति के कारण यह आवश्यक प्रतीत हो रहा है कि परिवार नियोजन हो। भारतवर्ष में व्यक्तिगत आर्थिक आय बहुत कम है। सुविधाओं एवं भोजन की कमी हो रही है। इन समस्याओं का हल परिवार नियोजन ही है। यह निश्चित किया गया है कि प्रत्येक परिवार में दो या तीन से अधिक बच्चे नहीं होने चाहिये इस प्रकार

परिवार नियोजन के लिए नियोजन की प्रणालियों का जानना आवश्यक है। स्त्रियों के लिये लूप तथा पुरुषों के लिये नसबन्दी का प्रचार किया जा रहा है। सहवास के समय कुछ द्रव्य जिसे Contraceptive Pills कहते हैं तथा Sheaths आदि के प्रयोग से सन्तानोत्पत्ति नहीं होती। इस ओर जनता को शिक्षित करना आवश्यक है क्योंकि अज्ञानता, धार्मिक भावनाओं तथा वैमनस्यता के कारण यह नियोजन अधिक सफल नहीं हुआ है। भारत को उच्च राष्ट्रीयता प्राप्त करने के लिए बलिष्ठ, विकसित नागरिकों की आवश्यकता है। यह उस समय तक प्राप्त नहीं हो सकती जब तक परिवार नियोजन सफल न हो।

मादक द्रव्यों का प्रयोग

मादक द्रव्य कई प्रकार के होते हैं जो व्यक्ति प्रयोग में लाते हैं। इन में मुख्य सिग्रेट, तम्बाकू, शराब, अफीम, गांजा, भांग आदि आते हैं जिनको इनकी आदत पड़ जाती है उनको उसके बन्धनों से छूटना कठिन हो जाता है।

मादक द्रव्यों का किसी रूप में प्रयोग हानिकर सिद्ध होता है। इस में केवल आर्थिक बरबादी ही नहीं किन्तु व्यक्तित्व का नाश हो जाता है। भारत में अधिकाँश व्यक्ति हैं जो मादक द्रव्यों का मूल्य नहीं दे सकते किन्तु उनके प्रयोग के लिये उन्हें परिवार की आय आदि का प्रयोग करना पड़ता है जिस से परिवार के अन्य सदस्यों को कठिनाई होती है। साधारणतः परिवार में प्रयोग के कारण उसके अन्य सदस्य भी आदत अर्जित कर लेते हैं।

मादक द्रव्य से शारीरिक दोष उत्पन्न होते हैं। कैन्सर आदि की बीमारियां इनके कारण बताई गयी है। अस्वस्थता, शिथिलता आदि इस के द्वारा आती हैं। मानसिक क्रिया करना कठिन हो जाता है तथा नैतिक पतन होने की सम्भावना होती है।

भोजन

जीवन के लिये भोजन अत्यन्त आवश्यक है जिससे शरीर में कार्य करने की शक्ति, तापक्रम स्थिर रख सकना, टूटे हुए कोषों तथा तन्तुओं की मरम्मत तथा शरीर की वृद्धि सुचारु रूप से होती रहे। स्वस्थ शरीर के लिए भोजन जिस में सभी आवश्यक पदार्थ पाये जाते हैं निम्नलिखित है।

(१) प्रोटीन (Protein) (२) श्वेतसार (Carbohydrates) (३) वसा (Fats) (४) जल (Water) (५) विटामिन (Vitamins) लवण (Minral Salts)।

(१) **प्रोटीन (Protein)**-प्रोटीन रसायनिक मेल है जो नाइट्रोजन, कार्बन, हाइड्रोजन तथा आक्सीजन के मेल से बना हुआ है। माँस, पनीर, मछली, मटर तथा सेम आदि में प्रोटीन अधिक पाया जाता है। दूध, रोटी' मक्खन, अन्डे आदि में कुछ कम होता है। सब्जियों तथा फलों में बहुत कम होता है। मांस-पेशियां, त्वचा, आन्तरिक अंग तथा अन्य मुलायम तन्तु अधिक प्रोटीन के बने हैं।

(२) **श्वेतसार (Carbohydrates)**—श्वेतसार, कार्बन, हाइड्रोजन तथा आक्सीजन से तैयार होता है। चीनी पूर्णतया श्वेतसार है। रोटी, दाल आदि अनाजों में तथा दूसरी जड़ की चीजों में अधिक श्वेतसार होता है। श्वेतसार शक्ति (Energy) में जल्दी से बदला जा सकता है।

(३) **वसा (Fats)**-वसा मक्खन, पनीर, अंडा आदि में पाया जाता है, वसा भोजन में कई एक काम करता है अर्थात :—

(i) वसा शक्ति का स्रोत है। (ii) यह शक्ति इसके द्वारा जमा की जा सकती है। (iii) ये कुछ मात्रा में विटामिन देता है। जो स्वास्थ्य के लिए तथा शारीरिक बढ़ाव के लिए आवश्यक है।

(४) **जल (Water)**—ज्यादातर, श्वेतसार तथा प्रोटीन में जल भिन्न-भिन्न मात्रा में पाया जाता है। प्रोटीन वाले भोजन जैसे मांस में कम जल होता है। यदि आधा सेर मांस की वैज्ञानिक रीति से जांच की जाये तो पौण्ड का २/३ हिस्सा पानी निकलेगा।

(५) **विटामिन (Vitamins)**—यह जटिल (Complex पदार्थ है जो जीवन को बढ़ाने के लिए तथा शरीर को शक्तिशाली बनाने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। ये अनेक प्रकार से शरीर में होने वाले विभिन्न रसायनिक क्रियाओं में सहायता देता है किन्तु वे अपने आप में शक्ति के स्रोत नहीं हैं। मुख्य विटामिन ए०, बी०, सी०, डी० हैं।

विटामिन ए० (Vit. A), पशुओं के वसा से बनता है जैसे दूध, मलाई, मक्खन, कलेजी, अंडा, मछली का तेल आदि। ये सब्जियों में भी पाया जाता है उदाहरणार्थ, गाजर, पालक, टमाटर आदि में। विटामिन ए० की कमी से, स्वास्थ्य पर बहुत बुरे परिणाम हो सकते हैं।

विटामिन्स ए० कम होने के कारण शरीर में बीमारियों से मुकाबला कर सकने की शक्ति कम हो जाती है; श्वांस क्रिया में दोष, आंखों के उठ आने का रोग, रतौंधी तथा दृष्टि कम हो जाने का भय होता है। त्वचा भी सूखने लगती है तथा झुर्रियां भी पड़ जाती हैं। अन्य रोग भी हो जाते हैं।

साधारण भोजन में काफी मात्रा में विटामिन ए० मिल जाता है। केवल विशेष अवस्था में उपरोक्त स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

विटामिन बी० (Vit. B)—अधिकतर बीजों में पाया जाता है। जैसे गेहूं, दाल, खमीर, मूंगफली, जौ, चावल, अंडा आदि में। यदि अधिक दिन से इसकी कमी होती है तो आंतों की बीमारी हो जाती है तथा एक प्रकार का नाड़ी और त्वचा का रोग भी हो जाता है।

विटामिन सी (Vit. C) ताजे फलों तथा हरी सब्जियों में पाया जाता है। जैसे नारंगी, नीबू, सेब, टमाटर, सलाद, गोभी के पत्तों आदि में। दूध में विटामिन सी० कुछ कम होता है।

यदि यह भोजन में बहुत दिनों तक न प्रयोग किया जाये तो स्कर्वी (Scurvy) की बीमारी हो जाने का भय होता है। ऐसी अवस्था में त्वचा के नीचे से रक्त निकलना, मसूढ़ों में रक्त प्रवाह, आंतों की दीवार से तथा गुर्दा से रक्त प्रवाह होने लगता है।

विटामिन डी० (Vit. D) कलेजी, मछली के तेल तथा अंडे में पाया जाता है। हड्डियों के बढ़ाव के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसके बिना हड्डियों की बीमारी हो जाती है। विशेषकर रिकेट (Ricket) हो जाता है जिस में कैल्शियम के बगैर हड्डी मुलायम हो जाती है और हड्डियों के सिरे पर जो बढ़ाव होता है उसमें कमी हो जाती है।

विटामिन डी० अल्ट्रा वायलेट रेज़ (Ultra Violet Rays) के द्वारा प्राप्त किया जाता है।

(६) **लवण अथवा खनिज पदार्थ** (Minerals)—खनिज पदार्थ जो शरीर के लिए आवश्यक हैं साधारण नमक कैलशियम, फासफ़ोरस, लोहा, आयोडीन आदि हैं। इनके किसी एक की कमी से शरीर के कार्यों में साधारण गड़बड़ी हो जाती है। फासफ़ोरस तथा कैल्शियम काफी मात्रा में दूध में पाये जाते हैं। लोहा, मांस, सब्जियों में तथा फलों में पाया जाता है। आयोडीन पीने के पानी में होता है।

संतुलित भोजन

संतुलित भोजन का एक उदाहरण

भोजन सामग्री	मात्रायें औन्स में	ग्राम मे मात्रा			
		प्रोटीन	वसा	श्वेतसार	कैलोरी
आटा	१२	४६·८०	६·४२	२४४·२	१८८२
चावल	६	१३·८०	०·५१	१३३·८	५९५
मांस	२	११·९४	३·९६	०·०	८४
दूध	२०	१८·८०	२०·४०	२७·२	३६०
तेल	१	०·०	२८·००	०·०	२५२
घी	१·५	०·०	३४·६०	०·०	३१२
जड़ वाली सब्जी	८	४·४०	०·३६	३१·८	१४८
गोभी (पत्ते वाली)	८	३·१०	०·२४	१०·२	५६
दाल	१	६·५०	०·९९	१६·२	१००
फल (आम)	४	०·१६	०·८८	२०·८	९२
	६३·५	१०५·५०	९६·४२	४८४·२	३२२१
१० प्रतिशत नष्ट होने से, कम	६·३	१०·५०	९·६४	४८·४	३२२
टोटल	५७·२	९५·००	८६·७८	३३५·८	२८९९

(१) संतुलित भोजन में, भोजन के सभी आवश्यक तत्व जैसे प्रोटीन, श्वेतसार, वसा, लवण, रेशेदार पदार्थ, विटामिन तथा जल होना चाहिये।

(२) उपर्युक्त तत्व उचित मात्रा में होने चाहिये जिससे आयु, लिंग

अवस्था तथा जलवायु इत्यादि के अनुसार जितनी कैलोरी की आवश्यकता हो उतनी पूरी हो सके। साधारण कार्य के लिये ३००० कैलोरीज आवश्यक है।

(३) जब बालक बढ़ने की अवस्था में होते हैं तो उन्हें अधिक पौष्टिक पदार्थों की आवश्यकता होती है। १२ से १६ वर्ष की आयु के बालक को और अधिक भोजन की आवश्यकता होगी। संतुलित भोजन के निर्माण में बच्चों की आदत का भी ध्यान रखना चाहिए कि वे क्या खाना पसंद करते हैं। संतुलित भोजन में निम्नलिखित वस्तुएँ इस प्रकार होनी चाहिये।प्रोटीन ९०-१०० ग्राम, वसा ८०-९० ग्राम,श्वेतसार ३६०-४५० ग्राम।

स्कूल में दोपहर का खाना

विलायत में १९४४ एजूकेशन एक्ट के अनुसार दोपहर का खाना स्कूल का दायित्व है। भारत में किसी प्रकार की व्यवस्था इसके लिए नहीं है। स्कूल अपनी इच्छानुसार जो प्रबन्ध कर सकते हैं करते हैं, यद्यपि सब बातों को देखते हुये जिसमें स्वास्थ्य ही प्रमुख नहीं है, यद्यपि यह महत्वपूर्ण है, बालकों के लिये दोपहर के खाने की व्यवस्था स्कूल से होनी चाहिए. इससे कई लाभ हैं।

१—कम से कम एक समय सन्तुलित भोजन बालकों को मिलेगा।

२—बालकों के साथ बैठकर भोजन करने में आपस में समानता तथा मित्र-भाव उत्पन्न होगा। राष्ट्रीय एकता (National Integration) में इस से सहयोग प्राप्त होगा।

३—बच्चे स्कूल के पश्चात खेल के कार्यक्रम के लिये आसानी से रुक सकेंगे। स्कूल के पहले का शारीरिक शिक्षा का कार्यक्रम सरलता से हो सकेगा।

४—देश के स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होगा।

५-भोजन के अतिरिक्त सामाजिक प्रशिक्षण भी बालकों को प्राप्त होगा।

६—दैनिक स्वास्थ्य की बातों की. ओर ध्यान आकर्षित करने का स्वर्ण अवसर प्राप्त होगा।

७—बालकों के मध्य बैठकर शिक्षकगण भी यदि भोजन करें तो बालकों को उन के प्रति प्रेम तथा श्रद्धा उत्पन्न होगी, अनुशासनहीनता की कम सम्भावना है।

८—पारिवारिक आर्थिक दशा में कुछ सुधार होगा तथा माता पिता को कुछ मानसिक शान्ति मिलेगी।

११

गति विद्या

गति विद्या (Kineisiology) शारीरिक शिक्षा का वह भाग है जो गति के विश्लेषण तथा व्यायाम के नियत करने से सम्बन्धित है। मनुष्य के अस्थि संस्थान तथा मांसपेशियों की बनावट के कारण उसकी गति का विश्लेषण आलम्ब तथा शक्ति सम्बन्ध सम्भव है। मांसपेशियों के उद्गम तथा प्रवेश के ज्ञान से कुछ लाभ नहीं जब तक इनकी विभिन्न क्रियाओं में प्रयोग के समझने की योग्यता न हो।

शरीर के निर्बल क्षेत्रों को बलिष्ट करने के लिये व्यायाम नियत करना आवश्यक होता है जिसे चैतन्यता के साथ करने की चेष्टा की जाती है। इस से उचित विकास की आशा की जाती है जिससे कार्य उत्तम रीति से हो। गेम्स तथा स्पोर्ट्स के विश्लेषण में प्रशिक्षण की आवश्यकता प्रतीत होती है। शारीरिक गति का प्रशिक्षण होता है। यह प्रशिक्षण प्रभावपूर्ण नहीं हो सकता जब तक गति विद्या की माँसपेशियों का ढांचा, उसके उद्गम तथा प्रवेशन तथा मांसपेशियों की शक्ति का उचित स्थान पर प्रयोग करने का ज्ञान न हो। इसी से गति के सम्भव होने का ज्ञान प्राप्त हो सकता है।

शारीरिक क्षमता तथा उत्तम क्रिया के लिये शारीरिक संतुलन महत्वपूर्ण है। शरीर के कुछ क्षेत्र में शारीरिक संतुलन शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। गति विद्या के ज्ञान से तथा शारीरिक बनावट के जानने के द्वारा उस क्षेत्र को वास्तविक स्थिति में रखना सम्भव हो सकता है। Muscle Tone के रखने के लिए गुरुत्व आकर्षण शक्ति के खिचाव का विरोध करना एवं खंडों को प्राकृतिक अवस्था में रखना आवश्यक होता है। पहुंचने या फैलाने का नियम (Law of Reach) अभ्यास का नियम है। यह चेष्टा या प्रयत्न है। प्रयत्न की पुनरा-

वृत्ति से सफलता प्राप्त होगी । प्रयोग या अभ्यास के नियम से निर्मित अवस्था स्थित रहती है । Man maintains what he uses, loses what he fails to use. शरीर के प्रत्येक क्षेत्र दैनिक जीवन में प्रयोग नहीं होते । इनका प्रयोग होना आवश्यक है ।

शारीरिक गति की समस्या एनाटमी, फिजियालोजी, साइकालोजी, बढ़ाव, विकास, आसन, स्वास्थ्य, खेल में भाग लेने की स्वतन्त्रता एवं इच्छा से सम्बन्धित है ।

ज्ञान पूर्वक दैनिक व्यायाम के नियम करने में मनोवैज्ञानिक एवं अनुसाशित प्रभाव एक आवश्यकता है, स्वतन्त्रता नहीं । विधिवत् व्यायामों की नियुक्ति शारीरिक संतुलन को ठीक रखती है ।

साधारण एवं अनिवार्य गति का विश्लेषण कर सकना आवश्यक है । उन की क्रिया समझना, चेष्टा की आवश्यकता, उनका उचित स्थान आदि का ज्ञान आवश्यक होना चाहिए । स्पोर्ट्स एवं खेल आदि में साधारणतयः व्यक्ति खेल को देखते हैं किन्तु उस के प्रशिक्षण एवं तैयारी की ओर ध्यान नहीं जाता । स्पोर्ट्स एवं गेम्स के लिए तैयारी एवं प्रशिक्षण की प्रथम आवश्यकता होती है किन्तु व्यक्ति स्पोर्ट्स एवं गेम्स के द्वारा तैयारी एवं प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहते हैं ।

व्यक्ति जैसे ३०वें वर्ष की ओर चलने लगता है उसे व्यायाम आदि की आवश्यकता होती है क्योंकि वह कुछ शरीर के क्षेत्र पूर्णरूप से प्रयोग नहीं कर पाता । गेम्स एवं स्पोर्ट्स में भी ये क्षेत्र पूर्णरूप से प्रयोग नहीं होते । विकास की आवश्यकता होती है, प्रशिक्षण अनिवार्य हो जाता है । मांसपेशियों का उचित प्रशिक्षण उत्तम गति के लिये आवश्यक है ।

डा० केथेन कूपर का कहना है कि व्यक्ति प्रत्येक आयु में दक्ष एवं प्रफुल्लित अनुभव कर सकता है, "Yo can feel fit at any age."

५००० व्यक्तियों पर प्रयोग करने के पश्चात् वे इस निष्कर्ष पर पहुंच चुके हैं कि सर्वोत्तम दक्षता सहने की दक्षता 'Endurance fitness' है यह शरीर के उत्तम स्वास्थ्य से ही उपलब्ध हो सकता है । इसके लिये शक्ति की आवश्यकता है और वह आक्सीजन से ही प्राप्त हो सकती है । अतएव वे ही व्यायाम आदि उत्तम हैं जिन से आक्सीजन अधिक प्राप्त होता है क्योंकि यह शरीर में अन्य पदार्थों की तरह जमा नहीं किया जा सकता । इससे फेफड़े स्वस्थ होंगे, हृदय बलिष्ठ होगा तथा मांसपेशियों में शक्ति आयेगी ।

———

BIBLIOGRAPHY

Education Through Physical Activities. O'Keefe & Aldrich
The Principles of Physical Education. J.F. Williams
Scientific Foundations of Physical Education. C.C. Cowell
Human Nature and Conduct. John Dewey
Education and the Modern World. Bertrand Russell
Foundations of Physical Education. Charles A Bucher
School Programme in Physical Education. C.W. Hetherington
The Administration of Physical Education. J.B. Nash
An Introduction to Physical Education. Nixon & Cozen
Physical Education Interpretations and Objectives. J.B Nash
Introduction to Physical Education. J.R. Sharman
The Teaching of Physical Education. J.R. Sharman
An Ethical Philosophy of Life. F. Adler
Physical Education D. Oberteuffer
The History of Western Civilizations. H.E. Barnes
A Guide to the History of Physical Education. F.E. Leonard
A Brief History of Physical Education E.A. Rice
World History of Physical Education. Van Dalen
The Outline of History H G. Wells
Modern Principles of Physical Education. J.R. Sharma
The New Physical Education. Denison & Cassidy
Psychology in Education. J.B. Stroud
The Organization & Administration of Physical Education. Voltmer & Esslinger
Physical Training as a Profession. J.H. Mc. Curdy

Hygiene & Health Education M.B. Davis
Soccer Coaching Football Association
Coaching Manual Football Association
Kinesiology Manual Leon G. Kranz
Anatomy for Students & Teachers of Physical Education. J W. Perrott
Scientific Principles of Coaching. J.W. Buner
Psychology of Coaching. W.D. Lawther
Psychology-A Study of Mental Life. Woodwôrth
General Psychology. Garret
Methods in Physical Education Kozman-Cassidy & Jakson
Organization & Administration of Physical Education. Seymor
Philosophy of Recreation. J B. Nash
Corrective Physical Education. J.L. Rathbone, W.B Saunders & Co.
School Health Education. D. Oberteuffer
Educational Psychology. Ross
Introduction to Educational Psychology. Wryburn
Successful Teaching in Physical Education. E.C. Davis & J.D- Lawther
Sports, their, Organization & Administration. W.L. Hughes & J.W. William
History of Physical Education. C.W. Hackensmith
A Manual of Massage & Movement. E.M. Prosser
Intrammural Sports. E.D. Mitchel
Modern Track & Field. J.K. Doherty
Physical Education, Health Education & Recreation. J.H. Jenny
Class.Room Management. W.C Bagley

शारीरिक शिक्षा

लेखक

डा० एल० डब्लू० लायल

एम. ए., बी. पी., डी. टी. एच., डी. पी. एड., बी. एम. एस.

क्रिश्चियन कालेज आफ फिजिकल एजुकेशन

लखनऊ

प्रकाशक

शकुन्तला प्रकाशन